मूलबीजकटीकासहित

सत्य

मूलबीजक
टीकासहित



।। श्रीसद्गुरवे नमः ।।

सद्गुरु श्रीकबीर साहेबका मुख्य ग्रंथ

मूलबीजकटीकासहित

★

जिसको–

कबीरपन्थी सन्त महात्मा पूरणसाहेब जोकि श्रीकबीरसाहेबके समान हो गये; उन्होंने अपने अनुभवसे त्रिजा बनाया।

उसीको–

बीजक मूल तथा बीजक टीकाके कवित्तोंके सूचीपत्र और पंच कोशनके कोष्ठक सहित,

बुरहानपुर निवासी कबीरपन्थी साधु काशीदासजी द्वारा शुद्ध प्रतिं प्राप्त कर,

खेमराज श्रीकृष्णदासने

बम्बई

निज "श्रीवेंकटेश्वर" मुद्रणयन्त्रालयमें मुद्रित कर प्रकाशित किया।

त्रिजाके पुरानी प्रतियोंसे पुनरपि मिलाकर अक्षरोंकी त्रुटियोंको शुद्ध किया और तीन जगह टिप्पणी रक्खा गया।

आचार्य रामस्वरूपदास। स्थान–बुरहानपुर गद्दी।

संस्करण : दिसंबर २०१८, संवत् २०७५

मूल्य : ५०० रुपये मात्र

मुद्रक एवं प्रकाशक :
खेमराज श्रीकृष्णदास,™
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
मुंबई-४०० ००४.

Printers & Publishers :
Khemraj Shrikrishnadass,
Prop. Shri Venkateshwar Press,
Khemraj Shrikrishnadass Marg,
7th Khetwadi, Mumbai - 400 004.

Web Site : http://www.khe-shri.com
Email : Khemraj@vsnl.com

Printed by Sanjay Bajaj for M/s. Khemraj Shrikrishnadass, Proprietors Shri Venkateshwar Press, Mumbai - 400 004, at their Shri Venkateshwar Press, 66 Hadapsar Industrial Estate, Pune - 411 013.

भूमिका

★

सद्गुरु श्री कबीर साहेबकी बानीके बहुत ही ग्रन्थ हैं, परन्तु मुख्य सत्य निर्णयरूप ग्रन्थ बीजक है। उसमें रमैनी, शब्द, साखी आदि बानी रक्खी हैं; परन्तु संस्कृतके श्लोकके समान मुख्य गूढ़ अर्थकी समझ होनेकी बहुत ही कठिनता है। बहुतसे साधु-सन्त और ही और अर्थ लगाते रहे, याहीते कबीर पन्थियोंमे भी नाना पंथ होगये हैं। कोई बिरले ही संत पूर्ण अर्थ जानते रहें और किसी बिरलेही साधुको यथार्थ बोध होता रहा। सत्तर वर्षके पीछे बुरहानपुर नागझिरी स्थानपर एक कबीरपंथी सन्त-महात्मा श्रीपूरण साहेब केवल श्री कबीर साहेबकेही समान होगये। उन्होंने यह सब न्यूनता देखकर दयालु स्वभावसे और अपने स्वानुभवसे बीजककी त्रिजा बनाई, जिसको बीजक टीका कहते हैं। वही यह ग्रंथ है, जिसमें सब मूल बीजका अर्थ सुलभतासे सफा खोलकर दर्शाये हैं; और नाना मत मतांतरोंके सिद्धान्तोंकी सब कसर बतायके जीवको जीवन्मुक्त स्थिति जैसे श्री कबीर साहेब उपदेश किये हैं, सोई स्थिति रहनी संयुक्त देखाये हैं। यह ग्रंथ प्रथम लखनऊमें छपा था, पीछे इलाहाबादमें छपा। परन्तु छपानेवालोंने केवल रोजगारकर नफाकी ही तरफ देखके स्थान बुरहानपुरके आचार्य महंत साहेबकी सम्मतिके बिना और बुरहानपुरके विचारवान् साधुनसे अच्छे शोधे बिना छपवाये; इससे हजारों चूकें रह गईं और कहीं-कहीं अर्थका अनर्थ भी होगया है, याहीते हमने बुरहानपुरके आचार्य महन्तसाहेब और काशीदासजी आदि साधुओं द्वारा अच्छी शुद्ध प्रति प्राप्तकर वही त्रिजा छपाई है। देखनेसे ही जानोगे, जो कबीरपंथी कबीरसाहेबके सत्य न्यायरूप ज्ञानका शौक और चाह रखते हैं, उन्हें शीघ्र ही मँगाकर अपना मनुष्य जन्म सुधारना चाहिये।

—प्रकाशक.

सूचीपत्र

★

॥ दया गुरुकी ॥

मूल बीजकके शब्दनका सूचीपत्र

———

मूलबीजकके शब्दनका सूचीपत्र समाप्त ।

बीजकटीकामें पूरनसाहेबकृत कवित्त आदिका सूचीपत्र ॥

समाप्त.

अथ पंचकोशनका कोष्ठक

नाम	स्थूलदेह	सूक्ष्मदेह	कारणदेह	महाकारणदेह	कैवल्यदेह
१ कोश	अन्नमय	प्राणमय	मनोमय	ज्ञानमय	विज्ञानमय
२ आश्रम	ब्रह्मचर्य	गृहस्थ	वानप्रस्थ	संन्यास	परमहंस
३ चिह्न	आचार	गुरुमय	जंगमआत्मलिंग	शिवलिंग	प्रसाद
४ प्रलय	नित्य	नैमित्य	विश्व	महा	एकांत
५ दशा	बाल	पिशाच	उन्मत्त	मूक	जड़
६ अवस्था	जाग्रत	स्वप्न	सुषुप्ति	तुरीया	उन्मनी
७ साधन	श्रवण	मनन	निदिध्यासन	साक्षात्कार	सहजरूप
८ मुक्ति	सालोक्य	सामीप्य	सारूप्य	सायुज्य	निर्गुण (जीवन्मुक्ति)
९ अभिमान	विश्व	तैजस	प्राज्ञ	प्रत्यगात्मा	निरंजन
१० दीक्षा	कोहं	वोहं	शिवोहं	सोहं	अनामयोहं
११ आनन्द	विषय	योग	अद्वैत	विदेह	ब्रह्म
१२ निर्णय	क्षर	अक्षर	क्षेत्रज्ञ	आत्मा	कूटस्थ
१३ देवता	गणेश	मार्तण्ड	रुद्र	ईश्वर	निरंजन
१४ शक्ति	क्रिया	द्रव्य	ज्ञान	इच्छा	परा
१५ अग्नि	जठर	काम	मंद	बड़वा (ज्ञान)	ब्रह्म
१६ पादगायत्री	प्रथम	द्वितीय	तृतीय	चतुर्थ	ब्रह्मपद
१७ बहिर मुद्रा	खेचरी	भूचरी	चाचरी	अगोचरी	सर्व साक्षिणी
१८ वाचा	वैखरी	मध्यमा	पश्यंती	परा	अनिर्वाच्य
१९ मात्रा ऊँकारकी	अकार	उकार	मकार	इकार (अर्धमात्रा)	यंकार (बिंदु)
२० गुण	रज	सत्त्व	तम	शुद्धसत्त्व	निर्गुण
२१ देवता	ब्रह्मा	विष्णु	रुद्र	ईश्वर	शिवदेव
२२ स्थानद्वार	नेत्र	कंठ	हृदय	मूर्धनी	शिखा
२३ प्रमाण	साढ़ेतीन हाथ	अंगुष्ठ	अर्धअंगुष्ठ	मसूर	प्रमाणहीन
२४ ब्रह्म	तारक	दंडक	कुण्डल्य	अर्धचन्द्र	बिन्दु
२५ स्थानचक्र	त्रिकुटी	श्रीहट	गोल्हाट	औटपीठ	भँवरगुफा
२६ मुख्यदिशा	पूर्व	पश्चिम	दक्षिण	उत्तर	ऊर्ध्व
२७ दिशनकी देवता	इंद्र	वरुण	यम	कुबेर	ब्रह्मा
२८ कर्म	सृजन	पालन	प्रलय	सूर्य	चन्द्र

नाम	स्थूलदेह	सूक्ष्मदेह	कारणदेह	महाकारणदेह	कैवल्यदेह
२९ शून्य	अर्ध	ऊर्ध	मध्य	सर्व	महा
३० वर्ण	पीत	श्वेत	लाल	हरा	काला
३१ उच्चार	ह्रस्व	दीर्घ	कल्पत्या (प्लुत)	अर्द्धमात्रा	अनिर्वाच्य
३२ वेद	ऋग्	यजुः	अथर्वण	साम	सुसंवेद (स्वसंवेद्य)
३३ तत्त्व	पृथिवी	जल	अग्नि	वायु	आकाश
३४ उपदिशा	ईशान्य	नैर्ऋत्य	आग्नेय	वायव्य	अधो
३५ दिशनकीदेवता	शिव	नैर्ऋत्य	आग्नेय	वायु	विष्णु
३६ बाजा	तंतु	शंख	झांझ	मृदंग	बंसी
३७ पिंडके वायु	अपान	प्राण	उदान	समाज	व्याज
३८ आकाश	घटाकाश	मठाकाश	महदाकाश	चिदाकाश	निजाकाश
३९ कमल रङ्ग	पीत औ रक्त	शाम औ रक्त	रक्त औ श्वेत	शाम औ शुद्ध-पीत	पीत औ श्वेत
४० मार्ग	पपील	विहंगम	कपि	मीन	शेष
४१ वेद ऋचा	अद्वै	वामदेव	सत्पुरुष	ईशान्य कला	अघोर
४२ कला	ऊर्मी	धूर्मी	ज्योति	ज्वाला	कलातीत
४३ लोक	सत्य	वैकुण्ठ	कैलास	ज्वाला	निराधार
४४ गुप्त मुद्रा	सन्मुखी	उन्मीलनी	शांभवी	आत्म भावनी	पूर्णबोधिनी
४५ झीनी वायु	किंकिरा	नाग	कूर्म	देवदत्त	धनंजय
४६ विकार	अहं	मनमन्तव्य	बुद्धिबोधव्य	चित्तचिंतन	अन्तःकरण (निर्विकल्प)
४७ भूमिका	क्षिप्रा	गतागत	सौलेष्टता	सुलीन	अभाव
४८ भाव	प्रध्वंसा	प्राग	अनन्य	अत्यंता	भावातीत
४९ भोग	स्थूल	सूक्ष्म	आनन्द	आनन्दभास (ईश्वररूप)	ब्रह्ममय

॥ इति पञ्चकोशनका कोष्ठक समाप्त ॥

सद्गुरवे नमः

दया गुरुकी

अथ

लिख्यते बीजकका त्रिजा बुझार्थ

प्रथम अनुसार

★

बंदौं चरण सरोज। जिन्ह यह बीजक निर्मयो ॥
परख दिखायो खोज। ते गुरुसम दूजा नहीं ॥ १ ॥
निर्णय दीन्ह कृपाल। परख प्रकाशी स्थीरपद ॥
परखायो सब जाल। महादुखित जिव जानिके ॥२॥
दया क्षमा सन्तोष। धीरज शील विचार गुण ॥
एक अनेकको धोख। परखायो निज परखते ॥३॥
अशरण शरण उदार। सुख साहेब सुखरूप जो ॥
कहुँ टीका विस्तार। तव पारखते कृपानिधी ॥४॥
बंदौं सन्त समाज। जे निर्णई गुरु परखके ॥
दृढ़ मम हृदय विराज। सदा सुखी दायानिधी ॥ ५ ॥

अथ रमैनी मूल

रमैनी १.

अन्तर ज्योति शब्द एक नारी। हरि ब्रह्मा ताके त्रिपुरारी ॥
ते तिरिये भग लिंग अनन्ता। तेउ न जाने आदिउ अन्ता ॥
बाखरि एक विधाते कीन्हा। चौदह ठहर पाट सो लीन्हा ॥
हरि हर ब्रह्मा महंतों नाऊँ। तिन्ह पुनि तीन बसावल गाऊँ॥
तिन्ह पुनि रचल खंड ब्रह्मंडा। छौ दर्शन छानवे पाखंडा ॥
पेट न काहू वेद पढ़ाया। सुन्नति कराय तुरुक नहिं आया॥
नारीमों चित गर्भ प्रसूती। स्वांग धरे बहुते करतूती ॥

तहिया हम तुम एकै लोहू। एकै प्राण बियापै मोहू ॥
एकै जनी जना संसारा। कौन ज्ञानसे भयउ निनारा ॥
भौ बालक भग द्वारे आया। भग भोगीके पुरुष कहाया ॥
अविगतिकी गति काहु न जानी। एक जीव कित कहूँ बखानी ॥
जो मुख होय जीभ दशलाखा। तो कोइ आय महंतों भाखा ॥
साखी–कहहिं कबीर पुकारिके। ई लेऊ व्यवहार।
राम नाम जाने बिना। भव बूड़ि मुवा संसार ॥ १ ॥

टीकाबुझार्थगुरुमुख–दोहा--मन माया कृत भास भौ, सोई शब्द ॐकार ॥ एक जीव अनुमानते, बानी रची बिचार ।।१।। हरि हर ब्रह्मा तकतहीं, पुनि भग लिंग अनंत ॥ तिनहुँ न जाना अंत कछू, तब हारि कहा बेअंत ॥ २ ॥ बाखरी एक बनायके, ब्रह्मै उक्ती कीन्ह ॥ हंता मनमें लायके, चौदह भुवन पाटसो लीन्ह ॥ ३ ॥ बानावचन–कर्तारूपी तीन भये, हरि हर ब्रह्मा नाँव ॥ इनहिन तीनिहुँ लोक रची, खंड ब्रह्मांड सो ठाँव ॥ ४ ॥ छौ दर्शन छानबे कही, पाखंड दिये बनाय ।। इतना बानी बचन सुनी, जीव सबै बौराय ॥ ५ ॥ गुरुमुख--गर्भवासके बीचमें काहु न वेद पढ़ाय ॥ यथा सुन्नति करवायके तुरुकहु नाहीं आय ॥६॥ बानीमें चित लायके, भयो गर्भ अभिमान ॥ ताते स्वांग बहुकरनी कही, हिंदू मूसलमान ।। ७ ॥ तहिया हम तुम एकही, लोहू एकै प्रान ॥ एक मोह व्यापक सकल, कियो आपनो भान ॥ ८ ॥ एक नारि एक पुरुष जग, और कहाँ ते आय ? ॥ कौन ज्ञान अनुमान करी, परेहु भर्मके माहिं ॥ ९ ॥ बहुतक बालक रूप धरी, भगद्वारे ते आय ॥ भग भोगन इच्छा करी, तब पुनि पुरुष कहाय ॥ १० ॥ अविगति एक अनुमान है, ताको कोइ न जान ॥ एक जीवपद स्वतः है केतो कहौं बखान ॥ ११ ॥ जैसे मुख जीभ एक है, ऐसे होय दश लाख ।। तो कोइ यामें श्रेष्ठ कही, यथा महंतो भाख ॥ १२ ॥

साखी--कहाँ है जाहि पुकारहू। बानी लेव व्यवहार ॥
अनुमित सैन जाने बिना। बहु भरमि मुवा संसार ॥१३॥

रमैनी २.

जीवरूप एक अंतर बासा । अंतर ज्योति कीन्ह परकासा ॥
इच्छारूपि नारि अवतरी । तासु नाम गायत्री धरी ॥
तेहि नारिके पुत्र तीनि भयऊ । ब्रह्मा विष्णु महेश्वर नाँऊ ॥
फिर ब्रह्मैं पूछल महतारी । को तोर पुरुष केकरि तुमनारी ॥
तुम हम हम तुम और न कोई । तुमहिसे पुरुष हमें तोरि जोई ॥
साखी–बाप पूत की एकै नारी । एकै माय बियाय ॥
ऐसा पूत सपूत न देखा । जो बापहि चीन्हैं धाय ॥२॥

टीकागुरुमुख--दोहा--जीवरूप जो जमा है, याते सब व्यवहार । जीव अनुमाने सब भयो, खानी बानि बिचार ॥ १ ॥ एक जीव अन्तर मन, जो माने प्रतिबिम्ब ॥ मानतही बासा कियो, बूरिपद लाग्यो, लीव ॥ २ ॥ बिम्बते बिम्बाकार भौ, सोई माया रूप ॥ पक्केसे कच्चा भयो, पर्चो अहंता कूप ॥ ३ ॥ हंता कारि इच्छा कियो, नारिरूप-कियो ठाढ़ि ॥ गायत्री नाम धराय पुनि, विप्रीत मनमें बाढ़ि ॥ ४ ॥ तेहि नारी परसंग भौ, तीन बुंद भग डार ॥ तब वह रूप विनाश भौ, उपजे तीनिउ बार ॥ ५ ॥ ब्रह्मा विष्णु महेश अस, तिनिके तीनि नाँव ॥ फिर ब्रह्मा पूछन लगे, टेकि जननिके पाँव ॥६॥ कौन तुम्हारो पुरुष है, केकरि हो तुम नारि ॥ यह संशय मैं पूछहूँ, मो प्रति कहो विचार ॥ ७ ॥ माया बचन-तुम हम हम तुम और नहीं, निश्चय हृदय विचार ॥ तुमहिं सरीखे पुरुष जग, हमहिं सरीखी नारि ॥ ८ ॥

साखी--पुरुष कहिये बापको । पुत्रहु पुरुष कहाय ॥
नारी कहिये स्त्रीको । माता नारि कहाय ॥ ९ ॥

रमैनी ३.

प्रथम आरंभ कौन को भयऊ । दूसर प्रगट कीन्ह सो ठयऊ ॥
प्रगटे ब्रह्मा विष्णु शिव शक्ती । प्रथमें भक्ति कीन्ह जिव उक्ती ॥
प्रगटे पवन पानी औ छाया । बहु बिस्तारके प्रगटी माया ॥
प्रगटे अंड पिंड ब्रह्मंडा । पृथिवी प्रगट कीन्ह नौखंडा ॥

प्रगटे सिद्ध साधक संन्यासी। ई सब लागि रहे अबिनासी॥
प्रगटे सुर नर मुनि सब झारी। तेहिके खोज परे सब हारी॥
साखी–जीव शीव सब प्रगटे। वै ठाकुर सब दास॥
कबीर और जाने नहीं। एक रामनामकी आस॥३॥

टीकागुरुमुख–दोहा-प्रथम आरंभ भयो कौनसे, ताकर करहु बिचार॥ दूसर प्रगट कौने किया, जाते सब व्यवहार॥ १॥ प्रगटे ब्रह्मा विष्णु शिव, ता शक्ति सो जान॥ प्रथमें भक्ती कीन्ह तिन, कारि आपन अनुमान॥ २॥ पाँच तत्त्व सब प्रगटे, अंड पिंड ब्रह्मंड॥ बहु विस्तारिक रूप भौ, प्रगटी पृथिवी नौखंड॥ ३॥ प्रगटे योगी भक्त सब, ज्ञानी स्वयं अखंड॥ ई सब लागि रहे हैं, अविनाशी के डंड॥ ४॥ देव ऋषि औ मनुज सब, प्रगट भये हैं झार॥ खोजत खोजत ब्रह्मको, सबै रहे हैं हार॥ ५॥
साखी--जीव से प्रगट शीव भये। अब शिव ठाकुर जिव दास॥
अबोध जीव कहत हैं। मोहिं राम नामकी आस॥६॥

रमैनी ४.

प्रथम चरण गुरु कीन्ह बिचारा। कर्त्ता गावै सिरजनहारा॥
कर्म कै कै जग बौराया। शक्ति भक्तिकै बाँधेनि माया॥
अद्‌बुद रूप जातिकी बानी। उपजी प्रीति रमैनी ठानी॥
गुणी अनगुणी अर्थ नहिं आया। बहुतकजने चीन्हि नहिं पाया॥
जो चीन्है ताको निर्मल अंगा। अनचीन्हे नर भये पतंगा॥
साखी–चीन्हि चीन्हिका गावहु बौरे। बानी परी न चीन्ह॥
आदि अंत उत्पति प्रलय। आपूही कहि दीन्ह॥ ४॥

टीकागुरुमुख–दोहा–प्रथम गुरू ब्रह्मा बने, असकै कीन्ह बिचार॥ गावन लागे प्रेमसे, कोई एक सिर्जनहार॥ १॥ कर्ता भ्रान्तिके कारणे, बहुतक कर्म लगाय॥ तेहि कर्मनमें बंधे जीव, सबै गये बौराय॥ २॥ भक्तिरूपी माया सो, शक्त जीव भये बंध॥ घूमन लागे बावरे, कछू न सूझै अंध॥ ३॥ अद्‌बुद रूप अपार अस, कहै ब्रह्मा की बानि॥ तेहि

पद प्रेम प्रवाहते, भक्ति सभन मिलि ठानि ॥ ४ ॥ गुणी जीव खोजन लगे, अनगुणिया अनुमान ॥ बहुतक चीन्हि न पाइया, तब हारि कहा निर्बान ॥५॥ जो यह धोखा चीन्हि है, पारख ताको अंग ॥ अनचीन्हें यह जगत जिव, जिमि दीपक ज्योति पतंग ॥ ६ ॥

साखी—चीन्हि चीन्हि का गावहु बौरे । बानी परी न चीन्ह ॥
आदि अंत उत्पति परलय । आपूही कहि दीन्ह ॥ ७ ॥

रमैनी ५.

कहाँलों कहौं युगनकी बाता । भूले ब्रह्म न चीन्हैं बाटा ॥
हरि हर ब्रह्माके मन भाई । बिबि अक्षर लै युक्ति बनाई ॥
बिबि अक्षर का कीन्ह बँधाना । अनहद शब्द ज्योति परवाना ॥
अक्षर पढ़ि गुणि राह चलाई । सनक सनंदनके मन भाई ॥
वेद कितेब कीन्ह बिस्तारा । फ़ैल गैल मन अगम अपारा ॥
चहुँ युग भक्तन बाँधल बाटी । समुझि न परी मोटरी फाटी ॥
भै भै पृथिवी दहुँदिश धावै । अस्थिर होय न औषध पावै ॥
होय बिहिस्तजो चित न डोलावैं । खसमहि छाड़ि दोजखकोधावै॥
पूरब दिशा हंस गति होई । है समीप संधि बूझै कोई ॥
भक्ता भक्तिक कीन्ह सिंगारा । बूड़ि गयल सब माँझल धारा ॥

साखी—बिन गुरु ज्ञान दुन्द भई । खसम कही मिलि बात ॥
युग युग सो कहवैया । काहु न मानी बात ॥ ५ ॥

टीकागुरुमुख—दोहा—कहाँ लों कहौं युगन की, बात रची जो ठाट ॥ भूले ब्रह्म कहाय जीव, चीन्हें नहिं निज बाट ॥१॥ हरि हर ब्रह्मा के मन, आय गई यह बात ॥ राम अस दुइ अक्षर ले, रचिया जग उत्पात ॥ २ ॥ दुइ अक्षर बन्धान करि, माया ब्रह्म मिलाय ॥ अक्षर पढ़ि गुणि राह तब, दीन्ही आप चलाय ॥ ३ ॥ सनक सनन्दनके हिये, राच रही यह बात॥ वेद कितेब बिस्तार करी, ताहिको गावै नाथ ॥४॥ फैले अगम अपार कही, काहु न पावै बाट॥ चारिउ युगके भक्त सब, बाँधन लागे घाट॥५॥

समुझि परी नहिं काहुको, फाटा भरम अपार ॥ भय भय जीव धावन लगे, थीर न पावै पार ॥६॥ मायामुख--होय मुक्ति यह जीव की, जो कहुँ चित न डोलाय ॥ राम अस खाविन्द छाड़िके, नर कहाँ पेटको धाय॥७॥ पूर्व सनातन ब्रह्म जो,परमहंस गति होय॥है समीप सो कर्ता,संधि बूझै जो कोय ॥ ८ ॥ गुरुमुख--यह माया का बचन सुनि, भक्तन कीन्ह सिंगार ॥ भक्ती नारि कहायके, बूड़े मन की धार ॥ ९ ॥

साखी–गुरु नहिं ज्ञान दुन्द मची । खसम गहा इन हाथ ॥
युग युग कहनहार सो । मानत कोई नहिं बात ॥ १० ॥

रमैनी ६.

वर्णहु कौन रूप औ रेखा । दूसर कौन आहि जो देखा ॥
वो ॐकार आदि नहिं वेदा । ताकर कहहु कौन कुल भेदा ॥
नहीं तारागण नहिं रवि चन्दा । नहिं कुछ होत पिताके बिंदा॥
नहिं जल नहिं थल नहिं थिर पवना। को धरेनाम हुकुमको बरना ॥
नहिं कछु होते दिवस निजु राती । ताकर कहहु कौन कुलजाती॥
साखी–शून्य सहज मन सुमिरते । प्रगट भई एक ज्योत ॥
ताही पुरूष की मैं बलिहारी । निरालंब जो होत ॥ ६ ॥

टीकागुरुमुख–दोहा–वर्णहु कौने रूप को, रेख भेद कस आहि ॥ दूसर कौन बतावहू, जाको देखन चाहि ॥ १ ॥ ॐकारकी आदि को, वेदहु जानत नाहिं ॥ ताको काह बखानहू, कौन भेद कहि ताहि ॥ २ ॥ मायामुख–नहिं तारा रविचंद नहीं, नहीं पिताके बिंद ॥ नहिं जल थल नभ पवन नहीं, रूपहीन गोविंद ॥ ३ ॥ गुरुमुख–चन्द्र सूर्य कछु ना हते, पाँच तत्त्व तब नाहिं ॥ ताकर नाम कौने धरा, को हुकुम कहा जग माहिं ॥ ४ ॥ दिवस राति कछु ना हती, वर्ण रूप कछु नाहिं ॥ सो मिथ्या अनुमान है, का कहि वर्णहु ताहि ॥ ५ ॥

साखी-जीवमुख–शून्य माहिं सहजै विधी, मनहि सुमेर चढ़ाय ॥
प्रगट भई एक ज्योति जो, मैं बलिहारी ताहि ॥ ६ ॥

सोई पुरुष निर्लेप है, निरालंब कहि ताहि ॥
ताका मैं सुमिरन करौं, दुतिया कोई नाहिं ॥ ७॥

रमैनी ७.

तहिया होते पवन नहिं पानी । तहिया सृष्टि कौन उत्पानी ॥
तहिया होते कली नहिं फूला । तहिया होते गर्भ नहिं मूला ॥
तहिया होते विद्या नहिं वेदा । तहिया होते शब्द नहिं स्वादा॥
तहिया होते पिंड नहिं बासू । नहिं धर धरणि न पवन अकासू॥
तहिया होते गुरू नहिं चेला । गम्य अगम्य न पंथ दुहेला ॥
साखी—अविगतिकी गति का कहो । जाके गाँव न ठाँव ॥
गुण बिहूना पेखना । का कहि लीजे नाँव ॥७॥

टीकागुरुमुख—दोहा—तहिया होते पवन नहीं,पानी तहिया नाहिं॥ तहिया सृष्टि कौने किया,दृढ़ कै निरखहु ताहि ॥ १ ॥ जीवमुख—नहिं तब शक्ति संसार नहीं, गर्भ जीव तब नाहिं ॥ विद्या वेद तब ना हते, शब्द स्वाद कहु काहिं ॥२॥ तहिया पिंडहु ना हते, नहीं पिंडमें बास ॥ पानी पृथ्वी ना हती,पवनहु नाहिं अकाश॥ ३॥तहिया गुरू ना हतेचेलातहिया नाहिं ॥ गम्य अगम्य कहत बने नहीं, पंथ कठिनअति ताहिं ॥ ४ ॥
साखी-गुरुमुख—जाकी गति कछु है नहीं, ताकी गति कहु काहि ॥
गाँठ ठाँव नाहिं रूप नहीं, कैसे देखहु ताहि ॥ ५ ॥

रमैनी ८.

तत्त्वमसी इनके उपदेशा । ई उपनिषद कहैं संदेशा ॥
ई निश्चय इनके बड़ भारी । वाहिक वर्णन करें अधिकारी ॥
परमतत्त्व का निज परवाना । सनकादिक नारद शुक माना॥
याज्ञवल्क्य औ जनक सम्बादा । दत्तात्रेय वोही रस स्वादा ॥
वोहि बात राम वशिष्ठ मिलि गाई। वोहि बात कृष्ण उधव समुझाई॥
वोहि बात जो जनक दृढ़ाई । देह धरे विदेह कहाई ॥
साखी--कुल मार्य्यादा खोयके । जीवत मुवा न होय ॥
देखत जो नहिं देखिया । अदृष्ट कहावे सोय ॥ ८ ॥

टीकागुरुमुख—दोहा—मैंही ब्रह्म संदेश यह, वेदन जो कहि दीन्ह॥यह निश्चय भारी परी, तब वाही को वर्णन कीन्ह ॥१॥ परमतत्त्व परमात्मा, ताको निज परमान ॥ सनकादिक नारद मुनी,शुकाचार्य लिये मान ॥२॥ याज्ञवल्क्य और जनक को,यही भयो सम्बाद ॥ दत्तात्रेय अवधूतको, यहि रस लाग्यो स्वाद ॥३॥ यही बात रघुनाथ को, मुनि वशिष्ठ समुझाय ॥ यही बात श्रीकृष्ण ने, उद्धव दीन्ह लखाय ॥४॥ यही बात के भीतरे, जनकहु दृढता कीन्ह ॥ देह धरे-निशिदिन रहै, कहैं देह ते भिन्न॥५॥

साखी—जीयतही मारि जाइये, कुल मर्य्यादा खोय ॥
जीव तो कबहुँ मरै नहीं, यह सब मिथ्या होय ॥ ६ ॥
देह धरै जो जगत में, कहैं विदेही जान ॥
देखेसे जो ना दिखै, सो मिथ्या धोखा मान ॥ ७ ॥

रमैनी ९.

बाँधे अष्ट अष्ट नौ सूता । यम बाँधे अंजनी के पूता ॥
यम के बाहन बाँधे जनी । बाँधे सृष्टि कहाँ लौं गनी ॥
बाँधेउ देव तैंतीस करोरी । संबरत लोहबंद गौ तोरी ॥
राजा संबरे तुरिया चढ़ी । पन्थी संबरे नाम ले बढ़ी ॥
अर्थ बिहूना संबरे नारी । परजा संबरे पुहुमी झारी ॥
साखी--बंदि मनावे सो फल पावे। बंदि दिया सो देय ॥
कहैं कबीर सो ऊबरे । जो निशिवासर नामहिं लेय॥९॥

टीकागुरुमुख—दोहा—अष्ट योग कष्ट ज्ञान, नौधा भक्ती मान ॥ सूत जीव बाँधन लगे, प्रपंच माया जान ॥ १ ॥ भगवंत अपनी भक्तिमें, बाँधे अञ्जनि पूत ।। ब्रह्मादिक पंडित जते, सब बाँधे एकै सूत ।। २ ।। बाँधा सारी सृष्टि को, कहाँ लों करों बखान ।। तैंतिस कोटी देवता,सकलो कियो बंधान ।।३।। **मायामुख**-जग आसक्तता छाँडिके, जिन सुमिरा भगवान ।। चौरासी छूटी तिन्हैं, पद पायो निर्वान ।।४।। **गुरुमुख**-ज्ञानी तुर्या ऊपरै, सुमिरत हैं दिन रैन।।योगी अजपा में मिले, रहत मनहिंमें

चैन ॥ ५ ॥ अर्थ विहीना ब्रह्म को, सुमिरत हैं सब भक्त । कर्ता हर्ता हारिहि कही, सुमिरत हैं सब जक्त ॥ ६ ॥

साखी–माथामुख–वंदन करै भगवंतकी, सो फल पावै चार ॥
जाने जग उत्पति किंयो, मुक्ति करे निर्धार ॥ ७ ॥
कहैं वेद मुनि मनुज तन, तेही उबरे जान ॥
नाम लेत निशिबासर, सुमिरे श्रीभगवान ॥ ८ ॥

रमैनी १०.

राही ले पिपराही बही । करगी आवत काहु न कही ॥
आई करगी भौ अजगूता । जन्म जन्म यम पहिरे बूता ॥
बूता पहिरि यम कीन्ह समाना । तीन लोक में कीन्ह पयाना ॥
बाँधेउ ब्रह्मा विष्णु महेशू । सुर नर मुनि औ बाँधु गणेशू ॥
बाँधे पवन पावक औ नीरू । चाँद सूर्य बांधेउ दोउ बीरू ॥
साँच मंत्र बाँधे सब झारी । अमृत वस्तु न जानै नारी ॥
साखी–अमृत वस्तु जानै नहीं । मगन भया सब लोय ॥
कहहिं कबीर कामों नहीं । जीवहि मरण न होय ॥ १० ॥

टीकागुरुमुख–दोहा–याहि राह ले जीव सब, बहे घोर अंधार ॥ फाँसी आवत देखिकै, काहु न कीन्ह पुकार ॥१॥ आई फाँसी जगत पर, भौ धोखा निर्मान ॥ जन्म जन्म यम देहधरि, कीन्हों बहुत बखान ॥२॥ देह धरी गुरुवन सबै, कीन्हों बहुत समान ॥ बानी बहुत बनायके, सबहुन कीन्ह पयान ॥ ३ ॥ ता बानीमें बँध गये, ब्रह्मा विष्णु महेश ॥ सुर नर मुनि बाँधे सबै, गौरी पुत्र गणेश ॥ ४ ॥ पवन अग्नी औ जल बँधे, धरति अकाशके माहिं ॥ चान्द सूर्य दोऊ बँधे, छूटो कहु अब काहिं ॥ ५ ॥ साँच जीव बाँधा सबै, बहु बानिनमें झारि ॥ अमृत जाको मरन नहीं, ताको जाने न नारि ॥ ६ ॥

साखी–अमृत वस्तु जो जीव है, ताको जाने न कोय ॥
धोखा झाँई पायके, मगन मनहिंमें होय ॥७॥

जाको तुम निश्चय कियो, कहवाँ है सो रूप ॥
सो कछु काम न आइ हैं, जीवहि अमिय स्वरूप ॥८॥

रमैनी ११.

आँधरि गुष्ट सृष्टि भै बौरी । तीन लोकमें लागि ठगौरी ॥
ब्रह्मा ठगो नाग कहाँ जाई । देवता सहित ठगो त्रिपुरारी ॥
राज ठगौरी विष्णुपर परी । चौदह भुवन केर चौधरी ॥
आदि अंत जाकी जलक न जानी। ताकी डर तुम काहेक मानी ॥
वे उतंग तुम जाति पतंगा । यम घर कियउ जीवको संगा॥
नीम कीट जस नीम पियारा । विषको अमृत कहत गँवारा ॥
विषके संग कौन गुण होई । किंचित लाभ मूल गौ खोई ॥
विष अमृत गौ एकै सानी । जिन जानी तिन विषकै मानी ॥
काह भये नर शुद्ध विशुद्धा । बिन परचय जग बूड़ नबुद्धा ॥
मतिके हीन कौन गुण कहई । लालच लागी आशा रहई ॥
साखी–मुवा है मरि जाउगे । मुये कि बाजी ढोल ॥
सपन सनेही जग भया । सहिदानी रहिगौ बोल ॥ ११ ॥

टीकागुरुमुख–दोहा–आँधरि गुष्ट कहिये वेद को, तामें सृष्टि बौरान ॥ तीनि लोकके बीचमें, लागि ठगौरी जान ॥१॥ बानीमें ब्रह्मा ठगे, और शेष ठगे जाय ॥ देवन सहित महादेव ठगे, और विष्णु ठगे भाय ॥२॥ आदि अंत काहु जानी नहीं, काहे डरपहु ताहि ॥ सो मिथ्या अनुमान है, रज्जुमें सर्प दिखाहि ॥ ३ ॥ ज्योति स्वरूप ताको कियो, तुम भये कीट पतंग ॥ यम घर जीवको संग करि, जरि जरि मरहु पतंग ॥४॥ जस नीमके कीटको, नीमहि लागे पियार ॥ तैसे भग विषरूप है, अमृत कहत गँवार ॥५॥ विष विषयके संगमें, कौन लाभ होय भाय ॥ किंचित सुखके कारणे, मूलहु आय गवाँय ॥ ६ ॥ विष विषय जीव अमृत, गयो एकमें सान ॥ जिन जाना निज परखते, तिन विषये विषमान ॥७॥ हे नर तुम बहु शुद्ध थे, काहे भये बेशुद्ध ॥ बिन प्रपंचकी परिचय, सकलो बूड़े

अबुद्ध ॥ ८ ॥ मतिहीना काहे कहो, जाते बुद्धि नसाय ॥ लालच लागी झूठकी, तामें जन्म गमाय ॥ ९ ॥

साखी—गाया है सो मरि गया, गावै सो मरि जाय ॥
जाके भरोसे नाचत हो, ढोल बजाय बजाय ॥ १० ॥
स्वप्नवत जग हो गये, ऋषी और अवतार ॥
वचन निशानी रहि गया, जो उनका व्यवहार ॥ ११ ॥

रमैनी १२.

माटिक कोट पषानको ताला । सोईके बन सोई रखवाला ॥
सो बन देखत जीव डराना । ब्राह्मण वैष्णव एकै जाना ॥
ज्यों किसान किसानी करई । उपजे खेत बीज नहिं परई ॥
छाँड़ि देहु नर झेलिक झेला । बूड़े दोऊ गुरू औ चेला ॥
तीसर बूड़े पारथ भाई । जिन बन डाहे दवाँ लगाई ॥
भूँकि भूँकि कूकुर मरि गयऊ । काज नएक सियारसे भयऊ॥

साखी—मूस बिलारी एक सँग । कहु कैसे रहि जाय ॥
अचरज यक देखो हो संतो। हस्ती सिंघहि खाय॥१२॥

टीकागुरुमुख—दोहा—ब्रह्म भरम के कोटमें जड़ बुधि ताला दीन्ह॥ ताहि कि सब बानी बनी, ताहिको रक्षक कीन्ह ॥ १ ॥ सो बानीको देखिके, भये जीव भयमान ॥ ब्राह्मण वैष्णव सबन मिलि, कहा एक भगवान ॥ २ ॥ ज्यों किसान किसानी करे, उपजै खेत निदान ॥ तैसी बहु शाखा बढ़ी, चले पंथ सहिदान ॥३॥ छाँड़ि देहु नर बानिको फंद, तोहि कहौं समुझाय ॥ गुरु शिष्य दोऊ बूड़ि गये, या फंदामें भाय॥४॥ तीसर ब्रह्मादिक सबै, पंडित बूड़े धाय ॥ बिरह अग्नी परचायके, सब जग दीन्ह जराय ॥ ५ ॥ ब्रह्मादिक पंडित सबै, भूंकि भूंकि मरिजाय ॥ वेद भरोसा किये ते, काज न काहु बनाय ॥ ६ ॥

साखी—माया जीवहि एक सँग । कहु कैसे रहि जाय ॥
अचरज एक देखो हो संतो । धोखा जीवहि खाय ॥ ७ ॥

रमैनी १३.

नहिं परतीत जो यह संसारा । दर्बकी चोट कठिन कै मारा ॥
सो तो शेषो जाइ लुकाई । काहू के परतीत न आई ॥
चले लोग सब मूल गमाई । यमकी बाढि काटि नहिं जाई ॥
आजु काज जो काल अकाजा । चले लादि दिगंतर राजा ॥
सहज बिचारे मूल गमाई । लाभते हानी होय रे भाई ॥
ओछी मती चन्द्रमा गौ अथई । त्रिकुटी संगम स्वामी बसई ॥
तबहीं विष्णु कहा समुझाई । मैथुन अष्ट तुम जीतहु जाई ॥
तब सनकादिक तत्त्व बिचारा । जैसे रंक परा धन पारा ॥
भौ मर्याद बहुत सुख लागा । यहि लेखे सब संशय भागा ॥
देखत उतपति लागु न बारा । एक मरे एक करे बिचारा ॥
मुये गयेकी काहु न कही । झूठी आश लागि जग रही ॥
साखी--जरत जरत ते बाँचहू । काहु न कीन्ह गोहार ॥
विष विषय के खायहू । राति दिवस मिलि झार ॥१३॥

टीकागुरुमुख—दोहा—नहिं प्रतीति संसारमें, बिसरि गयो सब मान॥ शब्द बान हृदय लगे, जो माये फूँका कान ॥१॥ श्रवण द्वार होय संचरा, रहा हृदय दृढ होय॥काहूके प्रतीत नहीं, कितनहु कहौं सँजोय ॥ २ ॥ मूल गमाये लोग सब धाये यमपुर जाय ॥ यम बानी ऐसी बढ़ी, कोई न काटि सिराय ॥३॥ अबहिं करे तो काज है, मूये होय अकाज ॥ बानी बहुत संजोय के, चले दिढ़ावन राज ॥ ४ ॥ वह बानीको श्रवण करि लाभ जानि जिव धाय ॥ लाभ नहीं वह हानि है, धोखे जन्म गवाँय॥५॥ ब्रह्मज्ञान के बीच में, यह मन गये थिराय ॥ दोऊ नेत्रन पलटिके, त्रिकुटी ध्यान लगाय ॥६॥ तब गुरुवन वैराग्यबहू, जीवन दीन्ह दिढ़ाय ॥ मैथुन अष्ट प्रकार का, ताको जीतहु जाय ॥७॥ तब सब शिष्यन मिलिके, कीन्हों तत्त्व बिचार ॥ जैसे महा कंगालको, पायो द्रव्य अपार ॥८॥ भौ मर्य्यादा ब्रह्मको, सुखमें मन ललचाय॥याही लेखा जानिके, संशय गयो पराय ॥९॥

देखत उत्पति जगतकी, लागत नहिं कछु बार ॥ एकै खोजत मरि गये,एकै करत बिचार॥ १०॥खोजत खोजत मरि गये, तिनको कोइ न बताय ॥ झूठी आस जगतमें लागी, भोंदू तोहि भुलाय ॥ ११ ॥

साखी—गर्भवासमें जरत थे, बचे मनुष्य तन पाय ॥
अबहुँ न कीन्ह गोहार तुम, पुनि जग चले जहँडाय ॥१२॥
ये विषया तो विष भया, सब जग खाया झार ॥
राति दिवस तामें रते, कोइ एक बचै सम्भार ॥ १३ ॥

रमैनी १४.

बड़ सो पापी आहि गुमानी । पाखंडरूप छलेउ नर जानी ॥
वामनरूप छलेउ बलि राजा । ब्राह्मण कीन्ह कौनको काजा ॥
ब्राह्मण ही सब कीन्ही चोरी । ब्राह्मण ही को लागल खोरी ॥
ब्राह्मण कीन्हों वेद पुराना । कैसेहुके मोहिं मानुष जाना ॥
एकसे ब्रह्मै पन्थ चलाया । एकसे हंस गोपालहि गाया ॥
एकसे शंभू पंथ चलाया । एकसे भूत प्रेत मन लाया ॥
एकसे पूजा जैनि बिचारा । एकसे निहुरि निमाज गुजारा॥
कोइ काहूका हटा न माना । झूठा खसम कबीर न जाना ॥
तन मन भजि रहु मोरे भक्ता । सत्य कबीर सत्य है वक्ता ॥
आपुहि देव आपु है पाँती । आपुहि कुल आपु है जाती ॥
सर्वभूत संसार निवासी । आपुहि खसम आपु सुखवासी॥
कहइत मोहिं भयल युगचारी । काके आगे कहौं पुकारी ॥
साखी--साँचहि कोई न माने । झूठहि के सँग जाय ॥
झूठेहि झूठा मिलि रहा । अहमक खेहा खाय ॥ १४ ॥

टीकागुरुमुख—दोहा—जाके गर्भगुमान बहू, बड़ सो पापी आहि॥ ब्राह्मणरूप धरि जगतको, छले सबनको जाय ॥ १ ॥ वामनरूप भगवंत धरि, जाय छले बलिराज ॥ ब्राह्मण कीन्हो कौन को, कहा भला शुभ काज ॥२॥ साँची बस्तु छिपाय के, झूँठ दीन्ह प्रगटाय ॥ सब संसारके बीच में, आपहि देव कहाय ॥ ३ ॥ ब्राह्मण अपनी उक्तिसे, वेद पुराण

बनाय ॥ कैसे हुकै मोहिं मानुष जानै, वेद नारायण आय ॥४॥ कोइ ब्रह्मा कोइ हंस गोपाल, कोई शंभु बिचार ॥ कोइ भूत प्रेत कोई जैनी, कोई निवाज गुजार ॥५॥ यहि विचार निशि बासर करहीं, कोई हटा न मान ॥ झूठा खसम दिढ़ावहीं, सोइ जीवन सब जान ॥६॥ मायामुख—तन मनसे निश्चय करो, सुमिरो श्रीभगवान ॥ साँचे प्रभुजी आप हैं, साँचेहि वेद बखान ॥७॥ आपुहि देवन देव हैं, पत्र पत्रमें आप । आपुही कुल औ जाति हैं, भ्रमवश होय संताप ॥८॥ सर्वभूत संसारमें, आपुहि कीन्ह निवास ॥ आपुहि खाविंद जगतमें, आपुहि सुखमें वास ॥ ९ ॥ यह प्रकार कहते कहते, मोहिं भये युगचार ॥ याते आगे कछु नहीं, जाको करहु पुकार ॥ १० ॥

गुरुमुख—साखी—साँचहि जीव झूठा ब्रह्म । झूठी माया होय ॥
तामें अहमक मिलत ही । गयो अपन पद खोय ॥११॥

रमैनी १५.

वो नई बदरिया परि गौ संझा । अगुवा भूला बनखंड मंझा ॥
पिया अन्तै धन अन्तै रहई । चौपरि कामरि माथे गहई ॥
साखी--फुलवा भार न ले सकै । कहै सखियन सो रोय ॥
ज्यों ज्यों भीजे कामरी । त्यों त्यों भारी होय ॥१५॥

टीकागुरुमुख—दोहा—उठी भरम की बादरी, परिगौ जग अँधियार ॥ अगुवा ब्रह्मा भूलिया, बानी वेद मँझार ॥१॥ अंतै पीया बताइया, अंतै रहा यह जीव ॥ चारि वेद सिरपर धरै, युक्ति सबन मिलि कीव ॥२॥

साखी—जीव भार न सहि सकै । कहै आपुसमें रोय ॥
ज्यों ज्यों भीजै विषय में । त्यों त्यों जड़वत होय ॥ ३ ॥

रमैनी १६.

चलत चलत अति चरण पिराना । हारि परे तहाँ अतिरे सयाना ॥
गण गंधर्व मुनि अन्त न पाया । हरि अलोप जग धन्धे लाया ॥
गहनी बंधन बाण न सूझा । थाकि परे तहँ किछउन बूझा ॥
भूलि परे जिय अधिक डेराई । रजनी अन्धकूप होय आई ॥

माया मोह उहाँ भरपूरी। दादुर दामिनि पवन अपूरी ॥
बरसै तपे अखंडित धारा। रैन भयावन कछु न अधारा ॥
साखी–सबै लोग जहँड़ाइया। अँधा सबै भुलान ॥
कहा कोई ना माने। सब कै माहिं समान ॥ १६ ॥

टीकागुरुमुख–दोहा–चलत चलत सब जगत में, अतिशय चरण पिराय ॥ ब्रह्म खोज मों हारि परे, बड़े सयाने भाय ॥१॥ गण गंधर्व औ मुनिवर, काहू अंत न पाय ॥ तबहिं कहा हरि गुप्त है, जगको कर्म लगाय ॥२॥ जो बंधन मुनिवर दिया, सो गहि लिया संसार ॥ बंधन जानि परो नहीं, सबै परे तहाँ हार ॥ ३ ॥ तहाँ कछु बूझा नहीं, भूले जीव डेराय ॥ भरम भूल अँधियारिया, परी जिवनपर आय ॥ ४ ॥ वहाँ गुरुवन का मोह बहू, पंडित बेद सुनाय ॥ अर्धमात्रा ॐकार को, एकन एक दृढ़ाय ॥ ५ ॥ बरसै बिरह अखंड विधि, तपै जीव सब झार ॥ भरम मोह भयावनो, कछु ना मिलै अधार ॥ ६ ॥
साखी–सबै लोग जहँड़ाइया। अंधा सबै भुलान ॥
कहा कोई ना माने। सब एकै माहिं समान ॥७॥

रमैनी १७.

जस जिव आपु मिलै अस कोई। बहुत धर्म सुख हृदया होई ॥
जासु बात रामकी कही। प्रीति न काहूसो निर्बही ॥
एकै भाव सकल जग देखी। बाहर परे सो होय विवेकी ॥
विषय मोहके फन्द छुड़ाई। तहाँ जाय जहाँ काट कसाई ॥
अहै कसाई छूरी हाथा। कैसेहु आवै काटौं माथा ॥
मानुष बड़ा बड़ा होय आया। एकै पंडित सबै पढ़ाया ॥
पढ़ना पढ़ो धरो जनि गोई। नहिं तो निश्चय जाहु बिगोई॥
साखी–सुमिरण करहू रामका। छाँड़हु दुखकी आस ॥
तर ऊपर धै चापि हैं।जस कोल्हू कोटि पिचास॥१७॥

टीकामायामुख–दोहा–जस जीव आप मिलै अस कोई, बहुत धर्म सुख होय ॥ राम बात तासों कहो, प्रीति निबाहै जो कोय ॥१॥

गुरुमुख—एक भाव सब देखहीं, परे जालमें सोय ॥ बाहर परे यह जालते, जो कोई विवेकी होय ॥२॥ विषय मोह संसार के, फंद छुड़ाय बनाय॥ ब्रह्मज्ञानी जहाँ रहत हैं, तहाँ बँधावा जाय ॥ ३ ॥ हाथ पोथी वेदान्त की, बैठे बड़े महन्त ॥ कैसेहु जियरा आवहीं, मूड़हुँ ताहि तुरंत ॥४॥ बड़े बड़े मानुष जे भये, ब्रह्मै सबै पढ़ाय ॥ कर्म धर्म सिद्धान्त मत, दीन्ही सबै दृढ़ाय ॥५॥ **मायामुख**—पढ़ना पढ़हू वेद का, कछू न राखो गोय ॥ बिना भक्ति भगवान की, निश्चय जाहु बिगोय ॥ ६ ॥

मायामुख—साखी—सुमिरण करहू रामका, छाँड़ि जगतकी आस ॥
नहिं तो महादुःख है, होय नर्क में बास ॥७॥
तरे जीव ऊपरे यम, धर चापै जब सीस ॥
कोल्हू कोटि पचास में, तब सबै जायँगे खीस ॥८॥

रमैनी १८.

अद्‌बुद पंथ वर्णि नहिं जाई । भूले राम भूलि दुनियाई ॥
जो चेतहु तो चेतहुरे भाई । नहिं तो जीव यम ले जाई ॥
शब्द न माने कथै ज्ञाना । ताते यम दियो है थाना ॥
संशय सावज बसै शरीरा । तिन्ह खायो अनबेधा हीरा ॥

साखी—संशय सावज शरीरमें । संगहि खेले जुआरि ॥
ऐसा घायल बापुरा । जीवहि मारै झारि ॥१८॥

टीकागुरुमुख—दोहा—अद्‌बुदपंथ कहिये ब्रह्मको, सो तो वर्णि न जाय ॥ भूले ब्रह्म कहाय जिव, सबै चले बौआय ॥ १ ॥ चेतन होय तो चेतहू, कहौं तोहिं समुझाय ॥ अनजाने यह जीवको, गुरुवन लीन्ह फँदाय ॥२॥ सार शब्द मानै नहीं, कहै बहु ज्ञान बनाय ॥ ताते फाँसी गिरनने, थाना दीन्हों आय ॥ ३ ॥ संशयको उपदेश जो, बस्यो शरीरन आय ॥ अनबेधा हीरा जीव, ताने डारो खाय ॥ ४ ॥

साखी—संशय सर्प शरीरमें, अछो डसो निहार ॥
ता संग खेलत जीयरा, रह्यो आपनपौ हार ॥ ५ ॥

विषय सर्पकी चोटमें, आपु गये बौबाय ॥
ऐसा घायल बापुरा, मारत जीवहिं धाय ॥ ६ ॥

रमैनी १९.

अनहद अनुभव केकरि आशा । ई विप्रीत देखहु तमाशा ॥
इहै तमाशा देखहुरे भाई । जहवाँ शून्य तहाँ चलिजाई ॥
शून्यहि बंछे शून्यहि गयऊ । हाथा छोड़ि बेहाथा भयऊ ॥
संशय सावज सकल संसारा । काल अहेरी साँझ सकारा ॥
साखी–सुमिरण करहू रामका । काल गहे हैं केश ॥
ना जानो कब मारि हैं । क्या घर क्या प्रदेश ॥१९॥

टीकागुरुमुख–दोहा–अनहद जाकी हद नहीं, ताका करैं अनुभव विश्वास ॥ अशा बन्धि तमास यह, बनो ताहिको दास ॥ १ ॥ यही तमासा देखोहो संतो, अचरज कहा न जाय ॥ शून्य जहाँ कछु है नहीं, तहाँ बँधायो धाय ॥२॥ भग विषयमें फंदि रहा, अंतहु भगमें जाय॥ आपन काया छोड़के, गर्भवास को पाय ॥३॥ संशयरूपी सर्प यह, डसौ सकल जग भाय ॥ गुरुवा शिकारी जीव के, साँझ सकारे धाय ॥ ४ ॥
साखी–मायामुख–सुमिरण करहू रामका । कालगहे हैं केश ॥
ना जानों कब मारि हैं, क्या घर क्या परदेश ॥५॥

रमैनी २०.

अब कहु राम नाम अविनासी । हरि छोड़ि जियरा कतहुँ न जासी
जहाँ जाहु तहाँ होहु पतंगा । अब जनि जरहु समुझि विषसंगा
राम नाम लौलायसु लीन्हा । भृङ्गी कीट समुझि मन दीन्हा ॥
भौ अस गरुवा दुखके भारी । करु जिय यतन जो देखु बिचारी ॥
मनकी बात है लहरि बिकारा । ते नहिं सूझै वार न पारा ॥
साखी--इच्छा करि भवसागर । जामें बोहित राम अधार ॥
कहैं कबीर हरि शरण गहु । गोखुर बच्छ विस्तार ॥ २० ॥

टीकामायामुख—दोहा—अब कहु राम नाम, अविनाशी जो नित्य ।। हरिपर छाँड़िके जीयरा, कतहुँ न जावहु मीत ।।१।। गुरुमुख—जहाँ जहाँ जाहू धायके, तहाँ तहाँ होहु पतंग ।। याहि जानि अब जरहु जिन, विषय अग्निके संग ।। २ ।। राम नाम लौलाइया, सुनिके बचन भुवंग ।। भृंगी कीट को नेह लखि, निज मन लाय निसंग ।। ३ ।। ऐसो भवसागर बढ़ो, दारुण दुख कहि जाहि ।। कर जिय यतन बिचारि के, त्यागु परखि के ताहि ।। ४ ।। मनकी बात जो ब्रह्म है, सोई लहरि बेकारि ।। काहुको जानि परौ नहीं, ताको वार न पार ।। ५ ।।

साखी—ब्रह्म होय इच्छा करी, इच्छा ते संसार ।।
होय अनेक बहु दुखित भौ, तब तारक राम अधार ।। ६ ।।
कहैं पंडित समुझाय के, श्रीहरि धरो अधार ।।
हरि कृपाते भवसागर, गौखुर बच्छ विस्तार ।। ७ ।।

रमैनी २१.

बहुत दुख दुख दुखकी खानी । तब बचिहो जब रामहि जानी ।।
रामहि जानि युक्ति जो चलई । युक्तिहिते फन्दा नहिं परई ।।
युक्तिहि युक्ति चला संसारा । निश्चय कहा न मानु हमारा ।।
कनक कामिनी घोर पटोरा । संपति बहुत रहै दिन थोरा ।।
थोरी संपति गौ बौराई । धर्मराय की खबरि न पाई ।।
देखि त्रास मुख गौ कुम्हिलाई । अमृत धोखे गौ विष खाई ।।

साखी—मैं सिरजों मैं मारों । मैं जारों मैं खाँव ।।
जल थल महियाँ रमि रहौं । मोर निरंजन नाँव ।।२१।।

टीका मायामुख—दोहा—बहुत दुख संसार यह, निश्चय दुखकी खानि ।। तब बाँचहुरे जीयरा, जब राम करहु पहिचानि ।। १ ।। राम निरंतर जानिके, युक्ति चलै जो कोय ।। योग युक्ति ते फंद कटै, मुक्ति सहज में होय।।२।। गुरुमुख—युक्तीसे युक्ती बढ़ी, चला सकल जग

जान ॥ निश्चय कहा न मानहीं, ब्रह्म सिंधु सुख मान ॥ ३ ॥ कनक कामिनी घोर पटोरा, संपति बहुत कमाय ॥ थोरे दिनकी साथि यह, अन्त सबै पछिताय ॥ ४ ॥ थोड़ी संपतिमें जगत, सबै चले बौराय ॥ धर्मराय जो काल है, ताकी खबरि न पाय ॥ ५ ॥ देखि त्रास संसार को, गयो जीव कुम्हिलाय ॥ अमृत आतम धोखसे, हंता विष रह्यो खाय ॥ ६ ॥

ब्रह्ममुख–साखी–मैं सिरजों मैं मारों । मैं जारौं मैं खाँव ॥
जल थल महियाँ रमि रहौं । मोर निरंजन नाँव ॥ ७ ॥

रमैनी २२.

अलख निरंजन लखै न कोई । जेहि बंधे बंधा सब लोई ॥
जेहि झूठे सब बाँधु अयाना । झूठा बचन सांच कै माना ॥
धन्धा बन्धा कीन्ह व्योहारा । कर्म विवर्जित बसे निनारा ॥
षट आश्रम औ दर्शन कीन्हा । षटरस बास षटै वस्तु चीन्हा॥
चारि वृक्ष छौ शाखा बखानी । विद्या अगणित गनै न जानी॥
औरो आगम करे बिचारा । ते नहिं सूझै वार न पारा ॥
जप तीरथ व्रत कीजे बहु पूजा । दान पुण्य कीजे बहु दूजा ॥
साखी–मंदिर तो है नेह का । मति कोई पैठो धाय ॥
जो कोई पैठे धायके । बिन सिर सेंती जाय ॥२२॥

टीका गुरुमुख–दोहा–अलख निरंजन कहत हैं, ताको लखे न कोय ॥ जेहिके बंधनसे सकल, जगत बंधावा होय ॥ १ ॥ जे झूठे गुरुवाजने, बाँधे सकल अज्ञान ॥ झूठ बचन अनुमानको, ताहि साँचके मान ॥ २ ॥ बहु बन्धनमें बंधे जीव, करे कर्म व्यौहार ॥ कोई कहै कर्म विवर्जित, निशि दिन ब्रह्म निनार ॥ ३ ॥ ग्रेहि वानप्रस्थ संन्यासी ब्रह्मचारी सुनी सिया ॥ योगी जंगम जैन संन्यासि फकीर, ब्राह्मण ये षट दर्शन किया ॥ ४ ॥ वोहं सोहं हूँ अल्लाहू, महीनाद विस्तार ॥ तत्त्वनाम निरंजना ये, षट रसहिं बिचार ॥ ५ ॥-अदेव मूल ब्राह्मण

कहैं, अहंब्रह्म संन्यासि ॥ वायू कहत दरवेशसो, योगी धरणि निवासि ॥ ६ ॥ शशी अमीरस जैनी कहै, जंगम महदाकास ॥ षट दर्शन सिद्धांत यह, करे जगत विश्वास ॥ ७ ॥ चारि वेद छौ शास्त्र हैं, विद्या अगनित जान॥और अगम बिचार करे,करि आपन अनुमान॥८॥ वार पार सूझे नहीं, फाटा भरम अपार ॥ भय भय धावन लगे जिव,काहु न कीन्ह विचार ॥ ९ ॥ जप तप तीरथ व्रत बहू, कीजे पूजा दान ॥ पुण्य बहुत प्रकारका, ये भ्रमजाल मान ॥ १० ॥

साखी—फाँसी तो है नेह की । मति कोइ पैठो धाय ॥
जो कोइ पैठे धाय के । सहजे धोखा खाय ॥ ११ ॥

रमैनी २३.

अल्प सुख दुख आदिउ अन्ता । मन भुलान मैगर मैंमन्ता ॥
सुख बिसराय मुक्ति कहाँ पावे । परिहरि साँच झूठ निज धावे॥
अनल ज्योति डाहै एक संगा । नैन नेह जस जरै पतंगा ॥
करहु बिचार जो सबदुख जाई । परिहरि झूठाकेर सगाई ॥
लालच लागी जन्म सिराई । जरा मरण नियराइल आई ॥

साखी—भरमका बाँधा ई जग । यही विधि आवै जाय ॥
मानुष जन्म पाय के । नर काहे को जहँड़ाय ॥२३॥

टीकागुरुमुख—दोहा—अल्प सुखहि में दुःख है, आदिहि में है अंत ॥ मन मतंग जग भूलिया, मानि ब्रह्मता हंत ॥१॥ सर्वहि सुख बिसराय के, मुक्ती खोजत जाय ॥ साँचा निज पद छाँड़ि के, निशिदिन धोखा खाय ॥ २ ॥ अनलज्योति मृगलोचनी, ताहि नेह जिय डाय ॥ जिमि दीपक ज्योति देखि के, जरत पतंगी धाय ॥ ३ ॥ करहु विचार जो सर्वमें, दुख सकलो मिटि जाय ॥ ब्रह्म धोख यह त्यागहू, जो गुरुवन ठहराय ॥४॥ लालच लागी जगतको, तामें जन्म सिराय ॥ आ गे पीछे करत ही, आई मृत्यु नगिचाय ॥ ५ ॥

साखी—भरमका बाँधा ई जग । यहि विधि आवै जाय ॥
मानुष जन्म पायके । नर काहेको जहँड़ाय ॥ ६ ॥

रमैनी २४.

चन्द्र चकोरकी ऐसी बात जनाई। मानुष बुद्धि दीन्ह पलटाई ॥
चारि अवस्था सपनेहु कहई। झूठो फूरो जानत रहई ॥
मिथ्या बात न जाने कोई। यहि विधि सब गैल विगोई॥
आगे दै दै सबन गमाया। मानुष बुद्धि सपनेहु नहिं पाया॥
चौतिस अक्षरसें निकलै जोई। पाप पुण्य जानेगा सोई ॥
साखी--सोई कहंता सोई होहुगे। तै निकरि न बाहिर आव ॥
हो हजूर ठाढ़ कहत हौं। तैं क्यों धोखे जन्म गमाव ॥

टीकागुरुमुख–दोहा- चंद्र चकोर की ऐसी, प्रीती दीन्ह दृढ़ाय ॥ मानुष बुद्धि हंसकी, तुरत दीन्ह पलटाय ॥१॥ चारि अवस्था स्वप्नवत, दीन्हीं साँच दृढ़ाय ॥ झूठेही अनुमान को, साँच जीव पतियाय ॥२॥ जो मिथ्या धोखा है, ताको कोई न जान ॥ येही विधि सब नष्ट भये, ब्रह्मसिंधु सुखमान ॥ ३ ॥ आगे जो ऋषि मुनि भये, आपन पद सबै गमाय ॥ मानुष पद निर्णय कोई, स्वपनेहू नहिं पाय ॥ ४ ॥

चौतिस अक्षर जाल रची, कीन्हो जग परवान ॥ तामेंसे जो निकरै, पाप पुण्य सोई जान ॥ ५ ॥

साखी–जो कहत सोई होहुगे। तैं निकरि न बाहिर आव ॥
जो हजूर सो तुमहींहो। क्यों धोखे जन्म गमाव ॥६॥

रमैनी २५.

चौतिस अक्षरका इहै बिशेषा। सहस्रों नाम याहिमें देखा ॥
भूलि भटकि नर फिर घट आया। होत अजानसो सब न गमाया॥
खोजहिं ब्रह्मा विष्णु शिवशक्ती। अनंतलोक खोजहिं बहु भक्ती॥
खोजहिं गण गंधर्व मुनि देवा। अनन्तलोक खोजहिं बहु भेवा॥
साखी--जती सती सब खोजहीं। मनहिं न माने हारि ॥
बड़ बड़ जीव न बाँचिहैं। कहहिं कबीर पुकारि ॥२५॥

टीका गुरुमुख–दोहा–चौतिस अक्षर जालमें, सकलो धोखा जान॥ सहस्र नाम ये जानिये, ताहीको परमान ॥ १ ॥ भूलि भटकि भ्रमजाल

में, फिर नर घटमें आय ॥ होत अज्ञान गुरुवन सँग, पुनि सब दीन्ह् गमाय ॥२॥ खोजहिं ब्रह्मा विष्णु शिव, ता बानीको जान ॥ अनंत लोक सब खोजहीं, करि बहु भक्ति प्रमान ॥३॥ खोजहिं गण गंधर्व मुनी, तैंतिस कोटी देव ॥ अनन्त लोकमें खोजहीं, देखि देखि बहु भेव॥४॥

साखी—जती सती सब खोजहीं । मनहि न मानै हारि ॥

बड़ बड़ जीव न बांचिहैं । कहहिं कबीर पुकारि ॥५॥

रमैनी २६.

आपुहि कर्ता भये कुलाला । बहु बिधि बासन गढ़ै कुम्हारा ॥
विधिने सबै कीन्ह एक ठाऊँ । अनेक यतन के बने कनाऊँ ॥
जठर अग्निमों दीन्ह प्रजारी । तामहँ आपु भये प्रतिपाली ॥
बहुत यतनके बाहर आया । तब शिव शक्ती नाम धराया ॥
घरका सुत जो होय अयाना । ताके संग न जाहु सयाना ॥
साँची बात कही मैं अपनी । भया दिवाना औरकी पुनी ॥
गुप्त प्रगट है एकै दूधा । काको कहिये ब्राह्मण शूद्रा ॥
झूठे गर्भ भूलो मत कोई । हिन्दू तुरुक झूठ कुल दोई ॥

साखी--जिन्ह यह चित्र बनाइया। साँचा सो सूत्रधारि ॥

कहहिं कबीर ते जन भले। जो चित्रवन्तहि लेहि निहारि २६

टीकागुरुमुख--दोहा--जीवरूप करता बने, हंता भई प्रकास ॥ ताते नाम कुलाल भौ, ब्रह्मअस्मि भौ भास ॥ १ ॥ भासते अन्तःकरण भौ, चित मन बुद्धि हंकार ॥ ताते इच्छा रूप भौ, नारि प्रगट तेहि ठहार ॥२॥ ता नारीके चक्रपर, बहुविधि रूप उपाय ॥ तेहिते कर्ता आपुही, नाम कुम्हार कहाय ॥ ३ ॥ ब्रह्मा बुद्धी कीन्हिया, सबै तत्त्व एक ठाम ॥ बहु योनिन रूप ढारिया, अनेक यतनके नाम ॥ ४ ॥ तब संकल्प मनने कियो, चल्यो चित्त तेहि ठाम । बुद्धीने निश्चय धरो, ताते उपज्यो काम ॥ ५ ॥ तत्त्व प्रकृती सब सम भई, मिलो कँवल जब जाय ॥ जठर अग्निके भीतरे, यहि विधि दीन्ह जराय ॥ ६ ॥ तामें आपु प्रकाश भौ, भयो तहाँ प्रतिपाल ॥ नर्क मूत्र मुखमें

परे, उठे दुर्गंध विशाल ॥ ७ ॥ तहाँ रूप साबुत भयो, तब पुनि बाहर आय ॥ स्त्री औ पुरुष ऐसा, जगमें नाम धराय ॥ ८ ॥ जो यह मन अज्ञान भौ, भरमे जहाँ तहाँ धाय ॥ अरे सयाने जीयरा, ताके संग न जाय ॥ ९ ॥ साँच बात आपन कहौं, कछू ना राखों गोय ॥ गुरुवन संग मतिभंग भई, अन्तहु चले बिगोय ॥ १० ॥ गुप्त प्रगट है एकै जीव, एकै रूप निहार ॥ ब्राह्मण शूद्र काको कहिये, ये सब झूठ बिचार ॥ ११ ॥ झूठ जाति कुल धर्म है, भूलि गहो मति कोय ॥ हिन्दू तुरुक मन मत है, झूठ बने कुल दोय ॥ १२ ॥

साखी–जिन यह चित्र बनाइया । साँचा सो जीवरूप ।
तेई जन अति उत्तम । निश्चय किया सो रूप ॥ १३ ॥

रमैनी २७.

ब्रह्माको दीन्हों ब्रह्मंडा । सप्त दीप पुहमी नौ खण्डा ॥
सत्य सत्य कहि विष्णु दृढ़ाई । तीन लोक मा राखि न जाई ॥
लिंगरूप तब शंकर कीन्हा । धरती खीलि रसातल दीन्हा ॥
तब अष्टंगी रची कुमारी । तीनि लोक मोहा सब झारी ॥
दुतिया नाम पार्वतीको भयऊ । तप कर्ते शंकर कहँ दियऊ ॥
एकै पुरुष एक है नारी । ताते रची खानि भौ चारी ॥
सर्बन बर्बन देव औ दासा । रजसत तमोगुण धरति अकाशा ॥
साखी--एक अंड ॐकारते । सब जग भया पसार ॥
कहहिं कबीर सब नारि रामकी । अबिचल पुरुष भतार ॥२७॥

टीकागुरुमुख–दोहा–जीव रूप कर्ता बने, इच्छा ते भइ नार ॥ ताको अष्टंगी कही, तेहिते तीनिउ बार ॥१॥ ब्रह्माको ब्रह्मांडको, राज्य दियो है सौंपि ॥ सात दीप नौ खण्डमें, ध्वजा विष्णुकी रोपि ॥ २ ॥ ॐ ॐ कहि विष्णु दृढ़ाई, तीन लोक मंझार ॥ लिंगरूप शंकर करै, दीन्हों राज पतार ॥ ३ ॥ तब अष्टंगीने रची कन्या रूप बनाय ॥ तीनि लोक सब मोहिया, उबरो कोउ न पाय ॥ ४ ॥ दूसर नाम सती

को, भयो पारवति आहि ॥ तब हिमाचल पिताने, शिवही दीन्ही ब्याहि ॥ ५ ॥ एक नारि एक पुरुषते रचना सबही झार ॥ चार खानि चौरासी, स्वर्ग मृत्यु पातार ॥ ६ ॥ श्रोता वक्ता प्रगट भये, देव औ दास ॥ रज सत तम गुण प्रगटे, धरती और अकाश ॥ ७ ॥

साखी—जीवरूप अनुमान ते । सब जग भया पसार ॥
जाकी सब नारी बनी । कहाँ है सोइ अतार ॥ ८ ॥

रमैनी २८.

अस जोलहा काहु मर्म न जाना। जिन्ह जगआनि पसारिनिताना॥
धरति अकाश दोउ गाड़ खंदाया। चाँद सूर्य दोउ नरी बनाया ॥
सहस्र तारले पूरनि पूरी। अजहूँ बिनै कठिन है दूरी ॥
कहैं कबीर कर्मसे जोरी। सूत कुसूत बिने भल कोरी॥२८॥

टीकागुरुमुख—दोहा—अस ब्रह्मा विप्रीत भौ, ताको कोइ न जान ॥ जासे बहु बानी बनी, पसरी जगमें आन ॥ १ ॥ अर्धकी श्वासा उर्ध करी, दहिने बाँय मिलाय ॥ सुषुमना मारग गहि चढ़े, ऐसो दीन्ह दृढ़ाय ॥ २ ॥ सहस्र नामकी भक्तिको, बहु विधि दीन्ही पूरि ॥ औरो अगम बताइया, ब्रह्म कठिन बहु दूरि ॥३॥ ब्रह्मा अपनी उक्तिसे, बहु विधि कर्म बनाय ॥ सूत जीव कुसूत बानी, गुरुवन बाँधी आय ॥ ४ ॥

रमैनी २९.

बज्रहुते तृण खिनमें होई। तृणते बज्र करे पुनि सोई ॥
निझरू नीरु जानि परिहरिया। कर्म का बाँधा लालच करिया॥
कर्म धर्म मति बुद्धि परिहरिया। झूठा नाम साँच ले धरिया॥
रजगति त्रिविधि कीन्ह प्रकाशा। कर्म धर्म बुद्धिकेर विनाशा ॥
रविके उदय तारा भौ छीना। चर बीहर दूनोंमें लीना ॥
विषके खाये विष नहिं जावे। गारुड़ सो जो मरत जियावे ॥

साखी–अलख जो लागी पलकमें। पलकही में डसि जाय ॥
विषहर मंत्र न मानै । तो गारुड़ काह कराय ॥ २९ ॥

टीकामायामुख--दोहा--छिनमें वज्र को तृण करे, तृण छिन वज्र समान । अपनी इच्छा मात्रमें, ऐसे श्रीभगवान ॥ १ ॥ गुरुमुख--निझरू कहिये ब्रह्मको, नीरु सकल संसार ॥ ऐसा जाना जीवने, छाँड़ा जग व्यौहार ॥ २ ॥ ब्रह्म कर्ममें जायके, बँधे जीव तब जाय ॥ ज्ञान योग भक्ती आचरे, लालच बड़ी बलाय ॥ ३ ॥ कर्म भरममें बँधे जीव, मति बुद्धि गई हेराय ॥ साँचे झूठे नामको, साँच धरैं ललचाय ॥ ४ ॥ गुरुवाई तीन प्रकारकी, सबन कीन्ह प्रकाश ॥ कर्म भरम बतायके बुद्धिका करहि विनाश ॥ ५ ॥ जैसे सूर्य प्रकाशसे, तारागण होय छीन ॥ ऐसे ब्रह्मज्ञान की, होत जगत मति लीन ॥ ६ ॥ जैसे विषके खायते, विष नहिं उतरे भाय ॥ गारुड़ सोई जानिये, मरतहि देइ जिवाय ॥ ७ ॥

साखी--अलख समाधी धारि के, योगिन ध्यान लगाय ॥
सोइ ध्यान हियरे डसो, चढ़ो जहर सब भाय ॥ ८ ॥
जहरी जीव मानै नहीं, कोटिन करो उपाय ॥
साधु बिचारा क्या करै, जिमि बहुविधि बाँस बजाय ॥ ९ ॥

रमैनी ३०.

औ भूले षट दर्शन भाई । पाखंड भेष रहा लपटाई ॥
जीव शीवका आहि नसौना । चारिउ वेद चतुर्गुण मौना ॥
जैनी धर्म का मर्म न जाना । पाती तोरि देव घर आना ॥
दवना मरुवा चंपाके फूला । मानहु जीव कोटि समतूला ॥
औ पृथिवीके रोम उचारे । देखत जन्म आपनो हारे ॥
मनमथ बिंद करे असरारा । कल्पै बिंद खसे नहिं द्वारा ॥
ताकर हाल होय अदबूदा । छौ दरशन में जैनि बिगुर्चा ॥
साखी--ज्ञान अमरपद बाहिरे । नियरे ते है दूरि ॥
जो जाने ताके निकट है। नहिं तो रहा सकलघटपूरि३०॥

टीकागुरुमुख--दोहा--औ भूले षट दरशन, पाखंड भेष बनाय ॥ ब्रह्म बानिको मानिके,सबै रहे लपटाय ॥ १ ॥ ये जीव शीव कासो कहैं, जाते होय विनाश ॥ चारिउ वेद चतुर गुण, गावत भये निरास ॥ २ ॥ जैनी अपने धर्मको, जाने नहीं बिचार ॥ पाती तोरि देवघर आने, जामें जीव बिहार ॥ ३ ॥ दवना मरुवा चंपाके फूला, जीवकोटि सूंघि अघाय ॥ ताको मूरुख तोरि के,पथरा माहिं चढ़ाय॥४॥ और शरीरके रोमको, शिष्यनसे उचराय ॥ उनकी नारिनसे भोग करे, आपन जन्म गमाय ॥ ५ ॥ मनमथ बिंदु असरार करी, भोगे नारि दुष्ट ॥ कल्प बिंदु खसै नहीं, साधनसे करि पुष्ट ॥ ६ ॥ ताकर हाल अदबुद होय, परे चौरासी माहिं ॥ छौ दर्शनके भीतरे, जैनि चले जहँडाहिं ॥ ७ ॥

मायामुख--साखी--ज्ञान अमरपद सबसे न्यारा । सब घटमें दरसाय ॥
जाने ताके निकट है । ना तो अकाशवत रहै समाय ॥८॥

रमैनी ३१.

सुमृति आहि गुणनको चीन्हा । पाप पुण्यको मारग कीन्हा ॥
सुमृति वेद पढ़ें असरारा । पाखंडरूप करें हंकारा ॥
पढ़ें वेद और करें बड़ाई । संशय गाँठि अजहुँ नहिं जाई॥
पढ़ें शास्त्र जीव बध करई । मूँड़ी काटि अगमनके धरई ॥
साखी--कहहिं कबीर ई पाखंड । बहुतक जीव सताव ॥
अनुभव भाव न दरशै । जियत न आपु रखाव ॥३१॥

टीकागुरुमुख--दोहा-स्मृती वेदको चीन्हके, बन रहे पंडाराय ॥ पाप पुण्यको मारग, दीन्हों आपु चलाय ॥ १ ॥ वेद स्मृती पंडित पढ़ैं, करें बहुत हँकार ॥ वेद पढ़े अस्तुति करे, छूटै न संशय जार ॥२॥ पढ़ैं शास्त्र जीव बध करें, काटें मूँड़ी जान ॥ सो ताके आगे धरे, पाथर मूरति मान ॥ ३ ॥

साखी--सुनो संत यह पंडित, बहुतक जीव सताय ॥
अनुभव आगु बतावहीं, जियत न आपु रखाय ॥ ४ ॥

रमैनी ३२.

अंध सो दर्पण वेद पुराना । दर्बी कहा महारस जाना ॥
जस खर चन्दन लादेउ भारा । परिमल बास न जानु गवाँरा॥
कहहिं कबीर खोजे असमाना । सोन मिला जो जाय अभिमाना

टीकागुरुमुख—दोहा—जैसो आँधरो दर्पण, ऐसो वेद पुराण ॥ महा-रोगी क्या जाने, अमृतको परमान ॥१॥ जस गदहाके ऊपरे, लादेउ चंदन भार ॥ परिमल सुख जानै नहीं, वह पशु मूर्ख गँवार ॥२॥ कहाँ है जाही खोजहू, धरती औ असमान ॥ सो न मिला न मीलि है, जाते छूटै अभिमान ॥ ३ ॥

रमैनी ३३.

वेदकी पुत्री सुमृति भाई । सो जेवरि कर लेतहि आई ॥
आपुहि बरी आपन गर बंधा । झूठा मोह कालको फंदा ॥
बंधवत बंधा छोरिया न जाई । विषयस्वरूप भूलि दुनिआई ॥
हमरे देखत सकल जग लूटा । दास कबीर राम कहि छूटा ॥
साखी--रामहि राम पुकारते । जिभ्या परिगौ रौंस ॥
सूधा जल पीवै नहीं । खोद पिवनकी हौंस ॥ ३३ ॥

टीकागुरुमुख--दोहा--वेदहि से स्मृती भई, तासो भयो पुराण ॥ सो फाँसी ले हाथ में, पंडित करत बखान ॥ १ ॥ बरी अपनी उक्ति से, आपन गर भौ बंध ॥ झूठ ब्रह्मका मोह कर, सोई कालको फंद ॥२॥ बन्धन तो सब बंधिया, छोरो काहु न जाय॥विषयरूप सब भूलिया, ब्रह्म समाधि लगाय ॥ ३ ॥ हमरे देखत धोखमें, सब जग लूटो जाय ॥ चारिउ युगमें भक्त सब, राम कहै थिति पाय ॥ ४ ॥

साखी--रामहि राम पुकारते, जिभ्या परिगौ रौंस ॥
एकहि रटि रटि मरि गये, एकहि लागी हौंस ॥ ५ ॥
शुद्ध जीव चीन्हें नहीं, करे बहुत अनुमान ॥
हौंसा हौंसी भरममें, बूड़ो सकल जहान ॥ ६ ॥

रमैनी ३४.

पढ़ि पढ़ि पंडित करु चतुराई । निज मुक्ती मोहि कहो समुझाई॥
कहाँ बसै पुरुष कौनसा गाऊँ । सो पंडित मोहि सुनावहु नाऊँ॥
चारि वेद ब्रह्मै निज ठाना ।मुक्ति का मर्म उनहु नहिं जाना॥
दान पुण्य उन बहुत बखाना ।अपने मरणकी खबरि न जाना॥
एक नाम है अगम गंभीरा । तहवाँ अस्थिर दास कबीरा ॥
साखी--चिउंटी जहाँ न चढ़ि सकै। राई ना ठहराय ॥
आवागमनकी गम नहीं । तहाँ सकलो जग जाय॥३४॥

टीकागुरुमुख--दोहा--पढ़ि पंडित चतुराई करो, निज मुक्ती समुझाव॥ कहाँ पुरुष केहि गाँवमें, सोइ सुनावहु नाँव ॥१॥ चारि वेद ब्रह्मै किया, मुक्ति न उनहु पछान ॥ ॥ दान पुण्य उन बहुत कहा, आपन मर्म न जान ॥ २ ॥ ॐनाम एक अगम कही, बहुतही गहिर बताय ॥ तहाँ यह जीव स्थिर भयो, ताके दास कहाय ॥ ३ ॥

साखी--बानी जहाँ न चढ़ि सकै, बुद्धि नहीं ठहराय ॥
सो मिथ्या अनुमान है, तहाँ बंधायो जाय ॥ ४ ॥
आवागवन जहाँ है नहीं, तहाँ कैसेकै जाय ॥
परखो सन्तो धोख यह, भोंदू रखे भुलाय ॥ ५ ॥

रमैनी ३५.

पंडित भूले पढ़ि गुनि वेदा । आप अपनपौ जानु न भेदा ॥
संझा तर्पण औ षट कर्मा । ई बहु रूप करे अस धर्मा ॥
गायत्री युग चारि पढ़ाई । पूछहु जाय मुक्ति किन पाई ॥
और के छिये लेत हो छींचा । तुमसो कहहु कौन है नीचा ॥
ई गुण गर्भ करो अधिकाई । अधिके गर्भ न होय भलाई ॥
जासु नाम है गर्भ प्रहारी । सो कस गर्भहि सकै संहारी ॥
साखी--कुल मर्यादा खोयके । खोजिन पद निर्वान॥
अंकुर बीज नसायके । नर भये विदेही थान ॥३५॥

टीकागुरुमुख--दोहा--पंडित भूले वेद पढ़ि, आपन आपु न जान ॥ संध्या तर्पण कर्म षट, औ बहु धर्म बखान ॥१॥ गायत्री युग चारि पढ़ाई, कहा मुक्ति किन पाय॥ औरके छुये छींटा लेहू, तुमसे नीचको भाय॥२॥ अस्थि माँस औ रुधिर त्वचा, मल नख सिख भरपूर ॥ जो तुममें सो सर्व में, जानत नहिं कस कूर ॥ ३ ॥ ई गुण गर्भ अधिकार जो, यामें भलो न कोय ॥ जासु नाम है गर्भ प्रहारी, कस सहिहैं गर्भ सोय ॥४॥

साखी--कुल मर्यादा खोयके । खोजिन पद निर्वान ।
अंकुर बीज नसायके । नर भये विदेही थान ॥५॥

रमैनी ३६.

ज्ञानी चतुर बिचक्षण लोई । एक सयान सयान न होई ॥
दूसर सयान को मर्म न जाना । उत्पति परलय रैन बिहाना ॥
बनिज एक सबन मिलि ठाना । नेम धर्म संयम भगवाना ॥
हरि अस ठाकुर तजियो न जाई । बालहिबिहिस्तगावहिं दुलहाई॥
साखी--ते नर कहाँ गये । जिन दीन्हा गुरु घोंटि ॥
राम नाम निजु जानिके । छाँड़ि देहु बस्तु खोटि ॥३६॥

टीकागुरुमुख--दोहा--ज्ञानी चतुर बुद्धिमान जो, सबन कीन्ह परमान॥ एक सयाना ब्रह्म है, जीव सदा अज्ञान ॥ १ ॥ दूसर सयान जो ब्रह्मा, ताको मर्म न जान ॥ उत्पति परलय होत है, जाकी रैन बिहान ॥२॥ यह मायाका वचन सुनी, बनिज सबन मिलि ठान ॥ नेम धर्म औ भक्ति करी, प्रसन्न रहिं भगवान ॥ ३ ॥ हरि अस ठाकुर काहुसे, त्यागा कबहुँ न जाय ॥ जीव सबै दुलहिन बनै, मुक्त पुरुषको गाय ॥४॥

साखी--राम नाम निज जानिके । जिन्ह गुरु दीन्हा मंत्र ॥
देखहु ते नर कहाँ गये । छाँड़हु झूठ स्वतंत्र ॥ ५ ॥

रमैनी ३७.

एक सयान सयान न होई । दूसर सयान न जाने कोई ॥
तीसर सयान सयानहिं खाई । चौथे सयान तहाँ ले जाई ॥

पचयें सयान न जाने कोई। छठयेंमा सब गैल बिगोई ॥
सतयाँ सयान जो जानहु भाई। लोक वेदमों देऊँ दिखाई ॥
साखी--बीजक बित्त बतावै। जो बित्त गुप्ता होय ॥
ऐसे शब्द बतावै जीव को। बूझै बिरला कोय ॥३७॥

टीकागुरुमुख--दोहा--एक सयान जो ब्रह्म है, सो सयान नहिं होय ॥ दूसर सयान जो माया, ताहि न जाने कोय ॥ १ ॥ तीसर सयान जो त्रिगुण, भक्ति ज्ञान अरु योग ॥ चौथे सयान चहुँ वेद हैं, धै धै लगावत सोग ॥२॥ पाचयें पाँचों तत्त्व हैं, जामें जीव रहे गोय ॥ छठये मनके फंदमें, सब जग चला बिगोय ॥३॥ सतयाँ सयान जो जीव है, याते सब बिस्तार ॥ बानी खानी याहि ते, ब्रह्म सृष्टि जग झार ॥ ४ ॥

साखी--बीजक बित्त बतावै । जो बित्त गुप्ता होय ॥
ऐसे शब्द बतावै जीवको । बूझै बिरला कोय ॥ ५ ॥

रमैनी ३८.

यहि बिधि कहौं कहा नहिं माना। मारग माहिं पसारिनि ताना॥
राति दिवस मिलि जोरिन तागा। ओटत कातत भरम न भागा॥
भरमहि सब जग रहा समाई। भरम छोड़ि कतहू नहिं जाई॥
परे न पूरि दिनहु दिन छीना। तहाँ जाय जहाँ अंग बिहूना॥
जो मत आदि अंत चलि आई। सोमत सब उन्ह प्रगट सुनाई॥
साखी--यह संदेशा फुरकै मानेहु। लीन्हेउ शीस चढ़ाय ॥
संतो संतोष सुख है। रहहु तो हृदय जुड़ाय॥३८॥

टीकागुरुमुख--दोहा--यहि बिधि कहौं पुकारिके, कहा न कोई मान ॥ बहुबिधि बानि दृढ़ाय के, जीवन बाँधो तान ॥ १ ॥ राति दिवस मिलि जोरिया, बहु बिधि सुरति लगाय ॥ पढ़त पढ़ावत मरि गये, भरम न भागो भाय ॥ २ ॥ भरम माहिं यह जगत सब, निशि-दिन रहत समाय ॥ भरम छाँड़िके जीयरा, अन्तै कतहूँ न जाय ॥३॥ पूर परे नहिं काहुकी, होत दिनहु दिन छीन॥खोजत खोजत तहाँ गये,

जहवाँ अंग विहीन ॥ ४ ॥ आदि मत अनुमानको, सोई अन्त चलि आय ॥ सोइ वेद मत प्रकट करी, गुरुवन दीन्ह सुनाय ॥ ५ ॥

साखी--यह संदेसा फुरकै मानेहु । लीन्हेउ शीस चढ़ाय ॥
संतो संतोष सुख है । रहहु तो हृदय जुड़ाय ॥ ६ ॥

रमैनी ३९.

जिन्ह कलमा कलिमाहिं पढ़ाया । कुदरत खोज तिनहूँ नहिं पाया॥
कर्मंत कर्म करे करतूता । वेद कितेब भये सब रीता ॥
कर्मंत सो जग भौ अवतरिया । कर्मंत सो निमाजको धरिया॥
कर्मंत सुन्नति और जनेऊ । हिंदू तुरुक न जाने भेऊ ॥
साखी-पानी पवन संजोय के । रचिया यह उत्पात ॥
शून्यहि सुरति समोइके । कासो कहिये जात ॥ ३९ ॥

टीकागुरुमुख--दोहा--कलिजुगमें महमद भये, जिन्ह जग कलमा पढ़ाय ।। खोजत खोजत बानिमा, वोहु रहे पछिताय ॥ १ ॥ बड़े बड़े कर्मन करत है, वेद किताब बिचार ॥ कर्महि करि करि जगत सब, पुनि पुनि लेत अवतार ॥ २ ॥ कर्महिसे जग भव भयो, कर्म निमाज गुजार ॥ कर्महि सुन्नति जनेउ कही, हिंदू तुरुक खुवार ॥ ३ ॥

साखी--बिंद औ पवन मिलाय भग । भया जगत उत्पात ॥
फिर भगहीमें सुरति लगाइया । अब कासो कहिये जात॥४॥

रमैनी ४०.

आदम आदि सुधि नहिं पाई । मामा हवा कहाँ ते आई ॥
तब नहिं होते तुरुक औ हिंदू । मायके रुधिर पिताके बिंदू ॥
तब नहिं होते गाय कसाई । तब बिसमिल्ला किन फुरमाई ॥
तब नहिं होते कुल औ जाती । दोजख बिहिस्त कौन उत्पाती॥
मन मसलेकी सुधी न जाना । मति भुलान दुइ दीन बखाना॥
साखी--संजोगेका गुण रवै । बिजोगे का गुण जाय ॥
जिभ्या स्वारथ कारणे । नर कीन्हें बहुत उपाय ॥४०॥

टीकागुरुमुख--दोहा--आदी आदम ब्रह्मा, तिनहु खबर नाहिं पाय ॥ मामा हवा जो माया, कहो कहाँ ते आय ॥ १ ॥ हिंदू तुरुक तब ना हते, रुधिर औ बिंदु जमाय ॥ तब कहाँ गाय कसाइ थे, बिसमिल्ला किन्ह फुरमाय ॥ २ ॥ कुल जाती तब ना हती, दोजख बिहिस्तहु नाहिं ॥ मन अनुमाने भूलिया, दो दीन बखाना ताहि ॥ ३ ॥

साखी--संकल्पे जग होत है । बिन संकल्प मिट जाय ॥
यह मत सत्य करनको । नर कीन्हेउ बहुत उपाय ॥४॥

रमैनी ४१.

अंबुकी राशि समुद्रकी खाई । रवि शशि कोटि तैंतिसों भाई॥
भँवर जालमें आसन माँडा । चाहत सुख दुख संग न छाँडा॥
दुखको मर्म न काहू पाया । बहुत भाँति के जग भरमाया॥
आपुहि बाउर आपु सयाना । हृदया बसै तेहि राम न जाना॥
साखी -तेही हरि तेहि ठाकुर । तेही हरिके दास ॥
ना यम भया न जामिनी।भामिनि चली निरास ॥ ४१ ॥

टीकागुरुमुख--दोहा--अंबु कहिये पानीको, पानी बानी जान ॥ पानी कहिये कामको, जाते जग बंधान ॥ १ ॥ समुद्र कहिये ब्रह्मकी, खाई माया जान ॥ माया कहिये कायाको, की भगखाई बखान ॥२॥ चन्द्र सूर्य औ देवता, तैंतिस कोटी भाय ॥ याही भँवर जालमें, आसन दिया लगाय ॥ ३ ॥ चाहत हैं सब सुख बहू, दुखन संग छुड़ाय ॥ दुःखको मर्म न जानहीं, बहुबिधि जग भरमाय ॥ ४ ॥ आपुहि जीव बाउर भयो, आप सयान रहाय ॥ हृदया जो धोखा बसो, ताको मर्म न पाय ॥ ५ ॥

साखी--जोई हरी सोई ठाकुर । सोई हरिका दास ॥
ना ब्रह्म भया न गुरुवा । भाविक चले निरास ॥ ६ ॥

रमैनी ४२.

जब हम रहल रहल नहिं कोई । हमरे माहिं रहल सब कोई ॥
कहहु राम कौन तेरी सेवा । सो समुझाय कहो मोहिं देवा॥
फुरफुर कहेउ मारु सब कोई । झूठेहि झूठा संगति होई ॥
आँधर कहैं सबै हम देखा । तहाँ दिठियार बैठि मुख पेखा॥
यहि विधि कहेउँ मानु जो कोई । जस मुख तस जो हृदया होई ॥
कहहिं कबीर हंस मुसिकाई । हमरे कहल दुष्ट बहु भाई ॥

टीकाब्रह्ममुख--दोहा--जब हम रहैं तब कछु नाहीं, सब जग हमरे माँहि ॥ जिमि बट बीजमें जानिये, पत्र फूल फल छाँहि ॥ १ ॥ गुरुमुख--जब तुम रहे तब कछु नहीं, पत्र फूल फल छाँहि ॥ तो सेवन कौने किया, सो मोहि कहो समुझाहि ॥ २ ॥ साँच कहौं बिचारके, सब जग मारन धाय ॥ झूठा धोख दृढ़ावहीं, ताको सेवहिं जाय ॥३॥ आँधर कहिये वेदको, कहैं सकल हम देख ॥ दिठियारो कहिये जीव को, बैठि ताहि मुख पेख ॥ ४ ॥ यहि विधि कहौं समुझायके, जो कोइ माने लोय ॥ जैसी मुखते नीकरे, अस हृदया उदय होय ॥ ५ ॥ कहाँ हैं सन्तो जाहिमें, हंस बँधायो जाय ॥ हमरे कहैं यह जगतमें, उठत दुष्ट बहु भाय ॥ ६ ॥

रमैनी ४३.

जिन्ह जिव कीन्ह आपु बिस्वासा। नरक गये तेहि नर्कहिं बासा॥
आवत जात न लागे बारा । काल अहेरी साँझ सकारा ॥
चौदह विद्या पढ़ि समुझावा । अपने मरनकी खबरि न पावा॥
जाने जीवको परा अंदेशा । झूठहि आयके कहा संदेशा॥
संगति छाँड़ि करे असरारा । उबहै मोट नर्ककर भारा ॥
साखी--गुरुद्रोही मन्मुखी । नारी पुरुष बिचार ॥
ते नर चौरासी भरमि हैं । ज्यौं लौं चंद्र दिवाकार॥४३॥

टीकागुरुमुख--दोहा--अहं ब्रह्म कहलाय जिव, जिन्ह कीन्हा विश्वास।। ते निश्चय नर्कहिं गये, भयो नर्क में बास ।।१।। ब्रह्महिं ते जग होत है, जगतहींते ब्रह्म होय ।। साँझ सकारे दृढ़ावहीं, महानास्ति पद सोय ।।२।। पढ़िके चौदह विद्या, दीन्ह जगत् समुझाय ।। अपने मरनकी खबरी, ब्रह्माहू नहिं पाय ।। ३ ।। जाने जीवको अंदेश भौ, झूठहि कहा संदेश ।। बढ़ो बिरह सब जगत्में, उपजे बहुत कलेश ।।४।। संगत छाड़ि जगत् की, करें तर्क ब्यौहार ।। उबरा चाहै देह यह, मोट नर्ककर भार ।।५।।

साखी--गुरुपदसे न्यारे भये । ब्रह्म अस्मि कहाय ।।
ते नर चौरासी भरमि हैं । रैन दिवसके न्याय ।।६।।

रमैनी ४४.

कबहुँ न भयउ संग औ साथा । ऐसहि जन्म गमायेउ आछा ।।
बहुरि न पैहो ऐसो थाना । साधु संगति तुम नहिं पहिचाना ।।
अब तोर होइ हैं नर्कमहँ बासा । निशिदिन बसेउ लबारके पासा ।।
साखी--जात सबनकहँ देखिया । कहहिं कबीर पुकार ।।
चेतवा होय तो चेति ले । नहिं तो दिवस परतु है धार ४४ ।।

टीकागुरुमुख--दोहा--संग कियो जो ब्रह्मको, सो कबहुँ न भौ साथ ।। ऐसेहि जन्म गमायऊ, अच्छो मानुष जात ।।१।। बहुरि न पैहो देह यह, मानुष उत्तम रूप ।। साधुन मिलि परखेउ नहीं, खानि बानि को भूप ।। २ ।। बिनु परखे तोहि जीयरा, होय नर्कमें बास ।। निशि दिन भर्महि मा बसे, और लबारन पास ।। ३ ।।

साखी--जात सबन कहँ देखिया । कहहिं कबीर पुकार ।।
चेतवा होय तो चेति ले। नहिं तो दिवस परतु है धार ।।४।।

रमैनी ४५.

हरणाकुश रावण गौ कंसा । कृष्ण गये सुर नर मुनि बंसा ।।
ब्रह्मा गये मर्म नहिं जाना । बड़ सब गये जे रहल सयाना ।।
समुझि न परलि रामकी कहानी । निर्बक दूध कि सर्बक पानी ।।
रहिगौ पंथ थकित भौ पवना । दशों दिशा उजारि भौ गवना ।।

मीन जाल भौ ई संसारा । लोहकि नाव पषानको भारा ॥
खेवैं सबै मर्म हम जानी । तैयों कहैं रहे उतरानी ॥
साखी--मछरी मुख जस केंचुआ । मुसवन माँह गिरदान ॥
सर्पन माँही गहे जुवा ऐसी । जात देखि सबनकी जान४५॥

टीकागुरुमुख--दोहा--हरणाकुश रावण गये, कंस गये गोपाल ॥ सुर नर मुनि बंसन सहित, ब्रह्मा गये बेहाल ॥ १ ॥ बड़े-बड़े सबही गये, जे रहे बहुत सयान ॥ चौरासी प्राप्ती भई, ब्रह्मसिंधु सुखमान ॥२॥ समुझ परी नहिं राम की, कथनी बढ़ी अपार ॥ न्यारे ब्रह्म बतावही, पुनि कहि जगत मंझार ॥ ३ ॥ जबहीं श्वासा थकित भौ, रहि गौ पंथ अपार ॥ देहसे जीव न्यारो भयो, दशहूँ दिशा उजार ॥ ४ ॥ जीव सबै मछरी भये, जारो भौ संसार ॥ धोखे केरी नावरी, मनको गरुवा भार ॥५॥ खेवै सबै गुरवा जने, कहै मर्म हम जान ॥ बूड़त हैं सब भगहि में, कहँ रहे उतरान ॥ ६ ॥

साखी--देखि बंसि को केंचुआ, मछरी आन बझान ॥
ऐसी फल श्रुति देखिके, जीव सबै हैरान ॥ ७ ॥
रंग देखि गिरदानको, मूसा सब मिलि धाय ॥
फूँकत ही आँखी गई, अस उपदेश सुभाय ॥ ८ ॥
गही छछून्दर सर्पमुख, उगिलत बनै न खात ॥
ऐसी माया जगतमें, गही तजी नहिं जात ॥ ९ ॥
देखि सुभग मृगलोचनी, धायो जैसो मूस ॥
छछूंदर देखै सर्प ज्यों, की बंसी ऊपर रूस ॥१०॥

रमैनी ४६.

बिनसे नाग गरुड़ गलि जाई । बिनसे कपटी औ सत भाई ॥
बिनसे पाप पुण्य जिन्ह कीन्हा ।बिनसे गुण निर्गुण जिन्ह चीन्हा॥
बिनसे अग्नि पवन औ पानी । बिनसे सृष्टि कहांलों गनी ॥
विष्णुलोक बिनसै छिन माहीं । हौं देखा परलय की छाँहीं ॥

साखी–मच्छरूप माया भई । जब रहिं खेले अहेर ॥
हरि हर ब्रह्मा न ऊबरे । सुर नर मुनि केहि केर ॥४६॥

टीकागुरुमुख--दोहा--बिनसे नाग गरुड़ गली, कपटी औ सत भाय। पाप पुण्य बिनसे सबै, जिन्ह गुण निर्गुण गाय ॥१॥ पाँच तत्त्व सब नासे विष्णु लोक बिनसाय ॥ अहंब्रह्म जो देखिया, सो परलय की छाँय ॥२॥

साखी--जीवरूप माया भई । गुरुवा बने शिकारि ॥
हरि हर ब्रह्मा बाँचे नहीं । सुर नर मुनि कौन विचारि ॥३॥

रमैनी ४७.

जरासिंधु शिशुपाल संघारा । सहस्र अर्जुन छल सो मारा ॥
बड़ छल रावण सो गौ बीती । लंका रहल कंचनकी भीती ॥
दुर्योधन अभिमाने गयऊ । पांडोकेर मर्म नहिं पयऊ ॥
मायाके डिंभ गयल सब राजा । उत्तम मध्यम बाजन बाजा ॥
छौ चकवे बीती धरणि समाना । एकौ जीव प्रतीत न आना ॥
कहांलों कहौं अचेतहि गयऊ । चेत अचेत झगरा एक भयऊ॥
साखी–ई माया जग मोहिनी । मोहिन सब जग झार ॥
हरिश्चन्द्र सत्तके कारणे । घर घर सोग बिकाय ॥४७॥

टीकागुरुमुख--दोहा--जरासिंधु शिशुपाल औ, सहस्रार्जुन मरि जाय॥ रावण दुर्योधन गये, पंडौ गये बिलाय ॥ १ ॥ मायाकेरी डिंभमें, गये बड़े पृथिवी राय ॥ उत्तम मध्यम करनि जो, जाकी जगत सब गाय॥२॥ छौ चकवे सब बीतिके, धरणी माँहि समाय ॥ एकौ जीव प्रतीत नहीं, सबै चले जहँड़ाय ॥३॥ कहाँलों कहौं अचेत ही गये, निर्णय लखे न बनाय ॥ झगरा चेत अचेत एक, जगत रहे अरुझाय ॥ ४ ॥

साखी--ई माया जग मोहिनी । मोहिन सब जग झार ॥
हरिश्चन्द्र सत्तके कारणे । घर घर सोग बिकाय ॥५॥

रमैनी ४८.

मानिकपुर कबीर बसेरी । मदति सुनी सेख तकि केरी॥
ऊजै सुनी जौनपुर थाना । झूसी सुनी पीरन को नामा ॥

इकइस पीर लिखें तेहि ठामा। खतमा पढ़ै पैगंबर नामा ॥
सुनी बोल मोहिं रहा न जाई। देखि मुकर्बा रहा भुलाई ॥
हबी नबी नबी के कामा। जहाँलों अमल सो सबै हरामा॥
साखी–शेख अकर्दी शेख सकर्दी। मानहु बचन हमार ॥
आदि अंत औ युग युग। देखहु दृष्टि पसार ॥४८॥

टीकागुरुमुख--दोहा--मानिक कहिये मानबो, पूर कहिये ठाम ॥ कबीर कहिये जीवको, बसो और के धाम ॥ १ ॥ मद्दति कहिये पौढ़ता, शेख कहिये जीव ॥ तकी गुरुवनको कहत है, जोरे तकावत पीव ॥२॥ जेहि पुरकी बातें सुनी, तहँवाँ रोपेउ ठाम॥ झूठहि बातें सुनि सुनी, ले पीरन को नाम ॥ ३ ॥ इकइस पीर लिखे तेहि ठामा, करि आपन अनुमान ॥ खतमा पढ़ि पैगम्बर, नाम खलिलको ठान ॥ ४ ॥ ऐसी बानी सुनिके मोते रह्यो न जाय ॥ कबर मुकर्बा देखिके, जगमें रहा भुलाय ॥५॥ हबी कहै समुझायके, सुनो नबीके काम ॥ जहाँलों अमल बतावहीं, सो सब जानु हराम ॥ ६ ॥

साखी--हिन्दू तुरुक दोउ मिलिके। मानहु वचन हमार ॥
आदि अन्त औ युग युग। देखहु दृष्टि पसार ॥ ७ ॥

रमैनी ४९.

दरकी बात कहो दरवेसा। बादशाह है कौने भेसा ॥
कहाँ कूच कहाँ करे मुकामा। मैं तोहि पूछौं मूसलमाना ॥
लाल जर्द की नाना बाना। कौन सुरतिको करो सलामा ॥
काजी काज करहु तुम कैसा। घर घर जबह करावहु भैंसा ॥
बकरी मुरगी किन्ह फुरमाया। किसके कहे तुम छुरी चलाया॥
दर्द न जानहु पीर कहावहू। बैता पढ़ि-पढ़ि जग भरमावहू॥
कहहिं कबीर एकसैय्यद बोहावै। आप सरीखा जग कबुलावै ॥
साखी--दिन को रहत हैं रोजा। राति हनत हैं गाय ॥
यह खून वह बंदगी। क्योंकर खुशी खुदाय ॥४९॥

टीकागुरुमुख--दोहा--दरकी बात दरवेश कहो, अल्लाहको निशान ॥ कहाँ कूच मुकाम कहाँ, कहु भाई मूसलमान ॥ १ ॥ लाल जर्द नाना वर्ण हैं, किसको करहु सलाम ॥ काजी काज न चीन्हिया, गर कटवाये हराम ॥ २ ॥ बकरी मुरगी काटने, किन्ह फुरमाया भाय । किसके हुकुम तुम जीवपर, दीन्ही छुरी चलाय ॥ ३ ॥ दर्द न जाने बेपीरसे, जगमें कहावत पीर ॥ बैता पढ़ि-पढ़ि जगतमें, देत भरम जंजीर ॥४॥ कहहिं कबीर एक सैय्यद, जगमें करें पुकार ॥ आपन अस सबन कहलावहीं, नाहक करत खुवार ॥ ५ ॥

साखी--दिन को रहत हैं रोजा । राति हनत हैं गाय ॥
यह खून वह बंदगी । क्यों कर खुशी खुदाय ॥ ६ ॥

रमैनी ५०.

कहइत मोहि भयल युग चारी । समुझत नाहिं मोर सुतनारी ॥
बंसहि आगि लगि बंसहि जरिया। भरम भूल नर धंधे परिया ॥
हस्ति के फंदे हस्ती रहई। मृगा के फंदे मृगा रहई ॥
लोहे लोह जस काटु सयाना । त्रियाके तत्व त्रिया पहिचाना॥
साखी--नारि रचंते पुरुषा । पुरुष रचन्ते नार ॥
पुरुषहि पुरुषा जो रचै । ते बिरले संसार ॥ ५० ॥

टीकागुरुमुख--दोहा--कहत कहावत जगत्‌को, रीति चले युग चारि ॥ समुझत नाहीं जीअरा, भया औरकी नारि ॥ १ ॥ अग्नि उठत हैं बाँस ते, बाँसहि देत जराय ॥ मनुष्यते भरम भयो, मनुष्य गयो बौराय ॥ २ ॥ भरम भुलाने नर सकल, परे बहु फंदन माँह ॥ जैसे हस्तिके फंदते हस्ती जात फँदाय ॥ ३ ॥ मृगसे मृगको फाँदहीं, लोहे-लोह कट जाय ।। कुटनिनसे त्रिया फँदे, अस जग फंदी जाय॥४॥

मायामुख--साखी--नारि रचै जस पुरुषको । पुरुष रचै जस नार ॥
पारब्रह्ममें जो रचै । ते बिरले संसार ॥ ५ ॥

रमैनी ५१.

जाकर नाम अकहुवा रे भाई । ताकर काह रमैनी गाई ॥
कहैं तातपर्य एक ऐसा । जस पंथी बोहित चढ़ि वैसा ॥

है कछु रहनि गहनिकी बाता । बैठा रहै चला पुनि जाता ॥
रहै बदन नहिं स्वाँग सुभाऊ । मन अस्थिर नहिं बोलै काहू ॥
साखी--तन राता मन जात है । मन राता तन जाय ॥
तन मन एकै होय रहै । तब हंस कबीर कहाय ॥ ९१ ॥

टीकागुरुमुख--दोहा--जाकर नाम अकह है, सो कस गाया जाय ॥ गुरुवन ऐसो दृढ़ाइया, जस पंथी जहाज चढ़ाय ॥ १ ॥ मायामुख--है कछु रहन गहनि की, बात कहौं समुझाय ॥ राम कहै बैठा रहै, चला सो वैकुंठ जाय ॥ २ ॥ राम नाम मुखसे कहै, धरे न स्वाँग सुभाव ॥ मनस्थीर नामहिं रख, बचन न बोलै काहु ॥ ३ ॥

साखी--जहाँ तन राता तहाँ मन गयो । मन राता तन जाय ।
तन मन एकै होय रहै । तब जिव ब्रह्म कहाय ॥ ४ ॥

रमैनी ९२.

जेहि कारण शिव अजहुँ वियोगी। अंग विभूति लाय भौ योगी॥
शेष सहस्र मुख पार न पावै । सो अब खसम सही समुझावै॥
ऐसी बिधि जो मोकहँ ध्यावै । छठयें माँह दर्श सो पावै ॥
कौनेहु भाव देखाई देहों । गुप्तहि रहों सुभाव सब लेहों ॥
साखी--कहहिं कबीर पुकारिके । सबका उहै बिचार ॥
कहा हमार माने नहीं । कैसे छूटे भ्रम जार ॥ ९२ ॥

टीकागुरुमुख--दोहा--जासे अजहुँ वियोग शिव, शेष पार नहिं पाय ॥ सोई खसम अब सत्य कही, गुरुवन दीन्ह दृढ़ाय ॥१॥ ब्रह्ममुख--जैसी विधि वेदन कही, ऐसे जो मोहिं ध्याय ॥ सो नर अपने मनहिमें, दर्श हमारो पाय ॥२॥ कवनेउ भावसे ताहि को, देउँ देखाई जाय ॥ निशि दिन ताके संग रहों, जानों तासु सुभाव ॥३॥

गुरुमुख--साखी--कहहिं कबीर पुकारि के । सबका उहै बिचार ॥
कहा हमार माने नहीं । कैसे छुटै भ्रम जार ॥४॥

रमैनी ५३.

महादेव मुनि अन्त न पाया । उमा सहित उन जन्म गमाया॥
उनहूँ ते सिद्ध साधक होई । मन निश्चय कहु कैसे कोई ॥
जबलग तनमें आहै सोई । तबलग चेति न देखै कोई ॥
तब चेतिहो जब तजिहो प्राना । भया अयान तब मन पछताना॥
इतना सुनत निकट चलि आई । मन का बिकार न छूटै भाई ॥
साखी--तीन लोकमुवा कौवायके। छूटि न काहु कि आस ॥
एकै अँधरे जग खाया । सब का भया निपात ॥५३॥

टीकागुरुमुख--दोहा--महादेव और मुनि सकल, उनहूँ अन्त न पाय ॥ उमा सहित उन आपनो, खोजत जन्म गमाय ॥ १ ॥ उनहीते सिद्ध साधक भये, कस मन अस्थिर होय ॥ जबलग जीव तनमें अहै, चेति न देखै कोय ॥ २ ॥ प्राण जाय तन छोड़के, तब चेतहुगे भाय ॥ भये अज्ञानी मानुषा, फिर मनमें पछताय ॥ ३ ॥ इतनो सुनत हैं जगत सब, मौत निकट चलि आय॥मन विकार छूटै नहीं, अनबनि यतन नसाय ॥ ४ ॥

साखी--तिहुँलोक मुवा पुकारि के । छूटि न काहू की आस ॥
एक धोखेने सब खाया । जगका भया निपात ॥५॥

रमैनी ५४.

मरिगौ ब्रह्मा काशि को बासी । शीव सहित मूये अविनासी ॥
मथुराको मारिगौ कृष्णगोवारा। मरि-मरि गये दशों अवतारा॥
मरि-मरि गये भक्ति जिन्ह ठानी । सर्गुणमा निर्गुण जिन्ह आनी॥
साखी--नाथ मछंदर बाँचे नहीं । गोरख दत्त औ व्यास ॥
कहहिं कबीर पुकारि के । ई सब परे कालकी फाँस॥५४॥

टीकागुरुमुख--दोहा--मरिगौ ब्रह्मा देह धरी, शिव मूये अभिमान ॥ मथुराके कृष्णहु मुये, दश अवतार मरे जान ॥ १ ॥ जिन्ह बहु विधि भक्ति करी, सोऊ मरे निदान ॥ मरे सोऊ जिन्ह सगुण में, निर्गुण कियो बखान ॥ २ ॥

साखी–नाथ मछंदर बाँचै नहीं । गोरख दत्त औ व्यास ॥
कहहिं कबीर पुकारि के । ई सब परे कालकी फाँस ॥

रमैनी ५५.

गये राम औ गये लछमना । संग न गई सीता ऐसी धना ॥
जात कौरवे लागु न बारा । गये भोज जिन्ह साजल धारा ॥
गये पांडव कुन्ती ऐसी रानी । गये सहदेव जिन बुद्धि मति ठानी ॥
सर्व सोनेकी लंका उठाई । चलत बार कछु संग न लाई ॥
जाकर कुरिया अन्तरिछ छाई । सो हरिचन्द देखल नहिं जाई ॥
मूरख मनुसा बहुत संजोई । अपने मरे और लग रोई ॥
ई न जानै अपनेउ मरि जैबे । टका दश बिढ़ै और ले खैबे ॥
साखी–अपनी अपनी करि गए । लागि न काहु के साथ ॥
अपनी करि गये रावणा । अपनी दशरथ नाथ ॥५५॥

टीकागुरुमुख–दोहा–राम औ लक्ष्मण गये, गये कौरव अरु भोज ॥ कुन्ती पांडव सब गये, गये सहदेवन खोज ॥ १ ॥ रावण औ हरिश्चंद गये, मूरख तृष्णा बढ़ाय ॥ अपनेहू मरि जायगा, रोवै औरको धाय ॥ २ ॥ ई नहिं जानै बावरा, न आपनहू मरिजाय ॥ टका दश विरह लगायके, औरन को ले खाय ॥ ३ ॥

साखी–अपनी अपनी करि गये । लागि न काहु के साथ ॥
अपनी करि गये रावणा । अपनी दशरथ नाथ ॥ ४ ॥

रमैनी ५६.

दिन दिन जरै जलनी के पाँऊ । गाड़े जाय न उमँगे काऊ ॥
कंधन देई मस्खरी करई । कहुधौं कौनि भांति निस्तरई ॥
अकर्म करे औ कर्मको धावै । पढ़ि गुनि वेद जगत समुझावै ॥
छूँछे परै अकारथ जाई । कहहिं कबीर चित चेतहु भाई ॥

टीकागुरुमुख–दोहा–मृगनैनीके पाँवमें, अग्निकुण्ड एक आय ॥ ये जियरा अज्ञान होय, दिन–दिन जरे तहाँ जाय ॥ १ ॥ गड़ो जात है भगहिमें, उमँगत कोऊ नाहिं ॥ जहवाँ ते उपज्यो जगत यह, पैठत तेहि

घर माहिं ॥ २ ॥ नारी है जग मोहिनी, दे आलिंगन धाहि ॥ करे मस्खरी बहुत विधि, कहु जिव कैसे निबाहि ॥३॥ अकर्म निशि दिन करत है, औ पुनि कर्महि धाय ॥ पढ़ि गुणि वेद जगतको, कर्महि देत दृढ़ाय ॥ ४ ॥ नरतन छूँछो परत है, जात अकारथ भाय ॥ जस ऊखहि ते रस परत है, होत परहथा जाय ॥ ५ ॥ कहहिं कबीर च्नित चेतहू, बहु बिधि कहौं बुझाय ॥ यह कामिनी तै बाँचहू, नाहिं तो यमपुर जाय ॥ ६ ॥

रमैनी ५७.

कृतिया सूत्र लोक एक अहई । लाख पचासकी आयू कहई ॥
विद्या वेद पढ़े पुनि सोई । वचन कहत परतक्षे होई ॥
पैठी बात विद्या की पेटा । वाहुक भरम भया संकेता ॥
साखी—खग खोजन को तुम परे । पाछे अगम अपार ॥
बिन परिचय कस जानिहो । कबीर झूठा है हंकार ॥५७॥

टीकागुरुमुख—दोहा—वानीके अनुमानसे, कहैं लोक एक आहि ॥ लाख पचासकी आयुष, तहाँ कहै समुझाय ॥१॥ ऐसी वेद कि बात जब, पैठी हृदयमें आय ॥ वाहूको बहु भ्रम भया, बड़ संकेत बनाय ॥ २ ॥
साखी—ब्रह्म खोजनको तुम परे । गुरुवन कहा अपार ॥
परिचय बिना कस जानिहो । झूठा सकल बिचार ॥३॥

रमैनी ५८.

तैं सुत मान हमारी सेवा । तो कहँ राज देउँ हो देवा ॥
अगम दुगम गढ़ देउँ छोड़ाई । औरों बात सुनहु कछु आई ॥
उत्पति परलय देउँ देखाई । करहु राज सुख बिलसो जाई ॥
एकौ बार न होइहैं बाँको । बहुरि जन्म न होइहैं ताको ॥
जाय पाप सुख होइहैं घना । निश्चय वचनकबीर के माना ॥
साखी--साधु संत तेई जना । जिन मानल वचन हमार ॥
आदि अंत उत्पति प्रलय । देखहु दृष्टि पसार ॥५८॥

टीकमायामुख—दोहा—अरे पुत्र तैं मानि ले, हमरी सेवा बनाय ॥ अठारह वरणका राज तोहि, देहौं युक्ति बताय ॥१॥ अगम कहें अदृष्ट को, दृगम कहिये जो दृष्ट ॥ दोनों धोख छुड़ायके, तोहि लखावहु सृष्ट ॥२॥ औरों बात सुनहु कछू, तोहि कहौं समुझाय ॥ उत्पत्ति प्रलयहु वृद्धि सब, तोकहँ देहुँ लखाय ॥३॥ करहु राज तिहुँ लोकको, बिलसहु सब सुख आय ॥ एकौ बार न होइ हैं बाँको, बहुरि जन्म नहिं पाय ॥४॥ जाय पाप सब देहको, होइ हैं सुख अपार ॥ ब्रह्म वाक्य अरु वेदको, जो जानत निरधार ॥ ५ ॥

साखी—साधु संत तेई जना । जिन मानल वचन हमार ॥
आदि अंत उत्पति प्रलय । देखहु दृष्टि पसार ॥ ६ ॥

रमैनी ५९.

चढ़त चढ़ावत भंडहर फोरी । मन नहिं जाने केकरि चोरी ॥
चोर एक मूसै संसारा । बिरला जन कोइ बूझन हारा॥
स्वर्ग पताल भूम्य ले बारी । एकै राम सकल रखवारी ॥
साखी—पाहन ह्वै ह्वै सब गये । बिन भितियन के चित्र ॥
जासो कियेउ मिताइया । सो धन भया न हित ॥५९॥

टीका गुरुमुख—दोहा—चढ़त चढ़ावत श्वासको,छूटि गई यह देह । मन नहिं जाने बावरा, काकी देई संदेह ॥ १ ॥ चोर एक अनुमान है, जाको ब्रह्म बखान ॥ बिरला जन कोई चीन्हि हैं,सो धोखेको जान ॥२॥ मायामुख—स्वर्ग पताल औ भूम्य लो, ई सब लाई बार ॥ एकहि राम सनातन, है सबको रखवार ॥ ३ ॥

गुरुमुख—साखी—पाहन ह्वै ह्वै सब गये । बिन भितियनके चित्र ॥
जासो कियेउ मिताइया । सो धन भया न हित ॥ ४ ॥

रमैनी ६०.

छाड़हु पति छाड़हु लबराई । मन अभिमान टूटि तब जाई॥
जिन ले चोरी भिक्षा खाई । सो बिरवा पलुहावन जाई ॥
पुनि संपति औ पतिको धावै । सो बिरवा संसार ले आवै ॥

साखी--झूठा झूठा कै डारहू । मिथ्या यह संसार ॥
तेहि कारण मैं कहत हौं । जाते होय उबार ॥ ६० ॥

टीकागुरुमुख—दोहा—छाड़ि देव पति ब्रह्मको, छाड़हु लबरी बानि॥ मन अभिमान टूटै तबै, होय कुशल जिव जानि ॥१॥ जिन्ह ले चोरी आत्मा, खाई भिक्षा जान ॥ सोई कर्म अंकुर होय, आगे फिर पलुहान ॥ २ ॥ पुनि संपतिको धावहीं औ ब्रह्मको धाय ॥ सोई--सोई अंकुर होय, संसारहि ले आय ॥ ३ ॥

साखी—झूठा झूठाकै डारहू । मिथ्या यह संसार ॥
तेहि कारण मैं कहत हौं । जाते होय उबार ॥४॥

रमैनी ६१.

धर्म कथा जो कहतहि रहई । लाबरि उठि जो प्रातहि कहई॥
लाबरि बिहाने लाबरि संझा । एक लाबरि बसे हृदया मंझा॥
रामहुकेर मर्म नहिं जाना । ले मति ठानिनि वेद पुराना ॥
वेदहुकेर कहल नहिं करई । जरतई रहैं सुस्त नहिं परई ॥
साखी--गुणातीत के गावते । आपुहि गये गँवाय ॥
माटीका तन माटी मिलिगौ। पवनहिं पवन समाय॥६१॥

टीका गुरुमुख—दोहा—धर्मकथा जो कहत हैं,बड़े-बड़े पंडित भाय॥ जो मिथ्या अनुमान है, ताहि सत्य समुझाय ॥ १ ॥ सायं प्रात जो पढ़त हैं, सोऊ लाबरी जान ॥ एक लाबरी उपदेश को, लीन्ह हृदयमें मान ॥२॥ रामहु केर मर्मको, जानत कोइ नहिं भाय ॥ अपनी मति अनुमान करी, वेद पुरान बनाय ॥३॥ वेदहु केर कहा करे, न कोऊ समुझाय ॥ निशिदिन जरतही रहे, कहुँ न कोइ शितलाय ॥ ४ ॥

साखी—गुणातीत के गावते । आपहि गये गँवाय ॥
माटीका तन माटी मिलि गौ । पवनहिं पवन समाय ॥ ५ ॥

रमैनी ६२.

जो तू करता वर्ण बिचारा । जन्मत तीन डंड अनुसारा ॥
जन्मत शुद्र मुये पुनि शुद्रा । कृतम जनेउ घालि जग धंधा॥

जो तू ब्राह्मण ब्राह्मनिको जाया । और राह दे काहे न आया ॥
जो तू तुरुक तुरकनि को जाया । पेटहिं काहे न सुन्नति कराया॥
कारी पियरी दूहहु गाई । ताकर दूध देउ बिलगाई ॥
छाड़हु कपट नर अधिक सयानी। कहहिं कबीर भजु शारँगपानी॥

टीका गुरुमुख—दोहा—जो तुम आपन करत हो, निशिदिन वर्ण विचार ॥ जन्मत ही त्रिदंडको, क्यों न कियो अनुसार ॥ १ ॥ जन्मत ही को शुद्र है, मूयेहू पुनि शुद्र ॥ कृतम जनेऊ डारिया, जग धंधाको छुद्र ॥ २ ॥ भगहीं ते सब होत हैं, भगहीं में सब जायँ ॥ जो तुम ब्राह्मण सत्य हो, तो भग द्वारे क्यों आय ॥३॥ जो तुम तुरुक सत्य हो, औ तुरुकिन को जाय ॥ तो माताके गर्भमें, काहे न सुन्नति कराय ॥ ४ ॥ कारी पीयरी गाय बहू, दूहहु एकै ठाय ॥ ताको न्यारा दूध पुनि, काहु न दीन्ह लखाय ॥ ५ ॥ छाँड़ि देहु नर कपटको, कीन्हेउ बहुत सयानि ॥ कहाँ है जाहि पुकारहू, छाडु भरम जग बानि ॥ ६ ॥

रमैनी ६३.

नाना रूप वर्ण एक कीन्हा । चारि वर्णवै काहु न चीन्हा ॥
नष्ट गये कर्ता नहिं चीन्हा । नष्ट गये औरहि मन दीन्हा॥
नष्ट गए जिन वेद बखाना । वेद पढ़े पर भेद न जाना ॥
बिमलख करे नैन नहिं सूझा । भयाअयान तब किछउ न बूझा॥
साखी-नाना नाच नचाय के। नाचे नट के भेष ॥
घट घट है अविनाशी । सुनहु तकी तुम शेष ॥६३॥

टीकागुरुमुख—दोहा—नाना रूप औ वर्ण भये, एकरूप ते जान । सो नहिं काहू चीन्हिया, जो चारिउ वर्ण बखान ॥ १ ॥ नष्ट गये यह जगत सब, जो नहिं करते चीन्ह ॥ नष्ट गये यह जगत जिव, जो औरहि मन दीन्ह ॥ २ ॥ वेद पढ़ा जिन्ह चारहू, सोउ गये जहँड़ाय ॥ जाको कियो है वेद यह ताको मर्म न पाय ॥ ३ ॥ ब्यौर।

करहीं आँधरे, ऊँच नीच अर्थाय ॥ भया अज्ञान कर्ममें, तब कछु बूझ न आय ॥ ४ ॥

साखी—नाना भाव नचावहीं । गुरुवा नाचहिं नटके भेष ॥
घट घट कहैं अविनाशी । गुरू शिष्य विशेष ॥५॥

रमैनी ६४.

काया कंचन यतन कराया । बहुत भाँति कै मन पलटाया ॥
जो सौबार कहौं समुझाई । तैयो धरो छोरि नहिं जाई ॥
जनके कहैं जन रहि जाई । नौ निद्धी सिद्धी तिन पाई ॥
सदा धर्म जाके हृदया बसई । राम कसौटी कसतहि रहई ॥
जोरे कसावै अन्ते जाई । सो बाउर आपुहि बौराई ॥
साखी--तासे परी कालकी फाँसी । करहु न आपन सोच ॥
जहाँ संत तहाँ संत सिधावै । मिलि रहै धूतहि धूत ॥६४॥

टीकागुरुमुख—दोहा—काया कंचन कारणे, बहु विधि यतन कराय॥ बहुत भाँति कै जगतमें, दीन्हा मन पलटाय ॥ १ ॥ जो सौ बार बुझाय कहूँ, तोउ छोरि न जाय ॥ जो मिथ्या अनुमान है, ताको गह्यो बनाय ॥ २ ॥ मायामुख—भक्तजननके कहेते, जो कोई रहिजाय ॥ अष्ट सिद्धि नौ निद्धि सो, साधनही ते पाय ॥३॥ भक्ति जाके हृदयमें बसै रामकी आय ॥ योग जप तप ध्यानमें, जिवको कसै बनाय ॥ ४ ॥ राम कसौटी छाड़ि के, जो, मन अन्तै लाय ॥ सो बाउर है जीयरा, आपुहि जाय बौराय ॥ ५ ॥

गुरुमुख—साखी--ताते परी कालकी फाँसी । सोच बिचारहु संध ॥
संत निकट संत जावहीं । मिलि रहे अन्धहि अन्ध ॥६॥

रमैनी ६५.

अपने गुण को अवगुण कहहू । इहै अभाग जो तुम न बिचारहू॥
तू जियरा बहुते दुख पावा । जल बिनु मीन कौन संच पावा॥
चात्रिक जलहल आसे पासा । स्वाँग धरै भवसागर की आसा॥

चात्रिक जलहल भरै जो पासा। मेघ न बरसे चले उदासा ॥
राम नाम इहै निजु सारा। औरो झूठ सकल संसारा ॥
हरि उतंग तुम जाति पतंगा। यमघर कियेहु जीव को संगा ॥
किंचित है सपने निधि पाई। हिये न समाय कहाँ धरों छिपाई॥
हिये न समाय छोरि नहि पारा। झूठा लोभ किछउ न बिचारा॥
सुमृति कीन्ह आपु नहिं माना। तरवर तर छर छार होय जाना॥
जिव दुर्मति डोले संसारा। ते नहिं सूझे वार न पारा ॥
साखी--अंध भया सब डोले। कोइ न करै बिचार ॥
कहा हमार मानै नहीं। कैसे छूटे भ्रमजार ॥ ६९ ॥

टीकागुरुमुख—दोहा--अपने कीये गुण सकल, ताहि कहै निराकार॥ इहै अभागी मानुषा, तुम ना करहु बिचार ॥१॥ तू जियरा बहुतै पाय दुख, खोजि खोजि कर्तार ॥ जैसी जल बिन माछरी, तलफत बिना अधार ॥ २ ॥ चात्रिक पिहु-पिहु करत है, भरा रहै जल पास ॥ ऐसे जिव बहु भेष धरी, ब्रह्मसिंधुकी आस ॥ ३ ॥ चात्रिक के जल पास है, स्वाती बिना निरास ॥ अस राम नाम निज जानिके, जगमें रहत उदास ॥४॥ हरी तो ज्योति स्वरूप है, तुम सब बने पतंग ॥ गुरुवनके घर कीन्हेउ, सदा जीवके संग ॥५॥ कामिनि अग्नी स्वरूप है, जियरा बने पतंग ॥ गर्भवास मा कीन्हेउ, सदा जीवके संग ॥६॥ स्वप्नेमें धन पाइया, बड़ो हर्ष अधिकाय ॥ हृदया रोकत ना रुका, कहवाँ रखै छिपाय ॥ ७ ॥ हृदयामें समावै नहीं, छोरिउ नाहीं पार ॥ अस झूठ लोभ उपदेश को, कोई न करत बिचार ॥८॥ आपुहि स्मृति बनाइया, आप लिया है मान ॥ ब्रह्म पक्षमा लागिके, भये भस्म गलतान ॥९॥ दुर्मती जीव ब्रह्मज्ञानी, सो डोलें संसार ॥ खोजहि निर्गुण ब्रह्मको, सूझै वार न पार ॥ १० ॥

साखी—अन्ध भया सब डोले। कोई न करै बिचार ॥
कहा हमार मानै नहीं। कैसे छूटे भ्रमजार ॥ ११ ॥

रमैनी ६६.

सोई हित बंधू मोहि भावे । जगत कुमारग मारग लावे ॥
सो सयान मारग रहि जाई । करै खोज कबहीं न भुलाई ॥
सो झूठा जो सुतको तजई । गुरुकी दया रामते भजई ॥
किंचित है एक तेज भुलाना । धनसुत देखि भया अभिमाना॥
साखी--दिया न खतना किया पयाना । मंदिर भया उजार ॥
मरि गये सो तो मरि गये । बाँचे बाँचनहार ॥६६॥

टीका मायामुख—दोहा—सोई हित सोई बंधू, मोहिको अधिक पियार॥ जात कुमारग जीयरा, लावै भक्ति मँझार॥ १॥सोई सयाना जीयरा, भक्ति करै मनलाय ॥ करत खोज निशिदिन रहै, कबहुँ न जात भुलाय ॥ २ ॥ गुरुमुख—सोई झूठा जानिये जो, जिव छोड़ि अन्तै जाय ॥ पारखके प्रकाश बल, भजे राम ते भाय ॥३॥ थोरेसे अनुमान में, बहुत भुलाने लोय ॥ धन सुतके अभिमानमें, बहुतक गये बिगोय ॥ ४ ॥

साखी—दै उपदेश जग बाँधिया । भरममें किया पयान ॥
पढ़ि-पढ़ि बानी मरि गये । बचै सो वोही जान ॥ ५ ॥

रमैनी ६७.

देह हलाय भक्ति नहिं होई । स्वाँग धरे नर बहुविधि जोई॥
धींगी धींगा भलो न माना । जो काहू मोहि हृदया जाना ॥
मुख कछु और हृदय कछु आना । स्वप्नेहु काहू मोहि न जाना ॥
ते दुख पैहैं ई संसारा । जो चेतहु तो होय उबारा ॥
जो गुरु किंचित निंदा करई । सूकर श्वान जन्म ते धरई ॥
साखी--लखचौरासी जीव जन्तुमें। भटकि भटकि दुख पाव ॥
कहैं कबीर जो रामहि जानै। सो मोहिं नीके भाव ॥६७॥

टीका ब्रह्ममुख—दोहा--देह हलाय भक्ति नहिं, स्वाँग धरे जो लोय। सो बानी मोहिं भावै नहीं, अनिर्वाच्य मैं सोय ॥१॥ मुखमे तो कछु और है, हृदयामें कछु आन ॥ ते नर मोहिं न पाइ हैं, स्वप्नेहु माहिं

अयान ॥२॥ मायामुख--ते दुख पैहैं जगतमें, चेतहु तो होय उबार ॥ जो गुरु किंचित निंदा करहीं, सूकर श्वान औतार ॥ ३ ॥

साखी--लख चौरासी जीव जंतुमें । भटकि भटकि दुख पाव ॥
कहैं कबीर जो रामहिं जाने । सो मोहिं नीके भाव ॥४॥

रमैनी ६८.

तेहि वियोग ते भयउ अनाथा । परेउ कुंजवन पावै न पंथा ॥
वेदो नकल कहैं जो जाने । जो समुझै सो भलो न माने ॥
नटवट विद्या खेले जो जाने । तेहि गुण को ठाकुर भलो माने ॥
उहै जो खेले सब घट माहीं । दूसर कै कछु लेखा नाहीं ॥
भलो पोच जो अवसर आवै । कैसहु कै जन पूरा पावै ॥
साखी–जेकर शर तेहि लागे । सोइ जानेगा पीर ॥
लागे तो भागे नहीं । सुखसिंधु निहार कबीर ॥६८॥

टीका गुरुमुख--दोहा--तेहि वियोग ते जीव यह, भयो है दीन अनाथ ॥ परचो बहु बानी जालमें, कहूँ न सूझै पंथ ॥१॥ वेद नकल जो कहत है, सो जाने जो कोय ॥ जो कोइ जानै बापुरा, भल अनुमानै सोय ॥२॥ मायामुख--योग ध्यान जो करत है, प्रेम लक्षणा होय ॥ तेहिके गुण परमात्मा, मानि लेत भल सोय ॥३॥ उहै एक परमात्मा, खेलै सब घट माहिं ॥ एक दोयको तहाँ कछु, लेखा कहा न जाहि ॥४॥ भली बात है अबहिके, जो आवै यहि बेर ॥ कैसेहु जन ब्रह्म पायके, तजे चौरासो फेर ॥ ५ ॥

साखी--जाकी सुरति लगी ब्रह्ममें । सो जानेगा पीर ॥
सुरति लगे तो टरै नहीं । सबमें निहारि मन थीर ॥६॥

रमैनी ६९.

ऐसा योग न देखा भाई । भूला फिरे लिए गफिलाई ॥
महादेवको पंथ चलावै । ऐसो बड़ो महन्त कहावै ॥

हाट बजारे लावै तारी । कच्चा सिद्ध माया पियारी ॥
कब दत्ते मवासी तोरी । कब शुकदेव तोपचि जोरी ॥
नारद कब बन्दूक चलाया । व्यासदेव कब बंब बजाया ॥
करहिं लराई मति के मंदा । ई अतीत कि तरकस बंदा ॥
भये विरक्त लोभ मन ठाना । सोना पहिरि लजावै बाना ॥
घोरा घोरी कीन्ह बटोरा । गाँव पाय जस चले करोरा ॥
साखी—सुन्दरी न सोहै । सनकादिक के साथ ॥
कबहुँक दाग लगावै । कारी हाँड़ी हाथ ॥ ६९ ॥

टीकागुरुमुख--दोहा--ऐसा योग न देखिया, भूला लिये गफिलाय॥ महादेवको पंथ चलावै, बड़ो महंत कहाय ॥१॥ हाट बाजारके बीचमें, निश्चय लावैं तारि ॥ कच्चा सिद्ध सो जानिये, माया लागे प्यारि ॥२॥ तोरि मवासी दत्त कब, शुक कब तोप चलाय ॥ नारद कब बंदूक चलाई, व्यास कब बंब बजाय ॥ ३ ॥ करै लड़ाई मतिके मंदा, ई अतीत कि तरकस बंद ॥ होय विरक्त लोभ मन ठान,अज्ञानी मतिमंद ॥४॥ सोना पहिर लजावै बाना, घोरा घोरि बटोरि ॥ गाँव पाय जस चले करोरा, लीन्ही सैना जोरि ॥ ५ ॥

साखी—माया शोभा देत नहीं । भेष धारिनके साथ ॥
कबहीं दाग लगावही । कारी हाँड़ी हाथ ॥ ६ ॥

रमैनी ७०

बोलना कासो बोलियेरे भाई । बोलत ही सब तत्त्व नसाई ॥
बोलत बोलत बाढ़ु बिकारा । सो बोलिये जो पड़े बिचारा ॥
मिलहिं संत वचन दुइ कहिये । मिलहिं असंत मौन होय रहिये॥
पंडित सो बोलिए हितकारी । मूरखसो रहिए झखमारी ॥
कहहिं कबीर अर्धघट डोलै । पूरा होय बिचार ले बोलै ॥

टीका गुरुमुख—दोहा—बोलना कासो बोलिये, देखु कहाँ को भाय ॥ मैं ही ब्रह्म जब बोलिया, तबते जीव नसाय ॥ १ ॥ मन

अनुमाने ब्रह्म भौ, एकन एक दृढ़ाय ॥ बाढ़ो ब्रह्म विकार तब, ब्रह्महि जंगत् कहाय ॥ २ ॥ सोइ वचन अब बोलिये, जो कछुपरे विचार । तत्त्वमस्यादि जाल सब, सो त्यागै निरधार ॥ ३ ॥ मिलहिं संत कोइ पारखी, ताहि वचन कहु दोय ॥ जीवरूप यह सत्य है, औ बहु मिथ्या होय ॥ ४ ॥

मिलहि भ्रमिक अज्ञान कोउ तहाँ रहो चुपकाय ॥ सो नहिं चीन्हें मनुष्यपद, धोखेमें बौवाय ॥ ५ ॥ मिले कोइ पंडित चतुर, औ निज खोजी भाय ॥ तासों हितकर वचन कहो, जाते तपन जुड़ाय ॥ ६ ॥ मिले मूर्ख कोइ मनमती, तासो कछू न बोल ॥ मौन गही रहु जीवमें, वाक्य न करो अडोल ॥ ७ ॥ ज्यों लों अर्धघट जल रहे, डोलत रहे सो नीर ॥ जबलों हंसा ब्रह्ममें, तौलों नाहीं थीर ॥ ८ ॥ पूरा होय विचार ले, गुरु पारख बल थीर ॥ सो बोले गुरुबुद्धिले, शुद्ध वचन गंभीर ॥ ९ ॥

रमैनी ७१.

सोग बधावा जिन्ह सम कै माना। ताकी बात इन्द्रहु नहिं जाना॥
जटा तोरि पहिरावै सेली। योग युक्ति की गर्भ दुहेली ॥
आसन उड़ाय कौन बड़ाई। जैसे कौवा चील्ह मिड़राई ॥
जैसी भीत तैसी है नारी। राजपाट सब गने उजारी ॥
जस नर्क तस चन्दन जाना। जस बाउर तस रहैं सयाना ॥
लपसी लौंग गने एकसारा। खाँड़ छाँड़ि मुख फाँके छारा॥
साखी–इहै बिचार बिचारते। गये बुद्धि बल चेत ॥
दुइ मिलि एकैहोय रहा। मैं काहि लगाऊँ हेत ॥७१॥

टीका मायामुख–दोहा–हर्ष शोक जिन सम कियो दुख सुख दोउ सम जाहिं ॥ ताकी बातके मर्मको, इन्द्रहु जानत नाहिं ॥ १ ॥

गुरुमुख–मस्तक जटा बढ़ावहीं, हाथ कमंडलु देय ॥ योगयुक्ति सिखलावहीं, गर्भ बानि परमेय ॥ २ ॥ आसनहूके उड़ायसे, कौन

बड़ाई भाय ॥ जैसे गगनके बीचमें, काग चील्ह उड़िजाय ॥ ३ ॥ जैसे देखत भीतको, तैसी देखै नारि ॥ राज पाट जस गनत है, तैसी गनै उजारि ॥ ४ ॥ जैसा देखै नर्क को, तैसा चन्दन जान ॥ जैसा बाउर रहत है, ऐसा रहै सयान ॥ ५ ॥ ब्रह्म जगत सम गनत है, खाँड़ राख सम होय ॥ छाड़ै मूरख खाँड़ को, फाँके राख सँजोय ॥ ६ ॥

साखी–यह विचार करते करते, नाना प्रकारके बोध ॥
कैवल्यसे चेतन नसा, जगत ब्रह्म मिलि सोध ॥ ७ ॥
आत्मा निश्चय कियो सबन मिल, यह धोखेकी नाव ॥
सब बूड़े अनुमानमें, मैं कासों प्रीति लगाव ॥ ८ ॥

रमैनी ७२.

नारी एक संसारहि आई । माय न वाके बापहि जाई ॥
गोड़ न मूड़ न प्राण अधारा । जामें भभरि रहा संसारा ॥
दिना सात ले उनकी सही । बुद अदबुद अचरज का कही ॥
वाहिक बंदन करे सब कोई । बुद अदबुद अचरज बड़ होई ॥
साखी–मूस बिलाई एक सँग । कहु कैसे रहि जाय ॥
अचरज एक देखो हो संतों । हस्ती सिंघहि खाय ॥७२॥

टीका गुरुमुख–दोहा–बानी एक जग आइया, सुन ताको परमान ॥ काया माया है नहीं, जीवहिको अनुमान ॥ १ ॥ गोड़ मूड़ कछु है नहीं, प्राणहु नाहीं अधार ॥ तामें भरमि रहा सबै, मिथ्या यह संसार ॥ २ ॥ नेति नेति वह कहत है, सात स्वर्गकी बात ॥ ऐसी बुध अबुध बड़ी, अचरज कहो न जात ॥ ३ ॥ वाहि बानिकी बंदना, करे सकल संसार ॥ बड़ी बुध अबुध भौ, का कहि अचरज सार ॥ ४ ॥

साखी–मूस जीव बिल्ली बानी, बिल्ली माया जोय ॥
ताके संग जिव मिलि रहा, कैसे कुशलता होय ॥ ५ ॥
अचरज एक बड़ देखिये, अपने हाथ बनाय ॥
सोइ बानी औ स्त्री, जीव सिंघको खाय ॥ ६ ॥

रमैनी ७३.

चली जात देखी एक नारी । तर गागरि ऊपर पनिहारी ॥
चली जात वह बाटहि बाटा । सोवनहार के ऊपर खाटा ॥
जाइन मरे सपेदी सौरी । खसम न चीन्हें घरणि भइ बौरी ॥
साँझ सकार दिया ले बारे । खसमहि छाँड़ि संबरे लगवारे ॥
वाही के रस निसु दिन राची । पियासो बात कहै नहिं साँची ॥
सोवत छाँड़ि चली पिय अपना । ई दुख अबधौं कहैं केहि सना ॥
साखी—अपनी जाँघ उघारि के । अपनी कही न जाय ॥
की चित जाने आपना । की मेरो जन गाय ॥७३॥

टीका गुरुमुख—दोहा—अनुमति बानी देखिके, चली जात संसार ॥ तरे देह गगरी रही, ऊपर सूरति पनिहार ॥१॥ या घटसे वा घट चली, सोवनहारा जीव ॥ याके ऊपर शास्त्र षट, हुकुम दृढ़ावहिं पीव ॥ २ ॥ मरै जीव यह विरहते, जो बानी परचाय ॥ अचरज संतो देखहू, जाइन मरै रजाय ॥३॥ खसम कहीये ब्रह्मको, सो तो जिव अनुमान ॥ घरनी कहिये जीवको, बिन चीन्हैं बौरान ॥ ४ ॥ लगी लाग जो मूर्तिसे, सो कहिये लगवार ॥ साँझ प्रात बारे दिया, ताहि कहै कर-तार ॥ ५ ॥ वाहीके रस राति दिन, राचि रही होय नार ॥ जाहि पिया कर थापिया, साँच न कहै बिचार ॥ ६ ॥ सोवत हूती अचेत है, छाँड़ि चली यह देह ॥ देह संग पियाहु रहै, काहि कहै दुख येह ॥ ७ ॥

साखी—आपुहि बहु अनुमान कारि । फन्दा रचै बनाय ॥
जैसेका तैसा रहै । खोलि. कहा नहिं जाय ॥ ८ ॥

मायामुख--साखी--की चित जाने आपनो । सब जग आतमा आय ॥
की कोइ ज्ञानी पंडिता । तत्त्वमसीको गाय ॥ ९ ॥

रमैनी ७४.

तहिया होते गुप्त स्थूल न काया । न ताके सोग ताकि पै माया ॥
कमल पत्र तरंग एक माहीं । सँगहि रहै लिप्त पै नाहीं ॥

आस ओस अंडमा रहई । अगनित अंड न कोई कहई ॥
निराधार आधार ले जानी । राम नाम ले उचरी बानी ॥
धर्म कहै सब पानी अहई । जाति के मन पानी अहई ॥
ढोर पतंग सरे घरियारा । तेहि पानी सब करे अचारा ॥
फंद छोड़ि जो बाहर होई । बहुरि पंथ नहिं जोहै सोई ॥

साखी—भरम का बाँधा यह जग । कोइ न करे बिचार ॥
एक हरिकि भक्ति जाने बिना। भव बूड़ि मुवा संसार॥७४॥

टीकामायामुख--दोहा--स्थूल देह तब ना हती, हते ब्रह्म तब गुप्त ॥ शुद्ध चैतन्य तब जानिये, अवस्थातीत सुषुप्त ॥ १ ॥ ताको सोग कछु ना हता, माया ताही संग ।। जैसे कमल पत्रपर, न्यारो सदा तरंग ॥ २ ॥ जस रहत कमल पत्रपैं, न्यारो सदा तरंग ।। ऐसे माया अण्डसे, आत्मा रहत असंग ॥३॥ आस बास सब छाँड़िके, रहे अण्डके माँहि ।। अगणित अण्ड ॐकार हैं, गनि न सकै कोइ ताहि ।। ४ ।।

गुरुमुख--निराधार निःअक्षर कही, ताहि अधार ले जानि ।। राम नाम अनुमान करी, बानी बहुत बखानि ।। ५ ।। शास्त्र कहैं निरवारिके, जैसो सब जल आहि ।। ऐसो है यह आत्मा, घटि बढ़ि कहा न जाहि ॥ ६ ॥ मन पानीका रूप है, शास्त्रन माना जाहि ।। माना सो अनुमान है, पारख यथारत ताहि ।। ७ ।। ज्ञानी भक्त योगी मरे जेहि बानीमें भाय ॥ सो बानी आचरण करि, सब जग मरि मरि जाय ॥ ८ ॥ तजा भरम जिन परखके, ते पुनि भये निनार ॥ ते नहिं भवमें जावहीं, जहवाँ सब संसार ।। ९ ।।

साखी--भरमाका बाँधा यह जगत्, यहि विधि आवै जाय ।।
कोइ न करे विचार पुनि, ताते भटका खाय ॥ १० ॥
एक मायाकी बानी, बिन जाने यह रीति ॥ ॥
भरम अनुमान औ कल्पना, मानि मानि करे प्रीति ।।११॥

रमैनी ७५.

तेहि साहेबके लागहु साथा। दुई दुख मेटिके होहु सनाथा॥
दशरथ कुल अवतरि नहिं आया। नहिं लंकाके राव सताया॥
नहिं देवकीके गर्भहि आया। नहीं यशोदा गोद खिलाया॥
पृथ्वी रवन धवन नहिं करिया। पैठि पताल नहिं बलि छलिया॥
नहिं बलिराजा सो माँड़ल रारी। नहिं हरणाकुश बधल पछारी॥
बारह रूप धरणी नहिं धरिया। क्षत्री मारि निक्षत्री नहिं करिया॥
नहिं गोवर्धन कर गहि धरिया। नहिंग्वालन संग बन बन फिरिया॥
गंडुकी शालिग्राम नहिं कूला। मच्छकच्छ होय नहिं जलडोला॥
द्वारावती शरीर नहिं छाड़ा। ले जगन्नाथ पिंड नहिं गाड़ा॥
साखी–कहहिं कबीर पुकारि के। वै पंथे मति भूल॥
जेहि राखेउ अनुमानकै। सो थूल नहीं अस्थूल॥७५॥

टीका गुरुमुख--दोहा--साहेब जाकी साहेबी, सगरी भइ विस्तार॥ सो तो मानुष जानिये, वो नहिं दश अवतार॥ १॥ सो साहेब अब कहाँ है, जाके लागहुं साथ॥ दूसर धोखा सबै है, मेटिके होहु सनाथ॥ २॥

साखी–कहाँ है जाहि पुकारहू, सबका सिर्जनहार॥
वै पंथे मति भूलहू, जो गुरुवन कहा पुकार॥ ३॥
जेहि राखेउ अनुमान करि, सो थूल नहीं अस्थूल॥
मिथ्या धोखा जानिये, महा अँधेरी भूल॥ ४॥

रमैनी ७६.

माया मोह सकल संसारा। इहै बिचार न काहु बिचारा॥
माया मोह कठिन है फंदा। करे विवेक सोई जन बंदा॥
राम नाम ले बेरा धारा। सोतो ले संसारहि पारा॥
साखी–राम नाम अति दुर्लभ। औरेते नहिं काम॥
आदि अंत औ युग युग। मोहि रामहिते संग्राम॥७६॥

टीका गुरुमुख--दोहा--माया कहिये गुरुवा, मोह उनका ब्यौहार॥ यह बंधन जग कठिन भौ, काहु न कीह बिचार ॥ १ ॥ कठिन फंद है मोहका, माया दीन्ह दृढ़ाय ॥ जो विवेक करि वेदको, सोइ जन बाँधी जाय ॥ २ ॥ सोरठा--सबन कीन्ह अनुमान, राम नाम नौका धरो ॥ सो ले सकल पयान, पार होहिं जिव जगतके ॥ ३ ॥

साखी--राम नाम अति दुर्लभ । औरे ते नहिं काम ॥
आदि अन्त औ युग युग । मोहि रामहिसे संग्राम ॥ ४ ॥

रमैनी ७७.

एकै काल सकल संसारा । एक नाम है जगत पियारा ॥
त्रिया पुरुष कछु कथ्यो न जाई । सर्बरूप जग रहा समाई ॥
रूप निरूप जाय नहिं बोली । हलुका गरुवा जाय न तौली॥
भूख न तृषा धूप नहिं छाहीं । दुख सुख रहित रहै तेहि माहीं॥
साखी–अपरंपरं रूप मगु रंगी । आगे रूप निरूप न भाय ॥
बहुत ध्यानकै खोजिया। नहिं तेहि संख्या आय ॥७७॥

टीकागुरुमुख–दोहा–एक काल कहिये कल्पना, जो कल्पै संसार ॥ एक नाम ब्रह्म धोखा, सोई जगमें प्यार ॥ १ ॥ मायामुख– त्रिया पुरुष कछु है नहीं, सर्बरूप जग पूर॥ रूप अरूप न कहि सकों, नहिं नियरे नहिं दूर ॥ २ ॥ हलुका है कि गरुवा, तौलों नाहीं जाय ॥ भूख प्यास तहाँ कछु नहीं, नहीं धूप नहि छाँय ॥ ३ ॥ दुख सुख एकौ तहाँ नहीं, रहित रहे तेहि माहिं ॥ यही बोध निश्चय करो, अब कछु आगे नाहिं ॥ ४ ॥

साखी–आपहि सब मे रमा है । आप सबनके पार ।
रूप रंग रस आपही । आपहि सिरजनहार ॥ ५ ॥
आगे बहुत बिचार भौ । रूप अरूप न ताहि ॥
बहुत ध्यान करि देखिया । नहिं तेहि संख्या आहि ॥६॥

रमैनी ७८.

मानुष जन्म चूकेहु अपराधी । यहि तन केर बहुत हैं साझी॥
तात जननि कहैं पुत्र हमारा । स्वारथ जानि कीन्ह प्रतिपारा॥

कामिनि कहै मोर पिउ आही । बाघिनिरूप गिरासा चाही ॥
सुत कलत्र रहैं लौलाई । यमकी नाई रहै मुख बाई ॥
काग गिद्ध दोउ मरण बिचारे । सीकर श्वान दोउ पंथ निहारे॥
अग्नि कहै मैं ई तन जारों । पानि कहै मैं जरत उबारों ॥
धरती कहै मोहि मिलि जाई । पवन कहै संग लेउँ उड़ाई ॥
तेहि घर को घर कहै गँवारा । सो बैरी होय गले तुम्हारा ॥
सो तन तुम आपन कै जानी । विषय स्वरूप भूलेउ अज्ञानी ॥
साखी–इतने तनके साझिया । जन्मोभरि दुख पाय ॥
चेतत नाहिं मुग्ध नर बौरे । मोर मोर गोहराय ॥ ७८ ॥

टीका गुरुमुख--दोहा--मानुष जन्ममें चूकेहू, यही बड़ो अपराध॥ यह तनकेर बहुत हैं, लावनहार उपाध ॥ १ ॥ मात पिता कहैं पुत्र है, हमरो बड़ो पियार ॥ अपने स्वारथ कारणे, वाहि कीन्ह प्रतिपार ॥ २ ॥ जेहिमा हमरो नाम हो, सेवा करिहैं हमार ॥ जगमें महिमा होय है, बाढ़ै बंस अपार ॥ ३ ॥ नारि कहै मोर पीउ है, बाघिन रूप बनाहि ॥ हाव-भाव कटाक्ष करी, मानो खाया चाहि ॥ ४ ॥ नाती पूत सब कहत हैं, पिता प्रपिता भाय ॥ याको धन हमको मिले, ये कैसेहु मरिजाय ॥ ५ ॥ गुरुवा जनकी बानी, येहु रही मुख फार ॥ जामें भरमि रहा सबै. मिथ्या यह संसार ॥ ६ ॥ काग गिद्ध दोउ कहत हैं, कब ये मरे गँवार ॥ हमको कछु भोजन मिले, करब शरीर अहार ॥ ७ ॥ स्यार श्वान दोउ बैठिके, बहु विधि लाग लगाय ॥ कैसहु कै नर आवै, तुरतहि डारों खाय ॥ ८ ॥ पाँच तत्त्व यों कहत हैं, अपनो अपनो भाग॥तुरतहि लेहुँ मिलायके होय देह जो त्याग ॥ ९ ॥ जेहि घरको घर कहत हो, सो तो बैरि तुम्हार ॥ एक दिना मरि जाहुगे, दै दै दुःख अपार ॥१०॥ सो तनको तुम आपना, कैकै लीन्हों मान । विषय रूप होय जगतमें, भूलो रे अज्ञान ॥ ११ ॥

साखी–इतने साझी देहके, कियो मोह इन संग ॥
जन्म भरी दुख पाइया, आखिर मिथ्या भंग ॥ १२ ॥

चेतत नाहीं मूर्ख नर, नाहक में बौरान ॥
मोर मोर गोहरावहीं, मोह जालको मान ॥ १३ ॥

रमैनी ७९.

बढ़वत बढ़ी घटावत छोटी । परखत खरी परखावत खोटी॥
केतिक कहौं कहाँलों कही । औरो कहौं पड़े जो सही ॥
कहै बिना मोहि रहा न जाई । बिरही ले ले कूकुर खाई ॥
साखी -खाते खाते युग गया । बहुरि न चेतहु आय ॥
कहहिं कबीर पुकारिके । ये जीव अचेतहि जाय ॥७९॥

टीका गुरुमुख—दोहा—बढ़त बढ़ावत बहुते बढ़ी, बानी और प्रपंच ॥ घटत घटावत घटा जीव, कहूँ न पावै संच ॥ १ ॥ परखत को साँचा लगा, बानी को अनुमान ॥ परखाये जब गुरुने, ठहरा झूठ निदान ॥ २ ॥ केतिक कहौं समुझायके, कही कहाँ लों भाय ॥ औरो कहौं परखायके, परे सही जो आय ॥ ३ ॥ बिना कहे निरवारके, मोसों रहो न जाय ॥ बिरही जीवको लेइके, गुरुवा कूकुर खाय ॥४॥
साखी--पढ़त-पढ़त बहु युग गये । अबहुँ न चेतहु आय ॥
कहाँ है जाहि पुकारहू । ई जीव अचेतहि जाय ॥ ५ ॥

रमैनी ८०.

बहुतक साहस करु जिय अपना । देहि साहेबसे भेंट न सपना ॥
खरा खोट जिन नहिं परखाया । चाहत लाभ तिन मूल गमाया॥
समुझि न परलि पातरी मोटी । ओछीं गाँठि सबै भौ खोटी ॥
कहहिं कबीर केहि देहो खोरी । जब चलिहो झीझी आशा तोरी॥

टीकागुरुमुख—दोहा--बहु अनुमान जिव करत है, ब्रह्म पदारथ मान ॥ सो तो मिथ्या धोख है, स्वप्नेहु न मिले निदान ॥ १ ॥ खरा खोट जिन परखा नहीं, परख न ताके पास ॥ सो जिव लाभकी चाह करी, कियो आपनो नास ॥ २ ॥ मेही मोटी दोउ कष्टरूप, समुझि परी नहिं काहु ॥ पतरी कहिये ब्रह्मको, मोटी जगत बताहु ॥ ३ ॥ मोटी माया छोड़िके, पतरीमें भये बंध ॥ मनमें बहुत बिचार करि,

रचेउ झूठ फरफंद ॥ ४ ॥ कहवाँ है सो जीयरा, काहि देहुगे दोख ॥ देह छाँड़ि चलि हो जबै, झूठ कियो जो धोख ॥ ५ ॥

रमैनी ८१.

देव चरित्र सुनहु हो भाई । जो ब्रह्मा सो धियउ नसाई ॥
दूजे कहौं मंदोदरि तारा । जेहि घर जेठ सदा लगवारा ॥
सुरपति जाय अहिल्या छरी । सुर गुरु घरणि चन्द्रमें हरी ॥
कहहिं कबीर हरिके गुण गाया । कुंतिहि कर्ण कुँवारेहि जाया ॥८१॥

टीकागुरुमुख--दोहा--देव चरित्र सुनोरे भाई, कहौं तोहि समुझाय ॥ जाहि कहत हैं ब्रह्मा, सो पुत्री संग जाय ॥ १ ॥ औरो सुनो मंदोदरी, तारा बड़ी रहाय ॥ इन घर सदा लगवार है, सुग्रीव बिभीषण भाय ॥ २ ॥ देवपती जो श्रेष्ठ है, जाको कहिये इंद्र ॥ तिनहुने छली अहिल्या, परे देहमें छिद्र ॥ ३ ॥ हर्यो जायके चन्द्रमा, ब्रृहस्पतीकी नार ॥ गुरु नारी सो भोग कियो, तबहि भयो बुधवार ॥ ४ ॥ कहवाँ है सो जीयरा, जिन्ह गुण वेदन गाय ॥ कुंती कुँवारी नारि थी, तबहिं कर्ण उपजाय ॥ ५ ॥

रमैनी ८२.

सुखके वृक्ष एक जगत्र उपाया । समुझि न परलि विषय कछुमाया
छौ क्षत्री पत्री युग चारी । फल दुइ पाप पुण्य अधिकारी ॥
स्वाद अनंत कछु बर्णि न जाई । करि चरित्र सो ताहि समाई ॥
जो नटवट साज साजिया । जो खेलै सो देखै बाजिया ॥
मोह्वा बापुरा युक्ति न देखा । शिव शक्ती विरंचि नहिं पेखा ॥
साखी--परदे परदे चली गई । समुझि परी नहिं बानि ॥
जी जानै सो बाँचि है । नहिं तो होत सकलकी हानि ॥८२॥

टीकागुरुमुख--सोरठा--एक जीवको नाँव, इन्ह आपन अनुमान करि ॥ सुखका वृक्ष उपाव, जासु ब्रह्म जग गाइया ॥ १ ॥ दोहा--समुझि परी नाहिं विषय कछु, जामें भया आनंद ॥ आनंदसे अहं शक्ती भई, बढ़ो तहाँ ते फंद ॥ २ ॥ छौ चकवे क्षत्री भये, ब्राह्मण भये युग

चार ॥ पाप पुण्य दुइ फल भये, जीवहिको अधिकार ॥ ३ ॥ वै युग फलको स्वाद बहू, कछु बर्णी नहिं जाय ॥ बहु प्रकार जिव चरित्र करी, तेहिमा रहे समाय ॥ ४ ॥ जिन्ह यह बहु बानी रची, औ बहु बोध बनाय ॥ सोइ खेलत है तासुमें, देखै सो बझि जाय ॥ ५ ॥

सोरठा--मोहि गया यह जीव, कृतम जुक्ति नहिं परखिया ॥ ब्रह्मा शक्ती शीव, सबै परे भ्रमफँदमें ॥ ६ ॥

साखी--परदे परदे चलि गई । समुझि परी नहिं बानि ॥
जो जानै सो बाँचि हैं । नहिं तो होत सकलकी हानि ॥७॥

रमैनी ८३.

क्षत्री करे क्षत्रिया धर्मा । सवाई वाके बाढ़े कर्मा ॥
जिन्ह अवधू गुरु ज्ञान लखाया । ताकर मन ताहि ले धाया ॥
क्षत्री सो जो कुटुम सो जूझै । पाँचो मेटि एककै बूझै ॥
जीव मारि जीव प्रतिपारे । देखत जन्म आपनो हारे ॥
हाले करे निशाने घाऊ । जूझि परे तहाँ मन्मथ राऊ ॥
साखी--मन्मथ मरै न जीवै । जीवहि मरण न होय ॥
शून्य सनेही राम बिनु । चले अपनपौ खोय ॥८३॥

टीकागुरुमुख--चौपाई--क्षत्री नाम जीवको कहिये । जहाँ छै तीन उपाधी लहिये ॥ शब्द स्पर्श रूप रस गंधा । मन चित बुद्धि हंकार सम्बंधा ॥ १ ॥ दोहा--क्षत्रिय धर्म जो बानी, औ पुनि विषय पाँच ॥ तत्वमसी निर्णय करै, चौरासीको नाँच ॥२॥ नौ जने नौ कर्मको, करत हैं सहज सुभाव ॥ ताते जीवके बढ़त हैं, कठिन कर्मके दाव ॥ ३ ॥ जल परमाने माछरी, कुल परमाने शुद्ध ॥ जाको जैसा गुरु मिला, ताको तैसी बुद्ध ॥ ४ ॥ क्षत्री सोई जानिये, जूझै कुटुम मँझार ॥ पाँचो विषय मेटिके, जीवका करे उबार ॥ ५ ॥ जीव मारि तन पालहीं, सो सब श्वान सियार ॥ अंत महा दुख पावहीं, चौरासी मंझार ॥ ६ ॥ जलद जाय जो करत हैं, जौन निशाने घाव ॥ जूझि गये तहाँ मनमथी, अन्त सोई तन पाय ॥ ७ ॥

साखी—मनमथ कहिये कल्पना, औ मनमथ अनुमान ॥
सो तो मरे न जीवै, जीवहि मरण न जान ॥ ८ ॥
सनेही कहिये जीवको, शून्य कहीये ब्रह्म ॥
राम कहीये आतमा, जो जीवहिको भर्म ॥ ९ ॥
सोइ भरम जाने बिना, चले अपनपौ खोय ॥
आपुहि कल्पि अनुमान किये, आपुहि चला वियोग॥ १०॥

रमैनी ८४.

ये जियरा तैं अपने दुखहि सम्हार। जेहि दुख व्यापि रहा संसार॥
माया मोह बंधा सब लोई। अल्प लाभ मूल गौ खोई ॥
मोर तोर में सबै बिगुर्चा। जननी गर्भ वोद्रमा सूता ॥
बहुतक खेल खेलें बहुरूपा। जन भँवरा अस गये बहूता ॥
उपजि बिनशि फिर जुइनी आवै।सुखको लेश सपनेहु नहिं पावै॥
दुख संताप कष्ट बहु पावै। सो न मिलाजो जरत बुझावै।
मोर तोर में जरे जग सारा। धृग स्वारथ झूठा हंकारा ॥
झूठी आस रहा जग लागी। इन्हते भागि बहुरि पुनि आगी
जेहि हितके राखेउ सब लोई। सो सयान बाँचा नहिं कोई ॥
साखी--आपु आपु चेते नहीं। कहौं तो रुसवा होय ॥
कहहिं कबीर जो आपुन जागे।निरास्ती आस्ति न होय८४॥

टीकागुरुमुख--दोहा--ये जियरा तैं आपने, दुखहि संभारहु भाय ॥ जो झाँइ अनुमान करी, जगमा रहेउ समाय ॥ १ ॥ प्रथमें झाँई भूलिया, मनमा भयो आनंद ॥ ता आनंदमा अन्ध भौ, समुझा नहीं यह फंद ॥ २ ॥ तहवाँ धीरज छूटिया, भौ आकाश अनुमान ॥ दया ते वायु शीलते तेज, बिचारते जल जान ॥ ३ ॥ सत्त सोइ धरती भई, झाँईके गुण येह ॥ गुण प्रकृती सब पलटिया, उपजी कच्ची देह ॥ ४ ॥ अब यह दुख संभारहू, जाते सकल उपाध ॥ इच्छाते नारि नारिते जग भौ, औ बानी कृथी अगाध ॥ ५ ॥ ब्रह्माकेरी बात

में, भूलि रहा सब लोय ॥ किंचित मुक्तिके कारणे, जीवहु आयो खोय ॥ ६ ॥ मुक्ती कहिये समाधि को, मुक्ती बोधको नाम ॥ मुक्ती कहिये इस्त्रीको, जाते खलित भौ काम ॥ ७ ॥ जगत ब्रह्मके बीचमें, आतम निश्चय कीन्ह ॥ पारख बिनु भूले सकल, गर्भ बास पुनि लीन्ह ॥ ८ ॥ बहु प्रकार ते खेलहीं, गुरुवाधारि बहु रूप ॥ जन भँवरा अस बहुतक, जाय परे भ्रमकूप ॥ ९ ॥ उपजत विनसत रहत हैं, फिर फिर जुइनी आय ॥ सुखका लेश कहुँ जीयरा, सपनेहु नाहीं पाय ॥१०॥ दुख संताप औ कष्ट बहू, निशिदिन जियरा पाय ॥ सो पारख कहुँ ना मिला, जो जरतहिं लेत बुझाय ॥ ११ ॥ मोर तोरमें जरत है, ब्रह्म जगत मझार ॥ धृग धृग झूठा स्वारथ, झूठा है हंकार ॥ १२ ॥ झूठ ब्रह्म की आसमें, रहा सकल जग लाग ॥ एक आगते बाँचिया, बहुरि नारि पुनि आग ॥१३॥ सोरठा--ज्ञानी पंडित दास, जे बड़-बड़ जगमें भये ॥ सबै रहे गर्भबास, जिनकी प्रीति सब जगत्‌को ॥ १४ ॥

टीकासाखी--सोरठा--आपुहि आपु न जान, औ जाना सब ज्ञानको ॥ बिनु पारख न ठिकान, कहाँ रहेगा जीव यह ॥ १५ ॥ काह कहौं समुझाय, कहौं तो रुसवा होत है ॥ पारख नहीं थिति पाय, चले जीव सब भूलमें ॥ १६ ॥ कहाँ है ब्रह्म अनुमान, कहाँ आत्मा जगत कहाँ ॥ तोही ते सब जान, बानी खानी कल्पना ॥ १७ ॥ तू जीव चेतन जान, पारख विना तोहि ठौर नहीं ॥ कहहिं कबीर प्रमान, पारखमा थित होय रहू ॥ १८ ॥ जो तूँ आपन जान, नास्ती आस्ती होय नहीं ॥ परखो धोखा ज्ञान, पारख तेरो रूप है ॥ १९ ॥

दोहा--भयो रमैनीको अंत । सुख साहबकी दयाते ॥
पुनि बिनवों अब संत । शब्द बुझारथ कारणे ॥ २ ॥

इति रमैनी टीकासहित गुरुकी दयासे सम्पूर्ण ॥

दया गुरुकी

अथ लिख्यते शब्द बुझार्थ ।

प्रथम अनुसार

शब्द १.

संतो भक्ति सतोगुर आनी ।
नारी एक पुरुष दुइ जाया । बूझा पंडित ज्ञानी ॥
पाहन फोरि गंग एक निकरी । चहुँ दिश पानी पानी ॥
तेहि पानी दुइ पर्वत बूड़े । दरिया लहर समानी ॥
उड़ि माखी तरवर को लागी । बोले एकै बानी ॥
वह माखी को माखा नाहीं । गर्भ रहा बिनु पानी ॥
नारी सकल पुरुष वै खाये । ताते रहै अकेला ॥
कहहिं कबीर जो अबकी बूझै । सोई गुरू हम चेला ॥ १ ॥

टीका गुरुमुख--दोहा--संतो कहिये जीवको, संतो शाँति स्वरूप ॥ संतो कहिये श्रोता, जो निरुवारत रूप ॥ १ ॥ भक्ती कहिये भावना, भक्ती बानी नाम ॥ भक्ती कहिये ईस्त्री, जाते उपजत काम ॥२॥ सतोगुरु ब्रह्माको कही, जो जानत हैं वेद ॥ सतोगुरु गुरुवनको कही, जो जगमें करत निषेद ॥ ३ ॥ नारी कहिये बानीको जिन सब जग भरमाय ॥ नारी कहिये इस्त्रीको, जिन भोंदि सकल जग खाय ॥ ४ ॥ हिन्दु तुरुक दो पुरुष हैं, नारी एकै आय ॥ पंडित ब्रह्माको कहिये, ज्ञानी शंभु कहाय ॥ ५ ॥ पाहन मन प्रेम गंग, पानी बानी जान ॥ दोऊ दीन दोऊ पर्वत, दरिया ब्रह्म बखान ॥ ६ ॥ लहर जीव माखी बानी, तरवर देह कहाय ॥ माखा ब्रह्म गर्भ अनुमान, पानी बानि लखाय॥ ७॥ नारी बानी इस्त्री, पुरुष सकल जिव खाय ॥ ताते गुरुपद भिन्न है, प्रत्यक्ष दियो लखाय ॥ ८ ॥ कहहिं कबीर यह बूझि हैं, सोई गुरू कहाय ॥ हम हंता संसार है, सो सब चेला आय ॥ ९ ॥ १ ॥

शब्द २.

संतो जागत नींद ना कीजै ।

काल न खाय कल्प नहिं ब्यापै । देह जरा नहिं छीजै ॥
उलटी गंग समुद्रहि सोखै । शशि औ सूरहि ग्रासै ॥
नौ ग्रह मारि रोगिया बैठो । जलमें बिम्ब प्रकासै ॥
बिनु चरणन को दहुँ दिशि धावै । बिनु लोचन जग सूझै ॥
संशय उलटि सिंघ को ग्रासै । ई अचरज कोइ बूझै ॥
औंधे घड़ा नहीं जल बूड़े । सीधे सो जल भरिया ॥
जेहि कारण नर भिन्न भिन्न करें । सो गुरु प्रसादै तरिया ॥
बैठि गुफामें सब जग देखै । बाहर किछुउ न सूझै ॥
उलटा बाण पारधिहि लागै । सूरा होय सो बूझै ॥
गायन कहै कबहुँ नहिं गावै । अनबोला नित गावै ॥
नटवट बाजा पेखनी पेखै । अनहद हेत बढ़ावै ॥
कथनी बदनी निजुकै जोवै । ई सब अकथ कहानी ॥
धरती उलटि अकाशहि बेधै । ई पुरुषनकी बानी ॥
बिना पियाला अमृत अँचवै । नदी नीर भरि राखै ॥
कहैं कबीर सो युग युग जीवै । जो राम सुधारस चाखै ॥२॥

टीका गुरुमुख–जागृती गुरु कहते हैं कि–हे जीव ! तू चैतन्य है । चैतन्य कहिये जो स्वप्न-सुषुप्ती, ज्ञान-विज्ञान, दुःख-सुख जानने वाला; ऐसा तू जागृत होके अचेत नींद मत करे ? ये अर्थ । तेरेको काल नहीं खाता औ कल्पना नहीं व्यापती; क्योंकि तू चैतन्य है और काल कल्पना आदि सब जड़ हैं, सो जड़ तेरेको कैसे खायगा ? तू अचेत मत होय । तू तो चैतन्य और तेरी देह जो कहिये स्वरूप जो पारख है, सो भी जरा मरणसे रहित है । सो तू अपने स्वरूपमें ठहर और सबको परख । ये अर्थ । गंग कहिये बानीको; सो बानी नाना प्रकार की तेरेसे पैदा हुई, फिर उलटिके तेरेको सोखने लगी, सो तू समझ ।

शशी कहिये योगी, सूर कहिये ज्ञानी, इस, प्रकारसे कहीं ज्ञान दृढ़ाया और कहीं योग दृढ़ाया और दोनोंको भ्रमाया। जहाँ योग दृढ़ाया, तहाँ चन्द्र सूर्य दोऊ खैंचके, नौ द्वार मूँदके ब्रह्म रोगमें ग्रसित हुआ। बैठके ध्यान लगाया, तब देहमें एक प्रतिबिम्ब प्रकाश हुआ॥ सो ता प्रतिबिम्बका प्रकाश कर्त्ता प्रतिबिम्बमें मग्न हुआ; सो भी धोखा। और जहाँ ज्ञान दृढ़ाया, तहाँ श्रवण मनन करके, पंच विषय, अन्तःकरण चतुष्टय, ये नवोंका निदिध्यासन करके साक्षात्कार जाना कि मैं आत्मा हूँ। तब जीवमें आनंद पैदा हुआ और वो आनंदमें भूला। इस प्रकारसे तेरेमें विकार पैदा होता है और तेरेको खाता है। सो तू गाफिल मत होय। ये अर्थ। बिनु चरणनकी कल्पना, सो कल्पना दशों दिशामें दौरती है। फिर नाना प्रकारका अनुमान करके आनंद होता है। आँखें मूँदके बोलता है कि सब जगत् मेरेको आत्मा सूझता है। और प्रत्यक्ष अनुमानमें अंधा हुआ है। संशय कहिये बानीको, सिंह कहिये जीवको; सो संशय इस जीवसे पैदा होती है और फिर इस जीवको घेरती है। उलटके इसकी कल्पना इसीको बन्धन होती है, ये आश्चर्य जानना। ये अर्थ। औंधा घड़ा कहिये ब्रह्म, सो कदही जीवमें बूड़ता नहीं। क्योंकि ब्रह्म तो जीवका अनुमान है, इस वास्ते जीव ही अनुमानमें बूड़ा और घट घटमें भरा। तब बोलने लगा कि जिस वास्ते सबसे न्यारा ईश्वर, न्यारा ब्रह्म बोलते थे, सो गुरु ब्रह्मा, गुरु विष्णु, गुरु महेश, इनके प्रसादसे वेदांत अनुभवसे जाना कि एक आत्मा अद्वैत, एकरस सदा निरंतर है। भँवरगुफामें अनुमान कर करके समाधीमें जानता है, कि एक आत्मा है। और ज्ञान गुफामें श्रवण मनन निदिध्यास करिके जानता है कि एक आत्मा सत्य है और बाहर तो अनेक मालूम देता है। तब कछु मालूम नहीं भया, तब कहा कि जैसा का तैसा पूर्ण है। इस प्रकारसे निश्चय किया। देखो हे संतो! इसीका

अनुमान इसीको लगता है । इसकी तर्क उलटके इसीको लगी । ये अर्थ । औ पारधी कहिये ज्ञानी, बान कहिये ज्ञान; सो जिससे ज्ञान हुवा, उसीको उलटके लगा और बोधमें निश्चय किया बिना पारख । जो कोई पारखी होय सो बूझै । ये अर्थ । गायन कहिये बानी, सो सब बानीको कहने वाला जीव; इस जीवको कोई नहीं गावता । अब अनबोला जो अनुमान ताको जगत नित गाता है नटवट कहिये चौरासी आसन, सो भी जीवकी कल्पना । बाजा कहिये दशनाद अनहद, सो भी जीवकी कल्पना । पेखनी कहिये दश मुद्रा, सो भी जीवकी कल्पना । अनहद कहिये ब्रह्म, ब्रह्म कहिये अनुमान, तामें ये जीव हेत बढ़ाता है । कथनी कहिये बानीको, सो धोखेको यह निश्चय कर करके जानता है सो सत्य नहीं, सब मिथ्या बानी बन्धन है, जीवकी कल्पना । ये अर्थ । पुरुष कहिये सनकादि, नारदादि, शौनकादि, व्यासादि, जिनकी बानी सुनि-सुनि धरतीके जीव आकाशको सुरति लगावते हैं । यह आश्चार्य । जैसा कोई एक अन्धा बिना प्याला मनसे कल्पिके कल्पनाका पानी पीता है औ नदीमें पानी भरा है, सो नहीं लेता । अथवा जैसा कोई एक गाफिल रस्ता चला जाता है औ उसके गोदीमें खाँड़के लड्डू है, औ उसको भूख लगी, सो मनके लड्डू खाता है तो भूँख कैसे जायगी ? इस वास्ते तू पारखमें स्थित हो औ सबको परख । ये अर्थ । मायामुख–गुरुवा लोग बोलते हैं कि-सबमें रमा है सो राम । इसको सुनके, श्रवण मनन निदिध्यासन करके-जिन्होंने जाना सो युग युग अमर हुआ, जिनने 'मैं आत्मा' ऐसा अमृत पिया । ये अर्थ ॥ २ ॥

शब्द ३.

संतो घरमें झगरा भारी ।

रातिदिवस मिलि उठि उठि लागे । पाँच ढोटा एक नारी ॥
न्यारो न्यारो भोजन चाहैं । पाँचों अधिक सवादी ॥
कोई काहु का हटा न मानै । आपुहि आप मुरादी ॥

दुर्मति केर दोहागिन मेटे। ढोटेहि चाप चपेरे ॥
कहैं कबीर सोई जन मेरा। जो घर की रारि निबेरे ॥

टीकगुरुमुख—हे जीव ! ये घरमें जो बड़ा झगरा मचा है सो तू परख। रात दिवस उठ उठके उपाधी लगती है जीवको। पाँच तत्त्व औ एक बानी न्यारा-न्यारा भोजन चाहते हैं। आकाश शब्द चाहता है। वायु स्पर्श चाहता है। तेज रूप चाहता है। जल रस चाहता है। धरती गंध चाहती है। औ बानी तो जीवको ग्रासने चाहती है। इस प्रकारसे पाँचों बड़े स्वादी हैं। कोई किसीका कहा मानता नहीं, आपही आप मुखत्यार हैं। सो तू इनमें मत फँसे, परखके न्यारा हो। दुरमति कहिये ब्रह्मा आदि गुरुवा, जिनकी मति सुनके जीव दूर हुआ, इनकी बानी को चीन्हके मेटे। पाँचो विषयनके वश न होय, परखै, सो जन पारखी, पारखरूप। ये अर्थ ॥ ३ ॥

शब्द ४.

संतो देखत जग बौराना।
साँच कहौं तो मारन धावैं। झूठे जग पतियाना ॥
नेमी देखा धर्मी देखा। प्रात करें अस्नाना ॥
आतम मारि पषाणहि पूजें। उनमें किछउ न ज्ञाना ॥
बहुतक देखा पीर औलिया। पढ़ें कितेब कुराना ॥
कै मुरीद तदबीर बतावैं। उनमें उहै जो ज्ञाना ॥
आसन मारि डिंभ धर बैठे। मनमें बहुत गुमाना ॥
पीतर पाथर पूजन लागे। तीरथ गर्भ भुलाना ॥
टोपी पहिरे माला पहिरे। छाप तिलक अनुमाना ॥
साखी शब्दे गावत भूले। आतम खबरि न जाना ॥
हिन्दू कहै मोहि राम पियारा। तुरुक कहै रहिमाना ॥
आपुसमें दोउ लरि-लरि मूये। मर्म न काहू जाना ॥
घर घर मंत्र देत फिरतु हैं। महिमा के अभिमाना ॥

गुरु सहित शिष्य सब बूड़े । अन्तकाल पछताना ॥
कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो । ई सब भरम भुलाना ॥
केतिक कहौं कहा नहिं माने । सहजे सहज समाना ॥ ४ ॥

टीकागुरुमुख—गुरु कहते हैं कि हे सन्तो ! देखत जग बौराना । देखते हैं कि सब कल्पना मानुषरूपसे उठी औ वही कल्पनाका खोज करते-करते सब मर गये, अब उनकी बातें सुन-सुनके दिवाना हुआ । ये अर्थ । साँच जीव कहौं तो मारन धावता है औ झूठे धोखेमें जगतने प्रतीत किया । नेमी, धर्मी जो नेम धर्मके करनेवाले प्रातः स्नान करते हैं औ आत्माको कष्ट देते हैं, पाषाण पूजन करते हैं । उनमें कछु ज्ञान नहीं, अज्ञान है । ये अर्थ । बहुतक पीर औलिया देखे जो किताब कुरान पढ़ते हैं, चेला करके नाना प्रकारकी हिकमतें बताते हैं, उनमें वही ज्ञान है धोखा । ये अर्थ । कोई आसन मारि डिंभ धरके बैठे औ मनमें बहुत अभिमान किया, पीतर पाथर पूजने लगा औ तीरथ गर्भमें भूला । कोई एक टोपी पहिरे, माला पहिरे औ छाप तिलक लगायके अनुमानमें परे । साखी शब्द गानेमें भूले; लेकिन 'आत्मा मेरा अनुमान' ये खबर परी नहीं । ये अर्थ । हिन्दू कहैं मोहि राम पियारा औ मुसलमान कहैं रहिमाना । आपुसमें दोउ लरि-लरि मूये; परंतु ये धोखेका मर्म किसीने जाना नहीं । घर-घर जो मंत्र दीक्षा देते हैं महिमाके अभिमानसे जीवनको बन्धन करते हैं, सो गुरु सहित शिष्य सब भ्रममें बूड़े । अन्तमें स्थिति न मिली, ताते बहुत पछतावेंगे । जो अनुमान सबने किया, उन्हकी स्थिति कहाँ है ? हे जीव ! सुनो-ई सब भ्रममें भूले । मैंने केता कहा, कोई कहा मानता नहीं, सब धोखेमें समाये । ये अर्थ ॥ ४ ॥

शब्द ५.

संतो अचरज एक भौ भारी । कहौं तो को पतियाई ॥
एकै पुरुष एक है नारी । ताकर करहु बिचारा ॥
एकै अंड सकल चौरासी । भरम भुला संसारा ॥

एकै नारी जाल पसारा । जगमें भया अन्देशा ॥
खोजत खोजत काहु अंत न पाया। ब्रह्मा विष्णु महेशा ॥
नाग फांस लिये घट भीतर। मूसेनि सब जग झारी ॥
ज्ञान खड्ग बिनु सब जग जूझैं। पकरि न काहू पाई ॥
आपै मूल फूल फुलवारी। आपहि चुनि चुनि खाई ॥
कहहिं कबीर तेई जन उबरे। जेहि गुरु लियो जगाई ॥

टीकागुरुमुख—गुरु कहते हैं कि—हे सन्तो ! ये बड़ा आश्चर्य हुआ, जो निर्णय कहौं, तो कोई पतियाता नहीं । एक पुरुष जो जीवरूप औ एक नारी जो स्त्री है,इसके ऊपर और कोई नहीं, यह विचार करो । ये अर्थ । एकै कहिये जीव अंड कहिये झाँई जामें व्यापक होके सकल चौरासी पैदा किया और संसार नाना प्रकारके भ्रममें भूला । एक नारी कहिये बानी, जो कल्पना करके जाल पसारा । फिर वही बानी सुन सुनके जगत्‌में अन्देशा भया कि कोई कर्ता दूसरा है, तब सब मिलके खोजने लगे । सो खोजते खोजते किसीने अन्त पाया नहीं ब्रह्मा विष्णु महेश आदि हैं । तब कहा कि हमहीं ब्रह्म । ये अर्थ। नागफाँस कहिये बानीको, सो नाना प्रकारकी कल्पना करिके बानी बनाई औ सब जगत्‌को झारिके लूटा । इनके ज्ञानमें सब जगत मारा गया बिना तरवार; परन्तु ये बानीके अनुमानको कोई पकरि नहीं पाया । ये अर्थ । आपै ब्रह्म बना औ फूला, फुलवारी जगत् पैदा किया, फिर आपहि चुनि चुनि खाने लगा।गुरु कहते हैं की जीव! वही जीव उबरे, जिनको पारख गुरुने परखाया सब धोखा, उसकी स्थिति पारखपर भई । ये अर्थ ॥५॥

शब्द ६.

संतो अचरज एक भो भारी। पुत्र धईल महतारी ॥
पिता के सँग भई बावरी। कन्या रहल कुँवारी ॥
खसमहि छाड़ि ससुर सँग गौनी। सो किन लेहु बिचारी ॥
भाईके संग सासुर गौनी। सासुहि सावत दीन्हा ॥

ननँद भौज परपंच रचो है। मोर नाम कहि लीन्हा ॥
समधी के सँग नाहीं आई। सहज भई घरबारी ॥
कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो। पुरुष जन्म भौ नारी ॥ ६ ॥

टीकागुरुमुख—हे संतो ! ये बड़ा आश्चर्य है, जो स्त्रीसे पुरुष पैदा हुवा और फिर स्त्रीको जायके धरा। क्या इसको मालूम नहीं ? जो मैं स्त्रीसे पैदा हुवा औ मेरी माता स्त्री थी, अब मैं किसीको जायके पकड़ता हौं ? ये अर्थ। पिता कहिये झाँई, झाँई कहिये जहाँसे सबकी उत्पत्ति भई, सोई झाँई आत्मा, सोई झाँई ब्रह्म। कन्या कहिये जीव, सो जीवने दूसरा खसम अनुमान उस झाँईके सँग दिवाना हुवा। दिवाना कहिये भक्त जो भक्ती नारी कहाये और 'कोई पुरुष है' ऐसा अनुमान करके भक्ती करने लगे। इस प्रकारसे बहुत भक्ती करके खोजते खोजते अन्त नहीं पाया, तब कहा कि-ब्रह्म बेअन्त है। याते कन्या बिना खसम की रहि गई बेअन्त कहिके खसम छोड़ा और गुरुवा लोगनके संगमें गया, फिर ज्ञान बिचार करने लगा। यह जीव जब कहीं अन्त नहीं पाया तब बड़े भयको प्राप्त हुवा, कि मेरी कौन गती होयगी ? ऐसे भयके संग जब गुरुवा लोगोंके पास गया तब गुरुवा लोगोंने एक सावत दीन्हा। सावत कहिये उपदेश, उपदेश कहिये बोध। फिर उस बोधका अनुभव करके ननँद भौज परपंच रच्यो है। ननँद कहिये गुरुवा, जासो नेह लगा, भौज कहिये चेला जो भयको प्राप्त हुवा, परपंच कहिये बानी, जासे सब कोई धोखामें परा ॥ ये अर्थ। फिर अनुमान करके बोला कि मोर नाम, नाम कहिये कल्पना। समधी कहिये ब्रह्मज्ञानी, नाहीं कहिये जीव, सो जीव ब्रह्मज्ञानीके संगमें आयके सहज समाधीमें स्थिति पाई। सहज समाधी कहिये अनुमान, जो सहजै धोखेमें मग्न हुवा। ये अर्थ। जब मग्न हुआ तब नाना प्रकारसे अनुमान करके ब्रह्मपदको ठहराने लगा, सो पद कहाँ है ? हे जीव ! सो, तेरी झाँई। सुनो-हे सन्तो ! पुरुष जीव था सो दूसरा पुरुष अनुमान करके आप नारी हुवा ये अर्थ ॥ ६ ॥

शब्द ७.

संतो कहौं तो को पतियाई। झूठ कहत सांच बनि आई ॥
लौके रतन अबेध अमोलिक। नहिं गाहक नहिं साँई ॥
चिमिक चिमिक चिमकै दृग दुहुँदिश। अबं रहा छिरिआई ॥
आपै गुरू कृपा कछु कीन्हा। निर्गुण अलख लखाई ॥
सहज समाधी उन्मनि जागे। सहज मिले रघुराई ॥
जहाँ-जहाँ देखो तहाँ-तहाँ सोई। मन मानिक बेधो हीरा ॥
परमतत्त्व गुरु सो पावै। कहैं उपदेश कबीरा ॥ ७ ॥

टीका गुरुमुख–गुरु कहते हैं कि–हे सन्तो! गुरुवा लोगोंने जो झूठा अनुमान बताया, सोई जीवको साँचा हुआ औ प्रतीत किया। साँची पारख बताये तो कोई पतियाता नहीं। ये अर्थ। जैसे कोई अनुमानसे अपने मनमें एक हीरा बनाया, फिर उस हीराको अपनी बुद्धिसे निश्चय करके बोलता है कि–हीरा अबेध है, अमोल है; ऐसा बोलके मग्न होता है। परन्तु मनके लड्डूसे कहीं भूख जाती है? औ मनके रत्न की कहीं माला बनती है? हे सन्तो! जिन्होंने मनसे अनुमान ग्रहण किया, सो भी झूठा औ अनुमान भी झूठा। ये अर्थ। जब गुरुवा लोगोंके शरणमें ये जीव गया, तब उन्होंने एक अलक्ष मुद्रा बताई। तब ये जीव 'आँखिकी पलक न लगे' ऐसी पूर्ण समदृष्टिसे देखने लगा। तब नेत्रपर पित्त चढ़ा औ चक चक, चिमचिम नाना प्रकारके दृग दृश्य होने लगे औ ऐसा होते-होते नेत्रमें मूर्छा छाय गई। ये समाधी धोखा मिथ्या। जब समाधी छूटी, तब जीव स्तुति करने लगा कि आपही गुरुने कछु कृपा करी सो निर्गुण अलख लखाया औ सहज समाधी उन्मनीमें जगाया, जासे सहज आनंदको प्राप्त हुआ, आत्मा परमात्माकी एकता भई। ये अर्थ। यह जीव मुख अर्थ गुरुने दरशाया। गुरुमुख–गुरु कहते है, कि जहाँ-जहाँ देखो तहाँ तहाँ सोई धोखा छाय रहा है। जो मनसे माना सो, अनुमानमें जीव बँधा औ अचेत होय

रहा। औ गुरुवा लोग कहते हैं, कि परमात्माकी प्राप्ति वेदांत अनुभवसे होती है। ये निश्चय ॥ ७ ॥

शब्द ८.

सन्तो आवै जाय सो माया।
है प्रतिपाल काल नहिं वाके। ना कहुँ गया न आया ॥
का मकसूदन मच्छकच्छ न होई। शंखासुर न संघारा ॥
है दयाल द्रोह नहिं वाके। कहहु कौन को मारा ॥
वै कर्ता नहिं बराह कहाये। धरणि धरचो नहिं भारा ॥
ई सब काम साहेब के नाहीं। झूठ कहैं संसारा ॥
खंभ फोरि जो बाहर होई। ताहि पतीजे सब कोई ॥
हरणाकुश नख वोद्द बिदारा। सो कर्ता नहिं होई ॥
वामनरूप न बलि को याचै। जो याचै सो माया ॥
बिना विवेक सकल जग भरमें। माया जग भरमाया ॥
परशुराम क्षत्री नहिं मारे। ई छल माया कीन्हा ॥
सतगुरु भेद भक्ति नहिं जानै। जीवहि मिथ्या दीन्हा ॥
सिरजनहार न ब्याही सीता। जल पषाण नहिं बंधा ॥
वै रघुनाथ एककै सुमिरै। जो सुमिरै सो अंधा ॥
गोपी ग्वाल न गोकुल आया। कर्ते कंस न मारा ॥
है मेहरबान सबहिनको साहेब। ना जीता ना हारा ॥
वै कर्ता नहिं बौद्ध कहावै। नहीं असुर संघारा ॥
ज्ञानहीन कर्त्ता के भरमें। माया जग भरमाया ॥
वै कर्त्ता नहिं भये निकलंकी। नहिं कालिंगहि मारा ॥
ई छल बल सब माया कीन्हा। जत्त-सत्त सब टारा ॥
दश अवतार ईश्वरी माया। कर्त्ताकै जिन पूजा ॥
कहहिं कबीर सुनो हो संतो। उपजै-खपै सो दूजा ॥

टीकागुरुमुख—हे संतो ! आवै जाय सो माया। जो पारख है, सो उसका काल कदहीं नहीं, ना कहीं जाता है ना कहीं आता है, थीर

पद है । औ जो कर्ता है सो मानुषरूप । दश अवतार कर्ता न होय । ब्रह्माकी बानीका भेद काहुको जान परा नहीं, इस वास्ते सब धोखेमें भरमें । औ दश अवतार माया, माया कहिये जो सब जीवोंको बंधन देवै । जो बात वेदने ठहराई, सो कहाँ है ? सब कल्पना । गुरु कहते हैं कि हे सन्तो ! जो पैदा होता औ नाश होता है सो कछु दूसरा, पारख नहीं । ये अर्थ ॥ ८ ॥

शब्द ९.

सन्तो बोले ते जग मारे ।

अनबोलेते कैसेक बनि है । शब्दहि कोइ न बिचारे ॥
पहिले जन्म पुत्रका भयेऊ । बाप जन्मिया पाछे ॥
बाप-पूतकी एकै नारी । ई अचरज कोई काछे ॥
दुंदुर राजा टीका बैठे । विषहर करै खवासी ॥
श्वान बापुरा धरनि ढाकनो । बिल्ली घर में दासी ॥
कार-दुकार-कार करि आगे । बैल करें पटवारी ॥
कहहिं कबीर सुनो हो संतो । भैंसे न्याव निबेरी ॥ ९ ॥

टीकागुरुमुख—गुरु कहते हैं, कि हे सन्तो ! प्रथम आरंभमें जो ब्रह्मादि सनकादि बड़े-बड़े ज्ञान निर्णय करिके बोले, सो सब अनुमान में मारे गये । ये अर्थ । जब बोलते बोलते थके औ बुद्धि ना चली, तब अनुमान किया, कि मैं सर्व साक्षी अबोल आत्मा । तो ये बोला ना भया, बानी ना भया, तो बानी बोलका साक्षी । तब ये अनबोला आत्मा कैसा होगा ? अनबोला अनुमान, इस शब्दको कोई विचार नहीं करता, धोखेमें जाता है । ये अर्थ । पुत्र कहिये जीवको सो पहले पैदा भया औ बाप कहिये ब्रह्म, सो पीछे पैदा हुआ, जब जीवने अनुमान किया तब । फिर बोला, कि जीव औ ब्रह्म दोनों इस जगत्में हैं । ये आश्चर्य । जो कहते हैं, कि पिंडमें जीव औ ब्रह्मांडमें ब्रह्म । ये आश्चर्य कोई बूझै । औ पुत्र कहिये मानुष, बाप कहिये ब्रह्मा, सो मानुष पहिले

पैदा हुआ, पीछे ब्रह्मा पैदा हुआ । ब्रह्मा भी स्त्रीसे पैदा हुआ औ मानुष भी स्त्रीसे पैदा होता है । ये आश्चर्य । औ पुत्र कहिये ब्रह्मा औ पिता कहिये बिष्णु, सो ब्रह्मा पहिले पैदा हुआ, पीछे विष्णु पैदा हुआ, एक अष्टंगीसे । ये अर्थ । दुंदुर कहिये वेद, राजा कहिये ब्रह्म, जो वेदने दृढ़ाया सोई टीका बैठा, गद्दी बैठा । यह सबको निश्चय हुआ, तब गुरुवा लोग सब गुलामी करने लगे । श्वान कहिये ॐकार, ॐकार कहिये शब्दको, सो शब्दका भ्रम जीव पर ढाँका, भ्रमाये । ये अर्थ । बिल्ली कहिये बानीको, सो नाना प्रकारकी बानी घटघटमें पैठी । तब ये जीव दूसरा पुरुष अनुमान करके धोखेका दास बना । कार कहिये क्षर, दुकार कहिये अक्षर, सो क्षर अक्षर सो रहित निःअक्षर । इस प्रकारसे गुरुवा लोगोंने सबको दृढ़ाया सो निःअक्षर कहाँ है ? सो तो जीवका अनुमान जानिये । जब अक्षर नहीं आया, तब अक्षरहीते निःअक्षर बोला । नाना प्रकारके भय लगायके गुरुवा लोगोंने न्याय निबेरा, कि सब अक्षरका जाननेवाला निःअक्षर है । ये अर्थ ॥ ९ ॥

शब्द १०.

सन्तो राह दुनों हम दीठा ।

हिन्दू तुरुक हटा नहिं माने । स्वाद सबन को मीठा ॥
हिंदू व्रत एकादशि साधे । दूध सिंघारा सेती ॥
अन्नको त्यागे मनको न हटके । पारन करे सगौती ॥
तुरुक रोजा निमाज गुजारे । बिसमिल बाँग पुकारे ॥
इन्हको बिहिस्त कहाँ ते होवै । जो साँझै मुरगी मारै ॥
हिन्दू की दया मेहर तुर्कनकी । दोनों घटसे त्यागी ॥
ये हलाल वै झटका मारे । आग दुनो घर लागी ॥
हिन्दु तुरुक की एक राह है । सतगुरु सोई लखाई ॥
कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो । राम न कहूँ खुदाई ॥ १० ॥

टीकागुरुमुख–गुरु कहते हैं कि–हे सन्तो ! दोनों राह हम देखा जो हिन्दू तुरुक हटा नहिं मानते, अपना अपना स्वाद सबको मीठा

लगा । हिंदू एकादशी व्रत साधते हैं, अन्नको त्याग करते हैं, मनको नहीं हटकाते तो । दश इन्द्री औ मनको स्थिर करै सो एकादशी । ये अर्थ । तुरुक रोजा निमाज करते हैं और सब मिलके बाँग देते हैं, साँझको मुरगी मारते हैं तो इनकी मोक्ष कहाँसे होयगी ? दया सोई मोक्ष । ये अर्थ । हिन्दू तुर्क दोनोंने दया मेहर छोड़ी । और कोई छुरीसे औ कोई तरवारसे गरा काटते हैं । इस प्रकार दोनों घरमें आगि लगी । हिंदू तुरुककी एक राह है जो ब्रह्मा औ महम्मदने बताई । ये अर्थ । गुरु कहते हैं कि-हे सन्तो ! न कहुँ राम है, न कहुँ खुदा है, सब धोखा है । ये अर्थ ॥ १० ॥

शब्द ११.

सन्तो पाँड़े निपुण कसाई ।

बकरा मारि भैंसापर धावै । दिल में दर्द न आई ॥
करि अस्नान तिलक दै बैठे । विधिसों देवि पुजाई ॥
आतम राम पलकमें बिनसे । रुधिर की नदी बहाई ॥
अति पुनीत ऊँचे कुलकहिये । सभा माहिं अधिकाई ॥
इन्हते दीक्षा सब कोई माँगे । हँसि आवै मोहि भाई ॥
पाप कटनको कथा सुनावैं । कर्म करावैं नीचा ॥
हम तो दोनों परस्पर देखा । यम लाये हैं धोखा ॥
गाय बधेते तुरुक कहिये । इन्हते वे क्या छोटे ॥
कहहिं कबीर सुनो हो सन्तों । कलिमा ब्राह्मण खोटे॥ ११॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं, कि हे सन्तो ! पंडित पक्के कसाई ॥ बकरा मारिके देवीका पूजन करावै, कसाईका कर्म करे, सोई कसाई । इस वास्ते हिन्दू तुरुक दोनों झूठे हैं । ये अर्थ ॥ ११ ॥

शब्द १२.

संतो मते मातु जन रंगी ।

पियत पियाला प्रेम सुधारस । मतवाले सतसंगी ॥
अर्धे ऊर्धे भाठी रोपिनी । लेत कसारस गारी ॥

मूँदे मदन काटि कर्म कस्मल । संतति चुवत अगारी ॥
गोरख दत्त वशिष्ठ ब्यास कपि । नारद शुक मुनि जोरी ॥
बैठे सभा शंभु सनकादिक । कहाँ फिरे अधर कटोरी ॥
अंबरीष औ याज्ञ जनक जड़ । शेष सहस्र मुख फाना ॥
कहाँलों गनौं अनंत कोटिलों । अमहल महल दिवाना ॥
ध्रुव प्रहलाद बिभीषण माते । माती शेवरी नारी ॥
निर्गुण ब्रह्म माते वृन्दाबन । अजहूँ लागु खुमारी ॥
सुर नर मुनि यति पीर औलिया। जिनरे पिया तिन्ह जाना ॥
कहैं कबीर गूँगेकी शक्कर । क्यों कर करे बखाना ॥ १२ ॥

टीकागुरुमुख–गुरु कहते हैं कि–हे संतो ! ये सब नाना प्रकारकी मतिमें माते । योगी योगके रंगमें रंगा ज्ञानी ज्ञानके रंगमें रंगा औ भक्त प्रेम लक्षणामें रँगा । जो बानी सुनी, सो अनुमान बाँधा । जैसी बानी सुनी, तैसी मूर्ति अपने मनसे बनाई औ उसको पुरुषपना दिया । आपने स्त्री भाव लेके आशकी की, औ प्रेममें मग्न हुवा इस प्रकार अपने–अपने सतसंगमें सब मतवाले हुए । ये अर्थ । अर्ध कहिये पिंड, तामें जीव; ऊर्ध कहिये ब्रह्माण्ड, तामें ब्रह्म, इस प्रकारसे दो जगह रोपांत किया, ब्रह्माकी बानीने औ गुरुवा लोगोंने । सो सब बड़े-बड़े जीव उस बानीका बिलछान करने लगे औ उसका रस जो अनुभव, सो पीने लगे औ आनन्दमें मूदते भये, सब कर्म कचरा काटिके शुद्ध चैतन्य हुए । आगे संतति चूवने लगी, अनुभव बानी बनायके जगत्में उपदेश करने लगे । ये अर्थ । गोरख दत्त, वशिष्ठ, व्यास, हनुमान्, नारद, शुकदेव, सनकादि, येते एक मिलि सतसंग महादेवकी सभामें बैठके करते हैं और अनुभवकी तर्क उहाँ फिरती है, अनुमानकी कटोरी अम्बरीष, याज्ञवल्य, जनक विदेही, जड़भरत, शेष आदि सहस्र मुखसे विचार करते-करते सब धोखेमें दिवाने हुये । गुरु कहते हैं कि–कहाँ लौं गनौं, अनंत कोटि लौं सब अनुमानमें दिवाने हुए । ये अर्थ ध्रुव, प्रहलाद, बिभीषण, शेवरी आदि प्रेम लक्षण भक्तिमें मस्त हुए औ योगी

लोग निर्गुण ब्रह्म होयके संसारमें मस्त हुए। वृन्दावन कहिये संसार, सो अबही तक खुमारी छुटी नहीं, गाफिली छुटी नहीं। ये अर्थ। मायामुख-माया कहती है कि-सुर, नर, मुनि, यती, पीर, औलिया जिन्होंने प्याला पिया, तिन्होंने जाना कि-एक ब्रह्म सत्य औ सब मिथ्या। जिन्होंने जाना सो मौन हुये। जैसे गूंगेको शक्कर खिलाई औ उसका स्वाद पूछो तो कैसे कहेगा? इस प्रकारसे समाधीमें मौन हुवा। ये अर्थ॥१२॥

शब्द १३.

राम तेरी माया दुंद मचावै।
गति मति वाकी समुझि परे नहिं। सुर नर मुनिहि नचावै॥
क्या सेमर तेरि शाखा बढ़ाये। फूल अनूपम बानी॥
केतेक चातृक लागि रहे हैं। देखत रुवा उड़ानी॥
काह खजूर बड़ाई तेरी। फल कोई नहिं पावै॥
ग्रीषम ऋतु जब आनि तुलानी। तेरी छाया काम न आवै॥
आपन चतुर औरको सिखवैं। कनक कामिनी सयानी॥
कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो। राम चरण ऋतुमानी॥१३॥

टीकागुरुमुख-राम कहिये जो नाना योनिमें रमा औ नाना मतिमें प्रकाश हुआ, सो जीव। गुरु कहते हैं कि-हे जीव! तेरी कल्पनाने बड़ी दुन्द मचाई। ये अर्थ। वो कल्पनासे जो-जो मत बनी औ जो-जो बानी बनी, सो काहूको समुझ परी नहीं। कल्पनाने सुर, नर, मुनी, सबको नचाया। ये अर्थ। सेमर कहिये माया, शाखा कहिये पंडित, सो गुरु कहते हैं कि-हे कल्पना! तेरी बानी बहुत बड़ी औ पंडित लोगोंने बहुत दृढ़ाई, पुष्पीत वाच। जा बानीके सुनेसे केतेक जीव आशा बंध होय रहे, आगे कछु प्राप्ती न भई। ये अर्थ। जैसे सेमरका वृक्ष अच्छा देखकर औ बड़ा फूल देखके तोतेने सेवन किया, कि मेरेको कछु फल मिलेगा, सो उहाँ कछु प्राप्ती नहीं भई। ये अर्थ। क्या बानी बड़ाई तेरी? जो अर्थ, धर्म काम औ मोक्ष यह चार फल

बताये, सो काहूने भी नहीं पाये और जो तेरा आसरा किया, सो भी जब मौत आयके तुलायगी, तब काम नहीं आनेका; आशा बासा सब छूट जायगा । ये अर्थ । गुरुवा लोग अपनी चतुराई औरनको सिखाते हैं । बहुत प्रकारकी बानी द्रव्य पैदा करनेकी औ उपदेश करनेकी औ बशीकरण, मारण, जारण, उच्चाटन आदि सब विद्या बताते हैं । सो गुरु कहते हैं, कि हे संतो ! ई सब मिथ्या कहाँ है ? अनुमानकी बानी ये जीवने मान लिया । ये अर्थ ॥ १३ ॥

शब्द १४.

रामुरा संशम गाँठि न छूटै । ताते पकरि-पकरि यम लूटै ॥
होय कुलीन मिस्कीन कहावै । तूँ योगी संन्यासी ॥
ज्ञानी गुणी शूर कवि दाता । ये मति किनहु न नासी ॥
स्मृति वेद पुराण पुढैं सब । अनुभव भाव न दरसे ॥
लोह हिरण्य होय धौं कैसे । जो नहिं पारस परसे ॥
जियत न तरेहु मुये का तरिहो । जियतहि जो न तरे ॥
गहि परतीत कीन्ह जिन जासों । सोई तहाँ अमरे ॥
जो कछु कियेउ ज्ञान अज्ञाना । सोई समुझ सयाना ॥
कहहिं कबीर तासो क्या कहिये । जो देखत दृष्टि भुलाना ॥ १४ ॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि-हे जीव ! जो गुरुवा लोगोंने उपदेश किया, सो अनुमानकी गाँठी छूटती नहीं; इस वास्ते फिर गर्भवासमें आता है औ फिर—फिर गुरुवा लोग पकरि-पकरिके तेरेको लूटते हैं । ये अर्थ । अरे तूही कहीं ब्राह्मण हुआ और तूही कहीं मिस्कीन भक्त हुआ और तूही कहीं योगी हुआ और तूही कहीं संन्यासी हुआ, ज्ञानी हुआ और कहीं गुणी हुआ । कहीं शूर हुआ और तूही कहीं कवीश्वर हुआ, कहीं दाता हुआ; परंतु ये धोखा किनहूँ नाश किया नहीं । ये अर्थ । कुलीन कहिये ब्रह्मा, मिस्कीन कहिये विष्णु, योगी कहिये महादेव, संन्यासी कहिये दत्तात्रेय, ज्ञानी कहिये सनकादि, गुणी कहिये नारदादि, शूर कहिये भीषमादि, कवी कहिये व्यासादि, दाता

कहिये कर्ण आदि येते सब हुये, पर अनुमान किसीसे नाश नहीं भया। ये अर्थ। स्मृति वेद पुराण पढ़ते हैं, सब अनुभव भावना करते हैं; परंतु सब पशु, मानुष कहाँ ते होय? पारख पाये बिना। ये अर्थ। जियत न तरेहु मूये क्या तरिहो? जीयते अनुमानमें बंध भये, मुये कहाँसे छूटेंगे?। ये अर्थ। सो जो जीवने जहाँ पकड़िके प्रतीत किया, सो तहाँ ही मरा। ये अर्थ। जो कुछ प्रथमारंभमें भूलकी बानी बनाई, सोई अब जीवने समझके निश्चय किया, सो निश्चय मिथ्या है। जो देखता है दृष्टिसे कि-जीवरूपसे और कुछ नहीं और फिर भूलता है, उससे क्या कहना? ये अर्थ॥ १४॥

शब्द १५.

रामुरा चली बिना बनमा हो। घर छोड़े जात जोलहा हो॥
गज नौ गज दश गज उनइसकी। पुरिया एक तनाई॥
सात सूत नौ गंड बहत्तर। पाट लागु अधिकाई॥
तापट तूला तुले नहिं गजन अमाई। पैसन सेर अढ़ाई॥
तामें घटे बढ़े रतियो नहिं। करकच करे गहराई॥
नित उठि बैठि खसम सो बरबस। तापर लागु तिहाई॥
भींगी पुरिया काम न आवै। जोलहा चला रिसाई॥
कहहिं कबीर सुनो हो संतो। जिन्ह यह सृष्टि बनाई॥
छाड़ पसार राम भजु बौरे। भवसागर कठिनाई॥१५॥

टीका गुरुमुख—हे जीव! यह माया गुरुवा लोग नाना प्रकारकी बानी पढ़िके औ कल्पना करके संसारमें दृढ़ावने चले, जाके पीछे ये जीव सब घर छोड़के चले। ये अर्थ। अब कौन प्रकारसे कल्पना करके बानी दृढ़ाई? सो सुनो। प्रथम एक अनुमान हुवा, जो मेरा कर्ता कोई दूसरा है। तब नाना प्रकार शब्दकी कल्पना उठने लगी। फिर उसका अर्थ मिलाय-मिलायके नौ व्याकरण बनाया। फिर शब्दका निश्चय करके चार वेद बनाया, तामें निर्णय किया तीन पदका तत् त्वं

असि । फिर छै शास्त्र बनाया इस प्रकारसे उनइसका एक ताना तनाया, तामें सब जीव बंधा । फिर सोधन करने लगा कि-पाँच तत्त्व, छठवाँ मन, सातवाँ जीव नौ द्वार, बहत्तर कोठा, येतेसे जो अधिक है; सो मैं आत्मा । ये अर्थ । फिर अनुभव पट बढ़ा कि-कहीं तौलेसे तूलता नहीं । तब बेअन्त कहा औ 'एक आत्मा' ये निश्चय किया । तब सर्व व्यापक हुवा, पैसन सेर अढ़ाई । ये अर्थ । तामें घटै बढ़ै रतियो नहीं; जैसेका तैसा, न पाप-न पुण्य, ना कर्म न धर्म, करकच करे गहराई । पशुवत धर्म आचरण करने लगा । ये अर्थ । मैं आत्मा नित्य हौं, निरंतर हौं, ऐसा मानके नाहक जबरदस्ती बंधनमें परा । ता ऊपर त्रिपुटी लगी-सत् चित् आनन्द । ये अर्थ । जब त्रिपुटी लगी तब सर्व आपै ठहरा । जब आपै ठहरा तब दूसरा भाव न ठहरा । जब दूसरा भाव न ठहरा, तब दुख-सुखका कारण आपुही रहा औ आवागमनमें आप ही रहा । इस प्रकारसे भींगी पुरिया काम न आवै । नाना प्रकार की बानीमें जब ये जीव भीजा, तब असिपद हुआ, तत् त्वं दोनों एक हुवा । जब दोनों एकही हुवा तब पूर्ववत् जैसेका तैसा रहा, कुछ काम नहीं आया । एक दिन चोला छूट गया तब आप खिसियायके गर्भवास को प्राप्त हुवा । ये अर्थ । गुरु कहते हैं कि-हे जीव ! जो अनुमान करते हो, सो कहाँ है ? जो यह अनुमान करनेवाला है, उसीने सब सृष्टि बनाया । हे संतो ! सुनो, जहाँ तक अनुमान कर्तव्य है सो सब छोड़ो ! आत्मा मानके दिवाने हुए सो भोगो, परखके न्यारे होवो । आत्माही भवसागर. आत्माही सर्व बंधन है । ये अर्थ ॥ १५ ॥

शब्द १६.

रामुरा झीझी यंतर बाजै । कर चरण बिहूना नाचै ॥
कर बिनु बाजै सुनै श्रवण बिनु । श्रवण श्रोता सोई ॥
पाट न सुबस सभा बिनु अवसर । बूझौ मुनिजन लोई ॥
इंद्री बिनु भोग स्वादजिभ्याबिनु । अक्षय पिंड बिहूना ॥

जागत चोर मंदिर तहाँ मूसै। खसम अक्षत घर सूना॥
बीज बिनु अंकुर पेड़ बिनु तरिवर। बिनु फूले फल फरिया॥
बाँझ कि कोख पुत्र अवतरिया। बिनु पग तरिवर चढ़िया॥
मसिबिनुद्वाइतकलमबिनुकागद। बिनु अक्षर सुधि होई॥
सुधि बिनु सहज ज्ञान बिनु ज्ञाता। कहहिं कबीर जन सोई॥१६॥

टीका मायामुख—गुरुवा लोग कहते हैं, कि-हे जीव! इस शरीर में झीना नाद उठता है, सो तुम सुनिके ब्रह्म पुरुषमें मिलि रहो। ये अर्थ। हाथ पाँव बिना नाच होता है, नाना प्रकारके दृग दृश्य; सो तुम नेत्र उलटके ठहरके देखो। तहाँ हाथ बिना बाजा बजता है, सो दोनों कानको ठेंठी देकर सुनो। सुनते-सुनते गगनमें मग्न हो, आप आपनपौ बिसार दे। ये अर्थ। ब्रह्म शुभ स्थानमें पंच विषय औ अन्तः करण चतुष्टय नहीं, इस सभा बिना बड़ा आनंद है। ये अनुभव कोई मुनि-जन, योगीजन समुझेंगे। ये अर्थ। बिना इंद्रिय वहाँ भोग है, बिना जिभ्या वहाँ स्वाद है, रूप रेखा वहाँ कछु नहीं, काया बिना अक्षय है। ये अर्थ गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि-जीव जागृत होके अनुमान चोर घर लूटता है। आपहि खाविंद होयके शून्यमें घर किया। ये अर्थ। बीज बिनु अंकुर पेड़ बिनु तरिवर। गुरुवा लोग कहते हैं कि-ब्रह्म शुद्ध चैतन्य, जहाँ जगत अंकुर पेड़ नहीं, जहाँ अज्ञानका पेड़ नहीं; ऐसा निर्विकल्प सुखका वृक्ष है। जहाँ बिना बतलाये अनुभव होता है सहजै सहज। ये अर्थ। गुरु कहते हैं कि-ये आश्चर्य। जैसे कोई कहै कि-बाँझके कोखिमें पुत्र पैदा भया, बिना चरण झाड़ पर चढ़ा, जैसा ये आश्चर्य मिथ्या ऐसा गुरुवा लोगोंका विचार। जैसा कि कोई एक धूप का मारा गर्मीसे बहुत व्याकुल हुवा तब बिना पेड़ उसीने एक वृक्ष अनुमान किया और कहा कि क्या गहिरी छाया है? सो धूपकी गर्मी कैसे जायगी। अथवा जैसा कोई एक भूखा है, बिना बीज एक वृक्ष अनुमान करता है औ उसके फूलका ही ठिकाना नहीं, तिसमें बहुत फल

लगा तब अपने मनसे तोर खाता है सो भूख कैसे जायगी ? जैसे बाँझ पुत्र न्याय । ये अर्थ । मायामुख-गुरुवा लोग कहते हैं कि-बिना मसी, बिना द्वाइत, बिना कलम बिना कागज, बिना अक्षर, शुद्ध चैतन्य है निःअक्षर । ये अर्थ । गुरुमुख-गुरुवा कहते हैं कि-बिना जीव जो धोखामें मग्न होता है सहजै सहज सो कहाँ है ? बिना ज्ञान जो जानता है सो धोखा । ये अर्थ ॥ १६ ॥

शब्द १७.

रामहि गावै औरहि समुझावै । हरि जाने बिनु बिकल फिरे ॥
जेहि मुख वेद गायत्री उचरे । ताके वचन संसार तरे ॥
जाके पाँव जगत उठि लागे । सो ब्राह्मण जिव बध करे ॥
आपन ऊँच नीच घर भोजन । घीन कर्म हठि वोद्र भरे ॥
ग्रहण अपावस ढुकि ढुकि माँगे । कर दीपक लिये कूप परे ॥
एकादशी व्रत नहिं जाने । भूत प्रेत हठि हृदय धरे ॥
तजि कपूर गाँठि बिष बाँधे । ज्ञान गँवाये मुग्ध फिरे ॥
छीजै साहु चोर प्रतिपाले । संत जनाकी कूटि करे ॥
कहहिं कबीर जिभ्याके लंपट । यहि बिधि प्राणी नर्क परे॥१७॥

टीका गुरुमुख-गुरु कहते हैं कि-ये गुरुवा लोग रामको गाते हैं और दूसरेको समुझाते हैं परंतु मायाका मर्म जाना नहीं। जो बानीने सब को भ्रमाया, उसको न जाना; इस वास्ते व्याकुल होयके फिरता है । ये अर्थ। जाके मुखसे वेदगायत्री उच्चारण होता है औ जाके मुखसे संसार मुक्त होना चाहता है औ जाके पाँव संसार सब परता है, सो ब्राह्मण जीव बध करते हैं । ये आश्चर्य । आप ऊँच नीच घर भिक्षा माँगते हैं औ भोजन करते हैं, औ नीच कर्म करके हठ दान, लेते हैं, पेट भरते हैं । ये अर्थ । ग्रहण, कर, अमावस, दान प्रतिग्रह लेता है औ हाथमें नाना प्रकारके पोथी पुस्तक लेके भ्रम कूपमें परता है । ये अर्थ । एकादस जो आतमा है सो उसका व्रत नहीं जानता । दया,

क्षमा, शांति, आर्जव औ भूत-प्रेत पूजन करके जीव हिंसा करता है, हृदयमें हठ धरता है । ये अर्थ । कपूर कहिये जीव, सो छाड़के विष कहिये विषय, सो गाँठी बाँधता है इस प्रकारसे ज्ञान गँवाये मूर्ख चौरासीमें फिरता है । साहु कहिये जीव, चोर कहिये अनुमान, सो अनुमानका प्रतिपाल करके जीवका नाश होता है । औ सन्तजनकी मसखरी करता है, ताते चौरासीको प्राप्त होता है । ये अर्थ । गुरु कहते हैं कि-हे जीव ! जो-जो बड़े-बडे कवि भये जिभ्याके लंपट, सो सब यही प्रकार करते-करते नर्कको प्राप्त भये । ये अर्थ ॥ १७ ॥

शब्द १८.

राम गुण न्यारो न्यारो न्यारो ।
अबुझा लोग कहाँ लों बूझै । बूझनहार बिचारो ॥
केतेहि रामचन्द्र तपसीसे । जिन्ह यह जग बिटमाया॥
केतेहि कान्ह भये मुरलीधर । तिन्ह भी अन्त न पाया ॥
मच्छ कच्छ औ बराह स्वरूपी । बावन नाम धराया ॥
केतेहि बौद्ध निकलंकी कहिये । तिन्ह भी अन्त न पाया ॥
केतेहि सिद्ध साधक संन्यासी । जिन्ह बनवास बसाया ॥
केतेहि मुनि जन गोरख कहिये । तिन्ह भी अन्त न पाया ॥
जाकी गति ब्रह्मै नहिं जानी । शिव सनकादिक हारे ॥
ताके गुण नर कैसेक पैहौ । कहहिं कबीर पुकारे ॥१८॥

टीकागुरुमुख—गुरु कहते हैं कि-हे संतो ! राम कहिये आत्मा, आत्मा कहिये सच्चिदानंद, गुण कहिये वेद, सो आत्माका निर्णय करते हैं तीन प्रकार से तत्-त्वं-असि, सो पारखसे न्यारा । ये अर्थ । अबुझा कहिये जहाँ बुद्धि ना पहुँचे, सो मिथ्या अनुमान । बूझनहार कहिये जीव, सो मिथ्या अनुमानके पीछे लगा है । कहाँ लग बूझेगा ? जहाँ लग कल्पना करता है, तहाँ लग अनुमानकी वृद्धि होती है । ये अर्थ । औ केते दश अवतार भये, तिन खोजते-खोजते अन्त पाया

नहीं, तब हारि कहा वे अन्त । केतेई कपिल आदि सिद्ध भये, औ केते साधक भये औ केतेही सँन्यासी भये, केतेही मुनि औ गोरख भये, तिन्ह भी अन्त न पाया । जहाँ लग कल्पना किया, तहाँ लग बढ़ती गई । जहाँ थका, तहाँ 'एक आत्मा' कहिके अनुमानमें बँधा । जा अनुमानको ब्रह्माने नहीं जाना, शिव सनकादि सब हारि रहे हैं, ताके खोजमें सब नर पड़े हैं । सो कैसे पावेंगे ? गुरु कहते हैं कि- जाको सब जग ब्रह्म करके मानते हैं, सो अनुमान मिथ्या, है नहीं, विचार करके देखो । ये अर्थ ॥ १८ ॥

शब्द १९.

ये तनु राम जपो हो प्रानी । तुम बूझहु अकथ कहानी ॥
जाके भाव होत हरि ऊपर । जागत रैनि बिहानी ॥
डाइन डारे स्वनहां डोरे । सिंघ रहै बन घेरे ॥
पाँच कुटुम मिलि जूझन लागे । बाजन बाजु घनेरे ॥
रेहू मृगा संशय बन हाँके । पारथ बाणा मेलै ॥
सायर जरे सकल बन डाहे । मच्छ अहेरा खेलै ॥
कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो । जो यह पद अर्थावै ॥
जो यह पद को गाय बिचारे । आपु तरे औ तारे ॥१९॥

टीकामायामुख—माया कहती है, कि—हे जीव ! एक आत्मा सत्य और सब मिथ्या; सो तुम जानो । ये बात अकथ है । जिसका भाव भगवान् पर रहता है, सो आठ पहर ध्यान करके रात-दिन बीती जाता है । ये अर्थ । **गुरुमुख**—गुरु कहते हैं कि-इस प्रकारकी बातें गुरुवा लोग दृढावते हैं तब स्वनहा कहिये ॐ कार, तासों जीवकी सुरति लगी । ये जीव सिंघ औ बन बानी । सो जीव बानीमें घेरे रहता है। ये अर्थ। पाँच कुटुम कहिये पाँच देह, पाँच टुकुम कहिये पाँच इंद्रिय, सो इसमें मिलके जीव सब नाश होने लगे । तब बाजन कहिये बानी, सो कल्पि-कल्पिके बहुत बानी बोले । ये अर्थ । रेहू कहिये ब्रह्म, मृगा

कहिये मन, सो मनसे जो कल्पना उठी सो संशय, संशयसे जो बनी सो बानी, बन कहिये बानीको, इस प्रकारसे हुवा । आगे सब बानीका विचार किया, चार देहका साक्षी हुवा, तब कछु आगे सूझ परा नहीं। तब कहा कि-मैं साक्षी बोध, इस प्रकारसे अनुमानमें रहा । सब बानी छोड़के निर्विकल्प होके मनही ब्रह्म हुवा । ये अर्थ । पारथ कहिये पंड़ित, बान कहिये ज्ञान, सो नाना प्रकारके ज्ञान पंडित लोग बोध करने लगे । ये अर्थ । सायर कहिये बानी, बन कहिये संसार, सो बानीकी अग्निमें सब जग जरता है । मच्छ कहिये जीव, सो सब जीव अपनी-अपनी कल्पना से बानीका जरा बनाते हैं, फिर एकको एक फँसाते हैं । ये अर्थ । गुरु कहते हैं कि-हे सन्तो ! कबीर कहाँ है ? जो यह पद परखावै, सोई पारख, सोई कबीर । जो इस पदको गायके विचार करे, सो आप भी तरे औ केतेई जीवको तारे । सबको परखके पारखरूप हुवा । ये अर्थ ॥ १९ ॥

शब्द २०.

कोई राम रसिक रस पीयहुगे । पीयहुगे युग जीयहुगे ॥
फललंकृत बीज नहीं बकला । शुक पंछी तहाँ रस खाई ॥
चूवै न बुंद अँग नहिं भीजै । दास भँवर सब सँग लाई ॥
निगम रसाल चारि फल लागे । तामें तीनि समाई ॥
एक दूरि चाहें सब कोई । यतन-यतन काहु बिरले पाई ॥
गये बसंत ग्रीषम ऋतु आई । बहुरि न तरिवर तर आवै ॥
कहैं कबीर स्वामी सुख सागर । राम मगन होय सो पावै ॥२०॥

टीका मायामुख—जो सबमें रमा, सो रामरस कहना; जो सुनके, विचार करके निश्चय करके जाना कि-मैं आत्मा एक रस । सो कोई मुमुक्षु जन 'एक आत्मा,' ऐसा जानै तो आवागमनसे रहित होय । ये अर्थ । गुरुमुख-गुरु कहते हैं कि-इस प्रकारसे मायाने फलकी अंकित तो बताई । अंकित कहिये अनुमानको । रूप रेख कछु नहीं, तहाँ शुक

पंछी कहिये जीव कहिये जीवको, सो रस खाने लगे, अनुभव लेने लगे ! शुक्राचार्य आदि दै जो फल, अनुमान किया, सो अनुमानका फल, कदही उसमेंसे एक रसका बूँद चूवता भी नही, अँग भीजा भी नहीं; नाहक अनुमानके गुलाम होयके अनुमानमें फँदते हैं, कमल भ्रमर न्याय । ये अर्थ। मायामुख–मायाका उपदेश ऐसा है, कि वेदने जो चार फल बताये-अर्थ धर्म काम मोक्ष आदि, सो उसका रस देखके सुर, नर, मुनि सब बंधनमें परे । इसके आगे और कुछ है जो सबका जाननेवाला सर्व साक्षी । सो उसकी चाह सब कोई करते हैं; परंतु यतन-यतन अनेक जन्ममें कोई बिरला प्राप्ती होता है । जब पंच विषय छूट जायेंगे तब मन स्थित होयगा । जब मन लय हुवा, तब आवागमनसे रहित हुवा, फिर चोलेमें नहिं आवता । ये अर्थ। अब इसका साधन कहता हौं । प्रथमारंभमें मन नाभीमें थीर करै सोहं-सोहं शब्दमें । जब मगन होवै, तब आप आपनपौ सब विसर्जन होयके सुखके समुद्रमें बूड़े, सोई आत्मस्थितिको प्राप्त होता है मुक्त होता है । ये अर्थ ॥ २० ॥

शब्द २१.

राम न रमसि कौन डंड लागा । मरि जैबे का करिबे अभागा ॥
कोई तीरथ कोइ मुंडित केसा । पाखंड मन्त्र भरम उपदेशा ॥
बिद्या बेद पढ़ि करे हंकारा । अन्तकाल मुख फाँके छारा ॥
दुखित-सुखित है कुटुम जेवावै । मरणबार एकसर दुख पावै ॥
कहहिं कबीर यह कलि है खोटी । जो रहै करवा सो निकरै टोटी २१

टीकागुरुमुख–गुरु कहते हैं कि-हे जीव ! तू कौन धोखेमें परा है? धोखेसे न्यारा नहीं होता । अरे हे अभागी ! तू मर जायगा; फिर सहायता कोई नहीं करेगा । ये अर्थ । कोई तीरथ करता है । सो तीरथ भी अपनी जगह रह जायगा, तेरी सहाय नहीं करनेका । क्योंकि तीरथ जड़ औ तू चैतन्य । कोई मूँड़ मुँड़ाय संन्यासी भये सो भी जड़, अपनी जगह रहेगा । तेरी कल्पना तेरी सहाय क्या करेगी ? पाखण्डी

लोगोंने जो भ्रम बताया है, मंत्र उपदेश, सो भी जड़ तेरी कल्पना, उससे तेरा कल्याण नहीं होनेका । विद्या वेद पढ़िके जो अहंकार करते हैं, सो भी कल्पना मिथ्या, आखिरको मुखमें खाक पड़ेगी । अरे तू चैतन्य होयके जड़ कर्मनका आश्रित हुवा, तो जड़से तेरा कल्याण कैसे होयगा ? औ जड़ तेरा सहाय कैसे करेगा ? । ये अर्थ । अपना सुख छोड़के नाना प्रकारके कर्म कष्ट करके कुटुमका प्रतिपाल करता है । मरण बेर वो भी संग होते नहीं । अपने ही दुःख भोगनेको परता है । गुरु कहते हैं कि, हे जीव ! सब मिथ्या धोखा है । यह बानी जो गुरुवा लोगोंने बताई सो सब मिथ्या । पारख कहीं नहीं । देखो, जो जिसके घटमें रही, सो उसके मुखसे निकली कल्पना । ये अर्थ ॥ २१ ॥

शब्द २२.

अबधू छाड़हु मन बिस्तारा ।
सो पद गहो जाहिते सद्गति । पारब्रह्म सो न्यारा ॥
नहीं महादेव नहीं महम्मद । हरि हजरत कछु नाहीं ॥
आदम ब्रह्मा नहिं तब होते । नहीं धूप नहिं छाहीं ॥
असी सहस्र पैगम्बर नाहीं । सहस्र अठासी मूनी ॥
चन्द्र सूर्य तारागण नाहीं । मच्छ कच्छ नहिं दूनी ॥
बेद कितेब सुमृति नहिं संयम । नहिं जीवन परछाँई ॥
बाँग निमाज कलमा नहिं होते । रामहु नाहिं खुदाई ॥
आदि अन्त मन मध्य न होते । आतश पवन न पानी ॥
लख चौरासी जीव जन्तु नहिं । साखी शब्द न बानी ॥
कहहिं कबीर सुनो हो अवधू । आगे करहु बिचारा ॥
पूरण ब्रह्म कहाँते प्रगटे । कृतम किन्ह उपराजा ॥२२॥

टीकागुरुमुख-गुरु कहते हैं कि-हे योगी लोगो ! हे ज्ञानी लोगो ! जो मनसे कल्पना करिके बानीका विस्तार भया औ योग विस्तार भया औ अनुमान विस्तार भया सो छोड़के पारखको गहो । जासे सब धोखा मिटि जाय, सो पारब्रह्म न्यारा सर्व पारखी । ये अर्थ ।

ब्रह्ममुख—न महादेव, न महम्मद, न हरि, न हजरत, न आदम, न ब्रह्मा, न धूप, न छाँह, न एक लाख अस्सी हजार पैगम्बर, न अठासी सहस्र ऋषी, न चन्द्र, न सूर्य न तारागण, न मच्छ, न कच्छ, न सृष्टि, न वेद, न किताब, न स्मृति न योग, जीव, न माया, न बाँग न, निमाज, न कलमा, न राम, न खुदा, न आदि, न अंत, न मध्य, न मन, न बुद्धि, न अग्नी, न पवन, न पानी, न लख चौरासी जीव-जंतु, न साखी, न शब्द, न बानी; ये कछु न था। पूर्ण ब्रह्म सच्चिदानंद अद्वैत एकरस। ये अर्थ।

गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि-हे अवधू ! आगे विचार करो। जो पूर्ण ब्रह्म सच्चिदानंद कहते हो, सो कहाँसे प्रगटे ? किन्हें अनुमान किया ? कौनको आनंद हुआ ? औ ये बानी वेद जगत आदि कर्तव्य किसने किया ? कहाँ रहिके ? सब मनुष्य की कल्पना। ये अर्थ ॥ २२ ॥

शब्द २३.

अबधू कुदरतकी गति न्यारी।
रंक निवाज करे वे राजा। भूपति करे भिखारी ॥
याते लोग हरफना लागे। चन्दन फूल न फूला ॥
मच्छ शिकारी रमें जंगल में। सिंघ समुद्रहि झूला ॥
रेंड़ रूख भये मलयागिर। चहुँदिश फूटी बासा ॥
तीन लोक ब्रह्मांड खंड में। अँधरा देखै तमासा ॥
पंगा मेरु सुमेरु उलंघै। त्रिभुवन मुक्ता डोलै ॥
गूँगा ज्ञान बिज्ञान प्रकाशै। अनहद बानी बोलै ॥
अकाशहि बाँधि पतालहि पठवै। शेष स्वर्गपर राजै ॥
कहैं कबीर राम है राजा। जो कछु करै सो छाजै ॥ २३ ॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि-हे ज्ञानी ! हे योगी ! ये नाना प्रकारकी सिद्धि औ नाना प्रकारका धोखा जीवको देवै, सो कुदरत। कुदरत कहिये माया, जो कंगालको राजा करै औ राजाको भिखारी करै। मनुष्य जो सबका राजा था. उसको याचक बनाया औ धोखा जो

पाषाण आदिक, उसको दाता बनाया । ये अर्थ । याते लोग हरफना लागे । लोग कहिये जीव, हर कहिये जामें सब हर गये, फना कहिये जो कछु नहीं, सो धोखेमें जीव फूले तत्त्वमसी कहायके । ये अर्थ। मच्छ शिकारी कहिये गुरुवा लोग, सो संसारमें रमते हैं । उनकी बातें सुनिके जीव सिंघ सो अनुमान समुद्रमें झूलता है । ये अर्थ । रेंड़रूख कहिये ब्रह्म, ब्रह्म कहिये धोखा, सो धोखा निश्चय हुआ । चारों तरफसे बासना फूटी, धोखामें जीव अन्धा हुआ । पिंड ब्रह्मांडमें तीन लोकका तमाशा देखने लगा मुद्रा ध्यान लगायके । ये अर्थ । पंगा कहिये मन, मन कहिये कल्पना, सो कल्पना मेरु सुमेरु उड़ने लगी, तब विचार करके अर्ध-ऊर्ध मध्य, ये तीन लोकमें एक आत्मा' ये निश्चय किया, मुक्त होके । ये अर्थ। फिर मौन हुवा, कहा कि—आत्मा अनिर्वाच्य । तब विज्ञान आत्मनिर्णय और ज्ञान ब्रह्म निर्णय प्रकाश किया । बेअन्त बानी बोला कि, आत्मा बेअन्त, इसकी हद नहीं । ये अर्थ । आकाश कहिये ब्रह्मांड औ पाताल कहिये पिंडांड, सो पिंडके श्वासको ब्रह्मांडमें स्थिर किया शेष कहिये ब्रह्म, सो ब्रह्मांड घर करके ब्रह्म हुवा, धोखेमें परा । ये अर्थ । जीवमुख—जीव कहता है कि-राम राजा है, सबका मालिक है । जो कुछ करे सो सही । ये अर्थ ॥ २३ ॥

शब्द २४.

अबधू सो योगी गुरु मेरा । जो यह पदका करे निबेरा ॥
तरिवर एक मूल बिनु ठाढ़ा । बिनु फूले फल लागा ॥
शाखा पत्र किछू नहिं वाके । अष्ट गगन मुख गाजा ॥
पौ बिनु पत्र करह बिनु तुम्बा । बिनु जिभ्या गुण गावै ॥
गावनहार के रूप न रेखा । सतगुरु होय लखावै ॥
पंछिक खोज मीन को मारग । कहैं कबीर दोउ भारी ॥
अपरम्पार पार पुरुषोत्तम । मूरतिकी बलिहारी ॥ २४ ॥

टीकाजीवमुख—हे ज्ञानी ! सो योगी गुरु मेरा, जो ये आत्मपदका नित्यानित्य बिचार करिके जानते हैं कि, आत्मा नित्य औ

सब जग अनित्य । ये अर्थ । तरिवर कहिये देह, एक कहिये जीव, सो ये जीव कहाँसे पैदा भया? बिना मूल । आत्माकी जगह पर तो स्फूर्ति भी नहीं औ जगत् निर्माण हुआ, सो कहाँसे हुवा ? शाखा कहिये गुण, पत्र कहिये बानी, सो तो आत्माको नहीं; निर्गुण, अनिर्वाच्य, सप्त स्वर्ग, अपवर्ग पर्यंत, अखंड एकरस । मायामुख—माया कहती है कि-जहाँ रूप नहीं, सो पौ । पौ कहिये आत्मा । बिनुपत्र कहिये बिना रूप, सो रूप कहाँ है ? मिथ्या मृगजलवत् । करह कहिये अधार, तुम्बा कहिये आत्मा, सो आत्मा, सो आत्मा निराधार सर्व शून्य । ये अर्थ । जिसके सत्तामात्रसे जगत् निर्माण हुवा, बिना जिभ्या वेद गाया, सो गानेवालेको रूप-रेखा कछु नहीं । जो सतगुरु ब्रह्मा सनकादिक सम मिलैं, तो ज्ञान अंजन देके देखावै । आत्मस्थिति दिखानेको विहंगम मार्ग खेचरी आदि मुद्रा पाँच औ मीन मारग श्वासा उलटि चलावना, औ सर्व विषयनकी लै होना, औ सर्वोपर आनंदकी प्राप्ति होना; ये दोनों महा कठिन हैं । अरे जाका पारावार नहीं, अपरम्पार है, सर्व साक्षी, उत्तम पुरुष, निःअक्षर, सो मूर्ती की बलिहारी । ये अर्थ ॥२४॥

शब्द २५.

अबधू वो तत्तु रावल राता । नाचै बाजन बाजु बराता ॥
मौरके माथे दुलहा दीन्हा । अकथ जोरि कहाता ॥
मँड़ये के चारन समधी दीन्हा । पुत्र ब्याहिल माता ॥
दुलहिन लीपि चौक बैठारी । निर्भय पद परकासा ॥
भाते उलटि बरातिहि खायो । भली बनी कुशलाता ॥
पानिग्रहण भयो भव मंडन । सुषमन सुरति समानी ॥
कहहिं कबीर सुनो हो संतो । बूझो पंडित ज्ञानी ॥ २५ ॥

टीका गुरुमुख-गुरु कहते हैं कि-ये ज्ञानी, ये योगी लोग वह तत्त्वमा राते, जहाँ सनकादि नारदादि सब रते थे ब्रह्म पदमें । ये अर्थ । बाजन कहिये इंद्रिय, बराती कहिये तत्त्व प्रकृति । जब श्वासा ब्रह्मांड को

खैंची औ नाभी स्थानसे पलटिके डंडायमान हुई, तब इंद्रिय सब कंपायमान होयके ब्रह्मांडमें दश प्रकारका नाद बजने लगा। सो नाद, बिंदु औ कला तीनों मिलिके ज्योती प्रकाश हुई, सो ज्योतिको मौर कहिये। दुलहा कहिये जीव, सो जीव ज्योतीके ऊपर दिया। जो कथनेमें न आवै, सो अकथ अकथ कहिये ब्रह्म ब्रह्म कहिये भ्रम, सो खाविंद कहाने लगा। मँडया कहिये वेद चारन कहिये उपदेश, समधी कहिये ब्रह्मज्ञानी, पुत्र कहिये जीव माता कहिये गायत्री गायत्री कहिये बानी सो बानीका उपदेश ब्रह्मज्ञानी लोगोंने जीवको दृढ़ाया वेदके प्रमाणसे, तब जीवकी लगन बानीसे लगी। ये अर्थ। दुलहिन कहिये वृत्ती, सो वृत्ती बानीमें लिप्त होयके शून्य हुई। चौक कहिये चित्त, मन, बुद्धि औ अहंकार, सो बुद्धी बोध में लीन हुई। मन अहंकारमें लीन हुआ। अहंकार चित्तमें लीन हुआ औ चित्त बुद्धि लेके अन्तः करणमें लीन हुई। इस प्रकारसे चारों स्थित बैठके ब्रह्म निर्भय पद प्रकाश हुवा। सो ब्रह्म जीवका अनुमान जीवसे उठा भात कहिये अन्तःकरण, औ बराती कहिये चित्त, मन, बुद्धि, आदि सर्व तत्त्वनको खाया। तब जीवने मान लिया, कि भली कुशल भई। हम जीवन्मुक्त भये। इस प्रकारसे जगतमें बानी ग्रहण भई औ लौ लगी ब्रह्मसे। सुषुमनमें सुरति समाई, सो सब धोखा मिथ्या है। हे सन्तो! सुनो औ परखो-जो पंडित ब्रह्मा औ ज्ञानी महादेव इन्होंने जो बूझा, सो धोखा। ये अर्थ ॥ २५ ॥

शब्द २६.

भाईरे बहोत बहोत क्या कहिये। कोई बिरले दोस्त हमारे ॥
गढ़न भंजन संवारन आपै। ज्यों राम रखे त्यों रहिये ॥
आसन पवन योग श्रुति सुमृति। ज्योतिष पढ़ि बैलाना ॥
छौ दर्शन पाखंड छानबे। ये कल काहु न जाना ॥
आलमदुनिया सकल फिरिआये। ये कल उहै न आना ॥
तजि करिगह जगत्र उचाये। मनमों मन न समाना ॥

कहहिं कबीर योगी औ जंगम । फीकी उनकी आसा ॥
रामहि नाम रटै ज्यों चातक । निश्चय भक्ति निवासा ॥२६॥

टीकागुरुमुख—भाई रे कहिये जीवको, सो गुरु कहते हैं कि बहुत बहुत क्या कहना ? कोई बिरले दोस्त हमारे । जो कोई पारख सो दोस्ती करै, सो पारखी ।जीवमुख—जीव कहता है कि-पैदा करनेवाला औ नाश करनेवाला औ प्रतिपाल करनेवाला आपै राम है। सो जैसा भगवान रक्खे तैसा रहना । ये अर्थ । गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि, अब कोई माया की बातें सुनके आसन, पवन, योग साधने लगा, रामको मिलनेके वास्ते ।कोई श्रुति-स्मृति पढ़िके दिवाना हुवा, अनुमानमें रता । ये अर्थ । छौ दर्शन, छानवे पाखण्ड, ये सब हुवा, परन्तु ये धोखा कोई न जाना । आलम दुनिया सबै फिरि आये; लेकिन वह खाविन्द जिसे बनाया, तिसको कोई न ले आया । कारिगह कहिये संसार, सो संसार छोड़िके जगतसे उदास हुवा; परन्तु जिस खाविन्दको इन्हे माना, सो कदहीं इसके मनमें आनके समाया नहीं, मनकी कल्पना । ये अर्थ । इस वास्ते गुरु कहते हैं कि, हे जीव ! कल्पना कहाँ है ? जीवके अनुमाने होती है । इस वास्ते योगी औ जंगम इनको कछु आकार मिला नहीं । जब उनकी आस फीकी परी, तब राम नाम रटने लगे, जैसे चातृक । ऐसा निश्चय भक्तिमें किया कि, जैसा सब बानी कहैं, सो प्रमाण है । जैसे बड़े चले गये, तैसे अपने भी चलना । ये अर्थ ॥ २६ ॥

शब्द २७.

भाईरे अदबुद रूप अनूप कथ्यो है। कहौं तो को पतियाई ? ॥
जहाँ-जहाँ देखो तहाँ-तहाँ सोई । सब घट रहा समाई ॥
लक्ष बिनु सुख दरिद्र बिनु दुख । नींद बिना सुख सोवै ॥
जसबिनु ज्योति रूप बिनु आशिक। ऐसो रतन बिहूना रोवै ॥
भ्रम बिनु गंजन मणि बिनु निरख । रूप बिना बहु रूपा ॥
थिति बिनु सुरति रहस बिनु आनंद। ऐसो चरित अनूपा ॥

कहहिं कबीर जगत हरि मानिक । देखो चित अनुमानी ॥
परिहरि लाख लोभ कुटुम तजि । भजहु न शारंग पानी॥७२॥

टीकागुरुमुख–गुरु कहते हैं कि, भाई रे ! जहाँ चित, मन, बुद्धि पहुँचती नहीं, ऐसा अद्‌भुत रूप बड़े-बड़े गुरुवा लोगोंने कथा । अब मैं कहौं कि, झूठ अनुमान है, तो कोई मानता नहीं । ये अर्थ । जहाँ-जहाँ देखो, तहाँ–तहाँ सोई अनुमान घट–घटमें समाय रहा है । लख कहिये देखना, सो बिना देखे सुख माना । जैसे द्रव्य अपने पास है नहीं औ आँखिसे कभी देखा भी नहीं औ सुख मान लिया, कि, मैं भाग्यमान । सो मिथ्या है । ऐसा आत्मा ब्रह्म भी मिथ्या है । कि-जैसा कोई बड़ा भाग्यमान है, सो स्वप्नमें दुःखित भया कि, मैं महा-दरिद्र, महादुःखी । सो मिथ्या । इस प्रकारसे सब जग विचार बिना दरिद्र दुःखी भया । दरिद्र कहिये ब्रह्म, दुःखी कहिये जीव । ये अर्थ। सो नाना प्रकारकी कल्पना करिके आँखि मूँदिके ध्यान लगाया । नींद बिना सुषुप्ति हुई, तब बिना उजियारेकी ज्योति प्रकाश हुई औ बिना रूप जीव आशिक हुवा । ऐसे सब विचार अन्धे रोते हैं । ये अर्थ । सब मिथ्या अनुमानमें परे । सो बिना भ्रम, नाहक भ्रम करिके जीवन को गंजन होता है, दुःख होता है । ये अर्थ । बिना मणी हीरा-की कीमत करते हैं । बिना रूप सब देखते हैं बहुरूप । सनक, सनन्दन आदिने ठहराया कि, निर्गुण ब्रह्म, रूप-रेख रहित । ये अर्थ । स्थिति कछु है नहीं औ नाहक सुरति रक्खा है, सोहं शब्दमें । सोहं शब्दकी उत्पत्ति नाभीसे । नाभी नाशवंत तो शब्द भी नाशवंत । सो वो शब्दमें सुरति रक्खी औ बिना जागृति, बिना जाने आनंद हुवा, मग्न हुवा । ये अर्थ। ऐसा चरित्र गुरुवा लोग करते हैं । ये आश्चर्य मिथ्या धोखा । ये अर्थ । गुरु कहते हैं कि, हे जीव ! सब जगत्‌ने मानिक माना, सो मानिक कहाँ है ! जिसको अपने चित्तके अनुमानसे देखते हैं, सो सब मिथ्या धोखा जानो । जाने सबका मन हर लिया, सो उन्मनी माया, झाँई । ये अर्थ ॥ २७ ॥

शब्द २८.

भाईरे गइया एक बिरंची दियो है। गइया भार अभार भौ भारी ॥
नौ नारी को पानि पियतु है। तृषा तेउ न बुझाई ॥
कोठा बहत्तर औ लौ लावै। बज्र केंवार लगाई ॥
खूँटा गाड़ि दवरि दृढ़ बाँधेउ। तैयो तोर पराई ॥
चारि वृक्ष छौ शाखा वाके। पत्र अठारह भाई ॥
एतिक ले गम कीहिसि। गइया अतिरे हरहाई ॥
ई सातों औरो हैं सातों। नौ औ चौदह भाई ॥
एतिक ले गइया खाय बढ़ायो। गइया तैयो न अघाई ॥
पुरतामें राति है गइया। सेत सींगि है भाई ॥
अबरण बर्ण किछउ नहिं वाके। खद्ध अखद्धहि खाई ॥
ब्रह्मा-विष्णु खोजि ले आये। शिव सनकादिक भाई ॥
सिद्ध अनंत वाके खोज परे हैं। गइया किनहुँ न पाई ॥
कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो। जो यह पद अर्थावै ॥
जो यह पदको गाय विचारै। आगे होय निरबाहै ॥ २८ ॥

टीका गुरुमुख—भाईरे कहिये जीवको, गइया कहिये बानी बानी कहिये ॐकार, बिरंची कहिये ब्रह्माको। सो गुरु कहते हैं कि, हे जीव! जो बानी ब्रह्माने जगतमें फैलायके दृढ़ाया, सो उस बानीका भ्रम बहुत बढ़ा। ये अर्थ। नौ नारी कहिये नौ व्याकरण, पानी कहिये बानी। सो नौ व्याकरणकी बानी पढ़ी; परन्तु तृषा तो बुझाई नहीं। तब बहत्तर कोठासे श्वासा ऐंचिके धोखेमें लौ लगाई, बज्र केंवार आँखिसों लगाय लिया। ये अर्थ। खूँटा कहिये ब्रह्म, सो अनुमानमें सुरति दृढ़बाँधी औ मौन हुवा कि, मैं मेरी सब मिथ्या। नाभीमें सुरति लगाया, तब उस नाभीसे वोहँ सोहँ दो अक्षर उठा, जीवके अनुमानसे। फिर ये जीव मगन हुवा। ताहूपर मौन तोरिके आगेको बढ़ा। ये अर्थ। अब तीन पद बाँधा कि, वोहँ कहिये त्वं पद, सोहँ कहिये तत्पद, दोनों पद मिलके मग्न हुवा.

सो असि पद। इस प्रकारसे त्रिपुटी अनुमान करके तीनोंका विचार किया। ये अर्थ। सोई चार वृक्ष वेद, छौ शास्त्र छौ शाखा, अठारह पुराण पत्ता, एक बानी वृक्ष पैदा किया। एतिक बानी लेके ब्रह्मादि, सनकादि सबने गम किया; परन्तु वही बानीने सबको भर्माया, बड़ी हरहाई। ये अर्थ। दो कल्पना किया, समष्टि-व्यष्टि। औ सातों कहिये पाँचों तत्त्व, छठवाँ मन, सतवाँ जीव। औ सातों कहिये शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, हिरण्यगर्भ औ ईश्वर, ये समष्टि-व्यष्टि प्रमाण किया। नौ कहिये शब्द स्पर्श, रूप, रस, गंध, चित्त, मन, बुद्धि औ हँकार। चौदह कहिये देवता, एतिक सब लेके खाय डारा वह बानीने; परन्तु ताहूपर गइया जो है बानी, सो अघाई नहीं औ खाती चली जाती है। ये अर्थ। जब वोहँ सोहँ दो शब्द नाभीमें उठने लगे औ उसमें सुरति लगी तब शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध, अहंकार, बुद्धि, चित्त, ये सब मनमें लीन हुये औ मन उन्मन निर्विकल्प हुवा, तब सब नाश हुये। ये अर्थ। निर्विकल्प हुवा, सर्वव्यापी हुवा, तब पूर्ण होयके वो बानी फिर उसमें राती। सेत कहिये हंस, हंस कहिये शुद्ध। सो मैं परमहंस, परमशुद्ध, ऐसा कहिये। ये अर्थ। तब कहा कि, मैं अवर्ण, वर्ण मेरे कछू नहीं। मैं खद्ध, अखद्ध, चराचर सब; ऐसा कहिके कौन मरता है? कौन जीता है? एक आत्मा निरन्तर कहिके एक अनेक भक्षण करने लगा। ये अर्थ। ये खोज ब्रह्मा औ विष्णुने लाया, सोई शिव सनकादिकने ग्रहण किया औ सिद्ध अनन्त वाके खोजमें परे हैं; परन्तु वो बात काहूने न पाई। ऐसी बात माया उपदेश करती है। सो गुरु कहते हैं कि हे जीव! जो मायाने उपदेश किया, सो मिथ्या भ्राँती। जो यह पदको निर्णय करै, सो पारखी। औ तत्त्वमसि आदिक गायके विचार करे औ आगे पारखको प्राप्त होय, तब आवागमनसे रहित होय। ये अर्थ ॥ २८ ॥

शब्द २९.

भाई रे! नयन रसिक जो जागे।
पारब्रह्म अविगत अविनाशी। कैसहुकै मन लागे॥
अमली लोग खुमारी तृष्णा। कतहुं सन्तोष न पावै॥

काम क्रोध दोनों मतवाले। माया भरि-भरि आवै ॥
ब्रह्म कुलाल चढ़ाइनि भाठी। लै इन्द्री रस चाहै ॥
संगहि पोच होय ज्ञान पुकारे। चतुरा होय सो पावै ॥
संकट सोच पोच यह कलिमा। बहुतक ब्याधि शरीरा ॥
जहाँ धीर गंभीर अति निश्चल। तहाँ उठि मिलहु कबीरा॥२९॥

टीकामायामुख–माया उपदेश करती है कि, हे जीव ! जो नैनमें प्रेम जागे औ जीवको अनुराग होय। कैसेही तरहसे जो पारब्रह्म अविगत है, जाकी गति ब्रह्मादि नहीं जानते। अविनाशी, जाको नाश नहीं, उनमें मन लगे। ये अर्थ। गुरुमुख–गुरु कहते हैं कि जो मायाने उपदेश किया, सो जीवको निश्चय हुवा औ लोग बिरही हुये। अनुमानकी खुमारी चढ़ी औ तृष्णा बढ़ी। सो कहीं संतोष ना मिला, तब 'सब आत्मा' ये निश्चय करता है। इस प्रकारसे काम कहिये ब्रह्मा, क्रोध कहिये शंकर, सो दोनों मस्त हुए औ कल्पना भरि-भरि आवने लगी, तब नाना प्रकारकी बानी बोली। ये अर्थ। ब्रह्म कहिये भ्रमको, कुलाल कहिये कुम्हारको, भाठी कहिये रस्तेको, सो भ्रममें परा औ 'मैं चैतन्य, सर्व कर्ता' ऐसा कहा औ नाना प्रकारके ज्ञान वेद आदि सब चलाया। कि प्रथमारम्भमें जो मानुष था, वह अहंता ग्रहण करके 'मै ब्रह्म' ऐसा भाव लिया, तब एक स्त्रीरूप पैदा भया। ताते कर्त्ता कुम्हार बने, जो नाना प्रकारके घट पैदा किया, उत्पत्तिका रस्ता चलाया। अब सब इंद्रिनका रस लेने चाहते हैं औ उसी स्त्रीके संगमें सब भी खाली हुये औ नाना प्रकारके ज्ञान बोले कि, कोई चतुर होय सो पावेगा। ये अर्थ। सो गुरु कहते हैं–इस मिथ्या बानीमें औ स्त्रीमें नाना प्रकारका कष्ट है, औ नाना प्रकारकी कल्पना है औ आवागमन है, औ नाना प्रकारकी व्याधि शरीरको है, औ नाना प्रकारकी चिंता है। ताते बानी स्त्री आदि सर्व मिथ्या उपाधी, सो तू त्यागन कर औ जहाँ धीरज विचार सहित पारख है निश्चल, तहाँ उठिके मिलो, हे जीव ! ये अर्थ ॥ २९ ॥

शब्द ३०.

भाईरे दुइ जगदीश कहाँतेआया। कहु कौने बौराया ॥
अल्लाह राम करीमा केशव। हरि हजरत नाम धराया ॥
गहना एक कनक ते गहना। यामें भाव न दूजा ॥
कहन सुननको दुइ कर थापे। एक निमाज एक पूजा ॥
वोही महादेव वोही महम्मद। ब्रह्मा आदम कहिये ॥
को हिन्दू को तुरुक कहावै। एक जिमी पर रहिये ॥
बेद कितेब पढ़ें वै कुतुबा। वै मुलना वै पाँड़े ॥
बेगर-बेगर नाम धराये। एक मिट्टी के भाँड़े ॥
कहहिं कबीर वै दूनों भूले। रामहि किनहु न पाया ॥
वै खसी वै गाय कटावैं। बादिहि जन्म गमाया ॥३०॥

टीकागुरुमुख-गुरु कहते हैं कि, हे जीव! दो जगदीश कहाँते आये? जो कोई अल्लाह, कोई राम, कोई करीम, कोई केशव, कोई हरि, कोई हजरत, ऐसे नाना प्रकारके नाम धराये, सो कौन है? कहो। तुमको किसने दिवाना किया? सबका अनुमान एक कि, जैसे एक सोना औ नाना प्रकारके आभूषण बनायके-न्यारा नाम रखते हैं, परंतु सुवर्ण औ भूषण दो नहीं। इस प्रकारसे अनुमान एक औ नाम न्यारे-न्यारे कहने-सुनने को दुइ कर थापे कि, एक निमाज, एक पूजा। वही अनुमान महादेवने माना, वही अनुमान महम्मदने कहा, वही ब्रह्माने कहा, वही आदमने कहा। इस वास्ते कौन दिन्दू औ तुरुक कहना? सब एक अनुमानकी भूमिपर रहे। ये अर्थ। कोई वेद पढ़ा, ब्राह्मण हुवा औ कोई किताब पढ़ा, निमाज पढ़ा, तुरुक कहाया। इस प्रकारसे न्यारे न्यारे नाम धराये; परन्तु एक माटीके बासन, पाँच तत्त्व आदि जीव सब एक। ये अर्थ। गुरु कहते हैं कि-ये दोनों भूले, परन्तु जो सबमें रमा है, सो काहूने भेद न पाया। हिन्दू बकरा मारिके शक्तीकी पूजा करने लगे औ तुरक गाय मारने लगे। इस प्रकारसे नाहक बादहीमें जन्म गमाया, पारख न पाया। ये अर्थ ॥ ३० ॥

शब्द ३१.

हंसा संशय छूरी कुहिया । गइया पीवै बछरुवै दुहिया ॥
घर घर सावज खेले अहेरा । पारथ ओटा लेई ॥
पानी माहिं तलफ गइ भुभुंरी । धूरि हिलोरा देई ॥
धरती बरसे बादर भीजे । भीट भये पौराऊ ॥
हंस उड़ाने ताल सुखाने । चहले बिन्दा पाऊ ॥
जौलों कर डोले पगु चाले । तौलों आश न कीजै ॥
कहहिं कबीर जेहि चलत न दीसे । तासु बचन का लीजे ॥३१॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि, हे जीव ! संशय रूपी छूरी जो सबके घटमें पैठी है, सो सब जीवनका नाश करती है । संशय कहिये बानी । ये अर्थ । गइया कहिये बानी गइया कहिये स्त्री, बछरू कहिये जीव । सो ये बानी औ स्त्री जीवको खाती है, जीव क्षीण होता है । ये अर्थ । सावज कहिये उपदेश, उपदेश कहिये जो गुरुवा लोगोंने दिया, सो अनुमान, सो घट-घटमें पैठा औ गुरुवा लोग सब जीवनको फाँदने लगे औ सब जीव गुरुवा लोगोंके आश्रित होने लगे । पानी कहिये बानीको, भुंभुरी कहिये जीवको, सो नाना प्रकारकी बानीमें जीव सब तलफ गये । धूरि कहिये अनुमान, अनुमान कहिये मिथ्या हिलोरा कहिये अनुभव, सो मिथ्या अनुभव करने लगे । ये अर्थ । धरती कहिये माया, माया कहिये गुरुवा लोग सो नाना प्रकारकी बानी बरसने लगे औ बादर कहिये जीव, सो सब वह बानीमें भीजे । भीट कहिये वेद, सो सबको तारनेवाले भये । ये अर्थ । सूखा ताल कहिये निर्गुण, निर्गुण कहिये जो कछु नहीं, तहाँ ये जीव उड़ा सो नाना प्रकारके बानीमें बन्ध हुआ । चहला कहिये जगत्, सो जगत् आत्मा हुआ । ये अर्थ । गुरु कहते हैं कि, हे जीव ! जब लग चोला साबूत है, तब-लग आशा किसी पदार्थ की मतकर, ब्रह्मकी या जगत्‌की, या अनु-मान भी मत माने । अरे जो चलते नजर नहीं आता, सो धोखा; उसका

नाम क्या लेना ? सबको परखके थीर होना । ये अर्थ। विरह अर्थ—हंसा कहिये जीव, संशय कहिये स्त्री । सो स्त्री सब जीवका नाश करती है । ये अर्थ । गइया कहिये स्त्री, बछरू कहिये पुरुष, सो स्त्री भगमुखसे पुरुषको पीती है औ पुरुष दुहा जाता है । ये अर्थ । सावज कहिये नारी घर घर शिकार खेलती है ।

कवित्त—"भौंह है कमान जाकी, नैन दोउ बान लाये, कामकी गाँसि ठहराये मारत हिये तानिके ॥ कुचा दोउ गुरज जाके सीसपर भुजंग ताके, बिलारीसी चाल जाकी मारत जिव जानिके ॥ महाकाली रूप धार जगको कीन्हो सँघार, नर जाने मेरी नार लीन्ही निज मानि के ॥ पूरण कहते बिचार नारी नहीं नर्कभार, कीन्हा बहुते सिंगार जीवनको खानके ॥ " इस प्रकारसे घर-घर स्त्री शिकार खेलती है औ जीव सब बड़े-बड़े उसीका आसरा लेते हैं; कि-जैसे ब्रह्मादि सब चले, वैसे आपन भी चलना । पानी कहिये कामको, सो जीव कामके मारे तलफने लगे । ये अर्थ । धूरि कहिये स्त्री, सो कामके हिलोरा देने लगी । धरती कहिये स्त्री, बादर कहिये पुरुष, सो स्त्री नाना प्रकार मोहबानी बरसाती है औ जीव सब भीज रहे हैं, मोहित होय रहे हैं। ये अर्थ । भीट कहिये संसार, सो संसारमें डूबे । आखिर एक दिन जीव तन छोड़ चले, तब गर्भवासको प्राप्त भये । ये अर्थ । इस वास्ते जबलग चोला साबूत है तबलग स्त्री-पुत्र किसीकी आशा मत करना, सब नाशवन्त मिथ्या । जो चलते नहीं नजर आता, उसमें प्रीति क्या करना ? । ये अर्थ ॥ ३१ ॥

शब्द ३२.

हंसा हो चित चेतु सकेरा । इन्ह परपंच कैल बहुतेरा ॥
पाखंड रूप रचो इन त्रिगुण । तेहि पाखंड भूलल संसारा ॥
घरके खसम बधिक वै राजा । परजा क्या धौं करे विचारा ॥
भक्ति न जाने भक्त कहावै । तजि अमृत विष कै लिन सारा

आगे बड़े ऐसेही बूड़े । तिनहुँ न मानल कहा हमारा ॥
कहा हमार गाँठि दृढ़ बाँधो । निशिबासर रहियो हुशियारा ॥
ये कलि गुरू बड़े परपंची । डारि ठगौरी सब जग मारा ॥
वेद कितेब दोउ फन्द पसारा । तेहि फन्दे परु आप बिचारा ॥
कहहिं कबीर ते हंस न बिसरे । जेहिमा मिले छुड़ावनहारा ॥ ३२ ॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि, हे हंसा! तू चैतन्य है, तासे जल्दी चेत । इन गुरुवा लोगोंने बहुत प्रपंच किया सो तू जान । ये अर्थ । नाना प्रकारका पाखण्ड स्वरूप रचा । त्रिगुण-ज्ञानी, भक्त औ योगी; इनके पाखण्डमें सब संसार भूला बानी, सुनि-सुनि भ्रमा । ये अर्थ । अरे जाको तन-मन-धन अर्पण किया, सोई गुरुवा नाना प्रकार की कल्पना भ्रममें बाँधिके जीवका नाश करने लगे । अब चेले लोग ये जीव बिचारे क्या करेंगे? जैसे राजा जो देशका मालिक है, सोई अपने देशके लोगोंको फाँसी देने लगा; तब परजा कैसे बचे ? क्या करे बिचारे ? ये अर्थ । भक्ती कहिये जो स्त्री आदि, सब मायासे भगै, सो भक्ती । सो भागना तो जानते नहीं औ भक्त तो कहलाते हैं । ये आश्चर्य । अमृत जीव, विष ब्रह्म, ब्रह्म कहिये भ्रम; जासे जीव नाश होता है । सो जीवको छोड़के ब्रह्म सार किया । ये अर्थ । आगे जो सनकादिक सरीखे बड़े-बड़े भये, सो सब अनुमान करते-करते अनुमानमें बूढ़े; परन्तु तिनहुँ न माना कहा हमारा । इस वास्ते जो गुरुने परखाया, सो पारख निश्चय दृढ़ करो औ रात-दिन कभी गाफिल न रहो, हुशियार रहो । ये अर्थ संसारमें गुरुवा लोग बड़े परपंची हैं, नाना प्रकारकी कल्पना डारिके सब जगको मारा । ये अर्थ । वेद-किताब दोनों फंद पसारा, ता फंदमें आप भी परा औ दूसरेको भी डारने लगा । सो मिथ्या धोखेकी फाँसी है । गुरु कहते हैं कि, कहाँ है वो हंस ? कदहीं भूलनेका नहीं । जामें छुड़ाने वाला पारखी मिलै, सो सदा पारख हुवा । ये अर्थ ॥ ३२ ॥

शब्द ३३.

हंसा प्यारे ! सरवर तजि कहाँ जाय ?
जेहि सरवर बिच मोतिया चुगत होते । बहु बिधि केलि कराय ॥
सूखे ताल पुरइनि जल छाँड़े । कँवल गये कुम्हिलाय ॥
कहहिं कबीर जो अबकी बिछुरे । बहुरि मिलो कब आय ॥३३॥

टीका गुरुमुख--गुरु कहते हैं कि-हे हंसा । प्यारे ! सरवर तजि कहाँ जाय ? देह छोड़के कहाँ जायगा ? जेहि देहमें मुक्ति चाहते थे औ नाना प्रकारकी क्रीड़ा करते थे, सो देह छोड़के अब कहाँ जावोगे ? ये अर्थ । सूखा ताल कहिये ब्रह्म को, पुरइनी कहिये जीवको, जल कहिये देहको, ब्रह्म कहिये भ्रमको । सो धोखेके भरोसे जीवने देह छोडा; सो गर्भवासको प्राप्त हुआ । ये अर्थ । गुरु कहते हैं कि, जिस धोखेके भरोसे जीव बेफिकिर होयके देह छोड़ता है, सो कहाँ है ? मिथ्या धोखा । ये अर्थ । हे संतो ! सुनो, जो मानुष तन पायके पारख ना मिला, तो फिर कब मिलेगा ? सबको परखके पारखपर थीर होवो । ये अर्थ ॥ ३३ ॥

शब्द ३४.

हरिजन हंस दशा लिये डोले । निर्मल नाम चुनि-चुनि बोले ॥
मुक्ताहल लिये चोंच लोभावे । मौन रहे कि हरि यश गावे ॥
मान सरोवर तटके बासी । रामचरण चित अंत उदासी ॥
कागा कुबुद्धि निकट नहिं आवे । प्रतिदिन हंसा दर्शन पावे ॥
नीर छीर का करे निबेरा । कहहिं कबीर सोई जन मेरा ३४॥

टीका मायामुख–माया कहती है कि, जो हरिके जन हैं ज्ञानी, सो हंस दशा, शुद्ध परमहंस दशा लेके डोलते हैं, बिचरते हैं । बाल, पिशाच, जड़, मूक, उन्मत्त । ये अर्थ । और कोई योगीजन जो निर्मल नाम तत्त्वमसि आदि लेके मग्न होते हैं । ये अर्थ । और कोई अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष आदि मुक्ताहल लेके मुखसे नित भजन कीर्तन करके भग- वानको लोभाते हैं कि, मौन रहते हैं । कोई बोले, तो हरिका गुणानुवाद

गावते हैं। ये अर्थ। मानसरोवर तटके बासी। जो माना सो मानसरोवर, तहाँके रहनेवाले रामचरण पर चित रखनेवाले सब जगसे उदास रहते हैं। घर, दारा, सुत, कलत्र आदि सबसे उदास। ये अर्थ। कागा कुबुद्धि संसार, सो ये संसारके निकट नहीं आवते, दिन प्रतिदिन हरिजन, भगवतजन दर्शन पावते हैं। बद्रीनाथ, जगन्नाथ, द्वारिकानाथ, रामनाथ आदि। ये अर्थ। गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि, ये हंस ना होय, जो नाना प्रकारकी कल्पना औ अनुमानमें बंध होके पृथिवीपर प्रतिमा, शिला सेवन करते हैं। जो जड- चैतन्य एक करते हैं, सो बक औ जो नीर-क्षीरका निबेरा करते हैं, सो पारखी। नीर कहिये काया, काया कहिये माया, माया कहिये छाया, छाया कहिये नाशवंत, नाशवंत कहिये बानी, नाशवंत कहिये वेद, नाशवंत कहिये कल्पना, अनुमान, ये नीरका अर्थ। क्षीर कहिये जीव, सो नाना प्रकारके भ्रममें फँसा। इसका जो निबेरा करता है, सोई पारखी पारख पर थीर है और सब कहाँ हैं? मिथ्या धोखा। ये अर्थ ॥ ३४ ॥

शब्द ३५.

हरि मोर पिव मैं रामकी बहुरिया। राम बड़ो मैं तनकी लहुरिया॥
हरि मोर रहटा मैं रतन पिउरिया। हरिका नामले कतति बहुरिया॥
छौ मास तागा बरस दिन कुकुरी। लोग कहैं भल कातल बपुरी॥
कहहिं कबीर सूत भल काता। चरखा न होय मुक्तिका दाता ३५॥

टीकाजीवमुख—जीव कहता है कि, जाने सब भक्तनका मन हर लिया, सो हरि,, सो मेरा खाविन्द। मैं जो सबमें रमा, सो रामकी स्त्री हूँ। ये अर्थ। राम बड़ो सर्वज्ञ है, कर्त्ता धर्ता ईश्वर। ये अर्थ। मैं जीव भगवानके अणुरेणुका सहस्रवाँ अंश। ये त्वं पदार्थ। हरि कहिये जो अविद्या मायाको हरे। अविद्या माया कहिये अज्ञान, कारण; अविद्या हरे सो विद्या माया, विद्या माया कहिये ज्ञान, जो स्थूल, सूक्ष्म, कारणका साक्षी तत्पदार्थ। रहटा कहिये देह, जो चलता है, सो मैं ज्ञान देही ब्रह्म। ये अर्थ। रतन कहिये ज्ञान, पिउरी कहिये शुद्ध, सो मैं शुद्ध चैतन्य।

ये अर्थ। शुद्ध ज्ञानका अर्थ पिउरी क्यों ? ऐसी जो शंका होय, तो पिउरी कहते हैं कि, जो चरखामें परै और जामें सूत निकले, औ पट बने सो पिउरी। ऐसा शुद्ध ज्ञानानंद जब जीव हुआ, तब महाकारण सब कारणका मूल हुवा। जो महाकारण हुवा, तौं चित्त चतुष्टयके चरखेमें परा। जब चित्त चतुष्टयके चरखेमें परा, तब कारण सूत पैदा हुवा, जासे सब जगत पट पैदा हुवा। ये अर्थ। गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि-इस प्रकारसे ज्ञानरूप कहके हरिका नाम कहिये ॐ, सो लेके कथने लगे, बहुरिया माया गुरुवा। ये अर्थ। छौ मास कहिये छौ शास्त्र, ज्ञानरूपी पिउरी सो धागा निकरा। वर्ष दिन कहिये बारह मास-त्वं पद, तत्पद, असिपद, क्षर, अक्षर, निअक्षर; जहद, अजहद, जहदा-जहद, जीव, ब्रह्म औ आत्मा, ये बारह मास एक जगह लपेटिके एक कुकुरी आत्मा। ये अर्थ। कौन प्रकारसे बारह पद एक मिले ? सो सुनो। त्वं पद सोई क्षर, क्षर सोई जहद, जहद सोई जीव। इसका जाननेवाला तत्पद। तत्पद सोई अक्षर, अक्षर सोई अजहद, अजहद सोई ब्रह्म। असिपद सोई निअक्षर, निअक्षर सोई जहदाजहद, जहदाजहद सोई आत्मा। ये अर्थ। नहीं जानता सो जीव, जानता सो ब्रह्म। नहीं जानता सो अज्ञान, जानता सो ज्ञान। ये दोनों उपाधी छूटी, सोई आत्मा पूर्ण, जैसेका तैसा। न तत्, न त्वं, न क्षर, न अक्षर, न जहद, न अजहद, न जीव, न ब्रह्म; एक आत्मा जैसाका तैसा। ये अर्थ। ब्रह्म कहिये समुद्र, जीव कहिये सरिता, वापी, कूप, तड़ाग बहुत नाँव, परन्तु जल एक। खारा फीका मीठा ये उपाधी। अंतरभूत जल एक। इस प्रकारसे नाम रूप उपाधी मिथ्या, आत्मा सत्य। ये कुकुरीका अर्थ। आत्माको कुकुरी संज्ञा भई। जो तंतु पटिका अधिष्ठान सो कुकुरी। जीव ब्रह्मका अधिष्ठान सो आत्मा। ये अर्थ। जीवमुख—अब जीव सब कहते हैं, कि ! बहुत निर्वाण ज्ञान कथा, जीवन्मुक्त। ये अर्थ। गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि, तत्त्वमसि आदि सूत बहुत काता, पर ये

चरखा रहट चलाई जाती है। एक अनेक होता जाता है; परन्तु इससे कल्याण नहीं। बिनु पारख स्थिति सब झूठी। ये अर्थ। पारख कहिये जो सब कल्पना अनुमानको परखावै और थिर रहै। ये अर्थ॥ ३५॥

शब्द ३६.

हरिठग ठगत ठगौरी लाई। हरिके वियोग कैसे जिवहु रे भाई
को काको पुरुष कौन काकी नारी। अकथ कथा यम दृष्टि पसारी॥
को काको पुत्र कौन काको बाप। को रे मरै को सहै संताप॥
ठगि ठगि मूल सबनका लीन्हा। राम ठगौरी काहु न चीन्हा॥
कहहिं कबीर ठग सो मन माना। गई ठगौरी जब ठग पहिचाना॥

टीकागुरुमुख–गुरु कहते हैं, कि, हरिठग कहिये ज्ञानी, सो सबको ठगते फिरते हैं, धोखा देते हैं। ठगौरी कहिये बानी, सो गुरुवा लोगोंने लगाई। अब यह गुरुवा लोगोंके विरह वियोगसे कैसे जीवोगे? अरे भाई! वियोगहीमें मरि जाहुगे, बिना पारख। ये अर्थ। अरे कौन किसका पुरुष? औ कौन किसकी नारी? जो पुरुष अनुमान किया, सो जीवहीने किया औ जीव आप नारी बना। अपने मनसे पैदा हुई जो कल्पना, सो नारी अपनी, तिसको पुरुष बनाया। ये अकथ बात है। कथने योग्य नहीं। जो गुरुवा लोगोंने दृष्टी पसारके कथा, सो सब कल्पना ये अर्थ। को काको पुत्र? कौन काको बाप? जो जिसका कर्ता, सोई तिसका बाप। कर्ता आप मानुष होयके आपने जो अनुमान किया, सो अपना पुत्र, ताको अपना बाप बनाया औ आप पुत्र बना। ये अर्थ। अब जो जीवने कल्पना किया इष्ट देवता, स्वर्गादिक, सो सब निर्जीव, तिसका संताप जीवको लगा। अनुमान कल्पना करनेवाला जीव औ अनुमान कल्पना निर्जीव हुवा। ये अर्थ। इस प्रकारसे ये माया गुरुवा लोगोंने नाना प्रकारका धोखा देके, ठग-ठगके सबका जीव लिया; परन्तु रामठगौरी जो बानी है औ स्त्री है, सो काहू बिरलेने चीन्हा, परखा। ये अर्थ। गुरु कहते हैं कि, हे जीव! जो ठगसे तेरा मन माना, सो कहाँ है? ये गुरुवा लोगों

की ठगौरी जब लग पारख नहीं मिली, तबलग है । जब पारख मिली, तब ठग धोखेको पहिचाना । स्त्री बानी सब धोखा ठहरा, तब सब धोखा चीन्हा । ठगौरी गई । ये अर्थ ॥ ३६ ॥

शब्द ३७.

हरि ठग ठगत सकल जग डोलै । गौन करत मोसे मुखहु नबोलै॥
बालापनके मीत हमारे ।हमहि तजि कहाँ चलेहु सकारे॥
तुमहि पुरुष मैं नारि तुम्हारी । तुम्हरी चाल पाहनहुते भारी॥
माटीका देह पवनको शरीरा ।हरिठगठगसों डरे कबीरा॥३७॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि हरिठग कहिये गुरुवा लोग सब संसारको ठगते फिरते हैं, पुजाते हैं धोखा देके । ये अर्थ । कौन तरहसे फिरते हैं ! सो सुनो । पृथिवी पर विचरते हैं, मोहसे मौन होके बोलते नहीं । मोह कहिये अनुमान । तो अनुमान किया अपने मनसे और मौनी हुए । तब कहने लगे कि, हे भगवान् ! तुम हमारे जीवपनके मित्र, अब हमको छोड़के कहाँ जावोगे ? जीव ब्रह्मका अंश । तुमही पुरुष, मैं तुम्हारी नारी । ये अर्थ । तुम्हरी चाल पाहनहुते भारी । पाहन कहिये पर्वत, सो पर्वत मेरु चला जायगा; परन्तु तुम अचल, कबहीं न चलोगे । ये अर्थ । माटीका देह पवनको शरीरा । माटीका देह कहिये स्थूल, पौनका शरीर कहिये सूक्ष्म; सो गुरुवा लोग बड़ी माया छुड़ायके सूक्ष्म मायामें फँसाते हैं । कबीर कहिये जीवको, सो गुरुवा लोगोंने जो डर लगाया पाप-पुण्यका, तासे डरते हैं । निशि-दिन सोग लगा रहता है । ये अर्थ ॥ ३७ ॥

शब्द ३८.

हरि बिनु भरम बिगुर्चनि गंदा ।
जहाँ जहाँ गयउ अपनपो खोयउ। तेहि फन्दे बहु फन्दा ॥
योगी कहैं योग है नीका। दुतिया और न भाई ॥
लुंचित मुंड़ित मौनि जटाधारी । तिन कहु कहाँ सिधि पाई ॥

ज्ञानी गुणी शूर कवि दाता। ई जो कहैं बड़ हमहीं ॥
जहाँसे उपजे तहाँ समाने। छूटि गये सब तबहीं ॥
बायें दहिने तजू विकारा। निजुकै हरिपद गहिया ॥
कहैं कबीर गूँगे गुर खाया। पूछे सो क्या कहिया ॥३८॥

टीका मायामुख—हरि कहिये जो सर्वस हर लेय। जो सर्वस हरे, सो तुर्या। सो तुर्या बिना, ज्ञान बिना मैं जीव अजान; ऐसा कहिके भ्रममें नाश हुवा, खराब हुआ, गंदा जीव। गंदी देहसे न छूटे, सोई गंदा। ये अर्थ। गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि, ऐसी-ऐसी बातें सुनी जीवने। अरे ! जहाँ-जहाँ तू गया, तहाँ-तहाँ तू अपनपौ खोया। स्थूलमें गया तब कहा कि मैं स्थूल, मेरी माता मेरा, पिता भाई, मेरा घर मेरी स्त्री, मेरा पुत्र, कुटुम्ब, द्रव्य, संपत्ति सब मेरी। मेरी—मेरी कहिके बहुत मायामें फँदा। और जब नाना प्रकारकी बानी सुनी कि, गुरु बिन औ भगवत् भजन बिन जीवका कल्याण नहीं, तब गुरुवा लोगोंकी शरणमें गया। तब नाना प्रकारके बिचार वेदांत सिद्धान्त जो गुरुवा लोगोंने बताया, सो बिचार करने लगा कि, मैं स्थूलका जाननेवाला स्थूल नहीं। जैसा घरका रहनेवाला कछु घर नहीं। जो घरका रहनेवाला घर होय, तो घर कौन कहे ? ऐसा जो मैं स्थूल होता, तो स्थूल कौन कहता ? स्थूल तो साढ़े तीन हाथ, पाँच तत्त्व तीन गुण, चौदह देवता, दश इंद्रिय, जागृति अवस्था। सो मैं जागृति अवस्थाको जानता हौं, जो जो देखनेमें आवै सो जागृति। जागृति नेत्रस्थानमें रहती है और विश्व उसका अभिमान है। सो मैं जागृति औ विश्व कधी नहीं, इसका साक्षी। स्थूलके तत्त्व पाँच, आकाश, वायु, तेज जल और पृथिवी। सो मैं आकाशको भी जानता हौं और आकाशकी प्रकृतीको भी जानता हौं। काम जो शरीरमें स्फुरण होता है, सो भी मैं जानता हौं। और क्रोध जो आता है सो भी मैं जानता हौं। और मोह जो होता है, सो भी मैं जानता हौं। औ लोभ जो होता है, सो भी मैं जानता हौं। औ

हर्ष जो होता है, सो भी मैं जानता हौं। काम, क्रोध, लोभ, मोह, हर्ष यही जो मैं होता, तो मुझे कामने सताया औ मुझे क्रोध आया औ मुझे मोह भया औ मुझे लोभ हुआ औ मुझे हर्ष भया, ऐसा कौन कहता ? तो मैं आकाशकी प्रकृतीको जाननेवाला न्यारा हूँ। जैसा जो दिवालको जानता है, सो दिवाल नहीं। जो आप ही दिवाल होता तो दिवाल कौन कहै ? दूसरा वायु तत्त्व। सो मैं वायु तत्त्वको भी जाननेवाला औ वायुकी प्रकृतीको भी जाननेवाला। बल करना, धावना, पसारना, संकोच करना औ बोलना; ये वायु तत्त्वकी प्रकृती क्या मैं नहीं जानता ? मैं तो जानता हौं। तो मैं वायुका भी साक्षी। अग्नी तत्त्वकी पाँच प्रकृती-नींद भी मैं जानता हौं। जँभुवाई भी मैं जानता हौं। आलस भी मैं जानता हौं। भूख प्यास आदि अग्नी तत्त्वका मैं जाननेवाला न्यारा हूँ। जलको भी मैं जानता हौं औ जलके प्रकृतीको भी जानता हौं। रुधिर, पसीना, मूत्र, बिंदु और रार; इनका भी मैं साक्षी इनते न्यारा हूँ। पृथिवी औ पृथिवीकी प्रकृती हाड़, माँस, त्वचा, नाड़ी औ रोम, इनका जाननेवाला मैं स्थूलसे न्यारा सूक्ष्म हूँ। मैं स्थूल नहीं। तीन गुण कहनेवाला मैं त्रिगुण नहीं। स्थूलके देवता ब्रह्मा औ गुण रजोगुण, इसका भी मैं साक्षी। स्थूलके देवता चौदह। मनके देवता चन्द्रमा, जासे मन कल्पना करता है। बुद्धिके देवता ब्रह्मा, जासे बुद्धि निश्चय करती है। चित्तके देवता नारायण, जासे चित्त चलता है। हंकारके देवता शंकर, जासे अहंता आती है। नेत्रके देवता सूर्य जासे नेत्र देखते हैं। कानके देवता दिशा, जासे कान सुनते हैं। जीभके देवता वरुण, जासे जिह्वाको स्वाद होता है। नाकके देवता अश्विनीकुमार, जासे नाकको वास लेनेका ज्ञान होता है। हाथके देवता इन्द्र, जासे हाथ लेता-देता है। पाँवके देवता उपेंद्र, जासे पाँव चलता-फिरता है। त्वचाके देवता वायु, जासे त्वचाको स्पर्शका ज्ञान होता है। वाचा इंद्रिका देवता अग्नि, शिश्नका देवता

प्रजापती और गुदाके देवता यम, जासे गुदा प्रच्छालन होता है । इस प्रकार चतुर्दश देवतासे अस्थूलका व्यवहार होता है । सो मैं चतुर्दश देवता और इनकी इंद्रिय व्यवहार सहित सब जाननेवाला हूँ । स्थूलका कोश अन्नमय, सो अन्नमय औ अन्नमय कोश जो है, सो सबका जानने-वाला मैं अन्नमय नहीं । तारक नाम, त्रिकुटी स्थूल, बाल्य अवस्था, ब्रह्मचर्य आश्रम आदि जेतिक स्थूलकी संपत्ती हैं, सो सबका जाननेवाला मैं स्थूल नहीं । जैसा घरका रहनेवाला घर होय, तो मैं भी स्थूल होऊँगा । तो मैं सूक्ष्म , इस प्रकारसे आपनपौ खोयके सूक्ष्म देह निज कर जानके बंधनमें परा । नाना प्रकारकी क्रिया करने लगा, योग करने लगा खेचरी आदि मुद्रा, समाधी, प्राणायाम आदि । इस प्रकारसे सूक्ष्म दहके फँदेमें बहुतेक फँदा । कोई और अनुमान किया कि मैं सूक्ष्मका जाननेवाला सूक्ष्म कैसा ? जो स्थूल नहीं, तो मैं सूक्ष्म भी नहीं । सूक्ष्म कहिये अंगुष्ठ प्रमाण, स्वप्न अवस्था, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध ५ । चित्त, मन, बुद्धि अहंकार ४ । प्राण, अपान, समान, ब्यान उदान ५ । दश इंद्रिय सूक्ष्म, पचीसवाँ अंतःकरण, छबीसवाँ जीव; इस प्रकारसे छबीस कला एकत्र होय, तब सूक्ष्म देह होता है औ स्वप्न होता है कंठमें । सो मैं स्वप्न देखता हौं, तो मैं स्वप्न कैसे होऊँगा ? सूक्ष्म औ सूक्ष्मकी तत्त्व प्रकृति मैं जानता हौं, तो मैं सूक्ष्म भी नहीं । अरे ! जो जल देखनेवाला जल होय, तो मैं सूक्ष्म होऊँगा । जैसा जल जानने-वाला जलसे न्यारा, तैसा मैं सूक्ष्मते न्यारा । गृहस्थ आश्रम, गुरु नेह, पिशाच दशा,तैजस अभिमान, शिवोहं दीक्षा, योग आनंद, अक्षर मात्रा, वेद छंद, द्रव्य शक्ति, मार्तंड दैवता, काम अग्नि, भूचरी मुद्रा, उकार मात्रा, मध्यमा वाचा, विष्णु देवता, सत्त्वगुण, कंठस्थान, दंडकनाम, यजुर्वेद, वरुण देवता, मठाकाश आदि जेतिक सूक्ष्म देहकी संपत्ती हैं, सो सबका जाननेवाला मैं सूक्ष्म कैसे होऊँगा ? तो मैं सूक्ष्म भी नहीं औ स्थूल भी नहीं, स्थूल-सूक्ष्म दोनोंको जाननेवाला मैं इन सबते न्यारा,

सब ते परे ईश्वर ! त्वं पद संपूर्ण । इस प्रकारसे जहाँ-जहाँ गयेउ, आपनपौ तेहि खोयो; तेहि फंदे बहु फँदा । तब कोई एक और अनुमान किया कि, मैं ईश्वर भी नहीं । मैं ईश्वरका साक्षी । सुषुप्ति अवस्थाका साक्षी । जो सुषुप्ति अवस्थाका सुख है, सो मैं हृदयमें जानता हूँ । जो जाना नहीं तो कहा किनने ? जो सुषुप्ति मैं कहता हौं, तो सुषुप्ती मैं कैसे होऊँगा ? सुषुप्ती अवस्था, कारण देह । जहाँ प्राण, अपान, समान, व्यान औ उदान हृदय स्थानमें ये तत्त्व मिले, तब सुषुप्ती भई । सो मैं जाननेवाला चैतन्य ब्रह्म । मेरी अवस्था तुर्या । ये जगत् सब इन्द्रजालवत् अज्ञान । मैं ज्ञान सर्व साक्षी । जब अपानमें गंध मिला औ गंधमें पृथिवी मिली । प्राणमें रस मिला, रसमें जल मिला । उदानमें रूप मिला औ रूपमें अग्नि मिली । समानमें स्पर्श मिला औ स्पर्शमें वायु मिला । व्यानमें शब्द मिला औ शब्दमें आकाश मिला । जब दश तत्त्वनकी लै भई, तब सुषुप्ती अवस्था भई । सो मैं सुषुप्तीका जाननेवाला चैतन्य। सुषुप्ती अचेत औ मैं चैतन्य । कोई कहेगा कि,जब सुषुप्ती भई, तब कुछ खबर नहीं रहती है । तो खबर रहना शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध आदि दश तत्त्व जहाँ लै हुए, तहाँ खबर किस वस्तुकी रहेगी ? जैसा विश्व प्रलय हुवा औ कोई एक संन्यासी रहा, सो उन्हें क्या कहना ? औ किससे कहना ? औ वस्तु भी कुछ नहीं । ऐसा मैं चैतन्य औ जगत् सब इन्द्रजालवत् । मैं अविनाशी औ जगत् सब नास्ती । कारणदेह औ जेती कारणदेहकी सम्पत्ति है, सो सबका मैं साक्षी । कारण देह अर्ध पर्व, प्राज्ञ अभिमान, हृदय स्थान, मनोमय कोश, वानप्रस्थ आश्रम, आत्मलिंग, विश्व प्रलय, उन्मत्त दशा, सुषुप्ती अवस्था, शिवोहं दीक्षा, अद्वैतानंद, निदिध्यास साधन, अज्ञान शक्ती, क्षेत्रज्ञ निर्णय, रुद्र दैवतां, मंदाग्नी, तमोगुण, तृतीयपाद गायत्री, चाचरी मुद्रा, मकार मात्रा, मध्यमा वाचा, महदाकाश, कपी मार्ग विश्व प्रलय, अग्नी तत्त्व, साम वेद, बुद्धीबोधव्य व्यवहार, सौलेष्टता भूमिका, आनं-

दमय आदि जेतिक कारण देहकी संपत्ती है, सो मैं जाननेवाला हूँ। इस प्रकारसे त्रिगुण त्यागन करके ब्रह्मनिष्ठामें जीव बँधा। जहाँ-जहाँ गयउ आपनपौ खोयउ। ये अर्थ। तत्पदार्थ। आगे और कोई उलटके तत्पदका शोधन करने लगा कि, मैं जो चैतन्य होता, तो चैतन्य कौन कहता? मैं तुर्या अवस्थाका जाननेवाला तुर्या नहीं। ज्ञान तो मेरा विकार है। अरे! मैं तुरीयातीत कैवल्य आत्मा। ज्ञान-अज्ञान दोनों उपाधी, इसका साक्षी मैं विज्ञानरूपी। अरे! जगत्-ब्रह्म उपाधी, मैं निरुपाधी आत्मा। जो तुर्याका कहनेवाला तुर्या नहीं, तो ज्ञानका कहनेवाला ज्ञान नहीं। जैसाका तैसा सर्व सम। जैसा नदीका पानी नदी नहीं। समुद्रका पानी समुद्र नहीं; परन्तु पानी सत्य औ नामरूप उपाधी मिथ्या। इस प्रकारसे आत्मा सत्य ब्रह्म—जगत दोनों उपाधी। तुर्या महा कारणरूप, मसुर प्रमाण, नाभीस्थान, नील वर्ण, परा वाचा, वायु तत्त्व, चित्त-मन-बुद्धि-अहंकार। अपान मिला बुद्धिमें, प्राण मिला मनमें, उदान मिला अहंकारमें, समान मिला चित्तमें, व्यान मिला अंतःकरणमें; इस प्रकारसे महा कारणरूप तुर्या अवस्था, चतुर्थ आश्रम, महा प्रलय, मौन दशा, सायुज्य मुक्ती, प्रत्यगात्मा अभिमान, सोहं दीक्षा, विदेहानंद, साधन साक्षात्कार, इच्छा शक्ती, ॐपद बड़वाग्नी, अगोचरी मुद्रा शुद्ध सतोगुण, ईश्वर देव, इकार मात्रा, अर्ध चन्द्र सूर्य क्रिया, अथर्वण वेद, चिदाकाश, मीन मार्ग, सुलीन भूमिका आदि जेतिक उपाधी है, सो आत्माकी जगामें नहीं। येती उपाधी मेरेको काहेको चहिये? मैं शुद्ध बुद्ध निरंजन निर्विकार। मेरी स्फूर्ति मात्रसे जगत निर्माण हुआ, जल-तरंग न्याय। अहं परमहंस। न दुख, न सुख। उन्मनी वाचा, स्वसंवेद, निर्गुण। न मैं मुक्त, न मैं बंध। सर्वोपरि आनंद, अनामयोहं जान, कूटस्थ सदाशिव, पुण्यगिरि ब्रह्माग्नी, सर्वसाक्षी, द्रष्टादृष्टि रहित, निर्विकल्प, कलातीत कला, भावातीत भाव, आकाशवत् निजाकाश, मात्रा शून्य, शिखा स्थान, शेष मार्ग, सच्चिदानंद, असि पदार्थ। इस प्रकारसे

गुरु कहते हैं कि, जहाँ-जहाँ गया, तहाँ-तहाँ फन्दा, ये जीव बिना पारख। ये अर्थ। अरे ! जहाँलग अनुमान किया, तहाँलग बढ़ा। जब थका, तब एक आत्मा कहा। योगी कहिये जो योग ध्यान समाधि करके पूर्वोक्त मन शाँत किया सो कहते हैं कि, योग है नीका। जहाँ दुतिया नहीं, एकानंद। नुंचित कहिये जैनी, मुंडित कहिये संन्यासी, इन कहाँ सिद्धि पाई ? कहाँ स्थिति पाई। ये अर्थ। मौनी जो बोलते नहीं, पर उनका मन तो उन्मुन हुवा नहीं, फिर उन कहाँ स्थिति पाई। जटाधारी तपस्वी विना स्थिति जंगलमें फिरते हैं पशुवत्, औ कहते हैं कि, हम योगी हम सिद्ध, सहजमें स्थिति पाई। ये अर्थ। ज्ञानी कहते हैं कि, एक आत्मा निरंतर सोहं, दुतिया कोई नहीं, सदा एकरस अद्वैत। ये अर्थ। गुणी कहिये भक्त, सो कहते हैं कि हम भगवत भजनमें सदा प्रेममें बूड़े रहते हैं। हम मुक्त। शूर कहते हैं कि, हम सर्व आशा-बासा छोड़के अपना चोला छोड़ते हैं, हम मुक्त। कवि कहते हैं कि, हम ही बड़े। सर्व वेद छान-छानके नाना प्रकारके कवित्त किये। दाता कहते हैं कि, हम दाता, हमही बड़े। परन्तु जहाँसे पैदा भये गर्भवास से, तहाँ समाये। तब ज्ञान गुण आदि सभी छूट जायेंगे, पारख बिना। ये अर्थ। बायें कहिये बाममार्ग, दहिने कहिये दक्षिण मार्ग, सो दोनों छोड़के निश्चय ज्ञानपद गहिया औ मौनी हुवा कि—दूसरा कौन है ? जासे बोलना। अपने मनसे अनुमान करके मान लिया। ये अर्थ। माया कहती है कि, जैसे गूँगेने गुर खाया औ पूछे तो क्या कहेगा ? इस प्रकारसे ज्ञानी अपनेको आप जानके मौन हुवा। ये अर्थ।
कवित्त—हरी कहिये विद्या माया, जासे सकल अविद्या हरे तेहि बिनु कहीं जीव मूर्ख सकल भर्ममें नसायो है ॥ गन्धा कहिये जीवको गन्धी देह मेरी कह्यो। विषयनमें लंपट भयो ताते गोता खायो है ॥ १ ॥
गुरुमुख—कवित्त ऐसी-ऐसी बातें सुनी जहाँ-जहाँ जीव गयो। तहाँ-तहाँ गुरुवनने फन्दमें फँदायो है ॥ आपनपौ आप खोयो थाप रखी औरन

की । तेहीते बार-बार बहुतें ठगायो है ॥ तुर्यातीत अवस्था आतम जैसे का तैसा है जानिके । अजान भयो अस देखत भूलि देखते भुलायो है ॥ कहैं पूरन परख न लह्यो ऐसो गवाँर पारख बिना । फिरि-फिरि भयो बुद्धिहीन जहाँको तहाँ समायो है ॥ १ ॥ योगी कहिये कपिल मुनि जिन सिद्ध ऐसो नाम धर्यो । जैनी संन्यासी बौध तपसी तु छायो है ॥ ज्ञानी सनकादि औ गुनी नारदादि भये । शूर भीष्मादि जिन्ह शूरता जनायो है ॥ कवी व्यासादि जिन्ह अष्टादश पुराण गाये । वेदनके सूत्र बनाये महिमा बहु भायो है ॥ दाता कहिये कर्ण जे जगमें समर्थ भये । सबै करनी पाछे रही जब गर्भवास पायो है ॥ जगत् ब्रह्म दोऊ छोड़ि आतमपर टिक रह्यो । जैसे गूँगा खायो गुर पूछेसे क्या बतायो है ? ॥ २ ॥ ३८ ॥

शब्द ३९.

ऐसो हरिसो जगत लरतु है । पांडुर कतहूँ गरुड़ धरतु है॥
मूस विलाई कैसन हेतू । जंबुक करै केहरिसों खेतू ॥
अचरज एक देखो संसारा । स्वनहा खेदै कुंजर असवारा ॥
कहहिं कबीर सुनो संतो भाई ।इहै संधि काहु बिरले पाई३९॥

टीकागुरुमुख-गुरु कहते हैं कि, हरी कहिये माया, माया कहिये भक्ति-योग-ज्ञान । ज्ञान कहिये वेदान्त, सो वेदांतसे सब जगत लरते हैं । ये अर्थ । पांडुर कहिये जीव, गरुड़ कहिये माया, माया कहिये बानी, बानी कहिये कल्पना; सो जीवसे कहीं कल्पना पकड़ी जाती है ? अरे मूससे औ बिलाईसे कैसी प्रीति बने ? मूस कहिये जीवको, बिलाई कहिये कल्पना, तासों इन्ह प्रीति किया, तो सोई कल्पना इसका काल हुवा । जम्बुक कहिये पंडित केहरी कहिये बानी, बानी कहिये कल्पना, केहरी कहिये स्त्री, सो पंडित लोग वेद बानीसे लड़ते हैं, पक्ष पकड़-पकड़के । ये अर्थ । स्वनहा कहिये गुरुवन को, स्वनहा कहिये ॐकारको, कुंजर मन, असवार जीव । सो गुरु कहते हैं कि, पंडित ॐकारका उपदेश करके जीवको, नाना प्रकारके

कर्मोंमें खेदते हैं। ये अर्थ। कहहिं कबीर कहिये गुरु, गुरु कहिये पारख, सन्तो कहिये पारखी जो परखे, भाई कहिये जीव। सो गुरु कहते हैं जीवको कि, हे जीव! जो गुरुवा लोगोंने ज्ञान औ कर्म दृढ़ाया, सो सब मिथ्या; इसकी पारख कोई बिरलेको प्राप्त भई। ये अर्थ। बिरह अर्थ—ऐसा स्त्रीसे संसार लरता है। जैसे गरुड़से सर्प लड़ने गया, सो उसने देखते ही खाय लिया। ये अर्थ। अरे मूसा बिलाईकी खुराक, पकड़नेके वास्ते दाँव लगा रही है। फिर मूसा बिलाईसे प्रीति करने गया। ऐसे स्त्री जीवको पकरके खाती है। जंबुक जीव, केहरी स्त्री, सो जीव उस स्त्रीसे भोग करने लगे सो उसने भग मुखसे खाय लिया। गुरु कहते हैं कि, ये आश्चर्य जो कुतिया, कुतिया कहिये स्त्री सो जीवको भगावती फिरती है। ये स्त्री किसीके स्वनहा कहिये परखनेमें न आई। किसी बिरलेने परखा। ये अर्थ॥ ३९॥

शब्द ४०.

पंडित बाद बदे सो झूठा।
रामके कहे जगत गति पावै। खाँड़ कहे मुख मीठा॥
पावक कहे पाँव जो डाहे। जल कहे तृषा बुझाई॥
भोजन कहे भूख जो भाजे। तो दुनिया तर जाई॥
नरके संग सुवा हरि बोलै। हरि परताप न जानै॥
जो कबहीं उड़ि जाय जंगलमें। तो हरि सुरति न आनै॥
बिनु देखे बिनु अर्स-पर्स बिनु। नाम लिये क्या होई॥
धनके कहे धनिक जो होवै। निर्धन रहे न कोई॥
साँची प्रीति बिषय माया सो। हरि भक्तन की फाँसी॥
कहहिं कबीर एकराम भजे बिनु। बाँधे यमपुर जासी॥ ४०॥

टीका गुरुमुख—पंडित कहिये ज्ञानीको, जाकी वेद-शास्त्र पढ़िके। बुद्धि पंडा होय, सो पंडित। पंडित कहिये बड़ी बुद्धि। सो गुरु कहते हैं कि पंडित जो बाद करते हो,सो सब मिथ्या। अरे रामके कहेसे संसार

की गति होय तो शक्करके कहे मुँह भी मीठा होगा। जो शक्करके कहे सुख मीठा न होय, तो रामके कहेसे क्या होयगा। ये अर्थ। पावक कहे पाँव जो डाहै। जल कहे तृषा बुझाई॥ भोजन कहे भूख जो भाजै। तो दुनिया तरि जाई॥ जैसा नरके संगतसे सुवा राम-राम बोलता है; परंतु राम कौन? ये नहीं जानता। फिर जो कधी पिंजरासे उड़िके जंगलमें जायगा, तब राम नाम याद भी नहीं रहनेका। इस प्रकारसे ये जीव जबलग नरदेहीके संग रहता है, तबतक ज्ञान, भक्ती, योग आचरण करता है। जो कदहीं देह छोड़के चौरासीको जायगा, तब कुछ एक भी खबर नहीं रहनेकी। अरे जो बीच देखी नहीं औ उसका दर्शन भी नहीं हुआ औ कधी स्पर्शभी नहीं हुआ, तो वाके नाम लिये क्या होयगा?। ये अर्थ। अरे जो दौलत कहेसे दौलत होय, तो कंगाल कोई ना रहे। इस प्रकारसे जो राम-राम कहेसे ज्ञान होय, तो अज्ञानी कोई न रहे। ये अर्थ। बानीकी माया सो साँची प्रीति लगावते हैं, येही हरिभक्त लोगोंकी फाँसी है। सो गुरु कहते हैं कि-'एकराम' ऐसा अनुमान जो है, सो उस अनुमानसे भागे बिना ये जीव बंधनमें है, बाँधा गर्भवासको जायगा। ये अर्थ। एक राम कहिये एक आत्मा सो, अनुमान, तासे भाग औ पारखपर ठहर। ये अर्थ।॥ ४०॥

शब्द ४१.

पंडित देखहु मनमें जानी।

कहुधों छूति कहाँ से उपजी। तबहि छूति तुम मानी॥
नादे बिंदे रुधिर के संगे। घटही में घट सपचे॥
अष्ट कँवल होय पुहुमी आया। छूति कहाँते उपजै॥
लख चौरासी नाना बहु बासन। सो सब सरिभो माटी॥
एकै पाट सकल बैठाये। छूति लेत धौं काकी॥
छूतिहि जेवन छूतिहि अचवन। छूतिहिं जगत उपाया॥
कहहिं कबीर ते छूति विवार्जित। जाके संग न माया॥ ४१॥

टीकागुरुमुख–गुरु कहते हैं कि, हे पंडित ! तुम अपने मनमें विचार करके देखो कि, छूति कहाँसे उपजी ? जो छूति तुमने मानी । नाद-बिंद पुरुषका औ रुधिर स्त्रीका मिलिके स्त्रीके गर्भमें तुम्हारा चोला पैदा हुआ औ भगद्वारेसे बाहर आया । औ छूति कहाँसे उपजी ? चौरासी लक्ष योनी जैसे नाना प्रकारके बासन एक माटी के । सो सब सरिभौ माटी । सरिके गलि गये औ एक पाट धरती, तापर सब बैठे । अब छूति तो भी किसकी लेता है ? । ये अर्थ । खान-पान सब छूतिई भया । स्त्रीके छूतिसे सब संसार पैदा हुआ । सब छूतिका मूल स्त्री, सो तो अंगीरकार किया है औ छूति किसकी विचारते हो ? गुरु कहते हैं कि, सोई छूतिसे न्यारा है, जाके सँग स्त्री औ कल्पना नहीं । ये अर्थ ॥ ४१ ॥

शब्द ४२.

पंडित शोधि कहो समुझाई । जाते आवागवन नसाई ॥
अर्थ धर्म औ काम मोक्ष कहु । कौन दिशा बसे भाई ॥
उत्तर कि दक्षिण पूर्व कि पश्चिम । स्वर्ग पताल कि माहीं ॥
बिना गोपाल ठौर नहिं कतहूँ । नर्क जात धौं काहीं ॥
अनजाने को स्वर्ग नर्क है । हरि जाने को नाहीं ॥
जेहि डरसे भव लोग डरतु हैं । सो डर हमरे नाहीं ॥
पाप पुण्यकी शंका नाहीं । स्वर्ग नर्क नहिं जाई ॥
कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो । जहाँका पद तहाँ समाई ॥ ४२ ॥

टीका गुरुमुख–गुरु कहते हैं कि, हे पंडित ! तुम सोधिके समुझायके कहो जासे आवागवन नसाय । ये अर्थ । अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष आदि कल कहो कौन दिशामें रहते हैं ? उत्तर कि दक्षिण, पूर्व कि पश्चिम, स्वर्ग-पाताल कि माहीं ? जाकी थापना तुमने किया । ये अर्थ । भला जो तुमने कहा कि, बिना आत्मा कहूँ ठौर नहीं । औ आत्मा सोई मालिक; तो आत्मा नर्कमें क्यों जाता है ? **माया-मुख**–माया कहती है कि, अज्ञानी जिन्होंने आत्मा नहीं जाना,

ताको-स्वर्ग-नर्क है; परन्तु जो ज्ञानी है, जिन्होंने 'सर्व आत्मा' ऐसा निश्चय किया; उसको ना स्वर्ग, ना नर्क, सच्चिदानंद रूप सदा निरंतर हैं। ब्रह्ममुख–जेहि डरसे सब लोग डरतु हैं स्वर्ग नर्क औ नाना प्रकारकी चौरासी; सो डर हमको नहीं, हम शुद्ध चैतन्य। हमको पाप न पुण्य, न विधि न निषेध। न हम स्वर्गको जायँ न हमको नर्ककी इच्छा। हम आत्मा जैसाका तैसा। ये अर्थ। गुरुमुख–गुरु कहते हैं कि, हे संतो! ये सब मिथ्या जीवका अनुमान है। सो ये जीवने अपने अनुमानसे कल्पना किया औ आप अपनेमें मग्न हुआ औ कहा कि, एक आत्मा। ऐसा कहिके आत्मा जगत् हुवा, तब जहाँका पद तहाँ समाया। जैसाका तैसा, सर्व जल तरंग न्याय। जब सर्व आत्मा ठहरा, तब गर्भवासका, आवागवनका कारण ठहरा। जो सर्व आत्मा है, तो आवागवन कौन है? झाँईका पद झांईमें समाया, तब आवागवन में आपुही है। इस वास्ते गर्भवाससे निकर, हे सन्तो! फिर गर्भमें समाया। ये अर्थ ॥ ४२ ॥

शब्द ४३.

पंडित मिथ्या करहु बिचारा। न वहाँ सृष्टि न सिरजनहारा॥
थूल अस्थूल पवन नहिं पावक। रवि शशि धरणि न नीरा॥
ज्योति स्वरूप काल नहिं जहवाँ। बचन न आहि शरीरा॥
कर्म धर्म किछवो नहिं उहवाँ। न वहाँ मन्त्र न पूजा॥
संयम सहित भाव नहिं जहवाँ। सोधौं एक कि दूजा॥
गोरख राम एकौ नहिं उहवाँ। ना वहाँ बेद बिचारा॥
हरि हर ब्रह्मा नहिं शिव शक्ति। तीर्थउ नाहिं अचारा॥
माय बाप गुरु जहवाँ नाहीं। सोधौं दूजा कि अकेला॥
कहहिं कबीर जो अबकि बूझै। सोई गुरु हम चेला॥ ४३॥

टीका गुरुमुख–गुरु कहते हैं कि, हे पंडित! जो तुम नाना प्रकारकी बानीका बिचार करते हो, सो सब मिथ्या। अरे! जहाँ तुम

अनुमान किये हो; तहाँ न सृष्टि, न सिरजनहारा । मानुषसे अनुमान होता है, कछु अनुमान मानुष नहीं । ये अर्थ । जब अनुमान मानुष नहीं, तो अनुमानमें कछु कर्तव्य भी नहीं वो अनुमान तो अनुमान ही है । न वो स्थूल, न वो सूक्ष्म; वो तो झाँई मिथ्या । न वहाँ पवन, न अग्नी, न चन्द्र, न सूरज न धरणी, न नीर न वहाँ ज्योति स्वरूप, न वहाँ काल, न वचन, न शरीर, न कर्म, न धर्म, न मंत्र, न पूजा, न संयम, न भाव, न वहाँ एक, न दोय; सो मिथ्या झाँई । अरे ! जो जीवका अनुमान तहाँ क्या रहेगा ? वो मूलमें अनुमानई झूठा, फिर वहाँ क्या होयगा ? न वहाँ गोरख, न राम, एकौ भी नहीं नजर आवते, जो उस अनुमानमें लीन हुये। औ वहाँ वेदका विचार भी नहीं । न हरि, न हर, न ब्रह्मा, न शिव, न शक्ती, न तीर्थ, न आचार, न माय, न बाप, न गुरु, जहाँ कछु नहीं, सो मिथ्या अनुमान, जीवकी कल्पना । अरे ! अनुमानमें क्या रहता है ? जैसा अपने मनसे एक आम बनाया औ मनसेई खाया, तो न जीभ पर मालूम हुवा, न दाँतको लगा । न खट्टा, न मीठा । न पेट भरा न भूख गई । इस माफिक नाना प्रकारके जो अनुमान करते हैं, सो कहाँ हैं ? हे जीव ! सो सब तेरी कल्पना । जिन्ह अबकी बख्त समुझिके पारखपर ठहरा सोई गुरु औ हम आत्मा, हम ब्रह्म, हम जगत्, ऐसा जो कहै सो चेला, इसका परखावनेवाला सोई गुरु । ये अर्थ ॥४३॥

शब्द ४४.

बुझ बुझ पंडित करहु बिचारा । पुरुषा है कि नारी ॥
ब्राह्मण के घर ब्राह्मणी होती । योगी के घर चेली ॥
कलमा पढ़ि पढ़ि भई तुरुकनी । कलमें रहत अकेली ॥
बर नहिं बरे ब्याह नहिं करे । पुत्र जन्मावनहारी ॥
कारे मूँड़ को एकहु न छाड़ी । अजहूँ आदि कुमारी ॥
मैके रहे जाइ नहि ससुरे । साँई सँग न सोवों ॥
कहैं कबीर मैं युग युग जीवों । जाति पाँति कुल खोवों ॥४४॥

टीका गुरुमुख-गुरु कहते हैं, कि हे पंडित ! हे बुद्धिमान् ! जो तुम सब विचार किया, सो खूब समझो । अरे ! जो कोई पुरुष अनुमान किया,सो कहाँ है ? कि ये जो कहते हो सो सब बातें भर है, कहबे मात्र है । ये अर्थ । जो बानी ब्रह्माके घर गायत्री भई औ योगीके घर सिद्धि भई, औ मुसलमानके घर कलमा भई, सो सब बानी जीवकी कल्पना, संसारमें अकेली रहती है; लेकिन ब्रह्म खुदा ये कुछ नहीं । अरे । जो बानीने एक खसम बताया सो उसने आयके किसीकी शादी भी नहीं की । औ उसकी आश लगाके बिरहनी तो बहुत भई, परन्तु विवाह किसीसे भया नहीं औ उसके अनुमानसे ही पुत्र होने लगे, शिष्य साखा होने लगे । ये अर्थ । ऐसी ये बानी है कि, कारे मूँढको कोई नहीं छोड़ा स्त्री औ पुरुष सबको भ्रमाया । जो खसम कोई ठहरा नहीं, अबहूँ आदि कुमारी, गायत्रीका नाम कुमारिनी, ब्रह्मचारिनी। ये अर्थ। मैके कहिये जहाँ पैदा होय, ससुरे कहिये जहाँ आशिक होय, सो ये बानी जगत्में पैदा भई औ जगत्में रही । जहाँ आशिकी भई तहाँ कदहीं भी गई नहीं । ये अर्थ जीवमुख—साँई कहिये ब्रह्मको, सो ई जीव कहता है कि, मैं ब्रह्म विचार करके ब्रह्म भया । अब मैं चैतन्य हुवा । सो वना कहिये अज्ञान । सो मैं अज्ञान नहीं, ज्ञान रूप युग-युग अविनाशी चैतन्य। ना मेरी जाति न पाँति, न मेरा कुल न कुटुम । ये सब नास्ति, मैं आस्ति चैतन्य । नारी-बानी, नारी-स्त्री । ये अर्थ ॥ ४४ ॥

शब्द ४५.

कौन मुवा कहो पंडित जना । सो समुझाय कहो मोहि सना ॥
मुये ब्रह्मा विष्णु महेशू । पार्वती सुत मुये गणेशू ॥
मुये चन्द्र मुये रवि शेषा ।मुये हनुमन्त जिन्ह बाँधल सेता
मूये कृष्ण मूये कर्तारा । एक न मुवा जो सिरजनहारा॥
कहहिं कबीर मुवा नहिं सोई ।जाको आवागवन न होई॥४५॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि पंडितजन कहिये ज्ञानी को। सो हे ज्ञानी लोग ! मूवा कौन ? क्या जड़ मूवा कि, चैतन्य मूवा ? सो मेरेको समुझायके कहि देव। जो जड़ मूवा कहना, तो पाँचों तत्त्व बने ही हैं औ जो चैतन्य मूवा कहना, तो जीवको मरण है नहीं। तो मूवा तो भी क्या ? जो अनुमानमें, कल्पनामें लगा, सोई मरा औ नाम रूपका नाश हुआ। केही तरहसे ? कि मरण नाम मिथ्याका है। सो जो मिथ्यामे लगा, सो मिथ्या रूप हुआ। मिथ्या कहिये देह, मिथ्या कहिये ब्रह्म, मिथ्या कहिये कल्पना, मिथ्या कहिये अनुमान। ये चार मिथ्यामें जो परा सो मरा, फिर-फिर उत्पत्ति-प्रलयमें परा। जो ये चार मिथ्याको परखके छूटा, सो बचा, पारखरूप हुआ, आवा गवनसे रहित हुवा। ये अर्थ। अरे ! बड़े-बड़े ज्ञानी, योगी, भक्त, सो सभी मर गये, कोई बचा नहीं। ब्रह्मा, विष्णु, महेश, शक्ती औ गणेश; ये पाँचों देवता सर्वोपर, सो भी कई एक बेर पैदा भये औ कई एक बेर मरे; परंतु कोई पारख पायके छूटा नहीं, सब धोखेमें मरे। ये अर्थ। चन्द्र, सूर्य, शेष, हनुमन्त, ये भी कई एक बेर पैदा भये औ कई बेर मर गये। बिना पारख धोखेमें परे। ये अर्थ। कृष्ण भी मरे औ कर्तार भी मरे। कर्तार कहिये ईश्वर, जो सृष्टिको पैदा किया झाँईके वंश होयके, सो भी झाँईमें परा। आपी ब्रह्म कहलाया औ जगत् रूपी होय गया, नाना कष्ट भोगता है। परंतु एक न मुवा जो सिरजनहारा। सिरजनहारा कहिये झाँई धोखा, सो ना मरा। जाकी समरसताईसे जीवको नाना दशाकी प्राप्ती भई औ जीव सबही भूलमें परे, ताते अनेक दुःख भोगते हैं। ये अर्थ। सो गुरु कहते हैं कि, जो झाँई में समरस हुआ, सो कहाँ है ? वो तो मिथ्या झाँईमे परा औ सूने घर का पाहुना हुआ, औ कहा कि, जगत् सब मेरा घर औ जगत् सब मेरा स्वरूप कनक कुण्डल न्याय। ऐसा कहिके फिर जगत् जालमें पहले सरीखे पड़े रहे। सो जगमें मरणा जीना लगा ही है। परंतु सोई

नहीं मूवा कि, जिन्हने ब्रह्म औ जगत् आदि जाल सब परखके छोड़ा औ पारख स्थिति परम शाँतिको प्राप्त भया, सोई नहीं, मूवा। क्योंकि फिर ताको आवागवन नहीं, पारख स्थिति सबसे न्यारी। सो सबको परखके शुद्ध पारख हुवा, सोई नहीं मूवा औ आवागवनसे रहित हुवा। ये अर्थ ॥ ४५ ॥

शब्द ४६.

पंडित एक अचरज बड़ होई।
एक मरि मुये अन्न नहिं खाई। एक मरे सीझे रसोई ॥
करि अस्नान देवन की पूजा। नौ गुण काँध जनेऊ ॥
हँड़ियाँ हाड़-हाड़ थरिया मुख। अब षट कर्म बनेऊ ॥
धर्म करे जहाँ जीव बधतु है। अकर्म करे मोरे भाई ॥
जो तोहराको ब्राह्मण कहिये। तो काको कहिये कसाई ॥
कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो। भरम भूलि दुनियाई ॥
अपरमपार पार पुरुषोत्तम। या गति बिरले पाई ॥४६॥

टीका गुरुमुख-गुरु कहते हैं कि, पंडित ! ये बड़ा आश्चर्य है-जो एक मर जाता है अपना बेटा, कि, अपना बाप, तो रोते हैं औ अन्न नहीं खाते हैं। और कोई पशु लायके मारिके उसको रसोई में पकाते हैं, औ खुशी होते हैं। तो क्या अपने सरीखा दूसरा नहीं ? गरीब जीवको दुःख देते हैं उन्मत्त। यही कर्मसे वो जीव नाना योनिमें जाते हैं औ नर्क भोगते हैं। ये अर्थ। ऊपर डिंभ देखो तो स्नान करते हैं, देव पूजन करते हैं, नौ गुणका कांधेमें जनेऊ पहिरते हैं औ हाँड़ीमें हाड़, थारीमें हाड़, मुखमें हाड़, औ ऊपर तो षट्कर्मी कहलाते हैं, ब्राह्मण। सो ये षट्कर्म बना, जो श्वानका कर्म आचरण करने लगे। और जहाँ यज्ञ होता है-अश्वमेध, नरमेध, गोमेध, अजामेध, तहाँ जीव मारे जाते हैं। तहाँ कहते हैं कि, बड़ा धर्म। अरे जहाँ जीव हिंसा होय सो महापाप, ताको धर्म कहते हैं।

इस प्रकारसे अकर्म करते हैं । जो तुम्हारेको ब्राह्मण कहना, तो कसाई किसको कहना ? जो जीवहिंसा करे औ करावै सो कसाई । ये अर्थ । इस प्रकारसे सब यज्ञ आदिक करते कराते मारि-मारि चौरासीमें गये । अब कहा सुनो हो सन्तो ! सब दुनियाँ नाहक भ्रममें भूली । जो कहते हैं कि, अपरम्पार, जाका पारावार नहीं, सो सबके पार उत्तम पुरुष, निअक्षर । ये जीवकी कल्पना काहु बिरलेको मालूम भई ये अर्थ ॥४६॥

शब्द ४७.

पाँड़े बूझि पियहु तुम पानी ।
जेहि मटिया के घर में बैठे । तामें सृष्टि समानी ॥
छप्पन कोटि यादव जहाँ भीजे । मुनि जन सहस्र अठासी ॥
पैग-पैग पैगम्बर गाड़े । सो सब सरि भौ माटी ॥
मच्छ-कच्छ घरियार बियाने । रुधिर नीर जल भरिया ॥
नदिया नीर नर्क बहि आवे । पशु मानुष सब सरिया ॥
हाड़ झरी-झरि गूद गली-गलि । दूध कहाँसे आया ॥
सोले पाँड़े जेवन बैठे । मटियहि छूति लगाया ॥
बेद कितेब छाँड़ि देहु पाँड़े । ई सब मन के भर्मा ॥
कहहिं कबीर सुनो हो पाँड़े । ई सब तुम्हरो कर्मा ॥४७॥

टीका गुरुमुख–गुरु कहते हैं कि, हे पंडित ! तुम बूझिके पानी पीते हो, तो किससे बूझते हो ? अरे जिस माटीके घरमें तुम बैठे हो, ताहीमें सब सृष्टि समाई, अब तुमसे न्यारा कौन है ? ये अर्थ छप्पन कोटि यादव जहाँ सरि गये औ अठासी हजार ऋषि सब सरि–सरि माटीमें मिल गये, सो माटीका एकै पाट पृथिवी, तापर सब बैठे । अब ये पाटसे न्यारा कौन है ? जाकी तुम छूति लेते हो । अरे एक लाख अस्सी हजार पैगम्बर सब माटीमें मिल गये । सोई माटीमें सब रहते हैं, अब छूति तो भी किसकी लेते हो ? । ये अर्थ । भला पानी बेछूति कहना, तो मच्छ कच्छ मगर आदि जंतु पानीमें रहते हैं, उसीमें जन्मते

हैं। उनका रुधिर पानीमें मिलता है। औ नदीमें नर्क गोबर सभी बह आते हैं, औ पशु मानुष सब मुर्दा नदीमें डारते हैं, सो उसीमें सरता है। ऐसा पानी तुम अचार करते हो, तो ये कसर जाना नहीं। अरे जो किसीने पानी छुइ लिया, तो कैसे छूति होता है? क्या पानीमें कोई मिल जाता है? तो कोई पानी लावै औ पात्र शुद्ध होवै तो नेत्रसे देख लेना औ छानि लेना, तब पावना। अरे शरीरमें सब मैल भरा है और छूति तो भी किसकी किसकी लेना? औ मानना?। भला जो गऊ जलपान करती है, सो उसको चारों वर्ण छूते हैं। और उसकी चूँचीमेंसे दूध निकलता है, हाड़ झारि-झारि गूद गलि-गलि, सो तो लेके पंडित सब जेवने बैठे औ देहको छूति लगाई। देह तो माटी है। जो पृथिवी छूति होय तो देह भी छूति। औ पृथिवी छूति न होय, तो देह, भी छूति नहीं। हे पण्डित वेद-किताब सब छाड़ देव। ये सब मनके भ्रम हैं। जीव कहाँ है? क्या पदार्थ है? सभी मिथ्या है। हे संतो! सुनो ये सब तुम्हारा कर्म है। अनुमान कल्पना सब तुम्हारा कर्तव्य। ये अर्थ ॥ ४७ ॥

शब्द ४८.

पंडित देखहु हृदय बिचारी। को पुरुषा को नारी ॥
सहज समाना घट-घट बोलै। वाके चरित अनूपा ॥
वाको नाम काह कहि लीजे। ना वाके वर्ण न रूपा ॥
तैं मैं क्या करसि नर बौरे। क्या मेरा क्या तेरा ॥
राम खुदाय शक्ति शिव एकै। कहुँधौं काहि निहोरा ॥
वेद पुरायण कितेब कुराना। नाना भाँति बखाना ॥
हिंदू तुरुक जैनि औ योगी। ये कल काहु न जाना ॥
छौ दर्शन में जो परवाना। तासु नाम मन माना ॥
कहहिं कबिर हमहीं पै बौरे। ई सब खलक सयाना ॥४८॥

टीका मायामुख—माया कहती है कि,हे पंडित! हे बुद्धिमान! हृदयमें विचारके देखो कि आत्मा पुरुष है, कि नारी?। सर्व आत्मा, घट-घट

बोलती है सो प्रकृती। आत्मा अबोल, अडोल। अरे वह आत्मा, जाका ये सब चरित अनुप, नाना प्रकारका रूप दिखता है। जैसा जलके ऊपर बुद्‌बुदा, फेन-तरंग; ऐसा आत्मा बिना कछु नहीं। बोला जल न्याय सर्व आत्मा। आत्माको ना वर्ण, ना रूप; अरूप, अज, निराकार। उसका नाम तो भी क्या कहना? जो सर्व नामका कहने वाला औ सर्व रूपका देखनेवाला औ सर्व अक्षरको बनानेवाला, सो उसको क्या कहना!। ये अर्थ। अरे नर दिवाना? तैं-मैं क्या करता है! तू-मैं को कहाँ ठिकाना है? अरे क्या मेरा? क्या तेरा?। ये आश्चर्य। आत्मा तो एक तंतु-पट न्याय। राम खुदाय, शक्ती, शिव सर्व आत्मा। ये नाना प्रकारका विकार आत्मामें खड़ा हुवा, पर आत्मा सदा अलिप्त। पवनमें जैसे भँवर पैदा होता है, औ विकार बौंडर पर मालूम होता है; परंतु पवन ही है, मृत्तिकाघट न्याय। अब संसार नाहक कल्पना करता है, तो किससे कहेगा?। ये अर्थ। नाना प्रकारकी कल्पना किया-वेद, पुराण, कितेब, कुरान आदि नाना भाँति बखाना। कोई हिन्दू हुवा, कोई तुरुक हुवा, कोई जैनी हुवा, कोई योगी हुवा; परंतु ये बात किसीने ना जानी कि, आत्मामें नाना उपाधि काहेको चाहिये? आत्मा केवल शुद्ध चैतन्य। ये अर्थ। **गुरुमुख**—गुरु कहते हैं, कि, जो छौ दर्शनमें प्रमाण भया, सोई नाम और सबने माना औ धोखेमें परे। हे जीव! जो छौ दर्शन में प्रमाण भया, सो कहाँ है, ? अरे सब तेरी कल्पना है। मैं ब्रह्म, आत्मा हम, ऐसा कहिके सब बौराया, दिवाना हुवा। सयाना कहिये जीव, सो कहने लगा कि ये सब खलक आत्मा, सोई मैं। ऐसा गाफिल हुआ बिना पारख। ये अर्थ॥ ४८॥

शब्द ४९.

बुझ-बुझ पंडित पद निर्बान। साँझ परे कहवाँ बसे भान॥
ऊँच नीच पर्वत ढेला ना ईंट। बिनु गायन तहवाँ उठै गीत॥
ओस न प्यास मंदिर नहिं जहवाँ। सहस्त्रों धेनु दुहावे तहवाँ॥

नित अमावस नित संक्राँति । नित नित नौ ग्रह बैठे पाँति॥
मैं तोहि पूछौं पंडित जना । हृदया ग्रहण लागु केहि खना॥
कहहिं कबीर इतनो नहिं जान । कौन शब्द गुरु लागा कान ॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि, हे पंडित ! बुद्धिमान् ! जो तुमने निर्वाण पद बूझा औ बूझमें समाया । बूझ कहिये ज्ञान, बूझ कहिये बोध । तो चोला छूटेगा, तब जानना कहाँ रहेगा ? भान कहिये जानना, साँझ कहिये मरना । ये अर्थ । मायामुख—माया कहती है—ऊँच ब्रह्मांड औ नीच पिंडांड । सो पिंडांडका प्राण ब्रह्मांडमें चढ़ावना । जहाँ ढेला ना ईंट औ बिनु गायन तहाँ गीत हो, सो नादमें मिलि रहना । जहाँ न ओस, न प्यास, न मंदिर; निरायम है । जिसको सहस्रों धेनु दुहावती हैं, सहस्रों श्रुति जिसको गावती हैं । ये अर्थ । अमावस योग कहिये जहाँ चन्द्रकी लय होय औ सूर्यका प्रकाश होय । दोनों नेत्रकी काली पुतरी भृकुटीमें लै करना । ये अर्थ । शंकामें राता सो सक्रांती, सोहं—सोहं शब्दमें लीन हुवा । इस प्रकारसे नित्य-नित्य योगी लोग नौ ग्रह मारके आसन लगायके बैठते हैं । नौ दर-वाजा मूँदके सन्मुखीमें प्रवेश करते हैं । ये अर्थ । गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि, हे पंडित ! हे योगीजन ! मैं तुमको पूछता हौं कि, तुम्हारे हृदयमें ग्रहण कबसे लगा ? ग्रहण कहिये धोखा । सो धोखा तुमको कबसे लगा ? हे जीव ! जिस वस्तुका अनुमान करता है, उसका तो कहीं ठिकाना नहीं । इतना भी नहीं जानता, जो जीवसे अनुमान, बानी, कल्पना, योग, समाधी, ज्ञान, विज्ञान, आनंद, सब पैदा होता है । तो अब कौन शब्द लेके गुरु कहाते हो ? शिष्य लोगोंके कानमें क्या कहते हो ? निर्णय बिना । ये अर्थ ॥ ४९ ॥

शब्द ५०.

बुझ बुझ पंडित बिरवा न होय । आधे बसे पुरुष आधे बसे जोय
बिरवा एक सकल संसारा । स्वर्ग शीस जर गई पतारा ॥

बारह पखुरिया चौबिस पात । घने बरोह लागे चहुँ पास ॥
फूले न फले वाकी है बानी । रैन दिवस बेकार चुवै पानी ॥
कहहिं कबीर कछु अछलोन तहिया।हरिबिरवाप्रतिपालेनिजहिया॥

टीका गुरुमुख–गुरु कहते हैं कि हे पंडित ! जानो, जानो । बूझ कहिये जानना। पंडित कहिये माया, माया कहिये गुरुवा। सो गुरु कहते हैं कि, ये गुरुवा लोगोंने जो जाना है, बूझा है सो अबूझ । अबूझ कहिये धोखा, जो कछु नहीं । ये अर्थ। आधे बसे पुरुष आधे बसे जोय । जो एक पुरुष औ एक स्त्री है और कोई नहीं । ये अर्थ । **मायामुख**–सब संसारमें एक ईश्वर है, जाका शीस स्वर्ग औ जड़ पतार ! स्वर्ग कहिये भँवरगुफा, शीस कहिये ब्रह्मांड, पतार कहिये अर्ध, अर्ध कहिये नाभी, जर कहिये जीव । सो जाकी स्थिति भँवरगुफामें है और सर्व व्यौहार नाभी, सो करता है । ये अर्थ । बारह पखुरिया कहिये बारह रासी, चौबिस पात कहिये चौबिस औतार । तो नाम रूप सर्व उसीका है। ये अर्थ । बरोह कहिये रोमांश, सो एक-एक रोममें अनेक ब्रह्मांड चौतरफ लगे हैं । ये अर्थ । फिर कदहीं न फूलता, न फलता, न बढ़ता, न घटता है । उसीकी सब बानी औ उसीके सब चरित्र । रैन दिवस जाकी उत्पत्ती प्रलय । जब आँखि मूँदी, तब सर्व प्रलय । जब आँख खोली तब सर्व उत्पत्ती । ये अर्थ । जाके शरीरका पानी बिकार पसीना सब चूवता है,सो सब पानी समुद्र नदी आदि। ये अर्थ। **गुरुमुख**–गुरु कहते हैं कि, जो मायाने उपदेश किया सो मिथ्या धोखा, कछु है नहीं । अरे जब यह मानुष हता, तब कोई नहीं हता तब इसमें कल्पना, उठी कच्चे तत्त्वके सुभावसे; सोई कल्पनाने सब मानुषकी बुद्धी हर लई । तब कहा कि, कोई बड़ा ईश्वर हमारा प्रतिपाल करनेवाला होयगा । तबसे बहुत कल्पना कर–करके नाना बानी बोला औ आप बंधनमें परा, बिना पारख । ये अर्थ ॥ ५० ॥

शब्द ५१.

बुझ बुझ पंडित मन चित लाय। कबहिं भरलि बहै कबहिं सुखाय॥
खन ऊबै खन डूबै खनऔगाह। रतन न मिलै पावै नहिं थाह॥
नदिया नहीं साँसरी बहै नीर। मच्छ न मरै केवट रहैं तीर॥
पोहकर नहिं बाँधल तहाँ घाट। पुरइनि नहीं कँवलमहँ बाट॥
कहहिं कबीर ई मनका धोख। बैठा रहै चला चहै चोख॥५१॥

टीका गुरुमुख–गुरु कहते हैं, कि बुझ-बुझ पंडित मन चित् लाय। पंडित कहिये ब्रह्म, जो नाभीमें मन चित लायके बूझते-बूझते अबूझ हो गये। बूझ कहिये जीव, अबूझ कहिये ब्रह्म; बूझ कहिये जानना, अबूझ कहिये न जानना। बूझ कहिये चैतन्य, अबूझ कहिये अचेत; सो अचेत हुआ। ये अर्थ। अब कबहीं तो बानी सब विधि स्थापना करती जाती है औ कबहीं सब निषेध करती है कि, सब विधिवाद मिथ्या। ये अर्थ। ऐसी विधि-निषेध बानी सुनिके कबहीं ये जीव ऊब उठता है, बेजार होता है। औ कबहूँ वही बानीमें डूब जाता है, भ्रम जाता है। औ छिनमें बोलता है कि, अवगाही है। ये अर्थ। रतन कहिये ज्ञान, सो उस ज्ञानका अन्त मिला नहीं; तब कहा कि, अथाह है। जब पार नहीं मिला, तब अपार कहा। ये अर्थ। भवसागर कहीं नदी नहीं। साँसरी कहिये संशय, नीर कहिये बानी। सो संसार सब संशयकी बानीमें बहता है। ये अर्थ। मच्छ कहिये जीव, केवट कहिये गुरुवा सो सदा नजीक रहते हैं। जीव कछु मरता नहीं; एक चोला छोड़ा, दूसरा बनाया। इस प्रकारसे जीव अनेक चोला बनाता है, तहाँ-तहाँ गुरुवा लोग नजीक रहते हैं फाँदनेको। ये अर्थ। अरे जहाँ ताल नहीं, तहाँ घाट बाँधा। ताल कहिये ब्रह्म। सो जहाँ कुछ नहीं, तहाँ अनुमान बाँधा। पुरइनी नहीं, पुरइनी कहिये जीव, कमल ब्रह्म सो जहाँ जीव नहीं, तहाँ ब्रह्म अनुमान बाँधा। तो जहाँ जीव नहीं, तहाँ कुछ नहीं। ये अर्थ। अरे जीव! तेरे अनुमानसे ब्रह्म है तू नहीं तहाँ क्या

है ? ये सब मनका धोखा, जो समाधी करके बैठ रहे हो । औ ज्ञान दशा बाल-पिशाच-मूक-जड़ औ उन्मत्त लेके फिरे, सो मनकी कल्पना । ये अर्थ ॥ ५१ ॥

शब्द ५२.

बूझि लीजै ब्रह्म ज्ञानी ।

घूरि घूरि वर्षा बर्षावै । परिया बुन्द न पानी ॥
चिउटी के पग हस्ती बाँधो । छेरी बीग रखावै ॥
उदधि माँह ते निकरि छाँछरी । चौड़े ग्रह करावै ॥
मेंडुक सर्प रहत एक संगे । बिलैया श्वान बियाई ॥
नित उठि सिंह स्यार सो डरपै । अदबुद् कथो न जाई ॥
कौने संशय मृगा बन घेरे । पारथ बाणा मेले ॥
उदधि भूपते तरिवर डाहे । मच्छ अहेरा खेले ॥
कहहिं कबीर यह अदबुद् ज्ञाना । को यह ज्ञानहि बूझै ॥
बिन पंखै उड़ि जाइ अकाशै । जीवहि मरण न सूझै ॥५२॥

टीका गुरुमुख-गुरु कहते हैं कि बूझ लीजै, जो ब्रह्मका ज्ञान गुरुवा लोग कल्पि कल्पि उपदेश कर-करके दृढ़ाते हैं । ये अर्थ । बुंद कहिये केवल,केवल कहिये ब्रह्म,सो ब्रह्म कहीं नहीं है पानी कहिये बानी,सो बानी भर है औ कछु नहीं चिंउटी कहिये बानी,चिंउटी कहिये स्थूल, स्थूल कहिये स्त्री, हाथी कहिये मन, मन कहिये कल्पना, कल्पना कहिये सूक्ष्म । सो मन ने कल्पना किया, तहाँ चित्त चला । सोई बुद्धिने निश्चय किया बोध । सोई बोधमें बोधोहं, ये अहंकार मैं कहिके बानीमें बंध हुवा । ये अर्थ । औ छेरी कहिये जीव, जीव कहिये जो सकल कल्पनाका करनेवाला, बीग कहिये माया, माया कहिये स्त्री, माया कहिये गुरुवा, सो सब जीवनकी रखवारी करने लगे, जो यह जीव चौरासीके बाहर न जाय । ये अर्थ । उदधि कहिये संसार, संसार कहिये स्त्री, स्त्री कहिये भग संसार कहिये पुत्र दारा

आदिक, छाँछरी कहिये जीव, चौड़ा कहिये मैदान, चौड़ा कहिये जंगल, चौड़ा कहिये ब्रह्म, ब्रह्म कहिये भ्रम। सो गुरुवा लोगोंकी बातें सुनिके जीव भग भोगादि संसार छोड़के भ्रममें घर किया, बनवास किया, परमहंस हुवा, धोखेमें परा। ये अर्थ मेंडुक कहिये जीव, जो संसार सागरमें रहै। सर्प कहिये मन, मन कहिये कल्पना, सो जीवके संग सदा रहती है। ये अर्थ। बिलैया कहिये स्त्री, बिलैया कहिये गुरुवा, बिलैया कहिये काया, श्वान कहिये वेद, वेद कहिये ॐकार; सो ॐकार देहसे उठा। तो जीवकी कल्पनासे बानी उठी॥

ॐकार चौपदी कवित्त—प्रथम भँवर गुफामें शून्य। धर्ममात्रा नाभी जान। मकार अर्ध पर्व अनुमान। हृदय स्थान जानिये॥ उकार कंठमें कहि दीन्ह। भर अगुंष्ठ वाकी चीन्ह अकार त्रिकुटीमें भौलीन। ऐसी बानी मानिये॥ ऐसी बानी है ॐकार। सारा कल्पना का थार काहु कियो न विचार। सब अनुमान जीव ही को॥ पहिली कल्पना ॐकार। भौ सब जगत्को भरतार। आपु हो गयो है नार। जो भरतार सबहीनको॥ भौ अब बानीको विस्तार। काहु लह्यो नाहिं पार। खोजत थके हैं अपार। तब विचार एक कियो है स्थूल त्यागिये अकार। सूक्ष्म बासना उकार। कारण अज्ञान है मकार। मैं तो साक्षी तीनोंका। मैं तू द्वैत जहाँ मिटि जाय। सोई बिंदु पंचम आय। सोहं आत्मा कहलाय। टीका रह्यो सबहीनको॥ पूरन परख सुखकी खान। गुरु बिनु देई को पहिचान। सकलो भ्रमजाला मान। परख माहिं थिर होय रहो॥ १॥

गुरु कहते हैं कि, इस प्रकारसे नाना कल्पना जीवमें उठी, कच्चे चोलेके तरफसे; फिर जीव उस कल्पनामें खराब होता है। ये अर्थ। सिंघ कहिये जीव, स्यार कहिये माया, माया कहिये बानी, बानी कहिये वेद; सो वेद जीवकी कल्पना। सो अपनी कल्पनासे अपनेको डर भया, जामें नित्यानित्य लरता रहता है, विचार करता है। ये बड़ा

आश्चर्य, कछु कहा नहीं जाता, जो अपनी कल्पनामें आप बिचार करके गोता खाता है। ये अर्थ। कौन संशय कहिये जो नाना प्रकार का कवित्व कानमें फूँका जावै, सो कौने संशय? संशय काव्य, ज्ञान भक्ति और योग ये अर्थ। मृगा कहिये मन, मन कहिये कल्पना, बन कहिये बानी, बन कहिये संसार। सो संशयकी काव्यने मनको बानीमें बाँधिके संसारमें घेरा, ब्रह्मास्मि कहाये। ये अर्थ। पारथ कहिये ब्रह्म, जाने पराका अर्थ बताया। परार्थ कहिये ज्ञान, सब एक अनेक दृढ़ाने लगे। सायर कहिये बानीको, सो जराने लगी। सकल बन कहिये सकल संसार, सो सब उस वेद बानीके धोखेमें जरने लगे। अरे ये बड़ा आश्चर्य है, जो मच्छ भी शिकार खेलने लगे। मच्छ कहिये जीव, सो जीव भी गुरुवाई करके एक अनेकको फँसाने लगे। ये अर्थ। गुरु कहते हैं कि इस जीवने बेबुध ज्ञान कथा, जहाँ मन बुद्धी पहुँचती नहीं। अब इस जीवकी कल्पनामें जीव ही परा, अब कौन ये कल्पना को बुझे? औ कौन बुझावै? पारख बिना। अरे बिना पंख आकाश को उड़ता है। पंख कहिये पक्ष, सो पक्षापक्ष छोड़के बोला कि, मैं निर्पक्ष आकाशवत्। जीव कहिये जो कभी मरे नहीं, मरण कहिये जो धोखा है, जहाँ जीव नहीं। सो जीव धोखा हुआ, ब्रह्म हुवा, कछु सूझा नहीं। ये अर्थ॥ ५२॥

शब्द ५३.

वै बिरवा चीन्हे जो कोय। जरा मरण रहित तन होय॥
बिरवा एक सकल संसारा। पेड़ एक फूटल तीनि डारा॥
मध्यकी डारि चारि फल लागा। शाखा पत्र गिने को वाका॥
बेलि एक त्रिभुवन लपटानी। बाँधे ते छूटे नहिं ज्ञानी॥
कहहिं कबीर हम जात पुकारा। पंडित होय सो लेइ बिचारा५३॥

टीका मायामुख–माया कहती है कि, उस परमात्माको जो कोई चीन्है, सो जरा मरणसे रहित होय। जरा कहिये वृद्ध, मरण कहिये मृत्यु। सो

जन्म मरणसे रहित होवेगा । ये अर्थ । कैसा जानना ? कि बिरवा एक सकल संसारा । जगत सब एक आत्मा, जल तरंग न्याय, दूसरा कोई नहीं। ये अर्थ । पेड़ एक ब्रह्म, तीन डार कहिये ब्रह्मा, विष्णु, महेश; तामें मध्यकी डार विष्णु चार फलके मालिक । चार फल-अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष; जो कोई विष्णुका भक्त होय, ताको प्राप्ति होते हैं । साखा कहिये अवतार औ पत्र कहिये वेद-श्रुति, सो जाके अगनित अवतार, अगनित श्रुति कछु गिनती नहीं । ये अर्थ । गुरुमुख-गुरु कहते हैं कि, इस प्रकारकी बानी तीनि लोकमें लपटाई । बेली कहिये बानी, एक कहिये जीव । सो बानी जीवसे बनी औ तीनि लोकमें बंधन किया । ये अर्थ । गुरु कहते हैं कि, हे जीव ! जो अहं ब्रह्म कहते हो, सो कहाँ है ? मिथ्या कल्पना । ये अर्थ । अहं ब्रह्म कहते-कहते सब चौरासीको प्राप्त भये । गर्भवासमें गये, जो बड़े-बड़े पंडित भये, ते सब । हे सन्तो ! बिना पारख उनकी स्थिति कहाँ होयगी ? ये बिचार लेव । ये अर्थ ॥ ५३ ॥

शब्द ५४.

साँई के संग सासुर आई ।

संग नहिं सूति स्वाद नहिं मानी । गयो जोबन सपनेकी नाँई ॥
जनाचारि मिलि लगन सोधाये । जना पाँच मिलि माँड़ो छाये॥
सखी सहेलरि मंगल गावैं । दुख-सुख माथे हलदि चढ़ावैं॥
नानारूप परी मन भाँवरि । गाँठि जोरि भाई पतियाई ॥
अर्घा दै ले चली सुवासिनी । चौके राँड भई सँग साँई ॥
भयो विवाह चली बिन दुलहा । बाट जात समधी समुझाई ॥
कहैं कबीर हम गौने जैबे । तरब कंथ लै तूर बजैबे॥५४॥

टीका गुरुमुख-गुरु कहते हैं कि, साँई कहिये गोसाँई, गोसाँई कहिये ब्रह्म, ब्रह्म कहिये भ्रम । सो भ्रमके संग सासुर आई गुरुवा लोगके पास आई । ये अर्थ । न कदहीं साँईके संग सोई औ उसका कछु स्वाद भी नहीं जानी, नाहक धोखेको मानके मानुष जन्म स्वप्नवत् गया । ये अर्थ ।

औ साँइ कहिय झाँई, सासुर कहिय जगत् । सो य जीव झाँईके संग चौरासीको प्राप्त भया । चौरासी कहिये भग । औ फिर झाँईका आश्रित हुवा; परन्तु न संगई हुवा, न स्वाद ही मिला । ये संसार नाहक धोखेके भरोसे स्वप्नवत् चला जाता है । ये अर्थ । जना चारि कहिये अन्तःकरण चतुष्टय, सो जो कल्पना किया मनने कि, कोई दूसरा कर्ता है । तहाँ चित्त चला । निश्चय किया बुद्धिने कि, सच है । सो माना कि जगत कर्ता ब्रह्म,ये अहंकार लगन सोधी । ये अर्थ । और कल्पना किया मनने कि, मेरे सरीखा दूसरा रूप होना । सो चित्त चला, तासे विषय पैदा हुवा । निश्चय किया बुद्धिने कि, सो स्त्री पैदा भई । उस स्त्रीको मानासो अहंकार, स्त्री पुरुषका संयोग हुवा । ये अर्थ । जना पाँच कहिये पंचकोश, माँड़ो कहिये बानी । सो पंचकोश कल्पिके नाना प्रकारकी बानी छाई । ये अर्थ । और पाँच जना-पाँच तत्त्व, जब मिले स्त्रीके संयोग समय, सोई मँड़वा चोला तैयार भया । ये अर्थ । सखी कहिये भक्त, सहेली कहिये योगी; सो सबने एक खाविंद थापन करके मंगल गावने लगे । आनंद भये । ये अर्थ । औ सखी कहिये प्रकृति, सहेली कहिये दश इन्द्री । सो इन्द्री अपना-अपना विषय लेने लगी । औ प्रकृति, सब अपने-अपने भावसे चलने लगी । ये अर्थ । दुख-सुख नाना प्रकारके, सो जीव पर चढ़ाने लगी । हलदी विषय । ये अर्थ । और दुख-सुख बिसरि गया, भगवत भजनमें । जैसे शरीरमें हलदी लगाई औ रगरके निकार डारी । ऐसा नाना प्रकारका दुख-सुख जो लगा था, जीवको, सो मैल, उसके ऊपर हेतु भगवत प्राप्तीका, सो हलदी लगायके दुख-सुख दूर किया । ये अर्थ । नाना रूप परी मन भाँवरी । नाना रूप कहिये-योगी, जंगम, सेवड़ा, संन्यासी, दरवेश, ब्राह्मण; ये नाना रूप । इनकी अनेक उपासना देखके मन भ्रम गया, आवागवनके चक्करमें परा । ये अर्थ । और नानारूप की स्त्री, सो देखके मन भ्रमा भगचक्रमें परा । ये अर्थ । जो नाना रूपने उपदेश किया धोखा, सो उसकी गाँठी जोरके प्रतीत किया, सुरति

ठहरायके ध्यानस्थ हुवा । ये अर्थ । औ जब भगचक्रमें मन परा, है तब चित्त चला, बुद्धिने निश्चय किया । ताका अहं आया, सो अहंकार । इस प्रकारसे अहंकारकी गाँठी परी, ताते जीव दूसरी देहको प्राप्त हुवा । ये अर्थ । अर्घा दै ले चली सुवासिनी । संसारसे पानी छोड़के भेष अपने संग ले चले, विरक्त बनायके । ये अर्थ । कि जब स्त्रीका संकल्प किया, तब काम उपजा, तब शरीरको लेके सुरति चली, स्त्री संग करने को । ये अर्थ । कि जब भेष संसारसे विरक्त करके ले चले; तब एक चौकेमें बैठायके ध्यान लखाया कि, देख, ये तेरा खाविन्द है । तू पतिव्रतान्याय, कि चन्द्रचकोर-न्याय ध्यान लगाव । तब ये जीव राँड़ भया, धगड़ धोखेसे ध्यान लगाया । ये अर्थ । और आप खाविन्द था, सो स्त्रीका संग करके भगद्वारमें प्रीति लगाया, बिषयसे; सो आप ही स्त्री हुवा । ये अर्थ । इस प्रकारसे दीक्षा हुई, गुरुवा लोगनके शरणमें जीव गया । परंतु जो खाविंदके ऊपर राँड़ बना सो खाविन्द ना मिला । बाट कहिये भक्ती, सो प्रेमलक्षणासे चलने लगा । तब समधी कहिये ब्रह्मज्ञानी, सो ब्रह्मज्ञानीने समुझाया ब्रह्मज्ञान । ये अर्थ । कि बाट कहिये भग, सो भगमें जाते विषय करते-करते । समधी कहिये स्त्री; सो स्त्रीने अपनेमें सम कर लिया । जब चोला छूटा, तब गर्भवास में गया, फिर पैदा भया । ये अर्थ । जीवमुख—जीव फिर कहता है कि, हम गौने जैबे । जो सतलोक, जनलोक, तपोलोक, भूर्लोक, महर-लोक भुवरलोकको जायँगे । अपने खसमका नाम लेके तरेंगे । मुक्तीके नौबत बजावेंगे । ये अर्थ ॥ ५४ ॥

शब्द ५५.

नर को ढाढ़स देखो आई । कछु अकथ कथ्यो है भाई ॥
सिंघ शार्दूल एक हर जोतिनि । सीकस बोइनि धाने ॥
बनकी भुलइया चाखुर फेरे । छागर भये किसाने ॥
छेरी बाघे ब्याह होत है । मंगल गावै गाई ॥

बनके रोझ धरि दायज दीन्हो। गोहलो कन्धे जाई॥
कागा कापर धोवन लागे। बकुला कीर्पहि दाँते॥
माखी मूँड़ मूड़ावन लागी। हमहूँ जाब बराते॥
कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो। जो यह पद अर्थावे॥
सोई पंडित सोई ज्ञाता। सोई भक्त कहावे॥ ९९॥

टीका गुरुमुख–नर कहिये रूप मानुष, रूप मानुष कहिये जगत्, सो गुरु कहते हैं कि–जगतकी ढाढ़स देखो आई। ढाढ़स कहिये दिढ़ापन, दिढ़ापन कहिये जहाँ बंध होय। जहाँ बंध होय, सो स्त्री औ बानी। सो बानीसे जो अकथ, कछु कथनेमें न आवै; सो कथा ब्रह्म। ये अर्थ। औ सिंघ कहिये जीव, शार्दूल कहिये माया, माया कहिये काया। सो जीव रूपको एक हरिकी भक्तीमें लगाया। हरि कहिये कल्पना ये अर्थ। सीकस बोइनि धाने सीकस कहिये सिखापन, सो जो सिखापन गुरुवा लोगोंने दिया; सोई धान बोया, मन अनुमानका बीज बोया। ये अर्थ बन कहिये बानी बन कहिये संसार, भुलइया कहिये स्त्री, वनकी भुलइया कहिये पंडित, चाखुर कहिये वेद,। सो नाना प्रकारकी कल्पना करके चार वेद बनाये और सोई पंडित लोग संसारमें दृढ़ावते फिरते हैं। ये अर्थ। छागर कहिये गदहा, गदहा कहिये ब्रह्मज्ञानी सो जीव सब वेद वानी सुनकर ब्रह्मज्ञानी भये। किसान कहिये जीव। ये अर्थ। छेरी कहिये जीव, बाघ कहिये ब्रह्म, ब्रह्म कहिये भ्रम। सो जीवका ब्रह्मसे ब्याह होता है, लगन लगता है। गुरुवा लोग उपदेश करते हैं। ये अर्थ। मंगल कहिये कीर्तन, सो सर्व भेष भक्तलोग गावते हैं। ये अर्थ। औ बनका रोझ कहिये ॐकार,सो जीवको धरिके दायज दीन्हा, उपदेश दीन्हा। ये अर्थ। गोहलो कहिये गुरुवालोग, सो छिपकर कानपर कपड़ा डारकर उपदेश किया कागा कहिये गुरुवालोग, कापर कहिये जीव। सो गुरुवालोग नाना प्रकारके कर्म लगायके जीवको धोवने लगे, शुद्ध करने

लगे। ये अर्थ। बकुला कहिये पंडित। सो पंडित दाँत कीर्पने लगे, नाना प्रकारकी फलश्रुती, कर्मश्रुती दृढ़ावने लगे। ये अर्थ। माखी कहिये संसारके जीव, माखी कहिये बानी। सो नाना प्रकारकी बानी सुनि-सुनि संसारके जीव सब मूँड़ मुड़ावने लगे। ये अर्थ। कोई योगी भये, कोई वैरागी भये, कोई संन्यासी भये। इस प्रकारसे विरक्ति लिया, कि हम भी स्वर्गादि भोग, ब्रह्मादि भोग ईश्वरादि, भोग करने जायँगे। गुरु कहते हैं कि, यह जो सब कल्पना की सो कहाँ है? मिथ्या धोखा है। हे सन्तो! सुनो-जो अनुमान ब्रह्माने किया, सोई महादेवने कहा, सोई विष्णुने कहा और सोई अनुमान सब जगत कहते हैं, ताते कल्पि-कल्पि गर्भवासमें जाते हैं। जो ये सबको परखता है सो पारखमें रहता है। ये अर्थ ॥ ५५ ॥

शब्द ५६.

नरको नहिं परतीत हमारी।

झूठा बनिज कियो झूठे सो। पूँजी सबन मिलि हारी ॥
षट दर्शन मिलि पंथ चलायो। तिरदेवा अधिकारी ॥
राजा देश बड़ो परपंची। रैयत रहत उजारी ॥
इतने उत उतते इत रहहू। यम की साँड़ सँवारी ॥
ज्यों कपि डोर बाँधु बाजीगर। अपनी खुशी परारी ॥
इहै पेड़ उत्पति परलय का। विषया सबै विकारी ॥
जैसे श्वान अपावन राजी। त्यों लागी संसारी ॥
कहहिं कबीर यह अदबुद ज्ञाना। को मानै बात हमारी ॥
अजहूँ लेहुँ छुड़ाय कालसों। जो करै सुरति सँभारी ॥५६॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि, नरको नहिं परतीत हमारी। झूठा बनिज कहिये जो जीवका अनुमान, अनुमान कहिये आत्मा, अनुमान कहिये ब्रह्म। सो बैपार किया झूठेके संग, गुरुवा लोगनके संग। झूठे सौदागर कहिये गुरुवा लोग। पूँजी कहिये जीव, सो सबन

मिलि अपना जीव हारा, गुरुवा लोगोंके सतसंगसे भ्रममें परे। ये अर्थ। ब्रह्मादि गुरुवनकी बातें सुनिके जीव सब व्याकुल भये कि, दूसरा ईश्वर है, उसकी प्राप्ति बिना जीव चौरासीमें रहता है। ऐसा भ्रम जब जीव में पैठा, तब जीव उदास भया। तब घर छोड़के जंगलमें चला। कोई योग धारण करने लगा। कोई कल्पि-कल्पि नाना प्रकारका ज्ञान करने लगा। कोई नाना प्रकारके कर्म आचरने लगा। कोई नाना उपासना करने लगा। कोई मैं ही ब्रह्म कहने लगा। कोई कर्ता न्यारा कहने लगा। कोई मैं तू छोड़के आत्मा बना। इस प्रकारसे छौ दर्शन बने औ कल्पि-कल्पि नाना मत बनाये; जामें संसारको वैराग्य होय। सो उनकी मति देख-देखके सब जीव बौराये औ पंथ चले। ब्रह्मा, विष्णु, महादेव सब पंथके अधिकारी ठहरे, मान्य ठहरे। ये अर्थ। इस प्रकार से छौ दर्शनकी कल्पना बढ़ी औ त्रिदेवनकी कल्पना बढ़ी; तब पंच-कोश परपंच रचा, तत्त्वमसिका निर्णय किया। आखिर जीव सब जहाँ कुछ नहीं, तहाँ उजारमें बसने लगे, ब्रह्म धोखेमें बसने लगे, आत्मा ब्रह्म कहाये। ये अर्थ। इतते उत, जब इधर जगतसे स्थूल-सूक्ष्म-कारण महाकारणका निर्णय किया, तब ब्रह्म हुवा। प्रथम श्रवण किया, फिर मनन किया, विचार किया अपने मनमें; फिर निदिध्यास किया। उसपर ध्यास बैठा, निश्चय हुवा। फिर साक्षात्कार जो जाना अपने अनुभवसे कि, सर्व आत्मा अद्वैत है। इस प्रकारसे जब अद्वैत आत्मा हुवा, तो फिर स्थूल हुवा औ चौरासी सब आपही हुवा। जो वो आत्मा हुवा, तो चौरासी क्या उससे न्यारी है ? इस प्रकारसे इतते-उत, उतते-इत रहा ही। जो सर्वहीमें रहते हैं, फिर सर्व साक्षी कहाते हैं। जड़का साक्षी चैतन्य। ये अर्थ। कोई योग करके इत पिंडांड, उत ब्रह्मांड सो पिंडांडसे प्राण ब्रह्मांडमें रखते हैं और फिर समाधी जागी, तब पिंडांडमें आते हैं, रहट-घट न्याय। कोई गर्भवाससे बाहर आया औ फिर गर्भवासमें जाता है। भगसे निकरा, फिर

भगमें चला । ये अर्थ । यमकी साँड़ सँवारी । यम गुरुवा, यम स्त्री, साँड़ सँवारी जीव । सो गुरुवा लोगोंकी बातें सुनिके कहता है कि मैं चार देह नहीं । मैं तो चित्त, मन, बुद्धि, अहंकारका साक्षी आकाशवत् हूँ । तब जैसे आकाशसे चार तत्त्व पैदा भये औ चारों आकाशमें समाये इस प्रकारसे शुद्ध ब्रह्मसे जो स्फूर्ण हुवा, सो सबल ब्रह्म औ सबल ब्रह्मसे तीन गुण पैदा भये स्थल-सूक्ष्म-कारण आदि । फिर जब नाश हुये, तब एकमें एक समाये । सब मिलिके केवल आकाशवत् हुए । फिर जैसे आकाशसे पृथिवी, तैसा ब्रह्मसे जगत्; इस प्रकारसे जीव गुरुवा लोगोंकी साँड सवारी हुवा, आवागमनमें पड़ा । ये अर्थ । औ जब स्त्री के भगसे निकरा; फिर जब स्त्रीको देखा, तब नाना प्रकारके व्यापार करके फिर स्त्रीके गर्भमें गया । जैसे बन्दरके गरेमें रस्सी बाँधके बाजी-गर नचावै, तैसा ये जीव गुरुवनके फँदमें फँसके अपनी खुशी नाचता है औ स्त्रीके फन्देमें, विषयनमें फँसके नाना योनिमें नाचता है । ये अर्थ । इहै बानीसे जो गुरुवा लोगोंने झाँई बताई, सो धोखा उत्पत्ति प्रलयका पेड़ है । प्रथमारंभमें झाँईसे भूला, सो ये हाल हुए औ अब फिर झाँईमें ही सुख माना, तब ये जीव पदभ्रष्ट हुवा । ये अर्थ । उत्पत्ति-प्रलयका पेड़ स्त्री, जो पैदा करती है औ फिर अपने गर्भमें छिपाय लेती है, समाय लेती है । ये अर्थ । इस वास्ते विषय ज्ञान, विषय योग, विषय विज्ञान, विषय स्त्री आदि जेतिक विषय हैं, सो सबहीं विकार हैं, विषय आनंद । ये अर्थ । अरे जैसे श्वान हाड़ चीखता है, तो उसीके दाँतसे लोहू निकलता है औ उसीके जीभको लोहू लगता है । सो वो जानता है कि, हाड़मेंसे लोहू निकलता है; परंतु लोहू तो उसके दाँतका है । इस प्रकारसे जीवमेंसे आनंद पैदा होता है औ उसमें कल्पना पैदा होती है औ नाना विषय पैदा होता है । सो जीव मान लेता है कि, कहीं बाहरसे आता है आनंद । परंतु आनंद जीवसे ही होता है औ काम अपना ही झड़ता है । मूर्च्छा

अपनेहीको आती है । नाहक स्त्रीको पकड़ता है श्वान हाड़ न्याय । ये अर्थ । और ध्यान अपने ही अनुमानसे होता है । फिर उसमें आप ही आनंद पाता है । औ उपासना आपहीसे होती है, येही जीवके निश्चयसे। जैसी भावना करता है तैसा रूप खड़ा होता है इसकी दृढ़ताई से; सो ये जानता है कि, अपना खाविंद कोई और जगहसे आवता है । श्वान हाड़ न्याय अपनी कल्पनामें आपही भूला । ये अर्थ । गुरु कहते हैं कि, यावत् कल्पना औ अनुमान औ कर्तव्य, सो सब नाश-वंत मिथ्या है। जेते ये ब्रह्मादि गुरुवा लोगोंने अदबुद ज्ञान कथा, सो कहाँ है ? गुरु कहते हैं कि, सब संसार कल्पनामें बौराया । अब कौन हमारी बात मानता है ? परंतु अब भी कालचक्र ब्रह्मज्ञानादि धोखेसे छुड़ाय लेउँ, परखायके पारखपर थीर करूँ, यदि ये जीव अपनेको संभारिके सुरति दृढ़ करे औ प्रीतिसे मेरे तरफ देखे तो । ये अर्थ ॥५६॥

शब्द ५७.

ना हरि भजसि न आदति छूटी ।
शब्दहि समुझि सुधारत नाहीं । आँधर भये हियेहुकी फूटी ॥
पानी माँहि पषानको रेखा । ठोंकत उठै भभूका ॥
सहस्र घड़ा नित उठि जल ढारै । फिर सूखेका सूखा ॥
सेतहि सेत सितंग भौ । सैन बाढ़ु अधिकाई ॥
जो सन्निपात रोगियन मारै । सो साधुन सिद्धि पाई ॥
अनहद कहत कहत जग बिनसै । अनहद सृष्टि समानी ॥
निकट पयाना यमपुर धावै । बोलै एकै बानी ॥
सतगुरु मिले बहुत सुख लहिये । सतगुरु शब्द सुधारे ॥
कहहिं कबीर ते सदा सुखी हैं । जो यह पदहिं बिचारे ॥५७॥

टीका गुरुमुख–गुरु कहते हैं कि, नाहरी कहिये बाघिन, नाहरी कहिये माया, माया कहिये काया, काया कहिये स्त्री । सो ना तो स्त्रीसे तू कदहीं भागा, ना तेरी आने-जानेकी आदत छूटी । ये अर्थ ।

कि नाहरी कहिये बानी, सो बानी तेरे परखनेमें कदहीं आई नहीं औ तेरी आदत जो कल्पना, सो कदहीं भी छूटती नहीं; ताते आवागमनमें परा। ये अर्थ। और शब्द ॐकार, सोई समुझके धोखेमें परा। ये नहीं जानता है दिवाना कि, ॐकारका आदि कौन है? जो सबका खसम बना है, सो सब जीवकी कल्पना है। बिना जीव शब्द कौन अनुमान करेगा? ॐकारकी आदि जो ॐकारको लिखै औ मेटि डारै, सोई है। ऐसा समुझिके सुधारता नहीं, नाहक धोखा खाता है। ये अर्थ। प्रत्यक्ष देखता है कि; नाना कल्पना जीव करता है औ नाना बानी मानुष ही बोलता है, फिर सब वेदका प्रमाण करता है औ कर्ता कोई दूसरा मानता है। ऐसा अन्धा हुवा। औ हियेहु की फूटी, कहिये बुद्धी नाश हुई। ये अर्थ। पानी कहिये बानी, पषान कहिये मन रेखा कहिये बुद्धी। सो नाना प्रकारकी बानीमें मानुषने अपने बुद्धिसे निश्चय किया अब जराई जीवको ठोंको, कहौ, तो आगिका भभूका होता है, क्रोधित होता है। ये अर्थ। सहस्र घड़ा कहिये जो हजारों चोले धरि धरिके जीवने छोड़े; जैसा रात दिन, दिन रात। फिर सूखेका सुखा हुवा। फिर आत्माका आत्मा बना। ये अर्थ। सेत कहिये शून्य सेत कहिये मिथ्या। सो झूँठे धोखेको अनुमान करके आप भी झूठा हुवा, ब्रह्म अनुमान करके ब्रह्म हुवा। ये अर्थ। सैन कहिये अनुभव, सो बहुत बढ़ा, अनुमान बहुत बढ़ा। ये अर्थ। सन्निपात रोग कहिये ज्ञान दशा, मूक-बाल-पिशाच उन्मत्त-जड़वत इस प्रकारसे जीवको हुवा। सो जीवको पारख कैसे मिलेगा? क्योंकि उन्मत्त भया। ये अर्थ। अनहद कहिये जाकी हद नहीं, जाकी हद नहीं, सो अनुमान। सो अनुमानकी कछु हद तो है नहीं, जहाँ लों बढ़ा, तहाँ लों आगेई बढ़ता है। इस वास्ते सब जग अनहद ब्रह्म, अनहदके ब्रह्म कहिके नाश हुवा; फिर सृष्टिमें समाया ब्रह्म बनके। ये अर्थ। अरे मौत तो नजीक आई औ गर्भमें जाता है बिना स्थिति औ नाहक अनुमान करता है। बोले

एकै बानी । एक आत्मा बोलता है । ये अर्थ ॥ जीवमुख–सतगुरु मिले बहुत सुख लहिये । सत कहिये ॐकार, गुरु कहिये सोहँ । सो चित्त सोहँ-सोहँमें मिले, तो बहुत सुख लहिये, आनंद लहिये, सच्चिदानंद इस प्रकारसे सतगुरुने ऐसा जो शब्द ताका निरुवार किया सतगुरु ! शब्दको सुधारे बिचारे । ये अर्थ । गुरुमुख–हे जीव ! जो ये सच्चिदानंद भये, सुखी भये, सो कहाँ है ? कहाँ रहे ? जिन्ह यह पदका विचार किया, सो कहाँ हैं ? अनुमानमें मग्न होयके गर्भवासको गये । ये अर्थ ॥५७॥

शब्द ५८.

नरहरि लागि दौं बिकार बिनु इंधन । मिले न बुझावन हारा ॥
मैं जानों तोही से ब्यापै । जरत सकल संसारा ॥
पानी मांहि अग्नि को अंकुर । जरत बुझावै पानी ॥
एक न जरे जरें नौ नारी । युक्ति न काहू जानी ॥
शहर जरे पहरू सुख सोवै । कहै कुशल घर मेरा ॥
पुरिया जरें वस्तु निज उबरें । बिकल राम रंग तेरा ॥
कुबजा पुरुष गले एक लागा । पूजि न मन के सरधा ॥
करत बिचार जन्म गौ खीसै । ई तन रहत असाधा ॥
जानि बूझि जो कपट करतु है । तेहि अस मंद न कोई ॥
कहहिं कबीर तेहि मूढ़ को । भला कौन विधि होई ॥५८॥

टीका गुरुमुख–गुरु कहते हैं कि, नरहरी कहिये बानी, नरहरी कहिये स्त्री, नरहरी कहिये कल्पना । जो नरको हर लेई सो नरहरी । सो बानीकी आग विकार कल्पना लगी । सो कहीं इन्धन नहीं, इन्धन कहिये ब्रह्म । सो ब्रह्म तो कहीं है नहीं औ उसके बिरहसे ये संसार सब जरता है । ये अर्थ । अरे ये आगीको बुझानेवाला परखावनेवाला न मिला । अब पारख मैं जानता हौं कि, यह आगी तेरेईसे लगी । अरे बिना जीव कल्पना कहाँसे उठेगी ? कल्पना निर्जीव; इस वास्ते सब कल्पना तेरेईसे उठी । अब सब संसार जर रहा है । ये अर्थ । पानी

कहिये बानी, अग्नीको अंकुर ब्रह्म । सो बानी सुनिके जीवको अनुमान हुवा औ जीव सब जरने लगे । जब बानी सुना, तब कहा कि, कोई कर्ता है । तब कर्ताकी प्राप्तिके वास्ते नाना कर्म करने लगे । घर-घर दुनियामें वैराग्य उठा । ये अर्थ ।

कवित्त–अब कोई त्यागी औ कोई बैरागी, कोई अभागी पंच अगनि में जरि रहे । कोई सन्यासी कोई जटाधारी, कोई कर कर तपस्या कोई बनहीमें मरि रहे ॥ खैंचि कोई श्वासा अर्ध की ऊर्ध चलाये, करिके बहु योग कोई गुहनमें परि रहे । कोई सखी भाव धार नीर झरन लागे नैनन से, कोई अन्न वस्त्र छाँड़ि दूब जंगलकी चरि रहें । कोई ठाढ़ेश्वरी कोई ऊर्ध बाहु कोई मौनी बने, कोई के नेत्र उलटे तने खेचरीसी धरि रहें । कोई बाल कोई पिशाच मूक जड़ उन्मत्त भये, सबै बातैं छाँड़ि पूरण आत्मासे बनि रहे ॥ १ ॥

इस प्रकार बानीमें अग्निका अंकुर निकरा औ सब जरने लगे, तो बानीसेई बुझावने लगे, समुझावने लगे । कौन प्रकारसे ? सो सुनो–एक न जरे जरें नौ नारी । एक आत्मा नहीं जरता, अजर । ये अर्थ । जरें नौ नारी, जगत् नास्ति, नौ व्याकरण नास्ति, शब्द नास्ति। आत्मा निःशब्द, ये युक्ती काहु नहीं जानी । युक्ती कहिये विचार, सो बिचार आत्माको काहु नहीं जाना ये अर्थ । शहर संसार, शहर शरीर, सो नाना प्रकार के बिरहमें औ नाना प्रकारके दुःखमें जरता है । औ पहरू कहिये जीव सो धोखामें मग्न होय रहा है, गाफिल हो रहा है सुख कहिये सोहँ, तामें समाधी भई आनंदमें पहरू जीव सोया । ये अर्थ । **जीवमुख**–तब जीव क्या कहता है ? कहै कुशल घर मेरा । कहै मेरा आनंद घर ये अर्थ । **मायामुख**–पुरिया बानी, पुरिया देह । सो नाम-रूप नास्ति, आत्मा सत्य । ये अर्थ । **गुरूमुख**–गुरु कहते हैं कि, बिकल राम रंग तेरा । राम रंग कहिये ज्ञानरंग, ज्ञान समाधी, सो सब देह रहेगा।

तब लग है । जो कहता है कि, मैं आत्मा । सो भी जब देह छूटेगा, तब सब बिकल होयगा । बिना पारख सब नाश होयगा । ये अर्थ । जैसे कोई तरुण स्त्रीके गले नपुंसक पुरुष लगा, तो उससे कछु स्त्रीके मनकी श्रद्धा पूरी नहीं भई । स्त्री तरुण औ पुरुष नपुंसक, श्रद्धा पूरण कैसे होयगी ? इस प्रकारसे एक ब्रह्म इस जीवके गले लगा, गुरुवा लोगोंके उपदेशके प्रमाणसे । सो अनुमान मिथ्या औ जीव तो तरुण चैतन्य । अब अनुमानका प्रमाण करके आपने नारी भाव लिया, उसको पुरुष बनाया औ कल्पना बढ़ी, तरुण हुई । सो इसकी कल्पना कुछ अनुमानसे बूझी नहीं; क्योंकि जीवकी कल्पना निर्जीवसे कैसे बूझेगी ? तब नाना बिचार किया । बिचार करते-करते जन्म खीस गया, आयुर्बल संपूर्ण भया; तब ये तन रहि गया असाध्य । अब कहा कि, कछु नहीं, सर्व मिथ्या; जैसेका तैसा । ये अर्थ । अपार, आनंद रूप, अथाह, अभेद । जब पार नहीं पाया, तब कहा अपार । जब थाह नहीं पया, तब कहा अथाह । जब भेद नहीं पाया, तब कहा अभेद । जब चित्त-मन-बुद्धि सब थकी, तब कहा आनंद । इस प्रकारसे जानि-बूझि जो कपट करतु है, समुझ-बूझिके जो धोखामें परते हैं; तेहि सम मंद न कोई । अरे जो जानता है औ देखता है कि बिना जीव कछु नहीं होता और फिर कल्पना करता है, तेहि अस मूर्ख और कोई नहीं । गुरु कहते हैं कि, तेहि मूढ़को भला कौन विधि होय ? आवागमनसे कैसे रहित होय ? बिना पारख । ये अर्थ ॥ ५८ ॥

शब्द ५९.

माया महा ठगिनी हम जानी ।

त्रिगुणी फाँस लिये कर डोले । बोले मधुरी बानी ॥
केशवके कमला ह्वै बैठी । शिव के भवन भवानी ॥
पंडा के मूरति ह्वै बैठी । तीरथहू में पानी ॥
योगी के योगिनि ह्वै बैठी । राजा के घर रानी ॥

काहू के हीरा है बैठी । काहू के कौड़ी कानी ॥
भक्ता के भक्तिन है बैठी । ब्रह्मा के ब्रह्मानी ॥
कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो । ई सब अकथ कहानी ॥५९॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि, माया कहिये गुरुवा, माया कहिये स्त्री, सो दोनों महा ठगिनी । जो सबको ठगे सो ठगिनी सो देखो ये जीवको कैसा ठगा ? कहीं ब्रह्म बनाया, कहीं आत्मा बनाया, कहीं ईश्वर बनाया, और कहीं न कछु ठहराया ये गुरुवा लोगोंने । जैसा कोई सपना देखे, अरु तैसा ही बोले । इस प्रकारसे एक ही जीव जैसी कल्पना देखने लगा, तैसेई बोलने लगा । ये अर्थ कि जैसी माया कहिये स्त्री, सो देखो ये जीवको कैसे ठगी ? कहीं ब्राह्मण बनाया, कही क्षत्री बनाया, कहीं वैश्य, कहीं शूद्र, कहीं यवन, कहीं अतिशूद्र बनाया । औ गुरुवा लोगोंने कहीं योगी, कहीं जंगम, कहीं सेवड़ा, कहीं संन्यासी, कहीं दर्वेस, कहीं ब्रह्मचारी, औ कहीं बैरागी बनाया । इस तरहसे मानुषको ठगा । ताते महा ठगिनी हम जानी । ये अर्थ । त्रिगुणी फाँस कहिये बानी वेद, त्रिगुण कहिये भक्ती, ज्ञान, योग । सो तीन प्रकारकी बानी लेके गुरुवा लोग फिरने लगे, मीठी-मीठी बातनसे जीवनको दृढ़ाने लगे । ये अर्थ । औ त्रिगुण कहिये काम, क्रोध, मोह सो त्रिगुण फाँस लेके स्त्री सब जीवनको फँसाती है ।

छप्पै—प्रथम देखते देय उठाय के काम को ।
जब जीव कामी भयो तजो धन धामको ॥
अब निशदिन देखत फिरै नारिनके चाम को ।
तब ज्ञान बुद्धि सब गई भयो बेकाम को ॥
ये प्रकार की फाँस त्रिया अपने कह लीन्हि सु आज ।
कहहिं पूरण फँद जाहुगे नहिं तो नर ताहि तज ॥१॥
जा त्रियासे यही रत्यो ताही से और जो राते ।
तब ऊठै क्रोध मनमाँहि करन चाहे जिव घाते ॥

कोई कहैं लाख समुझाय मानै नहिं एको बाते।
कहैं मरौं मारों मैं ताहि याहि नारीके साथे॥
तैं देखु फाँस यह नारिकी नाहक मैं नर मरि रह्यो।
कहहिं पूरण यह अधम नर गुरु पारख नाहीं लह्यो॥२॥
जब लग्यो नारिको मोह तब ये हिये बहुत फंदानो।
धन सुत गृहके काज आपनो हित नहिं जानो॥
भय-भय धावत फिरे चाहि खर्चनको नानो।
त्रियाको वस्त्र चाही और कछु चाहै सोनो॥
ऐसेहि करत-करत एक दिन मरिगौ निलज।
त्रिगुणी फाँस यह नारि की ताते पूरण कहत तज॥३॥

माया दो प्रकारकी, मोटी औ झीनी। सो झीनी कहिये गुरुवा लोगोंका उपदेश। उपदेश कहिये ज्ञान, भक्ती औ योग। मोटी माया कहिये स्त्री, घर, धन, आदि। ये अर्थ। अब माया केशवके कमला होय बैठी। केशव कहिये जो जलके ऊपर शयन करे, सो केशव। के कहिये जल, शव कहिये सोना। जल कहिये क्षीर सागर, तापर शयन करनेवाला जो नारायण, तिनके संग कमला होय बैठी। कमला कहिये जो कमलसे पैदा होय। जो कमलसे पैदा भई सो लक्ष्मी, तो लक्ष्मी, होय बैठी। ये अर्थ। केशव कहिये ज्ञानी केवल कहिये झाँई; के कहिये पानी, पानी कहिये बानी, शव कहिये सोना। सो जो बानीमें सोया, सुनिके, विचारके निश्चय ठहरायके जाना कि, आत्मा; तहाँ केवल होय बैठी। ये अर्थ। शिवके भवन भवानी। शिव कहिये जो सदा समाधीमें मग्न रहै। सो शिवका भवन कैलास, तामें भवानी पार्वती होय बैठी। औ शिव कहिये आनंद, आनंदमें अहँ शक्ती भई। ये अर्थ। पंडाके मूर्ति होय बैठी। पंडा कहिये पुजारी, तिनके यहाँ मूर्ति प्रतिमा भई। तीर्थ गंगादि, पुष्करादिकनमें पानी होय रही और सबनको अरुझाया। ये अर्थ। योगी कहिये जो योग करे। योग कहिये जो पाँच

कर्म इंद्रिय औ पाँच ज्ञान इंद्रिय, पचीस प्रकृति सहित मन लय करे, सो योगी, तिनके यहाँ अणिमा, लघिमा, गरिमा, महिमा आदि सिद्धि होय बैठी । ये अर्थ।राजाके घर रानी बनी । राजा मानुष,सो मानुषके यहाँ स्त्री बनी। ये अर्थ। काहूके हीरा होय बैठी। काहूको हीराकी प्रीति औ काहूको कौड़ी प्यारी भई । ये अर्थ । भक्त लोगोंके यहाँ नौधा भक्ती औ भक्तिन बनी । ब्रह्माके यहाँ ब्रह्मानी बनी, सावित्री बनी । ये अर्थ । गुरु कहते हैं कि, कहाँ, है ? ई सब अकथ कहानी । जो ये मायाकी बात अकथ है, कथनेमें नहीं आवती, सो मिथ्या अनुमान। ये अर्थ । नाना प्रकारकी माया पैदा भई औ नाश हुई । जो जीव मान लेइ, सो माया औ न माने, तो ब्रह्म, ये दोनों मिथ्या पारख सत्य । ये अर्थ ।

कवित्त—माया बड़ी बलवंड, कियो सबहिनको खंड, व्यापि रही ब्रह्मंड, तीनों देव जेर किये । त्रिगुणी फाँस लीन्ही हाथ, किये बहुते अनाथ, काटे बहुतनके माथ, भई न संग काहूके । तब सो मिथ्या यह बात, जीव माने चली जात, उलट जीवहीको खात, घात देखो जीवकी । पूरन परख दियो छाँड़, गह्यो तत्त्वनकी माँड़, ताते फाटत है गाँड़, त्राहि त्राहि करतु है ॥ ५९ ॥

शब्द ६०.

माया मोह मोहित कीन्हा । ताते ज्ञान रतन हरि लीन्हा ॥
जीवन ऐसो सपना जैसो । जीवन सपन समाना ॥
शब्द गुरू उपदेश दीन्हो । तैं छांड़ परम निधाना ॥
ज्योति देखि पतंग हुलसै । पशू न पेखै आगि ॥
काल फाँस नर मुग्ध न चेतहु । कनक कामिनी लागि ॥
शेख सैय्यद किताब नीरखैं । सुमृति शास्त्र बिचार ॥
सतगुरुके उपदेश बिनु तैं । जानीके जीव मार ॥
कर बिचार बिकार परिहर । तरण तारण सोय ॥
कहहिं कबीर भगवंत भजु नर । दूतिया और न कोय ॥६०॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि-माया मोह मोहित कीन्हा। माया कहिये गुरुवा, माया कहिये स्त्री, सो नाना प्रकारकी बानी सुना-सुनाके जीव सब मोहित किये, ताते ज्ञान रतन हारि लीन्हा। जीव सब अज्ञान दशा को प्राप्त भये अचेत भये। ये अर्थ। अब जीवको जीना मरणा कैसा भया? जैसे स्वप्न। जैसे जागृतिसे स्वप्न औ स्वप्नसे जागृति। इस प्रकार जीव स्वप्नमें समाया, अनुमानमें समाया। ये अर्थ। जो शब्द ब्रह्माने उपदेश किया 'ॐ' सो तू छोड़, हे परम निधान! हे जीव!। ये अर्थ। ज्योति देखिके जैसा पतंगका मन हुलास होता है औ फिर उस ज्योतीमें गिरता है। इस प्रकारसे संसार पशु नहीं देखता कि, ये बानी औ स्त्री आगि है; जामें सब जरता है। जैसा पतंग ज्योती देखा औ हुलास हुवा। इस प्रकारसे इस पशूने जब स्त्री देखा, तब इसका मन हुलास हुवा। जब मन हुलास हुवा तब ये स्त्रीसे रता, गर्भाग्नीमें जरा। ये अर्थ। परंतु ये नहीं देखा कि, मैं आजतक ब्रह्माग्नीमें और गर्भाग्नीमें जरता हौं। अरे ऐसा नर मूर्ख भया, जो इसको कालकी फाँसी नहीं मालूम भई। काल कहिये कल्पना, सो कल्पनाकी फाँसी परी। जीवने प्रेम लगाया कनक कामिनीमें।

चौपदी—कनक औ कामिनी दोउ आपुहि कलिप ठाढ़ि-कियो। ताहीके बश भयो, ताते, बहु दीन है॥ कोई करि रहै ज्ञान, कोई बैठि धरे ध्यान। कोई नाटक चाटक पुराण कथि, ताहीमें लीन है॥ कोई करत बहु उदीम, कोई धौकत पषान। कोई करत प्रयोग धनके, नर याहिमें छीन है॥ पूरन कहते अनाथ, कनक औ कामिनीकी बात। मोपै कही नहीं जात, जैसी इन्ह कीन्ह है॥ १॥

शेख सैय्यद कितेब निरखें। कोई हिन्दू स्मृति शास्त्रका विचार करते हैं। परंतु मुसलमानके सतगुरु जो महम्मद भये, उनने भी नहीं उपदेश दिया कि, जीव हिंसा करना। औ हिन्दूका सतगुरु ब्रह्मा; इन्ह

भी नहीं जीव हिंसा करनेका हुकुम दिया। देखो ये जानते हैं कि जीव है और फिर मारते हैं। ये अर्थ। इस वास्ते गुरु कहते हैं कि, विचार करके जेता मन वच-कर्मसे विकार पैदा हुवा है, सो सब छोड़ देव। अरे जिन विचार करके सब परखके विकार त्याग दिया, सोई पारखी। पारखी कहिये जो पारखके भूमी पर रहे; तद्वत् होय; सोई गुरु; सोई तरन तारन। ये अर्थ। हे जीव! जिसे तुम भगवान् कहते हो, सो कहाँ है? मिथ्या धोखा मात्र तेरी कल्पना है। सो। तुम तज देव पारखके पारखपर थिर रहो। ये अर्थ ॥ ६० ॥

शब्द ६१.

मारिहो रे तन का लै करि हो। प्राण छुटे बाहर ले डरिहो ॥
काया बिगुर्चन अनबनि भाँती। कोई जारे कोइ गाड़े माटी ॥
हिन्दू ले जारे तुरुक ले गाड़े। यहि बिधि अन्त दुनों घर छाड़े॥
कर्म फाँस यम जाल पसारा। जस धीमरे मछरी गहि मारा ॥
राम बिना नर होइ हैं कैसा। बाट माँझ गोबरौरा जैसा ॥
कहहिं कबीर पाछे पछतैहो। या घरसे जब वा घर जैहो६१॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि, हे जीव! भला जो तनका अभिमान करके मानते हो कि, मैं ब्राह्मण, मैं क्षत्रिय, मैं वैश्य, मैं शूद्र मैं सुन्दर, मैं कुरूप, मेरी देह मेरा घर, मेरी स्त्री, मेरा पुत्र। ऐसी देह मैं मानके देह सम्बन्धी सब ब्यौहार मान करते हो, ताके पीछे नाना प्रकारके सुख और दुःख भोगते हो। सो जब मरोगे, तब तुम्हारे संग कछु नहीं रहेगा। अरे जब देह छूट जायगा, तब ब्यौहार और जाती-बर्ण कुल सबही रहिजायगा, तेरे काम कोई आनेका नहीं। जाको तू मेरी देह कहता है, सो भी तेरे काम नहीं आनेकी, प्राण छूटे उपरांत सब बाहर डार देयेंगे। और जो कायाको लोग अनेक तरहसे मान रहे हैं, सो सब माटीमें मिलाय देयेंगे। हिंदू जराते हैं औ तुरुक गाड़ते हैं। इस प्रकारसे अन्तमें दोनों घर छोड़ते हैं फिर जाती कुल

वर्ण कहाँ रहता है ? तो नाहक मिथ्या धोखेमें पचि-पचि क्यों मरते हो ? परखके छोड़ देव । ये अर्थ । जो तू नहीं छोड़ेगा, तो फिर ये सब अन्तमें आपही छूट जायेंगे । फिर उसके अध्याससे तेरेको नाना प्रकारके दुःख औ जन्म प्राप्त होयगा । जन्मका कारण अध्यास है, सो तुम परखके छोड़ देव । ये अर्थ । कर्मफाँस जो गुरुवा लोगोंने दृढ़ाई है, सो सब जाल है । तामें जीव सब फँसे हैं; तासे जन्म मरणको प्राप्त होते हैं । जैसा धीमर मच्छ पकड़नेके हेत जाल बनाता है, तामें माटी की आसा लगाता है । औ जब पानीमें डारता है, तब आवाज होता है । सो सुनिके मच्छ सब मिलते हैं कि, कछु चारा आया । फिर जालमें आयके फँसते हैं । तेहि प्रकारसे ब्रह्मादि गुरुवा लोगोंने कल्पना कर-करके कर्म फाँसका जाल पसारा है कि, संध्यादि, योगादि, उपासनादि कर्म किये बिना जीवका कल्याण नहीं । इस वास्ते चारों वर्णने अपने-अपने कर्म आचरण करके देवतनकी उपासना करना । देवता प्रसन्न होय, तब जीवका परम कल्याण होयगा । धन-धान्य, मान-सन्मान आदि सिद्धि प्राप्त होयगी । अन्त-समयमें देवलोक प्राप्त होयगा । और योग साधना करके भगवान् जो सर्व-व्यापी है, तिसके स्वरूपमें एक होना, तासे जीवका कल्याण है । औ मनकी सदा एकाग्रताई होनेसे बाचा सिद्धि औ मनसा सिद्धि औ त्रिकाल ज्ञान होता है । ऐसी आशा लगाई । तब जीव सब जायके कर्मजालमें फँसे औ आशामें बंध होयके मरे, तासे फिर जन्मको प्राप्त भये । इस वास्ते गुरु कहते हैं कि, राम बिना नर होइ है कैसा ? कि, जैसे बाटमें गोबरौरा कीड़ा गोबरकी गोली बाँधके फिर उसके पीछे ढनगता फिरता है, फिर उसी छंदमें मरता है । कीटकी स्थिति कहीं होती नहीं । इसी तरह यह जीव राम-राम कहते-कहते कल्पनामें पड़के मरता है, फिर अध्यास वश नाना जन्म को प्राप्त होता है, बिना पारख । अरे जिसका नाम स्मरण करते हो, सो वस्तु क्या है ? औ कहाँ है ! जब तुम्हारा देह

नाश होयगा, तब तुम्हारा अनुमान कहाँ रहेगा ? ये देह छोड़के फिर गर्भवासमें जावोगे तब पीछे पछताव़ोगे । ये अर्थ ॥ ६१ ॥

शब्द ६२.

माई मैं दूनों कुल उजियारी ।

सासु-ननद पटिया मिलि बधलों । भसुरहि परलों गारी ॥
जारों माँग मैं तासु नारिका । जिन सरवर रचल धमारी ॥
जना पाँच कोखिया मिलि रखलों । और दुई औ चारी ॥
पार परोसिनि करों कलेवा । संगहि बुधि महतारी ॥
सहजे बपुरे सेज बिछावल । सुतलिउँ मैं पाँव पसारी ॥
आवों न जावों मरों नहिं जीवों । साहेब मेट लगारी ॥
एकनाम मैं जिजुके गहिलों । ते छूटल संसारी ॥
एक नाम मैं बदिकै लेखों । कहहिं कबीर पुकारी ॥६२॥

टीकाजीवमुख-माई कहिये माया, माया कहिये काया, काया कहिये जगत । सो जगतमें जीव बोलता है कि, मैं दोनों कुलमें प्रकाश हौं । दोनों कुल कहिये ब्रह्म औ जगत् । सो मैं ब्रह्मका प्रकाशी औ जगत् का प्रकाशी, क्षरका प्रकाशी औ अक्षरका प्रकाशी; जीवका प्रकाशी औ ब्रह्मका प्रकाशी, निवृत्तिका प्रकाशी औ प्रवृत्तिका प्रकाशी चर-अचरका प्रकाशी, स्त्री-पुरुषका प्रकाशी, सो सर्व आत्मा । ये अर्थ । सासु गुरु औ ननद चेला दोनों बानीमें बँधे हैं; इस वास्ते पारब्रह्ममें लौ लगाये हैं । ब्रह्म और जगत् दोनों उपाधी । मैं दोनोंका प्रकाशी अनिर्वाच्य । ये अर्थ । उस बानीका रस्ता जो है, सो सब जाला है । जिस बानीसे संसारमें धूम मची, सो बानी बोधमें सब बंधे हैं । मैं निअक्षर । ये अर्थ । पाँच तत्व भी मेरे पेटमें हैं औ पाँच देह भी मेरे पेटमें हैं । जगत् औ ब्रह्म ये दोनों मेरे पेटमें हैं औ चारिउ अन्तःकरण भी मेरे गर्भमें हैं । मैं तो सर्वका अधिष्ठान । ये अर्थ । पराकी बानी मैं भक्षण करता हौं । मेरी बुद्धि माता सदा मेरे संग है, जासे ये जगत्

चेष्टा दिखाता है । मैं सदा आनन्द । ये अर्थ । सहज ही अनुभव रूपी सेज बिछी है, जापर मैं मग्न हो शयन करता हौं; जैसा घट-मठ में बाहर-भीतर एक आकाश भरा है ! ये अर्थ । ना मैं आवों, ना मैं जावों । नामैं मरों, ना मैं जीवों जैसे घट-मठका नाश, कुछ आकाशका नाश नहीं । ये अर्थ । जो पार ब्रह्मकी लगार थी, सो भी मेरेमें नहीं । एक आत्मा, ये निश्चय और सब मिथ्या । इस प्रकारसे जो मेरेको जानता है, सो संसारसे छूटे । जो एक आत्मा नहीं जानता, सो सर्व बंध, जानै सो मुक्त । ये अर्थ । गुरुमुख-गुरु कहते हैं कि, एक आत्मा जो कहते हो, सो सदा बंध है, कबहीं मुक्त नहीं । भला जो आत्माको मुक्त मानिये, तो बंध किसको मानिये ? आत्मा तो एकदेशी नहीं । मुक्त तो एकदेशी होता है । सर्व देशमें तो नाना प्रकारके कष्ट भोगता है औ अनेक बन्धनमें है । जो बन्धनमें नहीं होता, तो नाना प्रकारका दुख-सुखका पुकारा क्यों होता है ? औ नाना प्रकारका उपदेश किसको होता है ? इस वास्ते जिस बातका अनुमान तुमने रक्खा, सो कहाँ है ? जिससे सब अनुमान छुटै, सो गुरुपद; जाको पारख कहते हैं । ये अर्थ ॥ ६२ ॥

शब्द ६३.

मैं कासो कहौं को सुने को पतिआय । फुलवाके छुवत भँवर मरि जाय ॥ जोतिये न बोइये सींचिये न सोय । विनु डार बिनु पात फूल एक होय ॥ गगन मंडल विच फुल एक फूला । तर भौ डार ऊपर भौ मूला ॥ फुल भल फुलल मलिनि भल गाँथल । फुलवा बिनशि गौ भँवर निरासल ॥ कहहिं कबीर सुनो सन्तो भाई । पंडितजन फुल रहल लोभाई ॥ ६३ ॥

टीका गुरुमुख-गुरु कहते हैं कि, हे संतो ! मैं कासो कहौं ? इस संसारमें नाना प्रकारकी वानी दृढ़ होय रही है, जाकी आशामें जीव

सब बन्ध होय रहे हैं। अब निर्णय कौन सुनता है ? जब लग प्रीति पूर्वक श्रवण करके विचार नहीं करनेका, तब लग प्रतीत कैसे होयगी ? इस वास्ते संपूर्ण बानीका पक्ष छोड़के विचार करै, तो उसे कहना । ये अर्थ । फुलवाके छुवत भँवर मरि जाय । फुलवा कहिये काया, फुलवा कहिये अनुमान; भँवर कहिये मन, भँवर कहिये सनकादि आदि भेष, जो अनुमानमें मग्न हुये औ जीयत मरे । ये अर्थ । जोतिये न बोइये सींचिये न सोय । ना जोता, ना बोया, ना सींचा; अपने-अनुमानसे एक सहस्र दलका कमल बनाया, गगन मंडलमें ब्रह्माण्ड बीच । ना उसका डार है, ना उसका पात है । एक अनुमानका गलबा खड़ा हुवा । सो अनुमानके गलबेको खोज करने लगा, श्वासमें सुरति लगाया । तब जैसी-जैसी श्वासमें सुरति लै होने लगी, तैसा-तैसा देहका अभाव होने लगा । जैसे-जैसे देहका अभाव होने लगा, तैसे—तैसे श्वास बैठने लगी । जैसी-जैसी श्वास बैठने लगी, तैसे—तैसे इंद्रिनका अभाव होने लगा । जब नाभीमें जायके श्वास सुरति एक भई, तब एक प्रकाश स्फुरण हुवा । ताका मूल ऊपर ब्रह्मांडमें औ डार तले पिंडांडमें । ये अर्थ । फूल भल फूलल मलिनि भल गाँथल । जब खूब मूर्ति लगी, तब देह जागी औ कमल सहस्र दल खुला । तब अन्तःकरण विषय परम आनंदकी घटा उठी औ महाद्वारका परदा फूटा । तब मक्र तारकी डोरी लगी, मेरु डंड परसे । हँसो-सोहँ एक हुवा, ब्रह्मांडमें जायके समाधिस्थ हुवा । ये अर्थ । भला जब देह रही, तब लग समाधिका आश्रित भया औ सहस्र दलका आश्रित भया । जब देह छूटी औ कमल बिनसि गया, तब ये जीव निरास भया, पूर्व अध्यासवश फिर गर्भवासमें देह पाया । ये अर्थ । देह छूटे उपरांत समाधी कहाँ रहेगी ? हे संतो ! तुम सुनो औ परखो । पंडित लोग फूलमें लोभाय रहे हैं, अहं अनुमानमें भुलाय रहे हैं । ये अर्थ । फुलवा ब्रह्म, भँवर मन, डार श्वास, मूल सोहँ शब्द, पंडित जन सनकादि ब्रह्मादि । ये अर्थ ।

बिरह अर्थ—गुरु कहते हैं कि, हे जीव ! 'मैं देह' ऐसी मानके नाना प्रकारके विषय रसमें खराब होता है। अरे जहाँसे पैदा हुवा, फिर तहाँ जायके शिर नवावता है। मैं कासो कहौं ? को सुने ? को पतियाय ? ये ब्रह्मा, विष्णु, महेश सबहीं भूले। ये अर्थ। फुलवा कहिये भग, भँवर मन। सो मनसे काम संकल्प हुवा, तब ब्रह्मांडमें काम कमल खुला। तब चित्तसे अनुसंधान किया। इच्छारूपी नारी औतरी। बुद्धिसे दूसरा भाव निश्चय हुवा औ अहंकारने चलाया, तब स्त्रीके पास गया। स्त्रीके मनने भी प्रेरणा किया औ काम जागा। तब स्त्रीके काम कमलका मुख अर्ध, सो खुला। तब उस कमलमें लिंग प्रवेश हुवा, औ छूतेही एकाग्रता होयके बिंदु पतन हुवा औ मन मरा। बिंदु पतन हुआ, तब कमल मूंद गया। तब कमलके भीतर मायके रुधिर औ पिताका बिंदु एक भया। सो नर बिंद भारी औ नारी बिंद हलका। सो नारी बिंदमें नर बिंद बंधि गया; ताते हाड़, नाड़ी, गुदा पैदा भया। मायके रुधिरसे माँस, रक्त, त्वचा पैदा हुवा। रोम दोनोंके संधीसे हुवा। इस प्रकारसे सप्तधातुका देह जीवके संयोगसे पैदा भया। जब पहिले नारीके काम उतरा, तो नारी रूप औ पुरुषके काम प्रथम उतरा, तो पुरुष रूप। फिर वह रूप में बिना जोते, बिना बोये एक कमल पैदा हुवा, बिना डार बिना पातका। स्त्री रूपको भग कमल प्राप्त भया औ पुरुष रूपको लिंग कमल प्राप्त भया। फिर गगनमें कामका कमल फूला औ तरेसे झरने लगा; परंतु कामका मूल ऊपर है। ये अर्थ। फुल भल फुलत मलिनि भल गाँथल। फूल काम, मलिनी मनसा, जो रात दिन कामवश होयके मलीन होय रही है। ये अर्थ। जब जब काम फूला, तब-तब मनसा प्रबल भई औ जब काम नाश हुवा तब मन निरास भया। ये अर्थ। ताते गुरु कहते हैं, कि संपूर्ण विषय नाशवंत, ऐसा न जानिके ब्रह्मादि पंडित जन सब उसमें लोभाय रहे हैं। ताते जब यह चोला छूटेगा,

तब विषय अध्याससे फिर गर्भवासको प्राप्त होयके नाना प्रकारके सुख-दुख भोगेंगे । ये अर्थ ॥ ६३ ॥

शब्द ६४.

जोलहा बिनहु हो हरिनामा । जाके सुर नर मुनि धरें ध्याना ॥
ताना तने को अहुठा लीन्हा । चरखी चारिउ बेदा ॥
सरकुंडी एक राम नरायण । पूरण प्रगटे कामा ॥
भवसागर एक कठवत कीन्हा । तामें माँड़ी साना ॥
माँड़ी का तन माँड़ि रहा है । माँड़ी बिरले जाना ॥
चाँद सूर्य दुइ गोड़ा कीन्हा । माँझदीप कियो माँझा ॥
त्रिभुवननाथ जो माँजन लागे । श्याम मुररिया दीन्हा ॥
पाई के जब भरना लीन्हा । वै बाँधन को रामा ॥
वै भरा तिहुँ लोकहि बाँधे । कोई न रहत उबाना ॥
तीन लोक एक करिगह कीन्हा । दिगमग कीन्हो ताना ॥
आदि पुरुष बैठावन बैठे । कबीरा ज्योति समाना ॥६४॥

टीका मायामुख—जोलहा कहिये जीव को । सो माया कहती है कि, हे जीव ! हरिनाम जो सोहँ है,ताको बिनो । जैसा जोलाहा तारपर चित्त लगायके बीनता है, नरी फेंकता है;-इसी प्रकारसे श्वासमें चित्त लगायके मनको एकाग्र करिके सोहँ शब्द नाभी नासामें जपते रहना । जाका सुर, नर, मुनि ध्यान धरते हैं सो सोहँ शब्द सबके ऊपर । ये अर्थ । ताना तनेको अहुठा, लीन्हा । गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि, देखो अहुठा कहिये देहको, सो गुरुवा लोगोंने देह धारण करके नाना प्रकारके ताना तना जाके अध्यासते आवागवन जीवको लगा । ये अर्थ । चार वेद यही एक चरखा किया। तामें राम नारायण ये सरकुंडी लगाया, जामें जीव सूत लपटा गया । ये अर्थ । भौसागर कहिये संसार, सोई एक कठवत, तामें माँड़ी साना । माँड़ी कहिये बानी,सो बानी नाना प्रकारकी जगतमें गुरुवा लोगोंने दृढ़ाय दिया । ये अर्थ।अब वह बानीका ताना कहिये ब्रह्म, सो

सब देशमें मंड रहा है; परंतु यह माँड़ी बिरले जाना। यह बानी बिरलेको जान परी कि, मानुष देहकी कल्पना है। ये अर्थ। चाँद-सूर्य दुई गोड़ा कीन्हा चाँद कहिये बाँया सुर, सूर्य कहिये दाहिना सुर; ये दोनों गोड़ा कीन्हा। गोड़ा कहिये जामें ताना तना रहता है, सोई इंगला पिंगला, जामें देह तनी है। माँझ दीप कहिये ताना, सोई सुषुमना; त्रिभुवन नाथ कहिये मन, सो माँजने लगे, रेचक पूरक करने लगे। ये अर्थ श्याम मुररिया कहिये कुंभक, सो कुंभक करके श्वासा थम्भन करके फेरा मेरुडंडसे। ये अर्थ। पाईके जब भरना लीन्हा। रेचक-पूरक-कुंभक करके श्वासा ब्रह्मांडमें शनै-शनै चढ़ी। वै बाँधनको रामा। वै कहिये नाड़ी इंगला-पिगला, तामें 'राम' ऐसे दो अक्षर बाँधे फिर वो नाड़ी भरिके तीनों लोक बाँधे। तीन लोक कहिये त्रिकुटी, हृदय, और नाभी, करिगह कहिये माग, दिगमग कहिये दशों दिशा, दशों दिशा कहिये दशों इंद्रि। सो तहाँसे मन खींचके श्वासामें संयम किया। ये अर्थ आदि पुरुष कहिये सो सोहँ ताको बैठावते उठावते कबीरा कहिये जीव सो स्थूल-सूक्ष्म और कारण तीनों देह छोड़के नाद बिन्दु कलातीत होयके ज्योतिमें समाया। ये अर्थ ॥ ६४ ॥

शब्द ६५.

योगिया फिरि गौ नगर मंझारी। जाय समान पाँच जहाँ नारी ॥
गयेउ देशांतर कोइ न बतावै। योगिया बहुरि गुफा नहिं आवै॥
जरि गयो कंथा ध्वजा गई टूटी। भजि गया डंड खपर गयो फूटी॥
कहहिं कबीर यह कलि है खोटी। जो रहे करवासोनिकरेटोटी ॥

टीका गुरुमुख–गुरु कहते हैं कि, योगिया फिरि गौ नगर मंझारी। नगर कहिये ब्रह्मांड। सो ब्रह्मांडमें श्वासा फेरके योगी लोग बैठे। योगी कहिये मन, सो ब्रह्मांडमें लय हुवा। ये अर्थ। पाँच नाड़ी कहिये धनंजय, कूर्म, नाग, कृकल और देवदत्त; ये पाँच नाड़ी ब्रह्मांडकी, तामें जाय समाया। ये अर्थ। गुरु कहते हैं कि, भला जबलग चोला रहा, तबलग

ब्रह्मांडमें रहेगा औ चोला छोड़ेगा, तब कहाँ जायगा ? यह तो कोई बताता ही नहीं, सब भ्रम में भूले। ये अर्थ योगिया बहुरि गुफा नहीं आवै। जो ब्रह्मांड तो फूटि गया, फिर ब्रह्मांडमें तो आ सकता नहीं, भ्रममें पड़ा। ये अर्थ। कंथा कहिये देह सो जरके माटीमें मिल गया। ध्वजा कहिये श्वास, सो निकर गया। डंड कहिये योग, सो भजि गया। खपर कहिये खोपरी, सो फूट गई गुरु कहते हैं कि,-तब जीव कहाँ रहेगा ? अरे जब देह नाशवंत ठहरी, तब देहसे जो कर्म हुवा; सो भी नाशवंत। योग समाधी मुद्राका अधिष्ठान देह। कछु देह बिना योग होता नहीं। जब देह नास्ति ठहरी, तो योग सहजही नास्ति। करवा कहिये देह, सो छोड़ा जब जीवने, तब योग स्थिति तो नास्ति भई औ पूर्व अध्यास वश गर्भवासको प्राप्त भया। ये अर्थ। विरह अर्थ। नगर कहिये गर्भवास। सो जो ये गर्भसे आया था सो गर्भमें फिर गया। जो भगद्वारेसे पैदा भया, फिर भगद्वारसे गर्भमें समाया। जहाँ पाँच नाड़ी-प्राण, अपान, समान, ब्यान औ उदान; सो तहाँ समाया। ये अर्थ। गयेउ देशान्तर कोई न बतावै। जब यह जीव चोला छोड़के गया, तब कोई भी न बताया—'जो मैं फलानी जगह रहूँगा'। और कहते हैं कि, आवागमनसे रहित भया, सो कहाँ है ? समाधी तो देहमें रही, विषयमें रही। ये अर्थ। जब देह छूटी, तब पुनि देहको प्राप्त भया। औ नाना प्रकारके कर्म—धर्म देहके संग रहे तो गुरु कहते हैं कि, जो कोई कहेगा कि स्वर्गमें गया, सो झूठा औ जो कोई कहेगा कि, यमलोकको गया, सो भी झूठा औ जो कोई कहेगा कि, परमात्माके स्वरूपमें मिला, सो भी झूठा काहेते ? कि यह कछु वस्तुता नहीं। इससे जीव फिर-फिर गर्भवासको प्राप्त होता है। अथवा कोई कहेगा कि, गर्भवासमें नहीं जाता। तो पैदा कहाँसे होता है ? जो गर्भवासमें रहता है सोई भगद्वारेसे बाहर निकरता है। ये अर्थ॥ ६५॥

शब्द ६६.

योगिया के नगर बसो मति कोई। जोरे बसे सो योगिया होई ॥
ये योगिया को उलटा ज्ञान। कारा चोला नहिं वाके म्यान॥
प्रगट सो कंथा गुप्ताधारी। तामें मूल सजीवन भारी॥
वो योगियाकी युक्ति जो बूझे। राम रमै तेहि त्रिभुवन सूझे॥
अमृतिबेली छिन-छिन पीवे। कहैं कबीर जोगी युग-युग जीवै६६

टीका गुरुमुख—इस वास्ते गुरु कहते हैं कि, योगियाके नगर बसो मति कोई। योगियाके नगर कहिये ब्रह्मांड। सो ब्रह्मांडमें कोई मत बसो। नाहक शून्यमें क्यों समाते हो? जो ब्रह्मांडमें बसे, सो योगी। ये अर्थ। ये योगियाको उलटा ज्ञान। जो श्वासा उलटके ब्रह्मांडमें ब्रह्म जानना, तो क्या पिंडांडमें और कछु है? औ ब्रह्मांडमें और कछु है? जो पिंडांडमें, सोई ब्रह्मांडमें है। तो योग करनेका कारण क्या? नाहक शून्यमें समायके अपनी चैतन्यता क्यों मूंदना?। ये अर्थ। कारा चोला नहिं वाके म्यान। योगी लोगोंने शून्य स्वरूप निराकार सही किया। ये अर्थ। प्रगट सो कंथा गुप्ताधारी। प्रगट जो स्थूल देह है, तामें 'निर्गुण निराकार' ऐसा गुप्त आधार धारण किया। ये अर्थ। तामें मूल सजीवन भारी। मूल सजीवन कहिये जीव, जाकी सत्ता पायके समस्त जीवंत होते हैं। सो जीवको शून्यमें भरा। आप निर्गुण निराकार कहिके शून्य हुवा। ये अर्थ।

मायामुख—वो योगियाकी युक्ती जो बूझे। गुरुवा लोग बोलते हैं कि, जेहि युक्तिसे योगी लोग मग्न रहते हैं, सो युक्ति बूझिके राममें रमे। राम कहिये आत्मा, जो सर्वका अधिष्ठान है; तामें रमे। आत्म-स्थिति होय, तब तीन भुवन सूझे। तीन भुवन कहिये त्रिकुटी, श्रीहट औ गोल्हाट। इनका साक्षी होय, तब जीव ईश्वरकी एकता होय। ये अर्थ। अमृत बेली छिन-छिन पीवै। अमृत बेली कहिये

श्वासा, सो श्वासाको कुण्डली मुखसे जो छिन-छिन पीवता है, सो योगी युग-युग अमर हुवा, आवागमनसे रहित हुवा । ये अर्थ ॥ ६६ ॥

शब्द ६७.

जोपै बीजरूप भगवान । तो पंडितको पूछो आन ॥
कहाँ मन कहाँ बुद्धि कहाँ हंकार। सत रज तम गुण तीन प्रकार॥
विष अमृत फल फलें अनेका । बहुधा वेद कहै तरबेका ॥
कहहिं कबीर तैं मैं क्या जान । कोधौं छूटल को अरुझान६७॥

टीका गुरुमुख—जो पै बीजरूप भगवान । तो पंडितका पूछो आन । गुरु कहते हैं कि, आत्मामें जगत कंचन-मोहर प्रकार है, तो नाना प्रकारका उपदेश किसको होता है ? आपही अपनेको तो कोई उपदेश करता नहीं और जीवनको जीव उपदेश करते हैं । तो ये आश्चर्य है—जो बीजरूपी भगवान् औ वृक्षरूपी जगत ठहरा । तो बीजमें वृक्ष औ वृक्षमें बीज । फिर परस्पर भाव करके जोई बीज सोई वृक्ष, ऐसा अधिष्ठान असी सिद्ध हुवा । तो संपूर्ण विकार रूप ही हुवा, तो फिर और विकार क्या पूछते हो ? । ये अर्थ । फिर मन कहाँ ? चित्त कहाँ ? बुद्धि कहाँ ? औ अहंकार कहाँ ? ये तो संपूर्ण आपही हुवा । तो अंतःकरण नाम किसने रक्खा ? औ किसको भास हुआ ? फिर भास भासिक एक हो गया, ये आश्चर्य । रजोगुण, सतोगुण औ तमोगुण ये त्रिगुण आत्मामें सम्भवते नहीं, फिर त्रिगुण आत्मामें सिद्ध होय रहे हैं, ये आश्चर्य । आत्मा तो एक सर्वदेशी, फिर संपूर्ण एकके समुझे सबको समुझना कि नहीं ? । तो नाना प्रकारके विष अमृत फल माना है । कहीं कहता है कि, मैं सर्वज्ञ । कहीं कहता है कि, मैं किंचिज्ज्ञ । कहीं कहता है कि, ईश्वर । कहीं कहता है कि, मैं जीव । कहीं कहता है कि, ब्रह्म । कहीं कहता है कि मैं आत्मा । ऐसा नाना प्रकारसे खराब होय रहा है । अखंडरूप कैसे मानिये ? । ये अर्थ । बहुधा वेद कहै तरबेका । नाना प्रकारसे तरनेका उपाय वेद किसको

कहता है ? औ कौन तरता है ! अद्वैत उपदेश तो सबने किया, परन्तु द्वैत सबनको भासा । जो द्वैत नहीं भासा, तो किससे अद्वैत उपदेश किया ? । फिर द्वैताद्वैत एक करके बीज वृक्ष न्याय ठहराया । तब गुरु कहते हैं कि-देखो, इनका निर्णय कहाँ रहा ? और पारख कछु इनको प्राप्त भया नहीं । ये अर्थ । कहहिं कबीर तैं-मैं क्या जान ! जब विज्ञान मैं जाना, तब ज्ञान अज्ञान दोनों सम भाव हुवा । तैं मैं कछु रहा नहीं । तब बंधा कौन ? औ छूटा कौन ? सारा दिन पिसान पीसा, चलनीमें उठाया, हलाय देखा, तब खालीका खाली । ये अर्थ । साखीः-मृगतृष्णाका तोय अरु, बाँझ-पुत्रको न्याय । अस विचार वेदांतका, अंत कछु न लखाय ॥ १ ॥ ६७ ॥

शब्द ६८.

जो चरखा जरि जाय बढ़ैया ना मरे ।
मैं कातौं सूत हजार । चरखुला जिन जरे ॥
बाबा मोर ब्याह कराव । अच्छा बरहि तकाय ॥
ज्यों लौं अच्छा बर ना मिले । तौं लों तुमहि बिहाय ॥
प्रथमें नगर पहूँचते । परिगौ सोग संताप ॥
एक अचंभव हम देखा । जो बिटिया ब्याहिल बाप ॥
समधीके घर लमधी आये । आये बहुके भाय ॥
गोड़े चूल्हा दै दै । चरखा दियो दृढ़ाय ॥
देवलोक मर जायेंगे । एक न मरे बढ़ाय ॥
यह मन रंजन कारणे । चरखा दियो दृढ़ाय ॥
कहहिं कबीर सुनो हो संतो । चरखा लखे जो कोय ॥
जो यह चरखा लखि परे । ताको आवागवन न होय॥६८॥

टीका जीवमुख—जीव बोलता है कि, जो चरखा जरी जाय, बढ़ैया ना मरे । ब्रह्म सत्य औ जगत मिथ्या । चरखा कहिये देह, सो देह तो

नाश होय जायगा औ बढ़ैया जो देहका बनानेवाला है भगवान, सो रहेगा । तो हे देह तू ? जल्दी नाश मत होय, मेरेको भगवानकी भक्ती सहस्त्र प्रकारसे करने दे । ये अर्थ । बाबा मोर ब्याह कराव । बाबा कहिये गुरुवा लोगोंको सो जीव गुरुवा लोगोंके पास जायके बोलता है कि, हे स्वामि ! परमात्मासे मेरी लगन लगावो; जामें मेरेको भवगत् प्राप्ति होय । अच्छा बर भगवान् । ये अर्थ । जबलग अच्छा बर मेरेको ना मिले, तबलग मेरे तुमही खाविंद हो । तुम्हारे बिना मेरा कोई नहीं, भगवत् प्राप्तीके हेतु । ये अर्थ । **गुरुमुख**–गुरु कहते हैं कि, प्रथमें नगर पहूँचते, परिगौ सोग संताप । तब गुरुवा लोगोंने उपदेश दिया कि, परमात्मा प्रभुजीका भजन करना औ तन मन धनका अभाव करना; नहीं तो यमलोककी शासत महा कठिन है । ऐसा उपदेश देहमें पहुँचते नाना प्रकारका सोग संताप उपजा कि, कौन प्रकारसे ? किस तरहसे प्रभुजीकी प्राप्ती होयेगी ? औ यमयातना चूकेगी । घटमें बानी पहुँचते इस प्रकारसे सोग संताप पड़ा । ये अर्थ । एक अचंभव हम देखा । जो बिटिया ब्याहिल बाप । सो ये बड़ा आश्चर्य है कि, बिटिया कहिये जीव औ बाप कहिये ईश्वर । सो ईश्वरसे जीवकी लगन लगी । ये अर्थ । समधीके घर लमधी आये । समधी कहिये गुरुवा लोगोंको कि, जिनकी बुद्धी शास्त्रमें सम हुई । लमधी कहिये जीवको कि, जाकी बुद्धी बानीमें आलंभ भई । सो गुरुवा लोगोंके घरमें जीव आया, भ्रममें आया । ये अर्थ । आये बहू के भाय । बहु कहिये बानीको, भाय कहिये पंडितको । सो बानी बहुके वक्ता आयके नाना प्रकारकी बानी कानमें फूँकी, ब्रह्म रहटा दृढ़ किया । ये अर्थ । देवलोक मरि जायेंगे । एक न मरे बढ़ाय ॥ जब महाप्रलय होयगा, तब देवलोक, मानुषलोक सब नाश हो जायँगे । एक परमात्मा सच्चिदानंद रहेगा, और कछु रहनेका नहीं । इस प्रकारसे जीवकी मन-रंजन करनेके वास्ते चरखा बानी दृढ़ कर दिया । ये अर्थ । सो गुरु

कहते हैं कि, हे संतो ! सुनो, जो चरखा ब्रह्म जीवको दृढ़ाया सो कहाँ, है ? मिथ्या धोखेमें जीव फँसा है । ये तत्त्वमसि औ सच्चिदानंद जीवका अध्यास है । इस अध्यासको जो परखे औ जिनके परखनेमें आवे, सो पारखमें ठहरके आवागवनसे रहित होय । ये अर्थ ॥ ६८ ॥

शब्द ६९.

यन्त्री यन्त्र अनूपम बाजे । वाके अष्ट गगन मुख गाजे ॥
तूही बाजे तू ही गाजे । तूही लिये कर डोले ॥
एक शब्द मों राग छतीसों । अनहद बानी बोले ॥
मुखके नाल श्रवण के तुंबा । सतगुरु साज बनाया ॥
जिभ्याके तार नासिका चरई । मायाका मोम लगाया ॥
गगन मण्डलमें भया उजियारा । उलटा फेर लगाया ॥
कहैं कबीर जन भये विवेकी । जिन्ह यन्त्री सो मन लाया ॥

टीका गुरुमुख–यंत्री कहिये जीवको, यंत्र कहिये देहको । सो गुरु कहते हैं कि, सर्व उपाधीका मूल देह । सो देहसे अनेक कल्पना भई, जामें तू बँधा है । ये अर्थ । अनूपम कहिये ब्रह्म, सो देहसे संकल्प भया औ सात स्वर्ग, आठवाँ अपवर्ग निश्चय किया । सो संपूर्ण कल्पना देहसे उठी । अरे देह छोड़के संकल्प कछु होता नहीं । निर्गुण निराकार अद्वैत आत्मा देह बिना कछु भी सिद्ध हो सकता नहीं । ये अर्थ । सो तूही कल्पना करता है । औ तूही निश्चय करता है । तेरी कल्पना तूही हाथ लिये हुए फिरता है । एक ॐकार शब्द तूही अनुमान किया, फिर छत्तीस प्रकारसे उस ॐकारको गाया, आखिरको अनहद बोला । ये अर्थ । **जीवमुख**–मुखकै नाल श्रवणकै तुंबा, सतगुरु साज बनाया । जीव बोलता है कि, मैं किंचिज्ज्ञ, मेरेसे क्या होता है ? ये यंत्र सतगुरुने बनाया, ब्रह्माने बनाया । ये अर्थ । मुख सोई नाल श्रवण सोई तुंबा, जीभ सोई तार, औ नाक है सोई खूँटी; इस प्रकारसे बीन बाजा बनाया । ता ऊपर माया का मोम लगाया ।

चाम माँससे मढ़ा है। ये अर्थ। अब जो लक्ष बाहर फैल रहा है, सो एकाग्र करके फिर श्वासको मेरुदंडके तरफसे फेरके उलटा लक्ष लगाया तब गगनमंडलको मीन मार्गसे उलटा लक्ष चढ़ा औ भँवर गुफामें ठहरा। तब महा प्रकाश हुवा, सोई ब्रह्म। इस प्रकारसे जो यंत्रीसों मन लगावै औ साक्षात्कार होवै, सोई जन विवेक मोक्ष आरूढ़; ऐसा जीव बोलते हैं। ये अर्थ ॥ ६९ ॥

शब्द ७०.

जस माँसु पशुकी तस माँसु नरकी। रुधिर-रुधिर एक साराजी ॥
पशु माँस भखे सब कोई। नरहि न भखे सियाराजी ॥
ब्रह्म कुलाल मेदिनी भइया। उपजि विनशि कित गइयाजी॥
माँस मछरिया तैं पै खैया। ज्यों खेतनमों बोइयाजी ॥
माटीके करि देवी देवा। काटि काटि जिव देइयाजी ॥
जो तोहरा है साँचा देवा। खेत चरत क्यों ना लेइयाजी॥
कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो। राम नाम नित लेइयाजी ॥
जो कछु कियेउ जीभ्याके स्वारथ। बदला पराया देइयाजी॥७०॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि, जैसा नरका माँस, वैसाही पशुका माँस औ रुधिर भी एक सरीखा है। सो पशुके माँसको राक्षस-गण जीव श्वान, स्यार समान भक्षण करते हैं औ बोलते हैं कि, अहँ ब्रह्म। हमारेको विधि निषेध नहीं। एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म। ये संपूर्ण एक ब्रह्मही है। मारनेको औ मरनेको कोई दूसरा नहीं, ऐसा बोलते हैं। तो ये अपने पुत्रको औ अपनी स्त्रीको क्यों नही मार खाते ? जैसा सियार ढोर मुरदा खाता है औ अपनी जातिको नहीं खाता। तद्वत् ऊपर-ऊपर सब अद्वैत कहते हैं औ भीतर-भीतर सबको द्वैत भासता है। जो द्वैत नहीं भासा, तो खाते किसको हैं ?। ये अर्थ। ब्रह्म कुलाल मेदिनी भइया, उपजि विनशि कित गइयाजी। ब्रह्म कुम्हार पृथ्वीपर पैदा होके नाना प्रकारकी बानी बनाया औ सृष्टि रचना किया, ऐसा

वेद बोलता है । सो ब्रह्म निरावेव कि सावेव । अगर कोई कहेगा कि, ब्रह्म भी कहीं सावेव होता है ? तो निरावेवसे कहीं सृष्टि रचना होती है ? सावेव बिना स्फुरण भी नहीं होता औ इच्छा भी नहीं हो सकती जो सावेव हुआ, तो उपजि बिनशि कित गइयाजी? । ऐसा ब्रह्म कुलाल पृथ्वीपर पैदा भया । फिर उपजि-बिनशि कित गया ? । अरे जासे तुम आरंभ औ परिणाम माना है, सो तो जीवकी कल्पना । सो कल्पनामें समरस होयके ब्रह्म कहलाते हो औ माँस मछरिया खाते हो जैसा किसान खेतमें तरकारी बोवता है औ जब चाहे तब उखारके खाता है । इस प्रकारसे ये काल जीव जब चाहते हैं, तब माँस मछरिया खाते हैं भला कोई कहेगा कि, शास्त्रका प्रमाण है । सो प्रमाणसे हम देवता निमित्त उपासना करके खाते हैं ! तो तुम्हारा देवता जो खाता है औ उसके बिना देवताकी तृप्ति नहीं होती । तो जब बकरी खेतमें चरती है, तब तुम्हारा देवता क्यों नहीं खाता ? क्या देवताको किसीका धाक है ? कि किसीने रोका है ? कि कोई मारता है ? तो खेत चरते क्यों नहीं खाता ? तो देवता मिथ्या औ पुजारी सच्चा, जिसने अपनी कल्पनासे देवता भी माटीका बनाया । अरे तुम अपनी कल्पनासे देव-देवी बनाते हो, सो निर्जीव मिथ्याभूत । और उसके आगे सजीव काटके रखते हो । ये कैसी गाफिली तुम्हारेको घेरी है ? गुरु कहते हैं-हे जीव ! देवता कहाँ है ? तेरी कल्पना । ये अर्थ । भला जो तुम राम नाम नित लेते हो । तो वेदका प्रमाण है कि, जो सबमें रमा, सो राम । तो भला जिसकी भक्ती करना, उसका कहीं गरा काटना । अगर कोई आपही आप कहेगा, तो भी गरा काटना संभौता नहीं । कोई अपना गरा आप काटके अपनेको आप खाते देखा भी नहीं और सुना भी नहीं । तब तुम्हारा करतब्य मिथ्याभूत । ये अर्थ । ये जो जिभ्याके स्वादके हेतु औ नाना प्रकारके विषय स्वार्थके हेतु तुम जीवहिंसा करते हो, सो

पराया बदला देना परेगा, कछु छूटनेका नहीं । जीवहिंसा विषयके अध्याससे फिर जन्म होयके तुम्हारी भी वैसी हिंसा होयगी । ये अर्थ ॥ ७० ॥

शब्द ७१.

चातृक कहाँ पुकारो दूरी । सो जल जगत रहा भरपूरी ॥
जेहि जल नाद बिंदको भेदा । षट कर्म सहित उपानेउ वेदा ॥
जेहि जल जीव शीवको बासा । सो जल धरणि अमरपरकासा ॥
जेहि जल उपजल सकल शरीरा । सो जल भेद न जानु कबीरा ७१ ॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि, चातृक कहाँ पुकारो दूरी । चातृक कहिये जीवको, जल कहिये अज्ञान, जल कहिये बानी, जल कहिये काम, जल कहिये कल्पना । सो हे जीव ! कल्पना संपूर्ण संसारमें भरि रही है, ताते तूं दूर आशा लगायके पुकारता है । सो जाके हेत तुम पुकारते हो, सो कछु है नहीं, तेरी कल्पना । ये अर्थ । जेहि जल नाद बिंदको भेदा । नाद कहिये सूक्ष्म, बिंद कहिये स्थूल, यह दोनोंका भेद कहिये कला, कला कहिये अज्ञान, अज्ञान कहिये जामें जीव आवृत हो रहा है, अंधाधुंध हो रहा है । अंधाधुंध कहिये असि आनंद । जहाँ ज्ञान-अज्ञान कछु नहीं सूझे, ताको अंधाधुंध कहिये । ये अर्थ । सोई अनुमानसे षट्कर्म उपजे औ सोई अनुमानसे चारों वेद पैदा भये, सोई अनुमानका अधिष्ठान बना । ये अर्थ । जीव कहिये आप और शीव कहिये ईश्वर । सो आपहीने ईश्वर अनुमान किया और आपहीने आत्मा अनुमान किया । फिर आपही ब्रह्म होयके आत्मा निश्चय किया । ये अर्थ । सो जल धरणी अमर प्रकासा । सोई आत्मा संपूर्ण प्रकाश हुआ । सो आत्मामें ये स्थित भया; ताहीसे सब शरीर और संपूर्ण विकार उपजा और सब विकारका अधिष्ठान भया । इस प्रकारसे जीवको भेद नहीं मालूम भया कि, जो विकारसे नाना दुखकी प्राप्ति भई सोई विकाररूपी मैं कैसा होता हूँ ? सो तू परखके न्यारा हो । ये अर्थ ॥ ७१ ॥

शब्द ७२.

चलहु का टेढ़ो ! टेढ़ो ! टेढ़ो ? ।

दशहूँ द्वार नर्क भरि बूड़े । तू गंधीको बेड़ो ॥
फूटे नैन हृदय नहिं सूझे । मति एकौ नहिं जानी ॥
काम क्रोध तृष्णा के माते । बूड़ि मुये बिनु पानी ॥
जो जारे तन भस्म होय धुरि । गाड़े कृमि मिट्टी खाई ॥
सीकर श्वान कागका भोजन । तनकी इहै बड़ाई ॥
चेति न देख मुग्ध नर बौरे । तोहिते काल न दूरी ॥
कोटिन यतन करो यह तनकी । अंत अवस्था धूरी ॥
बालूके घरवामें बैठे । चेतत नाहिं अयाना ॥
कहहिं कबीर एक राम भजे बिनु । बूड़े बहुत सयाना ॥ ७२ ॥

टीका गुरुमुख–गुरु कहते हैं कि, चलहुका टेढ़ो ! टेढ़ो ! टेढ़ो !! । प्रथम टेढ़ो त्वंपद, दूसरा टेढ़ो तत्पद, तीसरा टेढ़ो असि पद । इस प्रकारसे चलते-चलते पूर्ण आत्मभावको प्राप्त हुवा, तब दशों दिशामें भरपूर कहाया । तब अधिष्ठान रूप हुवा, तो गंधीका बेड़ा हुवा । ये अर्थ । गंधी कहिये संसारको, गंधी कहिये नर्कको, बेड़ा कहिये जहाजको । सो आत्मा हुवा; तब कहा कि, मैं निर्विकार हुवा । परंतु संपूर्ण विकारका औ जगत् का अधिष्ठान हुवा । ये अर्थ । देखो इनकी आँखें फूटी औ ऊपरकी भी आँखें फूट गईं । जो जगत् विकार देखते हैं औ कहते हैं कि, मेरेको जगत् दिखता नहीं, अस्ति आत्मा दिखता है । औ हृदय नहीं सूझे । हियेमें जो ज्ञान था, सोभी खोया औ कहने लगे कि, ज्ञान अज्ञान ये दोउ मेरे विषय नहीं हैं । मैं केवल आत्मा । तब चारों गई । ये अर्थ । काम-भक्ती, क्रोध-योग-तृष्णा-ज्ञान, ये तीनों भतमें मस्त होयके बिना पानी बूड़ मुये। अपनेही अनुमानमें आप मग्न हुये। ये अर्थ। जो जारे तन भस्म होय धुरि, गाड़े कृमि मिट्टी खाई । अरे देह तो नाश-

वंत ठहरी, जारे भस्म होय जायगी औ गाड़े कीड़े माटी खाय जायेंगे। ऊपर पड़ी रहेगी, तो स्यार, कुत्ते, कौवे, चील आदि खाय जायेंगे। तनकी इहै बड़ाई। ये अर्थ। चेत नहीं देखता है, मुग्ध नर दिवाना। तोहिते काल न दूरी। जो तू कल्पता है औ मानता है, सोई तेरा काल है। ये तनके वास्ते कोटि यतन करो; परन्तु अंत अवस्थाको धूरमें मिलेगी। जैसा बालूके घरमें कोई बैठता है, तो रहनेको आश्चर्य है; परन्तु जानेको कछु आश्चर्य नहीं। ऐसी ये देह है, सो जानता नहीं अज्ञान !। सो गुरु कहते हैं कि, एक राम ऐसा अनुमान जो दृढ़ किया है, सोई बंधन है। सो छूटे बिना बाँधा गर्भवासको जायगा। ये अर्थ॥ ७२॥

शब्द ७३.

फिरहु का फूले ! फूले ! फूले ! ।

जब दश मास ऊर्ध मुख होते। सो दिन काहेक भूले॥
ज्यों माखी सहते नहिं बिहुरे। सोचि-सोचि धन कीन्हा॥
मुये पीछे लेहु-लेहु करें सब। भूत रहनि कस दीन्हा॥
देहरिलों बर-नारि संग है। आगे संग सुहेला॥
मृतुक थानलों संग खटोला। फिर पुनि हंस अकेला॥
जारे देह भस्म होय जाई। गाड़े माटी खाई॥
काँचे कुम्भ उदक ज्यों भरिया। तनकी इहै बड़ाई॥
राम न रमसि मोहके माते। परेहु काल बस कुवा॥
कहहिं कबीर नर आपु बंधायो। ज्यों नलिनी भ्रम सूवा॥७३॥

टीका गुरुमुख–गुरु कहते हैं कि, कोई भक्तीमें फूल गये। कोई योगमें फूले औ कोई ज्ञानमें फूले। इस प्रकारसे त्रिबंधनमें परे। ये त्रिबंध जबलग परखनेमें नहीं आवै, तबलग गर्भवास छूटता नहीं। ये अर्थ। मध्य अर्थ स्पष्ट है। आगे। राम न रमसि मोहके माते। नाना प्रकारके मोहमें मस्त हुवा, सोई तेरा काल और 'एक राम' ऐसा अनु-

मान जो वेदने सिद्ध किया, सो भी तेरा काल। ऐसे-ऐसे अध्यासमें बंध होयके अंधकूपमें परा, अज्ञानमें परा, फिर गर्भवासको प्राप्त हुवा। जो तू ब्रह्म और आत्मा सिद्ध करता है, सो कहाँ है ? मिथ्या तेरा अध्यास है। तामें तू सुवा-नलिनी-न्याय बंधमान हुवा। सो तू परखके देख और थीर हो। ये अर्थ ॥ ७३ ॥

शब्द ७४.

ऐसो योगिया बदकर्मी। जाके गमन अकाश न धरणी॥
हाथ न वाके पाँव न वाके। रूप न वाके रेखा ॥
बिना हाट हटवाई लावे। करे बयाई लेखा ॥
कर्म न वाके धर्म न वाके। योग न वाके युक्ती ॥
सींगी पात्र किछउ नहिं वाके। काहेक माँगे भुक्ती ॥
मैं तोहि जाना तैं मोहि जाना। मैं तोहि मांहि समाना ॥
उत्पति परलय एकहुँ न होते। तब काहु कौन ब्रह्मको ध्याना॥
योगी आन एक ठाढ़ कियो है। राम रहा भरपूरी ॥
औषध मूल किछउ नहिं वाके। राम सजीवन मूरी ॥
नटवट बाजा पेखनी पेखे। बाजीगरकी बाजी ॥
कहहिं कबीर सुनो हो संतो। भई सो राज बिराजी ॥७४॥

टीका गुरुमुख-गुरु कहते हैं कि, ऐसो योगिया बदकर्मी। योगिया कहिये मन, योगिया कहिये ब्रह्म, बदकर्मी कहिये अकर्मी। सो संसारमें सूत्रमणि-न्याय होयके नाना कुकर्म करते हैं। ये अर्थ। हाथ-पाँव, रूप-रेखा सो तो उसकी कछु कहतेई नहीं और उसीकाही संपूर्ण जगत स्वप्ना बोलते हैं और संपूर्ण उसीकाही कर्तव्य बोलते हैं। तो भला रूप रेखा बिना कहीं स्वप्न होता है ? औ अवेव बिना कहीं कर्तव्य होता है ?। तो वेदकी कहानी असंभव मिथ्या धोखा। ये अर्थ। बिना हाट हटवाई लावै। बजार तो है नहीं, बैपार लगाया। करे बयाई लेखा। बयाई कहिये दलाली, सो ब्रह्मादिक जो बड़े-बड़े

दलाल हुये, सो सबहीं नाना प्रकारकी कल्पना करके दलाली करने लगे औ नाना तर्क करके अनुमानका लेखा बाँधने लगे। कर्म योग ज्ञानका उपदेश करने लगे। ये अर्थ। कर्म धर्म योग युक्ती सींगी पात्र उसके कछु नहीं; तो संपूर्ण निराकार। भला ब्रह्म तो निरावेव है, फिर भीख क्यों माँगता है ? औ भोग क्यों भोगता है ? भला आप तो सच्चिदानंद स्वरूप पूर्ण है; तो ये संसारमें बदकर्म जो होता है, सो कौन करता है ? भला रूप-रेखा जिसको नहीं, तासो रचना कैसी होयगी ? रूप-रेखा बिना स्फुर्ण तो भी कहाँ ते होयगा ? भला सच्चिदानंदका निश्चय करने वाला कौन है ? ऐसा न जानकर नाहक मिथ्या धोखेमें भूले और नाना प्रकारके मिथ्या गलबे उठाये। ये अर्थ।

कवित्त—जैसा कोई दलाल आये, गुदरीमें ठाढ़ भये, कहत एक अदबुद् वस्तु, बिक्रीको आई है ॥ शशा शृंगको कमान, वर्णत को ताहि जान, जो कोई पावत सोई, जानत अधिकाई है ॥ धाय—धाय जीव सब, दलालसे पूछन लागे बड़े हमारे भाग जागे जो आप ऐसी गाई है ॥ ऐसा ब्रह्मका बिचार गुरुवनने कीन्ह पुकार रूप रेख नहीं तासों, रचना उपजाई है ॥ १ ॥

ब्रह्मसुख—मैं तोहि जाना, तैं मोहि जाना। मैं तोहि माँहि समाना। मैं कहिये ब्रह्म, सबको जाननेवाला। औ मेरेको कोई नहीं जान सकता, जो पै ब्रह्मा विष्णु महेशहू होय। ऐसा सर्व साक्षी मैं तत्पदार्थ। तैं कहिये त्वंपद जीव, जो कछु जानता नहीं, महा अविद्याके वस अज्ञान ते। मेरा ज्ञान रूप, तेरा अज्ञान रूप। सो मैं ज्ञान जब तेरे हृदयमें प्रकाश हुवा, तब तैंने मोको जाना कि, चराचर संपूर्णमें बाहर-भीतर एक ब्रह्म है, घट-जल न्याय। जो घट-जल न्याय हुवा, तो घड़ा जलमें, जल घड़ेमें। मैं तोहि माँहि समाना। ये अर्थ। उत्पत्ति परलय एकहूँ न होते। घटमें जो जल बाहर सो जल, भीतर तो अब उत्पत्ति प्रलय किसका होगा ? कछु दो नहीं, जो एकका प्रलय होय औ एककी उत्पत्ति होय। तो एक अद्वैतमें ना उत्पत्ती है, ना प्रलय है। एक,

जाती-बिजाती-स्वगत भेद रहित । ये अर्थ । तब कौन ब्रह्मको ध्याना ? जो घड़ा पानीमें औ पानी घड़ेमें निश्चय हुवा, तो जाती कहिये जो घड़ेमेंका पानी औ बाहरका पानी बिजाती कहिये घड़ा, स्वगत भेद कहिये मिलाप; ये त्रिपुटी कहिये । जब पानी, निश्चय हुवा, तो घट नास्ति और पानी तो एक । तब ध्याता-ध्यान-धेय ये कहाँ हैं ? कौन ब्रह्मको ध्याना ? । ये अर्थ । गुरुमुख—योगी आन एक ठाढ़ कियो है, राम रहा भरपूरी । इस प्रकारसे योगी लोगोंने और ज्ञानी लोगोंने एक अनुमान आनिके ठाढ़ किया है कि, राम जो सबमें रमा है; सोई आत्मा पूर्ण है । ये अर्थ । औषध मूल किछुउ नहिं वाके, राम सजीवन मूरी । कि सब जीवनका अधिष्ठान एक राम है, जलतरंग न्याय । इसमें ना कछु रोग है, ना कछु औषध है । गुरु शिष्य ये संपूर्ण कल्पना, एक आत्मा सत्य । ये अर्थ । नटवट बाजा पेखनी पेखे । नटवट कहिये चौरासी आसन, बाजा कहिये दश नाद, पेखनी कहिये दश मुद्रा, । ये संपूर्ण बाजीगर गुरुवा लोगोंकी बाजी है, तामें फँसके राज बिराजी भई । सचेसे झूठा भया । चैतन्यसे जड़ हुवा । जीवसे ब्रह्म भया, भूला, मिथ्या भासमें मग्न हुवा । तू ये सबको परखके पारख पर थिर हो । ये अर्थ ॥ ७४ ॥

शब्द ७५.

ऐसो भरम बिगुर्चन भारी ।
वेद कितेब दीन औ दोजख । को पुरुषा को नारी ॥
माटी का घट साज बनाया । नादे बिंद समाना ॥
घट बिनसे क्या नाम धरहुगे । अहमक खोज भुलाना ॥
एकै त्वचा हाड़ मल मूत्रा । एक रुधिर एक गूदा ॥
एक बूँद से सृष्टि रची है । को ब्राह्मण को शूद्रा ॥
रजोगुण ब्रह्मा तमोगुण शंकर । सतोगुणी हरि होई ॥
कहहिं कबीर राम रमि रहिये । हिंदू तुरुक न कोई ॥ ७५ ॥

टीका गुरुमुख–गुरु कहते हैं कि, ऐसो भरम बिगुर्चन भारी। इस प्रकारसे नाना भ्रम-चक्रमें परा। वेद किताब, दीन औ दोजख, माया औ ब्रह्म; ऐसी नाना प्रकारकी कल्पनामें फँसा। ये अर्थ। माटीका घट साज बनाया। नाद सूक्ष्म औ बिंद स्थूल। सो स्थूलमें सूक्ष्म समाया, तो नाना प्रकारका नाम धराया। फिर घट बिनसे क्या नाम धरोगे! अरे अहमक खोज करके देख, भूला क्यों फिरता है? एक त्वचा, हाड़, मल, मूत्र, एक गुदा, एक रुधिर, एक बूँदसे सृष्टी सब रची है। इसमें कौन ब्राह्मण? औ कौन शूद्र? मिथ्या, सब कल्पना। रजोगुण काम सोई ब्रह्मा, तमोगुण क्रोध सोई शंकर, सतोगुण मोह सोई विष्णु। गुरु कहते हैं कि–ये सब मिथ्या धोखा औ 'एक राम' ऐसा जो असिपद अनुमान किया है, तासो रमि रहिये। न्यारा हो रहिये, पारख पर औ हिन्दू तुरुक दोनों कल्पना। ये अर्थ॥ ७५॥

शब्द ७६.

आपन पौ आपही बिसरयो।

जैसे श्वान काँच मंदिर में। भरमित भूसि मरयो॥
ज्यों केहरि वपु निरखि कूप जल। प्रतिमा देखि परयो॥
वैसेहि गज फटिक शिलामें। दशनन आनि अरयो॥
मर्कट मूठि स्वाद नहिं बिहुरे। घर–घर रटत फिरयो॥
कहहिं कबीर नलिनी के सुवना। तोहि कौने पकरयो॥७६॥

टीका गुरुमुख–आपन पौ आपुहि बिसरयो। ये शब्दका अर्थ स्पष्ट है। काँच मंदिर वेद बानी। श्वान पंडित। ये अर्थ॥ ७६॥

शब्द ७७.

आपन आश कीजे बहुतेरा। काहु न मर्म पावल हरिकेरा॥
इंद्री कहाँ करे बिश्रामा। सो कहाँ गये जो कहत होते रामा॥
सो कहाँ गये जो होत सयाना। होय मृतक वह पदहिं समाना॥
रामानंद रामरस माते। कहहिं कबीर हम कहि कहि थाके७७

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि, अपने-अपने ऐसो तर्क समस्त साधु औ भेष सनकादिकने किया; परन्तु हरीका मर्म किसीने नहीं पाया। हरी कहिये जहाँ चित्त, मन, बुद्धि आदि समस्त इंद्रियनका हरण होय, सो मिथ्या झाँई। ऐसी मर्म नहीं पाई, ताते धोखामें रहा। ये अर्थ। भला जबलग देह रही, तबलग तो इंद्री देहमें परम विश्रामको प्राप्त भई। परन्तु जब देह छूटेगी, तब विश्राम कहाँ होयगा? अरे सो कहाँ गये? जो आपही राम कहाये थे औ राजा दशरथके घर अवतार लिया था। सो जब तन त्यागा, तब कहाँ गये? जो जीयतही मुक्त कहायके अस्तिपदमें समाये थे, सो मरे उपरांत जगत् अधिष्ठाता जगतरूप होय रहे। अरे देख विचार करके कि, बड़े-बड़े सयाने ज्ञानी पुरुष जो भये, सो कहाँ गये? सब मर-मरके फि गर्भवासमें आये। ये अर्थ। रामानंद रामरस माते। विषयानंद, जगदानंद, योगानंद, गंधर्वानंद, देवानन्द, त्रिगुणानन्द; ये संपूर्ण आनन्द जो आनन्दमें लय हुये; सो रामानन्द, सर्व-उत्कृष्ट आनंद। ये अर्थ। सो आनन्दके रसमें माते सब जीव; परन्तु ये न जाना कि, ये आनन्द मेरेसे है औ मैं कैसा आनन्द होता हौं? ऐसा न समुझा। सो अभ्यासके वश होयके नाना दुःख भोगते हैं। मैं कहि-कहि थका; परन्तु संसारका धोखा कछु उठता नहीं। ये अर्थ॥ ७७॥

शब्द ७८.

अब हम जानिया हो हरिबाजीको खेल।
डंक बजाय देखाय तमाशा। बहुरी लेत सकेल॥
हरिबाजी सुर नर मुनि जहँड़े। माया चाटक लाया॥
घरमें डारि सकल भरमाया। हृदया ज्ञान न आया॥
बाजी झूठ बाजीगर साँचा। साधुन की मति ऐसी॥
कहहिं कबीर जिन जैसी समुझी। ताकी गति भई तैसी॥७८॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि, हरी कहिये माया, माया कहिये काया, बाजी कहिये कल्पना। सो संपूर्ण वेद, पुराण, शास्त्र

हमने जाना कि, कायासे कल्पना हुई औ सोई बाजीमें सब जीव अरुझे । ये अर्थ । हरी कहिये गुरुवा लोग, बाजी कहिये नाना बानी, जामें सब जीव दृढ़ होय रहे हैं । सो डंक बजाय देखाय तमाशा, बहुरी लेत सकेल । इस कल्पनामें सुर नर मुनि सब जहँड़े, खराब हुये औ भूले । उस बानीने सबको चाटक लगाया । किसीको स्वर्ग प्राप्तीका चाटक लगाया औ किसीको सिद्धी प्राप्तीका चाटक लगाया औ किसीको देवता पंचायतन प्राप्तीका चाटक लगाया औ किसीको जीव ईश्वर एकताका चाटक लगाया औ किसीको आत्म स्थिति आनन्दका चाटक लगायके अपने घरमें डारके सबको भरमाया । परन्तु किसीके हृदयमें भी समझ परी नहीं, ये कल्पना । ये अर्थ । ता उपरान्त सब संत-महंत जो महानुभाव भये, तिन्ह निश्चय किया कि, बाजी झूठी, बाजीगर साँचा । जगत् मिथ्या, ब्रह्म, सत्य । संपूर्ण बोलनेमें जो बानी आई, सो सर्व मिथ्या औ नेति-नेति प्रमाणसे जो अनिर्वचनीय सिद्ध हुआ, सोई ब्रह्म सत्य । जो देखनेमें संसार बाजी आई सो मिथ्या औ अदेख बाजीगर सच्चा । इस प्रकारसे हार-हारके साधुनकी मती ऐसी हुई । परन्तु गुरु कहते हैं कि, देखो मिथ्या धोखेमें फँसे । जिन्हने जैसा समझा, ताकी गति तैसी भई । अनुमान कल्पना करके अनुमान कल्पना ही होगये, पुनि गर्भवासको प्राप्त भये । ये अर्थ ॥ ७८ ॥

शब्द ७९.

कहहु हो अम्मर कासो लागा । चेतनहारा चेत सुभागा ॥
अम्मर मध्ये दीसै तारा । एक चेता एक चेतवन हारा ॥
जो खोजो सो उहवाँ नाहीं । सो तो आहि अमरपद माहीं ॥
कहहिं कबीर पद बूझै सोई । मुख हृदया जाके एकै होई ७९॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि, हे अंमर ! हे जीव ! तू किससे लगा है ? अरे अपनी चैतन्यता तूने हारिके अचेत होय रहा है, ब्रह्म होय रहा है । अरे सुभागा ! तेरा धर्म नहीं, जो जड़ होना औ

गाफिल होना औ अन्धाधुन्धमें परना औ अपने आपुहीको हारना। सो तू परखके सब धोखेको छोड़। ये अर्थ। अंमर मध्ये दीसे तारा। अंमर कहिये जीवको, तारा कहिये ब्रह्मको, ब्रह्म कहिये भ्रमको। सो जीवमें एक भ्रम खड़ा हुवा कि, हमारा कर्ता कोई दूसरा है। सोई कल्पना सबको ग्रहण हुई। औ ताको खोज करने लगे। जो होय, तो पाइये। औ नहीं तो कहाँसे मिलेगा। खोजनेके हेत नाना प्रकारके कर्म किया-योग यज्ञ जप, तप आदि। जब न देखा, तब कल्पना सहित आपही ब्रह्म कहाया। श्रवण, मनन, निदिध्यासन करके साक्षात्कार जाना कि; जो ब्रह्म वेदने ठहराया, सो मैंही हूँ और दूसरा कोई नहीं। इस प्रकारसे एक चेता, एक चेतवनहारा। एक चेता, आप सहविकल्प समाधीमें ठहरा। फिर दूसरा निर्विकल्प समाधी खोजके चेतनहारके गुमसुम हुवा। परंतु गुरु कहते हैं कि; जो खोजते हो, सो उहवाँ नाहीं। जो ब्रह्म तुम खोजते हो, सो कछु वहाँ सह विकल्प समाधीमें नहीं औ निर्विकल्प समाधीमें भी नहीं। सो तो जीवका धोखा जीवमें है। गुरु कहते हैं कि, देखो! सबने जो ब्रह्मपद निश्चय किया सो कहाँ है? उसको निश्चय करनेवाला जीव तो है। निश्चय कर्ता सो अस्ति औ जो निश्चय होता है सो नास्ति। परंतु यह धोखाका पद तबही बूझनेमें आवेगा; जो मुखसे पारख जैसा कहता है, तैसा जब जीवमें प्रकाश होगा तब। ये अर्थ॥ ७९॥

शब्द ८०.

बन्दे करिले आपु निबेरा।
आपु जियत लखु आप ठौर करु। मुये कहाँ घर तेरा॥
यह अवसर नहिं चेतहु प्राणी। अन्त कोई नहीं तेरा॥
कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो। कठिन कालको घेरा॥८०॥

टीका गुरुमुख—अर्थ स्पष्ट है गुरु कहते हैं कि, नाना प्रकारके जालमें जो तू बंधमान होय रहा है, सो परखके अपना निरवार कर ले।

ये अर्थ । आपु जीयत लख और आप ठौर कर; नहीं तो मरे उपरांत तेरा घर कहाँ है ? ऐसा मानुष तन पायके जो तू नहीं चेतनेका, तो फिर अन्तमें तेरा साथी कोई नहीं । अब तूने ब्रह्म आत्मा और ईश्वर जो कल्पि-कल्पिके रक्खे हैं सो कहाँ है ? ये संपूर्ण नास्ती । कल्पना सोई कालका घेरा, ताके वश होयके तू बहुत दुख भोगेगा । इस वास्ते मिथ्या अध्यास छोड़के पारखमें थीर हो । ये अर्थ ॥ ८० ॥

शब्द ८१.

ऊतो रहु ररा ममाकी भाँति हो । सब सन्त उधारन चूनरी ॥
बालमीक बन बोइया । चुनि लीन्हा शुकदेव ॥
कर्म बिनौरा होइ रहा हो । सूत काते जैदेव ॥
तीन लोक ताना तनो है । ब्रह्मा बिष्णु महेश ॥
नाम लेत मुनि हारिया । सुरपति सकल नरेश ॥
बिष्णु जिभ्या गुण गाइया । बिनु बस्तीका देश ॥
सूने घरका पाहुना । तासों लाइनि हेत ॥
चार वेद कैंड़ा कियो । निराकार कियो राछ ॥
बिने कबीरा चूनरी । मैं नहिं बाँध लबारि ॥८१॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि; ऊतो कहिये सनकादि, बालमीकादि ररा-ममाकी भाँतिमें रहे, ररा ममाकी रटनामें रहे । ये अर्थ । सब संत उधारन चूनरी । सब संतनने संसारके उधारन हेतु एक भक्ति रूपी चूनरी बीनी, सो बड़े-बड़े समर्थनने पहिरी । प्रेम पाटका चोलना पहिर कबीरु नाच । अहो सन्तो ! देखो, ये जीवने आपै तो 'राम' ऐसा दो अक्षर कल्पा और अस्ति-भाति-प्रियरूप आत्मा ये सिद्ध किया । सो तुम परखो कि, कल्पना किनने किया ? और अस्ति-भाति-प्रियरूप कहिके आत्मा कौन होता है ? तो वही होते हैं । ये अर्थ । अस्ति कहिये स्थूल, जो नारदऋषिने बालमीकको 'राम' ऐसा दो अक्षर सुनाया और कहा-कि, जब लग मैं

लौटके न आऊँ, तब लग रामा। मारा इस प्रकारसे श्वासाके संग रटा करना। मक्र तार न्याय। जैसी मकरी तार पर चढ़ती है, उतरती है और तार टूटने नहीं पाता। तद्वत् तार टूटने नहीं पावै। ऐसा उपदेश किया, सो अस्ति सत्य जानके बालमीकने निश्चय किया औ फिर तार बाँधिके रटने लगा। रटते-रटते तार जब बंधा औ स्थूलका अभाव हुआ सोई भाति सूक्ष्म। निदिध्यास स्तब्धता, स्थूल-सूक्ष्म दोनोंका अभाव सोई प्रिय कारण। अस्ति भाति कार्य औ प्रिय कारण, दोनों का अभाव औ अपना भाव चिन्मय सोई रूप महा कारण। और जब चिन्मय ज्ञप्तीका लय हुआ औ निर्विकल्प समाधी हुई, सोई 'केवल आत्मा' ऐसा जाना। सोई अनुमान लेके नाना प्रकारकी बानी कथन किया, सोई कपास बोया। औ नाना कथा, इतिहास अंकुर निकरिके वृक्ष बढ़ा। ये अर्थ।

कवित्त—रामनाम बिज औ इतिहास सो अंकुर जामे, जैसे केवल रूपसे स्फूर्ण कहत गाई है। कथा सोई शाखा पत्र श्लोकनसे मूंद रही, जैसी अविद्या आय स्वयं चेतन पर छाई है। नाना दृष्टाँत सोई फूलन सो छाय रही, कारणके बीच जैसी सूक्ष्मता जनाई है। औ दृष्टाँत राम कीर्ति सोई फल आये, सगुन औतार सर्व स्थूलको सराही है॥ १॥

इस तरहसे बालमीकने बन बोया। फिर ज्ञान कपास अन्वय व्यतिरेक करिके शुकदेव जूने चूनी। श्रवण मनन करके वो बिनोरा रूप हो रहे। ये अर्थ। अब वो ज्ञान कपासका सूत भक्ती, सो जयदेवजूने काता। तीन लोक ज्ञान-भक्ती औ योग; ये ताना तना ब्रह्मा, विष्णु, महेशने औ नाम पाँजनी करते-करते इंद्रादि समस्त नरेश औ मुनीश सर्व हारे, जहाँ थके तहाँ विश्वरूप कहा। लक्ष करते-करते जब जब लक्ष थका तब पित्त शिरपर चढ़ा औ वायु बन्द हुवा। फिर मूर्छा आई, ताका नाम समाधी, सोई स्वरूप कहा। अथवा कोई दृष्टीसे देखने लगा, मुद्रा किया, तब आँखी पर पित्त चढ़ा। लाल, काला, पीला, हरा, सफेत

रंग नजर आया औ मग्न हुआ, तब मूर्छा आई, तहाँ स्वरूप बनाया औ कोई ज्ञान सुनि मग्न हुआ। ये अर्थ। विष्णुने कहा कि न वहाँ सूर्य, वहाँ चन्द्र है, न वहाँ अग्नि है। इंगला, पिंगला, सुषुमना आदि जगत् जहाँ नहीं, सोई परमधाम। तो जहाँ कछु नहीं सो शून्य। ये अर्थ। सोई बात सुनके शूने घरका पाहुना हुवा। ये जीव शून्यसे नेह लगाया, धोखेसे नेह लगाया, जहाँ कछु नहीं। शूने घरका पाहुना कहिये ब्रह्म। ये अर्थ। चार वेद कैंड़ा कियो। निराकार कियो राछ। चार वेद सोई काँडी लेके, निराकारकी टेक देके गुरुवा लोग चूनरी बिनते हैं। धोखेका जाल बिन-बिनके सब जीवनको बाँधते हैं लबार। गुरु कहते हैं कि-मैं तो किसीको नहीं बाँधता, सबको परखायके छुड़ावता हौं। ये अर्थ ॥ ८१ ॥

शब्द ८२.

तुम यहि बिधि समुझो लोई। गोरी मुख मंदिर बाजे ॥
एक सगुण षट चक्रहि बेधे। बिना बृषभ कोल्हू माचा ॥
ब्रह्महि पकरि अग्निमा होमै। मच्छ गगन चढ़ि गाजा ॥
नित अमावस नित ग्रहण होई। राहु ग्रासे नित दीजे ॥
सुरभी भक्षण करत वेद मुख। घन बरसै तन छीजे ॥
त्रिकुटि कुंडल मध्ये मंदिर बाजे। औघट अम्मर छीजे ॥
पुहुमीका पनिया अंमर भरिया। ई अचरज कोई बूझै ॥
कहहिं कबीर सुनो हो संतो। योगिन सिद्धि पियारी ॥
सदा रहे सुख संयम अपने। बसुधा आदि कुमारी ॥८२॥

टीका गुरुमुख—हे लोगो! तुम यही तरहसे समझो, जेहि तरहसे गोरी मुख मंदिर बाजे। गोरी कहिये भक्त सनकादि, नारदादि, मंदिर कहिये ढोल। सो ये गुरुवा लोगके मुखसे जैसी बात निकरी, तैसी तूने समझी। समझके एक सगुण भक्ती करने लगे। औ एक खटचक्र वेधके योग करने लगे। बिना वृषभ कोल्हू माचा। बिना बैल चरखा चलने

लगा। वृषभ कहिये ब्रह्मको, कोल्हू कहिये बानीको। सो ब्रह्मका तो कहूँ ठिकाना ही नहीं औ उसकी बानी तो चली। ये अर्थ। ब्रह्महि पकरि अग्निमा होमे, मच्छ गगन। चढ़ि गाजा। ब्रह्म कहिये रजोगुण, सो रजोगुणको पकड़िके योग अग्निमें होमे। औ मच्छ कहिये जीवको, सो ब्रह्मांडमें चढ़िके बोला कि, मैं ब्रह्म। ये अर्थ। नित अमावस नित ग्रहण होई, राहु ग्रासै नित दीजै। खेचरीकी दृष्टी तीन–पूर्णदृष्टि पूर्णिमा; ऊर्ध्वदृष्टी प्रतिपदा, अन्तर खेचरी अमावस। सो जब खेचरी अन्तर चढ़ी औ काली पूतरी आकाशमें बेधी, तब अन्धकार अविद्या ग्रहण होयके चेतन पर छाई। फिर विजलीसी चमकी औ तारागन की पंक्ति मालूल होयके चन्द्रार्क मण्डल प्रकाशके फिर महातेज प्रगटा। ता तेजने जीवका ग्रास किया। समाधी हुई। नेत्रपर पित्त छाया। मूर्छामें मग्न हुवा। राहु कहिये तेज, दीजै कहिये जीव। ये अर्थ। सुरभी भक्षण करत वेदमुख, घन बरसै तन छीजै। सुरभी कहिये गैया, गैया कहिये बानी, वेदमुख कहिये ब्राह्मण, ब्राह्मण कहिये ब्रह्मवेत्ता। सो बड़े-बडे सनकादि याज्ञवल्क्यादि, शुकादि जो ब्रह्मवेत्ता, भये सो सबनको बानींने भक्षण किया। अस्ति ब्रह्म, ऐसी बानी जो उठी, ताहीने सब ज्ञानीको खाया। गुरुवा लोग घन बरसने लगे, नाना प्रकारसे दृढ़ावने लगे; तामें सब जीव छीजने लगे। ये अर्थ। त्रिकुटी कुण्डल मध्ये मंदिर बाजे औ घट अम्मर छीजै। जो गुरुवा लोगोंने उपदेश किया, सो सब जगमें दृढ़ हुवा। त्रिकुटी कुण्डलीके भीतर दृष्टि फेरिके ब्रह्मांडमें ध्यान लयाया। तब अनहद नाद दश प्रकारका उठा औ नौ नाद छोड़के घंटा नादमें सुरति लगी। औ घटमें अम्मर जीव छीजने लगा, लय होने लगा। ये अर्थ। पुहुमीका पनिया अम्मर भरिया, ई अचरज कोई बूझै। पुहुमी कहिये अर्ध, सो अर्धकी श्वासा ऊर्धमें ले जायके भरी औ अचेत होय रहे। अब कहते हैं कि हम ब्रह्म हुए; ये बड़ा अचरज कोई बूझे। ये अर्थ। गुरु कहते

हैं। कि, सर्व मिथ्या धोखा कहाँ है ? ये योगी लोगोंको सिद्धि बड़ी प्यारी हुई; इस वास्ते सदा सुख संयममें रहते हैं। बहुत खाते नहीं, बहुत पीते नहीं, बहुत बोलते नहीं, बहुत सोवते नहीं, बहुत चलते नहीं, सदा सर्वकाल नासाग्र अवलोक करके मनको स्थिर करते हैं। वसुधा अहुटपीट, आदि कुमारी तुरिया, सो तुरियामें सदा रहते हैं योगी लोग, तहाँसे सब सिद्धी पावते हैं। परन्तु देहके संग सब नाश होयगी, आगे कछु रहनेका नहीं ताते सब मिथ्या धोखा। ये अर्थ। बिरह अर्थ-गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि, तुम यही विधि समुझो लोई, गोरी मुख मंदिर बाजै। देखो-जैसा गोरी कहिये स्त्री, सो स्त्रीका मुख देखके और उसकी मीठी बातें सुनके संसार सब भूल रहा, लुब्ध होय रहा है। ये अर्थ। सगुण कहिये सुन्दरता, सो कोई सुन्दरताईमें मस्त हुए औ षटचक्रमें बेधे। षटचक्र कहिये दोनों नेत्र, दोनों स्थल, मुख औ भग, ये षटचक्रमें सबै बँधे, जैसे कमलमें भँवरा बँधा। इस प्रकारसे बन्धनमें परे और बिछुरे तो प्राण जाना चाहता है। इस प्रकारसे विना बैलका कोल्हू माचा, मैथुन होने लगा। ये अर्थ। ब्रह्महि पकरि अग्निमा होमे। ब्रह्म कहिये काया, ताको पकड़ जठर अग्निमें होमे। मच्छ गगन चढ़ि गाजा। जब काम का उद्वेग खलित हुवा तब कामके वश होयके जीव अष्ट। कमल लग गया। फिर काम खलित हुआ, तब ब्रह्मांड पर चढ़ा। नित अमावस नित ग्रहण होई। इस प्रकारसे नित स्त्रीके पास आयके अन्धा होता है औ नित काम उमड़ता है औ विषय ग्रहण नित लगता है। जैसा सूर्य तो अति प्रकाशमान है; परन्तु जब ग्रहण लगता है, तब कारा होय जाता है। इस प्रकारसे जीव तो प्रकाशक चैतन्य सही; परन्तु विषयमें लपटा, तब अन्धाधुन्ध मलीन, जड़वत् नजर आता है। राहू काम ग्रास करता है जीवको औ सुरभी स्त्री भक्षण करती है कामको। औ जैसी-जैसी कामकी वर्षा होती है तैसा-तैसा तन छीजता है। फिर तन छीजते-छीजते

एक दिन मरा, तो वही गर्भवासको जाता है। त्रिकुटी कुंडल मध्ये मंदिर बाजै। त्रिकुटी कुंडल कहिये भगयंत्र, तामें मंदिर बाजे। जैसा जो जाग्रत विषय देखता है, औ सुनता है, सोई अध्यासका स्वप्न होता है, फिर स्वप्नको सुषुप्ती खाय लेती है। ता सुषुप्तीमें संपूर्ण अध्यासका बीज रहता है, तासो जाग्रति होती है। इस प्रकारसे जबलग स्थूल देह रहता है, तबलग जो कछु विषय आदि अध्यास रहता है, सो जब स्थूल छूटता है, तब अध्यासीको अध्यासरूप चोला प्राप्त होता है। कंठमें गतागत भूमिकाके ऊपर ताको नाम सूक्ष्म, सो चोला नौ तत्त्वका। शब्द, स्पर्श, रूप, रस गंध, चित्त, मन, बुद्धि औ अहंकार; ये नौतत्त्व कहिये। गंध बुद्धि पृथ्वीका अंश, रस मन पानीका अंश, अहंकार रूप अग्नीका अंश, चित्त स्पर्श वायुका अंश, शब्द अंतःकरण आकाशका अंश। पाँच ज्ञान इंद्री सहित ये लिंग देह खड़ा होता है। तेहि उपरांत अंत समयमें सुषुमना चलती है। ता सुषुमनामें सौलेष्टता भूमिका उदय होती है। सो सौलेष्टता लिंग देह सहित गतागत भूमिकाको खाती है। फिर सुषुप्ती अवस्था सहित जीवको लेके सुषुमना चली जाती है। औ ता भूमिकामें स्थूल सूक्ष्म दोनोंका बीज रहता है। सो ताको निगलके सुषुमना अन्तरालसे ले चली; जैसे गंधको लेके वायु चली जाती है। इस प्रकार फिर वो गंध पृथिवीमें लय होता है। इसी प्रकार जीव स्थूलमें समाता है। जैसा उस जीवमें बीज होता है, तैसी जगामें त्रिकुटी कुंडल मध्य मंदिर बाजता है। अर्ध मैथुन होता है। तहाँ जायके उसकी सुषुमनामें ये सुषुमना मिलती है। फिर नाद बिंदु संयुक्त होयके कला गर्भमें समाती है। औघट अम्मर छीजे। गर्भवासमें जीव छीजता है। भला ये जीवकी जाग्रति, स्वप्न दोनों अवस्था लय होती है, तब सुषुप्तीमें कछु खबर रहती है ? जो खबर नहीं रहती तो जो अध्यास करता है ताहीकी प्राप्ती कैसी होती है? ये शंका। तो जैसा नाना प्रकारका बीज पृथिवीपर

परता है; किन्तु जा भूमिकाका बीज ता भूमिकाको उड़ता जाता है, तब जामता है, नहीं तो लँवग आदि बीज कछु जामता नहीं। तैसा सुषुप्ती विषय जो जाग्रती स्वप्नका बीज रहता है। सो, कछु मालूम नहीं रहता; परंतु जब जामता है, तब मालूम होता है। जैसे सूर्यके विषय अन्धकारका अभाव; परंतु जब रात्री होती है तब मालूम होता है। इस प्रकारसे औघट अम्मर छीजे। ये अर्थ पुहुमीका पनिया अम्मर भरिया, ई अचरज कोई बूझै। पहुमीका पनिया काम, अम्मर जीव, सो जीव काममें मिश्रित होयके गर्भमें भरा। ये आश्चर्य, जो चैतन्य होयके जड़का आश्रित हुवा। ये अर्थ। कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो,योगिन सिद्धि पियारी। हे सन्तो ! पारख में कछु आवागवन नहीं ठहरता। तो सर्व मिथ्या। योगिनको सिद्धि पियारी। योगी कहिये जो काममें युक्त हैं, तिनको सिद्धि पियारी, स्त्री पियारी। ये अर्थ। सदा रहै सुख संयम अपने, वसुधा आदि कुमारी। वसुधा स्त्री, सो अपने विषयके संयममें सदा रहती है। बहुत जीवनका काम शोषन किया; परंतु तृप्ति नहीं भई। कुँवारीकी कुँवारी ही रही। ये अर्थ ॥ ८२ ॥

शब्द ८३.

भूला बे ! अहमक नादाना। जिन्ह हरदम रामहिं ना जाना ॥
बरबस आनिके गाय पछारी। गरा काटि जीव आपु लिया ॥
जीयत जीव मुर्दा करि डारे। तिसको कहत हलाल हुवा ॥
जाहि मासुको पाक कहत हो। ताकी उत्पत्ति सुन भाई ॥
रजो बीर्यसे मास उपानी। सो मास नपाकि तुम खाई ॥
अपनी देखि कहत नहिं अहमक। कहत हमारे बड़न किया ॥
उसकी खून तुम्हारी गर्दन। जिन्ह तुमको उपदेश दिया ॥
स्याही गई सफेदी आई। दिल सफेद अजहूँ न हुआ ॥
रोजा बाँग निमाज क्या कीजे। हुजरे भीतर पैठि मुवा ॥

पंडित वेद पुरान पढ़ैं सब । मुसलमान कुराना ॥
कहहिं कबीर दोउ गये नर्कमें । जिन्ह हरदम रामहिं ना जाना८३

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि, भला ये संसारके जीवोंकी भक्ती देखो । जो सब मिलि रामको खाविन्द ठहराते हैं । रामका अर्थ करते हैं कि, जो सबमें रमा, सो राम । फिर यज्ञ आदिक जब करते हैं, तब वो रामको मुश्किनसे मारके चेंदा निकारते हैं औ कोई बकरा बकरी मारके ऐसे ही काट खाते हैं । तो देखो ! इनकी अहमकताई औ नादानताई, जो सबमें रमा है, सो क्या बकरेमें नहीं ? औ तुर्कनका तरीका तो देखो ! जो कहते हैं कि, खालीक खलकमें भरा है । फिर जबरदस्ती गाय पछारी, तब क्या उसमें खालीक नहीं ? सो देखो ! खालीकका गरा काटके, मुर्दा करके खा गये औ मुँहसे कहते हैं कि, हमने हलाल किया । ये अर्थ जो कहोगे कि, खालीक सबमें है । तो कोई आपको आप मारता है ? औ आपको आप खाता है क्या ? देखो ! अहमककी बात । अरे जो माँसको पाक कहते हो, ताकी उत्पत्ति रज औ बीर्यसे होती है । कोई स्त्री रजस्वला होती है, ताके छुये स्नान करते हो । औ कुरानमें ऐसा बोलता है कि; पिसाबका छींटा लगे, तो उतनी जगह काट डारना, तब पाक होता है । तो उस पिसाबकी देह; ताको माँस तुम पीरको कैसे फातिया देते हो ? औ कैसे खाते हो ? । ये अर्थ । अपनी देखी कहते नहीं अहमक, औ कहते हैं कि, हमारे बड़ोंने योंही किया । परंतु जिनने तुमको ऐसा उपदेश दिया, तिनने आप अपना गरा कटाया है । ऐसा खून उसके शिरपर चढ़ा । स्याही गई सफेदी आई, पर अन्तः करण कछु अबहीं शुद्ध हुवा नहीं । ये अर्थ । अरे जो तुम रोजा, बाँग, निमाज करते हो, सो तो करते-करते महम्मद मर गये । उनकी स्थिति तो भई नहीं औ तुमको क्या होगी ? पंडित वेद पुराण पढ़ते हैं औ मुसलमान कुरान पढ़ते हैं । परंतु ऐसा-ऐसा कर्म करते हैं इस वास्ते नर्कको प्राप्त

भये । सर्व घटमें अपने जीव सरीखा जीव नहीं जाना, घात किया । ये अर्थ ॥ ८३ ॥

शब्द ८४.

काजी तुम कौन कितेब बखानी ?
झंखत बकत रहु निसि बासर । मति एकौ नहीं जानी ॥
शक्ति अनुमाने सुन्नति करतु हो । मैं न बदोंगा भाई ॥
जो खुदाय देरी सुन्नति करतु है । आपुहि कटि क्यों ना आई ॥
सुन्नति कराय तुरुक जो होना । औरतको क्या कहिये ॥
अर्ध शरीरी नारि बखानी । ताते हिंदू रहिये ॥
पहिरि जनेउ जो ब्राह्मण होना । मेहरी क्या पहिराया ॥
वो जन्मकी शूद्रिन परसे । तुम पाँडे क्यों खाया ॥
हिंदू तुरुक कहाँते आया । किन्ह यह राह चलाया ॥
दिलमें खोजि देखु खोजादे । बिहिस्त कहाँते आया ॥
कहहिं कबीर सुनो हो संतो । जोर करतु है भाई ॥
कबीरन ओट रामकी पकरी । अंत चले पछताई ॥ ८४ ॥

टीका गुरुमुख—अर्थ स्पष्ट है । कहहिं कबीर सुनो हो संतो । जोर करतु है भाई । कबीरन ओट रामकी पकरी, अन्त चले पछताई । योग, यज्ञ, जप, तप, जाती, कुल वर्ण आश्रम सर्व मिथ्या, विचारमें कछु ठहरता नहीं । परंतु जोर करतु हैं भाई । जबरदस्ती करके ठहराते हैं, बिना विचारसे भाई । कबीरन कहिये जीव; सो जीवोंने आसरा राम का पकड़ा । सो नास्ति धोखा, कबहूँ अस्ति हुआ नहीं है । ये अर्थ ॥ ८४ ॥

शब्द ८५.

भूला लोग कहै घर मेरा ।
जा घरमें तू भूला डोले । सो घर नाहीं तेरा ॥
हाथी घोड़ा बैल बाहना । संग्रह कियो घनेरा ॥

बस्तीमासे दियो खदेरा। जंगल कियो बसेरा॥
गाँठि बाँधि खर्च नहिं पठयो। बहुरि न कीयो फेरा॥
बीबी बाहर हरम महल मैं। बीच मियाँका डेरा॥
नौ मन सूत अरुझि नहिं सुरझै। जन्म जन्म उरझेरा॥
कहहिं कबीर सुनो हो संतो। यह पदका करहु निबेरा॥८९॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि, भूला लोग कहैं घर मेरा। भूला लगे-जो माटी, पानी, काष्ठ, पषानका घर बनाया; ताको कहते हैं कि, घर मेरा। अरे जा घरमें तू भूला डोलता है, सो देह भी तो तेरी है। वो भी तो पाँच तत्त्वोंका, है उसमें तो भी तेरा क्या है ? जब देह तेरी ना ठहरी, तो देह सम्बन्धी लोग तेरे कब होंगे ? तो मिथ्या जालमें फँसा। ये अर्थ। हाथी, घोड़ा, बैल, वाहन, रथादि ये सब स्थूलके योगसे संग्रह किया। परन्तु जब चोला छूटा, तब जहाँके तहाँ रह गये। तब जीवको कहाँ ठिकाना है ? बहु भ्रममें पड़ा। सो फिर ये घरको फिकिर छोड़ा औ दूसरा घर बनाया। कदही ये घरकी खबर भी नहीं लेता औ गाँठीमें बाँधके खर्चा भी नहीं भेजता पत्र भी नहीं भेजता। ये सब धोखेका जाल है आखिर तू छोड़ देयगा। फिर अध्यासके वश तेरेको बड़ा दुःख होयगा। सो तू आगे ये क्यों नहीं छोड़ता। ये अर्थ। बीबी बाहर हरम महलमें, बीच मियाँका डेरा। बीबी कहिये अपनी सुरत, हरम कहिये साहबकी सुरत बानी। सो सब वेद किताबकी बानी घटमें पैठी, तब अपनी सुरतको बाहर निकारा औ ता बानीके बीच घर किया, स्थिति की ये अर्थ। नौ मन सूत अरुझि नहिं सरुझा। नौ मन कहिये लिंग देह नौ तत्त्वोंका, ताकी बासनामें बहुत अरुझा, झीनी मायासे कोई छूटने नहीं पाता। तीर्थ, व्रत, होम, हवन, यज्ञ, दान, पुण्य, संध्या, ये बातनमें सूत जीव अरुझा, फिर सरुझने नहीं पाया। जब-जब जन्म धारण किया, तब-तब परपंच विषयमें औ गुरुवा लोगकी बानी विषयमें अरुझ रहा। सो गुरु कहते हैं कि, आवागवनका

कारण बानी औ विषय अध्यास है । सो ता पदका निबेरा करो औ पारख पर ठहरो । ये अर्थ ॥ ८५ ॥

शब्द ८६.

कबीरा तेरो घर कंदला में । यह जग रहत भुलाना ॥
गुरुकी कही करत नहिं कोई । अमहल महल दिवाना ॥
सकल ब्रह्ममों हंस कबीरा । कागन चोंच पसारा ॥
मन्मथ कर्म धरे सब देही । नाद बिंद बिस्तारा ॥
सकल कबीरा बोले बानी । पानी में घर छाया ॥
अनन्त लूट होत घट भीतर । घटका मर्म न पाया ॥
कामिनिरूपी सकल कबीरा । मृगा चरिंदा होई ॥
बड़-बड़ ज्ञानी मुनिवर थाके । पकरि सके नहिं कोई ॥
ब्रह्मा--वरुण कुबेर पुरन्दर । पीपा औ प्रहलादा ॥
हरणाकुश नख वोद्र विदारा । तिन्हको काल न राखा ॥
गोरख ऐसो दत्त दिगम्बर । नामदेव जैदेव दासा ॥
तिनकी खबर कहत नहिं कोई । उन कहाँ कियो है बासा ॥
चौपर खेल होत घट भीतर । जन्मका पासा डारा ॥
दम दमकी कोई खबरि न जाने । कोइ कै न सकै निरुवारा ॥
चारिदग महि मंडल रच्यो है । रूम शाम बिच डिल्ली ॥
तेहि ऊपर कछु अजब तमाशा । मारो है यम किल्ली ॥
सकल अवतार जाके माहि मण्डल। अनन्त खड़ा कर जोरे ॥
अदबुद अगम औगाह रच्यो है । ई सब शोभा तेरे ॥
सकल कबीरा बोले बीरा । अजहूँ हो हुशियारा ॥
कहहिं कबिर गुरु सिकली दर्पण । हरदम करहिं पुकारा ॥८६॥

टीका गुरुमुख- कबीरा कहिये जीवको, कंदला कहिये गंदला, चहला कीचड़, चहला कहिये जड़-चैतन्य मिलि एक ब्रह्म, कीचड़ कहिये काम, सो हे जीव ! तेरा घर ब्रह्ममें हुवा, वेदके प्रमाणसे; परन्तु

ब्रह्म तो देहका अनुमान, सो जब देह छूटेगी, तब देहका अनुमान कहाँ रहेगा ? वो भी छूट जायगा। तब जीव कामकंदलामें प्राप्त होयगा। तो हे जीव! तेरा घर बानीमें औ बानीके अध्यासमें, काममें, स्त्रीमें। ये अर्थ। हे संतो! ये संसार मिथ्या धोखेके भरोसे भूला रहता है। जो गुरुवा लोगोंने कही, सो संसारमें निश्चय भई। औ यथार्थ पारख कोई करता नहीं। अहमल मलह दिवाना। जो कछु महल नहीं, सो अमहल मिथ्या धोखा है, तामें सब संसार दिवाना हुवा। ये अर्थ। सकल ब्रह्ममें हंस कबीरा, कागन चोंच पसारा। सकल जगत् ब्रह्म, मैं अखंड अद्वैत एक रस। एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म। ऐसा कहिये कागन चोंच पसारा। गुरुवा लोगोंने मुख पसारके कहा। ये अर्थ। मनमथ कर्म धरे सब देही। देही कहिये जीवको, जो देहका रहने-वाला, मनमथ कर्म कहिये ब्रह्मको, जो मनसे कल्पना भई, कि, कोई, एक ब्रह्म है। सोई ब्रह्म सर्व जीवने धारण किया और बोलने लगे-'अहं ब्रह्म'। औ नाद बिंद दो प्रकारकी रचना चलाई। एक गृहस्थी बिंदसे पैदा होने लगे औ एक विरक्त चेला चाटी नादसे पैदा होने लगे। ये दो प्रकारका विस्तार चलाया। ये अर्थ। सकल कबीरा बोले बानी, पानीमें घर छाया। सकल जगत् ब्रह्मरूप है; ऐसी जो बानी वेदने बोली-'सर्वं खल्विदं ब्रह्म,' सो बानीमें उन घर छाया औ अनंत लूट घट भीतर होने लगी। अनंत कहिये जाकी अन्त नहीं, सुर नर मुनी किसीको प्राप्ती नहीं भई। सो मिथ्या धोखाकी घट--घमें लूट होने लगी। जीवनको भ्रमाया। ये अर्थ। परन्तु किसीने घटका मर्म पाया नहीं कि, एक ब्रह्म औ आत्मा औ नाना बानी, ये घटसे उठी, फिर घट बिनसे कहाँ जायगी ? देहके संग सब नाश होयगी। ये मिथ्या धोखेमें मैं क्यों पड़ा हूँ ? ऐसा न जाना। ये अर्थ। कामिनी रूपी सकल कबीरा, मृगा चरिन्दा होई। सकल कबीरा कहिये जीवको, सो सब कामिनी रूप भये। औ एक पुरुष अनुमानसे खड़ा किया 'सच्चिदानंद' ताकी विरह बढ़ा कि, सच्चिदानंदका अनुभव हमको कैसा

प्राप्त होयगा ? सो मृगा चरिन्दा होई । मृगा कहिये मनको, सो अब चरिन्दा हुवा कि, नाना बानीमें चरने लगा औ नाना भाव उठाने लगा । परमात्माको एक कहना, तो कहाँ है ? नजर नहीं आता, औ अनेक कहिये तो नाश होता है । ऐसा जानके परम बेहाल भये कि, अब परमात्माका निश्चय कैसे कैसे करना ? । सो निश्चयके हेतु दिवाने भये औ मनके पीछे लगे कि, किस तरहसे यह मनको थिर करना ? । सो बड़े-बड़े ज्ञानी, मुनिजन थके; परन्तु मनको कोई भी पकड़ सका नहीं । ये अर्थ । ब्रह्मा, वरुण, कुबेर, इंद्र, पीपा, प्रहलाद औ नरसिंह भी, येते महान भये; परन्तु सब मनहीके रंगमें दिवाने भये । मन काहूसे थिर न हुवा । जो मनसे कल्पना किया, ताहीमें नाना प्रकारसे मन लगाया, । फिर जब भावना परिपक्क हुई, तब उस मनका स्वरूप सहचैतन्य खड़ा हुवा; ताहीको भगवान् करके मानते भये । फिर उसीके रंगमें दिवाने हुये औ उस रूपसे सिद्धांत पायके संसारको भ्रमाने लगे; परन्तु 'ये मनका स्वरूप' ऐसा समझनेमें नहीं आया । तब मनहीकी सेवामें नाश भये, तो उनकी स्थिति काहेकी ? जब स्थिति नहीं भई, तो फिर कहाँ रहेंगे ? गर्भवासको प्राप्त होयेंगे । प्रहलादके मनका जो रूप बना, सोई नरसिंह, हिरण्यकश्यपुका पेट फारा औ जगमें विख्यात हुवा । फिर कहाँ गया ? उसका मन उसीमें समाया औ उसको भी मनने रक्खा नहीं, नाश किया । ये अर्थ । गोरख ऐसो दत्त दिगम्बर औ नामदेव, जयदेव आदि दास हुये; परन्तु इनकी खबर कोई कहता नहीं कि, इन सबने कहाँ बास किया ? जब चोला छूटा, तब ये कहाँ रहे ? सो इनकी खबर कोई नहीं कहता । भला जो कोई ऐसा कहै कि, ब्रह्ममें मिले । तो ब्रह्म कहाँ है ? वो तो देह सम्बंधी अध्यास देहके संग रह गया । अथवा कोई कहेगा कि, ब्रह्म कहीं देह सम्बंधी होता है ? वो तो देहातीत है । तो देह छोड़के कोई ब्रह्म हुवा भी नहीं औ ब्रह्म कहा भी नहीं । तो देह संयुक्त होयके देहातीत भी बोला तो देहका अध्यास हुवा । भला जो बानीके अनुमानसे ब्रह्म

माना जाय; तो बानी ऐसी बोलती है कि, सम्पूर्ण जगत ब्रह्मरूप है। तो भला जगतरूप रहा तो आवागमनमें रहा कि, नहीं ? तो गर्भवासमें बास भया। ये अर्थ। चौपर खेल होत घट भीतर, जन्मका पासा डारा। चौपर कहिये चित्त, मन, बुद्धि, हंकार। सो नाना प्रकारकी बानी सुनके मनने संकल्प किया कि, भाई भगवत् गुणानुवाद सुनते जाना। जैसे-जैसे बड़े-बड़े चलते गये, तैसे-तैसे चलना। तब नाना इतिहास पुराण सुना। तामें नाना प्रकारकी उपासनाका माहात्म्य औ नाना प्रकारके योगका माहात्म्य औ नाना कर्मका माहात्म्य औ ज्ञानका माहात्म्य कहीं कहता है, सो सुनके घटमें संकल्प बिकल्प होने लगा।

चौपदी—कहीं कहत विष्णुसे न देव कोई और दूजा। जगके उधार हेत लीला जिन धारी है। कोई कहत शंकरसे, भोला न और कोई। मुक्ति और संपतिको, दाता त्रिपुरारी है। कहीं कहै उत्पत्ति स्थिति, लयको कारण हैं भान। तीन लोक माँझ जान, जाकी उजियारी है॥ कहीं तो गणेशजीकी, महिमा अति देखियत। कहीं शक्ती आगे सब, देवता बिचारी है॥ पूरण कहत देखो, बानी कृपाण पैनी। छेद जात वार पार, जैसी कटारी है॥ १॥

इस प्रकारसे नाना बानीके संकल्प विकल्प भये। फिर जो जिसे प्यारी लगी, तहाँका अनुसंधान बाँधा चित्तने। फिर बुद्धीसे निश्चय करके उस कर्तूतका अभिमान किया, सो अहंकार। फिर देवताका अभिमानी, कोई शास्त्रका अभिमानी, कोई देहका अभिमानी, कोई ज्ञानका अभिमानी। ज्ञानका अभिमानी चित्त और उपासनाका अभिमानी बुद्धि और शास्त्रका अभिमानी मन और देहका अभिमानी अहंकार। इस प्रकारसे चौपर खेल घट भीतर होने लगा, तातें जन्मका पासा डारने लगे। जो कछु कर्तव्य करते हैं, सो सब बंधन होके जन्मको लाता है। ये अर्थ। परन्तु दम-दमकी खबर कोई

जानता नहीं कि, हम पल-पल ध्यान करते हैं औ पल-पल स्मरण करते हैं, सो किसका? ये संपूर्ण हमारा बंधन है। ऐसा निर्वारा कोई पारख बिना कर नहीं सकते। ये अर्थ। चारि द्रिग महि मंडल रचो है, रूम शाम बिच डिल्ली। चार द्रिग कहिये चार किल्ला, जीवनके बंधन हेतु ब्रह्मादि गुरुवा लोगोंने रचा, तामें सर्व जीव कैद भये। चार द्रिग कहिये चार वेद औ चार द्रिग कहिये त्रिकुटी, श्रीहट, गोल्लाट, औटपीट औ चार द्रिग चार वर्ण औ चार द्रिग चार अवस्था औ चार द्रिग ज्ञान, भक्ति, योग, उपासना, कर्म। इस प्रकार से पृथ्वीपर गुरुवा लोगोंने बंदीखाना किया। सो ताही बंदी खानेमें जीव सब बंध भये। स्वतः प्रकाश प्रथमें अनुमाना, सो बंधनमें परे औ ब्रह्मज्ञानी भये। दूजे दुतिया मालिक अनुमान करके दास कहाये,। सो भी भक्तीकोटमें बन्ध भये। तीसरा योग बंधनमें परे, सो योगको साधके सिद्ध कहाये, योगी कहाये। चौथे कर्मके बन्दीखानामें परे। होम, हवन, तीर्थ, व्रत, नेम आचार करने लगे। लोक बासका विचार किया। ये अर्थ। रूम शाम बिच डिल्ली। रूम कहिये पश्चिम, शाम कहिये पूरब, पश्चिम कहिये चन्द्र, पूरब कहिये सूर्य। इस प्रकारसे इंगला-पिंगला दोनोंके बीचमें सुषुमना; तेहि सुषुमनाके ऊपर कछु अजब तमाशा, जो परम आनंद ब्रह्मकी प्राप्ती है अकह वस्तु, कछु कहनेमें नहीं आवती। ऐसा कहिके जम कहिये बन्धन करनेवाले गुरुवा लोगोंने किल्ली मारा कि, सकल औतार जाके महिमंडलपर भये, राम-कृष्णादि; सो परमात्मा। शिखा मध्ये व्यवस्थितः। ताहिकी स्तुति वेद गावता है औ अनंत ऋषी मुनि ताहीके आगे कर जोड़े खड़े हैं। ऐसा कहिके समस्त जगत फाँसेमें पड़े; परंतु ई सब शोभा तेरे। गुरु कहते हैं कि, हे जीव! तेरे बिना कछु हुवा नहीं। अरे इंगला पिंगला एक किया, सो तूही। सुषुमनामें लीन होयके ब्रह्मांडमें गया, सो तूही। और कोई परमात्मा है, ऐसी कल्पना किया सो तूही। औ सुषुमनामें आनंद पैदा, किया, सो तूही। औ आनंदमें

मग्न होयके ब्रह्म कहाया, सो भी तू। धोखा उठाना औ धोखेमें मिलना, ये सब शोभा तेरे। तेरे ऊपर कोई औ मालिक नहीं। ये अर्थ। तू परखके धोखा छोड़, पारख तेरा स्वरूप है। सो तू थीर हो। सकल कबीरा बोलै बीरा। सकल कबीरा कहिये गुरुवा लोग जो कछु बोलते हैं, सो सब धोखा। हे भाई जीव! अब भी हुशियार हो, नहीं तो नाहक धोखेमें मारा जायगा। ये अर्थ। अरे जो-जो तू मानेगा औ जो-जो तू कहेगा, सो सब तेरा अनुमान, कहाँ है? मिथ्या धोखा। हे जीव! गुरु-सिकली दर्पन। गुरु कहिये पारख, जासे संपूर्ण धोखा गाफिली परखनेमें आवै औ संपूर्ण बन्धनसे जीव छूटै, सुखी होय, रहित होय सोई रहित पद। ये अर्थ। सो हरदम जा घटमें पारख प्राप्त भया, ता घटमें हरदम, हरवक्त पुकारा करते हैं; जाते जीवको पारख प्राप्त होय। औ पारख तो सदा अबिनाशी स्थिर पद। युग-युग भूल छुड़ाते हैं। ये अर्थ॥ ८६॥

शब्द ८७.

कबीरा तेरो बन कंदला मैं। मानु अहेरा खेले॥
बफुवारी आनन्द मृगा। रुचि-रुचि शर मेले॥
चेतत रावल पावन खेड़ा। सहजे मूल बाँधे॥
ध्यान धनुष ज्ञान बाण। योगेश्वर साधे॥
षट चक्र बेधि कवल बेधि। जाय उजियारी कीन्हा॥
काम क्रोध लोभ मोह। हाँकि सावज दीन्हा॥
गगन मध्ये रोकिन द्वारा। जहाँ दिवस नहिं राती॥
दास कबीरा जाय पहूँचे। बिछुरे संग साथी॥ ८७॥

टीका गुरुमुख—कबीरा कहिये जीवको, बन कहिये बानीको, बन कहिये संसारको। सो गुरु कहते हैं कि, हे जीव! तेरी बानी सब संसारसे पैदा भई है। ब्रह्म आत्मा निरक्षर औ अनेक उपासना, वेद आदिक जेती बानी है, सो सब संसारमें से पैदा भई, जीवकी कल्पनासे।

और बानी कछु स्वर्गसे भी नहीं गिरी, और बानीका कछु झाड़ भी नहीं उगा । तो तू देख! ये बानी संसारसे ही पैदा भई और संसारमें ही रही । कंदला कहिये संसार । ये अर्थ । परंतु वह बानीके अनुमानसे जो माना कि, कोई ब्रह्म है । कोहं ब्रह्म अथवा मैं ही ब्रह्म हौं । सोहं ब्रह्म, या कोहं सोहं छोड़के । सर्वात्मा समं ब्रह्म; सोई अध्यास शिकार खेलता है; अनुमानमें डारता है । अरे तेरी कल्पना तेरा नाश करती है । जो तू आप अपनेको कल्पिके बिसारके ब्रह्म अथवा किसीका गुलाम बनता है; ताते तेरी भूमिका तेरेसे छूट जाती है, सो तू चौरासी भ्रमता है । ताते संपूर्ण अध्यासको परख औ छोड़, मिथ्या धोखाको पारख तेरी भूमिका है, सो ताको छोड़ा औ बहा । ये अर्थ बफुवारी आनंद मृगा । बफुवारी संसार, बफुवारी बानी, आनन्द मृगा मन, आनंद मृगा ब्रह्मज्ञानी । सो जो मन संसारमें आनंद हो रहा है, बानीमें आनन्द हो रहा है, सो ब्रह्मज्ञानी रुचि-रुचि शर मेले, रुचि-रुचिके बानीमें दृढ़ करने लगे । ये अर्थ । चेतत रावल पावन खेड़ा । रावल कहिये जीवको, सो सुनि सुनिके जैसा गुरुवा लोग समझाने, लगे, तैसा ये जीव समझने लगा, अपनी देह पावन करनेके वास्ते । ये अर्थ । सो सहजै मूल बंध करके ध्यान धनुष, करने लगे । धनुष ध्यान कहिये खेचरी । जैसे कमानके तिल्लाको खैंचते हैं, तैसी आखें ऊपरको खैंचीं ॥

चौतुक-भौंहैं कमान बीच, आँखि दोउबान लाय नासिका निशान देखि, ऍंच मेरे भाई । कड़की कमान जैसी बिजलीसी चमक भई तारन सो टूटै तेज, बाढ़ घटा छाई । तेज में सुतेज देखो, कोटि भानसम प्रकाश, वृत्ती सब थकित भई सूक नजर आई ॥ ताहि निशान माँझ, लक्ष गाँसी जाय लगी पूर्णानंद प्रगट भयो, आपै आप जाई ॥ १ ॥

इस प्रकारसे लक्ष गाँसी धनुष ध्यानमें जब लगी, तब मूर्छा आई; यही ब्रह्म ध्यान योगेश्वर साधे । ये अर्थ । षट चक्र बेधि कवल वेधि-

जाय उजियारी कीन्हा । षट चक्र कहिये मूलाधार गुदाचक्र, चतुर्दल कमल, ताको बेधन किया । प्रथम गणेश क्रिया करके गुदाको साफ किया । ता उपराँत गुदासे पानी खैंचने लगा । जब पानी चढ़ने लगा, फिर पीछे छोड़ने लगा । ताको बस्ती क्रिया कहिये । तो बस्ती क्रिया जब पूरी भई, तब पवन चढ़ाने लगा औ गुदाचक्र बेधा । ता उपराँत स्वाधिष्ठान चक्र, लिंग भूमी पेडु पर छौ दल कमल, ताको बेधने लगा । सो गज क्रिया करने लगा । द्वादश अंगुलका गज बनाया औ लिंगमें चलाया । तासे लिंगद्वार साफ किया । फिर लिंगसे दूध ऐंचने लगा । जब शहद ऐंचा, तब गज क्रिया सिद्ध हुई । फिर लिंगसे वायु ऐंचके स्वाधिष्ठान चक्र बेधा औ अपानमें समान मिलाया । तब धोती क्रिया करने लगा, मनिपूर चक्र बेधनेके वास्ते । मनिपूरचक्र नाभिस्थानमें दश दल कमल । सो दो अंगुल चौड़ी औ नौ हाथ लम्बी धोती लीलना, फिर निकारके मैल धोय डारना औ फिर लीलना । ऐसी तीनबार भई, तब धोती क्रिया सिद्ध भई । तब नाभीसे पवन उठायके मनिपूरचक्र बेधा । फिर अपान और समान दोनोंमें प्राणमें मिलाना औ अनहदचक्र बेधना । अनहदचक्र हृदय स्थान, द्वादश दल कमल । सो कुंजर क्रिया करना—प्रातः समय खूब पानी पीना औ निकारना । फिर पीना, फिर निकार डारना, त्रिबार । तदनन्तर एक सवा हाथका दातुन बनाना रस्सीकी, ताको चलाना औ पानी पी-पी छोड़ते जाना, तब कुञ्जर क्रिया हुई । तब वायु उठाना औ अनहदचक्र बेधना । प्राण, अपान औ समान तीनोंको लाके उदानमें, कंठमें मिलाना । सो कंठमें विशुद्धीचक्र, सोलह दल कमल तहाँ लम्बीका योग करना, अहार दूध करना, बहुत बोलना नहीं । जिभ्याके तरेकी रग मसका औ सेंधौसे रगड़ना औ प्रातः समय जिभ्या दोहन करना । इस यतनसे जिभ्या बढ़ायके ऊर्ध्व द्वारमें लगाना औ गजरमें अमृत चूता है, ताको पान करना । जब अमृत

पान किया, तब देह जागी औ लंबिका योग हुवा । फिर विशुद्धी-चक्र बेधा । तदनंतर त्रिकुटी स्थानमें अग्निचक्र, दो दल कमल, तहाँ नेती क्रिया करना । नाकमें बत्ती चलायके धोना, फिर उदान वायुको जीतके प्राणायाम करना । कंठसे वायु उठाना औ विशुद्धी चक्र बेधके अग्निचक्रमें वायु जब आवे, तब जिभ्याको लेजायके ऊर्ध्व द्वारमें लगाय देना । ऊर्ध्व द्वार बंद करके अग्निचक्र बेधके जाय उजियारी कीन्हा । ब्रह्मांडमें श्वास लय हुवा कुम्भक होयके, तब शून्य होय गया । काम, क्रोध, लोभ, मोह, ये सब सावज हाँकि देने ब्रह्मांड वास किया । गगन मध्ये श्वास चढ़ायके ऊर्ध्व द्वार रोका । जहाँ दिवस नहिं राती । दिवस सूर्य औ राति चंद्र, ये दोनों जहाँ नहीं, तहाँ सुषुमना जाय ब्रह्मांडमें भेदी । इस प्रकारसे दास कबीरा जाय पहुँचे, योगी लोग जाय पहुँचे ब्रह्मांडमें । औ संग साथी चित, मन, बुद्धि, अहंकार आदि जेते संग साथी थे, सो सब बिछुरे और निर्विकल्प हुवा, अंधाधुंधमें परा बानी सुनके । परंतु जब चोला छूटेगा, तब योग औ बानी औ समाधी कहाँ रहेगी ? सब ही नाश होयगी । अरे तूने माना, सोई तेरा काल तेरेको खाता है औ फिर गर्भवासको प्राप्त करता है । सो तू कसर परखके छोड़ दे औ पारखपर थीर हो । ये समस्त तेरी कल्पना । ये अर्थ ॥ ८७ ॥

शब्द ८८.

सावज न होई भाई सावज न होई । वाकी मासु भखे सब कोई ॥
सावज एक सकल संसारा । अविगति वाकी बाता ॥
पेट फाड़ि जो देखिये रे भाई । आहि करेज न आँता ॥
ऐसी वाकी मासु रे भाई । पल-पल मासु बिकाई ॥
हाड़--गोड़ लै घूर पवारिनि । आगि धूवाँ नहिं खाई ॥
शिर सींगी किछुवो नहिं वाके । पूछ कहाँ वै पावै ॥
सब पंडित मिलि धन्धे परिया । कबीरा बनौरी गावै ॥ ८८ ॥

टीका गुरुमुख–सावज न होई भाई । सावज न होई । सावज कहिये मुर्दा औ मासु कहिये बानी, औ मुर्दा कहिये ब्रह्म, ब्रह्म कहिये भ्रम, भ्रम कहिये जो वस्तुता कछु नहीं ।

सवैया चौबोला–रूप न रेख अदेख न देख, सबै सब भेख न एकौ जाने । अज्ञान न ज्ञान अथान न थान, अमान न मान जो वेद बखाने । जैसेको तैसा रहै भ्रम ऐसा, सो ताहिको आतम निश्चय माने । कारण कारज जहाँ नहीं सोई, पूरण धोख महा भ्रम साने ॥ १ ॥

इस प्रकारसे जो निश्चय करते हैं, सो ब्रह्म कछु नहीं । जाकी बानी सब कोई पढ़ते हैं औ जाको 'महावाक्य' ऐसा भाखते हैं, सो मिथ्या धोखा । ये अर्थ । सावज एक सकल संसारा, अविगति वाकी बाता । ऐसा ब्रह्म एक संसारने निर्माण किया बानीके अनुमानसे; परंतु पेट फारि जो देखिये रे भाई ! उस ब्रह्मको जबलग गुम सुम रहने देव, तबलग अच्छा औ जो विवरण निर्णय करके देखने जावे, तो कछु वस्तु ठहरता नहीं । औ पूछो कि, जीवको छोड़के ब्रह्म कैसा है ? उसकी उत्पत्ति स्थिति कछु बताव, तो दाँत निपोर देते हैं । कछु कहा ही नहीं जाता । ये अर्थ । करेज कहिये जाकर यह सृष्टि, सो ईश्वर और आँता कहिये आत्मा । सो ना कहूँ ईश्वर, ना कहूँ आत्मा है । एक जीव है । ये अर्थ । परंतु ऐसी उसकी बानी है, जो पल-पल संसारमें बिक रही है । ब्रह्मार्पण कहिके दानी दान देते हैं औ भिक्षुक तैसा ही कहके लेते हैं । बारंबार ईश्वरका स्मरण होता है । ये अर्थ । हाड़-गोड़ लै घूर पँवारिनि, आगि धुवाँ नहिं खाई । हाड़ कहिये पर्वत आदि अचर औ गोड़ कहिये चर पशु-पक्षी-मानुष आदि घूर कहिये आत्मा । सो चराचर जगत् संपूर्ण लेके आत्मामें डारे । आत्माको अधिष्ठान बनाया औ ज्ञान अग्निसे सब चराचर कचरा जराया । सो कहीं आगि भी लगी नहीं औ धुवाँ भी निकला नहीं; जैसाका तैसा ही रहा । तो जैसा कोई बावरा गाफिल पहाड़की सैल

करने गया, तो महा आरण्यमें जाय फँसा औ रास्ता भूल गया। सो बनमें घबराया औ नाना ब्याघ्र, रीछ औ सर्प आदिक भय मालूम भया, सो भागने लगा। जहाँ-जहाँ भागा तहाँ-तहाँ धक्का खाया, ठोकर खाया औ झाड़ीमें अरुझा। ब्याघ्र आदि जन्तुनने घेरा, तब 'खाविंद राजा राम' ऐसा बहुत गोहराया। जब कोई नजर नहीं आया, तब अपनी अनुमानसे आँख मूँद कर एक अनुमानकी बड़ी अग्नि पैदा किया। तब अनुमानसे मालूम हुवा कि; बन जर गया। औ जब आँख खोलके देखा, तब न कहूँ आग लगी, न कहूँ धुवाँ हुवा। ऐसा ब्रह्मज्ञानिनका विचार, जो अपने अनुमानसे जगत् चराचरका नाश करते हैं, एकान्तिक प्रलय बनाते हैं। परन्तु अनुमानकी अग्नीसे कहूँ पर्वत जरते हैं ? मिथ्या धोखा। ये अर्थ। अरे शिर सींगी जीवरूप, वह कछु है नहीं; ताको तुम सब पूछते फिरते हो। तो जो कछु है नहीं, सो कहाँसे पायेगा ?। अरे ब्रह्मादि सब पंडित धंधेमें परिया, कल्पना करके अनुमानमें परे। तिनकी बनौरी बानी कबीरा जीव गाता है। मिथ्या धोखामें बंधमान होय रहा; बिना पारख। ये अर्थ ॥ ८८ ॥

शब्द ८९.

सुभागे केहि कारण लोभ लागे। रतन जन्म खोयो ॥
पुर्बल जन्म भूमि कारण। बीज काहेक बोयो ॥
बुन्दसे जिन्ह पिंड संजोयो। अग्नी कुंड रहाया ॥
जब दश माश माता के गर्भे। बहुरी लागल माया ॥
बारहुते पुनि वृद्ध हुवा। होनहार सो हूवा ॥
जब यम अइहैं बाँधि चलै हैं। नैनन भरी-भरि रोया ॥
जीवनकी जनि आसा राखो। काल धरे हैं श्वासा ॥
बाजी है संसार कबीरा। चित चेति डारो फाँसा ॥८९॥

टीका गुरुमुख–सुभागे कहिये जीवको, लोभ कहिये धोखा, धोखा कहिये स्वर्ग आदि प्राप्ती, अर्थ-धर्म-काम-मोक्ष आदि, पुण्य आदि, द्रव्य

आदिक लोभ केही कारण तोहि लागा ? अरे जेता तेरा लोभ, तेता संपूर्ण तेरेको बन्धन है। सो बन्धनमें तू नाहक बंधा और रत्न जन्म खोया, मानुष जन्म खोया। पूर्बल जन्म भूमि कहिये ब्रह्म, निर्विकल्प अधिष्ठान;सोई तो सब संकल्प विकल्प जगत्का कारण है।सो बीज काहेको बोया ? जो बीजसे तू नानात्व विकारको भया, सो ब्रह्म औ आत्मा तू क्यों बनता है ? बुन्दसे जिन पिंड संजायो, अग्निकुंड रहाया। बुन्द कहिये स्फुर्ण, सो जो ऐसा आत्मा है कि, जाके स्फुर्णसे जगत् निर्माण हुवा; सोई संपूर्ण जगत्में रहा। जब दशमास माताके गर्भे। दश कहिये चार वेद छौ शास्त्र, मास कहिये बानी, माता कहिये माया माया कहिये काया। सो कायामें होयके चार वेद, छौ शास्त्र सब कल्पना किया। वो सब कल्पना इसीको बंधन हुई। ये अर्थ। बारहुते पुनि वृद्ध हुवा। बार कहिये जीवको औ वृद्ध कहिये ब्रह्मको। सो जीवसे ब्रह्म हुवा। होनहार सो हुवा। जो ब्रह्म होनेकी चाह थी, सो नाना प्रकाके बिचार करके जब थका, तब वेद श्रुतिके प्रमाणसे आपै ब्रह्म बना; परंतु जब चोला छूटेगा तब कहाँ रहेगा ? अरे अध्यासमें बंधा गर्भवासको चला जायगा। तब यम गुरुवा लोग कछु छुड़ानेको नहीं आनेका। जो बंधन देई, सोई यम। ये अर्थ। अरे जीव ! जीवनकी आशा जनि रक्खो, काल धरे हैं श्वासा ! जिन्ह-जिन्ह श्वासा ब्रह्मांडमें धारण किया, सो भी मर गये। तुम जीवनेकी आशा मत रक्खो, नहीं तो गाफिलीमें मरोगे। औ नैन भार-भारि जो ब्रह्म औ जगत् देखते थे, सो छूट जायगा। पुनि यह गर्भवासको प्राप्त होयगा, तब रोवेगा। अरे संपूर्ण संसारमें जो गुरुवा लोगोंने रची है, सो बानी इन्द्रजाल है। हे जीव ! तू चैतन्य है, जाननेवाला है। तू जानिके सब फाँस डारदे औ पारख तेरा रूप है, सो पारख पर तू थिर हो। ब्रह्म-जगत् औ आत्मा, ये संपूर्ण तेरेको फँसानेका फाँसा है। सो तू जान। जो तू निश्चय करेगा, सोई तेरेको फाँसा। ये अर्थ। विरह अर्थ—सुभागे तेरेको स्त्री, पुत्र,

घर, धनादि लोभ काहे लगा ? अरे लोभमें तूने रतन जन्म, मानुष जन्म क्यों खोया ? औ पूर्बल जन्म भूमि कहिये स्त्री, जो पहिले स्त्रीसे पैदा भया औ पैदाइशका कारण स्त्री है। जो स्त्री न होय, तब सब पैदा कहाँसे होय ? ऐसा उत्पत्तिका कारण स्त्री; तामें जायके फिर बीज काहेको बोया ? अरे तूने अपनी मायके पेटसे पैदा होके क्या किया ? नाना प्रकारके दुःखहीको प्राप्त हुवा । अब बीज बोयके और जीवको दुःख क्यों दिया ? हे सन्तों ! देखो, जीवकी बाजी, जो बुन्द से पिंड साबुत करता है औ अग्निकुंड गर्भवासमें रहता है। जीव ही मैथुन करता है औ जीव ही गर्भवास करता है । जब दशमास माताके गर्भमें रहता है, फिर मूत्रद्वारा होय बाहर आया । कछु दिन अज्ञानताईमें रहके गवाँया औ कछु दिन खेलमें गवाँया, फिर स्त्रीमें जाय लगा । सो उसीके मोहमें लड़काईसे बुड्ढा हुवा । विषय इन्द्री सब शिथिल भई । औ जब मृत्यु आई, तो मोहके वश होयके नैन भरि-भरि रोवने लगा । तू देख, जीवनकी आशा मत रक्खो । संपूर्ण विषय तू आगे ही छोड़ दे तो देख तेरेको अन्तमें बड़ा सुख होयगा । औ तू जो विषय नहीं छोड़ेगा, तो ये आखिर तेरेको छोड़ देवेंगे। फिर तू ये विषयके अध्यासके वश होयके नाना योनिको प्राप्त होयगा औ तेरेको फिर बडा दुःख होयगा । ताते स्त्रीने विषय बाजी जीवको फँसानेके वास्ते रची है। सो हे जीव ! तूं चैतन्य है, तो चेतिके खेलना, समझके छोड़ देना । ये अर्थ ॥ ८९ ॥

शब्द ९०.

संत महंतो सुमिरो सोई । जो काल फाँसते बाँचा होई ॥
दत्तात्रेय मर्म नहिं जाना । मिथ्या साधु भुलाना ॥
सलिल मथि घृतकै काढ़िनि । ताहि समाधि समाना ॥
गोरख पवन राखि नहिं जाना । योग युक्ति अनुमाना ॥
ऋद्धि सिद्धि संयम बहुतेरा । पारब्रह्म नहिं जाना ॥

वशिष्ठ श्रेष्ठ विद्या संपूरण। राम ऐसे शिष्य शाखा॥
जाहि रामको कर्ता कहिये। तिनहुँको काल न राखा॥
हिन्दू कहैं हमहिं लै जारो। तुरुक कहैं हमारो पीर॥
दोऊ आय दीनमें झगरैं। ठाढ़े देखै हंस कबीर॥९०॥

टीका गुरुमुख—हे सन्तो ! हे महंतो ! सोई सुमिरो जो काल फाँसते बाँचा होय। काल कहिये कल्पना औ काल फाँस कहिये तत्त्वमस्यादि बानी। तत्त्वमस्यादि बानीसे जो बाँचा होय, सो पारखी। जबलग काल फाँस परखनेमें नहीं आई तबलग कछु छूटती नहीं औ तब तत्त्वमस्यादि बानीकी कसर मालूम भई, तब उचटी कि, मेरी कल्पना औ मेरा अनुमान मेरेको बन्धन हुआ था; परंतु वस्तुतः मिथ्या औ मैं जीव सत्य। भला आज-लग मैं यही फाँसमें फँसा था औ नाना दुःख भोगता था। औ अब मेरेको 'तत्त्वमस्यादि कल्पना मिथ्या औ मैं जीव सत्य' ये काहेसे मालूम हुवा ! तो जबलग पारख नहीं थी, तबलग सब सत्य मालूम होता था औ असत्यको सत्य माना था, सोई बंधनमें नाना दुख भोगता था। अब पारख प्राप्त भई। ता पारखके प्रतापसे संपूर्ण फाँसी परखनेमें आई औ न्यारा हुवा। धोखा सब छूटा, तब मेरा स्वरूप शुद्ध पारख रहा। अब बानी, अनुमान, कल्पना, ये फाँसी कछु मेरे विषय संभवती नहीं। मैं शुद्ध पारख, ऐसा जान जो स्थिर हुवा, सो काल फाँसते बचा। तो हे महान् जीव ! ता पारखका सुमिरन करो, पारखके तरफ फिर देखो, जाते तुम्हारी फाँसी छूटै औ स्थिती होय। ये अर्थ। दात्तात्रेय पारखका मर्म नहीं जाना; अगर जो पारखको प्राप्त होते, तो मिथ्या धोखेमें क्यों परते ? तो मिथ्या साधु भुलाना। ब्रह्म आत्मा कहायके मिथ्या धोखेमें भूले। ये अर्थ। सलिल मथि घृतकै काढ़िनि, ताहि समाधि समान। सलिल कहिये पानी, पानी कहिये बानी बानी, कहिये वेद। सो वेद मथिके सार ॐ निकारा, सो आत्माराम। ताहि समाधि समाना। ताहि समाधिमें समाये औ ब्रह्म बने। जो पारख पाते तो धोखेमें क्यों परते ? ये अर्थ।

गोरखनाथको भी पारख नहीं प्राप्त भया । भला जो पारख प्राप्त होता, तो पवन ब्रह्मांडमें रखनेका क्या काम ? तो वो भी योग युक्ति करके अनुमानमें बँधे । ऋद्धि-सिद्धि संयम बहुतेरा, पारब्रह्म नहीं जाना । ऋद्धि, सिद्धि औ संयम बहुत किया औ पारब्रह्म कहाये, बिना पारख स्वस्वरूप पारख को न जाना । ये अर्थ । वशिष्ठ श्रेष्ठ विद्या संपूर्ण । औ वशिष्ठ कहिये सब ज्ञानिनमें श्रेष्ठ, विद्या संपूर्ण जानते थे औ राम ऐसे जाके शिष्य शाखा है । औ जिस रामको सब कहते हैं कि, कर्ता है । सो उनको भी पारख प्राप्ती नहीं भई । देखो, जब रामचन्द्र, वशिष्ठ मुनीके शरण गये, तब वही तत्त्वमसीका उपदेश रामचन्द्रको दिया । ताको प्रमाण 'योगवाशिष्ठ' कहता है । तो वो भी अनुमानमें फँसे, अहंब्रह्मास्मि कहाये। ये अर्थ । हिंदू कहैं हमहिं ले जारो, तुरुक कहैं हमारो पीर । ये देखो, दोनों दीन बने औ झगरने लगे, बिना पारख । औ जो पारख पर ठहरे, उसको क्या जलाना ? और क्या गाड़ना है ? । क्या ब्रह्म है ? औ क्या जगत् है । ये संपूर्ण मिथ्या तमाशा देखा । ये अर्थ । हंस कहिये जो नीर क्षीरका निबेरा करे । औ कबीर कहिये काया बीर जीव । नीर कहिये बानी औ क्षीर कहिये जीव । सो जो जीवने बानी अलगाय दिया औ जीव अलगाय दिया, सो हंस । पारखके प्रतापसे सब अलगायके आप पारख रूप भया औ सबको परखने लगा, तमाशा देखने लगा । ये अर्थ ॥ ९० ॥

शब्द ९१.

तन धरि सुखिया काहु न देखा । जो देखा सो दुखिया ॥
उदय अस्त की बात कहत हैं । सबका किया बिबेका ॥
बाटे-बाटे सब कोइ दुखिया । क्या ग्रेही बैरागी ? ॥
शुकाचार्य दुखही के कारण । गर्भहि माया त्यागी ॥
योगी जंगम ते अति दुखिया । तापस के दुख दूना ॥
आशा तृष्णा सब घट ब्यापी । कोई महल नहिं सूना ॥

सौँच कहौं तो सब जब खीजें। झूठ कहा ना जाई॥
कहहिं कबीर तेई भौ दुखिया। जिन यह राह चलाई॥९१॥

टीकागुरुमुख—गुरु कहते हैं कि, हे संतो! तन धरि कोई सुखिया नहीं देखा; क्योंकि जो संपूर्ण दुःखका घर है, सो देह है। अरे जो कछु सुख अथवा दुःख होता है, सो देहसे होता है। औ जो देह नहीं, तो सुख-दुःखका क्या कहूँ झाड़ होता है? सुख-दुःखका झाड़ तो देह है। सो देह धारण करके सुखी कैसे होयगा? याते जो देखा, सो दुखिया। ये अर्थ। उदय अस्तकी बात कहत हैं, सबका किया बिबेका। अरे! जो महासिद्ध भये-व्यासादि, बालमीकादि, तिन सबका बिबेक किया, तो अपने-अपने देहमें सब कोई दुखिया हैं। क्या गेही और क्या बैरागी? बैरागीको बैरागका दुःख कि, कहीं मेरा बैराग छुटने न पावै। अगर मेरा बैराग छुटेगा, तो मेरेको ईश्वरकी प्राप्ती नहीं होने की। ऐसा निश्चय करके परम बैराग्यमें रहते हैं, कनक कामिनीको देखते नहीं। कहीं अच्छा षटरस भोजन मिला, तो खाते नहीं। कडू, कसाला, रूखा सूखा, दाल-वाला खाते हैं। अगर कोई अच्छे कपड़े पहिरावै, तो पहिरते नहीं। फटी-चीटी चींधी अगर मिले तो पहन लेते हैं औ धूनी तापते हैं कि, मेरा बैराग्य सिद्ध होय। ऐसी शंका पकड़के न कछु बातके वास्ते दुखिया होय रहे हैं। ये अर्थ। औ गृहस्थ कहते हैं कि, हमारी हुरमत कैसे निबहैगी? हमारा कुटुंब कैसे पोषण होयगा? औ द्रब्य कैसे मिलेगा? और भी अनेकन देहके दुःखसे दुःखी है। ये अर्थ। ऐसे-ऐसे दुःखके कारण शुकाचार्य गर्भहीमें माया त्यागी। जो बारह वर्ष गर्भहीमें बास किया; परन्तु आखिर तन धरके दुःख उनको भी न छूटा। ये अर्थ। योगी लोग योग क्रियाके दुःखमें परे हैं, नाना कष्ट भोगते हैं। औ जंगमको शिवाचारका दुःख है। जो शिवाचार छोडेंगे, तो नर्कमें जायेंगे। इस वास्ते अति दुखिया, अति दुःखमें पड़े हैं। ये अर्थ। तापसके दुःख दूना। गर्मीमें पंच अग्नि तापना, शीत समयमें जलशयन करना, वर्षा ऋतुमें आरण्यमें रहना,

झाड़ीकी पत्ती बीनके खाना; ऐसा दूना दुःख हुवा । ये अर्थ । अरे आशा, तृष्णा सब घट व्यापी । आशा कहिये स्वर्गादि ब्रह्म होनेकी औ तृष्णा कहिये जगत्‌की धन, दारा, पुत्र, घर सिद्धि-ऋद्धि, मुक्तीकी । ऐसी आशा, तृष्णा सब घट व्यापी, कोई घट भी खाली नहीं । कोई घटमें भी पारख नहीं मिली । ये अर्थ । साँच कहौं कि, समस्त ये जीवकी कल्पना है औ जीव सत्य है; तो सब खीझते हैं, औ मिथ्या धोखेका पक्ष लेते हैं । भला जो पूछो कि, ब्रह्म कहाँ है ? औ कैसा है ? तो फिर दाँत निपोर देते हैं । और अपनेसे तो झूठ कहा नहीं जाता । हे सन्तो ! जो कछु वस्तु नहीं, ताको क्या कहना ? अरे जिन्हने यह नाना बानी बनाई औ नाना प्रकारकी राह चलाई, सोई मनुष्य ये नाना बानीमें औ नाना कल्पनामें औ नाना मार्गनमें दुखिया भये, दुःख पावते हैं । ये अर्थ ॥ ९१ ॥

शब्द ९२.

ता मनको चीन्हो मोरे भाई । तन छूटे मन कहाँ समाई ? ॥
सनक सनन्दन जयदेव नामा । भक्ति सही मन उनहुँ न जाना ॥
अम्बरीष प्रहलाद सुदामा । भक्तिहेतु मन उनहुँ न जाना ॥
भरथरि गोरख गोपीचन्दा । तामन मिलि-मिलि कियो आनंदा ॥
जो मनको कोई जानु न भेवा । ता मन मगन भये शुकदेवा ॥
शिव सनकादिक नारद शेषा । तनके भीतर मन उनहुँ न पेखा ॥
एकल निरंजन सकल शरीरा । तामहभ्रमिभ्रमिरहलकबीरा ९२ ॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि, ता मन कहिये जहाँ तुम्हारा मन लीन हुवा । जहाँ मन लीन हुवा सो ब्रह्म । सो उस ब्रह्मको चीन्हो कि, मनमें तो उनमन होयके ब्रह्म हुवा औ जब तन छूटेगा, तब ब्रह्म कहाँ समायगा ? ये अर्थ । सनक, सनंदन, जयदेव औ नामदेव; ये सब भक्त तो सही हुये; परन्तु मन उनहूँने नहीं जाना । अरे ! मन-मन तो सबने पुकारा; परन्तु मन क्या है ? औ मनका स्वरूप क्या है ?

ये किसीने भी नहीं जाना, हक-नाहक धोखेमें परे। अरे मन तो जिसके वो भक्त हुये, सोई उनका मन; परन्तु उनको मालूम नहीं हुवा कि, जिसकी हम भक्ति करते हैं, सो हमारा मन है। अगर मालूम होता, तो उसको खाविंद क्यों मानते ? औ आप दास क्यों बनते ? माने सोई मन। ये अर्थ। अम्बरीष प्रहलाद सुदामा, भक्ति हेतु मन उनहूँ न जाना। अम्बरीष, प्रहलाद औ सुदामा आदि परम भक्त भये; परन्तु मनको उनहूँने नहीं जाना। जासे उनने हेत किया औ भक्ती की औ जो स्वरूप साक्षात्कार उनको था, सो उनका मन; परंतु उनको मालूम न हुवा। ये अर्थ। गोरख, भरथरी, गोपीचन्दा; ऐसे ये सब योगी भये, सो उस मनहीके रंगमें मग्न हुये औ उनमन हुये। आनन्द किये, मनमें मिलि-मिलिके; परन्तु मनको न पहिचाना। ये अर्थ। शिव, सनकादिक, नारद, शेषादि ज्ञानी भये, सो सब तनहीमें मग्न हुये औ जो तनमें कल्पना उठी, सो कल्पनामें दिवाने हुये मन कहिये तनको। अरे आठ पसेरी चालीस सेर जहाँ एकन्दर भये, ताको नाम मन। औ पाँच तत्त्व, तीन गुण; येही आठ पसेरी जहाँ एकन्दर होय, ताको नाम मन। औ रूप-माया काया नाम मन। जब आठ पसेरी आठ तरफ जायगी, तब मन कहाँ रहेगा ? चालीस सेरका अर्थ—पचीस प्रकृति औ पाँच ज्ञान इंद्री सतोगुणकी, औ पाँच कर्मइंद्री रजोगुणकी औ विषयपंचक तमोगुणका। ये चालीस सेर जहाँ मिले ताको नाम मन कहिये औ उस मनका रूप, ताको तन कहिये। ताते तन मन एक ही है, तनसे मन कछु भिन्न नहीं। जैसे चालीस सेरकी गठरीसे मन कछु न्यारा नहीं दिखाता है, चालीस सेरकी गठरीकाही नाम मन है। ऐसा तनहीका नाम मन कहिये। नाम है, वाको मन कहिये; रूप ताको माया कहिये। औ तनसे जो अनुमान निश्चय होता है, ताको भी मन कहिये एकल निरंजन सकल शरीरा, तामें भ्रमि भ्रमि रहल कबीरा। एकल

निरंजन कहिये मनको, सो संपूर्ण शरीर मनका रूप है। तामें भ्रमि-भ्रमि रहा कबीरा जीव। देहमें जीव भ्रमि रहा है। अरे जाने आकाशवत कहा सो, आकाशका अनुमान; वायुवत् कहा, सो वायुका अनुमान; प्रकाशवत् कहा, सो तेज; जलवत् कहा, सो जल, मृदुवत् कहा सो मिट्टी औ ब्रह्म, आत्मा कछु वस्तु नहीं; सब तत्त्वनका अनुमान भास। ये अर्थ ॥ ९२ ॥

शब्द ९३.

बाबू ऐसो है संसार तिहारो। ई है कलि ब्यौहारो ॥
को अब अनुख सहत प्रतिदिनको। नाहिन रहनि हमारो ॥
सुमृति सोहाय सबै कोइ जाने। हृदया तत्त्व न बूझै ॥
निर्जिव आगे सर्जिव थापे। लोचन किछउ न सूझै ॥
तजि अमृत विष काहेक अँचवै। गाँठी बाँधिनि खोटा ॥
चोरन दीन्हो पाट सिंघासन। साहुनसे भौ ओटा ॥
कहहिं कबीर झूठे मिलि झूठा। ठगही ठग ब्यौहारा ॥
तीनि लोक भरपूरि रहा है। नाहीं है पतियारा ॥ ९३ ॥

टीका गुरुमुख–बाबू कहिये जीवको, सो गुरु कहते हैं कि, हे जीव ! ऐसो है संसार तिहारो। कली कहिये बानीको, सो सब यह ब्रह्म आत्मा औ ईश्वर आदि सब उपासना औ कर्म धर्म, सब बानीका व्यौहार है। सो बानी तेरी कल्पना। ये अर्थ। को अब अनुख सहत प्रतिदिनको नाहिन रहनि हमारो। गुरु कहते हैं कि, हे भाई ! अब दिन-प्रति दिन, रोज-रोजकी बुराई उपाधी कौन सहै ? अपनेको क्या वास्ता ? ये संपूर्ण अपनी रहनी गहनी कछु नहीं। सुमृति सोहाय सबै कोई जानै। सुमृति कहिये बानी, वेद, स्मृति, सो जो कहता है, उसके प्रमाणसे सब कोई जानते हैं; परंतु अपने हृदयमें कोई बूझता नहीं। अरे निर्जीव पाषाण आदि धातु, मंत्र-यंत्र इत्यादि; ताको स्थापन करता कौन ? औ वेद-स्मृति आदि संपूर्ण निर्जीव बखेड़ा आगे

जो स्थापन किया है, सो सजीवने किया है अरु जड़ वस्तु कछु स्वतन्त्र नहीं है । तो ऐसा अपने कर्त्तव्यके आप गुलाम बने । इनके आँखिनसे भी नहीं दिखता है कि, सजीव बिना निर्जीव कौन थापता है ? तजि अमृत विष काहेको अँचवै । अमृत कहिये जीवको, सोई छाँड़के नाना बानीके विषय क्यों ग्रहण करता है ? औ झूँठी गाँठीमें ब्रह्म अथवा नाना देवता क्यों बाँधता है ? अरे जो वेद औ बानीकी गाँठी बाँधी है, सो सब मिथ्या । ये अर्थ । चोरन दीन्हो पाट सिंघासन, साहुनसे भौ ओटा । चोर प्रतिमा आदिक, ताको पाट सिंघासन दिया औ साहू जो कोई भूखा प्यासा जीव आवै, तासों मुँह छिपाते हैं, धमकायके निकार देते हैं । बधिक गुरुवा लोगोंको पाट सिंघासनपर बैठाते हैं । और जो कोई विचारवान् संत आवै, तब मुँह पीछेको फेरते हैं; तो पारख कैसे प्राप्त होय ? । ये अर्थ । कहहिं कबीर झूठे मिलि झूठा । अरे जाको तुम निश्चय करते हो, सो कहाँ है ? सो गुरु कहते हैं कि, हे सन्तो ! झूठे धोखेमें मिलिके ये जीवभी झूठा हुवा । औ ठग गुरुवा लोगोंके संग ब्यौहार करके जीवभी ठगाय गया औ ठग हुवा । दुनियामें ठगाई ज्ञान, योग औ भक्ती फैलाई औ कहा कि, तीनलोक आपही आप आत्मा भरि रहा है । परंतु इनके बातका कछु इतबार नहीं, जो छिनमें कहीं अद्वैत कहते हैं, कहीं द्वैत, कहीं नास्ति, कहीं सर्व आत्मा, कहीं जैसाका तैसा अब इनकी बातकी कौन प्रतीत रही ? । ये अर्थ ॥ ९३ ॥

साखी—जाकी जिभ्या बंध नहीं । हृदया नाहीं साँच ।
ताके संग न लागिये । घाले बटिया माँझ ॥

शब्द ९४.

कहो हो निरंजन ? कौने बानी ।
हाथ पाँव मुख श्रवन जिभ्या नहिं । का कहि जपहु हो प्रानी ? ॥
ज्योतिहि ज्योति ज्योति जो कहिये । ज्योति कौन सहिदानी ॥

ज्योतिहि ज्योति ज्योति दै मारै । तबकहुँ ज्योति कहाँसमानी॥
चारि वेद ब्रह्मा जो कहिया । उनहुँ न या गति जानी ॥
कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो । बूझो पंडित ज्ञानी ॥९४॥

टीका गुरुमुख—कहो निरंजन ! क्या बात है ?। अरे हाथ, पाँव, मुख श्रवण, जिभ्या नहीं, तब क्या वस्तु है? औ क्या कहिके जपते हो ? हे प्राणी! बिना रूप कहीं नाम नहीं औ नाम बिना कछु जाप नहीं । ये अर्थ। ज्योतिहि ज्योति ज्योति जो कहिये । 'ज्योतिस्वरूप परमात्मा' ऐसा कहिके जो तुमने सुरत जोति बाँधी है, तो ज्योतीकी क्या निशानी ?। जो ज्योतीमें तुमने सुरत लगाई सोई तुम्हारी कल्पना तुम्हारा काल । जब दैव मारेगा; चोला छूट जायगा, तब वो ज्योति कहाँ रहेगी?। अरे चार वेद ब्रह्माने जो कहा औ सब सिद्धांत किया । ज्योती, तद्योती, स्वयं ज्योती । ज्योती कहिये जो देखनेमें आवै, औ जाते देखनेमें आवे सो तद्योती, औ जाके देखनेमें आवै, सो स्वयं ज्योती । औ सच्चिदानंद आदि, तत्त्वमस्यादि बहुतक सिद्धान्त किये, देह धरके; परन्तु देह छूटेगी तब असि आनंद औ ज्योती कहाँ रहेगी ? ये गती ब्रह्माने भी नहीं जानी । तो आनंद असी औ ज्योती हे संतो ! कहाँ हैं ? ये तो सब देहका बिकार औ तत्त्वनका स्वभाव, तत्त्व छुटे तब कछु नहीं सब मिथ्या धोखा । हे पंडित ! तुम ज्ञानी बूझो, समझो । पंडित ब्रह्मा औ ज्ञानी शंभू, इनकी मती तुम बूझो । सब धोखेमें परे, बिना पारख । ये अर्थ ॥ ९४ ॥

शब्द ९५.

को अस करे नगर कोटवलिया । मासु फैलाय गिद्ध रखवरिया॥
मूस भौ नाव मंजार कँड़िहरिया । सोवै दादुर सर्प पहरिया ॥
बैल बिआय गाय भइ बांझा । बछरूदुहिये तीनितीनिसांझा॥
नित उठि सिंघ स्यार सों जूझै । कबीराकापदजनबिरलाबूझै९५

टीका गुरुमुख—को अस करे नगर कोटवलिया ? । नगर कहिये संसार, कोटवलिया इनसाफी । सो गुरु कहते हैं कि, ऐसे संसारमें कौन

इनसाफी करे ? जहाँ माँस फैलाय गिद्ध रखवरिया । माँस कहिये बानी, गिद्ध कहिये गुरुवा लोग, पंडित लोग । सो बानी फैलायके संसारमें गुरुवालोग रखवारी भये, जैसे खेत रखानेको रखवार बैठता है । इस तरहसे गुरुवा लोगोंने वेद बानीकी बाड़ लगायके जीवनको अन्दर डारके रखवारी करने लगे; जामें जीव वेद बानीके बाहर न जाने पावे । मूस भौ नाव मंजार कंडिहरिया । मूस कहिये जीव, मंजार कहिये बानी, मंजार कहिये माया, मंजार कहिये गुरुवा । सो जीव तो संसार सागरमें नाव बने । बानी बयार बही औ गुरुवा लोग खेवैया बने । सोवै दादुर सर्प पहरिया । दादुर जीव, सर्प उपदेश, अहं ब्रह्म, ताके भरोसे जीव गाफिल हुवा । अहं ब्रह्म कहायके विधि-निषेधको छोड़ा । ये अर्थ । बैल बियाय गाय भई बांझा । बैल कहिये षटदर्शन भेष, गाय कहिये बानी । नाना प्रकारका उपदेश, मंत्र, सब षटदर्शन भेषसे पैदा भया औ बानीसे कछु नहीं पैदा भया । बानी बाँझ जड़ । ये अर्थ । बछरू दुहिये तीनि तीनि सांझा । बछरू बानी, बानीका सिद्धान्त ब्रह्म, सो त्रिकाल संध्या करते हैं, यही दुहनेका अर्थ । नित उठि सिंघ स्यारसो जूझै । सिंघ जीव, स्यार वेद बानी । सो बानीसे जीव रोज-रोज लड़ता है, अध्यारोप, अपवाद करते हैं, एक पर एक पूर्वपक्ष करते हैं । एक एकके मतको दोष लगावते हैं, जूझते हैं बानीका आशरा पकड़के नाहक; न कछु लेना न देना । ये कबीरा जीव, इनका पद कोई बिरला बूझेगा औ जो-जो इनने सिद्धान्त किया, सो सब इनको बंधन । ये अर्थ । विरह अर्थ—को अस करे नगर कोटवरिया । ऐसा जगत्में कौन इनसाफी करेगा भाई ? जहाँ माँस फैलाय गिद्ध रखवरिया । माँस कहिये माया, स्त्री, पुत्र, धन, आदिक ये सब संसारमें फैलाया जीवने औ मन रखवारी रक्खा, आठों प्रहर कबहीं भूलता नहीं । मूस भौ नाव मंजार कँड़िहरिया । मूस मन, मंजार माया । तो देखो, ये मन तो मायाका खुराक है । ये मनको स्त्री चलावती है । ये अर्थ । दादुर जीव, सर्प काम, देखो ये जीव कामवश होयके गाफिल हुआ

नाना प्रकारके विषय विष चढ़ा,तामें मग्न हुआ। बैल बियाय गाय भइ बंझा। बैल पुरुष, गाय स्त्री। सो पुरुषसे संतान उत्पन्न होता है। जो पुरुष न होय, तो स्त्री बाँझ। गाय कहिये गायत्री बाँझ! उससे कछु नहीं पैदा भया। ब्रह्मासे संतान पैदा भया। बछरू कहिये जीव, सो त्रिकाल स्त्री इनको दुहती है। अरु गाय स्त्री, पुरुष बैल, मन बछरू। सो मनको शोषण त्रिकाल स्त्री करती है। नित उठि सिंघ स्यारसो जूझे। सिंघ जीव, स्यार स्त्री, सो नित जूझता है, मैथुन करते-करते मरता है। गुरु कहते हैं कि, ये देखो; जीवका पद स्त्री, जीवका अधिष्ठान स्त्री। सो जीव स्त्रीसे पैदा होता है, फिर स्त्रीसे रति करता है औ विषयकी प्रीतिसे फिर स्त्रीके गर्भवासमें लय होता है। जैसे जलकी लहर जलसे पैदा होती हैं औ जलहीमें स्थिति औ जलहीमें लय। इस प्रकारसे जीव स्त्रीसे पैदा होते हैं औ स्त्रीमें आठों पहर स्थित होते हैं औ फिर स्त्रीमें जाते हैं। ये अर्थ ॥ ९५ ॥

शब्द ९६.

काको रोवों गैल बहुतेरा। बहुतक मुवल फिरल नहिं फेरा॥
जब हम रोया तब तुम न सँभारा। गर्भवासकी बात बिचारा॥
अब तैं रोया क्या तैं पाया। केहि कारण अब मोहिं रोवाया॥
कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो भाई। कालके बसि परो मति कोई९६

टीका गुरुमुख-गुरु कहते हैं कि, हे भाई! मैं किसको-किसको कहौं? बहुतेरे बानी कल्पना अनुमानमें बंध होयके स्त्रीके गर्भमें गये। मैंने बहुत-बहुत कहा, फेरनेके वास्ते और बहुत-बहुत विचार बताया; परंतु कोई फेरनेसे फिरे नहीं। ये अर्थ। भला जबसे तू आनन्द होयके आपे-आप भूला औ गर्भवासकी बात स्त्री औ बानीका विचार किया। इच्छासे नारी पैदा किया औ उसका संग करके नाना दुःखको प्राप्त भया। तब नाना बानी कल्पिके तामें मग्न होयके बंध होगया, जभीसे मैं तेरेको कहा था औ तेरा दुःख देखके रोया था, परंतु तूने न संभारा। सोई बात तूने बिचारा, जासे गर्भवासको प्राप्त हुवा।

गर्भवासकी प्राप्ती होनेकी बात एक स्त्री औ एक बानी ब्रह्म। सो जैसा तूने किया, तैसा गर्भवासको प्राप्त हुवा। अब संसारके दुःख देखके बहुत रोता है, तो क्या रोनेसे तेरा दुःख छूटेगा ? अरे जबलग देह बना है, तबलग देहके भोग तो तेरेको भोगना होगा। भला अब तू रोता है, तो क्या पाया तूने ? तो नाहक धोखेके भरोसेसे अब पश्चाताप करता है, तो देखके मेरेको बहुत दया आती है। तो फिर मेरेको क्यों रोवाता है ? क्यों बकाता है ? अरे तूने जो अनुमान किया है औ जो जो माना है, सो सब गर्भवासका कारण है। सो अब तो भी सब समझके, परखके छोड़ औ निराश निरबंध हो। सब स्त्री बानी आदिक कल्पना की फाँसी है। तो कोई फाँसीमें पड़ो मत। हे जीव ! सब फाँसी परख के पारख रूप हो जाव। ये अर्थ ॥ ९६ ॥

शब्द ९७.

अल्लाह राम जियो तेरी नाँई। जिन्हपर मेहर होहु तुम साँई ॥
क्या मुंडी भुँई शिर नाये। क्या जल देह नहाये ॥
खून करे मिस्कीन कहाये। औगुण रहे छिपाये ॥
क्या वजू जप मंजन कीये। क्या महजीद शिर नाये ॥
हृदया कपट निमाज गुजारे। क्या हज मक्के जाये ॥
हिंदू बरत एकादशी चौबीस। तीस रोजा मुसलमाना ॥
ग्यारह मास कहो किन टारे। एक महीना आना ॥
जो खुदाय महजीद वसतु है। और मुलुक केहि केरा ॥
तीरथ मूरत राम निवासी। दुइमा किनहु न हेरा ॥
पूरब दिशा हरीको बासा। पश्चिम अलह मुकामा ॥
दिलमें खोजि दिलहिमा खोजो। इहे करीमा रामा ॥
वेद किताब कहा किन झूठा। झूठा जो न बिचारे ॥
सब घट एक एक कै लेखे। भय दूजा के मारे ॥
जेते औरत मर्द उपानी। सो सब रूप तुम्हारा ॥
कबीर पोंगरा अल्लह रामका। सो गुरु ! पीर ! हमारा ॥९७॥

टीका गुरुमुख–अल्लाह राम जियो तेरी नाँई। हे जीव ! तेरी नाँई जो कोई जीव भया; तिन अल्लाहकी भी थापना की, औ रामकी भी थापना की। अरे निर्जीवसे भी कहीं थापना होती है ? भला जो ऐसा कहोगे कि, अल्लाह रामकी थापना भी कोई करता है ? तो राम-खुदाय किनने कहा ? और किनने थापा ? जो ऐसा कहा जाय कि उनने अपनी थापना आपही की। तो वो निराबेव औ बेचून वेद कुरान गावता है। तो निराबेव कैसे थापना करेगा ? तो जीवहीसे अल्लाह रामकी थापना भई। ये अर्थ। हे जीव! जिनपर मेहर होवो औ रीझो, उसीको तुम मालिक करके थाप देव। ये अर्थ। और तुम कहीं भुँईपर शिर नवावते हो निमाज पढ़ते हो। तो ये क्या है ? ये भी कल्पना। नाना तीर्थ नहाते हो, तो ये क्या ? यह भी तेरी कल्पना। अरे फकीर मिसकीन कहिये गरीबको। तो देखो ये मुसलमान फकीर बकरा मुर्गा मारते हैं। तो काम कसाईका औ बानी फकीरका। तो जैसा ठग होता है औ अपना औगुण छिपाय रहता है, तैसे ये निसकीन। ये अर्थ। क्या वजू औ जप किये, तो भी कल्पना औ मसजिदमें शिर नवाते हैं ये, भी धोखा। हृदया कपट धारन किया निमाज। ये अर्थ। हज मक्के को गया तो क्या ? ये संपूर्ण धोखा। हिन्दू व्रत एकादशी चौबीस। तो हिंदूने बरसमें चौबीस दिन मुक्तीके ठहराये कि, एकादशीको मरे, सो मोक्ष, ऐसा कहा तो बाकी दिन किनने टारा ? औ तुरुक तीसो रोजा करते है कि, फर्ज खुदाका है। तोहि भाई ! ये ग्यारह महीना किनने दूर किया ? अरे खुदाको बेरूप, बेचून बोलते हो तो हुकुम कैसे दिया ? ये संपूर्ण तुम्हारी कल्पना मिथ्या। भला जो खुदा मसजिदमें रहता है, तो और मुल्क किसका है ? और तीर्थ मूर्तिमें राम निवास करता है, तो सब संसारमें कौन रमा है ? अरे दूनोंमें किसीने भी नहीं तहकीक किया। कोई कहते हैं कि, पूर्व दिशामें भगवान्‌का बासा और कोई कहता है कि, पश्चिम दिशामें खुदाका बासा अरे सब झूठ

कल्पना । तुम अपने दिलमें खोजिके देखो औ संसारमें खोजके देखो तो तूही करीमाकी थापना करता है औ तूही रामकी थापना करता है । तो थापना मिथ्या औ कर्त्ता सच्चा । ये अर्थ । वेद-कितेब कहा किन झूठा । अरे वेद, किताब किन्हने कहा है ? सो भी झूठा । औ जो विचार नहीं करता है, झूठ धोखेमें फँसा है सो भी झूठा । देखो । वेद सब घट एक-एक कर लेखता है कि, संपूर्ण ब्रह्म अखण्ड, दुतिया कोई नहीं । फिर जब राम कृष्ण आदि औतार पैदा भये,तब वेदने स्तुति क्यों किया ? औ उनकी विशेषता क्यों बखानी। जो एक अद्वैत है,तो विशेषता औ स्तुति नहीं संभौती । तो वह वेद औ ब्रह्मा झूठा, जो कहा अद्वैत औ भासाता तो द्वैत था, ताते 'कहीं अद्वैत औ कहीं द्वैत' ऐसा कथन करके संसारको भय लगायके मारा । श्रीकृष्ण भगवानने अर्जुनको सब घट एक आत्मा समुझाया औ फिर भय लगायके सब परिवारको मार गिराया । ताते अद्वैत कहनेवाले कृष्ण आदि भी सब झूठे औ अर्जुन आदिक जीव भी झूठे, जो झूठेमें बंधे हैं । ये अर्थ । हे मनुष्य ! तू समझ देख कि-जेते औरत औ मर्द उत्पन्न हुये सो सब रूप तुम्हारा । अरु हे जीव ! तेरे बिना राम कहाँ है ? औ खुदा कहाँ है ? सब धोखा । ये अर्थ । जीवमुख-कबीर पोंगरा अलह रामका, सो गुरु पीर हमारा । पोंगरा बेटा, कबीर जीव । सो हिंदू बोलता है कि, परमात्माका अंश जो ब्रह्मा है सोई हमारे गुरु; उनसे अधिक और कोऊ नहीं । औ तुरुक बोलता है कि, पीर महम्मद जो खुदाके नूर है सो हमारे पीर, उनसे ज्यादे कोऊ नहीं । ऐसा कहिके वधिके फाँसमें परे । ये अर्थ ॥ ९७ ॥

शब्द ९८.

आवबे आव मुझे हरिको नाम । और सकल तनु कौने काम ॥
कहाँ तब आदम?कहाँ तब हव्वा? कहाँ तब पीर पैगम्बर हूवा?॥
कहाँ तब जिमी?कहाँ अस्मान? कहाँ तब वेद कितेब कुरान ॥

जिन्ह दुनिया में रची मसीद । झूठा रोजा झूठी ईद ॥
साँचा यक अलह को नाम । जाको नै-नै करहु सलाम ॥
कहुधों बिहिस्त कहाँ से आई ? किसके कहे तुम छुरी चलाई ॥
कर्त्ता किरतम बाजी लाई । हिंदू तुरुककी राह चलाई ॥
कहाँ तब दिवस?कहाँ तब राती? कहो तब किरतमकिनउत्पाती॥
नहिं वाके जाती नहीं वाके पाँती । कहहिंकबीरवाकेदिवसनराती॥

टीका मायामुख—गुरुवालोग बोलते हैं कि, हे जीव ! आवबे आव, मुझे शरण हो; अरु जो हम हरी नाम उपदेश करते हैं ताकी रटना किया करो । और सकल तजु कोने काम ? सकल संसार माया परपंच मिथ्या, परमात्माका नाम सत्य । ये अर्थ । कहाँ तब आदम ? कहाँ तब हव्वा, कहाँ तब पीर पैगम्बर हुवा तो जब परमात्मा था, तब कछु नहीं रहा; पीछेसे संपूर्ण माया परपंच पैदा भया । जिन दुनियामें रची मसीद, झूठा रोजा, झूठी ईद । ये सब फना नाश होय जायेंगे। एक अल्लाहका नाम सच्चा है । उसको नै नै हर वक्त सलाम करो । उसके नामसे ज्यादा कछु नहीं गुरुमुख—अल्लाह बे मकान, बेचून, बेनमून रहता है, तो तुमने किसके कहे से छूरी चलाई ? औ बिहिस्त तो भी कहाँसे पैदा हुई ? अरे कर्ता मनुष्यने ये कृतिम बाजी बनाई, अपनी कल्पनासे विना पारख। सो हिंदू तुरुक दुई राह चलाई औ धोखेमें परे । कहाँ तब दिवस ? कहाँ तब राती । अरे जब रात-दिवस यह कछु ना हता, तब कृतिम बानी अल्लाहका नाम भी कहाँ था ? अरे जाकी जाती नहीं, पाती नहीं औ दिवस नहीं, रात्री नहीं; ऐसा खुदा कहाँ है ? । हे जीव ! सब तेरा अनुमान मिथ्या धोखा, तुम परखके देखो । ये अर्थ ॥ ९८ ॥

शब्द ९९.

अब कहाँ चलेउ अकेले मीता । उठहु न करहु घरहुकी चिंता॥
खीर-खाँड़-घृत पिंड संवारा । सो तन ले बाहर के डारा ॥
जो शिर रचि-रचि बाँधहु पागा। सो शिर रतन बिडारत कागा॥

हाड़ जरे जस जंगल लकड़ी। केश जरे जस घासकी पूली॥
आवत संग न जात संगाती। काह भये दल बाँधल हाथी॥
मायाके रस लेइ न पाया। अंतर यम बिलारि ह्वै धाया॥
कहहिं कबीर नर अजहुँ न जागा।यमक मुकदर मांझ शिर लागा९९

टीका गुरुमुख—अब कहाँ चलेहु अकेले मीता? अरे हे मित्र! तुमने तो बहुत संग किया; परन्तु चोला छोड़के अब अकेले कहाँ चले? अरे जब देह साबुत था, तब तो कछु बिचार किया नहीं औ पारखपदको भी प्राप्त भया नहीं। कहते थे कि, हमारेको घरकी चिंता बड़ी है, औ पुत्रकी चिंता बड़ी है औ धनकी चिंता बड़ी है। सो उठो, घरकी चिंता करो, अब देह छोड़के। कहाँ चले? अरे खीर, खाँड़, घृत खाय-खाय देह बहुत पुष्ट किया था, सो तन सब भाई बन्दने बाहर मसानमें डार दिया। सो आजतलक देहका रक्षण करके मेरी-मेरी कहते थे, अब कैसी बाहर डारी गई? जो शिरमें रचि-रचिके पाग बाँधते थे, सो शिर जब जंगलमें पड़ेगा, तब काग बिडार डारेंगे, फोर डारेंगे हाड़ लकड़ीके माफिक जर जायेंगे औ बार घासके माफिक जर जायेंगे। हे संतो! देखो, ना तो कछु संग आया है, ना तो कछु संग जायगा। दल बादल औ तंबू, हाथी,घोड़ा, सैना सबही छूटि गई, मायाके रस लेने नहीं पाया। अंत समय यम बिलार होयके धाया। जैसे मूसके ऊपर बिलाई झपट करती है, तैसे इसकी कल्पना यमरूप होयके स्वरूपमें से जीवको खैंचके ले चली, गर्भ-वासको। याते गुरु कहते हैं कि, मृत्यु तेरे समीप आय तुलानी। अब भी समझके न जागा, भ्रम अजहूँ न छाँड़ा। जब कालको मुगदर माँझ शिर लागेगा, तब बहुत पश्चाताप होगा माँझ शिर कहिये ब्रह्म, ब्रह्म कहिये भ्रम। सो भ्रम अभी नहीं छूटा, तब कब छूटेगा? ये अर्थ॥९९॥

शब्द १००.

देखहु लोगा हरिकेर सगाई। माय धरी पुत्र धियेउ संग जाई॥
सासु ननद मिलि अचल चलाई। मंदरियाके गृह बैठी जाई॥

हम बहनोई राम मोर सारा । हमहिं बाप हरि पुत्र हमारा ॥
कहहिं कबीर ये हरीके बूता ।राम रमेते कुकुरीके पूता॥१००॥

टीका गुरुमुख—देखहु लोगा ! हरिकेर सगाई । हे संतो ! देखो, ये लोगोंकी हरी रससे प्रीति लगी । हरी कहिये माया, हरी कहिये कल्पना, हरी कहिये बानी, रस कहिये अनुमान, जो देहसे कल्पना उठी । तो बानीने जो मालिक बताया, सो अनुमानके रसमें मिलके संसार सब गावता है । जैसे बादरकी पुतरी देखके लोग सब कल्पना करते हैं कि, याके पुत्रकी सुन्दरताई अद्‌भुत है; उसके स्वरूपका हम क्या वर्णन कर सकेंगे । जहाँ ब्रह्मा, विष्णु, महेशका चित मन बुद्धि पहुँचती नहीं औ बड़े-बड़ेकी गति थकित भई, तहाँ हमारी कौन चलाई है ! । परंतु उसके रसको जिन्होंने जाना, ताको सब अमृत आदि रस फीके भये । ऐसा कहि-कहिके सब वा बानीके रसको गाने लगे, मिथ्या धोखेको गाने लगे । ये अर्थ । माय धरी पुत्र धियेउ संग जाई । माया कहिये बानी, पुत्र कहिये ब्रह्म अल्लाह । सो माय बानी जीवने धरी । पुत्र ब्रह्मकी चाह भई । सो धिय बुद्धिके संग जीव सब निश्चय करते चले । काहूने निर्गुण कहा, काहूने सगुण कहा, काहूने सबमें कहा, काहूने न्यारा कहा, काहूने एक कहा औ काहूने अनेक कहा । इस प्रकारसे सब बुद्धीके संग निश्चय करते चले । थाह काहूने नहीं पाया । ये अर्थ सासु ननँन मिलि अचल चलाई । सासु गुरुवा लोग, ननद चेला लोग । सो आदिसे जेते गुरुवा औ जेते चेला भये, सो सब मिलि कहा कि, एक राम अचल है औ सब जगत् चलायमान् है । ऐसी बानी चलाई । औ सासु कहिये वेद औ ननद कहिये वेदांत आदि शास्त्र, ताने 'ब्रह्म अचल' ऐसा सिद्धांत चलाया । जीव मंदरियाके घर जाय बैठा, सुननेके वास्ते । मंदरिया कहिये गुरुवा लोग, सो जीव बंदरको ठौर-ठौर नचाते हैं । ये अर्थ । हम बहनोई राम मोर सारा । मायामुख—जब जीव गुरुवा लोगोंके घर जाय बैठा, श्रवण करनेके वास्ते; तब गुरुवा लोग बोलते भये कि, हम बहनोई,

हम ज्ञानी औ राम जो सबमें रमा है, सोई हमारा रूप, सिद्धांत; चार वेद-छौ शास्त्रनका सार । ये अर्थ । हमहिं बाप हरि पुत्र हमारा । हरी कहिये ज्ञान, सो हमारा पुत्र, जो हमसे पैदा हुवा । हम तो आत्मा अखंड, जैसाका तैसा । न ज्ञान न अज्ञान, सर्वाधिष्ठान । ये अर्थ । गुरुमुख–कहहिं कबीर ये हरिके बूता, राम रमेते कुकुरीके पूता । गुरु कहते हैं कि, हे सन्तो ! देखो, इन ज्ञानी लोगोंके ज्ञानका जोर देखो; जो एक देशमें रमे थे, सो सबमें रम गये । राम रमेते कुकुरीके पूता । कुकुरी कहिये बानी, सो बानीके पुत्र ब्रह्म बने । ये अर्थ ॥ १०० ॥

शब्द १०१.

देखि-देखि जिय अचरज होई । यह पद बूझै बिरला कोई ॥
धरती उलटि अकाशै जाय । चिउँटीके मुख हस्ति समाय ॥
बिना पवन सो पर्वत ऊड़े । जीव जंतु सब बृक्षा चढ़े ॥
सूखे सरवर उठे हिलोरा । बिनुजलचकवाकरतकिलोरा ॥
बैठा पंडित पढ़ै पुरान । बिनु देखेका करत बखान ॥
कहहिं कबीर यह पद को जान । सोई संत सदा परवान ॥ १०१ ॥

टीका गुरुमुख–गुरु कहते हैं कि, देखि-देखि हे जीव ! बड़ा आश्चर्य होता है । जो ये जीवमेंसे कल्पना उठी कि, हमारा कर्ता कोई बड़ा है ब्रह्म । ऐसी कल्पनाको कर्ता बनाया औ उसके आधीन भया । औ उसीकी बानी स्तुति बहुत प्रकारसे गाई औ गाय-गाय जब आपुहि थका, तब कल्पनाका रूप बना । सो देखि-देखि जीवमें बड़ा आश्चर्य होता है । ये अर्थ । यह पद बूझे बिरला कोई । यह पद कहिये जा पदसे सकल ब्रह्म, ईश्वर आदि कल्पना उठी औ संपूर्ण बानी उठी, सो मानुष पद; ऐसा कोई बूझनेवाला बिरला । ये अर्थ । धरती उलटि अकाशै जाय, चिउँटीके मुख हस्ति समाय । सोई बानी सुनि-सुनिके धरतीके जीव आकाशको चले । कोई योग करके, कोई नाना कर्म-धर्म करके, उपासना करके, आकाशको चले । सो ये सब

धोखा। औ चिउँटी कहिये बानी, हस्ती कहिये मन। सो बानीके मुखमें मन समाया। कहीं दास बना, कहीं ब्रह्म बना, उन्मुन हुवा। ये अर्थ। बिना पवन सो पर्वत ऊड़े। पर्वत कहिये दोनों दीन, सो बिना पवनसे उड़ने लगे। पवन कहिये विचार, सो बिना विचार दोनों दीन कल्पनामें उड़ने लगे। जीव जंतु सब वृक्षा चढ़े। वृक्षा कहिये ब्रह्म, ब्रह्म कहिये अनुमान। सो अनुमानमें जीव चढ़े ब्रह्म बने। सूखे सरवर उठे हिलोरा। सूखा सरवर कहिये शून्य, शून्य कहिये जहाँ कछु है नहीं। जहाँ कछु नहीं, सो ब्रह्म। सो ब्रह्म होयके हिलोरा अनुभवके उठने लगे, अनुमानके स्फुर्ण उठने लगे,। ये अर्थ। बिनु जल चकवा करत किलोरा। जल बानी, चकवा जीव। सो जीव जहाँ बानी नहीं, रूप नहीं, तहाँ अनुमानमें कलोल करने लगे। सो नाना प्रकारकी कलोल कल्पनाकी बानी बनी। सोई पौराणिक लोग पुरान पढ़ने लगे औ विना देखेका बखान करने लगे। स्वर्ग नर्क आदि, लोक परलोक आदि, देवतादि, ब्रह्म ईश्वर आदि। ये अर्थ। सो गुरु कहते हैं कि, ये सब कहाँ हैं? जो बिना देखेका बखान करते हैं। यह पद कहिये मानुषपद, जासे समस्त सिद्धांत बने औ समस्त बानी बिचार बना औ कल्पना अनुमान ब्रह्म आदि सब बना। सो सब मिथ्या धोखा औ मनुष्य सत्य; ऐसा जिसने जाना, ताका धोखा कल्पना सब नाश हुवा औ समस्त बानीका अभाव हुआ। तब परम शांतिको प्राप्त हुवा औ अपनी सत्यताई ठहरी। तब सोई संत सदा पारख रूप। जहाँ कोई भाव तत्त्वमस्यादि असंभव; सो पारख सदा परमान। ये अर्थ। ॥ १०१ ॥

शब्द १०२.

हो दारी के ले देउँ तोहि गारी। तैं समुझि सुपंथ बिचारी ॥
घरहुक नाह जो अपना। तिनहूँसे भेंट न सपना ॥
ब्राह्मण-क्षत्री बानी। तिनिहुँ कहल नहिं मानी ॥

योगी जंगम जेते । आपु गहै हैं तेते ॥
कहहिं कबीर एक योगी । वो तो भर्मि-भर्मि भौ भोगी १०२॥

टीका गुरुमुख—हो दारीके ! ले देउँ तोहि गारी, तैं समुझि सुपंथ बिचारी । दारी कहिये माया, स्त्री, बानी । सो गुरु कहते हैं जीवको कि, हे देहीके गुलाम ! औ हे स्त्रीके गुलाम ! औ बानीके गुलाम ! देहुँ तोहि गारी । जैसा तूने ये बंधन लिया; तैसा सब गारी डारता हौं, गला डारता हौं । धोखा सब परखायके दूर करता हौं । अरे देह औ स्त्री औ बानी ये सब जड़ औ तू जीव चैतन्य । इनके मिथ्या धोखेमें तू क्यों पड़ता है ? अरे ये सब तेरेसे उपजे हैं औ तूही इनमें बंधमान हुवा, ताते नाना दुःख पावता है । ये समझके छोड़ दे औ सुपंथ सतसंगको राहसे विचार कर । ये अर्थ । घरहुक नाह जो अपना, तिनहुँसे भेट न सपना । अब जो तूने घरका खाविंद एक ईश्वर थापा है, तासे मिलना भी सपना है, क्योंकि मिथ्या है । ये अर्थ । गुरु कहते हैं कि, हे भाई ! ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, ये सब गाफिलीमें पड़के मग्न हैं । हमने बहुत प्रकारसे कहा; परंतु ये कोई नहीं मानते । योगमें योगी लोग मग्न हुये औ जंगम शिवाचारमें मग्न हुये । अपनी-अपनी मतीका अभिमान सबने पकड़ा, अब पारख कहाँसे प्राप्त होय ? सो गुरु कहते हैं कि, एक धोखा समाधी जो योगी लोगोंने ठहराई । तो देह जब नास्ति, तो देहकी समाधी क्या अस्ती ? वो भी नास्ती; ताके अध्याससे भ्रमि-भ्रमिके गर्भदुःख भोगता है, बिना पारख । ये अर्थ ॥ १०२ ॥

शब्द १०३.

लोगा तुमही मतिके भोरा ।
ज्यों पानी पानी मिलि गयऊ । त्यों धूरी मिला कबीरा ॥
जो मैथिल को साँचा ब्यास । तोहर मरन होय मगहर पास॥
मगहर मरे मरे नहिं पावै । अंतै मरै सो राम लजावै ॥

मगहर मरे सो गदहा होय। भल परतीत रामसो खोय ॥
क्या काशी क्या मगहर ऊसर। जोपै हृदय राम बसे मोर ॥
जो काशी तन तजे कबीरा। तो रामहि कहु कौन कबीरा॥

टीका मायामुख—हे लोगो ! तुमही मतिके भोरा । जो कबीरा कहिये ज्ञानी, सो परमात्मामें कैसे मिले ? जैसे पानीमें पानी मिले औ माटीका घूर जैसे माटीमें मिला । औ अग्नीका विकार जैसे दीपक, सो तो अग्नी ही है । औ जलका विकार जैसे फेन, बुद्‌बुदा, तरंग, सो तो जलही है; तद्वत् आत्माका विकार जगत् जो है, सो आत्मा ही है । ये अर्थ । जो मैथिलको साँचा व्यास, तोहर मरन होय मगहर पास । मैथिल कहिये मैथिल देश, सो ब्रह्ममें होयके अखण्ड एक रस रहते हैं । जिनके द्वैतभाव कछु नहीं ज्ञान अग्निमें कर्म सब जलाया औ समदृष्टी हुए । जो ब्राह्मण, गाय, हाथी, कुत्ता, औ चांडाल, ये सबमें समभाव जानते हैं, सो पंडित । साँचे ज्ञानी; उसकी स्थिति मैथलमें हुई स्थल कहिये अधिष्ठान अधिष्ठान कहिये आत्मा । सो मैं आत्मा । ये अर्थ । जो तू मैथिलका साँचा ब्याह है, जो तू ब्रह्मका सच्चा अंश है, तो तोहर मरन होय मगहर पास । मग कहिये रस्ता, हर कहिये ज्ञान, सो मगहर कहिये ज्ञानमार्ग, तामें मरण होय, लौलीन होय । ये अर्थ । मगहर मरे मरन नहीं पावै । अरे जो ज्ञान-मार्गमें मरे, मरण नहीं पावै, अर्थात् जीवनमुक्त होय । ये अर्थ । अन्तै मरे तो राम लजावै । अरे जो जीवकी जन्म भूमिका, जहाँसे जीव स्फुर्ण हुआ, सो अधिष्ठान छोड़के अन्तै जो नाना प्रकारकी स्वर्ग भोगादि वासना, अथवा जगत् आदि मोह वासनामें सो बन्धनमें परा । राम कहिये जीव औ लज्या कहिये बंधन । ये अर्थ मगहर मरे सो गदहा होय, भल परतीत राम सो खोय । औ शास्त्र कहता है कि, काशीमें मरे मुक्त औ मगहर मरे सो गदहा होता है । तो ये मिथ्या । वो अविश्वासी लोग अज्ञानी । उनको आत्माकी प्रतीति नहीं । अरे

क्या काशी ? क्या मगहर ? क्या ऊषर ? जोपै मेरे हृदयमें आतम प्रतीती है, तो तैसा तीरथ स्थान, तैसा सुपच घर, अथवा घूरा, अथवा क्षेत्र, अथवा कहीं क्यों नहीं मरता ? आत्मा सर्वदेशी सदा मुक्त । अरे जो काशीमें ज्ञानीने चोला छोड़ा, तो मुक्त हुवा, तो ज्ञानकी क्या अधिकाई ? अरु भक्तिकी क्या अधिकाई इस वास्ते ज्ञानी कहीं मरे सदा मुक्त स्वानुभवसे । ये अर्थ ॥ १०३ ॥

शब्द १०४.

कैसे तरो नाथ ! कैसे तरो ? अब बहु कुटिल भरो ॥ कैसी तेरी सेवा पूजा ? कैसो तेरो ध्यान ? ऊपर उजल देखो बग अनुमान ॥ भाव तो भुजँग देखो अति बिबिचारी । सुरति सचान तेरी मति तो मँजारी ॥ अतिरे विरोधी देखो अतिरे सयाना । छौ दर्शन देखो भेष लपटाना ॥ कहहिं कबीर सुनो नर बंदा । डाइनि डिंभ सकल जग खंदा ॥ १०४ ॥

टीका गुरुमुख--नाथ कहिये गुरुवा लोगोंको जो आप नाथे गये औ दूसरे जीवनको भी नाथे। बंधन देय सो नाथ। सो गुरु कहते हैं कि हे, नाथ! तुम कैसे तरोगे ? कैसे मुक्त होवोगे ? अब तो बहुत कुटिल तुम्हारेमें भरा है । जो नाना प्रकारका भेष बनावते हो औ नाना तरहका तिलक करते हो औ कोई भभूत लगावते । कोई नागा, कोई निर्बानी; ऐसी नाना प्रकारकी कुटिलाई करके जीवनको ठगते हो । अरे नाना प्रकारकी कल्पनामें औ मान मर्यादामें बंधे हो, तो पारख कहाँसे प्राप्त होयगी ? । ये अर्थ । कैसी तेरी सेवा पूजा ? कैसो तेरो ध्यान ? ऊपर उजल देखो बग अनुमान । जैसा बगुला मछरियोंके पकड़नेके वास्ते ध्यान लगाता है, आँखी मूँदके और उसका स्वरूप भी परम सफ़ेद रहता है । इस प्रकारसे हे गुरुवा लोगो ! तुम जो ज्ञान-ध्यान औ पुजा करते हो, जो किसी तरहसे संसारके जीव आवैं औ मेरेको मानैं, औ कछु द्रव्य देवैं, औ हमारे शिष्य होयँ, और

हमारा माहात्म्य जगतमें होय । ऐसे नाना प्रकारके बंधन तो अंतःकरणमें बीज होय रहा है, तो मुक्त कैसे होवोगे ?। ये अर्थ। भाव तो भुजंग देखो । भुजंग कहिये सर्प । सो सर्पके ऐसा तो तुम्हारा भाव है कि, जिनको डसते हो, ताको नाना प्रकारकी बानी औ कल्पनाका विष चढ़ा औ अति बिबिचारमें पड़ा । वेदका औ तुम्हारे मतिनका आसरा पकड़ा, सो स्वतः विचार करके नहीं देखता । औ कोई परखावै तो मानते भी नहीं, कहते हैं कि, वेद जो कहता है सोई सत्य, अपनी समझ झूठ बिबिचार । ये अर्थ । सुरति सचान तेरी मति तो मँजारी । अरे तुम्हारी सुरत तो जैसी चिड़िया पर बाजकी सुरति लगती है, तैसेही सब जीवन पर तुम्हारी सुरत लगी है। कितनेई पक्षी बाजने पकड़े; परंतु तृष्णा कछु बुझती नहीं । जबलग जीता है, तबलग सुरति पंछिन पर लगी रहती है । तैसी तुम्हारी सुरत अनेक जीवकी पकड़े; परंतु तृप्त नहीं होती । औ तुम्हारी मति जो देखता हों, तो जैसी बिलारीकी मति चूहा पकड़नेके हेतु; तैसे संसारके जीवको भुलायके पकड़ते हो । ये अर्थ । अरे अति सयाने जो बड़े-बड़े ज्ञानी भये, तिनकी परम विरुद्धता देखो—जो मीमांसा शास्त्रके आचार्य जैमिनि कर्मकी थापना करते हैं । कहते हैं कि, जो कछु है सो कर्महीं है । जीवका अधिष्ठान कर्म । जीव कर्महीसे उद्भव होता है औ कर्महीमें रहके बर्तता है, औ कर्महीमें लय पावता है । कर्म ही कंगाल करता है, और कर्म ही दुःख देता है, औ कर्म ही सुख देता है । जो कछु होयगा, सो कर्महीसे होयगा । कर्म बिना कछु नहीं । ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र आदि देवता औ सनकादि आदि ऋषी भये; परंतु सब कर्मके अधीन रहे । ज्ञान योग सब कर्मके अधीन है । अरे ज्ञानी सबको ज्ञान बताते हैं, औ योगी सबको योग बताते हैं, औ भक्त सबको भक्ती बताते हैं और उपासक सबको उपासना बताते हैं। फिर ये सब स्वतंत्र हैं, तो प्रकाश क्यों नहीं होता ? कोईको होता है औ कोईको

नहीं होता। तब सब कर्मके अधीन औ कर्म सबका अधिष्ठान। कर्मही ब्रह्म। कर्मसे ज्यादा कछु नहीं। ज्ञान-योग-बैराग्य ये सब कर्मके अधीन। बिचारे जिधर कर्म नचावैं, उधर नाचते हैं। ये अर्थ। अब वैशेषिक या वैदिक शास्त्रके आचार्य कणाद बोलते हैं कि, कर्म तो कछु स्वतंत्र नहीं, समयके वश॥ कधी प्रात समय न हुवा, तो प्रातकर्म होयगा? और मध्यान समय न हुवा, तो मध्यान कर्म होयगा? औ सायंकाल न हुवा, तो सायं कर्म होयगा? नहीं होनेका। बाल कालमें तरुण कालका कर्म नहीं होता औ तरुण कालमें बाल कालका कर्म नहीं होता तरुण कालमें वृद्ध कालका कर्म नहीं होता। तब तो कर्म कालके आधीन। कालही ब्रह्म औ कालसे आगे कछु नहीं। काल पायके ब्रह्मा, विष्णु, महेश पैदा होते हैं औ काल पायके नाश हो जाते हैं। काल पायके सृष्टि उत्पन्न होती है औ काल पायके प्रलय होती है। काल पायके औतार आदि जीव पैदा होते हैं औ काल पायके सुख दुःख भोगते हैं। औ काल पायके कर्म भी उत्पत्ति-प्रलय होते हैं। तब कर्म परतन्त्र औ काल स्वतंत्र। कर्म जब चाहे, तब कियेसे होता है औ काल कछु कियेसे होता नहीं। तब काल सत्य औ कर्म असत्य। जैसे किसान किसानी करता है; परंतु काल न होय, तो कछु अनाज पकता नहीं। काल न होय तो उसका कर्म सब मिथ्या। तब काल सबका अधिष्ठान, कालही ब्रह्म। ये अर्थ। तब न्यायशास्त्रके आचार्य गौतम बोलते हैं कि, काल छिन आता है छिन जाता है औ कर्म घटत-घटत घट जाता है। तो ये काल औ कर्म नास्ति, परमात्मा अस्ति। तीन काल आता जाता है औ काल ईश्वरके आधीन है। ईश्वर चाहे तो वर्षाकालको धूप काल करे औ धूप कालको वर्षाकाल करे। चाहे तो रंकको राजा औ राजाको रंक करे। कालको अकाल, अकालको काल करे।

कवित्त—सर्वेश्वर की कृपा बिना कछु, ज्ञान अज्ञान सो काम न आवै। चाहे तो ज्ञानी अज्ञानी करे, अज्ञानीको तुरतहि

ज्ञानि बनावै । चाहे अकर्मी कुकर्मी मुक्तावै, चाहे सुकर्मिन नर्क भुगावै । चाहे तो सृष्टि रचे पलमाहिं जु, चाहे तो सब छिन मोहिं मिटावै ॥ १ ॥

इस प्रकारसे समस्त ईश्वरके आधीन, सूत्रधारी; जैसा दारुपुतलीके माफिक संसारको नचाता है । तब ईश्वर अस्ती औ काल कर्म स्वभाव सब नास्ति । ये अर्थ । तब पातंजलि शास्त्रवाले शेष बोलते हैं कि, तूने ईश्वरको देखा है ? कि ईश्वर कैसा होता है ? जो देखा नहीं तो उसका क्या प्रमाण ? अरे ईश्वर क्या है ? और कैसा है ? तूने कछु भी देखा है ? कि अनुमानसे ही मानता है ? बिना अनुभव ताको कछु प्रमाण नहीं । औ अनुमानसे पीतर, पाथर, काष्ठ आदि आठ प्रकारकी मूर्ति प्रतिमा पूजा स्थापते हो, सो सर्व मिथ्या । तीर्थ, व्रत आदि जो थापते हो, ये सब मिथ्या, अनात्मा । सच्चिदानंद सत्य आत्मा । सो हम योगमार्गसे देखते हैं औ तुम्हारेको कछु अनुभव नहीं । तुम पाथर पूजते हो हम ब्रह्मांडका कारखाना सब पिंडांडमें देखते हैं । सो हमारी बात सच्ची औ तुम्हारी बात सब झूठी । ईश्वरका अनुभव हमको है । तो योग सत्य औ सब मिथ्या । बिना योग कछु अनुभव नहीं होता । ये अर्थ । तब सांख्यशास्त्रवाले कपिल मुनी बोलते हैं कि, एकदेशी अनुभव औ एक-देशी ज्ञान कछु कामका नहीं । ब्रह्म तो सर्वदेशी, सर्वसाक्षी, अकर्ता । करतूत तो सारी प्रकृतीकी है । योग समाधी सारी प्रकृतीसे जानिये । संसारकी उत्पत्ती, स्थिति, लय सब प्रकृतीसे होती है । सो पाँच तत्त्व औ पच्चीस प्रकृती, चार देहके सब तत्त्व नास्ती, इसका जाननेवाला मैं सर्वसाक्षी अस्ती । संपूर्ण अनित्य औ मैं नित्य । योग कर्म इत्यादि सर्व अनित्य । ये अर्थ । औ वेदांत शास्त्रवादि व्यास बोलते हैं कि, सर्व कल्पित शास्त्र हैं नास्ती । अरे एक ब्रह्म अखंड संपूर्ण, सब आप ही आपतामें अस्ती-नास्ती कहाँ संभवता है ? ध्याता-ध्यान-ध्येय, ज्ञाता-ज्ञान-ज्ञेय, ऐसी त्रिपुटी ब्रह्ममें संभवती नहीं । ब्रह्म तो अखंड, अद्वैत,

एक रस; तामें द्वैत नित्या-नित्य अथवा समाधी ये संभवती नहीं। सब देखना औ देखनेमें आवना औ देखनेवाला सब ब्रह्म औ कछु नहीं, सर्व नास्ती। ये अर्थ। इस प्रकार अतिरे विरोधी देखो अतिरे सयाना। जो छौ शास्त्रनके आचार्य बड़े-बड़े सयाने भये, तिनमें बड़ा विरोध है। मत प्रमाण कैसे होय? औ चार वेदमें भी विरोध है। ऋग्वेद कहता है कि, परमात्मा निराकार, निर्लेप, अलख, अगोचर है। निरालम्ब ब्रह्मेति श्रुति। अथर्ववेद बोलता है कि, ये सब मिथ्या औ प्रपंच है जो दीखता है, सोई सत्य औ ब्रह्म निरालम्ब, निर्गुण कछु नहीं। जो मरा है सो मुक्त, फिर लौटके नहीं पैदा होता। जैसा वृक्षसे पत्र टूटता है फिर वृक्षको नहीं लगता। ऐसा जो मरा, सो गया। सर्वेवाहंपुरुषेति श्रुति। औ यजुरवेद कहता है कि, ये दोनों नास्ती, परमात्मा क्षीर सागर निवासी नारायण अस्ती। सगुणब्रह्मेति श्रुति। औ सामवेद कहता है कि, ये सर्व मिथ्या कल्पना है। न सगुण, न निर्गुण, न दृष्टिगोचर। अध्यारोप अपवाद नहीं। ये संपूर्ण ब्रह्म अखंड अद्वैत। तत्त्वमसीति श्रुति। इस प्रकारसे चारों वेदमें भी विरुद्ध है। फिर देखो, छौ दर्शन औ छानवे पाखंड सब संसारमें न्यारे ही अपना-अपना मत दृढ़ावते हैं, एकसे एक विरुद्ध करते हैं। सो ये जीव सब ऐसे ही मतनमें बंधमान भये औ एक-एक मतनका पक्ष लेके एक से एक लड़ते हैं। सो सब कहाँ हैं? हे जीव! तेरी कल्पना तेरा स्वरूप नहीं। सुनो, हे नरबंदा! डाइनि डिंभ! सकल जग खंदा। डाइनि कहिये बानी, आशा, तृष्णा औ स्त्री, औ डिंभ कहिये गुरुवा लोग, भेष षटदर्शन औ नाना-मत, याहीने सब जग खाया, बिना पारख। ये अर्थ॥ १०४॥

शब्द १०५.

ये भ्रम भूत सकल जग खाया। जिन-जिन पूजा ते जहँड़ाया॥
अंड न पिंड न प्राण न देही। कोटि-कोटि जिव कोतुक देही॥
बकरी मुर्गी कीन्हेउ छेवा। आगल जन्म उन औसर लेवा॥
कहहिं कबीर सुनो नर लोई। भुतवाके पूजले भुतवा होई१०५॥

टीका गुरुमुख—ये भ्रम भूत सकल जग खाया । जिन-जिन पूजा ते जहँड़ाया । भ्रम भूत कहिये ब्रह्मभूत, ताने सकल जग खाया औ जिन-जिन पूजा, अनुमान किया, मानंदी किया; तेहि जहँड़ाया । अरे न अंड, न पिंड, न प्राण, न देही, मिथ्या धोखा, कछु है नहीं । तो कोटि-कोटि कोटिन जीवोंको दुःख देते हैं । मानके आपुही अनुमान रूपी होय जाते हैं जीव । ये अर्थ । बकरी मुर्गी कीन्हेउ छेवा । अरे नाना प्रकारकी बानी सुनी कि,यज्ञ आदिक कर्म करनेसे स्वर्ग आदिक प्राप्त होता है;सो मिथ्या धोखा; ताके भरोसे देवी-देवता स्थापना करके बकरी मुर्गी मारने लगे । सो सब अगले जन्ममें बखत पाय कर बदला लेयेंगे तब कछु देवताका मकदूर नहीं कि, बदला न लेने देवेंगे, क्योंकि देवता कल्पित औ जीव अकल्पित । अरे रामचन्द्र सरीखे स्वयं देवता, जिन्ह बालीको मारा; सो औसर पायके कृष्ण औतारमें उन्होंने व्याधका औतार लेके कृष्णको मारा । इस वास्ते गुरु कहते हैं कि, हे नर लोई सुनो, भूतके पूजे आपुही भूत होनेको होता है औ ब्रह्मके माने आपुही ब्रह्म होनेको होता है । ना कहूँ ब्रह्म है, ना कहूँ देवता हैं, सब मिथ्या धोखा । जो कछु होता है, सो ये जीव ही होता है । जो कछु कल्पना है, सो बन्धनमें आपुही परता है । ये अर्थ ॥ १०५ ॥

शब्द १०६.

भँवर उड़े बग बैठे आई । रैन गई दिवसो चलि जाई ॥
हल हल काँपे बाला जीव । ना जानों का करि हैं पीव ॥
काँचे बासन टिके न पानी । उड़ि गये हंस काया कुम्हिलानी ॥
काग उड़ावत भुजा पिरानी । कहहिं कबीर यह कथा सिरानी १०६

टीका गुरुमुख—भँवर उड़े बग बैठे आई । भँवर कहिये आशिक जीव, बग कहिये गुरुवा लोग । सो गुरुवा लोग जब जीवनके पास आयके बैठे, तब नाना प्रकारकी बानी दृढ़ावने लगे औ जीव सब बानीके संग उड़ने लगे । सो नाना प्रकारकी बानी अनुमान सिद्ध हो गया, ताही अनुमानमें

रात दिन चला जाता है । हल-हल काँपे बाला जीव । यह जीव अज्ञानी हल-हल काँपे बालवत, जैसे बालकको कोई डेरावता है, अनेक प्रकारका भय देके, तब बालक डरता है । तैसे ये गुरुवा लोग जीवको डेरावते हैं औ जीव डरते हैं । ये अर्थ । ना जानो क्या करि है पीव ? । ये जीव हल-हल काँपते हैं कि, ना जानो ईश्वर क्या करेंगे ? मेरी क्या गति होयगी ? काँचे बासन टिके न पानी ! जैसे काँचे बासनमें पानी टिक सकता नहीं, रह सकता नहीं, इस प्रकारसे ये देहमें जीव टिक सकता नहीं । सो ये दिन रात कल्पना करते-करते, डरते-डरते हंस उड़ गये औ काया कुम्हिलाय गई । देखो काग उड़ावत भुजा पिरानी । काग कहिये गुरुवा लोगोंको, भुजा कहिये जीव । सो गुरुवा लोगोंके उड़ावते-उड़ावते जीव पिराय गया, नाश भया धोखेमें पचिके । कहहिं कबीर यह कथा सिरानी । अरे तू जो मानंदी किया था औ जिनका भय माना था सो सब कहाँ है ? वो तो देहका व्यौहार, जब देह छूटा, तब सब रहि गया । औ ना गुरुवा लोग भी काममें आये, ना ब्रह्म ही भया, ना कोई देवता ही काम आये । सब मिथ्या कल्पना मिथ्या के संग गई । ये अर्थ । ॥ १०६ ॥

शब्द १०७.

खसम बिनु तेलीको बैल भयो ।
बैठत नाहिं साधुकी संगत । नाधे जन्म गयो ॥
बहिबहि मरहु पचहु निजस्वारथ । यमको दण्ड सह्यो ॥
धन दारा सुत राज काज हित । माथे भार गह्यो ॥
खसमहि छाड़ि विषय रँग राते । पापके बीज बोयो ॥
झूठी मुक्ति नर आस जीवनकी । उन प्रेतको जूठ खयो ॥
लख चौरासी जीव जंतुमें । सायर जात बह्यो ॥
कहहिं कबीर सुनो हो संतो । उन्ह श्वानकी पूँछ गह्यो १०७॥

टीका गुरुमुख—खसम बिनु तेलीको बैल भयो । जो कोई खसम गुरुवा लोगनने बताया, ताको विरह संसारमें भया, परंतु देखनेमें तो

काहूके नहीं आया । सो जैसे तेलीका बैल घूमता है औ आँखिसे तो कछु दिखता नहीं। जब लग तेलीने हकाला, तबतक घूमता रहा औ जब छोड़ा, तब जगहका जगह ही है ना कहुँ गया, ना कहुँ आया । इस प्रकारसे गुरुवा लोगोंने जबलग बहकाया, चलाया, तबलग बहकता चला गया औ फिर चोला छूटा, तब ना कछू भया, नाकहुँ गया, गर्भवाससे निकरा था, सो फिर गर्भवासहीमें समाया। अथवा वेदांत विचार करके गुरुवा लोगोंके फन्देसे छूटा, तो फिर देखो, ना कहूँ गया, ना कहूँ आया, ब्रह्म कहायके जगत्‌का जगत्‌में रहा । ये अर्थ । बैठत नाहीं साधुकी संगत, नाधे जन्म गयो । अब जो साधु पारखी हैं, तिनकी संगतमें बैठता नहीं । पारख कहाँसे आवै ? जो गुरुवा लोगोंने धोखेमें नाध दिया-ज्ञान, भक्ती औ योग, ताहीमें नाधा रहता है । जैसा तेलीका बैल घानीमें नाधा रहता है; तद्वत् । बहि-बाहि मरहु पचहु निज स्वारथ । नाना उपाधी यन्त्र, तंत्र, पूजा, व्रत इत्यादि करते करते मरते हैं, अपने स्वार्थके हेतु गुरुवा लोगके दण्ड सहते हैं । जैसा बोले तैसा करते हैं । जामें धन, धान्य, पुत्र, दारा और राज्य प्राप्त होय औ अनेक कारज, जो कछु चित्तमें आवै, सो सब सिद्धि होय इस हेतु माथे पर नाना प्रकारके भार धरते हैं, पूजा उपासना आदि । ये जीव प्रथम कोई देवताकी उपासना करता है औ कहता है कि, हम दरिद्री, हमको कछु द्रव्य मिले, तो अच्छा है । सो कछु दिनमें अपनी भावना सिद्ध हुई द्रव्य मिला; तब कहता है कि, हे गुरु ! हमको अच्छी स्त्री मिले । तब कछु दिनमें स्त्री भी मिली, तब कहने लगा कि, हे प्रभु ! एक पुत्र होय । वो भी हुवा, तब कहता है कि, राज मिलै, तो अच्छा है । सो भी मिला; तब कहता है कि, सब मेरे दुश्मन मरें, तो अच्छा है । औ मैं जो चितूँ तो सब होय । । वो भी होने लगा, तब कहने लगा कि, मैं सिद्ध, मैं धनवान्, मैं राजा, मैं सुखी मेरे माफिक और कोई नहीं । ऐसा कहिके मदांध हुवा । खसमहि छाड़ि विषय रंग राते, पापके बीज बोयो । सबका खसम जीव, सो नाना प्रकारके विषय रंगमें

राते औ मदांध होयके चोला छोड़ा, तब खाविंदी सब जाती रही। पाप कहिये विषय, ताको बीज बोयो विषय रंगमें अपने पदको नहीं प्राप्त भया, सो फिर गर्भवासमें गया। पाप कहिये गर्भवास, पापको बीज विषय। ये अर्थ। गुरुवा लोगोंने जो मुक्तिकी आशा लगाई जीवनको, सो मिथ्या। अरे उन गुरुवा लोगोंने प्रेतको जूंठ खायो। अरे आगे जो होयके, बानी कथके ब्रह्मादि मर गये, तिनकी जूंठी बानी ये सब ग्रहण किया; सोई सायर चौरासी लक्ष जीव जन्तुमें बह चला। सायर कहिये अनुमान कहिये ब्रह्म। सो गुरु कहते हैं कि, हे जीव! कहाँ है ब्रह्म? सुनो-हे सन्तो! उन श्वानकी पूँछ गह्यो। श्वान कहिये ॐकार। सो उन ॐकारकी पूँछ गही। औ श्वान कहिये वेद, सो जीवन सब वेदकी बतकहीं पूछने लगे। वेदहीकी पूँछ गहके धोखेमें परे। ये अर्थ॥ १०७॥

शब्द १०८.

अब हम भैलि बहुरि जल मीना। पूर्बल जन्म तपका मद कीना॥
तहिया मैं अछलेउँ मन बैरागी। तजलेउँमैंलोगकुटुमरामलागी॥
तजलेउँ मैं काशी मति भई भोरी। प्राणनाथ कहु का गति मोरी॥
हमहिं कुसेवक कि तुमहिं अयाना। दुइमा दोष काहि भगवाना॥
हम चलि ऐलि तुम्हारे शरणा। कितहुँ न देखों हरिजीके चरणा॥
हम चलि ऐलि तुम्हारे पासा। दास कबीर भलकैलि निरासा १०८

टीका जीवमुख—अब हम भैलि बहुरि जल मीना। अब हम बहुरके योगी भये, तो पूर्व जन्मके भी हम योगभ्रष्ट थे। जल कहिये श्वासा, मीन कहिये जीव। सो जीव बोलता है कि, पूर्व जन्ममें हम योगाभ्यासी थे। सो अभ्यास करते-करते सिद्धि नहीं हुई, बीचहीमें चोला छूट गया; ताते अब उत्तम मानुष जन्ममें आयके फिर श्वासाके मीन भये औ उलटके ब्रह्मांडमें चढ़े, कृतकृत भये। ये अर्थ तहिया मैं अछलेउँ मन बैरागी, तजलेउँ मैं लोग कुटुंब राम लागी। तहिया पूर्व

जन्ममें अपने मनसे बैरागी था, राम प्राप्तिके हेतु लोग कुटुंब सब त्याग किया था; परंतु समाधी स्थिति न भई औ राम की प्राप्ति नहीं भई । मति हमारी भोरी हो गई, तामें काशी काया छूटी । अब फिर ये देह प्राप्त भई, सो हे प्राणनाथ ! हे गुरुनाथ ! क्या गति मोरी ? अब मेरी क्या गति होवेगी ? हमहि कुसेवक कि तुमहि अयाना, दुइमा दोष काहि भगवाना । हे भगवान ! क्या हमही कुसेवक हैं ? जो कछु सेवा न बनी आई कि, तुमही अज्ञान हो ? कि कछु समझाते न बना; ताते हम फिर गर्भवासमें आये औ इस जगत्में देह पाई । हे भगवान् ! हे गुरुनाथ ! दोनोंमें किसका दोष होयगा ? तब हम तुम्हारे शरण आये; परंतु जो हरीका तुमने नाम बताया था, सो हरीजीके चरण कहूँ देखे भी नहीं, ताते फिर हम देहमें आये । भला अब हम देहमें आयके तुम्हारे पास आये, प्रारब्ध योगसे औ बड़े हमारे भाग्य जो आप हमको मिले । सो अबके वख्त दासको परमात्माने भला निराश किया । संपूर्ण मेरा स्वरूप, मैं आत्मा अद्वैत, अखण्ड, ये निश्चय करवाया । ये अर्थ ॥ १०८ ॥

शब्द १०९.

लोग बोले दूरि गये कबीर । ये मति कोइ-कोइ जानेगा धीर॥
दशरथ सुत तिहुँ लोकहि जाना । राम नाम का मर्म है आना ॥
जेहि जिव जानि पराजस लेखा । रजुका कहै उरग समपेखा ॥
यद्यपि फल उत्तम गुण जाना । हरि छोड़ मन मुक्ति उनमाना॥
हरि आधार जस मीनहि नीरा । और यतन कछु कहैं कबीरा १०९॥

टीका मायामुख—कबीर कहिये जाकी सत्तासे काया चलती है । जड़ काया जाकी सत्तासे चैतन्यसी मालूम परे, सो कबीर काया बीर चैतन्य । सो ता चैतन्यको अज्ञानी लोग बोलते हैं कि, दूर गये । कोई जीव स्वर्गको गये औ कोई जीव नर्कको गये,औ कोई जीव नाना योनीको गये; ऐसी त्रिपुटी, त्रिभाग चैतन्यके विषय करते हैं, सो अज्ञानी । अरे

चैतन्य क्या कहीं खण्ड है ? जो एक स्वर्गको जायगा औ एक नर्कको जायगा औ एक नाना योनीको भ्रमेगा। चैतन्य तो अखण्ड, निरंतर, अन्तर कहीं नहीं, एकरस; तो आना जाना मिथ्या। जैसी समुद्रकी लहर, बुदबुदा औ तरंग क्या समुद्रसे न्यारे रहते हैं ? क्या वो जल नहीं ? तद्वत् जीव सब आत्माके बीच स्वाभाविक उठते हैं औ स्वाभाविक रहते हैं औ स्वाभाविक लय होते हैं। तो जीव ही आत्मा। तब उत्पत्ति, स्थिति औ लय; ये तीनों मिथ्या, एक आत्मा सत्य। ये मत कोई-कोई जानेगा धीर! ज्ञानी जानेगा। ये अर्थ। दशरथ सुत तिहुँ लोकहि जाना, राम नामका मर्म है आना। दशरथके पुत्रको तीनों लोकने जाना कि, 'राम'। परंतु राम नामका मर्म और ही है। अरे जो सबका अधिष्ठान सबमें रमता है, सो राम। औ असंख्यन जो अधिष्ठानमें दशरथ पुत्र खड़े भये औ फिर लय भये, सो आत्माराम। ये अर्थ। यद्यपि फल उत्तम गुण जाना। अरे ऐसा आत्मा न जानके फल- अर्थ, धर्म, काम, मोक्षादि, जो उत्तम गुण वेद, ताके प्रमाणसे जो जाना सो सब मिथ्या कल्पना। अरे प्रत्यक्ष आत्म अनुभव छोड़के परोक्ष मुक्ती अनुमान करता है, ये सब मनका भ्रम नास्ती, औ आत्म अनुभव अस्ती। ये अर्थ। हरि अधार जस मीनहि नीरा। हरि ईश्वर सब जगत्का अधार, जैसा मीनको जल अधार; तद्वत् द्वैतवादमें वेदने कहा। परन्तु अद्वैत विचारमें समर्थ अनुभाविक लोगोंने औही यतन कछु कहा कि, त्रिगुण विषय वेदने कहा औ सब जीवने माना कि, 'एक कारण ईश्वर औ कारज अनेक जीव' सो दोनों मिथ्या कल्पना औ एक आत्मा सत्य। निरद्वंद, नित्य, सत्य, निर्योग; ऐसा जो जानै सो आत्मवान्। जग ईश्वर कैसा ? जैसा समुद्र औ अनेक नदी, नाला, कूप तालाब औ दोनोंमें पानी एक। सो पानी सत्य औ नदी, नाला, कूप, तड़ाग और समुद्र ये उपाधी मिथ्या। ऐसा समुद्र माफिक बड़ी उपाधी ईश्वरकी। औ कूप, तालाब माफिक छोटी उपाधी जीवकी औ

दोनोंमें पानी एक। ऐसा आत्मा एक; नाम-रूप-उपाधी मिथ्या। आत्मा सत्य। ना जीव, ना ईश्वर। ये अर्थ ॥ १०९ ॥

शब्द ११०.

आपन कर्म न मेटो जाई।
कर्म का लिखा मिटै धौं कैसे। जो युग कोटि सिराई ॥
गुरु वशिष्ठ मिलि लगन सुधायो। सूर्य मन्त्र एक दीन्हा ॥
जो सीता रघुनाथ बियाही। पल एक संच न कीन्हा ॥
तीन लोक के कर्त्ता कहिये। बाली बधो बरियाई ॥
एक समय ऐसी बनि आई। उनहूँ औसर पाई ॥
नारद मुनिको वदन छिपायो। कीन्हो कपिको स्वरूपा ॥
शिशुपाल की भुजा उपारी। आपु भये हरि ठूठा ॥
पारवती को बाँझ न कहिये। ईश्वर न कहिये भिखारी ॥
कहहिं कबीर कर्ता की बातें। कर्मकी बात निनारी ॥११०॥

टीका गुरुमुख—अरे जासे अपना कर्म नहीं मेटा जाता सो दूसरे की कर्म रेखा कैसे मिटावेगा? जिससे अपनाही कर्म नहीं मेटा गया; उससे कोटी युग बीते, तो भी दूसरेका कर्म नहीं मिटनेका। ये अर्थ। गुरु वशिष्ठ मिलि लगन सुधायो, सूर्य मन्त्र एक दीन्हा। जो सीता रघुनाथ बियाही, पल एक संच न कीन्हा। वशिष्ठजी ऐसा बुद्धिमन्त ज्ञानी! औ योगमें भी सिद्ध! तिन्होंने अच्छी लग्न शोधके रामचन्द्रको सूर्य उपासना दई औ रामचन्द्र भी ईश्वर ही कहलाते थे; परन्तु उनसे अपना ही कर्म नहीं मेटा गया। कहो, अब उनके नाम स्मरण करेसे औ उनकी भक्ती करेसे दूसरेका कर्म कैसे नाश होयगा? अब दुनिया सब कहती है कि, भाई शुभ मुहूर्त, शुभ लग्न विचारके कोई काम करना। तो क्या वशिष्ठने कुमुहूर्त विचारा था? जो सीताको रघुनाथसे विवाह हुवा, सो सीताको एक पल भर भी सुख हुवा नहीं। भला जो आपही भगवान थे औ लग्न मुहूर्त भी सच्चा होता, तो वे

क्यों नाना दुःख भोगे ? तो लग्न मुहूर्त मिथ्या धोखा । ये अर्थ । अरे तीन लोकके कर्ता कहाते थे औ बालीको जबरदस्तीसे मारा; परन्तु एक समय ऐसी बनि आई कि, बाली तो व्याध हुवा औ रामचन्द्र कृष्ण हुये; तब उन भी औसर पायके कृष्णको मारा । शिशुपालकी भुजा श्रीकृष्णने उखाड़ी; तो मृत समय कृष्णके भी हाथ कटे औ जगन्नाथ आप ठूठे भये । अरे पार्वतीको क्या बाँझ न कहना ? औ महादेवको क्या भिखारी कहना ? ब्रह्माका शिर पारवतीके विवाहके समय महादेवने दक्षप्रजापतीके होममें उड़ाय दिया । सो ब्रह्महत्या महादेवके पीछे लगी तब बहुत दुःखी भये महादेव । भला जो आपही मालिक थे, महादेवने तो ब्रह्महत्या क्यों न दूर की ? तो हत्याके मारे शिव बहुत बेजार भये गीली हाथीकी छाल गलेमें पहिरे औ बाघका चमड़ा ओढ़े औ नरकी खोपड़ीमें भीख माँगके खाने लगे । औ चिता-भस्म लगायके श्मशानमें रहने लगे औ नरमुंड पहिरे । ऐसी गति उनकी भई । अब जीव सब उनके नाम औ उनके मन्त्रके भरोसे जीव हिंसा करते हैं । शिवशक्ती उपासक बकरा औ पशु मारते हैं । औ कहते हैं कि, हम उपासक हैं । तो इनके देवतोंको तो जीव हिंसाका दुःख छूटा नहीं, बदला देना परा तो इन भक्तनको कैसे छूटेगा ? गुरु कहते हैं कि, कर्ताकी बातें देखो, ये मनुष्यकी बातें, जो अपने विषय भोगके वास्ते औ अपने जीभ स्वादके वास्ते मन्त्र औ शास्त्र बनाया औ उसमें नाना प्रकारका दृष्टांत मिलाया औ महा अकर्मकी बातें जगमें चलाया । परंतु नाना योनीकी प्राप्ती होयके सब जीवनका बदला देना होवेगा, कछु छूटनेका नहीं । ये अर्थ ॥ ११० ॥

शब्द १११

है कोई गुरुज्ञानी ! जगत । उलटि वेद बूझै ॥
पानी में पावक बरे । अंधहि आँखि न सूझै ॥
गाई तो नाहर खायो । हरिन खायो चीता ॥

काग लंगर फाँदि के। बटेर बाज जीता ॥
मूस तो मंजार खायो। स्यार खायो श्वाना ॥
आदि कोऊ देश जाने। तासु बेश बाना ॥
एकहि दादुर खायो। पाँचहि भुवंगा ॥
कहहिं कबीर पुकारि के। है दोउ एकै संगा ॥१११॥

टीका मायामुख—है कोई गुरुज्ञानी ! जगत् उलटि वेद बूझै। महाज्ञानी ! अनुभाविक ! जो कोई जगत्में हैं सो श्वासा उलटके स्वरूपको बूझै। राजयोग विधीसे अथवा हठयोग विधीसे; अथवा ज्ञान योग विधीसे, अथवा सांख्ययोग विधीसे बूझै कि, आत्मा। ये चार विधी बिना कछु आत्मस्थिति होती नहीं औ जीव मुक्त होता नहीं, बन्धनमें रहता है। ये अर्थ। पानीमें पावक बरे, अन्धहि आँखि न सूझै। पानी कहिये बानीको। बानीमें नाना तौरसे अग्नी बार दिया गुरुवा लोगोंने, सो ये जीव अन्धे अज्ञान हैं; जिनको कछु सूझ नहीं परता। सो मारे विरहके धाय-धाय धोखेमें परते हैं। ये अर्थ। गाई तो नाहर खायो हरिन खायो चीता। गाई कहिये बानीको, नाहर कहिये मनको, हरिन कहिये परमात्मा, परमात्मा। कहिये जो सब मिलि एक, चीता कहिये चैतन्य ! सो जब बानी सुना कि, कोई अपना कर्ता है। तब मन उस बानीमें लीन हुवा औ कहूँ श्रवण मनन करके अथवा कहूँ योग करके तत्त्वमें तत्त्व, देहमें देह, अवस्थामें अवस्था लय करके एक गोलाकार किया; ताको परमात्मा कहिये, ताने जीव चैतन्य को खाया। काग लँगर फाँदिके बटेर बाज जीता। काग कहिये गुरुवा लोगोंको। सो गुरुवा लोगोंने जीवको नाना प्रकारसे फाँदा औ बटेर बानी, तामें जीव बाजको जीता। जीव बानीके वश हुवा। ये अर्थ। मूस तो मंजार खायो। मूस जीव, मंजार माया। सो मायाको जीवने खाय लिया औ ब्रह्म हुवा। स्यार खायो श्वाना। स्यार कहिये व्यासादि पंडित, ताको

श्वान वेदने खाय लिया, भरमाय दिया। ये अर्थ। आदि कोऊ देश जाने तासु वेश बाना। आदि कोऊ देश ब्रह्म, ताको जो जाने, सो ब्राह्मण। ऐसा मायाका उपदेश भया। गुरुमुख–सो एकहि दादुर खायो, पाँचहि भुवंगा। एकहि दादुर कहिये ब्रह्म, ब्रह्म कहिये ॐकार सो ॐकारने पाँच अभिमानको खाया औ दोनों एक संग भया। जीव ब्रह्म एक भया। सो गुरु कहते हैं कि, विचार करके देखो, कहाँ है ? अरे मिथ्या धोखा अनुमानमें सब जीव परे बिना पारख। ये अर्थ ॥ १११ ॥

शब्द ११२.

झगरा एक बढ़ो राजा राम। जो निरुवारै सो निर्वांन ॥
ब्रह्म बड़ा कि ? जहाँसे आया ? वेद बड़ा कि ? जिन उपजाया ?॥
ई मन बड़ा कि ? जेहिमन माना ? राम बड़ा कि ? रामहि जाना ?॥
भ्रमि-भ्रमि कबिरा ! फिरे उदास। तीर्थबड़ाकि तीर्थका दास ११२॥

टीका गुरुमुख–झगरा एक बढ़ो राजा राम !। गुरु कहते हैं कि, प्रथम आचरणमें जब ये कच्चे तत्त्वनकी देह प्राप्त भई, नारीके संयुक्त करके अनेक जीव उत्पन्न भये; तब त्रिविधि तापमें बहुत तप्त भये, दुःखित भये। त्रिविधि ताप कहिये दैहिक दैविक भौतिक। ये त्रिविधि ताप विवरण।

कवित्त–अंतःकरण अध्यात्म जहाँ, विष्णु आधि देव तहाँ। आधिभूत निर्विकल्प, ताहिको बताइये ॥ मन अध्यात्म जहाँ, चन्द्र आधिदेव तहाँ। संकल्प विकल्प आधि, भूतहुँ रताइये ॥ चित अध्यात्म जहाँ, नारायण आधिदेव। अनुसंधान आधिभूत, जहाँ-तहाँ जाईये ॥ बुद्धि अध्यात्म जहाँ, ब्रह्मा आधिदेव तहाँ। निश्चयता आधिभूत, जड़ता लखाइये ॥ हँकार अध्यात्म जहाँ, शंकर आधिदेव तहाँ। अहंकृति आधिभूत, ताहिको बताइये ॥ कान अध्यात्म जहाँ, दिसा आधिदेव तहाँ। आधिभूत शब्दको, सुनन लखि पाइये ॥

नासिका अध्यात्म जहाँ, अश्विनी आधिदेव तहाँ । गंध औ सुगंध सोई, आधिभूत गाइये ॥ जिभ्या अध्यात्म जहाँ, वरुण कहिये आधिदेव । रस औ सुरस लेन, आधिभूत लखाइये ॥ नेत्र अध्यात्म जहाँ, सूर्य आधिदेव तहाँ । रूपको देखाय सोइ, आधिभूत पाइये ॥ त्वचा अध्यात्म जहाँ, वायू कहिये आधिदेव । स्पर्श आधिभूत तहाँ, परतक्ष लखाइये ॥ हस्त हैं अध्यात्म जहाँ, इन्द्र कहिये आधिदेव । लेन-देन आधिभूत, बहुत मन भाइये ॥ पाँव है अध्यात्म जहाँ, अग्नी कहिये आधिदेव । आधिभूत चलावो है, जहाँ तहाँ जाइये ॥ गुदा है अध्यात्म जहाँ, यम कहिये आधिदेव । मैलको विसर्ग आधि, भूतहू रताइये ॥ लिंग अध्यात्म जहाँ, आधिदेव प्रजापति । मैथुनको करब येही, आधिभूत ल्याइये ॥ बानी अध्यात्म जहाँ, उपेन्द्र आधिदेव तहाँ । बोलब सोइ आधिभूत जक्तमें बताइये ॥ ऐसे त्रिविधि ताप माँहि, जीव सब हैरान भये । संतगुरु कृपाल होय, ताहिको छोड़ाइये ॥ १ ॥

दैहिक कहिये जो देहमेंसे उत्पन्न होता है ज्वरादि रोग । औ दैविक कहिये अनाचित शिरपर पत्थर पड़े कि; घरमें बैठे हैं, सो घर ऊपर गिर पड़ा कि; झाड़के तरे खड़े हैं, सो झाड़ टूटके शिर पर गिरा । अनाचित बेकारण दुःख भया, सो दैविक । औ बाघने मारा, सर्पने काटा, चोरने मारा, राजदंड भया; ऐसा दूसरे जीवके तरफसे जो दुःख होय, ताको आधिभौतिक कहिये । इस प्रकारसे नाना प्रकारका दुःख जीवनको हुआ, तब जीव सब व्याकुल भये औ झगरेमें परे । सबन मिलि मनसुबा किया कि, अपना सुख-दुःखका दाता कोई ईश्वर है । जाका ऐश्वर्य जगत्‌में विदित है, सो ईश्वर । हम रैयत कछु लाचार और बहुत दुःखी, तेरी मायाके वश हैं । तुम राजा ! हमारे मालिक । तू जो चाहे, सो करै । तू सब ऐश्वर्यका मालिक है, ताते हम तेरे दास । ऐसा कहिके नाना प्रकारसे ईश्वरका

सिद्धान्त करने लगे। किसीने शक्तिको ईश्वर माना औ किसीने महादेवको ईश्वर माना औ किसीने विष्णुको ईश्वर माना औ किसीने सूर्यको ईश्वर माना औ किसीने गणेशको ईश्वर माना औ किसीने संपूर्ण ब्रह्मांड व्यापी है, ताको ईश्वर माना। इस प्रकारसे नाना प्रकारके सिद्धांत औ उपासनाका झगरा बढ़ा औ एकको एक दोषने लगे। सो झगरेमें जीव परे; नाना बन्धनमें परे; सोई झगरा बढ़ा। राजा कहिये ईश्वर औ राम कहिये आत्मा। जब निरुवारा किया कि, ब्रह्मांडमें जो व्यापक है, सो भी चैतन्य औ पिंडांडमें जो व्यापक है सो भी चैतन्य। तो चैतन्य तो एक औ नाम-रूप न्यारे-न्यारे, सो उपाधी मिथ्या औ चैतन्य सत्य। जैसा समुद्र औ कूप तालाब; तैसा जीव औ ईश्वर; परंतु पानी दुहुनमें एक। नदी, नाला, कूप, तालाब, समुद्र; ये सब नाम-रूप उपाधी मिथ्या। इस प्रकारसे आत्मा सत्य औ नाम-रूप उपाधी मिथ्या। ऐसा जो निरुवारा किया, सो निर्बान आत्मा बना। झगरा कहिये जगत् जीव त्वं पदार्थ, एक राजा ईश्वर, राम एकता आत्मा निर्बान। ये अर्थ। ब्रह्म बड़ा कि, जहाँसे आया। अरे ब्रह्म बड़ा कि; ऐसी भावना जासे उठी, सो जगा बड़ा। ? कि ब्रह्म बड़ा ? अरे आनन्द आनन्द सब कहते हैं; परंतु जहांसे आनन्द उपजा, सो ठौर कौन ? ताको नहीं परखते औ आनन्दमें लीन होय रहे हैं। अरे पृथिवी तत्त्वकी दो कला,-गंध छोड़ना औ गंध आकर्षण करना। औ दो इंद्री पृथिवीकी। नाक औ गुदा। सो गुदासे गन्ध छोड़ देते हैं और नाककी कलासे गन्ध खैंच लेते हैं। परंतु गंध कि सुगन्ध, ऐसा जानना ये स्वभाव तेरा है। पानीकी इंद्री दो-लिंग औ जिभ्या, ताकी दो कला-रस उपजावना औ रस खैंच लेना। सो रसको जाननेवाला चैतन्य बिना कौन है। अग्नीकी इंद्री आँख औ पाँव, ताकी कला दोरूप देखना औ पाँवमें तेज रखना। परंतु तेजका जाननेवाला तू ही वायुकी इंद्री दो-हाथ औ त्वचा,

ताकी कला दो-स्पर्श करना औ स्पर्शको आकर्षण करना । परंतु स्पर्शको जाननेवाला तूही । आकाशकी दो इंद्री-वाक औ कान, ताकी दो कला-बोलना औ शब्द आकर्षण करना । परंतु इनका जाननेवाला तूही । तेरे बिना ये पाँचो जड़, इनमें क्या सत्ता है ? जो सबनके रस स्वभावको जाने । अरे पाँच तत्त्व भी जड़ औ इनके विषय भी जड़, इनमें कछु सत्ता नहीं । तेरे बिना इनके गुण दोष जानने वाला कौन है ? भला पाँच तत्त्वनकी दश इंद्री औ दश कला,इनका जानने वाला जीव । अब देवता कहाँ है ? तो चतुर्दश देवता मिथ्या, तेरी कल्पना । अब ऐसा कोई कल्पना करेगा कि, इंद्रिय भी हैं औ तत्त्व भी है, परंतु अंधा, बहिरा, पंगुला क्यों होता है ? जो देवता नहीं तो । ये शंका । तो एक आँखी अंधा औ एक कान बहिरा औ आधा अंग शून्य औ एक पाँव पँगुला होता है, तो आधा देवता जाता रहता है क्या ? सो आधा देवता जाता है औ आधा देवता रहता है, ये बात नहीं संभवती । तो तत्त्वकी आधी कला शून्य होय जाती है । भला अंतःकरण आकाशका स्वभाव शून्य आनन्द जो ब्रह्मको बड़ा आनंद निर्विकल्प मानिये, तो अन्तः करणकी कला, आकाशका स्वभाव जीव सहित अनुभवमें आता है । परन्तु वो निर्विकल्पमें जीव सामिल ना रहे, तो निर्विकल्प कछु माल नहीं, जड़ शून्य मिथ्या धोखा है । जो ब्रह्म सविकल्प मानिये, तो चित्तका स्वभाव, वायुकी कला, जीव सहित एकत्व मालूम होती है । उसमें जीव सामिल ना रहै, तो सविकल्प कछु माल नहीं । तो जैसाका तैसा, ना निर्विकल्प, ना सविकल्प; ऐसा मानिये, तो बुद्धीका स्वरूप । बुद्धी पृथ्वीकी कला जड़, जीव सहित अनुभवमें आती है । अगर जीव न होय, तो वो भी कछु नहीं । जो ईश्वर दूसरा ब्रह्मांड औ स्वर्ग आदिकमें मानिये तो संकल्प विकल्प मनका स्वभाव । मन पानीकी कला, जीव संयुक्त दूसरा परमात्मा, ऐसा मालूम होता है औ जीव संकल्प-विकल्पमें सामिल ना रहै, तो दूसरा परमात्मा मिथ्याभूत । भला प्रत्यक्ष आँखसे

देखना, सोई परमात्मा; ऐसा मानिये, तो अग्नीकी कला, जाग्रत अवस्था, अहंकारका स्वभाव, जीव संयुक्त मालूम होता है। अगर जीव देह अभिमानमें सामिल न होय, तो प्रत्यक्ष जेता देखनेमें आता है, सो सब जड़ औ नास्ती। जीव जाग्रतमें सामिल न होय, तो प्रत्यक्ष कछु माल नहीं, मिथ्याभूत। तो ब्रह्मका सिद्धांत अब कैसा मानिये! ब्रह्म मिथ्या जीवका अनुमान, जीव बिना कछु सिद्ध होता नहीं। तो जीव सत्य औ ब्रह्म आदि अनुमान मिथ्या। तो भला जीव बड़ा ठहरा औ वेद श्रुती कहती है कि, ब्रह्म बड़ा, सबका अधिष्ठान औ जीव ना कछु, अज्ञान वश। ये शंका। तो गुरु कहते हैं कि, वेद बड़ा कि? जिन उपजाया?। अरे वेद तो कछु आकाशसे गिर नहीं परे औ निर्जीवसे कहीं वेद औ बानी पैदा होती है? तो तू बिचार करके देख कि, वेद औ नाना बानी कहाँसे पैदा भई? औ किनने बनाई? सो तुम जानो कि, बानी बनाना ये कछु निर्जीवका धर्म नहीं। जीवहीसे बानी बनी औ जीवही बानी बाँचता है औ जीवही बानीका बिचार कहता है औ ब्रह्मको मानता है अपरोक्ष वा परोक्ष बानीके आधारसे; सो बानी जीवकी कल्पना। तो जीव सत्य औ कल्पना असत्य नास्ती। भला बानी तो जीवकी कल्पना; परन्तु सब बड़े-बड़े समर्थ सनकादिकनने माना। जो आप न मानना, तो दोष तो नहीं होनेका?। ये शंका। ये मन बड़ा कि, जेहि मन माना? ये मनुष्य सबते बड़ा, जिसने सबको माना, ब्रह्म आत्मा ईश्वर आदि। जो जीव न माने, तो मानंदी ब्रह्म, आत्मा ईश्वर कछु माल नहीं। तो मानन्दी मिथ्या कल्पना औ माननेवाला सच्चा। ये अर्थ। भला राम सर्व हर्ता-कर्ता, सर्वाधिष्ठान; ऐसा सबका प्रमाण है बड़े-बड़े अनुभाविक लोगोंका, इसको कैसे न मानना? ये शंका। तो राम सच्चिदानंद बड़ा कि? जाने सच्चिदानंद ऐसा जाना, सो जीव बड़ा?। अरे जो सच्चिदानंदका जाननेवाला जीव न होय, तो सच्चिदानंद औ राम कछु वस्तु नहीं। ये अर्थ। भ्रमि भ्रमि कबिरा फिरे उदास, तीर्थ बड़ा कि तीर्थका

दास। अरे भ्रमि भ्रमि जीव उदास होयके गंगादि तीर्थनकी स्थापना करता फिरता है औ आप दास बनता है। परन्तु तीर्थका दास जीव न होय, तो तीर्थ कछु माल नहीं। जिस नदीको सब जीव मिलके स्थापना करें औ जाय सोई महातीर्थ। औ गंगादिक कोई नहीं माने औ कोई ना जाय; तो जैसे सब नदी, तैसी गंगा भी। ये अर्थ ॥१२॥

शब्द ११३.

झूठेहि जनि पतियाउ हो। सुनु संत सुजाना ॥
तेरे घटहीमें ठगपूर है। मति खोवहु अपाना ॥
झूठेकी मंडान है। धरती असमाना ॥
दशहूँ दिशा वाकी फँद है। जीव घेरे आना ॥
योग जप तप संयमा। तीरथ व्रत दाना ॥
नौधा वेद कितेब हैं। झूठेका बाना ॥
काहू के बचनहि फुरे। काहू करामाती ॥
मान बड़ाई ले रहे। हिंदू तुरुक जाती ॥
बात बेंवते अस्मानकी। मूहति नियरानी ॥
बहुत खुदी दिल राखते। बूड़े बिनु पानी ॥
कहहिं कबीर कासों कहौं। सकलो जग अंधा ॥
साँचेसे भागा फिरे। झूठेका बंदा ॥ ११३ ॥

टीका गुरुमुख-झूठेहि जनि पतियाउ हो, सुनु सन्त सुजाना!। हे सुजान! हे सन्त! झूठी बात कल्पना, ताको मत पतियाव। जो कछु वानीका भास है औ लक्षका भास है ब्रह्म, ताको प्रतीत करो। वो झूठा धोखा जगको कारण। हे जीव! तुम सुनो, सुज्ञानको प्राप्त होके पारखमें शाँत हो। सुज्ञान कहिये शुद्ध ज्ञान; जाके जाननेमें कछु कसर न ठहरे, सो शुद्ध ज्ञान औ सब तत्त्वमसि आदि कसर न परखके पारखमें शाँत भया; फिर कधी उसमें कल्पना औ अनुमान उदगार ना होय सो सन्त। ये अर्थ। सो गुरु जीवसे कहते हैं कि, तेरे घटहीमें ठग-

पूर है । जाको ब्रह्म औ आत्मा औ ईश्वर; ऐसा वेद गावता है, सो त्रिविध धोखा, ता धोखेमें तुम अपनेको मत खोवो । तुम सुजान शुद्ध चैतन्य हो, ताते शुद्ध पारखको प्राप्त होके शाँत हो । ये अर्थ झूठेकी मंडान है, धरती असमाना । धरती कहिये अर्ध; तरे औ असमान कहिये ऊर्ध, ऊपर । सो कोई कहते हैं योगी कि, ब्रह्म तरे, सबमें भरा है । औ कोई कहते हैं कर्मिक, उपासक, नैयायिक कि, परमात्मा ऊपर सबसे न्यारा है । औ कोई वेदांती कहते हैं कि, संपूर्ण जगत आत्मारूप है, अर्ध-ऊर्ध भेद शून्य नहीं । जैसा पृथिवीका विकार घट-कुम्भादिक पृथिवी ही है औ आकाशका रूप घट-मठ-पटाकाशादि सब आकाश ही है । तद्वत् जगत् औ ब्रह्मांड सम्पूर्ण ब्रह्म ही है, नाम रूप उपाधी मिथ्या भ्रम । इस प्रकारसे ज्ञानी विज्ञानिनकः सिद्धान्त है, सो भी जीवका धोखा । तू अच्छा परखके देख । भला जो जीव न होय, तो ये सिद्धांत कौन करे ? सो तू देख कि जो-जो जीवको भास हुवा, सो-सो सब जीवने निश्चय किया औ उसीकी अधिकाई वर्णनकी । अपनेको भूला बिना पारख । सो पारखको तू प्राप्त हो औ भास अध्यासादि बन्धन जानके तोर डार । पारख तेरा रूप है । पारख के ऊपर कुछ नहीं । औ दशों दिशा वाकी फँद है, जीव घेरे आना । दशों दिशा कहिये चार वेद छौ शास्त्र सो सम्पूर्ण धोखेकी फंद है, जा धोखेसे आप अपनेको भूला औ कहा कि, मैं आत्मा ! दशों दिशा चराचर पूर्ण हौ । इस प्रकारसे जीव भ्रमचक्रमें परके गाफिल हुवा । जो गाफिली आदिमें खड़ी हुई, सोई गाफिली अन्तमें स्थिति ठहरी । ये अर्थ । योग जप तप संयमा, तीरथ व्रत दाना । नौधा वेद किताब है, झूठेका बाना । कैसे भ्रम-चक्रमें परा ? सो सुनो,—प्रथम तो कोई कर्ता दूसरा है, ऐसी कल्पना की नैयायिक मत । फिर उस कर्ताकी प्राप्तीकी, इच्छा की, ताते नाना कर्मनकी कल्पना बढ़ी । कहीं कहा कि, योग किये बिना ईश्वर

की प्राप्ति नहीं । ताते नाना हठयोग राजयोग, पातंजल मत कल्पित किया औ उसपर आरूढ़ हुआ । और किसीने उपासना कल्पित की ईश्वरका नाम-ध्यान आराधने लगा, नाना प्रकारके यज्ञ करने लगा । अश्वमेध-नरमेध-गोमेध आदिक यज्ञ करने लगे औ कोई नाना प्रकारके मंत्रनका जाप करने लगे औ कोई तपस्या करने लगे, पंचाग्नी साधने लगे । दूध अहार, फल अहार, तृण अहार, चान्द्रायणादि व्रत आचरण करने लगे । औ कोई संयम प्राणायाम प्रत्याहारादिक कर्म आचरण करने लगे । औ कोई गंगादिक तीर्थ आचरण करने लगे औ व्रत चान्द्रायणादि औ दान गोदानादि औ नौधा भक्ति, येतिक कल्पना औ वेद किताब आदि बानी; ये सब झूठेका बाना कल्पनाके हेतु उठाव लिया । ये सब धोखेका बाना । ये जीव तो स्वतः आप ही हैं, तो इसको योग, जप, तप आदिक कर्म काहेको चाहिये ? तो भ्रमवश मिथ्या धोखेके हेत । ये अर्थ । काहूके बचनहि फुरे, काहू करामाती । जो ऐसा कोई कहेगा कि, योग क्रियादि करेसे काहूको वचन सिद्धि औ काहूको करामात मंत्र सिद्धि होती है, सो मानना कैसा नहीं ? तो बहुत दिन मनको एकाग्रताई ।कया उन्मनी आदि ध्यानसे, ताते वचन सिद्धि औ करामात हुई । औ जगत्में मान बड़ाई हुई; परन्तु जब चोला छूटा, तब सबहीं नाश हो गई; कछु पारख स्थिति नहीं प्राप्त भई । तो सब मिथ्या धोखा । ये अर्थ । अरे बात बेवर्ते आसमानकी, मुद्दति नियरानी । बातें तो बहुत-बहुत अस्मानकी करते हैं कि, हम सिद्ध, हम करामाती, हम कर्मिष्ठ, हम धनपात्र, जो चाहैं सो करैं । परंतु इनके ऐश्वर्यकी मुद्दत नजदीक आई, मौत आई । जब मरेंगे, तब सबही छूट जायगा । आखिर चौरासीको प्राप्त होवेंगे । बहुत खुदी दिल राखते, बूड़े बिनु पानी । खुदी कहिये वासना, आशा; बहुत प्रकारकी बासना करके आशा करते थे, सो बिनु पानी धोखेमें बूड़े ।

पानी कहिये बानी, सो नाना प्रकारकी बानी औ सिद्धांत किया; परन्तु आखिर सब मिथ्या कहके अनिर्वाच्य धोखेमें बूड़े औ अनेक योनी गर्भवासमें आया, बिना पारख। ये अर्थ। कहहिं कबीर कासो कहौं, सकलो जग अन्धा। गुरु कहते हैं कि, ये सब संसार बिनु पारख अन्धा है, इनको कछु सूझ परता नहीं। अरे कहो, तुमको जीवसे और कोई नजर आता है? जो नजर नहीं आता, तो खाविंद ब्रह्म कासो कहो? अरे सच्चा जो जीव है; तासे भागते फिरते हो औ झूठा धोखा जो वेदने औ गुरुवा लोगोंने बाँधा है, सो उनके वश होयके झूठ धोखेके बँधुवा हो रहे हो। बिना पारख बोलते हैं कि, हम रामके बन्दे, खुदाके बन्दे। ऐसा आसक्त हो रहे हो। ये अर्थ॥११३॥

शब्द ११४.

सार शब्द से बाँचि हो। मानहु इतबारा हो ॥
आदि पुरुष एक वृक्ष है। निरंजन डारा हो ॥
त्रिदेवा शाखा भये। पत्र संसारा हो ॥
ब्रह्मा वेद सही कियो। शिव योग पसारा हो ॥
विष्णु माया उत्पत कियो। ई उरले ब्योहारा हो ॥
तीनि लोक दशहूँ दिशा। यम रोकिन द्वारा हो ॥
कीर भये सब जीयरा। लिये विष का चारा हो ॥
ज्योति स्वरूपी हाकिमा। जिन अमल पसारा हो ॥
कर्मकी बंसी लायके। पकर्यो जग सारा हो ॥
अमल मिटावो तासु का। पठवों भव पारा हो ॥
कहहिं कबीर तोहि निर्भय करों। परखो टकसारा हो ॥११४॥

टीका गुरुमुख--सार शब्दसे बाँचि हो, मानहु इतबारा हो!। गुरु कहते हैं कि, हे जीव! सार शब्दसे बाँचि हो। सार शब्दका विचार करेसे भ्रम धोखेकी फाँससे बचोगे। भ्रम धोखा कहिये तत्त्वमसी। जा धोखेके प्रतापसे जीव जगदाकार आत्मा बन रहे हैं, सो त्वं पद

कहिये काल, तत्पद कहिये संधी, असिपद कहिये झाँई; ये त्रिविधी जाल । अज्ञान-ज्ञान औ विज्ञान, सो तीनों जाल जाते निरुवारा होय पारखकी प्राप्ती होय, ताको सार शब्द कहिये । सो सार शब्दसे जीवका निरुवारा होता है, स्थिति होती है । ये अर्थ । आदि पुरुष एक वृक्ष है, निरंजन डारा हो । अब गुरु आरंभ बताते हैं । आदिमें जो पुरुष था, सोई आदि पुरुष, पक्के तत्त्व धीरज आदि तत्त्वकी देह, सोई वृक्ष औ एक कहिये जीव सो जीवने अपने पक्के रूपको देखा औ बहुत खुशी हुवा ताते पक्के देहमें से आनंद उठा । जाको वेदने सर्वोत्कृष्ट आनंद, सच्चि-दानंद, असि पदार्थ निरंजन; ऐसा गाया, सो पक्के देहसे फूटा । ताको डार कहिये औ देव त्रय ता डारसे पैदा भये ताते शाखा भये । वृक्ष पक्का, तासे आनंद उठा । सो आनंद से जीव भूला औ आप आनंदरूपी हो गया । तब पक्की देहकी विस्मृति भई औ आनंदमेंसे स्फुर्ण हुवा, तब सब तत्त्व प्रकृति पलट गई औ कच्ची देह हो गई । तब विस्मृति आई औ अपनी देह देखी । तो जैसी थी, वैसी अवेव सहित देखी; तब इच्छा पैदा भई । सो ता इच्छाका रूप बना, सोई नारी । ता नारीसे पुत्र तीन-ब्रह्मा, विष्णु, महेश पैदा भये । फिर उनसे नाना वानी नाना कल्पना सहित ये जगत् पैदा भया । इस प्रकारसे पेड़ पक्का औ आनंद डार औ त्रिदेवा शाखा औ पत्र संसार । ये अर्थ । अब परिणाम अर्थ सुनो कि, आदि पुरुष कहिये मनुष्य, सो मनुष्यसे अनुमान खड़ा भया ब्रह्म निरंजन अरे मनुष्य बिना निरंजन ब्रह्म, ऐसा कल्पना कल्पनेवाला कौन है ? सो मनुष्यहीने ब्रह्म कल्पा औ तासे ब्रह्मा, विष्णु, महेशकी उत्पत्ती बताई औ ब्रह्मा, विष्णु, महेशसे जगत्की उत्पत्ती, स्थिति, लय बताई । सो तुम विचार करो कि, ब्रह्म है, ना कोऊ, मनुष्यकी कल्पना । आपहीने कल्पि-कल्पि सब वानी बनाई । अब जिनने वेद सही किया, सोई मानुषका नाम ब्रह्मा, और जिनने योग पसारा, सोई मानुषका नाम शिव

औ जिनने नाना प्रकारकी उपासना, भक्ति, उत्पत्ति की; सोई मानुषका नाम विष्णु । सो ये सब उरला व्यौहार है । उरला व्यौहार कहिये ऐली तरफका व्यौहार, कछु पक्की देहसे नहीं । ये अर्थ । तीन लोक दशहूँ दिशा, यम रोकिन द्वारा हो । तीन लोक कहिये त्रिकुटी ब्रह्माका लोक, कंठ विष्णुका लोक औ हृदय शिवका लोक, ये तीन लोक औ दश दिशा दश इंद्री, यम कहिये साधन, सो साधन करने लगे । जो त्रिकुटी औ श्रीहाट औ गोलहाट, ये तीन लोकमें पवन रोकी औ दशों द्वारसे काया कसी, याको नाम यम । कीर भये सब जीयरा, लिये विषका चारा हो । कीर कहिये तोतेको, जो जीव सब तोता बने औ नलिका यन्त्र न्याय फन्दे । स्वर्ग आदिक प्राप्ती विषय औ धन-धान्यादि, पुत्र-पौत्रादि विषय औ अणिमादि सिद्धि, मुक्ती आदि विषय की लालच लगाई, लालचके मारे जीव सब बंधनमें परे । जैसे चारेके लालचसे आयके तोता नलिका पर बैठता है औ मजबूत पकड़ा कि; पाँव ऊपर, शिर तरे भया औ फँसा । तद्वत् जीव सब फल आशा देखके बहु बानिनमें फँसे । ये अर्थ । औ ज्योति स्वरूपी हाकिमा, जिन्ह अमल पासारा हो । ज्योति स्वरूपी कहिये माया, माया स्वरूपी गुरुवा सोई हाकिम बने संसारमें हुकुम दृढ़ावने लगे औ नाना प्रकारका सब अमल पसारा, बेदादिक बानी सब कल्पना पसारा । औ नाना प्रकार के कर्मनकी फाँसी लगायके सब सब जग बंध किया । ताते गुरु कहते हैं कि, वेद औ बानी आदि जेता गुरुवा लोगनका अमल है, सो सब जीवको बंधन है । सो ताको परखके मेटो, तो मैं तुम्हारेको भवपार करता हौं । भौ कहिये आत्मा, महाप्रलय कालके समुद्र सरीखा, जैसेका तैसा, असि पदार्थ; ताके पार कहिये पारख भूमिका, जापर ठहरनेसे तीनों परखनेमें आते हैं-जगत् भाव, ब्रह्मभाव, आत्मभाव । सो पारखपर तेरेको पठावता हौं, प्राप्त कराता हौं । ये अर्थ कहहिं कबीर तोहि निरभय करों परखो टकसारा हो । गुरु कहते हैं कि, देखो सब

मिथ्या धोखेको परखो, तेरेको पारखरूप निर्भय करों। परखो टकसारा। टकसारा कहिये जहाँ सब बानी औ अनिर्वचनीय औ जैसेका तैसा, सबकी कसर परखनेमें आवै। जहाँ सबकी पारख होय, सो टकसार बीजक। बीजकका विचार अक्षर अक्षरका करे, तब पारख भूमिकाको जीव प्राप्त होता है, रहित होता है; ऐसा गुरु बोलते हैं ॥ ११४ ॥

शब्द ११५.

संतो! ऐसी भूल जगमाहीं। जाते जीव मिथ्या मैं जाही ॥
पहिले भूले ब्रह्म अखंडित। झाँई आपुहि मानी ॥
झाँई मे भूलत इच्छा कीन्ही। इच्छाते अभिमानी ॥
अभिमानी कर्ता ह्वै बैठे। नाना ग्रंथ चलाया ॥
वोहि भूलमें सब जग भूला। भूलका मर्म न पाया ॥
लख चौरासी भूलते कहिये। भूलते जग बिटमाया ॥
जो है सनातन सोई भूला। अब सो भूलहि खाया ॥
भूल मिटै गुरु! मिले पारखी। पारख देहि लखाई ॥
कहहिं कबीर भूलकी औषध। पारख सबकी भाई ॥११५॥

टीका गुरुमुख—सन्तो! ऐसी भूल जगमाहीं, जाते जीव मिथ्यामें जाही। गुरु कहते हैं कि, हे सन्तो! जैसी भूल जगत्‌में परी, ताको प्रभाव सुनो। प्रथमारंभमें जीव पक्के रूपमें था; पक्के तत्त्व, पक्की भूमिका, तब, अपने रूपको देखा औ बहुत प्रसन्न हुवा। ता प्रसन्नताईमें आनंद उठा। सो हंसको आनंदमें अपनी देहकी विस्मृती हुई औ परम आनंद होयके आनंदी आनंद रूप होगया। ता आनंदको सबने ब्रह्म अधिष्ठान कहा। भला ताहि आनंदमें हंसा मिलत ही तत्त्व प्रकृती सब लपटी, स्फुर्ती हुई तब पक्केका कच्चा हुवा। परंतु हंसको कछु खबर नहीं जो मैं पहिले पक्का था औ अब कच्चा हुआ ऐसी फहम ना रही। जैसा अकार था तैसा अकार हुवा। तब कच्चे तत्त्वनके सुभावसे इच्छा अनेक प्रकारकी हुई, ताते अनेक प्रकारके रूप धारण करके आप

ही खड़ा हो गया । जाको वेदने कहा--'एकोहं बहुस्याम्'। भला जब पक्केका कच्चा हुवा औ आपको तो खबर नहीं, फिर किनने जाना कि ? पक्केका कच्चा हुवा । ये शंका । तो पारखने जाना । भला पारख क्या निरुपाधी कि ? सहउपाधी ? उपाधी बिना जाना नहीं जाता । ये शंका तो पारख निरुपाधी भूमिका सही; परंतु कछु जड़ नहीं औ जानना ऐसी उपाधी भी नहीं । परंतु जो कोई जीव उसपर आया, ताको संपूर्ण कल्पना आदि गाफिली अनुमान परखाय देना; ये उस भूमिकाका स्वभाव हीं है । ताते जो कोई जीव पारख पर आया, ताने सब जाना औ सब बताया । जाते सब परखनेमें आवै, सो पारख । सो जगत्में जब नाना प्रकारका दुःख पाया जीवने, तब कहता है कि; मेरेको सुख होना औ नहीं होता, दुःख ही होता है । जीव चाहता है कि, मेरेको धन हो धान्य हो, पुत्र हो, अच्छी स्त्री हो, देह सुखी रहै औ कदहीं मरना न हो; परंतु ये सब उलटा होता है । जो जीव चाहता है, सो होता नहीं; ताते दुखित हुवा औ घबराया कि, आपन लाचार, अपनेसे कछु हो सकता नहीं । अपना कर्ता कोई दूसरा है जिनने अपनेको पैदा किया । वह चाहे सो करे । ता कर्ताके हेत नानाप्रकारकी कल्पना बढ़ी औ छौ शास्त्र पैदा भये । सो उनका मत न्यारा-न्यारा पीछे वर्णन किया है । औ अब चारवाकका मत निराकरण होता है; सो सुनो—कोई आचार्य बोलते हैं कि; बिंद ब्रह्म । बिंदसे काया उत्पन्न होती है औ बिंदके आधारसे काया चलती है । ताते वीर्य ब्रह्मादि व्यजानात् । तब दूसरा वाक्य बोलता है कि, वीर्य तो देहसे पैदा होता है । देह बिना वीर्यको अधि-ष्ठान क्या है ? अरे आदिमें भी नहीं, अन्तमें भी नहीं । जब देह तरुण भया, तब देहका रस जमा भया औ देह वृद्ध भया, तब वीर्य सूख गया । ताते बीचमें पैदा भया औ बीचमें गया, वो कछु मालिक नहीं । सबका मालिक देह है । देखो देहसे ज्ञान होता है औ देहसे बानी बनती है औ देहसे देह पैदा होती है औ देहसे ब्रह्म, ईश्वर, जीव तीन

प्रकारकी कल्पना पैदा होती है । तो ब्रह्म, ईश्वर औ जीव, ये मिथ्या औ देह सत्य । तीर्थ, व्रत, पूजा, योग, कर्म सब देहसे पैदा होते हैं । और देह देखनेमें आती है औ कछु देखनेमें नहीं आता । ताते देह सत्य औ सब मिथ्या धोखा । देहके गये फिर कछु देह होती नहीं । जैसे वृक्षसे पत्ता झड़ परा, फिर वृक्षको नहीं लगता । तद्वत् देहके गये ते फिर देह नहीं, सब सिद्धांत मिथ्या । तो भला सब सिद्धांत मिथ्या; परन्तु जब चैतन्य देह छोड़ देता है, तब ये देह तो बना रहता है । फिर नाना प्रकारकी चतुराई औ बानी क्यों नहीं बोलता ? जो देह सत्य है, तो नाश क्यों होती है ? भला तू कहेगा कि, जीव क्या वस्तु है ? औ देह छोड़के गया, सो किसने देखा जो किसीने देखा नहीं, तो जराया गाड़ा क्यों ? और सब कुटुंब बाहर क्यों डार आये ? तो जीव तुमने देखा था; परंतु अज्ञान दशासे 'मैं देह'ऐसा मानते हो । तो ये देहके अध्याससे और देह पावोगे । जो जान के नहीं जानता, ऐसा बोलै, ताको अज्ञान कहिये । तब तीसरा वाक्य बोलता है कि, काहेका जीव ? औ कौन देह पाता है ? अरे ये तो पाँच तत्त्वका मोट है । जहाँ पाँच तत्त्व इकट्ठे भये, तहाँ जीव नाम पाया औ पाँच तत्त्व छुटे, फिर कहाँ जीव है ? औ काहेका जीव है ? कहीं पाँच तत्त्वसे न्यारा जीव देखनेमें भी नहीं आया औ मालूम भी नहीं होता है । ताते सबका मालिक पाँच तत्त्व, देह पाँच तत्त्वन की । पाँच तत्त्व मिले, तामें नाना रूप मालूम भये औ पाँच तत्त्व न्यारे-न्यारे भये, फिर न देह है, न जीव है । तो पाँच तत्त्व अनादि हैं । संयोग पायके बहुत रूप पैदा होते हैं औ वियोग पायके नाश होते हैं । ना कोई आता है, ना कोई जाता है, सब मिथ्या । बानी बोधसे संशय होता है । उसके पीछे भ्रमना नहीं । शब्दका काम इतना है, जो कहना सुनाना । औ शब्दसे कछु नहीं, सब मिथ्या । भला ये तत्त्व तो अनादि हुये, परंतु तत्त्व क्या जड़ हैं कि ? चैतन्य हैं ? जो कहोगे कि, तत्त्व चैतन्य हैं तो मौत न होना । औ जब मरता है । तत्त्व तब तत्त्व तो पाँचों नजर आते हैं; परन्तु चैतन्य नहीं दिखाता । तब कहते

हैं कि मर गया। जो कहोगे कि पाँच तत्त्व कौन ? सो सुनो-माँस पृथिवी तत्व औ पानी जो देहमें रहता है, सो जल तत्त्व; पित्त अग्नि तत्त्व; जासे मुरदा फूलता है, सो वायु तत्त्व, औ शून्य आकाश तत्त्व; ये पाँच तत्त्व हैं। परन्तु चैतन्य वहाँ नहीं; ताते पाँच तत्त्व जड़, कछु चैतन्य नहीं। चैतन्य कोई और है। जो पाँच तत्व चैतन्य होते, तो झाड़-पहाड़ चलते फिरते औ दुःख सुख मानते। ताते पाँचो तत्व जड़। तो इनमें क्या सत्ता है ? जो संयोग करना औ नाना विचित्र अनेक तरहके रूप जड़, सो कैसे पैदा हो गये ? जड़में येतिक चतुराई काहे की ? ताते चैतन्य कोई और है। जो पाँच तत्त्व, पचीस प्रकृती, दश इंद्री, विषय पंचक, अन्तःकरण पंचक; ये सबको जानता है, ताको चैतन्य कहिये। जो देह सहित तत्वको जानता है, सो कछु देह औ तत्त्व नहीं। जैसा घर औ घरके सरंजामको जाननेवाला कछु घर सरं-जाम नहीं; तद्वत्। ये अर्थ। तब चौथा चारवाक बोलता है-अरे ये सब मिथ्या कल्पना। अरे तत्त्व औ चैतन्य दोनोंका अधिष्ठान तो किसीने जानाही नहीं। तो तत्व औ चैतन्य दोनोंका अधिष्ठान शून्य है। देखो, जब नींद लगती है, तब तत्व औ चैतन्य कहाँ हैं ? सब शून्यमें समाय गये औ फिर शून्यसे ही प्रगट होते हैं; ताते सबका अधिष्ठान शून्य है। शून्य बिना कछु और नहीं। नेति-नेति करके श्रुति रह गई, सो भी शून्य और श्रवण, मनन, निदिध्यासन, साक्षा-त्कार करके रहि गया, सो भी शून्य। चोला छूटा, बाकी रहा; सो भी शून्य औ योगधारना करके लय हुवा, सो भी शून्य। नित्यानित्य करके रहि गया, सो भी शून्य। बोलते-बोलते चुप हो गया, सो भी शून्य। रहित भया, सो भी शून्य जानिये। शून्यते अधिक और न मानिये। चौपाई—शून्य आवै शून्यै जाई। शून्य शून्यमें रहा समाई॥ ताते सर्व शून्यै जान। शून्य बिना नहीं दूसर मान॥ १॥ इस प्रकारसे जीव मिथ्यामें जाई। अरे शून्य-शून्य कहता है, सो कौन है ? शून्यका जाननेवाला कछु शून्य नहीं। देखो जब सुषुप्ति होती

है औ शून्य हो जाता है, तब हाक मारे जवाब देता है। जो चैतन्य शून्य हो जाता, तो जवाब न देता। ताते शून्य मिथ्या जड़ औ जनइया जीव सच्चा; परन्तु ये जीवको शून्यहि बंधन है। जबलग शून्यको परखके न्यारा न होयगा, तबलग आवागवनसे रहित नहीं होनेका। ये अर्थ। पहिले भूले ब्रह्म अखंडित, झाँई आपुहि मानी। जो हंसने अपने रूपको देखा औ खुशी हुवा, सोई भूला और झाँई खड़ी हुई, आनंद खड़ा हुवा। ता आनंदमें गरगाफ हुवा हंस। फिर वो स्फुर्ती हुई औ कच्चारूप होय गया। ता झाँईके प्रतापते कच्चा रूपमें हंस आया तब इच्छा खड़ी भई। ता इच्छासे जगत् सब निर्माण भया। जैसी-जैसी इच्छा उठी, तैसी-तैसी खानी पैदा हुई। ताते आप जगत् अभिमानी हुवा। औ नाना प्रकारकी कल्पना करके बहुत बानी ग्रंथ बनाया, वेद शास्त्र बनाया। वही भूल झाँई, तामें सब जगत भूला। सो कोई जीव कहाया, कोई ब्रह्म कहाया, औ कोई आत्मा कहाया; परंतु भूलका मर्म काहू नहीं पाया। जो बिंद कहते हैं, सो भी भूल औ कोई देह कहते हैं, सो भी भूल, औ कोई तत्त्व कहते हैं, सो भी भूल औ शून्य कहते हैं, सो भी भूल, औ ब्रह्म कहते हैं, सो भी भूल, औ आत्मा कहते हैं, सो भी भूल। सोई भूलसे चौरासी खड़ी भई। बिडंबना सब जगत्की भूलसेही भई। अरे जो सनातन जीव था, सोई भूला। अब सोई भूल सबको खाती है। ऐसी भूल कैसे मिटेगी? भूल मिटै, गुरु मिलै पारखी। जो पारखी गुरु मिलै, तो भूल सब मिट जाय। जासे सब भूल मिटै, ताहिको पारख कहिये। सो पारखी गुरु मिलै, तो पारख भूमिका बताय देवैं। तब जीव भी पारखरूप औ गुरु भी पारखरूप। जगत् ब्रह्म औ कल्पना अनुमान कछु रहा नहीं। ताते सब भूलकी औषध पारख है। जा भूमिका लेके गुरु सब परखावते हैं, सोई भूमिका लेके शिष्य सब परखते हैं। तब दो भाव जाके शुद्ध पारख रहता है। ये अर्थ॥ ११५॥

इति शब्द बुझार्थ टीकासहित गुरुकी दयासे संपूर्ण। इति शब्द संपूर्ण.

वक्तव्य

★

दया गुरुकी—प्रथमारंभमें गुरु रमैनी बोले। रमैनीका अर्थ-ऐनी कहिये जीव; जाकी ऐन सब वेद औ नाना प्रकारकी बानी बनी, तामें नाना प्रकारके सिद्धांत अनुमान अध्यासादि खड़े भये। ता ऐनमें ऐनी रम गया, सोई 'रमैनी'। ऐसा शब्द कहिये गुरुने परखाया। ऐन कहिये जीवकी कल्पना, अनुमान, अध्यास, चारों वेद, छौ शास्त्र, तत्त्वमसि आदि; तामें जीव ऐनी। बंध हुवा, ताको गुरुने परखाया। प्रथम पंच वस्तु-अंतर, ज्योति, शब्द, एक, नारी। अंतर मन, जो कछु मानंदी हुवा। देहका वजन सोई मन। मन कहिये, नाम कहिये, ब्रह्म कहिये। जो चालिस प्रकृति एकठी भई औ परम उत्कृष्ट आनंद भया। तासे जो स्फुर्ती भई, सो माया औ मनका आकार आया सो माया। माया कहिये, काया कहिये, रूप कहिये। तीसरी वस्तु शब्द, जो मन माया संयुक्त ॐकार आदि चौतिस अक्षर उठे, सो शब्द। चौथी वस्तु नारी, जो वो अक्षर लेके और नाना प्रकारकी बानी बनी, जासे कल्पना अध्यास सब सिद्ध भये। नारी कहिये, बानी कहिये, स्त्री कहिये। जो मन माया करके इच्छा उठी, विषय भोगके हेत; तासे निर्मान भई, सो स्त्री। पँचई वस्तु एक कहिये जीवको। जो ये चार पदार्थका जाननेवाला औ जासे चारों पदार्थ फुरे औ भासे, सोई जीव ऐनी, औ चारों वस्तु उसकी ऐन; तामें आपु रम गया सो रमैनी। ये अर्थ। अन्तर औ ज्योती अनन्यभाव, जो अन्तर नाम औ ज्योती रूप, येही समष्टी कहिये। औ शब्द नारी एक भाव। जो शब्द कहिये नाम, नारी कहिये रूप; या शब्द कहिये कोई दूसरा ब्रह्म औ नारी कहिये जो देखनेमें आया, सो जगत्। शब्द कहिये जो देखनेमें न आवै; श्रवण गोचर होय, सोई ब्रह्म औ नारी कहिये जो देखनेमें आवै, नेत्रगोचर होय, सोई जगत्। तैसा अन्तर कहिये जासे

जीवका पद अन्तर गया। अन्तर कहिये मन औ अन्तर कहिये ब्रह्म, जो देखनेमें न आवै। औ ज्योती कहिये माया, ज्योति कहिये काया, जो देखनेमें आवै। अन्तर कहिये, जो देखनेमें न आवै औ जामें जीव भूले औ माया ज्योती कहिये जो देखनेमें आवै औ जामें जीव आसक्त होय। सो ये चार वस्तु जीवको बंधन हुई। याहीमें जीव भूला, ताते आवागमनमें नाना दुःख पावता है। ताते गुरु चारों मुखसे चारों वस्तु परखाते हैं। सो प्रथम रमैनीमें अन्तर ज्योती परखाई औ शब्द नारी रही, सो शब्दमें परखाई। अब आगे पंचम वस्तुको परखावेंगे। शब्द कहिये, अब्द कहिये, आवाज कहिये शून्य। सो शून्यसे जो आवाज उठे, सो शब्द। शब्द कहिये, शून्य कहिये, आकाश कहिये, ब्रह्म कहिये। अब्द कहिये, कल्पना कहिये, बानी कहिये, माया कहिये; ये छः वस्तुमें जीव बन्ध है। ताते गुरु परखायके छुड़ाते हैं, सोई शब्द-संतो भक्ति सतोगुर आनी। संतो कहिये जीवको। सो जीवसे गुरु कहते हैं कि, भक्ति सतोगुर आनी। भक्ति कहिये, कल्पना कहिये, बानी कहिये, सो ब्रह्माने आनी। कहाँसे आनी? आकाशमें शून्य होके, मन उन्मुन करके ब्रह्म अनुभव सिद्ध किया, तासे संपूर्ण कल्पना आनी। सोई सब जीवने मानी औ धोखेमें परे। ये अर्थ। अब अन्तर ज्योतीका जाल रमैनीमें परखाया औ शब्द नारीका जाल शब्दमें परखाया। अब आगे अक्षर जाल परखानेके वास्ते ज्ञान चौतीसा बोलते हैं।

सोरठा—सुख निधान सुख रूप, साहेब सत्त कबीर जो।
झाँइ संधि को रूप, परखावत निज परखते ॥१॥

इति रमैनी तथा शब्दका वक्तव्य गुरुकी दयासे संपूर्ण।

वक्तव्य संपूर्ण।

दया गुरुकी

अथ ज्ञान चौतीसा लिख्यते

*

ॐकार आदि जो जानै । लिखकै मेटै ताहि सो मानै ॥
ॐकार कहैं सब कोई । जिन्ह यह लखासोबिरला होई ॥

टीका गुरुमुख—जो ॐकारको जाननेवाला, सोई ॐकारकी आदि । तो जाननेवाला अस्ती औ जाननेमें आया, सो नास्ती । जो ॐकारको जाननेवाला, सो हंस अस्ती औ जो जाननेमें आया ॐकार ब्रह्म, सो नास्ती । जो ॐकारको लिखै औ फिर मेट डारै, ताहीको साँच जीव; ऐसा मानै । ये अर्थ । ॐकार कहिये पिंडांड औ ॐकार कहिये ब्रह्मांड । केहि तरहसे ? सो सुनो-मस्तक सोई बिंदु निर्विकार, नाभी सोई विकार अर्धमात्रा, हृदय सोई मकार कुण्डली, कंठ सोई उकार दंडक, त्रिकुटी सोई अकार तारक । इस प्रकारसे पंचमात्रा ॐकार जीवनने अनुमान किया पिंडांडमें । ये संपूर्ण नाशमान मिथ्या औ जीव सत्य । ये स्थूल मात्रा हुई । अब सूक्ष्म मात्रा पिंडकी सुनो-प्रथम जब शून्य स्वभाव रहता है, तब शब्द बिंदुरूप, स्थान ब्रह्मांड; ताको निर्विकल्प निरामय ब्रह्म बोलते हैं । फिर वहाँसे स्फुर्ति होती है, सोई सहविकल्प अर्धमात्रा तुरिया, ताको अव्यक्त सबल ब्रह्म कहते हैं । तब शब्द नाभी स्थानमें विकार रूप रहता है तहाँ से चित्त चतुष्टय उदय होता है । सो चित्तसे अनुसंधान उठता है औ बुद्धि निश्चय करती है । तब बुद्धि बोधव्य स्वरूप महातत्त्व कहलाती है । उसीको कोई कूटस्थ कहते हैं । फिर शब्द कुंडली शून्य स्वरूप मकार होके हृदयमें आता है, तब मन उद्वेगसे संकल्प होता है । शब्द कंठ स्थानमें उकार रूप रहता है, दंडक होता है । तहाँ पाँच कला निर्मान होती हैं-शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध । याका सूक्ष्म देह बनता है औ नाना संकल्प विकल्प होता है । फिर त्रिकुटी-पर आयके अकार रूपी शब्द होता है । ऐसा पंच मात्रा मिलके

स्थूल ॐकार बनता है। फिर अहंकार लेके फूटता है, सो बैखरीमें आकर चौतीसा कला धरता है। ॐकार सोई ब्रह्म औ चौतीस अक्षर सोई माया। ॐकार कारण औ चौतीस अक्षर कार्य, जीव कर्ता। ये अर्थ। अब अक्षरकी उत्पत्ति सुनो। कंठ अक्षर छै–क ख ग घ ङ ष। तालू अक्षर छै–ट ठ ड ढ ण क्ष। दंताली अक्षर आठ–च छ ज झ र ल स श। दाँती अक्षर छै–त थ द ध न व। शून्य अक्षर तीन–ज ह य। ओंठ अक्षर पाँच–प फ ब भ म। इस प्रकारसे एक ॐकारसे चौतीस भये। तामें पाँच मात्रा मिली, याते एक-एकके बारह-बारह अक्षर भये। इस प्रकारसे चारसौ आठ अक्षर भये। तामें पंच मात्रा मिली, सोई जगत् जाल ॐकार ब्रह्मरूप खड़ा भया। अकार सम्बंधी ६८, उकार सम्बंधी ६८, मकार सम्बन्धी १३६, इकार सम्बन्धी ६८, बिंदु सम्बन्धी ६८; ऐसे चार सौ आठ मात्रा भई। फिर ठौर–ठौरकी मात्रा मिलायके नाना बानी बनी औ जो-जो कल्पना भीतर थी, सो सब लिखी गई। तामें तीन लिंग बने-स्त्री लिंग, पुरुष लिंग औ नपुंसक लिंग। अकार बिंदु युक्त लिंग पुरुष लिंग, उकार मकार युक्त लिंग नपुंसक लिंग, इकार युक्त लिंग स्त्री लिंग; ऐसे तीन लिंग बनायके फिर नाना अर्थ औ मंत्र बने। सबमें पंच मात्रा मिली औ कामना बढ़ी जगत्की। अकार रजोगुण पीत रंग, उकार सतोगुण स्वेत रंग, मकार तमोगुण रक्त वर्ण, इकार शुद्ध सतोगुण सुनील रंग, बिंदु श्याम वर्ण निर्गुण ब्रह्म आकाशवत्। ये अर्थ। अब ब्रह्मांडका स्वरूप सुनो। पृथिवी सोई अकार, जल सोई उकार, अग्नि सोई मकार, वायु सोई इकार, औ आकाश सोई यंकार। अकार तारक सोई ब्रह्मा, उकार दंडक सोई विष्णु, मकार कुण्डली सोई शिव, अर्धचन्द्र सोई ईश्वर औ बिंदु सोई ब्रह्म। ऐसा समष्टी व्यष्टी सम्पूर्ण प्रणवरूप एक आत्मा, ॐकार ब्रह्म परमात्मा; ऐसा कहिके सब कोई याहीमें अरुझे; परंतु जिन यह लखा सो बिरला होई। कि जिनने यह ॐकारको लखके त्यागा औ पारखी पारख

पर थीर हुवा, सो बिरला कोई। ॐकार मिथ्या और पारखी सच्चा। ये अर्थ।

कका कँवल किर्णमें पावै। शशि ब्रिगसित संपुट नहिं आवै॥
तहाँ कुसुम रंग जो पावै। औगह गहिके गगन रहावै॥ १॥

टीका मायामुख–क कहिये केवल ब्रह्म और का कहिये जीव, जो कसे उत्पत्ती होय सो का, सो माया उपदेश करती है जगत्‌में कि, हे जीव! तू ब्रह्मका अंश है, अधिष्ठान भूत ब्रह्म। कैसा? सो तू सुनके निश्चय कर। क शब्द कर्दमो भवति। स सच्चिदानंदः। का शब्द तदंशः जीवः इत्यर्थः। क शब्द कीचड़ औ का शब्द गोला। तो कीचड़ कहिये सत चित मिला आनंद; ताका अंश जीव गुण उपाधी युक्त। ता जीवको माया उपदेश करती है कि, कँवल किरणमें सच्चिदानंदकी प्राप्ती होयगी। कमल कहिये नाभी कमल दशदल। तो जब उन्मनी अमनस्क योग करके सुरति-निरति इकठी होय, तब कमल खुलै। ता कमलकी किरणमें जब लक्ष लगे, तो सहज ही सहज सत-चित एक होयके आनंदकी प्राप्ती होय, तब जीवकी स्थिति होय औ जीव ब्रह्म होय। परंतु जब चन्द्र नाड़ी चलै, तब नित्य पद्मासन उत्तराभिमुख करके सोहँ श्वासामें सुरत लगावै, मनकी एकाग्रता करे, सवा पहरका नियम करे, तो कमलका संपुट खुलै। औ ता कमल का रंग सुनील, तहाँ परम आनंद कुसुम रंग; ता रंगको जो पावै सो सच्चिदानंद। तो वो आनंद अवगाहा कि, गहनेमें न आवै। बुद्धिसे गहनेमें नहीं आवै औ चित्तसे गहनेमें नहीं आवै, अहंकारसे गहनेमें नहीं आवै औ मनसे गहनेमें नहीं आवै औ दशों इन्द्रीसे गहनेमें नहीं आवै; ताको अवगाह कहिये। ऐसा अवगाह ब्रह्म अनुभव, ताको लक्षसे गहिके गगन रहाई कहिये ता आनंदमें लय होके ब्रह्मांडमें रहना। ये अर्थ॥ १॥

खखा चाहे खोरि मनावै। खसमहि छाड़ि दहूँदिश धावै॥
खसमहि छाड़ि छिमा हो रहिये। होय न खीन अक्षय पद लहियेर॥

टीका मायामुख–ख कहिये आकाश, अकाश कहिये ब्रह्मांड औ खा कहिये वायु, वायु कहिये श्वासा । सो योगी लोगोंका उपदेश ऐसा है कि, जो कोई ब्रह्मांडमें श्वासा चढ़ाना चाहै, सो खोरी मनावै । खोरी कहिये इन्द्री; सो इंद्रिनको मनावै, कहीं चलने न दे । ये इंद्रिनके संग मन खसम छोड़के दशों दिशा धावता हैं । खसम कहिये ब्रह्म; सो ताको छोड़के मन इंद्रीके संग दशों दिशा विषय वासनामें धावता है, ताते जीवको चौरासी लक्ष योनी भोगनी होती है । तो चौरासीका भोग औ आवागमनका कारण इंन्द्रीकी विषय वासना । सो पहिले इन्द्रीको संयम करना, अल्प अहार करके अंग जड़ होने देना नहीं और जब मिले; तब रूखा-सूखा, भाजी-पाला, लोना-अलोना पायके संतोषसे रहना । काहू बातकी तृष्णा न रखना औ जिभ्याके स्वादमें लंपट न होना औ दूसरे बहुत बिहार न करना, आसन दृढ़ रखना, कहीं राग रंग देखने न जाना औ स्त्रीको नेत्रभर न देखना । और नाना प्रकारके तमाशे चरित्र संसारके विहार देखना नहीं । देखना रूप विषय, सो छोड़के आसन दृढ़ करना । तीसरे निद्रा भी बहुत न करना औ कानसे बहुत बानी शास्त्र पुराण आदिक सुनना भी नहीं और जगत् की नाना बानी भी न सुनना । बहुत नरम बिछौने पर सोवना भी नहीं और बहुत स्त्रियनसे अंग मिलावना भी नहीं और किसीसे मिलानेकी चाह भी न रखना । और बहुत गंध सुगंधमें भी लंपट न होना औ किसीको देने-लेनेकी भी चाह न रखना । एकांतमें स्वच्छ स्थान देख, ऐसा खोरी मनावै, संयम करै और श्वासामें सुरति लगावै मक्कतारन्याय । फिर श्वासा आकाशमें लय करके जीव ब्रह्म होय रहै, समाधिस्थ होय रहै । ये अर्थ । भला इंद्रियनका स्वभाव कैसे छूटै ? तो जब नेत्रको रूप विषय होय, तब नेत्रनसे मुद्रा देखै, सन्मुखी खेचरी अगोचरी अलक्षादि । अथवा श्रवण विषय कानको होय, तो अनहद नाद सुनै । स्पर्श विषय हो, तो चौरासी आसन करै । नाकको गंध

विषय हो, तो रेचक पूरक कुम्भक करै। रस विषय जीभको होय, तो लंचिका करके उर्ध द्वारा अमृत पान करै। इस प्रकारसे इंद्री जीतै सो योगी जीवनमुक्त ॥ आपै खसम आपै ब्रह्म। परंतु सर्व इन्द्रिनको जीतके और संपूर्ण विषय छोड़के क्षिमा होय रहै, समाधिस्थ होय रहै। कबहीं इंद्रिनके वश होयके क्षीण न होय: तब योगी अमर होय, अक्षय पदको प्राप्त होय। ये अर्थ ॥ २ ॥

गगा गुरुके बचनहि मान। दूसर शब्द करो नहिं कान ॥
तहाँ बिहंगम कबहुँ न जाई। औगह गहिके गगन रहाई ॥३॥

टीका मायामुख—ग शब्देन ज्ञान, महाचैतन्य, तत्पद वाच्य ईश्वरः। गा शब्देन तदंशः त्वंपदवाच्य जीवः। गुरु शब्देन अचल असिपद वाच्योभयो रेक वाक्यत्वादित्यर्थः। यथा घटाकाश महाकाश महदाकाश। तथा तत्त्वमसी सिद्धांत-लक्षौ गृहित्वा, वाच्यांशं त्यक्त्वा, सोयं देवदत्तः इत्यर्थः। अब ब्रह्मज्ञानका उपदेश माया जीवको करती है कि, गगा गुरुके बचनहि मान। ग शब्दका अर्थ ज्ञान, महाचैतन्य, ईश्वर, तत्पद वाच्य औ गा शब्दका अर्थ अज्ञानविशिष्ट चैतन्य जीव, त्वं पदार्थ औ गुरु कहिये अचल, तत् त्वंकी एकता असि पदार्थ; गुरु का वचन कहिये तत्त्वमसी महावाक्य। सो ये जीवने पहिले साधन चतुष्टय संपन्न होना, योग समाधी करना। फिर गुरुके पास जायके तत्त्वमसी सिद्धांत सुनना और उसका वाच्यांश छोड़ देना और लक्ष्यांश ग्रहण करना कि, तत्पद सोई त्वंपद और त्वंपद सोई असिपद है। जैसा कोई देवदत्त नाम महा भाग्यवान्‌ काशीमें रहता था औ जो कोई उसके पास जाता था। सो जो कछु याचना करता था, सो देवदत्त देता था। सो उसकी कीर्ती चौतरफ फैली थी। फिर कछु दिन उपराँत ऐसा काल आया कि, उसका ऐश्वर्य और उसकी संपत्ती सब जाती रही। फिर वह देवदत्त संन्यासी होके घर-घर भिक्षा माँगने लगा और कोई दूसरे देशमें दूसरे कालमें आया। सो उससे लोग पूछने लगे कि, तू

कौन है ? तब वह बोलता है कि, 'मैं देवदत्त'। तो सब लोग उसकी मसखरी करने लगे। तामें कोईने उसके रूपको देखा और वो काल, वो देश छोड़ा औ तबकी संपत्ती छोड़ी, अबकी विपत्ती छोड़ी; देह पर जब लक्ष किया, तब वही देवदत्त निश्चय हुवा। इस प्रकार ईशकी ईशता छोड़ै और जीवनकी किंचिज्ञता छोड़ै औ स्वरूप लक्ष करै, तो वही है। जैसा सोनेका विकार सब सोना। माटीका विकार सब माटी। ऐसा ब्रह्मका विकार सर्व जगत् ब्रह्म। नामरूप-उपाधी मिथ्या, संपूर्ण ब्रह्म, ये सत्य, ऐसा निश्चय करै। दूसरे द्वैत शब्द, कान ना करै, माने ना। फिर योग भी ना करै औ तहाँ बिहंगम कबहुँ न जाय। ब्रह्मांडमें बिहंगम मन कबहुँ न जाय; क्योंकि क्या ब्रह्मांड ? और क्या पिंडांड ? एक आत्मा स्वजाती-बिजाती-स्वगत भेद रहित, ताको योग-वियोग, मिलना-बिछुड़ना कछु संभवता नहीं। योग समाधी क्रिया ये सब मनके धर्म मिथ्या। आतमा एक निरंतर अखंड अनिर्वाच्य, वाच्य कछु है नहीं। एक-दो, जगत् ब्रह्म, कछु कहते बने नहीं। ऐसा अवगाह ज्ञान अनुभव, ताको गहिके रहि जावे, थीर हो जाय। ये अर्थ। ये मायाका उपदेश ऐसा हुवा कि; गुरु ब्रह्मा, ताका वचन वेद। सो वेदका सिद्धांत मानना औ वेदबाह्य जो मत होय, सो नहीं मानना औ तामें मन कबहीं ना लगावना। वेदके प्रमाणसे जो अवगाह ज्ञान ब्रह्म ज्ञान है, तामें रहै। ता ऊपर औ कछु कल्पना न करै और कल्पना कोई करै, सो वितंडा मिथ्या। ये अर्थ ॥ ३ ॥

घघा घट बिनशै घट होई। घटहीमें घट राखु समोई ॥
जो घट घटै घटहि फिरि आवै। घटहीमें फिर घटहि समावै॥४॥

टीका मायामुख—घ कहिये घनवत् चैतन्य, जो कहीं संधी नहीं; जैसा आकाश असंधी भरा है, कहूँ संधी नहीं। घट-मठ-पटमें बाहर भीतर जैसा एक आकाश भरा है, तैसा चैतन्य पिंड ब्रह्मांडमें भरा है, ताते घनवत्। ये अर्थ चैतन्यका भया। अब घा तदंश जीव प्रतिबिंब,

ताको गुरुवा लोग उपदेश करते हैं कि, घघा हे ब्रह्मांश जीव ! तू तो चैतन्य है आकाशवत् । परंतु घट उपाधीसे अपनेको जीव मानता है औ कहता है कि, मैं सुखी, मैं दुःखी, मैं मरता हौं, मैं जीता हौं । तो ये मिथ्या भ्रांति छोड़ दे । तू तो चैतन्य शुद्ध ! अखंड ! एकरस ! तेरा नाश कधी नहीं । जैसा घट विनशता है औ फिर घट उत्पन्न होता है, तो क्या घटके संग कहूँ आकाश विनशता है ? औ घट उत्पन्न भया, तो कहूँ आकाश उत्पन्न होता है ? तैसा आत्मा न उपजै, न नाश होय । माया उपाधी ते घट उपजते हैं औ नाश होते हैं । तो घटहीमें घट राखु समोई । कि घटकी वासाना औ घटका अभिमान तू छोड़ दे । घटके अध्याससे घट होता है । सो अध्यास तू मत रखे, घटका अध्यास घटहीमें समाय दे, लय कर दे औ तू अपनेको आत्मा आकाशवत् जान । जो घट घटै घटहि फिर आवै । अर्थ कि; जो घट नाश होता है, सो घटही फिर पैदा होता है । आत्मा न मरता है, न पैदा होता है । घटहीमें फिर घटहि समावै । कि; जैसा घट मृत्तिकाका बनता है, फिर बनते ही उसमें आकाश व्यापता है । औ जब घट फूटा, तो आकाश अपनी जगह पर जैसेका तैसा है । तैसा तू आत्मा जैसेका तैसा, सदा एक रस ! देह अध्यास छोड़ दे । ये अर्थ ॥ ४ ॥

ङङा निरखत निशिदिन जाई । निरखत नैन रहे रतनाई ॥
निमिष एक जो निरखै पावै । ताहि निमिषमें नैन छिपावै ॥५॥

टीका जीवमुख—ङ कहिये शास्त्र मुद्रा देखना, ङा कहिये देखनेवाला जीव । सो बोलता जीव है गुरुवा लोगोंसे कि, हे गुरु ! शास्त्र औ मुद्रा देखते-देखते रात-दिन चले जाते हैं औ आँखी भी रतनाय रही हैं, लाल हो रही हैं; परंतु कल्पना कछु छूटती नहीं औ ब्रह्म दशा कछु आती नहीं । **मायामुख**—तो गुरुवा बोलते हैं कि, हमारी कछु चूक नहीं । निमिष एक जो निरखै पावै, ताहि निमिषमें नैन छिपावै । मुद्राकी धारना लगावता है; तो जब प्रकाश होनेका वख्त आता है,

तब नैन छिपाय लेता है, पलक लगाय लेता है, तो मुद्रा कैसे प्रकाश होय ? औ शास्त्र देखता है, तो श्रवण मननमें आलस करता है। तब ब्रह्म दशा औ निर्विकल्प दशा कैसे होय ? ज्ञान अभ्यास वा योग अभ्यास वैराग्य युक्त करै. तो सहजही परमात्माकी प्राप्ती होय। ये अर्थ ॥ ५ ॥

चचा चित्र रचो बड़ भारी। चित्र छोड़ि तैं चेतु चित्रकारी॥
जिन्ह यह चित्र विचित्र है खेला। चित्र छोड़ि तैं चेतु चितेला॥६॥

टीका गुरुमुख—च कहिये जीव औ चा कहिये जीवकी कल्पना, नाना बानी औ चा कहिये स्त्री। सो गुरु कहते हैं कि, हे जीव ! तेरी कल्पनाने जो चित्र रचा है, सोई तेरेको भारी बन्धन हुवा। जो नाना शास्त्र, पुराण, वेदने बताया; सोई तू निश्चय करने लगा, ताहीसे नाना जाल औ नाना चक्र औ नाना योनी तेरेको भोगना प्राप्त भई। परन्तु स्वतन्त्र पारख तेरेको प्राप्त न भई, ताहीते तू बहुत दुःख पावता है। औ तेरी इच्छासे नारी पैदा भई, सो तेरे परखनेमें नहीं आई। सो उसने तेरेको नाना विषयमें फँसाया औ अपना मोह लगायके तेरा ज्ञान हर लिया। तेरे को अपने वश करके भारी चित्र जगत् जाल रचा। सो तू अब तो भी कल्पना औ स्त्री परखके छोड़। हे चित्रकारी ! संपूर्ण ब्रह्म जगत् आदि चित्र तूने बनाया औ तू ये चित्ररूपी कैसा हो गया ? चित्रमें कैसा बंध गया ? जिन्ह यह चित्र विचित्र है खेला, सो तूही। तेरे बिना कछु एकहू हुवा नहीं; परन्तु तेरा बंधन तेरी करतूत ही है। सो संपूर्ण करतूत चित्र छोड़के तैं चेतु चितेरा। हे चितेरा ! भास अध्यासादि संपूर्ण चित्र तूने बनाया औ सबका जनैया तूही, सबको न्यारा-न्यारा जानता है औ ताहीमें फिर तू समा जाता है। कहीं ब्रह्म बना, कहीं देह बना, कहीं दास बना। सो संपूर्ण धोखा छोड़के तू स्थिर हो, सब परखके बंधन छोड़ औ पारख रूप हो रहो। ये अर्थ ॥ ६ ॥

छछा आहि छत्रपति पासा । छकिकिन रहहु मेटि सब आसा॥
मैं तोहीं छिन-छिन समुझावा । खसम छाँड़ि कस आपु बँधावा७॥

टीका गुरुमुख—छ कहिये छर, पाँच तत्व छठवा मन । छा कहिये पाँच तत्त्व औ छठवे मनसे जो उत्पन्न होय, सो छा । देहसे अनुमान, अध्यास, कल्पना, भास, ब्रह्म, आत्मा आदि जो पैदा हुवा, सोई छा । ये अर्थ । देहसे कल्पना उठी कि, कोई एक ब्रह्म है; सोई अनुमान किया । फिर वो ही 'मैं' ऐसा कहा, सो अध्यास । भास-भासिक एक, माया सोई ब्रह्म औ सोई आत्मा । तो छाका अर्थ ब्रह्म हुआ । अब छ नास्ती औ छा महा नास्ती। सो गुरु जीवको समुझाते हैं कि, छ देह औ छा ब्रह्म छत्रपती जीवके पास दो बंधन हैं-छछा, देह औ ब्रह्म । कल्पना सोई त्वंपद, अनुमान सोई तत्पद, अध्यास सोई असिपद । ये संपूर्ण देहसे जीको भास भया, सोई जीवको बन्धन हुवा । अब छकिकिन रहहु मेटि सब आसा । संपूर्ण ब्रह्म जगत् आदि आसा परखके मेटि डारो औ पारखमें छकि रहो, स्थिर हो रहो; जाते तुम्हारा आवागमन छूटै । मैं तोहीं छिन-छिन समुझावा । छिन-छिन मैं तेरेको ये ही परखाया । सो तू आपही सब बिसारके और घबरायके दूसरा खसम बनायके कैसा बंधनमें परा ? सो तूं अब तो भी परखके सब अध्यास छोड़ औ थिर हो । ये अर्थ ॥ ७ ॥

जजा ई तन जियत न जारो । योबन जारि युक्ति तन पारो ॥
जो कछु युक्ति जानि तन जरै ।ई घट ज्योति उजियारी करै॥८॥

टीका गुरुमुख—ज कहिये माया औ जा कहिये त्रिगुण । सो गुरु कहते हैं कि, ये माया ब्रह्मादिक गुरुवालोग, तिनकी बानी सुनके तुम त्रिगुण फंदेमें परे औ कहीं योग करने लगे । पंच क्रिया करके पवन रोधन करके देहको कष्ट देने लगे । औ कहीं तपस्या करके देह जराने लगे । पंचाग्नी, जलशयन, अन्नत्याग, वस्त्रत्याग करने लगे । दूब अहारी, फल-मूल अहारी बने । औ कहीं वैराग्य करके घर छोड़

जंगलमें भागने लगे। इस प्रकारसे जीते तनको क्यों जराते हो ? औ जीवको क्यों दुःख देते हो ? मुये पर सभी जर जायगा; ताते सब परखके थीर रहो। ये माया की बानी सुनके नाहक जीते जीव जारो मत, यामें कछु फायदा नहीं। मिथ्या धोखेके वश मत होवो। ये मायाका धर्म ऐसा है कि, जीते भी दुःख देना औ मरे भी चौरासी भुगाना। भला जो तुम ब्रह्म प्राप्तिके वास्ते तन जराते हो, तो वेद वचन ऐसा है कि, ब्रह्म तो कछु जग से न्यारा नहीं, संपूर्ण चराचर रूप ब्रह्मही है। मृत्तिकाकुंभ-न्याय, सुवर्ण-भूषण न्याय। जो तुम तन जरावते हो, तो याका फायदा कौन ? अगर स्वर्ग आदि प्राप्तीके वास्ते जरावते होगे, तो स्वर्गके लोग फिर नाहक गर्भवासमें आते हैं, ऐसा बेद बोलता है। तो फिर नाहक भ्रमके भरोंसे जीते तन क्यों जरावते हो ? ब्रह्मभी भ्रम औ योग तपस्या वैराग्यभी भ्रम, मिथ्या भूत। सो सब परखके छोड़ो औ पारख होय रहो। ये अर्थ। **मायामुख**—योबन जारि युक्ति तन पारो। अब मायाका उपदेश ऐसा है कि, योबन ज्वानी औ संपूर्ण इंद्रिनको जराना औ नाना साधना करना-शम, दमादि। औ आगे जैसा खखाके अर्थमें युक्ती बोली, तैसी युक्तीसे तन छिजावना औ सतगुरुके पाससे योगकी युक्ती समझना। फिर वो योग साधना करके जो कोई तन जरावेगा; तो येही घटमें ज्योति उजियारा करेगा, ज्ञान प्रकाश होयगा, योग सिद्धी होयगी जैसी पवन थीर होती है, तब दियेकी ज्योती थीर होयके जरती हैं। वैसी इंद्री रूपी पवन थीर होय, तब ई घट ज्योती उजियारी करै। जीवन मुक्त दशाको प्राप्त होय। ये अर्थ ॥ ८ ॥

झझा अरुझि सरुझि कित जान। अरुझनि हींडत जाय परान॥
कोटि सुमेरु ढूँढ़ि फिरि आवै। जो गढ़ गढ़ै गढ़ैया सो पावै९॥

टीका गुरुमुख—झ कहिये संसार प्रपंच औ झा कहिये नाना बानी, नाना मत, जो संसारमें उत्पन्न भई। सो गुरु कहते हैं कि, नाना प्रकारकी बानीमें औ नाना प्रकारके मतनमें औ नाना प्रकारके

विचित्र जगत्में, घर दारा पुत्रादिकमे हे जीव ! तू अरुझिके कहाँ जायगा ? येही अरुझेसे चार खानीमें परा रहेगा । ताते तू समुझ कि, या फन्देको अच्छी तरहसे परखके छोड़ दे । अरे बानी जाल औ स्त्री जालमें अरुझेसे नाना योनीमें हिंडते ही फिरते ही प्राण जाता है, परंतु ना तुझे पारख मिलता है, न तेरा भ्रम छूटता है । जो गढ़-गढ़े गढ़ैया सो पावै । अरे चाहै तू कोटि सुमेरु बानीके प्रमाणसे ढूँढ़ि फिर आवै, परन्तु जो कछु अनुमान करके अध्यासरूपी गढ़ गढ़ा है गढ़ैया जीवने; ताको सोई प्राप्त होयगा । जहाँ आशा तहाँ बासा होय । अब कोई स्वर्ग आदिक औ कोई ब्रह्मादिक आसा करते हैं, तो प्राप्ती होय कि नहीं ? ये शंका । तो ब्रह्म औ स्वर्ग कछु वस्तु होय, तो प्राप्त होय औ जो वस्तु नहीं है, सो प्राप्ती कहाँसे होय ? अरे ससाश्रृंगका धनुष और बाँझ पुत्रका मिलाप और गंधर्व नगरका महल रहनेको कहाँ मिले ? तद्वत् ब्रह्म स्वर्गादिक भोग मिथ्या, कल्पना कहाँसे प्राप्त होय ? तो जो कोई सर्व साक्षिनी तुरिया अवस्थाके अध्यासमें चोला छोड़ै, सो उत्तम मानुष देहको प्राप्त होय ज्ञानी होयगा औ तुरियातीत अवस्थामें चोला छोड़ै तो जड़ अजगरादि योनियोंको प्राप्त होयगा । सुषुप्ती अवस्थामें चोला छोड़ै, तो कृमी-कीटकी योनीमें जायगा । स्वप्न अवस्था में चोला छोड़ै, तो पक्षी योनीको प्राप्त होयगा । जागृती अवस्था विषय मोहमें चोला छोड़ै, तो पशु योनिको प्राप्त होयगा । बिनु पारख चौरासी छूटे नहीं । जो गढ़को गढ़े, सोई गढैयाको प्राप्त होय । ये अर्थ ॥९॥

ञञा निग्रह सनेहू । करु निरुवार संदेहू ॥ नहिं देखे नहिं भाजिया । परम सयान पयेहू ॥ जहाँ न देखि तहाँ आप भजाऊ । जहाँ नहीं तहाँ तन मन लाऊ ॥ जहाँ नहीं तहाँ सब कछु जानी । जहाँ है तहाँ ले पहिचानी ॥ १० ॥

टीका गुरुमुख–ञ कहिये अनुमान नपुंसक ब्रह्म, ञा कहिये बानी । सो बानीका सनेह सब जगत्में विशेष भया, ताते ये जीवमें

संदेहका बढ़ा ब्रह्म-ईश्वर-आदि । सो संदेहका तूं निरुवारा कर, नहीं तो संदेह तेरेको बन्धन है । अरे जो बिचारमें नहीं नजर आता, तहाँ भागे नहीं । सब परखके पारख पर थिर रहै, कहीं आसक्त न रहै । परम सयाना उसीको कहिये, पारखी कहिये । औ जहाँ न देखी तहाँ आपु भजाऊ । कि, जहाँ बिचारसे भी कछु नहीं देखाता ब्रह्म और आँखिनसे भी कछु स्वर्ग आदिक नहीं दिखाते; तहाँ नाहक अनुमान करके जीव भागते चले जाते हैं, अपने अनुमानसे भेड़िनकी नाँई । औ जहाँ कछु है नहीं; पत्थर है, या पानी है, तहाँ जीव सब तन मन लगाते हैं । फिर जहाँ मन बुद्धि कछु चलती नहीं, तहाँ सब कछु जानते हैं । कहते हैं कि, वही ब्रह्म, जहाँ कछु नहीं ! ताहीके पेटमें यह जगत् सब है, वो सबका अधिष्ठान है । परन्तु जो तू न होय, तो ब्रह्म ईश्वर आत्मा ये क्या माल हैं ? कछु नहीं । याते तेरे हीसे सब कछु है । तू अपनेको पहिचान ले । ये अर्थ ।

टटा बिकट बाट मन माँही । खोलि कपाट महल मों जाही ॥
रही लटापटि जुटि तेहि माँही । होहि अटल तब कतहुँ न जाही ११ ॥

टीका मायामुख—टटा कहिये ब्रह्मरंध्रका रस्ता, सो बड़ा बिकट है; परन्तु कपाट ब्रह्मरंध्रका खोलके ब्रह्मांड महलमें जाना-हठयोग मार्गसे या राजयोग मार्गसे । जैसा पीछे शब्दनमें हठयोग मार्ग या राजयोग मार्ग बोले हैं, तेही तरहसे ब्रह्मांड बास करना । फिर रही लटापटि जुटि तेहि माँही । पाँचो तत्त्व एकमें एक लटापट होयके ब्रह्मांडमें जुटि रहैं । आकाशमें लय भये, तब मन उन्मुन हो गया । तब अचल समाधी भई, जीवन-मुक्त हुवा । ये अर्थ ॥ ११ ॥

ठठा ठौर दूर ठग नियरे । नितके निठुर कीन्ह मन घेरे ॥
जे ठग ठगे सब लोग सयाना । सो ठग चीन्हि ठौर पहिचाना १२ ॥

टीका गुरुमुख—ठग कहिये गुरुवा लोग । इनका संग करे से हे जीव! तेरा ठौर दूर हो जाता है । गाफिलीसे पारख बहुत दूर । अरे जो गुरुवा

लोगोंके भरोसे औ वेदके भरोसे रहते हो, सो वेदने औ गुरुवा लोगोंने तेरा ठट्ठा मचाया है। कि, कहीं तुझे गुलाम बनाते हैं, कहीं राजा बनाते हैं, कहीं सबका अधिष्ठान बनाते हैं औ कहीं पापी बनाते हैं। कहीं स्वर्ग बताते हैं औ कहीं नरक बताते हैं औ कहीं भक्ति बताते हैं औ कहीं योग बताते हैं। औ कहीं ज्ञान करके सब उड़ाते हैं; फिर जगत् ब्रह्म कहते हैं। हे जीव! ऐसे ठट्ठासे तेरा ठौर दूर रहा, स्थिति दूर रही। औ नितके निठुर कीन्ह मन घेरे। औ नित वेद बानी दृढ़ाय-दृढ़ाय तेरे मनको घेर लिया। अब कहीं निकलने को जगह मिलती नहीं। तू घेर घार चौरासीमें रहता है। चौरासी कहिये देह। जे ठग ठगे सब लोग सयाना। अरे ये ब्रह्मा, विष्णु, महेशादि ठग कैसे हैं? जो बड़े-बड़े सयाने लोगोंको इन्होंने ठगा है। सो तू इन ठगनको पहिचान, इनकी बानीको परखके छोड़ औ अपने ठौरको पहिचान। जा ठौरसे तत्त्वमस्यादि सब ठौर परखनेमें आवै, सोई तेरा ठौर। ये अर्थ। बिरह अर्थः—गुरु कहते हैं कि, हे जीव! तेरे पीछे दो ठग लगे हैं। सो तू दोनों ठगोंको चीन्ह औ अपना ठौर सत्संगमें पहिचान। एक सूक्ष्म ठग माया गुरुवा औ बानी, औ दूसरा ठग स्त्री, जाके संग कियेसे तेरा ठौर दूर हुवा औ चौरासी विषय नगीच हुवा। नित इस स्त्रीने तेरेको निठुर कर दिया, जो अपने हितका औ पदका तू स्मरण भी नहीं करता। अरे स्त्रीके कटाक्ष बाण तेरे मनको लगे, सो तेरा मन जेर हो गया। औ इस स्त्रीने नाना हाव-भाव बतायके तेरे मनको घेर लिया। सो तूने सुखका हंस पद छोड़के चौरासी का दुःख शिर पर उठाय लिया, सो पाप। अरे इस स्त्रीने बड़े-बड़े सयाने ब्रह्मादि, नारदादि, पराशरादि सबको ठगा। सो स्त्रीके वश तू होय रहा है। अब तेरी चौरासी कैसे छूटेगी? सो स्त्रीको केवल बंधन रूपी चीन्ह औ अपने ठौरको पहिचान। जो ये स्त्री औ कल्पना दोनों न होती तो ये जीव स्वतःही मुक्त था। ये अर्थ ॥ १२ ॥

डडा डर उपजे डर होई। डरहीमें डर राखु समोई ॥
जो डर डरै डरहि फिरि आवै। डरहीमें फिर डरहि समावे ॥१३॥

टीका गुरुमुख—डडा कहिये जीवको। सो गुरु कहते हैं कि, हे जीव! जो डर तेरे पाससे पैदा होता है, सोई तेरा काल है औ दूसरा तेरा काल कोई नहीं। जो कछु कल्पना अनुमान तेरे देहसे उठता है, सोई तेरेको बंधन है औ सोई तू पकड़ लेता है, ताते फिर-फिर तेरेको देह प्राप्त होता है। डर कहिये देह, सो देहसे जो कछु पैदा होय, सो सब डर तेरेको देह प्राप्त होनेका कारण है। ब्रह्म आत्मा आदि संपूर्ण कल्पना खड़ी भई। सो संपूर्ण तेरेको देह होनेका कारण है। सो डरहीमें डर राखु समोई। देहकी कल्पना समस्त देहमें जराय दे, परखके तू न्यारा हो। जो डर डरै डरहि फिर आवै। अगर तू परखके सब डर नहीं छोड़ेगा, तो ये देह छुटेगा, फिर डर देह तेरेको प्राप्त होगा। डरहीमें फिर डरहि समावै। वो देहमें फिर डर धोखा समायेगा। सोई बार-बार देह धरता है। फिर वो देहमें नाना डर उत्पन्न होते हैं, ताते, ब्रह्म बनता है। और ईश्वरका आसरा करता है, ताही ते बार-बार देह धरना पड़ता है। सो तू मिथ्या धोखा परखके छोड़। ये अर्थ। **विरह अर्थ**—डडा कहिये इच्छा कर्ता, इच्छा कर्ता कहिये जीव। तो हे जीव! तेरी इच्छासे डर उत्पन्न भया, स्त्री उत्पन्न भई, ता स्त्रीके संग तू भूला। ताते स्त्रीकी इच्छा मत करे, देहकी इच्छा देहमें समाय रख। जो तू स्त्रीका अध्यास रखेगा, तो फिर चोला छुटेगा, तो स्त्रीके गर्भमें आवेगा। और वो चोलेमें फिर स्त्रीकी वासना समावेगी, फिर वाहीमें तू बंध रहेगा। तेरा आवागमनका कारण स्त्री औ कल्पना, दोनों छोड़के पारख स्थिति पावै, तो आवागमनसे रहित होय। ये अर्थ ॥ १३ ॥

सवैया—डरहि ते योग औ यज्ञहु करत नर। डरहि ते दान पुण्य ध्यानको धरतु है। डरहि ते राज छाँड़ि भूप बन खंड गये। डरहि ते तपस्या करि डरहीमें मरतु है। डरहि ते भक्ति औ ज्ञानको अध्यास करे। डरहिते अन्न छाँड़ि दूबको चरतु है। डरहि व्यापक तिहूँ लोक को बंधन भयो। पूरन परख बिनु डर न सरतु है ॥ १ ॥

ढढा हींड़तही कित जान। हीड़त ढूँढ़त जाय परान ॥
कोटि सुमेर ढूँढ़ि फिर आवे। जेहि ढूढ़ा सो कतहुँ न पावै१४॥

टीका गुरुमुख—ढ कहिये भ्रमिक और ढा कहिये भ्रम। सो गुरु कहते हैं कि, हे जीव! तू भ्रममें कहाँ-कहाँ मारा-मारा फिरता है? अरे हींड़ते ढूंढ़ते तेरा प्राण जायगा। चाहे तू कोटि सुमेरु ढूँढ़ता फिरे, फिर भी इसी चोलेको आवेगा। परंतु जेहि गोसैयाँको तू ढूंढ़ता है, सो कहीं मिलनेका नहीं। अरे जो वस्तु है नहीं, सो कहाँसे मिलेगी? ये अर्थ ॥ १४ ॥

णणा दुई बसाये गाऊँ। रेणा ढूँढ़े तेरी नाऊँ ॥
मूये एक जाय तजि धना। मरे इत्यादिक केतेको गना१५॥

टीका गुरुमुख—ण कहिये पिंड औ णा कहिये ब्रह्मांड। सो गुरु कहते हैं कि, हे जीव! तूने पिंड-ब्रह्मांड, स्वर्ग—नर्क, दुइ गाँव बसाये। सो पिंडमें जीवका अनुमान किया औ ब्रह्मांडमें ब्रह्मका अनुमान किया। फिर रेणा ढूंढे तेरी नाऊँ। तेरी कल्पनाको तूही ढूंढ़ने लगा। कल्पना तो कछु बस्तु नहीं, प्राप्त कहाँसे होय? ब्रह्माँडमें तूही ब्रह्म होता है औ पिंडांडमें तू ही जीव होता है। स्वर्गवासी तूही होता है औ तूही नर्कवासी होता है। मूये एक जाय तजि धना, मरे इत्यादिक केतेको गना। ताते तेरेसे दूसरा कोई नहीं। नाहक कल्पनाका धन काहेको जोड़ता है। अरे पहिले जो बड़े बड़े भये, सो सबन मिलि नाना कल्पना कर-करके नाना प्रकारकी बानी शास्त्र पुराणादिक रखके मर-मर गये। अब जो कोई पैदा होते हैं, सो सब वही बानी पढ़ि-पढ़ि येही नाना कल्पना बना-बनाके मरते हैं। बिना पारख, केतेको गना? ये अर्थ॥ १५ ॥

तता अति त्रियो नहिं जाई। तन त्रिभुवनमें राखु छिपाई ॥
जो तन त्रिभुवन माँहिं छिपावे। तत्त्वहिमिलि तत्त्व सो पावै१६॥

टीका मायामुख—त कहिये तत्पद ईश्वर, ता कहिये त्वंपद जीव, अति कहिये असिपद दूनोंका एकता। ये त्रिपदको समझ लेना और

कहीं तीर्थ, व्रत, उपासनामे नहीं जाना। तन यही त्रिभुवन, यामें श्वासको छिपाना कि, योग साधना करके पवन ब्रह्मांडमें लय करना। जागृति अवस्था सहित पृथिवी जलमें लय करना औ स्वप्न अवस्था सहित जल अग्नीमें लय करना औ सुषुप्ती अवस्था सहित अग्नी वायुमें लय करना औ तुरिया अवस्था सहित वायु आकाशमें लय करना। याको लय-योग संधान कहिये।

सवैया–प्रथमै मन लाय एकाग्र करे। फिर आँखि लगायके ध्यान धरे॥ जहाँ ऊठत नाद अनाहदरे। सगरे ब्रह्मांडमें शब्द भरे॥ रकार अकार उठे झनकार। अनेक प्रकार सो शब्द चरे॥ सगरे जब नाद बिलाय गये। दश नाद रहे सगरे तबरे॥ सोई भिन्नहि भिन्न बिचार करे। नहिं टारे टरे मन धीर धरे॥ दश नाद बिलाय सुभाविकरे। फिर नाद रहै घंटा इक रे॥ धरतिके नादको आप गहै। फिर आपके नादको अग्नि दहै॥ औ अग्निके नाद समीर लये। सोई जाय रहै आकाश भये॥ सोई घंटा नाद प्रकाशि करे। सब पिंड-ब्रह्मांडके बासि करे॥ तिहुँ लोकको ईश्वर भासि करे। तहँ जीव मिले अविनाशि करे॥ तहाँ उठत तरंग अनंदितरे। मन जाय भयो लय तेही भितरे। पूर्णानंद रूप वेदोदितरे। सोई लय योग सदोदितरे॥१॥

इस प्रकारसे जो तन त्रिभुवन माँहि छिपावै। अर्थ-कि जो कोई इस तनमें लययोग संधान करके मनको लय करै सोई तत्वनमें मिलके ब्रह्मको पावै, अन्तमें ब्रह्मरूप हो जाय। ये अर्थ॥ १६॥

थथा अति अथाह थाहो नहिं जाई। ई थीर ऊ थीर नाहिं रहाई॥
थोरे–थोरे थिर होउ भाई। बिन थंभे जस मंदिर थँभाई॥१७॥

टीका मायामुख–थ कहिये ब्रह्म और था कहिये वेद। सो वेद बोलता है कि, ब्रह्म अति अथाह, बेअंत, थाहो नहिं जाई। उसका अन्त किसीको नहीं मिलता। जो कोई थाह लेने जाता है, सो तद्वत् हो जाता है। ताते हे मुमुक्षु लोगो! थोरे-थोरे थीर होवो, श्रवण मनन करते-करते हलु-हलु उन्मुनी होवो। जैसे बिना आधार मंदिर थंभता है; तद्वत्। ये अर्थ॥१७॥

ददा देखहु बिनशनहारा । जस देखहु तस करहु बिचारा ॥
दशहूँ द्वारे तारी लावै । तब दयालके दर्शन पावै ॥१८॥

टीका गुरुमुख—दका अर्थ दयाल और दाका अर्थ दाता । तो जो दया करके पारख जीवको देय, सोई ददा गुरु । सो गुरु कहते हैं कि, हे संतो ! देखहु बिनशनहारा ये देह । तो जो कछु ये देहके अनुमानसे बना है औ देहकी क्रियासे बना है सिद्धांत वा बानी, सो भी बिनशनहारा । जब स्थूल ही नाश होयगा, तब सूक्ष्म-कारण-महाकारण-केवल कहाँ रहेगा? तो जैसे देखो; तैसे विचार करो सब पक्ष छोड़के; तब पारख प्राप्त होयगा । परन्तु माया क्या दृढ़ावती है सो सुनो ।

मायामुख—दशहूँ द्वारे तारी लावै, तब दयालके दर्शन पावै । प्रथम बज्रासन करना—बाँये पाँवकी एड़ी गुदामें लगाना, बाँये पाँवके मूल पर दाहिना पाँव राखना, दहिने पाँवकी एड़ीसे लिंगको दबाना, दाढ़ी कंठको लगाना, दोनों अंगूठेसे कान मजबूत मूँदना औ दोनों तर्जनी अँगुरीसे आँखि बन्द करना औ दोनों बीचकी अँगुरीसे नाक बंद करना । इस प्रकारसे सन्मुखी मुद्रा तारक योग करना, तब दयालका दर्शन मिलता है ।

छप्पय—प्रथमै है अन्धकार ताहि, तम गुण करि जानो । दूसर अरुण प्रकाश रक्त, रजगुण पहिचानो ॥ बिजलीसी जो चमक, सोई है माया रानी । दिखे रंग कपूर वही, सतगुणकी खानी ॥ शुद्ध सतोगुण भानु चन्द्र मंडल, तारागण लय करे । फिर रहे सुनीलानंद लक्ष, लक्षि मिलिके सर्वस भरे ॥ १ ॥

दशहूँ द्वारे तारी लावै । तब इस प्रकारसे दयालके दर्शन पावै । ये अर्थ ॥ १८ ॥

घघा अर्ध माँहिं अंधियारी । अर्ध छोड़ि ऊर्ध मन तारी ॥
अर्ध छोड़ि ऊर्ध मन लावै । आपा मेटिके प्रेम बढ़ावै ॥१९॥

टीका मायामुख—ध कहिये ब्रह्म और धा कहिये माया । सो अर्ध कहिये पिंड, तामें महा अविद्याकी अन्धियारी है । सो हे जीव ! तू

अर्ध छोड़ ऊर्ध मन तारी लगाव । अर्ध कहिये नाभी औ ऊर्ध कहिये त्रिकुटी । सो त्रिकुटी छोड़ तारक योग मत करै, ऊर्ध ब्रह्मांडमें तारी लगाव, अमनस्क योग कर । अर्ध छोड़ि ऊर्ध मन लावै, आपा मेटिके प्रेम बढ़ावै । ब्रह्मांडसे जो स्फूर्ण होता है, सो सोहंरूप होके नाभीमें रहता ह; तामें सुर्त मिलाना । जो श्वासा नाभीसे उठता है, सो तीन धार होके चलता है-इंगला, पिंगला, सुषुमना । सो इंगला, पिंगलाका मुख नीचे अर्धको औ सुषुमनाका मुँह ऊपर ऊर्धको । सो त्रिबंध बाँधके सुषु मना लाना, फिर श्वासोच्छ्वासमें सुर्त लगाना । सोहं करके श्वास उठाना हंसो करके श्वास बैठाना । इस प्रकारसे अर्ध कहिये इंगला पिंगला, ताको छोड़के ऊर्ध सुषुमना, तामें मन लगावै । औ आपा मेटै । देहकी विस्मृति करके नाममें मन बढ़ावै, तब मन उन्मनी सिद्ध होय, ब्रह्म प्राप्त होय औ सकल सिद्धि प्राप्त होय । बाचा सिद्धि, मनसा सिद्धि प्राप्त होय । ये अर्थ ॥ १९ ॥

चौथे वो नामहँ जाई । रामका गदहा होय खर खाई॥२०॥

टीका गुरुमुख-गुरु कहते हैं कि, कोई इस प्रकारसे लय योग करते हैं औ कोई तारक योग करते हैं औ कोई अमनस्क योग करते हैं । चौथे शून्यमें जाके लय होते हैं फिर रामके गदहा बनते हैं, योगी बनते हैं । रामके गदहा कहिये रमेति रामः । सबमें रमे, आपी राम कहाये । तब जगत्का बोझा सब उठाया । अधिष्ठान रूपी हुए, तब सब भोक्ता बने । और कोई रामवियोगी होके गदहे माफिक खाक लगाय जहाँ-तहाँ अन्न छोड़के घास, पत्ती, कंद, मूल, खाने लगे। ये अर्थ॥२०॥

पपा पाप करे सब कोई । पापके करे धर्म नहिं होई ॥
पपा कहै सुनहु रे भाई । हमरे से इन किछुवो न पाई॥२१॥

टीका मायामुख-पपा कहिये परपंची जीव । सो पंडित लोगोंका बोलना ऐसा है कि, संसारमें पाप सब कोई आचरण करते हैं । अपना-अपना धर्म सब कोई छोड़ा । कोई ब्राह्मणको पैसा नहीं देते,

औ कोई ब्राह्मणको भोजन नहीं देते, कोई कपड़ा नहीं देते । तो चारों वर्णने अपना धर्म छोड़ा औ पाप करने लगे । जो ब्राह्मण होके त्रिकाल संध्या औ पंच महायज्ञ, गायत्री पुरश्चरण औ ब्राह्मणको अन्न देना औ यजन-याजनादि कर्म यथा विधि करना । शूद्रका अन्न नहीं खाना औ त्रिकाल स्नान करना । शूद्रादिकका स्पर्श नहीं करना । सिलो-उछना वृत्ति करना, या झाड़के तरे झरे पत्र फलको भक्षण करना, या ब्राह्मणके घरसे भिक्षा लाना कोरा अन्न औ उदर पोषण करना । या कछु निकट प्रयोजन लगे, तो क्षत्रीके यहाँ जाय कर द्रव्य लाना औ अपना प्रयोजन करना । औ नित्य-नैमिचिक कर्म यथाविधि करना, कर्म लोप कभी न होना । ऐसा धर्म छोड़के अनाचार करते हैं, सो सब पाप करते हैं । औ क्षत्रियने भी धर्म छोड़ा । जो गऊदान, अश्वदान, गजदान, पृथिवीदान, कन्यादान आदिक कर्म नहीं करते औ राजसूय यज्ञ, अश्वमेध यज्ञ, सोम यज्ञ, ब्रह्म यज्ञ, शास्त्रयज्ञादि यज्ञ भी कोई नहीं करते औ ब्राह्मण भूखे मरते हैं उनको द्रव्य भी नहीं देते । औ प्रजा पालन करना, परिचर्या कर्म ना करना । जो इतना न हो सके, तो क्षत्री वनको जाय, तपस्या करे । तो क्षत्रिय धर्म छोड़के सब पाप करते हैं । जो अपना धर्म छोड़ औ आन धर्म आचरण करते हैं, सो सब पाप । अब वैश्यका धर्म ब्राह्मणकी सेवा औ राजाकी आज्ञा औ विष्णुकी भक्ति कायिक वाचिक मानसिक रखना औ कृषी, गऊरक्षा, वाणिज्य कर्म करके उदर पोषण करना । ये धर्म छोड़के वैश्य आन धर्म आच-रण करे, तो सब पाप । औ शूद्रका धर्म तीनों वर्णकी सेवा करना, परिचर्या कर्म करना, राम-राम स्मरण करना, औ कछु न करना । ये छोड और कर्म जो करे, सो सब पाप । इस वास्ते सब पाप आचरण करते हैं । पापके अधिष्ठाता चारों वर्ण भये । तो भला ब्राह्मणको दान तो भी देना, सो भी नहीं देते, ताते सब नर्कको जायेंगे । ये अर्थ । जीवमुख—पपा कहे सुनहु रे भाई । जीव कहता है कि, सुनो रे

भाई ! जैसा धर्म पंडित लोग बोलते हैं-सोई धर्म सत्य है; परन्तु अपनेसे इन गुरु लोगोंको कछु पैसा कौड़ी प्राप्त नहीं भई, यथार्थ धर्म आचरण नहीं हुआ। ना जाने अपनी कौन गती होवेगी ?। ये अर्थ ॥ २१ ॥

फफा फल लागे बड़ दूरी। चाखे सतगुरु देई न तूरी ॥
फफा कहै सुनहु रे भाई। स्वर्ग पताल कि खबर न पाई॥२२॥

टीका मायामुख—फफा कहिये पुष्पित बाच रोचक बानी। सो माया पुष्पित बानी जीवको उपदेश करती है कि, अर्थ-धर्म-काम-मोक्षादि फल संपूर्ण मंत्र उपदेशनमें हैं; परंतु कोई सतगुरु हाथसे तोरिके नहीं देते। गुरु जैसी क्रिया बतावै औ शास्त्र जैसी क्रिया बतावै; तैसी विधि चले, तो फल प्राप्त होय। **गुरुमुख**—फफा कहै सुनहु रे भाई। स्वर्ग पतालकी खबर न पाई। गुरु कहते हैं कि; जैसी गुरुवा लोगोंने बानी बताई, तैसी तुम लोगोंने मान लई। परन्तु हे भाई ! हे जीव ! अर्थ, धर्म, काम, मोक्षादि फल क्या स्वर्गमें है ? कि पातालमें है ? ये खबर न तुम्हारे गुरुवा लोगोंने पाई, न तुमने पाई। तो नाहक वेद बानीके भरोसे धोखेमें परे, बिना पारख। ये अर्थ ॥ २२ ॥

बबा बर-बर करे सब कोई। बर-बर करे काज नहिं होई ॥
बबा बात कहैं अर्थाई। फलका मर्म न जानहु भाई ॥२३॥

टीका गुरुमुख—ब कहिये बानी और बा कहिये पंडित। सो सब ब्रह्मादि पंडित बर-बर करते-करते मरि-मरि गये ? औ अब जो कोई पंडित हैं, सब बर-बर बकवाद करते हैं; परन्तु बकवाद किये काम नहीं होनेका।

सवैया—कोई द्वैत औ कोई अद्वैत कहै, कोई विशिष्टाद्वैत सिद्धांत कर जाना है ॥ कोई कर्ता औ कोई कर्म काल कहै, कोई पातंजलि योग निश्चय करि माना है ॥ कोई सांख्यवादी नित्यानित्यका विवेक करै, कोई वेदांती ब्रह्म सकलो कहि साना है। पूरन प्रकाश जबलों पारखकी प्राप्ति नहीं, तौलों बकवाद सकल भ्रमहीमें ताना है ॥ १ ॥

ताते बकवाद सब करते हैं: परंतु कछु फायदा नहीं। बबा गुरुवा लोग जो बात करते हैं कि, अस्ती ब्रह्म। सो ताको अर्थायके देखो कि, ब्रह्म क्या है, तो कहते हैं कि, 'तू और मैं' ये छोड़ जगत् सब ब्रह्मरूपी है। तो पहिले जगत् नाम धरा था; अब एक अनुमान करके ब्रह्म नाम धरा, तो क्या हुवा ? कौन फल इनके विचारका ? और कहते हैं कि, पाप-पुण्य मानेसे होता है औ बंध-मोक्ष मानेसे होता है। न माने तो कुछ नहीं, आत्मा जैसाका तैसा तो भला अग्नीको पानी करके माने; तो हाथ जरे कि, नहीं ? औ पानीको अग्नी करके माने; तो अंग जरे कि, नहीं ? औ पानीको पानी करके न माने, पृथिवी करके माने; तो बूड़े कि, नहीं ? जो सूर्यको अंधकार करके माने; तो अंधकार होय कि नहीं ! औ अंधेरेको सूर्य करके माने, तो प्रकाश होय कि, नहीं ! याते जो होय, सोई सही। मानेसे कछु नहीं होता। ये सब मिथ्या धोखा। ये अर्थ ॥

कवित्त—कोई जन्म अंध ताको नैनसुख नाम भयो। इतनेमें फूल्यो पर नेत्र नहिं आयो है ॥ कोई जन्म रोगी ताको देहसुखी नाम धऱ्यो। नामहिको महातम कछु सुख नहिं पायो है। काननको बहिरा ताको बहु श्रोता कहैं लोग, बानीको रस ताको स्वप्नेहु नहिं भायो है। मूकाको वक्ता कहि नाम धरा पुराननमें। ऐसो ही गुरुवनने जगत् ब्रह्म गायो है। गुरुवा लोगनकी बातका अर्थ देखो, तो कछु फल नहीं। ये अर्थ ॥२३॥

भभा भभरि रहा भरपूरी। भभरे ते है नियरे दूरी ॥
भभा कहै सुनहु रे भाई। भभरे आवै भभरे जाई ॥ २४ ॥

टीका गुरुमुख—भभा कहिये भ्रम, सो भ्रमहि ब्रह्म होयके भरपूर हो रहा। प्रथम वेदकी कल्पना कि, कोई ब्रह्म है; सो बात जब जीवने सुनी, तब ब्रह्मको खोजने लगा। जहाँलग जीवकी अकिल चली, तहाँ-लग खोजा। फिर जब अकिल थकी; तब कहा कि, आपुही ब्रह्म। घबरायके कहा कि मैं ही ब्रह्म सर्वत्र पूरण हूं। यही बातका सिद्धांत

घबरायके सब करने लगे। फिर कोई नगीच ठहराने लगे औ कोई कहने लगे कि, दूर है। ऐसा भ्रमके अनेक सिद्धांत करने लगे औ भ्रमहीसे संपूर्ण हमी भरे है, ऐसा कहते हैं। जो नगीच कहना, ये भी भ्रम औ दूर कहना, येभी भ्रम। सपूर्ण आपही आप कहना, येभी भ्रम। भ्रमहीसे सब बात करते हैं। हे भाई। जीव ! तुम सुनो, भ्रमहीमें सब आते हैं औ भ्रमहीमें सब जाते हैं। भ्रम है सोई जन्म मरणका कारण है। परखके ताको निरुवारा करो। ये अर्थ ॥ २४ ॥

ममा के सेये मर्म नहिं पाई। हमरेसे इन मूल गमाई ॥
माया मोह रहा जग पूरी। माया मोहहि लखहु बिचारी२५॥

टीका गुरुमुख-म कहिये अंधकार, अंधकार कहिये जहाँ कछु सूझै नहीं औ जीव भ्रमि जाय, सोई मकार माया। अथवा मकार शब्द मोहनबीज है। जाके मोहसे जीव मोहित हो जाय और आगे कछु सुझै नहीं, सोई मकार कहिये माया औ माया कहिये काया, काया कहिये जामें जीव आसक्त होय। सो जीव सब देहमें आसक्त होके मकारका सेवन करने लगे। मकार दश, तामें मुख्य पाँच औ पाँच गौण। पंच मकार मिलके मायाका स्वरूप। मंत्र, मुद्रा, मद्य, मांस, मैथुन; ये पंच मकार गौण। स्त्री, पुत्र, धन, बाजी औ घर, ये पंच मुख्य मकार। अब माया दश प्रकारकी-स्थूल, सूक्ष्म, कारण, महाकारण, केवल, कर्म, उपासना, ज्ञान, भक्ती, विज्ञान, ये दश प्रकारकी माया औ याहीको सेवन सब करने लगे, याहिमें आसक्त भये। ताते मर्म न पाया, पारख नहीं पाया। ये अर्थ। हमरेसे इन मूल गमाई। याको अर्थ ऐसा है कि, ये बीस द्रव्यका अभिमान माना-दश मायाकृत, दश मकार कृत; ताते ये जीवने अपना मूल हंस देह ताको गवाँया औ मायाके मोहमें परा। सो ये मायाका मोह जगत्‌में पूरि रहा है। सो तुम बिचारके परखो औ उसकी आसक्ती छोड़ो, तब पारख स्थिति प्राप्त होयगी। ये अर्थ ॥ २५ ॥

यया जगत रहा भर पूरी । जगतहुँ ते है जाना दूरी ॥
यया कहै सुनहु रे भाई । हमहींते इन जै जै पाई ॥ २६ ॥

टीका मायामुख–य कहिये ब्रह्म औ या कहिये माया । सो गुरुवा लोग बोलते हैं कि जो जगत है, तामें ब्रह्म भरपूरि रहा है, कनककुंडल न्याय, घटमृत्तिकान्याय, परन्तु जगत् से अलिप्त है । जैसा घट-मठ-पटमें आकाश भरा है औ घट-मठ-पटसे दूर है, अलिप्त है, तद्वत् । ये अर्थ । परन्तु इन जीवनने हमहींसे जै-जै पाई । ऐसा गुरुवा लोग बोलते हैं कि, जीवनने ब्रह्म स्थिति हमहींसे पाई । ये अर्थ ॥ २६ ॥

ररा रारि रहा अरुझाई । राम के कहे दुख दारिद्र जाई ॥
ररा कहै सुनहु रे भाई । सतगुरु ! पूछिके सेवहु आई॥२७॥

टीका गुरुमुख–र कहिये ज्ञान, रा कहिये ज्ञानी । सो गुरु बोलते हैं कि, ज्ञानी लोग सब ब्रह्मकी रारमें अरुझाय रहे हैं और अज्ञानी बोलते हैं कि, राम कहै दुःख दारिद्र जाई । परन्तु ज्ञानी लोग बोलते हैं कि, राम कहै दुख दारिद्र जायगा सही; परन्तु सतगुरुको पूछिके सेवन करो कि, राम क्या है ? जब सतगुरु आत्मा रामको बतावेंगे, तब दुःख दरिद्र सब जायगा । दुःख आवागवन औ दरिद्र जीव । सो जीवपना उड़ जायगा । जब आत्मापन आयगा, तब दुःख सब जायगा । इस प्रकारसे गुरुवा लोग बोलते हैं । ये अर्थ ॥ २७ ॥

लला तुतुरे बात जनाई । तुतुरे आय तुतुरे परचाई ॥
आप तुतुरे औरकी कहई । एकै खेत दूनों निर्बहई ॥२८॥

टीका गुरुमुख–लला ! ऐसी प्रीत संबोधना है औ तुतुरे कहिये भ्रमिक । सो गुरु बोलते हैं कि, हे जीव ! जो गुरुवा लोगोंने बात जनाई है, जो बानी तुम्हारेको उपदेश किया है, सो सब मिथ्या भ्रम है । अरे ! गुरुवा आपहि भ्रमिक हैं । भ्रमिक कहिये ब्रह्म, जामेंसे संपूर्ण जगतादि भ्रम खड़ा हुवा और फिर उसीमें हैं । सोई तुतुरे ब्रह्मज्ञानिनने आयके ब्रह्मज्ञानकी बानी संसारमें परचाय दी । अरे वे आपही

तुतुरे बने हैं, भ्रमिक बने है, ब्रह्म अधिष्ठान बने है। सोई ब्रह्मज्ञान औरनको कहते हैं और ब्रह्म बनाते हैं। फिर एकहि अधिष्ठानमें दोनों गुरु-शिष्य निरबाह करते हैं। जैसा जलतरंग न्याय। तो ब्रह्म आपहि भ्रमिक है और दूसरेका भ्रम क्या छुड़ावेगा? गुरु-शिष्य दोनों भ्रमहीमें रहे। ये अर्थ ॥ २८ ॥

ववा वह-वह कहैं सब कोई। वह-वह कहै काज नहिं होई॥
वह तो कहै सुनै जो कोई। स्वर्ग पताल न देखै जोई॥२९॥

टीका मायामुख—व कहिये बानी औ वा कहिये वेद औ वह कहिये ब्रह्म, परमात्मा, वह शब्द परोक्ष, दूसरा वेद बानी। सो गुरुवा-लोग बोलते हैं कि, वेद बानीके प्रमाणसे परोक्ष परमात्मा वा स्वर्गा-दिकमें परमात्मा सब कोई कहते हैं, सो मूर्ख!। परोक्ष कहेसे कार्य नहीं होनेका। अरे वह वेद तो सत्य कहता है; परन्तु कोई सुनता नहीं कि, स्वर्ग कहिये ब्रह्मांड औ पाताल कहिये पिंडांड। सो वह ईश्वर ब्रह्मांडमें और यह जीव पिंडांडमें। सो दोनोंका वाच्यांश छोड़ देना औ लक्ष्यांश ग्रहण करना, तो संपूर्ण ब्रह्म एकहि है। इस प्रकारकी वेदकी आज्ञा है; परन्तु करै नहिं कोई, तो परोक्ष बातसे मुक्ती नहीं। जब वाच्यांश छोड़ै औ शुद्ध लक्ष्यांश ग्रहण करै, तब अपरोक्ष अनुभव होय और जीव ब्रह्मकी एकता होय। ये अर्थ ॥ २९ ॥

शशा सर नहिं देखै कोई। सर शीतलता एकै होई॥
शशा कहै सुनहुरे भाई। शून्य समान चला जग जाई॥३०॥

टीका मायामुख—श कहिये, शून्य कहिये, आनंद कहिये, ब्रह्म कहिये। शा कहिये, आकार कहिये, जगत् कहिये, जीव कहिये। तो नाम रूप उपाधी मिथ्या औ वस्तुता सत्य। आकार बिनु शून्य नहीं, शून्य बिनु आकार नहीं, उभय सम्बन्ध है। दोनोंका अधिष्ठान आत्मा, जल बुदबुदा न्याय। बुदबुदा सोई आकार बीचमें पोल सोई शून्य, वस्तु पानी सोई सत्य, नाम-रूप मिथ्या। जगत बिनु आनंद नहीं,

आनंद बिनु जगत् नहीं, उभय सम्बन्ध है। दोनोंका अधिष्ठान आत्मा, घटाकाश न्याय। घट सोई जगत् औ घटाकाश सोई आनंद। महदाकाश सोई सत्य, नाम-रूप-उपाधी मिथ्या। जीव बिनु ब्रह्म नहीं, ब्रह्म बिनु जीव नहीं, उभय सम्बन्ध है। दोनोंका अधिष्ठान आत्मा, घटमृत्तिकान्याय। ब्रह्म मृत्तिका, जीव घट, नाम-रूप उपाधी मिथ्या, पृथिवी सत्य; तद्वत् जगत् सब आत्मा। शशाका। ये अर्थ। तो गुरुवा लोगोंका उपदेश ऐसा है कि; सर नहिं देखै कोई, सर शीतलता एकै होई। तो देखो-जड़ देहका अभिमान करके जीव सब भ्रमि गये। नाना कर्म उपासना करते हैं औ ब्रह्म कोई नहीं देखता कि, जगत् औ ब्रह्म एक है, शर शीतलता एक है। तद्वत् शर पानी, शीतलता थंडाई। ये अर्थ। **गुरुमुख**-शशा कहै सुनहु रे भाई, शून्य समान चला जग जाई। हे भाई जीव! तुम सुनो-ये गुरुवा लोग जगत् ब्रह्म कहते हैं। तो सबने जगत् नाम धरा था औ गुरुवा लोगोंने ब्रह्म नाम धरा, तो इनकी क्या अधिकाई? जैसा कोई दिवाना हो गया, तब अपना शिर अपने हाथसे फोर लिया। सो बड़ा घाव पड़ा औ उसमें अनेक कीड़े परे। लोगोंने उसका रोगी नाम धरा और आप भी रोगी कहै, तामें कोई एक और उसे अच्छा करनेको आया, सो ताने उसका नाम दिवाना रक्खा। इसमें क्या उसका रोग गया? क्या दिवाना पना गया? तद्वत् ये गुरुवा लोगोंका मिथ्या उपदेश सुनिके शून्य समान चला जग जाई। सकल जग गर्भवासमें औ भगमें समाया चला जाता है, ताते तू परखके छोड़। ये अर्थ॥ ३०॥

षषा खरा करे सब कोई। खर खर करे काज नहिं होई॥
षषा कहै सुनहु रे भाई। राम नाम ले जाहु पराई॥३१॥

टीका **गुरुमुख**-ष ब्रह्म औ षा जगत्, सो जगत् सब ब्रह्म खरा औ सब झूठा, ऐसा कहते हैं औ गुरुवा लोगोंके पास खरा करते हैं। परंतु खरा ब्रह्म और खोटा जगत, ऐसा कहे कछु काम नहीं होनेका। क्योंकि

ब्रह्म तो जगत्हीका नाम है; इसमें क्या कार्य होवेगा ? षषा कहै सुनहु रे भाई ! अब गुरुवा लोगोंके दो सिद्धांत हैं सो सुनो रे भाई । एक सिद्धांत ऐसा है कि, जगत् सब ब्रह्म रूप है । दूसरा सिद्धान्त ऐसा है कि, राम-नाम लेके जगत्से भाग जाव जंगलमें औ राम-नामकी रटना लगाव, तो राम रूप हो जावोगे । तो रमेति रामः । राम हुवा, तो भी चौरासीमें रमा औ ब्रह्म हुवा, तो भी चौरासी रूप हुवा । ये अर्थ ॥ ३१ ॥

ससा सरा रचो बरियाई । सर बेधे सब लोग तवाई ॥
ससा के घर सुन गुण होई । इतनी बात न जाने कोई ॥३२॥

टीका गुरुमुख—स कहिये ब्रह्म और सा कहिये ब्रह्मवेत्ता, सरा कहिये बानी । सो गुरु कहते हैं कि, देखो । हे संतो ! ये गुरुवा लोग जो बड़े-बड़े ब्रह्मवेत्ता वशिष्ठ आदि पैदा भये, उन्होंने भी ब्रह्म ज्ञान बहुत कथा; तामें कहा कि, द्वैत उपासना, कर्म कछु आत्मामें संभवता नहीं । फिर नाना प्रकारके कर्म उपासनाकी बानी जबरदस्ती रचना की और सबको दृढ़ाया कि, उपासना और कर्म करे बिना जीवकी मुक्ती नहीं । तामें सब जीव अरुझे और वो कर्म उपासनाकी बानी सब संसारमें बेधी । ताते संसार पर तवाई आई, बासनामें अरुझके आवागमनमें परे । भला उनका तो भी अद्वैत सिद्धान्त कैसा मानना ? जो उनको अद्वैत अनुभव यथार्थ हुवा था, तो ये कर्म-उपासना द्वैत काहेको कहा ? जो इस बातकी पारख करो, तो ऐसा मालूम होता है कि; उनको भी दुगदुगी रही कि, अद्वैत है कि, द्वैत है । ताते द्वैत-अद्वैत दोनों सिद्धांत किया । सोई दुगदुगी सबमें बेधी है, ताते जगत् पर तवाई आई । अरे गुरुवा लोगोंके घरमें सुन गुण है, मिथ्या धोखा है । आखिर बिचार करके देखो, तो ना कछु ब्रह्म ही है, ना कछु कर्म उपासनाही है । सब मिथ्या जीवका धोखा । इतनी बात न जाने कोई । इतनी बात किसीके परखमें न आई, ताते बँधा बैलकी नाँई धोखेमें परे । सो तू परखके छोड देव । ये अर्थ ॥ ३२ ॥

हहा! हाय! हाय! में सब जग जाई। हर्ष-सोग सब माँहि समाई॥
हँकरि हँकरि सब बड़-बड़ गयऊ। हाहा! मर्म न काहू पयेऊ॥३३॥

टीका गुरुमुख—ह शब्दका अर्थ हंकार, हा कहिये हंकारजनित जो कछु कार्य हो, ताहीकी हाय हायमें सब जग जाई। प्रथम स्थूलका अभिमान, तज्जनित स्थूल विषय—स्त्री, पुत्र, घर, धन, परिवार, राग-रंग, अच्छे-अच्छे षटरस भोजन, देखनेको अच्छे-अच्छे रूप, सूंघनेको अच्छी अच्छी सुगंध, स्पर्श करनेको अच्छी-अच्छी स्त्रियाँ। एती वस्तुकी प्राप्तिके वास्ते सब 'हाय! कब मिलेगी? हाय! कब मिलेगी?' ऐसा कहि-कहिके सब संसार मरता है। फिर एतिक वस्तु जो मिले, तो बड़ा सुख होता है, हर्ष होता है औ न मिले, जाता रहे, तो बड़ा सोग दुःख होता है। फिर सोचहिमें मरते हैं औ नाना योनीमें जाते हैं। ताते आगे ही परखके छोड़, तो तेरेको बड़ा सुख होवेगा। दूसरा सूक्ष्मका अभिमान तज्जनित सूक्ष्म विषय-स्वर्गादिक प्राप्ती, देवादिक प्राप्ती, लोक परलोकादिक प्राप्ती, मंत्र तंत्र—यंत्र सिद्धिकी प्राप्ती, राज्य प्राप्ती, इंद्रासन प्राप्ती, विद्यादिक प्राप्ती। ये मिले, तो परम हर्ष, सुख होता है औ फिर वियोग होय अथवा ना मिले, तो बड़ा सोग, दुःख होता है। ताहीमें हाय! हाय! करते करते मरते हैं, फिर नाना योनीमें जाते हैं। ताते संपूर्ण परखके छोड़, तब तेरी स्थिति होवेगी, आवागमनसे रहित होवेगा। तीसरा कारण हंकार, तज्जनित कारण विषय-योग प्राप्ती, समाधी प्राप्ती, सिद्धी प्राप्ती, वाचा सिद्धी, काया सिद्धी, मनसा सिद्धी, प्राणायाम, प्रत्याहार, भूत-भविष्य-वर्तमान सिद्धी, परकाया प्रवेश होना, गुप्त होना, प्रगट होना, आसन उड़ाना, जहाँ इच्छा करना, तहाँ जाना, ताँबे पर मूतना सोना होना, एकसे अनेक हो जाना, अनेकसे एक होना, दश मुद्रा, उन्मनी, हठयोग आदिक संपूर्ण प्राप्ती होय, तो बड़ा खुशी औ नाश हो जाय या न होय, तो महा दुःख। फिर वही साधना करके हाय! हाय! करते-करते मरते हैं। फिर

गर्भवासको आते हैं; ताते तू परखके छोड़, तो पारख स्थिति होयगी। अब चौथा महाकारण अभिमान, तज्जनित विषय—नित्यानित्य विवेक औ इहामुत्र फल भोग बिराग, शमादि षटक-शम, दम, उपरती, तितिक्षा, श्रद्धा औ समाधान मुमुक्षु दशा, ज्ञानकी प्राप्तीमें सर्व साक्षी ब्रह्म, मैं ज्ञानी, मैं मुक्त, औ सब बन्ध; ऐसी दशा जब प्राप्त हो, तब बड़ा सुख; न प्राप्त भई, तो महा दुःख। फिर हाय! हाय! करते-करते मरते हैं औ गर्भवासको आते हैं। अगर ज्ञानको प्राप्त हो, तो ब्रह्म बनके सबमें व्यापते हैं; फिर नाना सुख दुःख भोगते हैं। ताते तू सब परखके छोड़। पाँचवा हंकार कैवल्य, तज्जनित विषय-मैं अद्वैत, मैं आत्मा, मैं अधिष्ठान, जगत् स्थावर जंगम आदि सब मेरा रूप, जड-चैतन्य सब मैंही; घट-मृत्तिका न्याय, जलगारा न्याय, सुवर्ण-भूषण न्याय, वसन—पूतरी न्याय मैं आत्मा। औ जो अनुभव प्राप्त हो, तो बड़ा सुख और वही आत्मा जगत्‌रूप भया तो बड़ा दुःख। फिर उसीकी हाय! हायमें सब जग जाई औ हर्ष-सोग सब माँहि समाई। ताते तू परखके देख कि, हँकरि-हँकरि सब बड़े-बड़े ज्ञानी ब्रह्मादिक गये; परन्तु हाहाका मर्म कोईको प्राप्त भया नहीं। ये पाँचों हंकारका मर्म कोईने भी परखा नहीं कि, एही पाँचों हंकार जीवको बन्धन हैं, याहीसे जीव नाना दुःखमें परा औ बिडंबना भई। जो हंकार भास हुवा, सोई हंकार रूपी जीव भया। फिर उसीकी बानी कथने लगा और उसीका पक्ष मजबूत हुवा। सो तू परखके देख औ पाँचों हंकार छोड़, इनमें तदाकार मत हो। ये मिथ्या भ्रम है। पारखमें थीर हो। जाते सम्पूर्ण ये भ्रम परखनेमें आया, सोई तेरी स्थिति। ये अर्थ ॥ ३३ ॥

क्षक्षा छिनमें परलय सब मिटि जाई। छेव परे तब को समुझाई ॥
छेव परे काहु अन्त न पाया। कहैं कबीर अगमन गोहराया॥३४॥

टीका गुरुमुख—क्ष कहिये क्षर, क्षर कहिये देह, क्षा कहिये देहकी करतूत। तो गुरु कहते हैं कि,जेतिक देह औ देहसे संपूर्ण बानी,अनुमान, सिद्धांत बना है, सो सब छिनमें नाश हो जायगा। कि, देह नाशवंत,

तो फिर देहसे जो कछु बना है, सो कहाँ रहेगा ? सभी नाश छिनमें होवेगा । उनके अध्याससे तेरेको चौरासी भोगनी होवेगी । फिर छेव परे, तब को समुझाई ? अरे ये मानुष जन्म छूट जायगा, फिर तेरेको कौन समुझावेगा ? अरे ये मानुष तन छोड़के फिर काहु अन्त न पाया । ताते गुरु कहते हैं कि, मैंने तेरेको आगे ही गोहरायके कह दिया कि, जो तूने मानुष देह पाया है, अब वह मानुष जन्म अकारथ मत खोवो । सबको परखके पारख रूप हो जाव; नहीं तो फिर चौरासीमें जा पड़ोगे, फिर कछु तेरेको पारख मिलनेका नहीं । औ जब लग पारख नहीं मिलता, तबलग कछु कसर मालूम होती नहीं । औ जबलग सब कर मालूम नहीं भई, तबलग भूल छूटती नहीं । औ जबलग भूल छूटती नहीं, तबलग आवागवनसे रहित होता नहीं । भूल कहिये ब्रह्म, भूल कहिये आत्मा, भूल कहिये ईश्वर, भूल कहिये करता, भूल कहिये जगत् । ऐसी संपूर्ण भूल जाते परखनेमें आवै, सोई पारख गुरुपद । ताकी प्राप्तीके हेतु गुरुकी शरणमें जाना, साधु सेवा करना औ पारखमें थीर होना, तब आवागवनसे रहित होय । ताते आगे तेरेको मैंने गोहराया कि, गाफिलीमें मानुष तन मत छोड़ । ये अर्थ ॥ ३४ ॥

चौतीसा अक्षर जाल तामें जीवनको सब बंधन हुआ । सो गुरुने चौतीसा ज्ञान कहिके सब परखाया । अब आगे ब्राह्मणकी मति वेद प्रमाणसे बताते हैं, सो सब विचारमान् ! सुनो ! आगे मत औ कर्म सब बतायके औ फिर उसकी कसर सब बतायके गुरु पदकी स्थिति करेंगे ।

दोहा—स्थिरपद परख प्रकाश गुरु, सुख स्वरूप कबीर ।
पूरण चेरो चरणको, शरण आये की भीर ॥ १ ॥
त्राहि ! त्राहि ! साहेब शरण ! हौं कछु जानत नाहिं ।
बीजककी टीका करी, आप पैठि जियमाहिं ॥ २ ॥

इति ज्ञान चौतीसा टीका सहित गुरुकी दयासे संपूर्ण ।

दया गुरुकी

अथ विप्रमतीसी लिख्यते

★

विप्रमतीसी

सुनहु सबन मिलि विप्रमतीसी । हरि बिनु बूड़ी नाव भरीसी ॥ ब्राह्मण होय के ब्रह्म न जानें । घरमा यज्ञ प्रतिग्रह आनें ॥ जेहि सिरजा तेहि ना पहिचानें । कर्म-धर्म-मति बैठि बखानें ॥ ग्रहण अमावस और दुईजा । शाँति-पाँति प्रयोजन पूजा ॥ प्रेत कनक मुख अंतर बासा । आहुति सत्य होमकी आसा ॥ कुल उत्तम जग माँहि कहावै । फिर-फिर मध्यम-कर्म करावै ॥ सुत दारा मिलि जूठो खाई । हरिभक्ताँकी छूति लगाई ॥ कर्म अशौच उच्छिष्टा खाई । मतिभ्रष्टा यमलोक सिधाई ॥ नहाय खोरि उत्तम होय आये। विष्णुभक्त देखत दुःख पाये॥स्वारथ लागि रहे बेकाजा । नाम लेत पावक जिमि डाजा ॥ राम कृष्णकी छोड़िनि आशा । पढ़ि-गुनि भये कृतमके दासा ॥ कर्म पढ़े औ कर्मको धावै । जेहि पूछा तेहि कर्म दृढ़ावै ॥ निष्कर्मीकी निंदा कीजे । कर्म करे ताही चित दीजे ॥ भक्ती भगवंतकी हृदया लावै । हरणाकुशको पंथ चलावै॥ देखहु सुमति केर परकाशा । बिनु अभ्यंतर भये कृतमके दासा ॥ जाके पूजे पाप न ऊड़े । नाम स्मरणी भवमा बूड़े ॥ पाप-पुण्यके हाथहि पासा । मारि जगत्का कीन्ह बिनाशा ॥ ई बहनी कुल बहनि कहावै। ई गृह जारे ऊ गृह मारे ॥ बैठे ते घर साहु कहावै । भीतर भेद मन मुखहि लगावै । ऐसी बिधि सुर विप्र भनीजे । नाम लेत पीचासन दीजे ॥ बूड़ि गये नहिं आपु संभारा । ऊँच-नीच कहु काहि जो हारा ॥ ऊँच-नीच है मध्यकी बानी । एकै पवन एक है पानी ॥ एकै मटिया एक कुम्हारा ।एक सबनका सिरजनहारा ॥ एक चाक सब चित्र बनाई । नाद बिंदके मध्य समाई । व्यापिक एक सकलकी ज्योती । नाम धरेका

कहिये भौती ? ॥ राक्षस करनी देव कहावै । बाद करे गोपाल न भावै ॥ हंस देह तजि न्यारा होई । ताकर जाति कहै धौं कोई । स्याह सफेद कि राता पियरा । अवर्ण-वर्ण कि ताता-सियरा ॥ हिंदू-तुरुक कि बूढ़ो-बारा । नारि पुरुषका करहु विचारा ॥ कहिये काहि कहा नहिं माना । दास कबीर सोई पै जाना ॥

साखी—बहा है बहि जात है । कर गहै चहुँ ओर ॥
जो कहा नहिं माने तो । दे धक्का दुइ ओर ॥ १ ॥

टीका गुरुमुख—गुरु बोलते हैं कि, वेदने जो ब्राह्मणोंकी मती कही है, सो सुनो औ इनका आचरण देखो । हरी कहिये ज्ञान, सो ज्ञान बिना इनका ब्राह्मणपन डूबा । वेद बचन ऐसा है कि, ब्रह्म जानाति ब्राह्मणः । ब्रह्मविद् ब्राह्मणो भवति । ब्राह्मण काहेसे कहिये ? क्या जीवको ब्राह्मण कहना ? तो जीव सबका एकसा । जो देहको ब्राह्मण कहिये, तो देह सबका एकसा पंच भौतिक । औ कर्म मार्गसे भी देहको ब्राह्मण कहा जाय; तो पिता मरता है, ताके देहको पुत्र आदिक जराय देते हैं । तो ब्रह्महत्या होना, सो कछु होती नहीं । तो देह ब्राह्मण नहीं । जो पंडित ब्राह्मण कहा जाय, तो और-और जातीमें भी बड़े-बड़े बुद्धिमान होते हैं कि, जिनकी बात बड़ी-बड़ी सभामें भी मंजूर होती है । यस्य बुद्धिः पंडा स पंडितः । ये शास्त्रकारने कहा कि, जाकी बुद्धि बड़ी पुष्ट, सो पंडित । ताते पंडित भी ब्राह्मण नहीं । अब कर्म ब्राह्मण कहा जाय, तो क्षत्री को भी तीन कर्मका अधिकार है । सो क्षत्री भी बड़े-बड़े कर्मी औ दानी होते हैं । पृथिवी दान, गज दान, कन्या दान, गौ दान, हिरण्य दानादिक कर्म करते हैं । तस्मात् कर्म भी ब्राह्मण नहीं । अब ब्राह्मण श्वेत वर्ण, क्षत्री रक्त वर्ण, वैश्य पीतवर्ण, शूद्र कृष्ण वर्ण; जो ऐसा कहा जाय, तो चारों वर्ण सबहीके दिखाते हैं । तस्मात् वर्ण भी ब्राह्मण नहीं । अब कोई ऐसा कहै कि, ब्राह्मण मुखसे पैदा होते हैं । क्षत्री भुजासे पैदा भये । वैश्य जंघासे पैदा भये औ शूद्र पाँवसे पैदा भये ।

तो सबही भगसे पैदा होते हैं। न कोई मुखसे पैदा होता है, न कोई भुजासे, न कोई जंघासे, न कोई पाँवसे पैदा होता है। सब स्त्रीके भगसे पैदा होते हैं। ताते ये भी कछु प्रमाण नहीं। तस्मात् ये भी ब्राह्मण नहीं। कोई कहते हैं कि, आयुष्य ब्राह्मण-तो ब्राह्मण सौ वर्ष जीते हैं औ क्षत्री पचास वर्ष, वैश्य पचीस वर्ष औ शूद्र बारह वर्ष जीते हैं। तो ये भी कछु प्रमाण नहीं। तस्मात् आयुष्य कछु ब्राह्मण नहीं। अब कोई कहेगा कि, जाती ब्राह्मण। तो आन-आन जातीमें भी ब्राह्मण बड़े-बड़े भये हैं, सो सुनो-वशिष्ठ गनिका पुत्र, व्यासकी धीवरकी कन्यासे उत्पत्ती, क्षत्रीपुत्र विश्वामित्र, हरिण पुत्र श्रृंगीऋषि, घड़ेसे उत्पन्न अगस्त्य, कमलसे उत्पन्न ब्रह्मा, पासीके पुत्र वाल्मीक ऋषि, गौतनसे गौतम ऋषि, नारद दासीपुत्र, अनुचर ऋषि हस्तिनीके पुत्र, द्रोणसे द्रोणाचार्य, शूद्रिनसे भारद्वाज ऋषि, मातंग ऋषि मातंगी पुत्र, मांडुक ऋषी मेंडकीके गर्भसे उत्पन्न, ऐसे-ऐसे अनेक जातीमें भी बड़े-बड़े श्रेष्ठ ब्राह्मण भये हैं, जिनको वेदने भी माना है। तस्मात् जाती भी ब्राह्मण नहीं। तो ब्राह्मण किसे बोलता है वेद कि, ब्रह्मविद् ब्रह्मणो भवति। जो समष्टि व्यष्टि एक करके अनुभव ब्रह्म जाने, सो ब्राह्मण; सुवर्ण-भूषणन्याय, घट मृत्तिका न्याय। तो ब्रह्मज्ञान जाको अपरोक्ष होय, ताको ब्राह्मण कहिये। ये वेद वचन। सो ब्राह्मण होके ब्रह्म न जाने। जो ये सब ब्राह्मण कहलाते हैं; परन्तु ब्रह्म नहीं जानते। ब्रह्ममें भेद करते हैं, कुल अभिमान करते हैं। ताते वेदका वचन भी मानंदी इनको नहीं औ गुरुका विचार भी नहीं। तो ये ब्राह्मण ऊँटका पाद ठहरे—न जमीनके न आसमानके। अब ब्रह्म विचारको छोड़ा औ यज्ञ प्रतिग्रहमें परे, उसके पीछे लगे कि, जो कहीं यज्ञ होय, तो हमको दक्षिणा मिले; जाते हमारा कुटुम्ब पोषण होय। तो ब्रह्म विचार छोड़ा औ नाना प्रकारके मोह विषयमें पड़े, ताते तृष्णा इनकी बढ़ी। अब इनको ब्राह्मण कैसे मानिये ? अरे ब्राह्मण तो कछु वस्तु नहीं; परन्तु वेदके प्रमाणसे जो ब्राह्मण मानिये, तो

वेदका प्रमाण कछु ऐसा नहीं कि; घरमें, यज्ञमें, प्रतिग्रहमें आसक्त होना। साधन चतुष्टय संपन्न होके ब्रह्म जाने, सो ब्राह्मण। ये वेद वचन। अरे जाने संपूर्ण वेद शास्त्रादि चार खानी, चार बानी पैदा की, सो मानुष रूप ताको नहीं पहिचानता। औ कल्पनाकी बानी जो गाफिलीसे बानी है, ताको लेके नाना प्रकारके कर्म औ नाना प्रकारके धर्म मिथ्या भूत; ताको बखान करता है। औ सब जीवनको नाहक बाँधता है औ आप भी बंधा है। बंधेने नाना बंधन बनाया कि; ग्रहण, अमावस दुइजको दान करे औ नाना प्रकारके ब्राह्मण भोजन देय, औ नाना प्रकारके ब्राह्मणोंको द्रव्य देय;तो महापुण्य होय,स्वर्ग आदिक प्राप्त होय। इस प्रकारके बन्धन जीवन पर परे, ताते जीवका स्वतः पद बूड़ा। गृह शाँती और नाना प्रकारके प्रयोजन करना, श्राद्ध-पक्ष-विवाह-जनेऊ आदि, तिहवार, नाना हव्य-कव्य करना। जो ना हो सके; तो महापाप, नर्कको जावै। औ पूजा देवब्राह्मणकी यथाविधी करे; तो महापुण्य होय, स्वर्गको जावै। जब ऐसे-ऐसे बन्धन जीवन पर पड़े, तो जीव मुक्त कैसे होय ? बिनु पारख ये बन्धन कैसे छूटै ? और भी इन यम लोगोंके बन्धन सुनो, ये कैसी आशामें बँधे हैं ? जो कोई भला आदमी दौलतवन्त मरे, तो हमको शय्यादान, द्रव्य दान मिले। येही मुँहसे भी बोले और येही अन्तरमें भी बसे कि; कहीं आहुती होय, कहीं होम होय, तहाँ जीव हिंसा करवाना औ द्रव्य लेना। अरे उत्तम कुल तो जगत्में कहलाते हैं औ फिर-फिर मध्यम कर्म करवाते हैं, सो सुनो—शक्तीकी उपासना करके बाम मार्ग चलाते हैं, भैरवी चक्र करते हैं। तहाँ चारों वर्ण बैठके मीन—मांस-मद्य-अन्न सब एकका जूठा एक खाते हैं स्त्री, पुत्र सब मिलके। अरे उत्तम कहिये ज्ञान, सो तो परखते नहीं औ मद्य-मांसादि एकका जूठा एक खाते हैं। ये तो श्वानका, राक्षसका कर्म करते हैं, तो इनको उत्तम कैसे कहना ? जो विचारमान, सो उत्तम। अरे अपना कर्म तो ऐसा नीच औ शुद्ध हरिभक्त, ज्ञानी

भक्त, जो संतनका महाप्रसाद लेते हैं, तिनको छूति लगाते हैं। अरे आप तो अशौच कर्म करते हैं, मद्य-मांसादि खाते हैं। एकका एक जूठा खाते हैं औ ऊपर बड़ा आचार, स्नान, संध्यादि दिखाते हैं। औ हरिभक्त, शुद्ध ज्ञानी भक्त, जो संतनका महाप्रसाद लेते हैं; तिनको देखके नाम धरते हैं, दुःख पाते हैं। ताते ये ब्राह्मण मति भ्रष्ट, दुष्ट यमलोकको जाते हैं, नाना प्रकारकी नर्क योनी भोगते हैं। और अपने स्वार्थके वास्ते जगतकी खुशामद करते हैं औ यथार्थ इनका कर्म कोई बतावै तो अग्निके माफिक जरते हैं। ऐसे विषई बावरे नर्क भोगते हैं। अरे भला वेदने राम कृष्णादिक नामका स्मरण बताया, सो भी शुद्ध सात्विक दशा धारण करके करते नहीं। राम कृष्णकी भी आशा छोड़िन औ पढ़ि-गुनिके कर्मनके दास बने। आपभी कर्म पढ़ते हैं औ संसारको भी कर्म दृढ़ाते हैं। कहते हैं कि, कर्म वर्णाश्रमके करना। कोई कर्म लोप होवो मत। कर्महीमें मुक्ती है औ कर्म भ्रष्ट भया, तो नर्क को जाते हैं। इस प्रकारसे जेहि पूछै, तेहि कर्म दृढ़ावते हैं। और निष्कर्मीकी निन्दा करते हैं। औ कहते हैं कि, जो कर्मिष्ठ ब्राह्मण है, ताकी सेवा पूजा करना औ निष्कर्मीको छुवो, तो सचैल स्नान करना। इस प्रकारसे ज्ञानलोप जीव कर्मके गदहे बने। सोई कर्मके वश नाना योनीमें दुःख भोगते हैं। औ उपासिकनकी बातें सुनो ! कि, भक्ती भगवानकी हृदयमें लावते हैं। औ कहते हैं कि,'हम वैष्णव' औ हरणाकुशका पंथ चलाते हैं। जो ऊपर तो स्वांग वैष्णवका औ अंतरमें राक्षस शाक्त बने हैं। जो मद्य-मीन-मांस भक्षण करै, सोई राक्षस। तो इस प्रकारसे दयाका बाना रखते हैं औ निर्दई होके राक्षसी पंथ चलाते हैं। देखो-हे संतो ! इन ब्राह्मणन की सुमतिका प्रकाश भया। अरे बिना विचार कर्मनके गुलाम हो रहे हैं। अरे इनके पूजे कैसे पाप उड़ेगा ? कहीं स्याहीके धोये स्याही जाती है। जो इनका नाम लेवेगा और जो इन ब्राह्मणनकी आशा करेगा, सो

निश्चय भवमें डूबेगा। ये ब्राह्मण जो हैं, सोई भवका रूप है, औ यही यम हैं औ यही काल हैं। पाप-पुण्यकी फाँसी इनके हाथमें है, जाते मारि जगत्का कीन्ह बिनाशा। औ ई ब्राह्मण कुल संसारके तारक गुरू कहलावते हैं औ संसारको नाना प्रकारकी कल्पना लगायके गर्भाग्निमें जराते हैं। औ ऊ गृह कहिये जो जीवका ज्ञान घर है, ताको मारिके लोप करते हैं। ऐसे जो ठग जीवके दुखदाई हैं, तेई बैठे इन जीवनके घर साहु कहाते हैं, गुरु कहावते हैं। औ भीतर घरमें बैठके नाना प्रकारके भ्रम जीवको दृढ़ावते हैं। वही बात बाहर कहो, तो मनमें बुरा मानते हैं। ऐसी बुद्धि संसारमें दृढ़ावते हैं कि, ब्राह्मणको देवताके माफिक जानना औ उनका नाम स्मरण करना। ब्राह्मणको आवते देखना, तो उनके पाँव पड़ना औ पीढ़ा बैठनेको देना। ऐसी-ऐसी बातें दृढ़ायके अभिमानमें बूड़ि गये, अपनेको संभारा नहीं। ऊँच-नीच कहि-कहिके मान-बड़ाईमें अपनपौ हारा। औ वेद वचनका प्रमाण तो ऐसा है कि, ऊँच-नीच, वर्णाश्रम, उपासना, कर्म ये सब मध्यकी बानी है, बीचकी बानी है, अज्ञान दशाकी; ये कछु प्रमाण नहीं। अनुभव जन्य वेदकी अंतकी जो बात है, सो वेदांत प्रमाण एक आत्मा, स्वजातीय-विजातीय-स्वगत भेद रहित, सर्वाधिष्ठान सर्वरूप। वही पवन, वही पानी, वही मिट्टी, वही कुम्हार, वही सबनका सिरज-नहार। एक भ्रांतिके चक्र पर संपूर्ण जगत् चित्र बनाया औ आप पटरूपी रहा। नाद बिंदुमें आपुही समाया। जीव भी आपुही कहलाया। व्यापिक एक सकलकी ज्योति। एक आत्मा स्वयं प्रकाशी संपूर्ण भरा है। जैसा एक सुवर्ण ताके न्यारे-न्यारे नाम परे। इस प्रकारसे नाम धरे क्या कहिये ? बहुत नाम धरे क्या जगत् कहिये ? संपूर्ण आत्मा है। वेदने तो इस प्रकार जाने, ताको ब्राह्मण कहा। परंतु ये भी भ्रम है; क्योंकि ये सब मनुष्य देहका अनुमान। अरे जाको 'एक आत्मा' ऐसा भासा, सो कछु एक आत्मा भी नहीं औ अनेक जगत् भी नहीं।

वो हंस दोनोंसे न्यारा; परंतु बिना पारख एक-अनेकमें अरुझा है, सो तू परखके देख। वो हंस देह छोड़के न्यारा होता है, तब कहो, उसकी जाती क्या है? क्या ब्रह्म कहिये? क्या आत्मा कहिये? ये तो सब देहका अनुमान देह छूटे मिट जायगा। फिर उस हंसको क्या कहना? स्वेत कहिये कि? स्याम कहिये? लाल कहिये कि? पीला कहिये? अवर्ण कहिये कि? वर्ण कहिये? गरम कहिये कि? ठंढा कहिये? हिंदू कहिये कि? तुरुक कहिये? बूढ़ा कहिये कि? बार कहिये? नारी कहिये कि? पुरुष कहिये? ये विचार करो, नाहक धोखेमें क्यों परे हो। जो येती बातका द्रष्टा, सो येते संकल्प भी नहीं। वो तो शुद्ध ज्ञानमात्र है। पारख पाय सबते न्यारा होता है, तब पारखरूप होके पारख भूमिका पर रहता है। पर हे संतो! कहिये काहि सब अनुमान कल्पनामें अरुझे? मैंने तो बहुत कहा; परन्तु काहूके समझमें आई नहीं। ये जीव वेद ब्राह्मणके गुलाम बने। जो वेद कहै, ब्राह्मण कहै, सोई इनको प्रमाण। स्वतन्त्र होयके कछु परखते नहीं। अब कहना तो भी किसको?। ये अर्थ ॥ १ ॥

ये विप्रमतीसी वेद प्रमाण गुरुने कही कि, ब्रह्मज्ञानीको ब्राह्मण कहिये। काहेके वास्ते ब्रह्मज्ञान सर्वत्र खंडन किया? सो इहाँ कहनेका क्या काम? तो ये जीव सब नाना कर्म उपासनाके फन्देमें परे औ नाना तरहका अभिमान ब्राह्मणोंने माना, ताको खंडन करनेके वास्ते उनके वेदके मतसे उनमें कसर बताई कि, ये अपनी मत छोड़के अनाचार करते हैं। तो ये ब्रह्ममत चीन्हके अनाचार छोड़ें, कर्म उपासना पक्ष छोड़ें औ ब्रह्म बने। फिर ब्रह्मका भी पक्ष छुड़ायके गुरुने पारख हंसपद स्थिर किया। ये अर्थ।

सोरठा—हे गुरु दीन दयाल! कहर भयो बड़ जीव पर।
परखायो सब जाल। कहरा निर्णय कहो मोहि ॥ १ ॥

इति विप्रमतीसी टीका गुरुकी दयासे संपूर्ण।

दया गुरुकी

अथ कहरा लिख्यते

★

कहरा १.

सहज ध्यान रहु सहज ध्यान रहु। गुरुके बचन समाई हो ॥
मेली सृष्टि चरा चित राखहु । रहहु दृष्टि लौलाई हो ॥
जस दुख देखि रहहु यह औसर । अस सुख होइ हैं पाये हो ॥
जो खुटकार बेगि नहिं लागे । हृदय निवारहु कोहू हो ॥
मुक्तिकी डोरि गाढ़ि जनि खैंचहु। तब बझिहैं बड़ रोहू हो ॥
मनुवहि कहहु रहहु मन मारे । खिजुवा खीजि न बोले हो ॥
मानू मीत मितैयो न छोड़े । कमऊ गाँठि न खोले हो ॥
भोगउ भोग भुक्ति जनि भूलहु । योग युक्ति तन साधहु हो ॥
जो यह भाँति करहु मतबलिया । ता मतको चित बाँधहु हो ॥
नहिं तो ठाकुर है अति दारुण । करिहैं चाल कुचाली हो ॥
बाँधि मारि डण्ड सब लेहीं । छूटहिं तब मतवाली हो ॥
जबहीं सावत आनि पहुँचे । पीठ साँटि भल टूटिहैं हो ॥
ठाढ़े लोग कुटुँब सब देखें । कहे काहुके न छूटिहैं हो ॥
एक तो निहुरि पाँव परि बिनवै । बिनति किये नहिं माने हो ॥
अनचीन्हे रहेउ न कियेहु चिन्हारी। सो कैसे पहिचनबेउ हो ? ॥
लीन्ह बुलाय बात नहिं पूछै । केवट गर्भ तन बोले हो ॥
जाकर गाँठि समर कछु नाहीं । सो निर्धनिया ह्वै डोले हो ॥
जिन समयुक्ति अगमनके राखिन। धरिन मच्छ भरि डेहरि हो ॥
जेकर हाथ-पाँव कछु नाहीं । धरन लाग तेहि सोहरि हो ॥
पेलना अछत पेलि चलु बौरे । तीर-तीरका टोवहु हो ? ॥
उथले रहहु परहु जनि गहिरे । मति हाथहुकी खोवहु हो ॥

तरकै घाम ऊपरकै भुँभुरी। छाँह कतहुँ नहिं पायहु हो॥
ऐसेनि जानि पसीझेहु सीझेहु। कस न छतुरिया छायहु हो॥
जो कछु खेड़ कियहु सो कियहु। बहुरि खेड़ कस होई हो ?॥
सासु-नँनद दोउ देत उलाटन। रहहु लाज मुख गोई हो॥
गुरु भौ ढील गोनी भई लचपच। कहा न मानेहु मोरा हो॥
ताजी तुर्की कबहु न साधेहु। चढ़ेहु काठके घोरा हो॥
ताल झाँझ भल बाजत आवै। कहरा सब कोई नाचे हो॥
जेहि रंग दुलहा ब्याहन आये। दुलहिनि तेहि रंग राचे हो॥
नौका अछत खेवै नहिं जाने। कैसेकै लगबेहु तीरा हो ?॥
कहहिं कबीर रामरस माते। जोलहा दास कबीरा हो॥१॥

टीका मायामुख-सहज ध्यान कहिये सहज समाधी। सो मायाका उपदेश ऐसा है कि; हठयोग, तारकयोग सब छोड़के सहज समाधी अमनस्क योग करना।गुरुवा वचन कहिये सोहं,सो सोहं शब्द घट-घटका प्रकाशी है, तामें सुरति समाय देना। प्रातः समय उठना, पद्मासन या बज्रासन या सिद्धासन तीनोंमें कोई एक आसन लगाना औ सब सृष्टीका विषय व्यवहार विष प्रमाण जानके छोड़ना। शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, घर, स्त्री, पुत्र, धन आदिक जो विषय, सो सब त्यागके आठों पहर श्वासामें चित्त रक्खो। चलते-फिरते, सोते-बैठते सदा श्वास शब्द में लक्ष लय लगाके रहना, लक्षको बाहर निकारना नहीं। जो समय पायके बाहर निकला, तो फिर बाहरकी विस्मृती करके लक्ष भीतर करना। प्रथमारंभमें जब साधन करेगा, तब दुःख मालूम होवेगा। परंतु जैसा दुःख देखके इस वक्तमें तू सहज समाधीमें रहेगा, तैसा आगे सुख प्राप्त होवेगा। परन्तु जब परमात्माकी एकता होवेगी, सहविकल्प समाधी तुर्या अवस्था पावेगी, तब संपूर्ण ऋद्धी सिद्धि सहित सुख तेरेको होवेगा। और ये स्वरूप प्राप्तीका मनमें बड़ा खुटका रखना-जो कब मेरी निर्विकल्प दशा होवेगी ? औ मेरी स्थिती कब होवेगी ?

ऐसा खुटका जो जीवको जल्दी ना लगे, तो हृदयकी मोहग्रंथी छूटनेकी नहीं। जबलग हृदयकी मोहग्रंथी छूटती नहीं, तबलग कछु वैराग्य होता नहीं। औ जबलग वैराग्य नहीं, तब लग कछु योग सिद्धि, ज्ञानसिद्धि होती नहीं। खुटकार कहिये पश्चाताप, सो पश्चाताप होय बिना हृदयकी मोहग्रन्थी छूटे नहीं औ मोहग्रन्थी छूटे बिना वैराग्य नहीं। जबलग वैराग्य नहीं, तबलग न ज्ञानसिद्धि, न योगसिद्धि। ताते वैराग्य पश्चाताप सहित मुक्तीकी डोरी गाड़े। श्वासोच्छ्वास सोहं-सोहं याही शब्दमें सुरति डोरी लगी रहे, उससे अलग होने पावे नहीं। तब बझि हैं बड़ रोहू हो। जब शब्द सुरति एक होवेगी, तब बड़ रोहू मन उन्मुन हो जायगा। मनुवहि कहहु रहहु मन मारे। सदा अपने मनको प्रबोध करते रहना। सोहं करके संकल्प उठाना, हंसो करके विकल्प करते जाना। इस प्रकार मनमें कहके मनको मारना, बाहर जाने नहीं पावै। औ खिजुवा खीजि न बोले हो। जो कोई संसारमें उपहास करै या निंदा करै, उससे खीजिके नहीं बोलना। मातू मीत मितैयो न छोड़ै। औ जो शब्द रूपी परमात्माको माना है, ताकी मिताई न छोड़ै। आठों पहर नाम धुनि लगी रहै। चाहै तन, मन, धन सब जाय, पर हरि-नाम माला छूटै नहीं। औ कमऊ कहिये मन, सो मन पवनकी गाँठी डार देना, जामें छूटने न पावे। भोगउ भोग भुक्ति जनि भूलहु, योग युक्ति तन साधहु हो। भोगउ कहिये जीवको, सो योगी लोग जीवको उपदेश करते हैं कि, परपंचके भोग भुक्ती मत भूलो, नर्कवास होयगा, चौरासीमें जावोगे। ताते योग युक्ति करके तनको साधो। ब्रह्म प्राप्ती होवेगी। जो यहि भाँति सदा उन्मनीमें मग्न हुआ चाहो, तो तामत योगमतको चित्तमें बाँधो। नहीं तो ठाकुर है अति दारुण, करि हैं चाल कुचाली हो। योगी लोगोंके मतके प्रमाणसे जो आठों पहर साधना न करेगा; तो ठाकुर मन अति दारुण है, चाल कुचाली करेगा, अर्थकी विषयनमें चलाय देवेगा। इंद्रिनके विषयमें वासना बाँधके तुम्हारेको

मार लेवेगा, समाधी सिद्धि होने देनेका नहीं। नाना योनिमें डारके नाना दुख तुम्हारेको देवेगा, तब सब तुम्हारी विषय मतवाली छूट जायगी। नहीं तो ये मनको वैराग्य योग अभ्यास करके जीतो। बंध-मुक्तीका कारण मनही है। अरे अन्त समयमें जब यमके दूत आवेंगे औ तुम्हारा प्राण खैंचेंगे, तब तुम्हारे पीठ पर कोड़े मारेंगे औ नाना प्रकारकी तुम्हारी यातना होवेगी। तब लोग कुटुम्ब सब ठाढ़े देखेंगे। कोई तुम्हारेको छुड़ाय नहीं सकनेका औ किसीके कहे तुम छुट भी नहीं सकनेका। जब यमदूत आयके फाँसी डारके जीवको पकड़ते हैं औ मुस्क बाँधके यमलोकको ले जाते हैं, तब जीव बहुत करुणा करता है औ पाँव पड़ता है, नाना प्रकारकी विनती करता है। कहता है कि, मेरेको देहमें से मत निकारो। मैं तुम्हारे पाँव पड़ता हौं। मेरी मेहरीसे बोल लेने देव, मेरे पुत्रको देखने देव, मेरे भाई-बंधु माँ बापसे मिल लेने देव, मेरा पैसा टका तपास लेने देव इत्यादि; परन्तु यमदूत नहीं मानते बाँधके ले जाते हैं। तो अनचीह्ने रहेउ न कियेहु चिन्हारी, सो कैसे पहिचनबेउ हो। अरे जबलग इंद्री ज्ञानमें प्रकाश है औ उमर छीन नहीं भई, तरुण अवस्था है; तबलग योग करके मन जीतके परमात्माको चीन्ह लेना, तो आवागमनसे रहित होय यमकी यातनासे बचे, अंतमें ब्रह्म रूप हो जाय। औ तरुण अवस्थामें योग किया नहीं, परमात्माको चीन्हा नहीं तो जब अन्तमें चोला छूटेगा, तब कैसे पहिचानेगा ? लीन्ह बुलाय बात नहिं पूछै, केवट गर्भ तन बोलै हो। केवट जो योगी है, तिनकी शरणमें आये नहीं, तनके अभिमान औ मायामें भूला। ताते इन जीवन को यमने बाँधके बुलाय लिया, औ कुछ बात नहीं पूछी, नाना प्रकार का दुःख दिया। ये अर्थ। जाकी गाँठि समर कछु नाहीं, सो निर्ध-निया होय डोलै हो।

गुरुमुख—अब गुरु कहते हैं कि जाके पास कछु विचार धन नहीं, सो जीव निर्धनिया; निगुरे अज्ञानी होके फिरते हैं। समर कहिये धन,सो

विचाररूपी धन जाके पास नहीं, सो निर्धनिया कहिये विचारहीन होके गुरुवा लोगोंके फंदमें मारा-मारा फिरता है। जिन गुरुवा लोगनने आगेही जीवनको धरनेके वास्ते नाना युक्ति औ बानी कर-करके धरी है, सोई बानी अब गुरुवालोग लेके सब जीवनको पकड़ा, बंधन दिया औ कहा कि, कर्मकाँड, उपासना काँड, योग काँड, फिर ज्ञान काँड; ये ब्रह्मादिक बड़े-बड़े अचारिनका प्रमाण है औ वेदका प्रमाण है। सो ये चारों काँडका सब जीव यथाविधि आचरण करैं, तो जीवकी मुक्ति होती है। अगर कोई जीव आचरण न करेगा, ये चार काँडसे बाहर परेगा, सो ईश्वरका द्रोही, वेदका द्रोही। उसको यम ले जाके नाना प्रकारके दुःख देवेंगे फिर नर्कमें डालैंगे। ऐसा डर बतायके धरिन मच्छ भरि डेहरि हो। मच्छ कहिये जीव, डेहरि कहिये संसार। सो संसार भरेके जीवको गुरुवा लोगोंने मुक्तिका लोभ औ नर्कका डर बतायके सबको बंधन दिया। अब जीव जाके हाथ-पाँव कछु नहीं, सो हरी। सो परमात्माको कर्म-उपासना-योग-ज्ञान करके धरने लगे। तो ये आश्चर्य कि, जाके अवेव सहित कछु नहीं, सो परमात्मा काहेका ? संपूर्ण जीवकी कल्पना। अपनी कल्पनाके जालमें जीव आपुहि बंध हुआ। पेलना कहिये देह, सो गुरु कहरते हैं कि; जबलग ये देह है, तबलग सब कल्पना औ अनुमान ब्रह्म आदि जेते हैं सो सबको परखके पेल दे, छोड़ दे औ पारख गुरुपद पर चल। हे बौरे ! दिवाने ! तीर-तीर क्या टोवता है ? अरे ये गुरुवालोगोंके तीर नजदीक क्या ढूँढता है ? इनके पास संपूर्ण भ्रम है औ कछु नहीं। अरे कहाँ यम और कहाँ परमात्मा है ? ये सब मनका धोखा। तू परखके देख औ उथलेई रहो, विचार करके स्थूलमें ही रहो, गहिरे सूक्ष्म, कारण; महाकारण, कैवल्यमें मत परो। अरे हाथ का मानुष देह मत खोवो, नाहक। मूक-जड़-उन्मत्त-पिशाच मत होवो, योग तपस्या मत करो। काहेके वास्ते शून्यमें समायके जड़ होते हो ? औ अपना मानुष देह काहेको खोते हो ?

सतसंगमें विचार करके सब भ्रम परखके छोड़ देव औ पारखरूप हो रहो। सब तत्त्वमस्यादि पद नीचे छोड़के सर्वोपर हो रहो। तरकै घाम ऊपरके भुंभुरी, छाँह कतहुँ नहिं पायहुँ हो। हे जीव! तरे संसारमें गुरुवा लोगनका विरह घाम बहुत बढ़ा, ताते जीव त्रिविध तापमें जरने लगे। सो गुरुवालोगोंकी बानीके प्रणाणसे भुंभुरी जीव, याने ऊपर स्वर्गादिक आशा औ ब्रह्मांडमें जानेकी आशा औ ब्रह्ममें मिलनेकी आशा लगाई, सो कोई योग औ कोई कर्म करने लगा; परंतु आसरा कहीं भी न मिला, त्रिविध तापमें जरताही रहा जीव। त्रिविध ताप कहिये-एक ताप स्त्री-पुत्र-धन, दूसरा ताप देहके रोग ज्वरादिक, तीसरा ताप काम-क्रोध-लोभ-मोह-अहंकार; ये तीन ताप तरके। अब ऊपरके ताप सुनो-विरह-वैराग तपस्या। ये छै विधि तापमें जीम सब जरते हैं, कहीं छाँह पावते नहीं। तो हे जीव! तुम्हारेको स्वतः पारख कछु भई नहीं, ताते जैसा गुरुवा लोगोंने औ वेद पुराणोंने बताया, ऐसेही निश्चय जानके पसीझेउ, मोहित भयेउ औ त्रिविधतापमें सीझेउ, जरेउ। तो कसन छतुरिया छायहु हो। कसन कहिये बंधन, छतुरिया कहिये देह। सो तू छे विधि तापमें जरके आखिर गर्भवासमें आयके चोला पाँच तत्त्वका धारण किया, तो ये चोलेमें क्या गुरु पारख बिना तेरे ताप चुकते हैं? गर्भमें भी तीन ताप होते हैं-एक तो मल-मूत्र-नर्कमेंसे बजबजाता रहता है, सोभी जीवको महा दुःख होता है। दूसरा हाथ-पाँव बँधे हुये गर्भमें रहता है। तहाँ जठराग्नीका बड़ा तड़ाका लगता है। जैसा लोहेकी भट्टी पर जीवको बैठाया और तरेसे भाथी फूँका, तो ऊपर तलमलाता है, तैसा गर्भमें जीव दुःख पाता है। तीसरा जब पैदा होता है, तब पवन लगता है। तो जैसे तीर लगते हैं, वैसा दुःख होता है। ये त्रिविध तापमें गर्भमें भी जीव जरता है औ बाहर आया, तो वही ताप बने हैं। जो कछु खेड़ कियेहु। अरे जो कर्म तू आगे अनेक जन्ममें करता आया है, सोई कर्म अब इस जन्ममें भी करता है। अब आगे तेरे कर्म क्या होवेंगे?

फिर तू गर्भवासको जायगा औ तापमें जरेगा। खेड़ कहिये कर्म, सासु कहिये संशय औ ननद कहिये नेह। सो विषयनका औ स्त्रीका नेह औ बानीका संशय, ये दोऊ तुझे उलटाय-पलटाय छै विधि तापमें जराते हैं औ तू भी इनको छोड़ता नहीं। जो कहीं विचार सुना, तो भी उस वख्त तो लजाता है, कहता है कि, स्त्री-पुत्र-धन ये संपूर्ण जीवको बंधन हैं। येही बंधनसे जीव दुःख नर्क भोगता है, ऐसा विचार जबलग सुनता है, तबलग अपने कर्मनसे लजाता है। फिर विचारसे उठता है औ-स्त्री-पुत्र-धनका मुँह देखता है, तो फिर मोहित होता है औ विचारकी तरफसे मुंह छिपाके फिर प्रपंच विषयमें आँखी मूँद कर पड़ा रहता है। कहता है कि, हम ग्रेही। हमको विचार काहेको चाहिये ? विचार बड़ा कठिन है। ऐसा मूढ़ दुःखहुको सुखकर मानता है औ मुख छिपायके रहता है। येही रीतिसे बानीमें जो जीव बंधे हैं तेहू सुनते हैं कि-योग-कर्म-उपासना संपूर्ण जीवको बंधन है; परन्तु छोड़ा नहीं जाता, विचारकी तरफसे मुँह छिपाते हैं औ कर्म उपासना योग करते हैं। तो देखो ! ये लोगनको बंधनका मोह भारी पड़ा। अब मुक्ति कैसे होय ? औ आवागवनसे रहित कैसे होय ? गुरु भौ ढील गोनी भई लचपच। अब गुरु ब्रह्मादिक, शिवादिक सब ढीले पर गये, कि स्वरूपका सिद्धांत करते-करते थके तब कहा कि, परमात्मा निर्गुण निराकार अनिर्वाच्य निअक्षर। तो जहाँसे निराकार निर्गुण निअक्षर; ऐसा जाको भासता है, सो क्या है ? ये पारख न आई। तब थकके बोले कि, मैं ही ब्रह्म, मैं ही निराकार, मैं ही निअक्षर। मैं आत्मा, मैं अधिष्ठान औ जगत् सब मेरा स्वरूप आत्मा ही है। थकके ऐसा सिद्धान्त करके उनकी गोनी लचपच हो गई, मर गये। उनके सिद्धांतसे तो वो जगत् रूप हो रहे। अब हे जीव ! तुम्हारी कौन दशा होवेगी ? कहा न मानेहु मोरा हो ! अरे आगे भी जो कोई बडे-बड़े भये, तिनको भी हमने बहुत समझाया, परन्तु बानी

औ स्त्रीका मोह उनसे भी नहीं छूटा । उन्होंने भी विचारकी तरफ से मुँह छिपाया, हमारा कहा नहीं माना औ अब उनके बानीका औ स्त्रीका मोह तुमसे भी नहीं छूटता । विचारकी तरफसे मुँह छिपाते हो औ मेरा कहा नहीं मानते हो, तो तुम्हारी कौन दशा होवेगी ? ताजी कहिये माया, माया कहिये काया । सो तूने कायाको स्त्रीके तरफ से कधी साधे नहीं । अरे तुम स्त्रीके बीचमें आसक्त हो गये । माँस-चामका कीड़ा जैसा चाममें आसक्त रहता है । जो माँस चाम छूटे, तो प्राण देता है । तैसे तुम माँस-चामके कीड़े बने । तुर्की कहिये मनको, मन कहिये, नाम कहिये, ब्रह्म कहिये, शब्द कहिये, भ्रम कहिये । सो जो-जो नाम औ जो-जो शब्द औ जो-जो सिद्धांत औ जो-जो भ्रम तुम्हारे मनमें उठा, ताहींमें तुम आसक्त भये, बंध भये, साधे नहीं, विचारके छूटे नहीं । ताजी तुर्की दोनों एक घोड़ा औ मन माया दोनों एक देही । मन नाम औ माया रूप । तो स्थूल, सूक्ष्म, कारण, महाकारण औ कैवल्य ये संपूर्ण रूप माया औ नाम मन, याको साधे नहीं, परखके छोड़े नहीं औ काठके घोड़ा चढ़ेउ । काठका घोड़ा कहिये कि-जो अपने चलायेसे चले, उसमें स्वतन्त्र चलन शक्ती न होय; सो काठका घोड़ा । तो काठका घोड़ा कहिये योग, काठका घोड़ा भक्ती, काठका घोड़ा कर्म, काठका घोड़ा उपासना; येते जीवके चलाये बिना चलते नहीं । सो ऐसे जड़ घोड़न पर तू चढ़ा, तो पारख कैसे होयगी ? अरे जब लग तू चलायेगा, तबलग ये चलेंगे और जब तुहारा चोला छूटेगा, तब ये सबही रह जायेंगे । तुझे ये कैसे पार करेंगे ? तो देखो-हे सन्तो ! काठके घोड़ेपर चढ़के सब कोई नाचते हैं, कीर्तन करते हैं; झाँझ मंजीरा बजाते हैं । औ जा रंगसे दुलहा गुरुवा लोग विवाहने आते हैं, ताही रंगसे दुलहिनी जीव राचते हैं, धोखेमें पड़ते हैं । अरे सब कोई कहर बिरहमें नाच रहे हैं औ नौका कहिये देह । सो जबलग मानुष देह साबुत है, तबलग खेवे नहीं जानेहु, परखे नहीं

जानेहु । कैसेके लगबेहु तीरा हो । कैसे आवागवनसे बचोगे ? गुरु कहते हैं कि, रामरस माते, जोलहा दास कबीरा हो । दास कबीरा कहिये जीव, जोलहा कहिये गुरुवालोग । सो दोनों कर्म, योग, उपासना, भक्ती, ज्ञान करके राम रसमें माते, मिथ्या धोखेमें भूले । राम कहिये जो सबमें रमा है । ताके रस अनेक विषय, अनेक कल्पना, अनेक अनुमान, तामें राते जीव सब । मालिक दूसरा बनायके उसके आप दास बने औ उसीके प्रेममें माते । ये अर्थ ॥ १ ॥

कहरा २.

मत सुनु मानिक।मत सुनु मानिक। हृदया बन्द निबारहु हो ॥
अटपट कुम्हरा करै कुम्हरैया। चमरा गाँव न बाँचे हो ॥
नित उठि कोरिया पेट भरतु है। छिपिया आँगन नाँचे हो ॥
नित उठि नौवा नाव चढ़तु है। बेरही बेरा बोरे हो ॥
राउरकी कछु खबरि न जानेहु। कैसेकै झगरा निबेरहु हो। ॥
एक गाँवमें पाँच तरुणि बसे। जेहिमा जेठ जेठानी हो ॥
आपन-आपन झगरा प्रकासिनि। पियासों प्रीति नसाइनि हो ॥
भैंसिन माहि रहत नित बकुला। तिकुला ताकि न लीन्हा हो॥
गाइन माहि बसेउ नहिं कबहूँ। कैसेकै पद पहिचनबेउ हो॥
पंथी पंथ बूझ नहिं लीन्हा। मूढ़हि मूढ़ गवाँरा हो ॥
घाट छोड़ि कस औघट रेंगहु। कैसेकै लगबेहु तीरा हो ? ॥
जतइत के धन हेरिन ललचिन। कोदइतके मन दौरा हो ॥
दुइ चकरी जनि दरर पसारहु। तब पैहो ठीक ठौरा हो ॥
प्रेम बाण एक सतगुरु दीन्हों। गाढ़ो तीर कमाना हो ॥
दास कबीर कीन्ह यह कहरा। महरा माँहि समाना हो ॥२॥

टीका गुरुमुख–मानिक कहिये जो मानी हुई वस्तु, मानी हुई वस्तु ब्रह्म, मानी हुई वस्तु अनेक देवता औ मानी हुई वस्तु कर्म, उपासना, भक्ती, ज्ञान, योग । जो मानंदी सोई बंधन । सो तू बन्धनकी

बात मत सुने। हृदयाबन्द निवारहु हो। नाना बानी, नाना कल्पना औ नाना अनुमान जो गुरुवा लोगोंने दृढ़ाये हैं औ तूने जो-जो हृदयमें बन्धन माना है स्त्री, पुत्र, धन, विषय आदिक, सो सब परखके निवारण करो; नहीं तो बंधनमें बंधे गर्भयोनीमें जावोगे। अटपट कुम्हरा कहिये मन, सो नाना प्रकारकी कल्पना करता है औ नाना वासनामें बन्ध होता है। नाना कर्म करता है, तैसे चोले जीवको प्राप्त होते हैं। जैसी इच्छा कुम्हारकी होय औ जैसा चित्त लगायके क्रिया करै, तैसी हँड़िया बने। तद्वत् मन जैसी कल्पना करै औ कल्पनामें आसक्त होके जैसी क्रिया करै, तैसी देह जीवको प्राप्त होय। परन्तु चमरा गाँव न बाँचे हो। अरे कुम्हार नाना प्रकारकी हँड़िया बनाता है। परन्तु वह बनाता ही जाता है, यह फूटती ही जाती है। तद्वत् मन नाना चोले उत्पन्न करता है; परन्तु चमरा गाँव न बाँचे हो। चमरा गाँव कहिये जो चर्म, मास, हाड़, नाड़ी, मल—मूत्रका गाँव देह, सो अनेक प्रकारकी देह जीवको होती है—राजदेही, दरिद्रदेही, औ सब नाश हो जाती है। ताते संपूर्ण मिथ्याभूत जानके आसक्ती छोड़। नित उठि कोरिया पेट भरतु है, छिपिया आँगन नाँचे हो। कोरिया कहिये गुरुवा लोग, जिन्होंने नाना प्रकारके कपड़े बिने, नाना बानी ग्रन्थ बनाये। सो गुरुवा लोग रोज बाजार भरते हैं, नाना बानी, नाना ऋषिनका सिद्धांत बताते हैं, नाना ग्रंथ बानी बाँचते हैं। सो सुनि-सुनि छिपिया आँगन नाँचे हो। छिपिया कहिये जो कोरीके पाससे कपड़ा ले करके और जीवनको बेंचे, सो छिपिया। छिपिया कहिये भक्त; सो जा बानी औ जा सिद्धांतकी जाकी भक्ती है, सोई बात गुरुवा लोगनसे पूछी। सोई बात गुरुवा लोगोंने उपदेश दिया। सो उपदेश पायके भक्ती सहित गुरुवा लोगोंके सामने नाचने लगे। नित उठि नौवा नाव चढ़तु हैं, बेरही बेरा बोरे हो। अब नित उठि जीवनको गुरुवा लोगकी दुकान पर उपदेश होने लगा। नौवा कहिये संसारी जीव, ताकी भक्त

लोग नित नाम नौकापर चढ़ाते हैं औ बारंबार तत्त्वमसी कहिके डुबाते हैं, जग चौरासीमें जीवको डुबाते हैं । कोरिया ब्रह्मादिक, व्यासादिक, वाल्मीकादिक; छिपिया सनकादिक, शुकादिक, नारदादिक औ नौवा सब संसार कि; शास्त्राचारी, वेदाचारी, सोई कोरिया औ वैदिक, शास्त्रिक, पुराणिक; ये छिपिया, नौवा सब संसार । तो ये सब मिलिके जीवको भ्रममें डुबाते हैं । राउर कहिये आप जीव, सो अपनी तो खबर है नहीं, तो ये झगरा कैसे निबेरोगे ? अरे सबही झगरा तुम्हारी गाफिलीसे खड़ा हुवा है । जो परखके अपनेको चीन्हो, तो गाफिली भी उड़ जाय औ झगरा भी टूट जाय । एक गाँव देह, पाँच तरुणी पाँच तत्त्व औ पाँच तरुणी-क्रियाशक्ती, द्रव्यशक्ती, ज्ञानशक्ती इच्छाशक्ती आनंदशक्ती औ जेठ-जेठानी बानी । सो इन आपन-आपन झगरा प्रकाशा । औ इनका पिया जीव; सो जीवसे प्रीति नसायके अपने-अपने विषयनमें लगी, दूसरा बन्धन बनाया । ये अर्थ । भैंसिन माँहि रहत नित बकुला, तिकुला ताकि न लीन्हा हो—मायामुख—याको अर्थ आगे कहेंगे । अब गुरुमुखका बिरह अर्थ सुनो—गुरु कहते हैं कि, जैसा सर्प मणिका आशिक रहता है, छिनभर मणिको भूलता नहीं । जो मणिको लेने व्याध आते हैं, सो लोहेका पिंजरा तामें चारों तरफ छूरी लगायके ले आवते हैं औ कहीं झाड़ देखके उसके ऊपर बैठते हैं । फिर सर्प जब रातको चरने निकरता है, तब मणि रख देता है; ताके उजियारेमें चरता है । सो व्याध उस मणिके ऊपर पींजरा धर देता है । फिर सर्प-दौड़ता है मणि लेनेके वास्ते, सो मणि मिलती नहीं, तब छूरिन पर मूड़ दै दै मारता है । फिर शिरच्छेद होके सर्प मरता है । जो वह सर्प पहलेही मणिका मोह छोड़ता, तो काहेको शिरच्छेद होता ? तैसा तूने स्त्री माणिक माना है, सो ता स्त्रीके विषयमें मरा जाता है । एक स्त्री, दूसरी बानी; ये दो बन्धन जीवको न होय, तो जीव सदा मुक्त है । सो तू स्त्रीके वचन औ श्रृङ्गार मत सुने, तेरे हृदयमें पैठके

बंधन होवेगा, तुझे जकड़ डारेंगे । सो तू स्त्री की बात औ गुरुवा लोगोंकी बात मत सुने, परखके बंधन का निरुवारा कर डार । अटपट कुम्हरा मन, सो सदा विषयके संकल्प उठाता रहता है औ विषयनमें आसक्त रहता है । केतेउ विषय भोग रात-दिन करो; परन्तु मनकी तृप्ती नहीं होती । फिर चमरा गाँव इंद्री सब नाश हो जाती हैं औ विषय वासना तो दूनी होती है । फिर वही वासनामें जीवका चोला छूटता है, फिर विषयनका कीड़ा होता है । नौवा जीव रोज मनरूपी नौकापर चढ़ता है । विषय बयार उड़ायके स्त्रीके पास ले जाती है, तब स्त्री नौका सहित जीवको पकड़के भगचक्रमें डुबाय देती है । जब शृङ्गार वा स्त्रीकी बात जीवने सुनी कि मनका संकल्प उठा औ विषयनका ध्यान बैठा । तब ऐसा मनमें आने लगा कि, स्त्रियनके पास बैठना, उनको देखना, उनसे बात करना । फिर विषय बयार उड़ायके स्त्रीके पास ले चली । जब स्त्रियनके पास एकाँत-लोकाँत बैठने लगा औ उनकी मुँहकी बातें सुनने लगा, तब काम उठने लगा । जैसे गाढ़ी अग्नीको पवन लगे, तद्वत् । जब कोई विवेकी बर्जने लगे, तो क्रोध आने लगा । औ फिर नाना प्रकारसे लोग हँसने लगे, नसीहत करने लगे, तब मोह भया । मोहसे अकिलमें भ्रम हुवा । औ भ्रमसे ज्ञान बुद्धी सब नाश हुई । फिर चौरासीका कीड़ा जीव हुवा । नित उठि कोरिया पेट भरतु है । कोरिया कहिये स्त्री, जाने संसार पट बिन डारा औ सब जीवनको चौरासीमें गूंथा । सो स्त्री नित उठिके नाना शृङ्गार करती है औ नाना मोहरूपी बानी बोलके जीवनको भगमुखसे खाती है, सब जीवनका रेत आकर्षण करके अपना पेट भरती है । ये स्त्री नित-नित पुरुषनका पुरुषार्थ हरती हैं; परंतु कधी तृप्ति नहीं होती । ये जीव सब स्त्रियनके संगमें कामी भये । सो जैसी स्त्रियाँ पुरुषनको नचाती हैं तैसे-तैसे नाचते हैं, कामातुर होके पाँव परते हैं। उठो कहो, तो उठते हैं । बैठो कहो तो बैठते हैं । सोवो कहो, तो सोते हैं । ऐसा जो-जो कहती

है, सोई-सोई करते हैं। राउरकी कछु खबरि न जानेहु। राउर कहिये स्त्री, इनकी खबर तो जानी नहीं कि, सकल भाँतिसे बंधन रूप है। अब आवागवनका झगरा कैसे छूटेगा ? एक गाँव-एक देहमें पाँच तरुणि बसे। पाँच तरुणी कहिये पाँच इंद्री। कान इंद्री स्त्रीके शब्द सुननेमें खुशी है। आँखि इंद्री स्त्रीके रूप देखनेमें खुशी है। नाक इंद्री स्त्रीकी सुगन्धी सूँघने चाहती है। जीभ इंद्री स्त्रीका अधर रस चाहती है। त्वचा इंद्री स्त्रीका स्पर्श चाहती है। सबमें जेठ-जेठानी लिंग इंद्री, सो तो स्त्रीके विषयमें बंध करना चाहती है, भगरस लेना चाहती है। सो अपने-अपने विषयके हेत देहमें रार मचाई है। इनका पिया जो जीव, ताके कल्याणकी प्रीती तो काहूको नहीं औ जीवको नाश करनेके हेतु विषयनसे प्रीत लगाई। ये अर्थ। मायामुख-भैंसिन माँहि रहत नित बकुला, तिकुला ताकि न लीन्हा हो। अब मायाने गुरुका वैराग्य अर्थ सुनिके जीवनको मिलित उपदेश करती है, सो हे संतो ! तुम परखो। भैंसी कहिये इंद्री, बकुला कहिये मन। सो माया बोलती है कि, ये संसारका मन तो इंद्री विषयमें नित रहता है। तिकुला कहिये टीका, सो तारक योग संधान करके चाचरी मुद्रामें मन लीन भया नहीं, तो परमपदकी प्राप्ती कैसे होयगी ? चाचरी मुद्रा कहिये त्रिकुटीके ऊपर टिके, ऊपर नजर लगावै, दृष्टीसे आकाश देखे, तब मोतिनकी झर लगे औ परम शुभ्र ज्योति परमात्मा, ताके दर्शन पावै; तामें मन लय करे। औ गाइन माँहि बसेउ नहिं कबहूँ, कैसेकै पद पहिचनबेउ हो। गाइन कहिये नाड़ी, सो इंगला पिंगला एक करके सुषुमना नाड़ीमें उन्मन ध्यान करके कबहूँ बसे नहीं, तो ये जीव ब्रह्मपदको कैसे प्राप्त होंगे ? कैसे पहचानेंगे ? पंथी पंथ बूझ नहिं लीन्हा, मूढ़हि मूढ़ गवाँरा हो। पंथी कहिये जीवको, सो जीवने योगी लोगोंकी शरणमें जायके ब्रह्मांडका मार्ग बूझ नहीं लिया, ताते ये संपूर्ण जीव मूढ़हि मूढ़ गँवार हैं। इनको ब्रह्म अनुभव कैसे होयगा ? औ ये कैसे कालसे बचेंगे।

जबलग हठयोग, राजयोगका मार्ग जीवको नहीं प्राप्त होयगा, तबलग जीवकी मुक्ती नहीं। घाट छोड़ि कस औघट रेंगहु ! घाट कहिये रास्ता, औघट कहिये रास्ता। सो रास्ता पाँच प्रकारका—पपीलमार्ग कर्ममार्ग, विहंगमार्ग तारक योग, कपी मार्ग हठयोग, मीन मार्ग अमनस्क उन्मनी योग, शेष मार्ग ज्ञान सांख्य योग; ये पाँच मार्ग छोड़के और सब औघट। सो ऐसे मार्ग जो जीवको मालूम नहीं, औघट इंद्रीके संग जो रहेगा, सो कैसे भौसागरसे पार होवेगा ? इस प्रकारसे गुरुवा लोगोंने जीवको दृढ़ाया। ये अर्थ। गुरुमुख—जतइतके धन हेरिन ललचिन, कोदइतके मन दौरा हो। गुरु कहते हैं कि, जतइत कहिये ब्रह्मादि गुरुवा लोग, उनके योग ध्यान भक्ती ज्ञानरूपी बानी हेरिन खोजिन, पढ़के ललचाइन-अर्थ, धर्म, कामके वास्ते। सो कोदइत कहिये जीव, याहूका मन दौरा। काहेते कि गुरुवा लोगनकी बानीमें योग, भक्ती, ज्ञानका माहात्म्य बहुत सुना, ताही ते। सो हे भाई ! दुइ चकरी जनि दरर पसारहु। एक चकरी संसारके नाना विषय भोग; यामें जनि दरर पसारहु। दरर कहिये बासना, तृष्णा, चाहना सो संसारके विषय भोगनमें मत पसारो, ये बन्धनरूप है। औ दूसरी चकरी बानी, ताके विषय भोग स्वर्गादिक, योगादिक, ब्रह्मादिक, ऋद्धि-सिद्धि आदिक चकरी जीवको बन्धन रूप है, ताते इनमें भी बासना, तृष्णा, चाहना मत पसारो, मत करो। ये सब जीवको बन्धन रूप है, ताते इनको भी परखके छोड़ो। तब पइहो ठीक ठौरा, पारख ठौरा ॥ ये अर्थ। प्रेमबाण जो सतगुरु ब्रह्मादिक गुरुवा लोगोंने दृढ़ाया है संसारमें, सोई गाढ़ो दृढ़, अनुमान, तीर, लक्ष कमान देहसे उठा, ता बानी अनुमान से दृढ़ लक्ष लगा। सो जीव उस अनुमानका दास बना औ इस प्रकारसे कहर किया। संसारमें नाना उपासना, नाना कर्म, नाना तपस्या, नाना मत, नाना योग, नाना प्रकारकी भक्ती, नाना सिद्धांत दृढ़ायके संसारको परम दुःखमें डारा। आखिर आप भी

बहुत विचार साधना वैराग्य करके महरा माहि समाना हो। महरा कहिये ब्रह्म, सो ब्रह्ममें समाया औ जगत् रूप हो रहा। तो नाहक नाना बानी दृढ़ायके जगको दुःख दिया, आखिर आप भी जगत् रूप हो रहा। ये अर्थ ॥ २ ॥

कहरा ३.

राम नाम का सेवहु बीरा। दूरि नहीं दुरि आशा हो ॥
और देव का सेवहु बौरे। ई सब झूठी आशा हो ॥
ऊपर उजर कहा भौ बौरे। भीतर अजहूँ कारो हो ॥
तनके वृद्ध कहा भौ बौरे। मनुवा अजहूँ बारो हो ॥
मुखके दाँत गये कहा भौ बौरे। भीतर दाँत लोहे के हो ॥
फिर-फिर चना चबाय विषयके। काम क्रोध मद लोभके हो ॥
तनकी सकल संज्ञा घटि गयऊ। मनहिं दिलासा दूना हो ॥
कहहिं कबीर सुनो हो संतो। सकल सयाना पहूना हो ॥३॥

टीका गुरुमुख-गुरु कहते हैं कि, हे भाई! राम नामका सेवन सब तुम करते हो, तो राम नाम क्या वस्तु है? अरे हे जीव! तेरेसे ज्यादा कछु वस्तु नहीं। न कछु तेरे बिना नजदीक है, न दूर है। तो सब राम, ब्रह्म आदि तेरी आशा मात्र है औ विचार करके देखो, तो कछु तेरेसे न्यारी वस्तु नजर नहीं आती। ये पाँच तत्त्व तेरेसे न्यारे हैं तो जड़ हैं। इनकी क्या गिनती? क्योंकि तेरे बिना इनसे कछु करतूत हो सकती नहीं। इस वास्ते तेरेसे ज्यादा कोई नहीं। तो पाँच तत्त्व औ पाँच तत्त्वको जानने वाला जीव, येतिक जमा औ सब मिथ्या धोखा। तो हे जीव! तू नाहक गुरुवा लोगोंकी बानी सुनि-सुनिके दिवाना हुवा औ दूसरा देव अपना कर्ता है, ऐसा अनुमान करके सेवन करने लगे। पर ये सब झूठी आशा। अरे तेरे बिना दूसरा कछु नहीं; परंतु तेरे भीतर नाना बानी, नाना कल्पना, नाना अनुमान भरे हैं, ताते तू भीतर कारा है। ऊपर उजर भया, तो क्या भया? अरे

दिवाने ! तन बूढ़ा हुवा, पर मन बूढ़ा नहीं हुआ। आशा तृष्णा ज्वान होती जाती हैं। अरे मुखके दाँत गिर परे, पर भीतर वासना रूपी दाँत लोहेके बने हैं, ताते बारंबार गर्भमें पचते हो औ विषय रूपी चना चबाते हो। वही आशा, वही वासना, वही तृष्णा तेरेको संसारमें ले आती है। अरे तनकी सकल शक्ती घट गई, परन्तु मनहि दिलासा दूना। ऐसा-ऐसा मैल तेरे पास भीतर भरा है।सो ये सकल भ्रम परखके छोड़ औ शुद्ध पारखरूप हो, तब आवागवनसे बचै। नहीं तो जबलग ये आशा तृष्णा औ बहुत विषयके पीछे लगा है औ दूसरा ब्रह्म वा आतमा होनेकी चाह बनी है, तबलग सकल सयानीमे बैठा है। गुरु कहते हैं कि, हे सन्तो ! सुनो, जो सकल सयानी याके पास भई औ एक पद पारख नहीं, तो सब सयानी कछु काम आ सकती ही नहीं, देह नासै सब नास पावती है। ये अर्थ ॥ ३ ॥

कहरा ४.

ओढ़न मोरा राम नाम। मैं रामहिका बनजारा हो ॥
राम नाम का करहु बनिजिया। हरि मोरा हटवाई हो ॥
सहस्र नाम का करों पसारा। दिन दिन होत सवाई हो ॥
जाके देव वेद पछ राखा। ताके होत हटवाई हो ॥
कानि तराजू सेर तीनि पौवा। तुकिनी ढोल बजाई हो ॥
सेर पसेरी पूरा कैले। पासंग कतहूँ न जाई हो ॥
कहहिं कबीर सुनो हो संतो। जोर चला जहँड़ाई हो ॥ ४ ॥

टीका जीवमुख—जीव बानी ऐसी है कि, ओढ़न कहिये आसरा, सो राम नाम मेरा आसरा है और सब मिथ्या। मैं राम नामका बेपारी हौं। हरी कहिये, ज्ञानीसो मैंने हटवाई पसारी है। उनकी कृपासे मैं पावता हौं, बेपार करता हौं, राम नामका भेद सब संसारमें सुनाता हौं। सहस्र नामका पसारा भक्ती करता हौं, जामें प्रेम दिन-दिन सवाई होता है औ देखा देखी सब संसार की भक्ती भी बढ़ती है। ये अर्थ। **गुरुमुख**—गुरु कहते हैं कि, देखो इनकी भक्ती कि; जाका देवने, वेदने

पक्ष राखा, ता राम नामकी सब विक्री होती है। पैसेके हेतु करके कोई पुराण बाँचते हैं, कोई कथा कहते हैं, कोई पुरश्चरण करते हैं, कोई गुरुवाई करते हैं। इस प्रकारसे राम नामकी विक्री होती है। कौन प्रकार से गुरुवा लोग राम नाम बेचते हैं ? सो सुनो-कान है सोई तराजू औ मन येही तिन पौवा सेर। तीन पाव कहिए रजोगुण, तमोगुण, सतोगुण, ये तीन पाव मिले तहाँ मन। सो तुकनी ढोल बजाई हो। ढोल, नगारा, मृदंग, ताल आदि नाना बाजा बजाने लगे और शिष्य बैपारके गाहक तन-मन-धन कीमत लेके आये औ व्यापारी गुरुवा लोगोंके आगे हाथ जोरके खड़े भये कि, हे प्रभु ! रामनाम हमको देव। तब गुरुवा लोगोंने पीढ़े पर बैठाया औ मूड़ पर कपड़ा ढांकके कानमें फूँका। ॐ रामाय नमः। औ कहा कि, खूब मन लगायके तौला। ये अर्थ। सेर पसेरी पूरा कै ले। सेर मन औ पसेरी तत्व; सो तत्वनमें मन लय करके राम नाम स्मरण करना, श्वासाको कुम्भक करके राम नाम स्मरण करना जो पासंग कतहूँ न जाय, मन कहीं नीचे-ऊँचे चलायमान न होय। परंतु कहाँ है ? हे जीव ! तुम्हारेको गुरवा लोगोंने राम नाम सुनाया, सो कहां है ? अरे राम नाम तो जीवकी कल्पना, ता कल्पनाको देवनने, वेदनने सिद्ध किया। कैसा कि ? राम कहिये जो सबमें रमा, रमा कहिये आतमा, आतमा कहिये जगत्। तो एकता करके आखिर बेकारमें रमा। हे सन्तो ! देखो; जबरदस्ती जहँड़ाय चला जीव, भ्रम चक्रमें परा। ये अर्थ ॥ ४ ॥

कहरा ५.

राम नाम भजु राम नाम भजु। चेति देखु मन माँही हो ॥
लक्ष करोरि जोरि धन गाड़ैं। चलत डोलावत बाँही हो ॥
दादा बाबा औ परपाजा। जिनके यह भुंइ भाँड़े हो ॥
आँधर भये हियेहु की फूटी। तिन काहे सब छाँड़े हो ॥
ई संसार असार को धंधा। अन्तकाल कोइ नाहीं हो ॥
उपजत विनशत बार न लागे। ज्यों बादर की छाहीं हो ॥

नाता गोता कुल कुटुम्ब सब। इनकर कौन बड़ाई हो ॥
कहहिं कबीर एक राम भजे बिनु। बूड़ी सब चतुराई हो ॥ ५ ॥

टीका गुरुमुख–जीवको बंधन दो–एक राम नाम आदि सकल बानी, यामें जीव बँधा हुवा है। सो गुरु कहते हैं कि, राम नाम आदि संपूर्ण कल्पनाको परखके, भाग छोड़के मुक्त हो। औ दूसरी मोटी माया-लक्ष, करोरी द्रव्य जोरिके जिमीमें गाड़ा औ उसका अभिमान करके बाँह डुलावते फिरते हैं। ये भी जीवको महा बन्धन परखके छोड़ना। जो दादा, बाबा, परपाजा भये, जिन नाना द्रव्य जागीर रुपैया जमा किये औ जिमीमें भी बहुत गाड़े औ दिया-लिया भी बहुत आखिर मर गये तब सब जहाँका तहाँ परा रहा। वो सब छोड़के चले गये। औ तुम्हारी ऊपरकी भी आँखी गई औ भीत-रहूकी फूटी; जो तुमको मालूम नहीं होता कि, हमभी छोड़के जायेंगे। ये नाशवंत द्रव्य है। याकी आसक्ताईसे नाना सर्पादिक दुष्ट योनी भोगेंगे। अरे ये संसार सब असारका धंधा है। अन्त कालमें कोई साथी नहीं औ उपजते विनशते कछु बार नहीं। जैसी बादरकी छाहीं छिनमें आई औ छिनमें गई। तद्वत् धन, दारा, पुत्रादि नाता-गोता कुल-कुटुम्ब इनकी कौन बड़ाई? अरे बादरके पुतरिनकी क्या बड़ाई करना? छिनमें है औ छिनमें नहीं। औ इनके संगमें नाहक बंधन होता है। तो बंधन जानके ये भी छोड़ा औ एक राम नाम समाधी भी लगी रही, तो भी जीवको बन्धन है। ताते गुरु कहते हैं कि; संपूर्ण त्याग हुआ औ बड़ा निर्णय किया; परन्तु आत्मा अनुभव औ एक राम, येता धोखा जो छूटा नहीं, धोखेसे भागा नहीं, तो संपूर्ण चतुराई बूड़ी। ये अर्थ ॥ ५ ॥

कहरा ६.

राम नाम बिनु राम नाम बिनु। मिथ्या जन्म गमाये हो ॥
सेमर सेइ सुवा ज्यों जहँड़े। ऊन परे पछताई हो ॥

जैसे मदपी गाँठि अर्थ दे। घरहुकी अकिल गमाई हो ॥
स्वादे वोद्र भरे धौं कैसे। ओसै प्यास न जाई हो ॥
द्रव्य हीन जैसे पुरुषारथ। मनही माँहि तवाई हो ॥
गाँठी रेतन मर्म नहिं जाने। पारख लीन्हा छोरी हो ॥
कहहिं कबीर यह औसर बीते। रतन न मिले बहोरी हो ॥६॥

टीका गुरुमुख—एक राम नाम जाने बिना भौ बूढ़ि मुवा संसार। कि, राम नाम जीवका अनुमान मिथ्या कल्पना; ऐसा जाने बिना मिथ्या धोखेमें जन्म गमाये हो। हे जीव! तुम्हारे बिना राम नाम कौन कल्पेगा! ये अर्थ। अरे जैसा सेमरका फूल अच्छा देखकर सुवेने सेवन किया फलकी आशासे औ जब फल फूटा, तब उसमेंसे रुई उड़ी, तब महा पश्चाताप हुवा। तद्वत् अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष, इन फलकी आशा करके राम नामका सेवन किया, बड़ी भक्तीका माहात्म्य देखके, परंतु जब रामकी आखिरी देखी, तो जगतही राम हुआ। तब जीवको भ्रांति हुई औ बड़े पश्चातापमें पड़ा। जैसा मदपी अपनी गाँठिका पैसा देके घरकी भी अकिल गवाँता है, तैसा गुरुवा लोगोंको तन, मन, धन देके रामकी भक्ती करने लगा, जगत् आत्मा बना श्रुति शास्त्रके प्रमाणसे। तो घरहुकी अकिल, जो साक्षी दशा थी; सो भी गवाँई। अरे स्वादसे कहूँ पेट भरता है? ब्रह्म तो जगतका स्वाद है। जीवके स्वादमें जीव तदाकार हुवा, तो आवागवनसे कैसे रहित होयगा? ओसके चाटे कैसे प्यास जायगी! तो योग समाधी औ कर्म इनके करे जगत्का दुःख छूटनेका नहीं। ये अर्थ। जैसा द्रव्यहीन मनुष्य पुरुषार्थ बहुत बताते हैं औ जब काम परा, तब घबरायके मनही में तवा खाते हैं। तद्वत् विना पारख ये जीव पुरुषार्थ तो बहुत बताता है कि, मै ब्रह्म, मैं साक्षी, सिद्ध, मैं आत्मा। परन्तु जब पूछो कि, ब्रह्म साक्षी सिद्ध आत्मा कहाँ है? तब सब जगत्ही कहिके मनमें तवाई खायके रहि जाता है। ये अर्थ। रतन कहिये जीव, सो ताको नाना प्रकारकी गाँठी पर गई-कर्मकी,

धर्मकी, विषयकी, औ ज्ञानकी, विज्ञानकी, सो इन पंच गाँठिनसे कछु छूटने नहीं पाता। ज्यों-ज्यों कल्पना अनुमान करता है, त्यों-त्यों-अधिक अधिक अरुझता जाता है औ बहुत दुःख पावता है। सो ऐसे दुखिया जीवको पारखने संपूर्ण गाँठी छुड़ाके अपना स्वपद कर लिया। जब पारख प्राप्त भया, तब सब पाँचों गाँठी परखके छोड़ा और पारखरूप हुवा, आवागमनसे रहित हुवा, ब्रह्म-जगत् से न्यारा हुवा, स्थिर हुवा। तो गुरु कहते हैं कि, हे भाई ! पारख पानेकी औसर अबहीं है। जो ये अवसर मानुष जन्म चुक जायगा, बीत जायगा, तो फिर ये जीव पारखसे नहीं मिलनेका। ये अर्थ ॥ ६ ॥

कहरा ७.

रहहु सम्हारे राम विचारे। कहता हौं जे पुकारे हो ॥
मूड़ मुड़ाय फूलिके बैठे। मुद्रा पहिर मंजूसा हो ॥
तेहि ऊपर कछु छार लपेटे। भितर-भितर घर मूसाहो ॥
गाँव विसतु है गर्भ भारती। बाम काम हंकारा हो ॥
मोहन जहाँ-तहाँ ले जैहैं। नहि पत रहल तुम्हारा हो ॥
माँझ मँझरिया बसे जो जानै। जन होइहैं सो थीरा हो ॥
निर्भय भये तहाँ गुरुकि नगरिया। सुख सोवैं दास कबीरा हो॥७॥

टीका गुरुमुख—गुरु बोलते हैं कि, हे भाई योगी लोगो ! मैं पुकारके कहता हौं कि, जो तुम राम विचारे हो समाधीरूप, ताको सम्हारे रहो। जब देह छूटेगी, तब समाधी कहाँ रहेगी ! । ये अर्थ। अरे मूँड़ मुड़ायके मुद्रा पहिरके मंजूषामें, गुफामें कुंभक करके फूलके बैठे कि, हम ब्रह्मरूप हो गये। भीतर कहिये सूक्ष्मरूप, फिर भीतर कहिये कारण, घर कहिये महाकारण; सो लूटके लय करके कैवल्य हो बैठे। ये अर्थ। ऊपर-ऊपर राख लपेटी, पर भीतर-भीतर बीज रह गया, कि, मैं ब्रह्म, मैं आत्मा। तो जब ब्रह्म, आतमा बना, तब जगत्का अधिष्ठान बना, तो जग चौरासीका बीज बना। ये अर्थ। गाँव बसतु है गर्भ

भारती, बाम काम हंकारा हो। गाँव कहिये संसार, सो संसारमें गर्भ भारती ब्रह्मज्ञानी योगी बसते हैं। बाम कहिये ब्रह्मज्ञान, सो ब्रह्मज्ञानका काम करते हैं, विधि-निषेध कछु रखते नहीं, संपूर्ण सुकर्म-कुकर्म, भक्ष-अभक्ष करते हैं औ हंकार करते हैं कि, हम ब्रह्म सच्चिदानंद। हमको कछु विधि-निषेध नहीं। जो खुशीमें आवै, सो करना। संपूर्ण हमारा खेल है। हमसे कछु न्यारा नहीं। हम किसीसे न्यारे नहीं। इस प्रकारका हंकार ब्रह्मज्ञानी करते हैं; परन्तु मोहन कहिये बानी औ मोहन कहिये स्त्री, सो जहाँ-तहाँ चौरासीमें तुम्हें फँसायके गर्भवासमें ले जायगी। फिर तुम्हारा हंकार भूल जायगा औ नाना प्रकारके योनीमें बहुत लात मुक्का खावोगे। फिर तेरी पत नहीं रहनेकी। तासे अभी चेतके बानी-स्त्री दोनोंका फन्द छोड़ो। ये अर्थ। **मायामुख-माँझ मझरिया बसै जो जानैं, जन होई हैं सो थीरा हो।** माँझ कहिये भीतर, मँझरिया कहिये नाभिस्थान। सो त्रिकुटी, श्रीहट, गोलहाट स्थान छोड़के अहुटपीट स्थानके भीतर सदा जाका लक्ष राजयोग संधानसे बसै, कदहीं उत्थापन होने न पावै; सोई सच्चिदानंद स्वरूपको जाको जानैं; सोई योगी स्थिर हो गया, आवागवनसे रहित होयगा। ये अर्थ। **गुरुमुख-निर्भय भये तहाँ गुरुकी नगरिया, सुख सोवैं दास कबीरा हो।** दास कबीरा भक्त, सो योगी लोगोंकी भक्ती करके उन्मन समाधीमें निर्भय हुवा। तहाँ गुरुकी नगरिया, जहाँ-चाँदसूर्य भासते नहीं औ अग्नी भी भासती नहीं। इंगला, पिंगला, सुषुमना जहाँ नहीं, तहाँ गुरुकी नगरिया परमधाम ! भ्रमरगुफामें सुख सोवै दास कबीरा। दास कबीरा जीवने परमसुख गाफिलीसे मानी। ये अर्थ ॥ ७ ॥

कहरा ८.

क्षेम कुशल औ सही-सलामत। कहहु कौनको दीन्हा हो ॥
आवत-जात दोऊ बिधि लूटे। सर्व तंग हरि लीन्हा हो ॥

सुर नर मुनि यति पीर औलिया। मीरा पैदा कीन्हा हो ॥
कहाँलों गनों अनंत कोटिलों। सकल पयाना कीन्हा हो ॥
पानी पवन अकाश जायेंगे। चंद्र जायेंगे सूरा हो ॥
येभि जायेंगे वोभि जायेंगे। परत न काहुके पूरा हो ॥
कुशल कहत-कहत जग बिनसे। कुशल कालकी फाँसी हो ॥
कहैं कबीर सारी दुनिया बिनसे। रहै राम अविनाशी हो ॥८॥

टीका गुरुमुख–गुरु कहते हैं कि, हिंदूकी क्षेम-कुशल औ तुरुककी सहीसलामत, सोगुरुवा लोगोंने औ वेद कुराननें कहा; परन्तु कौनकी क्षेम-कुशल भई ? ये वेद औ गुरुवालोगोंने कहे औ कुरानके कहेसे। किसीकी न भई। औ इस स्त्रीके तरफसे किस-किसकी कुशल भई ? ये ही तो चौराशीका मूल है। इसकी तरफसे किसका भला होयगा ? किसका भी नहीं। ये अर्थ। ताते तीनों परखके छोड़ो। आवत-जात दोउ विधि लूटे, सर्व तंग हरि लीन्हा हो। आवत कहिये जो गुरुवा लोग पैदा भये हैं औ जात कहिये जो गुरुवालोग नाना बानी बनायके मर मर गये हैं, सो दोनों विधि जीव लूटा गया। मर गये उन्होंने भी नाना कल्पना कर्म, उपासना, ज्ञान, योगादिक दृढ़ायके जीवकी हंस दशा औ साँचत्व हर लीन्हा। और अब जो गुरुवा लोग हैं, सो भी उनके प्रमाणसे संपूर्ण जीवनका साँचत्व हरके मिथ्या कर्म-उपासना, लोक-परलोक दृढ़ावते हैं। और स्त्री भी आवत- जात दोउ विधि लूटती है। जब लड़का पैदा भया, तबहीसे माताने मोह लगाया। नाता-गोता, हितबधूका मोह दृढ़ावने लगी औ जीवकी साँचताई हरने लगी। सोई जीवने दृढ़ किया। आगे शनै-शनै जब बढ़ा, तब लिखने डारा और जनेउ कर दिया। तब नाना प्रकारके प्रपंच-उद्दिम, कर्म; मोह, लोभ औ तृष्णा बढ़ी औ कर्म विशेष दृढ़ाये, तब नाना उद्योग जीव करने लगा। फिर विवाह किये, तब नाना विषय जागे औ जीव विषयासक्त हुवा। तब आदि मायाका रूप जो माता, ताको मोह घटा

औ अन्त माया कालिका मेहरी, ताका मोह बढ़ा। तब स्त्रीका गुलाम भया औ नाना जंजाल करने लगा। कष्ट कर-करके दाम कमाने लगा, सो सब विषयके फन्दमें उड़ावते हैं। परन्तु तृप्ती नहीं होती, अतृप्तीमें ही देह छूटती है। आखिर कमाते-कमाते औ विषय करते-करते औ बूढ़े होते हैं। फिर इन्द्री तो सब शिथिल हो जाती हैं; परन्तु चाह बनी रहती है। औ चोला छूटा तो फिर गर्भवासको जीव प्राप्त हुआ। इस प्रकारसे ये स्त्रीने औ बानीने आवत-जात दोउ विधि लूटा औ जीवका सर्व तंग साँचता हरि लीन्हा। ये अर्थ। सुर नर मुनि यति पीर औलिया, मीरा पैदा कीन्हा हो। हे संतो! देखो-ये कल्पनाने औ बानीने औ गुरुवा लोगोंने क्या आश्चर्य किया? जो काहूको देव बनाया, काहूको नर बनाया, काहूको मुनी बनाया, काहूको यती बनाया, काहूको पीर बनाया, काहूको पीरजादा औ काहूको भट्टाचार्य बनाया। परंतु कहाँ लौं गनौं, अनन्त कोटि महात्मा कल्पनासे पैदा भये और कल्पनामें मर-मर गये। बानी यहाँ ही पड़ी है; जो कोई जीव पैदा होते हैं, तिनको भी फँसानेके वास्ते। पर काहूकी बानी छोड़के स्थिति भई नहीं। और इस स्त्रीसे सुर, नर, मुनि, यती, पीर, औलिया, गुरुवा लोग सब पैदा भये औ स्त्रीके गर्भमें गये, सब अनंत कोटि लौं बिना पारख। ये अर्थ। पानी पवन आकाश जायेंगे, चन्द्र जायेंगे सूरा हो। पानी ब्राह्मण, पवन योगी, आकाश जंगम, चन्द्र सेवड़ा, सूर्य संन्यासी, ये भी भक्त और वो भी दरवेश, संपूर्ण गर्भवासमें जायेंगे। बिना पारख जीवकी स्थिति नहीं। बिना पारख काहूको पूरा नहीं परता, याते सब परखके पारख रूप होना। ये अर्थ। कुशल कहत-कहत जग विनशै, कुशल कालकी फाँसी हो। कोई कहते हैं कि, शादी भई, लड़के भये, दौलत भई, तो जीवकी कुशल भई। परन्तु गुरु कहते हैं कि, जेतिक वृद्धि ज्यादे होती है तेता विषय औ मोह तृष्णा जीवको ज्यादे होती है औ जीव आशक्त होयके बंधमें परता है, ताते चौरासी

भोगता है। तो ये कुशल नहीं, कालकी फाँसी है। और कोई कहते हैं कि, स्त्री-पुत्र-धन सब छोड़के गुरुवा लोगनके शरणमें जाना औ नाना योग वैराग्य करके मुक्ति गतिको प्राप्त होना। तो ये मुक्ति भी कालकी फाँसी है। अरे मुक्त होके जीव कहाँ जायेंगे ? बिना पारख सब कुशल कालकी फाँसी है। अब गुरुवा लोगनका उपदेश ऐसा है कि, सारी दुनिया विनाश हो जायगी औ एक राम अविनाशी रहेगा। तो सारी दुनिया विनाश होयके कहाँ जायगी ? औ राम अविनाशी कहाँ रहेगा ? ये सब मिथ्या धोखा। ये अर्थ ॥ ८ ॥

कहरा ९.

ऐसनि देह निरालप बौरे। मुवल छुवै नहिं कोई हो ॥
डंडवाकी डोरिया तोरि लराइनि। जो कोटिन धन होई हो ॥
ऊर्ध निश्वासा उपजि तरासा। हँकराइनि परिवारा हो ॥
जो कोइ आवै बेगि चलावै। पल एक रहन न पाई हो ॥
चंदन चीर चतुर सब लेपैं। गरे गजमुक्ताके हारा हो ॥
चौसठ गीध मुये तन लूटैं। जंबुकन वोद्र विदारा हो ॥
कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो। ज्ञान-हीन मति-हीना हो ॥
एक एकदिना याहि गति सबकी। कहाँ रावा कहाँ दीना हो॥९॥

टीका गुरुमुख–गुरु बोलते हैं जीवको कि, हे दिवाने ! बावरे ! ये ऐसी मानुष देह सतसंग करने योग, सो तूं हक-नाहक विषयनमें खोता है। मनुष्यकी उमर थोरी, या अल्प आयु, याको पायके सकल फाँस परखके छोड़ देना, नहीं तो जो कुटुंब-परिवार, पुत्र-स्त्री; जिनके पीछे तू अपना जन्म खोता है, सो मुए पर कोई तेरेको छूनेका भी नहीं। जो तेरे पास कोटिन धन होयगा, तब भी कमरका करधना सहित तोरके फेंक देवेंगे। तेरे संग कौड़ी नहीं आनेकी। ये अर्थ। हे सन्तो ! जब चोला छूटनेका समय आता है, तब ऊर्ध श्वास जीवका चलने लगा औ नाड़ी छूटने लगी। सो जीव घबराया। अरे

मेरी स्त्रीको बुलावो, मेरे पुत्रको मेरे सामने लावो, मेरे भाई बन्दको बोलावो। भाई बन्दो ! मेरी मेहरीको संभालो। इसकी लाज तुम्हारेको है। मेरा बेटा-बेटी तुम्हारे जिम्मे हैं। मेरा धन-दौलत सब सँभाल लो। मेरा नाम मत डुबाना, दौलत खोना मत। मैं मरता हौं। अब मेरी मेहरीका लाड़ और हठ कौन पुरावेंगे ? औ मेरी मेहरी मेरी नजर नहीं आनेकी। ऐसा शोक करते-करते नाड़ी आकर्षण हुई। सो हाथकी नाड़ी कंठमें औ पाँवकी नाड़ी पेडूमें आई। तब कंठ रुका, तो आँखका इशारा करने लगा। फिर आँखकी नाड़ी जब आकर्षण होने लगी तब तारे टूटने लगे। चाँद, सूर्य, अग्नी, बिजलीसी चमक होने लगी आँखके सामने। और ब्रह्मांडमें नाना प्रकारके नाद उठे, तब जीव घबराया। तब नाना प्रकारका अध्यास उठा तैसी अवस्था भई। उपरांत सब नाड़ी हृदय स्थानमें आई। सोई नाड़ीकी ग्रंथी खुली औ सुषोप्ती अवस्था भई, फिर चोला छूटा। सुषुम्ना नाड़ी जीवको ले उड़ी। सो जहाँ आसा, तहाँ बासा पाया। अब जो कोई आवते हैं सो कहते हैं कि; जल्दी मसानमें ले चलो। छिन भर भी रहने न पाया। जलदी ले जायके जराय दिया। ये अर्थ। जो बड़ो चतुराई करते थे औ अंगमें चन्दन चरचते थे और नाना प्रकारके सुगंध लगावते थे और ऊँचे-ऊँचे कपड़ा पहिरते थे। गरेमें गजमोतिन के हार पहिरते थे। सो तन जब जंगलमें जायके छूटा, तब न कुटुंब काम आया, न दाम काम आया। चील-गीध तनको खाने लगे औ जंबुकनने पेटको फार डारा। या अग्नीमें जराय दिया, या माटीमें गाड़ दिया, या गीध-चील खाय गये। देह, धन, कुटुंब ये कछु काममें पड़ा नहीं। याते गुरु कहते हैं कि, हे सन्तो ! जो ज्ञान हीन मति हीन जीव हैं तिनकी या गति भई। कछु अपनी स्थिति न भई। औ जो हैं, तिनकी एक-एक दिन याही गति सबको होयगी। क्या राजा ? औ क्या दरिद्र ? आखिर सबकी एक दिन येही गति होयगी। ताते संपूर्ण नाशवान् पदार्थ हैं, तामें चित्त नहीं देना, सब परखके पारख रूप हो रहना। ये अर्थ॥९॥

कहरा १०.

हौं सबहिनमें हौं ना हौं। मोहिं बिलगबिलग बिलगाइल हो
ओढ़न मोरा एक पिछौरा। लोग बाले एकताई हो॥
एक निरंतर अंतर नाहीं। ज्यों शशि घट जल झाँई हो॥
एक समान कोइ समुझत नाहीं। जाते जरा मरण भ्रम जाई हो॥
रैन-दिवस ये तहवाँ नाहीं। नारि--पुरुष समताई हो॥
हौं मैं बालक बूढ़ो नाहीं। ना मोरे चिलकाई हो॥
त्रिविधि रहौं सभनिमा बरतों। नाम मोर रमुराई हो॥
पठये न जाऊँ आने नहिं आवों। सहज रहौं दुनियाई हो॥
जोलहा तान-बान नहिं जाने। फाटि बिने दश ठाँई हो॥
गुरू प्रताप जिन्हें जस भाख्यो। जन बिरले सो पाई हो॥
अनंत कोटि मन हीरा बेधो। फिटकी मोल न पाई हो॥
सुर नर मुनि जाके खोज परे हैं। कछु कछु कबीरन पाई हो१०॥

टीका ब्रह्ममुख–अरे ये आश्चर्य जो मैं ब्रह्म सब चराचरमें बाहर-भीतर भरा हौं; परन्तु ना हौं। अहं शब्दसे सर्वत्र मेरी प्रतीति है, परन्तु मैं अहंकारसे न्यारा। मोहिं बिलग-बिलग बिलगाइल हो। मेरेको नेति-नेति श्रुती बोलती हैं। मैं तो पाँच तत्त्व नहीं, दश इंद्री नहीं, अंतःकरण पंचक नहीं, अवस्था चार नहीं, वायु पंचक नहीं, विषय पंचक नहीं, प्रकृति पचीस नहीं, देह चतुष्टय नहीं; निर्गुण-सगुण नहीं, द्वैताद्वैत नहीं। मैं एक स्वजातीय-विजातीय-स्वगत भेद रहित निरंतर, जो कहूँ अन्तर नहीं, घनरूप असंधी। जैसा एक चन्द्र, औ झाँई अनेक घटमें प्रतिबिंब नजर आता है; तैसा मैं एक आत्मा अनेक देहमें नजर आता हौं। जहाँ जल चंचल, तहाँ प्रतिबिम्ब भी चंचल नजर आता है। औ जहाँ जल स्थिर, तहाँ प्रतिबिम्ब भी स्थिर नजर आता है; परन्तु जल-घटकी उपाधी कछु चन्द्रको नहीं। तैसा ओढ़न मोरा एक पिछौरा, लोग बोले एकताई हो। अरे मेरी माया

बड़ी दुर्धर, जाने मेरेको ढाँक लिया। सोई माया एक पिछौरा, ताके एकताईमें अनेक रूप भास भये। जैसा घट बना, तैसा आकाश भास भया; तद्वत्। कि, जैसा एक चन्द्र अनेक घटमें भासा, तैसा मैं एक आत्मा निरंतर आकाशवत्। ये अर्थ। अरे एक आत्मा सब घटमें समाया, सो भ्रमवश कोई समुझता नहीं; जाते जरामरण संपूर्ण भ्रम छूट जाय। अरे एक आत्मामें प्रकृती-पुरुष औ ज्ञान-अज्ञान कछु संभवे नहीं। जैसा जलका विकार फेन-तरंग-बुदबुदा संपूर्ण जलही है औ मट्टीका विकार सब मिट्टी। तैसा ब्रह्मका विकार प्रकृती-पुरुष आदि संपूर्ण जगत् ब्रह्म ही है। ये अर्थ। न मैं बालक, न मैं तरुण, न मैं बूढ़ा। औ संपूर्ण त्रिविध स्वरूप मैं ही हौं। मैं त्रिविधि सच्चिदानंद एकरस होयके सबनमा बरतता हौं। जो तीन कालमें भासै, सोई सत औ जाको भासै सोई चित्त, दोनोंकी एकता अधिष्ठान सोई आनंद। इस प्रकारसे सबनमें वर्तता हौं। औ नाम मोर रमुराई हो, सर्व-व्यापी आत्माराम। ये अर्थ। मैं किसीके निकारे निकरता नहीं औ किसीके आने आवता भी नहीं। सहज ही आकाशवत् दुनियामें रहता हौं, अखंड एकरस। ये अर्थ। जोलहा तान-बान नहिं जाने, फाटि बिने दश ठाँई हो। जोलहा ब्रह्मादिक, सनकादिक, व्यासादिक या जोलहा मन, सो ताना-बाना नहीं जानता कि, एक ही तत्त्व है। तैसा एक आत्मा सब जगत् है; परंतु मनने नहीं जाना, ताते नाना कल्पना कर-करके फाटि बिने दश ठाई। चार वेद, छे शास्त्र, ये दश टुकरे करके संसारमें दृढ़ाता है। ये सब मनकी कल्पना मिथ्या भ्राँती, आत्मा सत्य। ये अर्थ। **मायामुख–गुरु प्रताप जिन्हें ये** महावाक्यका विचार जैसा वेदान्तके प्रमाणसे भाखा, सो जो कोई साधन चतुष्टय संपन्न जीव होते हैं, सो अनुभव पावते हैं। ये अर्थ। **गुरुमुख**–अनंत कोटि मन हीरा बेधो, फिटकी माल न पाई हो।

अरे अनंत कोटि ऋषी औ अनंत कोटि वेदनका सिद्धांत, ताको मानके हीरा जीव वेधा। सो ऐसा उतर गया जीव यह कि, फिटकीका मोल भी न पाया। जैसा पत्थर शालिग्राम आदिका माहात्म्य है, वह माहात्म्यभी इस जीवका नहीं हुआ। ये अर्थ। मायामुख–सुर, नर, मुनि जा अनुभवके खोजमें परे हैं, सो कछु-कछु कबीरन मुमुक्षु जीवने पाया। ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति। ये अर्थ ॥ १० ॥

कहरा ११.

ननदी गे तैं विषम सोहागिनि। तै नींदले संसारा गे ॥
आवत देखि मैं एक संग सूती। तैं औ खसम हमारा गे ॥
मोरे बापके दुइ मेहररुवा। मैं अरु मोर जेठानी गे ॥
जब हम रहलि रसिकके जगमें। तबहिं बात जग जानी गे ॥
माई मोरि मुवलि पिताके संगे। सग रचि मुवल संघाती गे ॥
आपुहि मुवलि और ले मुवली। लोग कुटुम्ब संग साथी गे ॥
जौं लौं श्वास रहैं घट भीतर। तौंलौं कुशल परी हैं गे ॥
कहहिं कबीर जब श्वास निकरिगो। मंदिर अनल जरीहैं गे ॥ ११ ॥

टीका जीवमुख–ननदी कहिये जाका प्रेम परमात्मामें दृढ़ होय। सो योगी जनके पास जायके जीव प्रशंसा करने लगे कि, हे योगीजन! तुम बड़े विषम वैराग, तितिक्षायुक्त पिया परमात्माके प्यारे हो। सो अपने खाविन्दके संगही संसारमें सोते हो। संसार सब परम दुःखी है। तुम परमात्माके संग बड़ा सुख भोगते हो, समाधिस्थ रहते हो। आवत देखि मैं एक संग सूती, तैं औ खसम हमारा गे। हे योगेश्वर महाराज! जब-जब हम आपके दर्शनको आये, तब-तब परमात्मा हमारा खसम; उनमें आपको मिले ही देखा, कबहूँ न्यारा नहीं देखा, सदा समाधिस्थ देखा। ये अर्थ। मोरे बापके दुई मेहररुवा, मैं अरु मोर जेठानी गे। अब जीव पहिले योगेश्वरकी प्रशंसा करके फिर अपनी प्रशंसा करता है कि, मोरे बाप परमात्मा,

ताकी हम दुइ मेहररुआ-मैं अरु मोरे गुरु। हम दोऊ परमात्माके भक्त। ये अर्थ। भला ये तो सही कि जीवने परमात्माको पिता कहा और अपने अंश भाव लिया। औ खसम कहा, तो भक्ती भाव लिया। पर जेठानी गुरुको कहा कौन भावसे ? ये शंका। तो अपने खाविन्दका बड़ा भाई, ताकी स्त्री जेठानी। तो ब्रह्मा बड़ा भाई औ विष्णु छोटा भाई। सो हमारे गुरु ब्रह्माके भक्त वेदांती, ब्रह्मा कहिये जेठा। औ हम विष्णुके भक्त, ताते हमारे खाविन्द विष्णु। हम विष्णुकी स्त्री औ हमारा गुरु ब्रह्माका भक्त, ब्रह्माकी स्त्री; ताते जेठानी। परंतु वह ब्रह्माकी आज्ञा प्रमाण ब्रह्महीमें लीन औ हम विष्णुकी आज्ञा प्रमाण ब्रह्महीमें लीन। तो दोनों पारब्रह्मकी कला दुइ-मैं औ मेरे गुरु। ये अर्थ। जब हम रहलि रसिकके जगमें, तबहिं बात जग जानी गे। येही योगेश्वर, रसिक कहिये, जो कि सब रसका लेनेवाला, सोई परमात्मा ताहीसे सब जग उत्पन्न भया। सो जब हम जगत् में थे, संसारमें; तब बात जगत् ने जानी कि भाई ! ये भगवत भक्त बड़े हैं। सो अब तो तुम्हारी कृपासे परमात्मामें लीन हैं। जगत् नहीं भासता। सदा परमात्मा भासता है। औ माई मोर मुवलि पिताके संगे, सरा रचि मुवल संघाती गे। अब हमारी माया मर गई। हम निर्मोह हो गये। जो हमारी अहं वृत्ति थी, सो ब्रह्ममें लीन हो गई, योगी लोगनके संग सरा रची। यम, नियम, संयम, प्राणायाम,प्रत्याहार, अनेक प्रकारके आसन, अनेक प्रकारके मुद्रा; इनका सरा रचा औ ब्रह्माग्नी उदगार करके ब्रह्माके संग विषय वृत्ति जरके भस्म हो गई आपही माया मरी औ जेते मायाके संग साथी थे-काम, क्रोध, मोह आदिक सबको लेके वृत्ति योगाग्नीमें भस्म भई। संग साथी-चौदह देवता, पंच विषय, अंतःकरण पंचक औ चार शक्ति, चार अभिमान, चार अवस्था, दश इंद्रिय आदि सब लोग-कुटुंब संग साथिन सहित योगाग्नीमें वृत्ति जरके भस्म भई। ये अर्थ। अब पूर्ण सच्चिदानंद अनुभव भरा है,

दूसरा कछु नहीं । इस प्रकारसे गुरुवा लोगोंके पास जीवनने अपना अनुभव कहा, तब योगी लोग परस्पर बहुत खुशी भये । ये अर्थ । परन्तु जब गुरु क्या कहते हैं ? सो सुनो-**गुरुमुख**-जौलों श्वास रहै घट भीतर, तौलों कुशल परी हैं गे । जबलग श्वास घट भीतर है, तबलग इनके योगकी कुशल है । पर जब श्वास घट छोड़के निकर जायगा, तब देह तो अग्नीमें जर जायगा औ इनकी योग समाधी कहाँ रहेगी ? अरे देह विना योगकी स्थिति कहाँ है ? औ ऋद्धि सिद्धि कहाँ रहेगी ? सब नाश हो जायगी । फिर जीवकी कौन दशा होयगी ? तो इनका योग समाधी सब नास्ती । ये अर्थ ॥ ११ ॥

कहरा १२.

ई माया रघुनाथकी बौरी ! खेलन चली अहेरा हो ॥
चतुर चिकनिया चुनि-चुनि मारे । कोई न राखेउ न्यारा हो ॥
मौनी बीर दिगंबर मारे । ध्यान धरंते योगी हो ॥
जंगल में के जंगम मारे । माया किनहु न भोगी हो ॥
वेद पढ़ंते वेदुवा मारे । पुजा करंते स्वामी हो ॥
अर्थ बिचारत पंडित मारे । बाँधेउ सकल लगामी हो ॥
श्रृङ्गीऋषी बन भीतर मारे । शिर ब्रह्माका फोरी हो ॥
नाथ मछन्दर चले पीठि दै । सिंगलहूँमें बोरी हो ॥
साकटके घर करता धरता । हरि भक्तोंके चेरी हो ॥
कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो । ज्यों आवै त्यों फेरी हो ॥

टीका गुरुमुख-ई माया कल्पना, ई माया बानी, ई माया भक्ती-ज्ञान औ योग, ई माया गुरुवालोग, ई माया स्त्री, ई माया काया, रघु कहिये इन्द्री, तिनका नाथ मन सो रघुनाथ । ता मनका स्वरूप माया काया बौरी, सो खेलन चली अहेरा । सो अहेर खेलने

चली, शिकार खेलने चली जीवनपर । ये अर्थ । सो चतुर चिकनिया ज्ञानी योगी सबनको कल्पनाने, बानी ने, गुरुवा लोगोंने, स्त्रीने चुनि-चुनि मारे । कोई बचने नहीं पाया ई मायासे । ये अर्थ । कोई कहेगा कि, देहकी विस्मृती की, फिर माया क्या करती है ? तो बड़े-बड़े देहकी विस्मृति करनेवालेको छला मायाने, सो सुनोः—बड़े-बड़े मौनी शिवादि, नारदादि औ बड़े-बड़े वीर-अर्जुनादि, रामचन्द्रादि औ दिगम्बर-शुकादि, दत्तात्रेय आदि, ध्यानी-योगी गोरखसे, जंगलमें तपस्या करनेवाले—विश्वामित्र कर्दमसे; पर मायाके वश होके जहँड़ाये । तिनको पारखकी प्राप्ती मायाने होने न दी औ मायाका भोग भी करने नहीं पाये । ये अर्थ । ब्रह्मा ऐसा बेदुवा मारे औ बड़े-बड़े पूजा करनेवाले स्वामी मारे गये औ बड़े-बड़े अर्थ विचारनेवाले पंडित मारे गये । माया सबको संशयकी लगाम बाँधो । ये अर्थ । श्रृंगीऋषी ऐसे देहकी विस्मृत्ती करनेवाले, जो आरण्यमें रहते थे । कबहूँ मानुष जातिका दर्शन भी जिनको नहीं, एक पिता छोड़के; तिनको माया बाँधिके दशरथके यज्ञमें ले आई । साठ हजार वर्ष विश्वामित्रने लोहेके चनेके आधारपर तपस्या किया, तिनको कुत्तेके माफिक इंद्रलोकको ले गई । औ दक्षप्रजापतीके यहाँ जब शिवका विवाह भया, तब ब्रह्माका शिर फोरवाया मायाने । तो देखो, ये अनादि सिद्ध योगी ! क्या कायाकी विस्मृत्ती न कर सकते थे ? पर इनको भी मायाने भरमाया । अरे देखो, मायाकी कैसी फाँसी है ? एक भग, दूसर बोलब, तीसर देखब, चौथे चलब, पाँचवा आलिंगन देब । अब झीनी मायाकी फाँसी—एक भक्ती, दूसर योग, तीसर ज्ञान, चौथे उपासना, पाँचवा कर्म । मायाके रूप दो—एक गुरुवा दूसरे स्त्री । तब ये दशविधी फाँससे जीव कैसे बचे ? भला कोई देहमें वृत्ति लय किया चाहै, तो झाँई रूप होके मारे । ये अर्थ । कोई साकट शाक्त

आदि प्रपंचीके यहाँ हर्ता-कर्ता औ हरिभक्त ज्ञानी, योगीके यहाँ चेरी, लौंडी होके माया जीवको फसावती है । ताते गुरु कहते हैं कि, सदा पारख पर आरूढ़ रहना और कवनेउ भाव माया स्त्री आवै, तो ताको परखके पीछे फिराना, कबहूँ गाफिल न होना । ये अर्थ ॥ १२ ॥

ककार केवल ब्रह्म; ऐसी जीवमें कल्पना उठी, सो कहरामें जीव परा । सो कहरको हरनेके वास्ते गुरु कहरा बोले । कहरको हरे सो कहरा । ये अर्थ । अब आगे योगी जनका भ्रम बतावेंगे ।

॥ इति कहरा टीकासहित गुरुकी दयासे संपूर्ण ॥

दया गुरुकी

अथ बसन्त लिख्यते

★

बसंत १.

जाके बारह मास बसंत होय । ताके परमारथ बूझे बिरला कोय॥
बरसै अगिन अखंड धार । हरियर भौ बन अठारह भार ॥
पनिया आदर धरिन लोय । पवन गहै कस मलिन धोय ॥
बिनु तरिवर फूले आकाश । शिव बिरंचि तहाँ लेई बास ॥
सनकादिक भूले भँवर बोय । लख चौरासी जोइन जोय ॥
जो तोहि सतगुरु सत्त लखाव । ताते न छूटे चरण भाव ॥
अमर लोक फल लावै चाव । कहहिं कबीर बूझे सो पाव ॥१॥

टीका गुरुमुख—जाके बारह मास बसंत होय, ताके परमारथ बूझै बिरला कोय । बसंत कहिये पुरानी छाल, पुराने पत्र वृक्षनके झर जाँय औ नवीन छाल, नवीन पत्र वृक्षनको प्राप्त होय औ वृक्ष प्रफुल्लित होय औ वृक्षमें नवीनता पैदा होय, सो बसंत ऋतु । ऐसी बसंत ऋतु वृक्षनकी वर्षमें एक बार होती है औ जीवनकी बसंत ऋतु बारह मास होती है । बारह मास पुराने चोले छोड़ते हैं औ बारह मास नवीन चोले उत्पन्न होते हैं । औ बारह मास पुराने ब्यौहार झरते हैं औ बारह मास नवीन ब्यौहार होते हैं । औ बारह मास युवा अवस्था आयके काम कमल प्रफुल्लित होते हैं । तो तरुण अवस्था, सोई बसन्त । ये अर्थ । अब जीवका प्रपंचरूपी बसंत तो हुआ । किसीने प्रपंच छोड़के परमार्थ अनुमान किया, सो बसंत बूझो । एक अनुमान खड़ा किया कि, कोई एक ब्रह्म है । सो अखंड धार विरह बरसने लगा औ जीव परम तापमें तपा । औ हरियर भौ बन अठारह भार । चार वर्ण, चार आश्रम, छौ दर्शन, चार संप्रदाय,

ये अठारह भाव सबको हरीकी यारी भई। भगवत प्राप्तिकी इच्छा भई। ये अर्थ। ताहि हरीके चरित्र अठारह पुराण भये। कोई एक गुसैंया है, ऐसी बानी सबनने अन्तःकरणमें धारण की। पनिया कहिये बानी। ये अर्थ। पवन गहै कसमलिन धोय। कसमलिन नाना विषय वासना छोड़के पवन गहने लगे। योग धारणा करने लगे, तब वसंत ऋतु आई। रेचक पूरक कुम्भक करके त्रिविध पवन चलने लगी-शीतल, मंद, सुगंध। शीतल चन्द्र, मंद सूर्य, सुगंध सुषुमना। तब उन्मनी नाड़ीमें ध्यान लगा औ बिना तरुवर आकाशमें नाना रंगके फूल मालूम होने लगे; जा फुलवारीमें शिव विरंचीका मन अटका औ जा फूलनकी बासमें सनकादिक भूले। जैसा कमलकी बासमें भौंरा मस्त हुवा और वहीं रहा। तैसे सनकादिक वह सहस्र दलमें लुब्ध होके वहीं रहे, देहकी विस्मृति किये। तहाँ ये जीव भी ध्यान लगायके लुब्ध हुए। सन्मुखी मुद्रा सब इन्द्री मूँदके लगाई।

कवित्त–फूले गुलाब टेसू आमहूके मौर फूले, चम्पा चमेली बेली नानाकार छाई है॥ कामराज झूलत सोई होत लहर घटमें, कोकिला कलोल शब्द विविधि विधि सुनाई है॥ उठन लागे छवो राग नाना कार रग जाग, किंगरी सितार बीन श्रवननमें आई है॥ पूरण बसंत आय कंतहूके दरश पाय, बारह मास याही भाय योगिन जो गाई है॥१॥

ये परमार्थ जीवनको दृढ़ाया, जामें बड़े-बड़े परमार्थी जीव फँसे। सो दोनों वसंत जीवको भरमानेवाले,गाफिल करनेवाले जीवका धोखा;ये बूझके कोई बिरला न्यारा होयगा। अब माया क्या कहती है? सो सुनो। **मायामुख**–जो तोहि सतगुरु! सत लखाव, ताते न छूटे चरण भाव। जो तेरेको सतगुरु! योगी जनने लखाया योग मुद्रा, सोई परमात्माका रूप सत्य है। ताके चरणारविन्दसे भाव न छूटे,जासे अमर-लोक फल तेरेको प्राप्त होय। अरे अमरलोकमें ब्रह्मरसके फल हैं। सुर नर मुनि जाकी चाह करते हैं, सो कोई योगीजन सिद्ध, उनकी कृपासे

बूझता है, सोई पावता है ब्रह्म स्थिति । इस प्रकार गुरुवा लोग दृढ़ावते हैं और जीव दृढ़ होते हैं । ताते यथार्थ पारख सबको नहीं मिलती । ये अर्थ ॥ १ ॥

बसंत २.

रसना पढ़ि लेहु श्रीबसंत । बहुरि जाय परिबेहु यमके फन्द॥
मेरु डंडपर डंक दीन्ह । अष्ट कँवल परचारि लीन्ह ॥
ब्रह्म अगिन कियो परकाश । अर्ध-ऊर्ध तहाँ बहै बतास ॥
नौ नारी परिमल सो गाँव । सखी पाँच तहाँ देखन धाव ॥
अनहद बाजा रहल पूर । तहाँ पुरुष बहत्तर खेलैं धूर ॥
माया देखि कस रह्यो है भूलि । जस वनस्पति रही है फूलि ॥
कहहिं कबीर यह हरि के दास । फगुवा मांगे वैकुण्ठ बास ॥२॥

टीका मायामुख–श्री बसन्त कहिये सच्चिदानन्द आत्मा, ताको अनुभव योगशास्त्रसे पढ़िके साध लेवे; नहीं तो यमके फंदमें फिर जायके परोगे । अरे सब इंद्रिनको साधो, नहीं तो नरकमें जावोगे । इस प्रकारसे भय बतायके श्री वसन्त योग दृढ़ कर दिया, तब जीव योगी लोगोंके शरणमें गये । तब योगी लोगोंने शांभवी मुद्राका उपदेश दिया। मेरुडंड पर डंक दीन्ह । मेरुडंड कहिये नासिकाग्र, तहाँ बद्ध पद्मासन युक्ति दृष्टि लगाई । पहिले एकांत जगहमें उत्तराभिमुख सवा हाथका आसन लगाया । ता ऊपर बैठके पहिले बाँये पाँव पर सीधा पाँव औ सीधे पाँवपर बायाँ पाँव रखना । पीछेसे हाथ लायके सीधे हाथसे सीधे पाँवका अँगूठा पकड़ना औ बायें हाथसे बायें पाँवका अँगूठा पकड़ना । डाढ़ी कंठमें लगाना, दृष्टि नाकपर लगाना । लक्ष नाभीमें लगाया श्वासाके संग । या योगको अमनस्क योग कहिये, सो करते-करते अष्ट कमल परचार द्वादश कमलमें लीन हुआ । ये अर्थ । ब्रह्म अग्नि कियो परकाश । अर्ध-ऊर्ध तहाँ बहै बतास । प्रथम त्राहट क्रिया करके ब्रह्म अग्नी प्रकाश किया । ता पाछे धारना लगाया । सो अर्धसे ऊर्ध करके

मनके निमेंसे पवन बहने लगी । नौ नारी परिमल सो गाँव । नौ नाड़ी आयके सुषुमना के घरमें मिली । परिमल गाँव कहिये सुषुमना । औ सखी पाँच कहिये प्राण, अपान, समान, ब्यान, उदान; ये संपूर्ण नाभिस्थानमें मिलके ब्रह्माण्डमें परब्रह्म पुरुषको देखने चले । तब अनहद बाजा रहल पूर । औ बहत्तर कोठासे वायु सब इकट्ठी होके ब्रह्मांडमें चली, तब नाना प्रकारका अनहद नाद उठने लगा औ जीव ब्रह्मानंदमें मग्न हुवा; तो आवागमनसे रहित हुवा । ऐसा योग सुख छोड़के संसारके जीव माया देखके कैसे भूल रहे हैं ? जैसी वनस्पती फूल रही है । मायाका उपदेश-अरे तुम विषय, घर, स्त्रीके स्वादमें भूले हो । परन्तु ये सब वनस्पतीके माफिक झर जायँगे, फिर तुम बहुत दुःख पावोगे । तो तुम भोग छोड़के योग करो, तबहीं तुम्हारी कुशल होवेगी, नहीं तो मनुष्य जन्म पायके नरकमें जावोगे। अरे देखो, ये विषय भोगनमें कुशल होता; तो गोपीचन्द, भरथरी संपूर्ण राज, स्त्री छोड़-छोड़ योग क्यों लेते ? ताते तुम माया देखके भूलो मत औ बनस्पतीके ऐसे फूलो मत; योग साधो । ये अर्थ ।

जीवमुख-तब जीव सब संसारसे त्रास खाके भगवानकी स्तुती करने लगे कि, हे दासनके दास ! भक्तवत्सल भगवान् ! हम तेरी शरणमें आये। अब हमको शरणमें आनेका फल देना । वैकुण्ठ बास परमधामको बास देना। जहाँ चन्द्र नहीं, सूर्य नहीं, अग्नि नहीं औ जहाँ जायके ये जीव फिर संसारमें नहीं आता, सो बैकुंठवास देना । ये अर्थ ॥ २ ॥

बसंत ३.

मैं आयों मेस्तर मिलन तोहि । ऋतु बसंत पहिरावहु मोहि ॥
लंबी पुरिया पाई छीन । सूत पुराना खूटा तीन ॥
शर लागै तेहि तीनसै साठ । कसनि बहत्तर लागु गाँठ ॥
खुर-खुर खुर-खुर चालै नारि । बैठि जोलाहिन पलथी मारि॥
ऊपर नचनियाँ करत कोड़ । करिगहमा दुइ चलत गोड़ ॥

पाँच पचीसों दशहूँ द्वार । सखी पाँच तहाँ रची धमार॥
रंगि बिरंगी पहिरे चीर ।हरिके चरण धै गावैं कबीर॥३॥

टीका जीवमुख–जीव बोलता है योगी लोगोंकी शरण में जाके कि, हे मेस्तर ! हे गुरु ! मैं तेरे चरणारविन्दमें मिलनेके वास्ते आया, सो ऋतु बसंत पहिराव मेरेको। ऐसी कृपा करो कि, तुम्हारे चरणारविंदका प्रेम लगे औ योग मार्ग मेरेको उपदेश करो। ऋतु बसन्त कहिये योगमार्ग । ये अर्थ । गुरुमुख–लम्बी पुरिया कहिये लम्बी वासना–सातस्वर्ग, अपवर्ग, आदिककी । सो वासना बंध होके ये जीवकी पाई भई । पाई कहिये पाँजनी, पाँजनी कहिये आवागमन, तामें जीव छीन हुवा । स्वर्ग आदिककी वासना करके नाना यज्ञादिक कर्म आचरणादिक भक्ती करते हैं । फिर स्वर्गको जाते हैं औ पुण्य क्षीण हुवा, तब संसारमें आते हैं । फिर नाना कर्म करके जाते-आते हैं । यह पाईमें जीव छीन, ज्ञानहीन होते हैं । और जीवके बीचमें एक लम्बी कल्पना बढ़ी कि, हम ब्रह्ममें मिलैं । तब गुरुवा लोगोंकी शरणमें गया । तब गुरुवा लोगोंने ब्रह्मसमाधी उपदेश किया कि, बद्ध पद्मासन लगायके श्वासमें सुरति पूर्वोक्त लगाना । श्वासोच्छ्वास सोहं हंसो यह जाप करना । तब शिष्य सब मिलिके पाई करने लगे, पांजनी करने लगे । श्वासोच्छ्वास करते-करते पवन छीन भई, स्तब्ध भई, तब सूत पुराना जीव; सो तीन खुटेमें अरुझा । रजोगुण त्रिकुटी स्थान छोड़ा औ सतोगुण, तमोगुण, शुद्ध सतोगुण; ये तीन खूटेमें अरुझा लपटा । कंठसे नाभीतक पांजनी होने लगी । ये अर्थ । औ सूत पुराना कहिये जीव, सो तीन खूटेमें बंधा-भक्ती, ज्ञान औ योग, तत त्वं असि। रजोगुणके खूटेमें भक्त अरुझा । तमोगुणके खूटेमें योगी अरुझा । सतोगुणके खूटेमें ज्ञानी अरुझा । विज्ञानी तत्त्वमसीके खूटेमें अरुझा । शर लागे तेहि तीनसैं साठ । तेहि तीन खूटा आहुटपीट गोलहाट-श्रीहट, ये ही तीनसै खूटेका तीनसै साठ शर लागे, तीनसै साठ हाड़ लगे; ताते तीन

खूटा खड़ा भया औ बहत्तर कसनी लगी । सो बहत्तर हजार नाड़ीमें सब हाड़ कसे गये औ बहत्तर गाँठी लगी । तामें सब नाड़िनका मुख्य एक गाँठ नाभीमें लगी । तहाँते इंगला, पिंगला,सुषुमना तीन नाड़ी भई । सो खुरखुर-खुरखुर तीनों नाड़ी चलने लगीं । तब बैठि जोलाहिन पलथि मारि । जोलाहिन कहिये सुषुमना, सो श्रीहट औ गोलूहाट दोनों खूटा छोड़के अहुटपीटमें सुषुमना नाड़ी बैठ गई । तब ऊपर नचनियाँ करत कोड़ । ऊपर ब्रह्मांडमें नचनियाँ आँखि चढ़ी औ कारिगह नाभी, तामें 'सोहं' ये दोनों गोड़ चलने लगे । तब पाँच तत्त्व औ पचीस प्रकृती संयुक्त दशों द्वारसे पवन एकट्ठा हुआ । तब सखी पाँच तहाँ रची धमार । पाँच सखी कहिये पाँच इंद्री, सो कानमेंसे अनहद शब्द उठा औ नाकमेंसे त्रिवेणी धारा बही । त्वचामेंसे आनंद उठा, जिभ्यामेंसे रस उठा औ आँखमेंसे नाना रंग रूप उठा । औ संपूर्ण लय होके मन उन्मुन हुआ, सो नाना प्रकारके भेष जीव बनाने लगे । रंगी बिरंगी चीर पहरने लगे । रंगी नाम जीवका सो बिरंगी भये । कहूँ योगी भये, कहूँ जंगम भये, कहूँ संन्यासी भये, कहूँ सेवड़ा भये, कहूँ दरवेश भये, कहूँ ब्राह्मण भये औ भगवे वस्त्र पहिरने लगे । कोई कारे कपड़े पहिरने लगे, कोई कंथा गुदरी पहिरने लगे कोई हरे कपड़े पहिरने लगे, कोई कम्मल सोहले पहिरने लगे । औ हरी कहिये गुरुवालोग; सो तिनके चरण धरके कहैं कबीर । कबीर कहिये जीवको, सो गुरुवा लोगोंके चरण धरके, नाना भेष धारण करके भक्ती, ज्ञान, योग, कर्म, उपासना एकको एक कहने लगे । ये अर्थ ।

विरह अर्थ—यहाँ तक जीव जा प्रकारसे झीनी मायामें अरुझे, सो परखाया गुरुने । अब मोटी मायाको परखाते हैं सो सुनो—मैं आयों मेस्तर मिलन तोहि । ये जीव कामके वश होके उन्मत्त भये, तब स्त्रीकी चाह की । फिर स्त्रीके नगीच जायके क्या कहते हैं ? कि—हे मेस्तर ! हे प्रिये ! मैं तेरेसे मिलनेके वास्ते, भोग करनेके वास्ते आया । अब

ऋतु वसंत कहिये ज्वानी ऋतु, सो मेरेको प्रीतिसे सब विलासी वचन औ तेरा विलास पहिरावनी दे; जाते मेरा मन प्रसन्न होय। तब लंबी पुरिया विषय बासना बढ़ी औ नाना प्रकार कामके लहरी चुंबन आसनादि करने लगे। नारी विषयमें जीव तल्लीन भये, चौरासीके तानी में अरुझे; ताते पाई करने लगे। आवागवनमें परे औ छीन भये। अपना ऐश्वर्य, तेज, पराक्रम औ सत्ता संपूर्ण छीन हुई। अरे देखो; येही जीव जाने इच्छामात्रसे संपूर्ण सृष्टी रचना की, ताको खाने पीनेकी कपड़ेकी विपत्ति होती है। ऐसा ये स्त्रीके संगमें छीन हुआ औ पाई करने लगा, मैथुन करने लगा; आवागवनमें परा। ये अर्थ। सूत पुराना खूटा तीन। सो देखो, ये जीव पुरान पुरुष, सो तीन खूटेमें बंधा पशुवत्। स्त्री-पुत्र-धन, ये तीन खूटामें अरुझा; ताहीते बार-बार देह धरता है औ बार-बार स्त्रीके फंदेमें रहता है, चाहे कोई योनीमें जाय। अरे जा स्त्रीके फंदेमें तू परा है औ महा नरक गर्भवासका दुःख सहता है, सो स्त्री कौन अति उत्तम है ? तू बूझ। शर लागे तेहि तीनसे साठ। तीनसै साठ हाड़ोंकी झोपड़ी औ बहत्तर हजार बंदसे कसी गई। जो बहत्तर गाँठी परी सोई बहत्तर कोठे औ बंद नाड़ी, ताके भीतर खुरखुर-खुरखुर पवन चलती है औ हाड़नपर रक्त माससे लीपि है, ता ऊपर चामसे मढ़ी है। ऊपर घाससे रोवाँ भुर-भुर करते हैं। भीतर लार, मूत, गू, पित्त, कफ भरा है। अरे नारी है कि ? डाकिनी कि ? जीवका बिजुका कि ? पारधी कि ? फाँसी कि ? खुशीका कैदखाना ?। तू कौन अति उत्तम वस्तु देखके रीझा ?। तो विचारके देख भाई ! अरे पलथी मारके बैठती है, ऊपर आँखिनकी सैन चलावती है, तरे ठमक पाँव डारती है, मनसे संकल्प विकल्प करती है। भीतर एक पुरुष वश किया है, दूसरे-पर नजर रखती है। एकसे बातें करती है, दूसरेपर चित्त चलावती है। एककी नारी कहावती है, दूसरा अच्छा नजरमें आया; उसे धावती है। मैथुन औ द्रव्य दोऊ चाहती है। परंतु पाँच तत्त्व पचीस प्रकृति सहित

ये नारि बलाय जीवनको फाँसने खड़ी भई। अरे काम भक्षिनी या नारीका नाम है। तू हुशियार रहना, नहीं तो दो मुखकी बाघिन तेरेको खा लेगी। ऊपरके मुँहसे रिझायके तरेके मुखसे खा लेगी। अरे दशहूँ द्वारमें नर्क भरा है; परंतु विषइन बावरेको 'अमृत' ऐसा मालूम परता है। तामें एक महाधार बड़ा बाँका है। तहाँ मूत्र बार-बार बहता है औ ता धारमें जो गया, सो फिर लौटा नहीं। बड़े-बड़े वा धारमें गर्द भये, बाँचे सोई सूर। औ जहाँ पाँचो इंद्री धमार रची है, जा धमारमें ज्ञानिनका ज्ञान औ ध्यानिनका ध्यान औ योगिनका योग भूल जाता है।

कवित्त—नेत्रनके कटाक्ष सो तो तीर ऐसे लागत आये, बेसरकी मोड़ जैसे नागिनिसि धाई है। काननके झोंक सो तो डारत धोख जीवको, त्वचाकी शोभा तड़ित आँखिनपर छाई है। जीभनकी बातें करन चाहत जीव घातें, देखि सुर नर मुनि माते सो जीवनको भाई है। भाँति- भाँति वस्त्र धारे काहु टरत नाहिं टारे, सकल जीव जारि-मारे पूर्ण घटा उरमाई है॥ १॥

हरिके चरण धै गावैं कबीर!। हरी कहिये स्त्रीको, जाने सबनका मन हर लिया। जीव कामवश होके ताहीके चरणमें परे औ नाना प्रकारके श्रृङ्गार देख वही स्त्रीकी बड़ाई गावने लगे। परन्तु ये सिंगार संपूर्ण जीवनको बन्धन है। सो यथार्थ परखके छोड़ो। ये अभिप्राय॥३॥

बसंत ४.

बुढ़िया हँसि बोली मैं नितहिं बार। मोसे तरुणि कहो कवनि नार॥
दाँत गये मोर पान खात। केश गये मोर गंगा नहात॥
नैन गये मोर कजरा देत। बैंस गई पर पुरुष लेत॥
जान पुरुषवा मोर अहार। अनजानेका करों सिंगार॥
कहहिं कबीर बुढ़िया आनंद गाय। पूत भ्रतारहि बैठी खाय॥४॥

टीका मायामुख—बुढ़िया कहिये मायाको, सो माया दो प्रकारकी-झीनी औ मोटी। झीनी माया गुरुवा औ वेद, औ मोटी माया स्त्री;

ताका हाँस बचन गुरुं बताते हैं । यह तृष्णा देखो–नित ही बारि, जो अनेकन देह जीवने धारण किया औ अनेक बुढ़ायके छूट गई । परन्तु जब-जब चोला पैदा हुवा तब-तब तृष्णा नितही बारि । देह बुढ़ाय जाती है, तृष्णा नहीं बुढ़ाती । ताते तृष्णा कहती है कि, मोसे तरुणि कहु कौन नारी ? जो संपूर्ण स्त्रियाँ ज्वानसे बूढ़ी होती हैं, पर कहती हैं कि, मैं नहीं बुढ़ाती । ये अर्थ । अरे भाई ! गुरुवा लोग तृष्णाके मारे जीवनको बाँधते हैं कि, जामें हमारी प्रतिष्ठा होय औ हमारा नाम बढ़े, पंथ चले, चेला चाटी बहुत होयँ, द्रव्य बहुत मिले । ताके हेत मारे-मारे फिरते हैं औ नाना बानी विद्या, मंत्र-तंत्र दृढ़ावते हैं । देह बुढ़ाय गई, पर तृष्णा तरुण ललकारी मारती है । तैसे स्त्री तो बुढ़ाय जाती है औ इन्द्री भी थक जाती है, पर तृष्णा विषयकी ललकारी मारती है । ये अर्थ । दाँत गये मोर पान खात । अब गुरुवा लोग बोलते हैं कि, हम नित्य ब्रह्म हैं औ जगत् सब अनित्य है । हम पुराण पुरुष औ हमसे तरुण ज्ञानी । जगको तारनेवाले और कौन भक्त हैं ? । ये अर्थ । अरे पान कहिये बेद; सो बेद पढ़ते-पढ़ते हमारे दाँत गये, संकल्प सब छूट गये । और केश कहिये पाप, सो गंगादिक तीर्थ नहाते-नहाते सब पाप गये । और नयन गये मोरे मुद्रा करते-करते । औ बैंस ज्वानीमें साधन समाधी साधी, सो पर पुरुष कहिये जो पराके पार है; तामें लीन होके निर्विकल्प दशामें बैंस गई । जिन्ह सतपुरुष परब्रह्मको अपरोक्ष करके जाना, सो पुरुष मेरा स्वरूप है औ अनजाने जो जीव हैं, तिनको ब्रह्म अनुभव अपरोक्ष जनानेको नाना प्रकारके भेष शृंगार करते हैं । ये अर्थ । गुरुमुख–कहहिं कबीर बुढ़िया गुरुवा लोग सच्चिदानन्दको गावते हैं औ भेष धारण करते हैं । पूत भतारको बैठे खाते हैं । भतार कहिये ब्रह्म, पूत कहिये जीव । सो जीव था, सो ब्रह्म हुवा और ब्रह्म था, सो जीव हुवा । तब पूत भतार कहिये जीवको । सो गुरुवालोग जीवको बैठे खाते,

है, भरमाते हैं । ये अर्थ । विरह अर्थ–ये माया स्त्री जाने ब्रह्मा, विष्णु आदि सबको पैदा किया; ऐसी बुढ़िया, सो बोलती है कि, मैं नितहि बारि । जा स्त्रीसे पूछो सो कहती है कि, मोसे तरुणी और कोई नारी नहीं । दाँत गये मोरे पान खात । पान कहिये ज्वानी, दाँत कहिये इन्द्री । सो इन्द्री शाँत हो गई, ज्वानी खाते खाते । औ केश कहिये काम । सो काम गये ब्रह्मांडमें गंगा नहात, शृंगार करत । अरे जो हमारे शृंगार रसको जानेगा, सो तो हमारे आहारमें आया, वश भया; परन्तु हमारे कामकी तृप्ति भई नहीं । ताते अजान पुरुष जीव तिनके वास्ते शृङ्गार करते हैं, अपने कामकी तृप्ति करनेके वास्ते । जान पुरुषवा कहिये ब्रह्मादिक मुनि, तिनका तो अहार किया और अब संसारके जीवनकी मति हरनेके वास्ते स्त्री रूप होके पैदा भई । सो गुरु कहते हैं कि, माया विषय शृङ्गार गावती है औ पूत भ्रतार जीवको खाती है, भरमाती है । ये अर्थ ॥ ४ ॥

बसंत ५.

तुम बुझ-बुझ पंडित कौनि नारि ! काहुन ब्याहलि है कुमारी । ॥
सब देवन मिलि हरही दीन्ह । चारिउ युग हरि संग लीन्ह॥
प्रथम पदमिनी रूप आहि । है साँपिनि ! जग खेदि खाहि॥
ई बर जोवत ऊ बर नाहिं । अतिरे तेज त्रिया रैनि ताहि ॥
कहहिं कबीर ये जग पियारि । अपने बलकवहि रहल मारि५॥

टीका गुरुमुख–हे पंडित बुद्धिमान् ! तुम बूझो कि, यह कौन नारी है ? जाने काहुको ब्याहा नहीं । ताते अनेक पुरुषनको भौं दिखाया, पर अभी कुमारी है । ये अर्थ । सब देवन मिलिके विष्णुहि दीन्ह । तहाँ लक्ष्मी होके बैठी । चारीउ युग विष्णुने संग लिया । सो प्रथम पद्मिनीरूप नाम लक्ष्मी होके विष्णुको छली । फिर नागिनी स्त्री रूप होके सब जगत्‌को चौरासीमें खेदी औ जगको खाने लगी । चार रूप धारण किया मायाने–पद्मिनी, चित्रिणी, हस्तिनी, शंखिनी औ

दो रूप मिलित हैं—नागिनी औ डंकिनी । जामें पद्मिनी औ चित्रिणी दो रूप मिलित लक्षण होय, सोई नागिनी । औ हस्तिनी औ शंखिनी दोनोंके मिलित लक्षण जामें होय, सोई डंकिनी । इस प्रकारसे छै रूप मायाने धारण किये । ताका विस्तार कोकशास्त्रमें बहुत कहनेवालेने कहा है । यहाँ कछु विस्तार किया नहीं कि, उसमें कछु हासिल नहीं ।, नाहक टीका क्यों बढ़ाना?स्त्री छै प्रकारकी । इनके पुरुष छै—पद्मिनीका पुरुष शशा, चित्रिणीका पुरुष मृगा, हस्तिनीका पुरुष बैल, शंखिनीका पुरुष गदहा, नागिनीका पुरुष तुरंग, डंकिनीका पुरुष भैंसा । इस प्रकारसे छै स्त्री औ छै पुरुष, सो अपने-अपने पुरुषोंको ढूँढ़ती हैं स्त्री । जा स्त्रीका पुरुष ताको मिला, तो काम पूरा भया । अगर वियोग मिला, तो अतिरे तेज त्रिय रैन ताहि । काम त्रियाको अति उग्र होता है, फिर वो स्त्रीका मन खाविंद पर लगता नहीं । ई बर जोवत ऊ बर नाहीं । ई अपना पुरुष ढूँढ़ती है । औ वो तो इसका पुरुष नहीं । तब महातेज होके त्रिया व्यभिचार करती हैं, काममें उन्मत्त हो जाती है । जबलग उसका पुरुष न मिले, तबलग उसका काम नहीं शाँत होता । सो गुरु कहते हैं कि देखो, ये जग पियारी । नारी जो अपने बालक सब पुरुष; तिनको मार रही है । अरे इस जीवने दो रूप धारण किया-एक नारी, एक पुरुष औ दोउ विधि मायामें अरुझा । माया कहिये काया । सो हे सन्तो ! बुद्धिमान् ! तुम परखके मत अरुझो । ये अभिप्राय । विरह अर्थ—तुम बुझ-बुझ पंडित कौनि नारि ? । हे बुद्धिमान् ! तुम बूझो ये कौन बानी है ? जाने काहूको ब्याहा नहीं । जैसी पैदा हुई, तैसी कुँवारी संसारमें बनी है । अरे इस बानीने बहुतेक जीवनकी लगन धोखेसे लगाई । पर वैसे ही बनी है वेद बानी, कल्पित बानी । ये अर्थ । सब ब्रह्मादिक देवतनने विष्णुको दिया वेद।सो चारों युग परयंत विष्णुने वेदका विचार किया । प्रथम भक्तीरूपी बानी पद्मिनी, दूसरी योगरूपी,

तीसरी ज्ञानरूपी; ये तीनों देवनने संसारमें दृढ़ाई। भक्तीरूपी विष्णुने दृढ़ाई। योगरूपी महादेवने दृढ़ाई। ज्ञानरूपी ब्रह्माने दृढ़ाई। इस प्रकार से ये बानी सर्पिनी होके सब जगत्‌को भ्रममें खेदने लगी औ भरमाने लगी। ता बानीका आसरा करके संसारके जीव सब—'कोई एक पुरुष है' ऐसा अनुमान करते हैं, पर ऊ बर नहीं। वो पुरुष कछुनहीं औ अति तेज बिरह तो ये जीवको हुआ; ताते दूसरा पुरुष अनुमान किया औ उसके बिरहमें जरने लगे। महा भ्रम अँधियारी छाई जीवन पर। ऐसे भक्तलोग संसारमें बड़े प्यारे श्रेष्ठ कहलाये। इनके शिष्य शाखा संसारमें होने लगे। सो ये आपही भ्रममें परे औ शिष्य शाखाको भी भरमाया। ये अर्थ॥ ५॥

बसंत ६.

माई मोर मनसा अतिरे सुजान। धन्धा कुटि-कुटि करत बिहान॥
बड़ी भोर उठि आँगन बाढु। बड़े खाँच ले गोबर काढु॥
बासी भात मनुसे लिहल खाय। बड़ो घैल लिये पानीको जाय॥
अपने सैयाँ की मैं बाँधुगि पाट। ले बेचूँगी हाटों हाट॥
कहहिं कबीर ये हरिके काज। जोइयाके ढिगरहि कौनि लाज६॥

टीका मायामुख—मनसा कहिये मन या मनसा कहिये जो कुछ माननेमें आवै। सो जो इष्टदेव या ब्रह्म जिसके माननेमें आया, सोई तिसका खाविंद भया। आप उसका भक्त नारीरूप बनके प्रशंसा करने लगा। ये अर्थ। धन्धा कूटि-कूटि करत बिहान। जैसा कोई धान कूटि-कूटिके शुद्ध चावल निकाल लेता है; तैसा भगवान् अपने भक्तनको दरिद्रताई औ नाना क्लेशनके मूसलसे कूटि-कूटि शुद्ध ज्ञान-रूप, आपरूप कर लेता है। अनेक जन्ममें नित्य-नैमित्तिक कर्म करके ईश्वरको अर्पण करता है जीव। सो उस जीवका ईश्वर ऋणी रहता है। सो उस जीवका ऋण उतारनेके वास्ते गुरुरूप होके औतार लेता है औ जीवको ज्ञान बताता है। औ कूटि—कूटि योग साधनामें

जीवका अज्ञान भूसा उड़ायके शुद्ध ज्ञानरूपी करता है; ताते बड़े सुजान। ये प्रशंसा। बड़ी भोर उठि आँगन बाढु, बड़े खाँचले गोबर काढु ! बड़े खाँच कहिये ब्रह्मरंध्र भ्रमरगुफाको लेके समाधी करी औ गोबर कहिये विषय, सो सब काढ़ि डारा, तब बड़ा ज्ञान उठा सच्चिदानंद अनुभव; ताते आँगन बाढु। संपूर्ण कर्म झारके उड़ाय दिया, शम-दम संपन्न हुये। ये अर्थ। बासी भात मनुसे लिहल खाय। बासी भात कहिये जगत्, सो जगत् सब खायके, लै करके, आप ही ब्रह्म हुये। ये अभिप्राय। बड़ो घैल लिये पानीको जाय। बड़ो घैल कहिये ब्रह्मांड। सो सब ब्रह्मांड अपने पेटमें लिये। ऐसे ईश्वर जीवका ऋण फेरनेके वास्ते गुरुरूप होके चौरासी हीन जीवनको कृतार्थ किया औ दुष्टनको नाश करके फिर क्षीर सागरमें जायके निवास किया। पानीको जाय। ये अर्थ। अपने सैंयाकी मैं बाँधूँगी पाट, ले बेचूँगी हाटो हाट। जीवमुख–जीव बोलता है कि, अपना सैयाँ ईश्वर, ताको अपने प्रेम भक्तीके जोरसे बाँधूँगा औ उसकी कीर्ती नाम सब बजारमें, हाटमे गुरुलोग साधु लोगोंकी संगतिमें बेचूँगा; या कोई शिष्य गाहक होयगा, उसे देऊँगा। ये अर्थ। गुरुमुख–कहहिं कबीर यह हरिके काज, जोइयाके ढिग रहि कौनि लाज। गुरु कहते हैं कि, हे संतो ! देखो. ये गुरुवा लोगोंकी बातें कि; जो अपना खाविंद बनाया, ताको प्रेमसे अनुमान बाँधा। फिर हाटो-हाट कथा, कीर्तनकी पोथी, पुराण बेचते फिरते हैं। अब इनके भक्तीकी कौन लाज। ये अर्थ ॥ ६ ॥

बसंत ७.

घरहिमें बाबुल बाढ़लि रारि। उठि-उठि लागलि चपल नारि॥
एक बड़ी जाके पाँच हाथ। पाँचोंके पचीस साथ ॥
पचीस बतावैं और-और। और बतावैं कइएक ठौर ॥
अन्तर मध्ये अन्त लेइ। झकझोरि-झोरा जीवहि देइ ॥
आपन-आपन चाहैं भोग। कहु कैसे कुशल परिहै योग ॥
बिबेक बिचार न करे कोय। सब खलक तमाशा देखे यलो॥

मुख फारि हँसे राव-रंक। ताते धरे न पावै एकौ अंक॥
नियरे न खोजे बतावैं दूर। चहुँ दिश बागुलि रहलि पूर॥
लक्ष अहेरी एक जीव। ताते पुकारे पीव ! पीव ! ॥
अब की बार जो होय चुकाव। कहहिं कबीर ताकी पूरि दाव७॥

टीका गुरुमुख—हे बाबू जीव ! तुम्हारे घटहीमें रार बढ़ी, जो हमेशा उठ-उठके चपल माया तेरे पीछे लगी है। माया कहिये, बानी कहिये, कल्पना कहिये, गुरुवा कहिये, आशा कहिये, तृष्णा कहिये, लोभ कहिये, मोह कहिये, काया कहिये; येतिक प्रकारकी माया और याके रूप अनेक हैं। सो महापरम चपल माया तेरे पीछे लगती है। इनमें मुख्य सबते बड़ी माया एक काया, जाके पाँच हाथ-पाँच तत्त्व और पाँचोंके पचीस साथ। आकाश पंचकः—अन्तःकरण, चित्त, मन, बुद्धी, अहंकार औ वायु पंचकः—प्राण, अपान, समान, व्यान, उदान। अग्नि पंचकः—आँखि, कान, नाक, जीभ, त्वचा। जल पंचकः—शब्द, स्पर्श; रूप, रस, गंध। पृथिवी पंचकः—हाथ, पाँव, मुख, गुदा, लिंग; ये पाँचोंके पचीस साथ। अब इनके पच्चीस विषयः—अन्तःकरणका विषय निर्विकल्प, मनका विषय संकल्प विकल्प, चित्तका विषय अनुसंधान, बुद्धीका विषय निश्चय, अहंकारका विषय करतूत, प्राणका विषय चलब, अपानका विषय छोड़ब, समानका विषय बैठब, उदानका विषय उठब, व्यानका विषय पौढ़ब, कानका विषय शब्द सुनब, आँखिका विषय देखब, नाकका विषय सूंघब, जीभका विषय बोलब, त्वचाका विषय स्पर्श, ये अग्निपंचक। अब जल पंचक;—शब्दका विषय राग सुर अर्थ, स्पर्शका विषय मृदुत्व-शीतलत्व-उष्णत्व, रूपका विषय सुन्दरत्व, रसका विषय स्वाद, गन्धका विषय सुबास सुप्रसन्नत्व। ये पचीस बतावैं और-और। येही पचीस विषयमें जीव बन्ध गया। ताते ये विषय और कई एक ठौर कहिये चौरासी लक्ष योनी जीवको बताते हैं। ये विषय कैसे हैं कि ? अन्तरमें गड़ जाते हैं।

फिर अन्तमें जीवको अपनेमें मिलायके चौरासीमें डारते हैं। औ झक-झोरी झोरा जीवही देय। ये विषय आवागमनका झोरा, धोखा जीवको देते हैं। ये अर्थ। ये सब पच्चीस कला आपन-आपन चाहैं भोग, तब कैसे करके जीव कल्यान पदके योग्य होयगा? इन बन्धनका विवेक विचार कोई करता नहीं कि, सत्य क्या है? औ झूठ क्या है?। सब खलक बानी विषयनका तमाशा देखता है, अरुझ रहा है। ये अर्थ। मुख फारिके सब ईश्वरादिक जीव एकका एक उपहास करते हैं ताते एकौ जीव स्थिति धरने न पाया, एकौ अंक जीवका निर्णय न भया। नियरे सत्सङ्गमें जीव खोजते नहीं औ दूरि योग उपासनावाले बताते हैं, सोई बानी चहुँ दिश पूर हो रही है। लक्ष अहेरी गुरुवा लोग। फाँदने-वाले; याने लाख तरहसे फाँसे बनाये, एक जीवको फाँसनेके वास्ते; ताते जीव सब पीव पीव पुकार रहे हैं! ये अर्थ। अबकी बार जो सब फन्दनको परख लेय औ चुकाव, छुटकाव हो जाय, पारख स्थिति हो जाय, तो गुरु कहते हैं कि, ताहि नरको पूरी दाव। ये अर्थ॥ ७॥

बसंत ८.

कर पल्लव केवल खेले नारि। पंडित होय सो लेय बिचारि॥
कपरा न पहिरै रहे उघारि।निर्जिव सो धनि अति रे पियारि॥
उलटी-पलटी बाजू तार। काहू मारै काहू उबार॥
कहहिं कबीर दासनके दास। काहू सुख दे काहू निरास॥८॥

टीका गुरुमुख—केवल नारी कहिये केवल आत्मा परमहंस, सो मूक दशा धारण करके कर पल्लव खेलते हैं। कछु बात कहना भई, तो अंगुरीके इशारासे बताते हैं कि; जो कोई चतुर पंडित होवेंगे, सो विचार लेवेंगे। कपरा पहिरते नहीं, नंगे फिरते हैं औ निर्जीव नाथ निरंजन; तामें अति प्रियतासे मिल गये। पतिव्रता जैसा अपना खाविन्द मरा, तो प्रीतिके मारे अपनी भी देह छोड़ती है। तद्वत् ये जीवनने सुना कि, अपना खाविन्द स्वेरूप है। तो अपनी भी देहकी

विस्मृती करना; ऐसा निश्चय करके बाल उन्मत्त-पिशाचवत् मूक होके घूमने लगे, जड़ होनेके लिये । ये अर्थ । उलटी-पलटी बाजू तार, काहू मारे काहू उबार । गुरु कहते हैं कि, उलटि-पलटि ये केवल मायाने अनेक औतार धारण किये और अपना हुकुम सब जीवन पर चलाया । जाने हुकुम नहीं माना-रावण दुर्योधन आदि, तिनको मारा और जाने हुकुम माना-पाण्डव विभीषण आदिक, तिनको बचाया । ताते गुरुवा लोग बोलते हैं कि, भगवान् दासनका दासत्व करते हैं औ अपने भक्तनको सुख देते हैं औ अभक्तनको निरास करते हैं अर्थात् मारिके विनाश करते हैं । ये अभिप्राय ॥ ८ ॥

बसंत ९.

ऐसो दुर्लभ जात शरीर । राम-नाम भजु लागू तीर ॥
गये बेनु बलि गये कंस । दुर्योधनके बूड़ो बंश । ॥
पृथु गये पृथिवीके राव । त्रिबिक्रम गये रहे न काव ।॥
छौ चकवै मंडलीके झारि । अजहूँ हो नर! देखु बिचारि ॥
हनुमन्त कश्यप जनक बालि । ई सब छेंकल यमके द्वारि ॥
गोपीचंद भल कीन्ह योग ।जस रावण मारचो करत भोग॥
ऐसी जात देखि नर सबहीं जान।कहहिं कबीर भजु राम-नाम९॥

टीका गुरुमुख—ऐसो दुर्लभ मानुष शरीर नाहकमें जाता है । सो है जीव ! तुम संपूर्ण धोखेको परखो औ राम कहिये सगुण औ नाम कहिये निर्गुण; सा दोनों मिथ्या धोखा । यथार्थ परखके छोड़ो औ पारखिनके संगमें लगो, जाते पारख स्थिति प्राप्त होय । ये अर्थ । अरे बड़े-बड़े सामर्थवान् भये सो सब मरि गये, मानुष जन्म धोखेमें खोया । राजा बेनु, राजा बली, औ राजा कंस, राजा दुर्योधनका वंश बूड़ा, पर काहू जीवने विचार किया नहीं । परपंचमें उन्मत्त होके मरे । राजा पृथु सरीखे जिन संपूर्ण भूमि वश किया; परंतु जीवकी स्थिति नहीं की । औ त्रिविक्रम औतार हुआ, बलीको छला, संपूर्ण पृथिवी तीन पैर किया और बलिहरण करके,

इंद्रको राज दिया; पर अपनी स्थिति न किया, तो पुरुषार्थ सब मिथ्या । तो ऐसे-ऐसे बड़े-बड़े मर गये । काहूकी स्थिति भई नहीं । अरे छौ चक्रवर्ती बड़े समर्थ भये; पर सब सामर्थ्य धूलमें मिली, एक पारख बिना । हे नर ! तू अब तो भी विचार करके देख कि-तेरा स्वरूप क्या है ? अरे हनुमान, कश्यप, जनक, बाली; ये सब गर्भ-वासमें छेके गये, एक पारख बिना । तू देख, सबकी बानी औ वेदवानी विदित है । जो प्रथम भास हुआ हंसको; सोई भासमें सब जीव अरुझे, स्थिति काहूकी भी भई नहीं । गोपीचन्दने राज छोड़के योग साधन बड़ा किया औ ब्रह्ममें मिले । सो ब्रह्मको वेदांत शास्त्र बोलता है कि, संपूर्ण जगत् ब्रह्मरूपी है । तब ये योग वैराग्य किया, तभी ब्रह्म और नहीं किया, तो भी ब्रह्म । तो हक्कनाहक राज छोड़ा । भला जो राज न छोड़ता औ योग न करता तो जगत्‌रूप ब्रह्म था कि, नहीं ? औ रावण लंकाको भोग करता था; सो कल्पना उठी कि, रामके हाथसे मरना औ मोक्ष होना । ताते भोग करते-करते मारा गया । औ राम होके जगमें मरा । नाना प्रकारके सुख दुःख भोगने लगा । धोखेमें मारा गया । याहीसे गुरु कहते हैं कि, हे नर ! ये सबहीको बिना पारख गर्भवासमें जाते देखा । सो तूं निर्गुण सगुण दोनों धरि दे औ पारख पर ठहर । ये अर्थ ॥ ९ ॥

बसंत १०.

सबहीं मद माते कोई न जाग । संगहि चोर घर मूसन लाग ॥
योगी माते योग ध्यान । पंडित माते पढ़ि पुराण ॥
तपसी माते तपके भेव । संन्यासी माते करि हँमेव ॥
मोलना माते पढ़ि मुसाफ । काजी माते दै निसाफ ॥
संसारी माते मायाकी धार । राजा माते करि हंकार ॥
माते सुकदेव उद्धव अक्रूर । हनुमन्त माते ले लँगूर ॥
वशि माते हरि चरण सेव ! कलि माते नामा जैदेव ॥

सत्य-सत्य कहैं सुमृति वेद । जस रावण मारे घरके भेद ॥
चंचल मनके अधम काम । कहहिं कबीर भजु राम-नाम ॥ १० ॥

टीका गुरुमुख–मद कहिये जामें जीव मस्त हो जाय औ कछु सूझे नहीं । जासे मस्त होय, तामें आसक्ती बनी रहै औ गाफिली होय, सोई मद । ये अर्थ । सब संसार आठ मदमें माता, गाफिल हुवा । कोई जागा नहीं, चेता नहीं । औ चोर मन जीवको संग लगा है; सो जीवका घर साँच, विचार, धीरता, दया, शील आदि सम्पूर्ण लूटता है । ये अर्थ । अब कौन-कौन मदमें कौन-कौन किस तरहसे माते ? सो सुनो । पहिले योग मद-उन्मनी आदि ध्यान करते-करते औ कल्प, क्रिया, आसन, समाधी करते-करते सिद्ध हुये । महादेव गोरख आदि संपूर्ण ध्यानमें माते, गाफिल हुये । कछु पारख पदकी प्राप्ती हुई नहीं । इनकी बानी प्रत्यक्ष है–जो पिंडांडनमेंसे जीव ब्रह्मांडमें योग धारण करके ले जाना औ ब्रह्ममें मिल रहना । तो ब्रह्मांड फूट जायगा औ आनन्द विनाश हो जायगा । जब चोला छूटा, तब चोलेका कर्तव्य योग समाधी सब नाश हो जायगी; फिर ये हंस गर्भवासमें समायगा, ताते ये भी मिथ्या गाफिली । ये अर्थ । विद्यामद–जो ब्यास शुक आदि पुराण पढ़के माते कि, 'हम ईश्वरकी कीर्ति गायी;' परन्तु इनके पुराण औ कीर्ति जब चोला छूटेगा तब सब भूल जायगी । आखिर जीव नाना कल्पनाके वश होके चौरासीमें जायगा पारख विना । तपस्वी विश्वामित्र आदि तपस्याके मदमें माते, गाफिल होके अन्न पान वस्त्र छोड़ा औ जंगलमें रहने लगे, जैसा बनके खग मृग, गज, हारिन रोझ आदिक; तद्वत् फल फूल मूल पत्र तृण पवन-अहार करने लगे, तो चोला छूटे जङ्गलके पशु होवेंगे । औ ब्रह्मांडमें बासा रखते हैं सो नभवासी पक्षी होवेंगे औ पुराणिक स्यार होवेंगे । औ संन्यासी ज्ञान मदमें माते कि–'हम ब्रह्म औ जगत् सब इंद्रजालवत्' तो ये ब्रह्म होके जगत् में रहे । अंतमें इनकी स्थिति कहां

है ? नाहक भ्रममें पड़े औ 'जगत्-आत्मा' ऐसा पारख बिना कहिके जगत् में आये। नाना योनी बस होके भोगते हैं। ये आठ मदमें सब संसार माता औ गाफिल होके बंधनमें परा। ये अर्थ। मोलना लोग मुसाफ पढ़िके माते, पर जब इनका चोला छूटेगा, तब मुसाफ भूल जायगा औ मुरगेकी योनीमें जाके बाँग पुकारा करेंगे। औ काजी नाना सरीयतकी बानी पढ़ि-पढ़ि माते, पर अंतमें सब भूल जायगी। बिना पारख जीवकी स्थिति कहाँ होवेगी ? ताते गाफिल बकरेकी योनीमें जायेंगे। ये अर्थ। और संसारी पुत्र, स्त्री, धन, जाति-पाँति, कुल-गोत आदि विषयमें माते; परन्तु देह छूटे पर, सब रह जायगा औ श्वान शूकर आदि योनीको प्राप्त होवेंगे। औ राजा राजमदमें माते तो जब देह नाश होयगी तब राजपदवी छूट जायगी औ हाथीकी योनी अथवा अनेक पापयोनीमें जायेंगे। अरे सबही गाफिल हुये, कोई पारख स्थितिको पाया नहीं। देखो सबनकी बानी प्रत्यक्ष हैं। शुकदेव उद्धव अक्रूर आदि जो ज्ञानी भये, सो सबनकी मत प्रथम भास तलग, है। आगे कोई पार पाया नहीं, सब गाफिलीमें रहे; ताते आवागवनमें परे। ये अर्थ। हनुमान अपने दुमके बलसे औ भक्तीके बलसे गाफिल हुये, आखिर वो भी जगत् जालमें रहे, बिना पारख। ये अर्थ। शिव माते भक्ती विषयमें; परन्तु मिथ्या धोखा उनके परखनेमें न आया तो अन्तमें स्थिति कहाँ होयगी ? आखिर जगत् जालमें आये, बिना पारख। औ कलियुगमें नामा औ जयदेव भये। सो सब भक्तीमें दिवाने भये; परन्तु कल्पना उनके भी परखनेमें न आई, ताते फिर फिर योनी संकट भोगते हैं। ये अर्थ। अरे सब नाना प्रकारका धोखा स्मृति-वेद सत्य-सत्य कहिके जीवको दृढ़ता है औ वेदके भरोसे सब जीव भ्रममें परे हैं, कोई निज पारख स्वतन्त्र निरपक्ष होके करते नहीं। औ कोई अधिक शंका करने चाहता है, तो वेद औ गुरुवालोग उसे रोकते हैं कि, वेदबाह्य शंका

मत करो। इस प्रकारसे गुरुवालोगनके भेदसे जीव मारे जाते हैं। जैसा घरके भाई विभीषणके भेदसे रावण मारा गया; तैसे जीवकी कल्पनासे जीव मारा गया। ये अर्थ। हे संतो! ये सब चंचल मनके अधम काम हैं, सब धोखा। सो तू सगुण राम औ निर्गुण नाम, दोनों परखके छोड़ औ पारख पर स्थिर हो। ये अर्थ॥ १०॥

बसंत ११.

शिव काशी कैसी भई तुम्हारी। अजहूँ हो शिव लेहु बिचारि॥
चोवा चन्दन अगर पान। घर घर सुमृति होय पुराण॥
बहुविधि भवने लागू भोग। ऐसो नग्र कोलाहल करत लोग॥
बहुबिधि परजा लोग तोर। तेहि कारण चित ढीठ मोर॥
हमरे बालकवाके इहै ज्ञान। तोहरा को समुझावे आन॥
जो जेहि मनसे रहल आय। जीवका मरण कहु कहाँ समाय॥
ताकर जो कछु होय अकाज। ताहि दोष नहिं साहेब लाज॥
हर हर्षित सो कहल भेव। जहाँ हम तहाँ दूसरा न केव॥
दिना चारि मन धरहु धीर। जस देखैं तस कहैं कबीर॥११॥

टीका गुरुमुख–शिव कहिये, आनंद कहिये, ब्रह्म कहिये, परमहंस कहिये। जो साधन चतुष्टय संपन्न होके, फिर वेदान्त श्रवण मनन करके देहकी विस्मृति किये औ बाल पिशाच उन्मत्त मूक जड़वत् दशाको प्राप्त भये, षड़ ऊर्मी रहित भये सो शिव, सो परमहंस औ परमहंस कहिये आत्मवित् ब्रह्मवित्॥ तिनसे गुरु कहते हैं कि–हे शिव! तुम सच्चिदानन्द स्वरूप, तुम्हारेमें असत्-जड़-दुःख ये देह कैसे पैदा भई? काशी कहिये काया, सो काया बिना तुम अवर्ण स्फुर्ण होके तुम्हारेमें काया कैसी निर्माण भई? औ फिर तुम सच्चिदानंद बने तो असत्-जड़-दुःख कहाँ गया? हे शिव! तुम अजहूँ विचार करो, जो पहिले असत् सतसे उत्पन्न भया औ चैतन्यसे जड़ उत्पन्न भया औ आनंदसे दुःख उत्पन्न भया औ अब चैतन्यमें जड़ समाया।

अजहूँ हो शिव लेहु विचारि । देखो अब तुम्हारी सेवा संसार सब करते हैं । कोई चोवा, कोई चन्दन, कोई अर्गजा तुम्हारे अंगमें लगाते हैं, नाना प्रकारके पक्के पानके बीड़े पवाते हैं औ घर घर पंडित श्रुति स्मृति पुराणनमें तुम्हारा माहात्म्य बड़ा करते हैं और अपने अपने घरके लोग ले जायके नाना प्रकारके पकवान व्यंजन बनायके आपको भोग लगावते हैं । ऐसे नगर संसारमें लोग कोलाहल करते हैं कि परमहंस परमात्मा, इनसे कोई अधिक नहीं । औ आपके प्रजा लोग शिष्य शाखा बहु विधि विशेषता आपकी वर्णन करते हैं । तेहि कारण चित्त हमारा भी दृढ़ भया कि परमहंसलोग आपही परमात्मा; ताते मैं पूछता हौं कि तुम निर्विकार होके फिर तुम्हारेमें जगत् देह विकार कैसे पैदा भया ? सब विकारके अधिष्ठान होके फिर निर्विकार कैसे कहलाते हो ? अरे हमारे बालकवाके कोईहै ज्ञान । कि हमारा जीव लोगोंका यही ज्ञान है । औ आप तो सर्वाधिष्ठान, सर्वरूप; तो भला संपूर्ण तो तुम आपही हो, अखंड एक रस । तो तोहरा को समुझावै आन ? । तुम कहोगे कि-कोई नहीं; तो वेद औ मुनि किसको उपदेश करते हैं ? । ये अर्थ । जो जाके मनमें आया सो बोलता है, ऐसी अनेक बानी है । तो जीवका मरण कहो कहाँ समाता है ? जब जीव देह छोड़ता है तब कहाँ समाता है ? जो कहोगे कि-ब्रह्मसे उत्पन्न होता है औ ब्रह्ममें समाता है; तो ब्रह्ममें उत्पत्ती प्रलय लगी । तो जीवका अकाज भया, जो बड़ी मेहनत किया औ ब्रह्ममें समाया । तो ब्रह्ममें उत्पत्ती प्रलय लगी तो उत्पत्ती प्रलय जीवकी कैसे छूटे ? अब जीवका तो अकाज हुआ गुरुवा लोगोंकी बानी सुनके, तो उसको कछु दोष नहीं, संपूर्ण गुरुवा लोगोंका दोष । औ बड़ी शरमकी बात है जो सब गुरुवा लोगोंके भरोसे हैं । औ सो गुरुवालोग आपही धोखेमें परे हैं; कोई पारख नहीं करते, विचार नहीं करते । ये अर्थ । ब्रह्ममुख—अब गुरुवा ब्रह्मज्ञानी बोलते हैं अपना अनुभव कि-जहाँ हम विचार किया, तो जहाँ हम ब्रह्म हैं तहाँ दूसरा कोई नहीं, अखंड अद्वैत एकरस एक आत्मा । तहाँ न उपजना न बिनशना, न लाज न शरम, न कर्म न क्रिया, न पाप न पुण्य; मैं एक ब्रह्म । ये अर्थ । गुरुमुख—

तब गुरु बोलते हैं कि-दिना चारि मन धरहु धीर । अरे जबलग ये देह तबलग मैं आत्मा मैं ब्रह्म; ऐसा कहिके धीर पकड़ो पर जब देह छूटेगी तब तुम्हारा धीरज औ ब्रह्म औ आत्मा कहाँ रहेगा ? सब नाश हो जायगा । जो कछु देहसे भास हुआ है सो सब देहके संग नाश हो जायगा । जब देह छूट जायगी तब फिर गर्भवासको प्राप्त होगा जीव । अरे ये जीव जैसा देखते हैं तैसाही अपना स्वरूप कहते हैं । इस जीवने स्थूल देखा तब कहा कि येही मेरा रूप औ जब सूक्ष्म देखा तब कहा कि येही मेरा रूप, जब कारण भासा तब कहा कि येही मेरा रूप, जब महा-कारण भासा तब कहा कि येही मेरा रूप, जब केवल आत्मा भासा तब कहा कि येही मेरा रूप । परन्तु आप सबका भासिक, ये न जाना औ अपना स्वरूप पारख ताकी प्राप्ति न भई, ताते भ्रममें परा औ दुःख सुख भोगता है । ये अर्थ ॥ ११ ॥

बसंत १२.

हमरे कहलक नहिं पतियार । आपु बुड़े नर सलिल धार ॥
अंधा कहै अंधा पतिआय । जस विश्वाके लगन धराय ॥
सो तो कहिये ऐसो अबूझ । खसम ठाढ़ ढिग नाहिं सूझ ॥
आपन आपन चाहैं मान । झूठ प्रपंच साँच करि जान ॥
झूठा कबहूँ न करिहैं काज । हौं बरजों तोहि सुन निलाज ॥
छाड़हु पाखंड मानो बात । नहिं तो परबेहु यमके हाथ ॥
कहहिं कबीर नर कियो न खोज । भटकि मुवा जस बनका रोझ ॥

टीका गुरुमुख—ये संसारकी कल्पनाके हेत अनेक प्रकारसे समुझाया; परन्तु गुरु कहते हैं कि-हमारे कहनेकी प्रतीत इस नरको बिना पारख नहीं आती, ताते आपही कल्पना कर करके नाना वेद आदिक बानी बनाई और आपही नर वह बानीके धारमें डूबे । अंधा कहै अंधा पति-आय । प्रथम अंधा ब्रह्मा, सो वह नाना वेद बानी बोला औ दूसरे अंधे सनकादि अठासी हजार ऋषी, तिनने माना औ प्रतीत किया । आगे उनको कछु समझ न परा ताते अन्ध औ अंध संसारके गुरुवा लोग जो नाना प्रकारके उपदेश करते हैं औ जीव सब मानते हैं औ गुरुवा

लोगोंकी बानीको सब कोई पतियाते हैं । जैसे विश्वाकी लगन धरी जाती है, नित नये खसम आते हैं औ नित जाते हैं तैसे जीवको गुरुवा लोगनकी बानीने लगन लगाई, अनेक खसम बनाये । राम, कृष्ण, नरसिंह, बराह, शिव, शक्ति, सूर्य, गणपती, विष्णु, भैरव और अनेक देवता जीवके खसम हुये; जैसे वेश्याके बहुत खसम । ये अर्थ । सो जीव तो ऐसा अबूझ है कि खसम ठाढ़ ढिग नाहीं सूझ । गुरुवा लोग नजदीक बैठके दूसरा खसम खड़ा करते हैं औ इसकी आँखिसे सूझ तो परता नहीं औ मान तो लेता है; ऐसा अबूझ । आपन-आपन इष्ट सब माना औ चाह बढ़ी, सो झूठ प्रपंचको साँच करके काज जीवने माना । तो गुरु कहते हैं कि-झूठा धोखा तेरा काज कधी नहीं करनेका, ताते मैं बरजता हौं कि नाहक धोखेमें क्यों बँधा जाता है ? हे निर्लज्ज ! बेशरम ! तू बहुत दिनसे धोखेमें पड़के खराब हुवा, तो अब तो भी सुन। अरे आचार, पूजा, इष्ट उपासना जाति पाँति सब पाखंड छोड़ औ बात मान । विचार करके पारख पदको प्राप्त हो, नहीं तो गुरुवा लोगनकी बातनमें बन्धा रहेगा तो फिर गर्भवासमें जायगा औ मायाके हाथ परेगा; फिर बहुत दुःख तेरेको होवेगा । अरे ब्रह्म औ आतमा जो जो सिद्धांत तुमने माना है सो सब कहाँ है ? हे जीव ! संपूर्ण तेरा भास है; । परंतु तुमने खोज किया नहिं । सो बिना पारख तू इस भाससे छूटने नहीं पाता औ हकनाहक वेद बानीमें भटकके मरता है जैसे बनका रोझ । बन बानी, बन संसार, रोझ पंडित औ रोझ विषयी जीव; सो बंधनमें मस्त होके संसारमें बारंबार देह धरके भटक भटकके मरते हैं पारख बिना । ये अर्थ ॥ १२ ॥

जेहि कारण बारंबार बसंत होता था सो कारण कसर गुरुने बताई । बसंत कहिये उत्पत्ती-प्रलय, सो उत्पत्ती प्रलयका कारण ब्रह्म बानी औ स्त्री, सो ज्ञान भक्ती योग विषय, तिनकी कसर बताई । अब आगे मायाका खेल जामें जीव परम मोहित भये, सो फाँसी चाचरमें गुरु समुझाते हैं ।

इति बसंत टीकासहित गुरुकी दयासे संपूर्ण ॥

दया गुरुकी

अथ चाचर लिख्यते

*

चाचर १.

खेलति माया मोहनी जिन्ह । जेर कियो संसार ॥
रचेउ रंगते चूनरी कोइ । सुन्दरि पहिरे आय ॥
शोभा अदभुत रूप वाकी । महिमा बरणि न जाय ॥
चन्द्रबदनि मृगलोचनी माया । बुन्दका दियौ उघार ॥
यती सती सब मोहिया । गजगति ऐसी जाकी चाल ॥
नारद को मुख माँड़िके । लीन्हों बसन छोड़ाय ॥
गर्भ गहेली गर्भ ते । उलटि चली मुसकाय ॥
शिवसन ब्रह्मा दौरि के । दूनो पकरे धाय ॥
फगुवा लीन्ह छुड़ाय के । बहुरि दियो छिटकाय ॥
अनहद धुनि बाजा बजै । श्रवण सुनत भौ चाव ॥
खेलनहारा खेलि है । जैसी वाकी दाव ॥
ज्ञान ढाल आगे दियो । टारे टरै न पाँव ॥
खेलनहारा खेलि है । बहुरि न वाकी दाँव ॥
सुर नर मुनि औ देवता । गोरख दत्त औ व्यास ॥
सनक सनंदन हारिया । और की केतिक बात ॥
छिलकत थोथे प्रेमसों । मारे पिचकारी गात ॥
कै लीन्हों बसि आपने । फिर फिर चितवत जात ॥
ज्ञान डाँग ले रोपिया । त्रिगुण दियो है साथ ॥
शिवसन ब्रह्मा लेन कह्यो है । और की केतिक बात ॥
एक ओर सुर नर मुनि ठाढ़े । एक अकेली आप ॥
दृष्टि परे उन काहु न छाड़े । कै लीन्हो एकै धाप ॥

जेते थे तेते लिये। घुँघुट माहिं समाय ॥
कज्जल वाकी रेख है। अदग गया नहिं कोय ॥
इन्द्र कृष्ण द्वारे खड़े। लोचन ललचि लजाय ॥
कहहिं कबीर ते ऊबरे। जाहि न मोह समाय ॥१॥

टीका गुरुमुख—मायाका रूप अनेक, तामें मुख्य रूप दो-एक गुरुवा लोग औ दूसरी स्त्री। सो अनेक रूपसे माया मोहनी खेलती है जिसने सब संसारको जेर किया औ अपने विषय रंगसे दो देह रची जीवनको अरुझानेके वास्ते कि, कोई सुन्दरि विचारवान् जीव होय सो आयके पहिरे अंगीकार करे। ये अर्थ। ऐसी अद्भुत शोभा उस मायाके रूपकी बनी कि, काहूकी गती चलती नहीं, सब देखते ही भूले औ कामवश हुए। फिर उसकी तारीफ सब जीव करने लगे तो कोकशास्त्र बनाया औ नाना शृंगार शास्त्र बनाये औ नाटक अलंकार बनाये, तहाँ मायाका रूप वर्णन किया। सो माया कैसी ? कि जाका मुख चन्द्रके माफिक औ अधरमें मधुर रस औ मृगके ऐसे जाके नेत्र, मस्तकमें बुन्दका लगायके उघार दिया। सो सम्पूर्ण शोभा देखके यती सती सब मोहि डारा। औ गजगति ऐसी जाकी चाल। अरे देखो, ये जीवने अपने विषयके वास्ते क्या रूप पैदा किया ? जामें बन्ध भया। एक दिन श्रीनगरमें नारद गये। सो वहाँ राजकन्याका स्वयम्बर होता था, सो राजकन्याको देखके नारद मोहित भये। तब विष्णुके पास जायके नारदने अर्ज किया-हे भगवन्! हम तेरी निरंतर भक्ती करते हैं और तू हमारा मालिक है, ताते हमारी विनती मानो औ हमारेको अपना रूप देव। तब विष्णुने कहा कि—हे ऋषी! तुम केहि कारण रूप माँगते हो ? ऋषी कहते हैं कि--महाराज! अब मेरी इच्छा ऐसी है कि, गृहस्थाश्रम करना। तब विष्णुने अपना रूप नारदको दिया पर मुँह बंदरका बनाया। तब नारद स्वयम्बरमें आयके खड़े भये औ रूप देखिके हर्षित भये। तहाँ विष्णुने आपके राजकन्यासे

विवाह किया । तब नारदका मुख कारा, भया सब योग तपस्याका तेज जाता रहा औ खिसियाने भये । तब विष्णुको श्राप दिया कि मेरी स्त्री तूने हर लिया, तेरी राक्षस हर ले जायगा तब वहाँ शिवदूत खड़े थे, सो नारदकी दशा देखके हँसे कि—देखो नारद ज्ञानी औ महासात्विकी औ जितेंद्रिय; तो इनकी क्या गती भई ? मायाको देखके भूले औ खिसियाने होके विष्णुको शाप दिया; परन्तु अपना मुख नहीं देखते जो बन्दरका मुख बनायके खड़े भये हैं । शिवके दूतनकी बातें सुनके नारद कोपायमान भये औ शिवदूतनको शाप दिया कि अरे दुष्ट हो ! तुम मेरी हँसी करते हो तो राक्षस होके उत्पन्न होवो । तब अपना मुँह पानीमें देखा सो बन्दरका । फिर नारद बहुत खिसि-याने भये तब विष्णुने अपनी माया खैंच ली औ विष्णु बैकुण्ठको गये । वहाँ नारदके मुँहमें कलंक लगायके माया गुप्त भई मुसकायके । ये अर्थ । अरे माया बड़ी गर्भ गहेली संसारको जेर करके उलटके जीवमें समाय गई औ सबको बन्धन दिया । ये अर्थ । अरे प्रथम आरम्भमें इस स्त्रीने रूपधारण किया, सो ब्रह्मा शिव दोनोंको दौरके पकड़ा औ काम बुद्धी सब हर लिया औ संसारमें फैलाय दिया । यह मायाको सब कोई अनिर्वचनीय अनहद करते हैं । सो मायाका शृंगार श्रवण भया तब जीवको चाह बढ़ी औ खेलनेवाले गुरुवा लोग ब्रह्मा विष्णु महेश आदि सब खेल रहे हैं । जैसे वह माया दाव बताती है तैसे खेलते हैं । अरे इस मायाने बड़े-बड़े ज्ञानिनको भरमाया । इस जीवने ज्ञान ढाल लेके मायाको आड़ किया; परंतु वह रुकी नहीं । अरे किसीके टारे मायाका पाँव टरा नहीं । सब मायाके संग खेलने-वाले हार गये पर किसीका दाव माया पर लगा नहीं । सुर नर मुनि देवता गोरख दत्तात्रय व्यास सनक सनंदनादि सब हार गये, अब औरकी केतिक बात । अरे माया खाली प्रेमसे छिलक रही है औ कामकी पिचकारी सब नरके अन्तःकरणमें मारी औ बड़े-बड़े ब्रह्मादिकनको

अपने वश कर लिया । अब फिर फिर चितवत जात । अरे या मायाने ज्ञानबानी लेके अपना विषय रोपा औ त्रिगुण काम क्रोध मोह सब जीवनको साथ दिया । शिवसन ब्रह्मा लेने कहती है तो और जीवकी केतिक बात । एक ओर सुर नर मुनि खड़े भये और एक तरफ आप अकेली माया । जो जो उसकी दृष्टीमें आया सो सबको एक कौर कर लिया । अरे जेते बड़े-बड़े थे तेते सब अपने गर्भमें समाय लिये । अरे भाई ! ये माया काजरकी रेख है, यासे कोई अदाग गया नहीं, बड़े-बड़ेनको दाग लगाया । ये अर्थ । इंद्र कृष्ण आदिक सब मायाके द्वारेमें खड़े हैं, नेत्र जिनके ललचाय रहे हैं । गुरु कहते हैं कि—तेई ऊबरे जाने संपूर्ण माया की फाँसी परख लिया है औ स्त्रीका मोह जामें नहीं समाया । जाको स्त्रीका निरंतर तिरस्कार होसोई बचे । ये अर्थ। विरह अर्थ—माया मोहनी कहिये गुरुवालोग, सो सब संसारमें खेलते हैं । नाना प्रकारकी बानी लेके सब संसारको जेर किया औ नाना प्रकारकी कल्पना दृढ़ाई । प्रथमारंभमें जब सब त्रिविधी तापमें दुःखित भये औ अकुलायके नाना भेष धारण किया कि, कोई हमारा कर्ता है सो कैसेहू हमको मिलै । फिर वह भेषनने नाना प्रकारकी बानी वैराग रूपी औ विरहरूपी कथन की; जामें जीव सब सुन सुनके भेष पहिरे औ शिष्य होय । ऐसा वर्णन किया कि-भगवान्‌की शोभा अद्भुत है । जहाँ वेद नेति नेति कहते हैं, जाके एक-एक रोममें कोटि-कोटि सूर्य उदय होते हैं वाकी महिमा वेदहूसे बरणी न जाय । चन्द्रवदन मृगलोचनी माया कहिये गुरुवा लोग चन्द्र कहिये चिदाकाश; सो अपनी आँखि कान मूँदके सन्मुखी मुद्रा लगाई तब चन्द्रबिंब प्रकाश भया, ताका नाम चिदाकाश धरा गुरुवा लोगोंने अपने बदनसे । ताते गुरु कहते हैं कि-चन्द्रवदनी माया औ मृगलोचनी कहिये जो गुरुवा लोग आपहि कहते हैं कि जगत् मृगजलवत् औ फिर जगत्‌को लोचते हैं, उपदेश करते फिरते हैं;ताते मृगलोचनी । ये अर्थ। फिर संसारमें नाना प्रकारका उपदेश

किया औ बुन्दका उघार दिया । बुन्दका आत्मा, सो आखिरको वेदान्तमें कहि दिया कि सब आत्मा है और दूसरा कछु नही । ता आत्मसिद्धान्तमें बद्रीनारायण, भीष्मपितामह, हनुमन्त आदि सब यती मोहे औ हरिश्चन्द्र आदि मयूरध्वज आदि सती सब मोहित भये । गजपति कहिये उन्मत्त दशा, सो दशा लेके गुरुवा लोग संसारमें रमते हैं । ये अर्थ । नारदादि भक्तनके थप्पड़ मुखमें मारके वसन छुड़ाय के लँगोट पहिराये । अरे बड़े-बड़े गुरुवा लोग जो भये सो सब महा-गर्भके माहिं रहे औ नाना धोखा पकड़के उलटके गर्भवासमें बँधे हुए चले गये । शिव ब्रह्मा ये पहिले पुरुष भये, सो दोनों कल्पनामें दौरके परे । फिर इनहिनसे सब ऋषी मुनी मिलके उपदेश लिया औ संसारमें फिर वही कल्पना नाना ग्रन्थ बनायके छिटकाय दिया । औ अनहद नादका उपदेश दिया, सो जीवने सुना औ प्रीति बढ़ी । सो खेलन कहिये जीवको सो हारा, अनहद नादमें लय हुवा । ये अर्थ । जैसी-जैसी युक्ति गुरुवा लोग बताने लगे तैसी-तैसी जीव सब करने लगे । कर्म उपासना योग ज्ञान ये संपूर्ण कल्पना लेके रोपंत किया औ एकसे एक झगरने लगे । कोई किसीके टारे टरते नहीं; कहते हैं कि-योग ध्यान करनेसे कृतार्थ होवेगा; नहीं तो बहुरि न वाको दाव मिलेगा । सुर नर मुनि औ देवता गोरख दत्तात्रेय व्यास इत्यादिक सब कल्पनाके वश होके धोखेमें परे । सनक सनंदन आदि सब वेद बानीके भरोसे खोजते-खोजते हारे, आखिर सर्व आत्मा कहिके रहे, तो और जीवकी केतिक अकिल है जो उनसे पार जायेंगे । खाली बातका प्रेम करके संसारमें जीव सब नाचते हैं और एकको एक प्रेमकी पिचकारी मारते हैं । ऐसा करके संसारको कल्पनाने वश कर लिया औ फिर रहे-रहाये जीवनको वश करती है । ज्ञान डाँग ले रोपिया । कर्म बानी, उपासना बानी दोनों छोड़के ज्ञान बानी वेदान्त लेके जीवनको रोपिया औ त्रिगुण तत्त्वमसीका जीवको उपदेश किया । शिव आदिक

संन्यासी औ ब्रह्मा आदिक ब्राह्मण, सबने लेनेकी श्रद्धा किया औ लेके यही तत्त्वमसी सिद्धांतपर सब ठहरे; तब और जीवनकी केतिक बात है ? अब एक ओर सुर नर मुनि खड़े भये, सुर कहिये सात्त्विकी जीव भगवत उपासक औ नर कहिये राजसी जीव कर्मी राज उपासक, द्रव्य उपासक, स्त्री उपासक, पुत्र उपासक, मुनी कहिये योगी; सो सब हारके असीपद आत्मारूपी हुए, एक अकेली आप आत्मा ! ये अर्थ। ये गुरुवा लोगोंकी बानी जाकी दृष्टीमें परी तिनको एक ब्रह्म कहिके खाय लिया। जेते ज्ञानी थे तिनको वेद बानीने वश करके तत्त्वमसी घुँघुटमें समाय लिया। इंद्र कृष्ण आदि संपूर्ण द्वारमें खड़े हैं, तुरिया अवस्थामें खड़े रहिके आशा कैवल्यकी करते हैं औ सब बंध हो रहे हैं। गुरु कहते हैं कि-ये धोखेसे वही बचे जिसको माया बानीका मोह नहीं समाया। ये अर्थ ॥ १ ॥

चाचर २.

जारो जगका नेहरा मन बौरा हो।
जामें सोग संताप समुझि मन बौरा हो ॥
तन धन से क्या गर्भसी मन बौरा हो।
भस्म कीन्ह जाके साज समुझि मन बौरा हो ॥
बिना नेंवका देव घरा मन बौरा हो।
बिनु कहगिलकी ईट समुझि मन बौरा हो ॥
कालबूतकी हस्तिनी मन बौरा हो।
चित्र रचो जगदीश समुझि मन बौरा हो ॥
काम अंध गज वशि परे मन बौरा हो।
अंकुश सहियो शीश समुझि मन बौरा हो ॥
मर्कट मूठी स्वाद की मन बौरा हो।
लीन्हों भुजा पसारि समुझि मन बौरा हो ॥

छूटनकी संशय परी मन बौरा हो।
घर घर नाचेउ द्वार समुझि मन बौरा हो ॥
ऊँच नीच समुझेउ नहीं मन बौरा हो।
घर घर खायेउ डाँग समुझि मन बौरा हो ॥
ज्यों सुवना नलिनी गह्यो मन बौरा हो।
ऐसो भर्म बिचार समुझि मन बौरा हो ॥
पढ़े गुने क्या कीजिये मन बौरा हो।
अन्त बिलैया खाय समुझि मन बौरा हो ॥
सूने घरका पाहुना मन बौरा हो।
ज्यों आवै त्यों जाय समुझि मन बौरा हो ॥
नहाने को तीरथ घना मन बौरा हो।
पुजबे को बहु देव समुझि मन बौरा हो ॥
बिनु पानी नर बूड़ही मन बौरा हो।
तुम टेकहु राम जहाज समुझि मन बौरा हो ॥
कहहिं कबीर जग भर्मिया मन बौरा हो।
तुम छाड़हु हरि की सेव समुझि मन बौरा हो ॥ २ ॥

टीका गुरुमुख-स्त्री पुत्र कुटुंब आदि सम्पूर्ण जगत् का नेह जो मानके करता है सो संपूर्ण जगत् का नेह तेरे फसनेका जारा है, सो ताहीमें मेरा धन, मेरा पुत्र, मेरी स्त्री, मेरी जाति, मेरी पाँति, ऐसा मानके तू अपनेको भूला औ दिवाना हुवा; सो जारा तोर डार। अरे जामें अनेक सोग संताप हैं सो समझके छोड़। ये अर्थ। अरे तन धनका क्या गर्व करता है ? ये संपूर्ण भस्म हो जायगा। इस तन धनको मानके नाहक क्यों दिवाना हो रहा है ? सो संपूर्ण नाशवंत हैं। अब तो भी समझिके इसका अध्यास छोड़। अरे ! ई तन बिना नेंवका देवघरा है औ बिना कीचड़की ईंट, बिनासेगी; सो तुम समझो।

ये हाड़ चामकी देह छिणभंगुर है। ये देह नाहक मानके तुम दिवाने भये। कालबूतकी हस्तिनी मन बौरा हो। कालबूतकी हस्तिनी कहिये स्त्री, सो चित्र जगदीश पुरुषने रचा अपनी इच्छासे, सो तू समझ। और आपही वो स्त्रीको देखके काम अन्ध गजके सरीखा बशि परा ताते नाना अंकुश रूपी दुःख सहन किया। परन्तु जैसा मर्कट मूठी पकड़ता है फिर लालचके मारे छोड़ नहीं सकता, तैसा ये जीवने स्त्री विषयके लालचसे मूठी मोहकी पकड़ी। अरे स्त्री पुत्र धन आदिक माया भुजा पसारके इनने पकड़ा, पर ताहीते नाना योनीमें भ्रमता है औ अनेक दुःख भोगता है। औ ये दशा हो रही है जो कछु नहीं हो सकता बड़ा लाचार भया; सो हे दिवाने! तू समझ। नाहक मानके तू दिवाना क्यों हो रहा है?। ये अर्थ। अरे हे दिवाने! तूने स्त्री आदि प्रपंच पकड़ा है औ अब छूटनेकी संशय पड़ी। जो तू छोड़े तो तेरा पकड़नेवाला कोई नहीं तूनेही पकड़ा है। ताहीते घर घर नाना योनीमें नाचता फिरता है। हे दिवाने! अब तू ऊँच नीच वर्ण विचार करता है; परन्तु ऊँच नीच एक नहीं समझा। चींटीसे हस्ती तलग सब योनिनमें ऊँच नीचमें भरमा औ मानके बौरा हुआ, सो घर घर डाँग खाता फिरा पशु आदि योनीमें। ये अर्थ। जैसा सुवा आपही नलिनी पकड़के फंद जाता है तैसा नाना प्रकारकी बानी औ कल्पना औ विषयमें तू फंदा है, ये खूब समझके देख। अरे बहुत वेद शास्त्र पढ़ा औ उसका गुनाव न किया तो क्या मुक्ती होती है? आखिर तो कल्पना और स्त्री खाती है। जैसा सूने घर पाहुना जाता है तो वहाँ कोई आदर करनेवाला नहीं, जैसा जाता है वैसाही फिर पूर्वस्थलको आता है; तद्वत ये जीव शून्यमें जाते हैं, ब्रह्मांडमें जाते हैं। तो जैसे जाते हैं वैसे उलटके गर्भवासमें चले आते हैं।

तुम समझ देखो औ छोड़ो, नाहक मानके दिवाने मत होवो । अरे तूने ही कल्पना कर करके नहानेको तीर्थ बनाये औ पूजनेको बहुत देव बनाये, सो नाहक जीव सब धोखेमें परे । अब जैसे जाते हैं तैसे ही बाहर निकरते हैं । ये अर्थ । अरे बिना पानी संसार सब डूबता है एक अनुमानका भवसागर बनायके । अरे भवसागर कछु पानी नहीं, एक अनुमान है औ राम नाम जहाज जो तुमने टेका है सो कछु जहाज नहीं, सो भी कल्पना । मिथ्या सागर मिथ्या नाव, मिथ्या पूजा मिथ्या देव, मिथ्या तीर्थ मिथ्या भाव, कर्णधार मिथ्या समुदाव । तो ये जग मिथ्या धोखा मानिके भरमा औ दिवाना हुवा, सो तुम परखके हरीकी सेवा छोड़ो । हरी कहिये. गुरुवा कहिये माया कहिये, बानी कहिये, काया कहिये, कल्पना कहिये; येती बात मानके बौराय रहे हो सो परखके छोड़ो औ पारख पर स्थिर होवो । ये अर्थ ॥ २ ॥

इति चाचर टीकासहित गुरुकी दयासे संपूर्ण ॥

दया गुरुकी

अथ बेलि लिख्यते

*

बेलि १.

हंसा सरवर शरीरमें हो रमैया राम ।
जागत चोर घर मूसहि हो रमैया राम ॥
जो जागल सो भागल हो रमैया राम ।
सोवत गैल बिगोय हो रमैया राम ॥
आजु बसेरा नियरे हो रमैया राम ।
काल बसेरा बड़ि दूर हो रमैया राम ॥
जैहो बिराने देश हो रमैया राम ।
नैन भरोगे दूरि हो रमैया राम ॥
त्रास मथन दधि मथन कियो हो रमैया राम ।
भवन मथेउ भरपूरि हो रमैया राम ॥
फिरिके हंसा पाहुन भयो हो रमैया राम ।
बेधिन पद निर्बान हो रमैया राम ॥
तुम हंसा मन मानिक हो रमैया राम ।
हटलो न मानेहु मोर हो रमैया राम ॥
जसरे कियहु तस पायेउ हो रमैया राम ।
हमरे दोष का देहु हो रमैया राम ॥
अगम काटि गम कियेहु हो रमैया राम ।
सहज कियेहु बिश्वास हो रमैया राम ॥
रामनाम धन बनिज कियो हो रमैया राम ।
लादेउ वस्तु अमोल हो रमैया राम ॥
पाँच लदनुवा लादि चले हो रमैया राम ।
नौ बहियाँ दश गोनि हो रमैया राम ॥

पाँच लदनुवा खागि परे हो रमैया राम ।
खाखर डारिनि फोरि हो रमैया राम ॥
शिर धुनि हंसा उड़ि चले हो रमैया राम ।
सरवर मीत जो हारि हो रमैया राम ॥
आगि जो लागी सरवरमें हो रमैया राम ।
सरबर जरि भौ धूरि हो रमैया राम ॥
कहहिं कबीर सुनो सन्तो हो रमैया राम ।
परखि लेहु खरा खोट हो रमैया राम ॥१॥

टीका गुरुमुख—हे हंसा ! हे जीव ! तेरा सरवर शरीरमें है । हे रमैया ! तू सबमें रमा है ताते तेरे बिना कोई देह खाली नहीं औ देह छोड़के तेरी स्थिति हो सकती नहीं, सो उपाधी तेरे पीछे लगती है। अरे तू जागृति रूप चैतन्य होके चोर तेरा घर लूटते हैं । चोर कहिये काम क्रोध लोभ मोह, पंचविषय, स्त्री, पुत्र औ गुरुवा लोग; ये संपूर्ण चोर तेरा घर जानमिनी हरते हैं, गाफिल करते हैं । तू तो इन चोरनमें रमि गया । ताते हे राम ! तेरी स्थिति कैसे होवेगी ? तू तो चोरनमें सोय रहा है । औ जो कोई जागा, चोरनको परख लिया सो सभी चोरनमेंसे भागा औ पारख भूमिकापर आय बैठा; जहाँ किसी चोरका लाग नहीं । औ जो यह चोरनके मोहसे इनमें गाफिल भया सो चाहे ज्ञानी होय, चाहे वैरागी होय, सब लूटा गया औ चौरासी योनीमें गर्भवासमें कैद भया । सो देखो इन चोरोंके लक्षण, मोहित करके ज्ञान बुद्धी विवेक विचार साँच धैर्य प्रताप सम्पूर्ण हर लेते हैं फिर चौरासी लक्ष योनी यही अँधेरी कोठरी, तामें जीवको कैद करते हैं । उपराँत फिर कैदखानेसे अवधि पायके जीव छुटता है; बाहर आता है तो फिर भी सब मोहित करके जो कछु कमाई किया, सो लूटके फिर कैद करते हैं; ताते सोया बिगोया । ये अर्थ । आजु बसेरा नियरे हो । आजु मानुष तनमें हो तो तुम सत्संगमें विचार करके देखो, तुम्हारा पद

नजदीक है औ काल दूर हो जायगा । फिर दूसरी योनीमें जावोगे । तब तुम्हारा पद बड़ी दूर हो जावेगा । हे रमैया ! तू सबमें क्या रमि रहा है ? सब जग दुःखरूप है, ताको परखके छोड़ । हे रमैया ! तू अपनी मनुष्य योनि छोड़िके जब दूसरी योनीमें जायगा तब वहाँ बहुत कष्ट गर्भवासका होयगा । जठराग्निका तड़ाका लगेगा औ अंग अंगमें जब जरेगा तब रोय-रोय तेरे नैन भरेंगे । तब वहाँ कोई दुःख छुड़ानेको नहीं आनेका । तो हे सन्तो ! देखो-ये जीवने गर्भवास छूटनेके वास्ते बहुत त्रास करके सब वेद शास्त्र मथन किया औ संसारमें सब कर्ताको खोजने लगे । आखिर कर्ताका तो ठिकाना भी न लगा औ उमर तो आखिर भई । तब चोला छूटा औ हंसा पाहुन भये, फिर गर्भवासको गये । हे रमैयाराम ! ऐसी अनेक जन्म तेरी गति भई । अरे हे रमैया ! निर्बान पदमें तुम बंधे, सुन्नमें बंधे ताते गर्भवासकी प्राप्ती भई । ये अर्थ । तुम तो हंस औ निर्बान ब्रह्म, आत्मा, ईश्वर; ये सब तुम्हारे मनके माने हुये धोखे, तिनके भरोसे तुम रहि गये औ नाना योनी भोगे । हमने बहुत तुम्हारेको हटका; परन्तु हटका न माना । ताते हे रमैया ! तुम सब संसारमें रमे । तो जैसा तुमने किया तैसा तुमने पाया । अरे तुम गाफिली न करते तो ऐसी दशा दुःखरूपी न पाते । औ हमने बहुत कहा पर तेरेको सूझा नहीं । अब हमारेको क्या दोष देता है ? तेरेको अनेक प्रकारसे मैंने परखाया पर तुमने परखा नहीं । जो तूही न परखै तो पारखको क्या दोष ? अरे तू तो नाना कल्पनामें दृढ़ हुवा, आखिरको परमात्मा अगम है; ऐसा कहा । फिर अगम भी काटिके गम किया । तू ब्रह्म बना औ सहजही विश्वास किया कि-जो वेदने ब्रह्म कहा था सो हमहीं हैं, ऐसा विश्वास किया; परन्तु धोखा तेरेको न सूझा । राम नाम धन समझके गुरुवा लोगोंके संग बनिज किया, शरणमें जायके सत्संग किया औ नाना बानीमें रमि गया । औ सब बानिनका विश्वास किया औ बानीके प्रमाणसे राम नाम

अमोल वस्तु जानके भजन भक्ती करने लगा । पाँच लदनुवा अन्तःकरण पाचों, सो लादि चले कि-भाई ! राम सबका मालिक सर्वज्ञ दूसरा है, ये संकल्प मनने माना । अब रामकी नाना मूर्त्ति बनाना औ रामकी नाना पूजा करना, औ रामकी कथा सुनना औ रामका कीर्तन स्मरण करना, रामका भेष माला कंठी तिलक लगाना औ रामके हेत नाना पुराण सुनना, नाना चरित्र करना । राम छोड़ और कछु नहीं; ऐसा माना, ये हंकारने लादा करतूत । रमेति रामः जो । सबमें रमा है चैतन्य, 'सूत्र मणि न्याय' सोई राम, ये लादा चित्तने । राम निर्विकल्प सच्चिदानंद अखण्ड एकरस, ये लादा अन्तःकरणने । संपूर्ण राम जैसेका तैसा, जल तरंग न्याय, सुवर्ण भूषण न्याय, मृत्तिका विकार न्याय निश्चय किया बुद्धीने । इस पाँच लदनुवा लादि चले । नौ बहियाँ दश गोनी—नौ बहियाँ नौ व्याकरण, दश गोनी चार वेद-छः शास्त्र; ये संपूर्ण बानी अन्तःकरण पंचक लादि ले चले । हे रमैया ! तुम सबमें रमें । ये अर्थ । पाँचो अन्तःकरण जब खागि परे, थकि गये तब श्वासा आखिर भई औ चोला छूट गया, खाँखर मुरदा रहि गया । सो सब लोगन मिलिके मसानमें जराय दिया औ हँड़िया फोर डारी, शिर धुनिके हंसा उड़ि चले । देहके विषयमें शिर मार मार आखिर चोला छोड़के सुषुम्ना नाड़ीके संग हंसा उड़ि गर्भवासको चले । जा देह गेह गेहसों मिताई किया था सो विषयनमें मनुष्य तन हारा औ चौरासीमें रमे । तब आग लगी सरवरमें, देहमें; सो देह जरके धूर हो गई । न कोई सङ्ग भया, न कोई काम आया । अब ब्रह्म आत्मा, कर्ता तो भी दूसरा कहाँ है ? हे सन्तो ! सब खरा औ खोटा परख लेहु । जो देह गेह आदि, कर्ता ब्रह्म आत्मा, तत्त्व प्रकृति, अनुमान कल्पना, भास प्रत्यक्ष, ये सब मिथ्या औ भासीक जीव सत्य । सो जासे भास भासीक सब परखनेमें आवै सो पारख पद, ताही पर स्थिर होवो । ये अर्थ । ॥ १ ॥

बेलि २.

भल सुमृति जहँड़ायेउ हो रमैया राम ।
धोखे कियेउ बिश्वास हो रमैया राम ॥
सो तो है बन्सी कैसी हो रमैया राम ।
सोरे कीयेहु बिश्वास हो रमैया राम ।
ई तो है वेद शास्त्र हो रमैया राम ॥
गुरु दीहल मोहि थापि हो रमैया राम ।
गोबर कोट उठायउ हो रमैया राम ॥
परिहरि जैबेहु खेत हो रमैया राम ।
मन बुद्धि जहवाँ ना पहुँचे हो रमैया राम ॥
तहाँ खोज कैसे होय हो रमैया राम ॥
यह सुनिके मन धीरज धरहु हो रमैया राम ।
मन बढ़ि रहल लजाय हो रमैया राम ॥
फिर पीछ जनि हेरहु हो रमैया राम ।
कालबूत सब आहि हो रमैया राम ॥
कहहिं कबीर सुनो सन्तो हो रमैया राम ।
मन बुद्धि ढिग फैलायउ हो रमैया राम ॥२॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि-हे समृति ! हे पंडित ! ज्ञानी ! तुमने भला खराब किया रमैयारामको । औ 'रमैयाराम' ऐसा सम्बोधन जोवको है, सो गुरु कहते हैं कि-हे जीव ! तुम वेद बानी खूब जहँड़ाये, खराब हुये, औ धोखेका विश्वास किया कि-मैं ब्रह्म, मैं आत्मा । अथवा दूजा कर्ता, ऐसा विश्वास किया औ नाना कर्म, उपासना, ज्ञान करने लगे; सो तो गुरुवा लोगोंने बन्सी लगाई है, जैसा मच्छ पकड़ने के वास्ते धीमर बन्सी लगाते हैं । तद्वत् गुरुवा लोगोंने नाना बानी जीवको पकड़नेके वास्ते लगाई; तामें ब्रह्म प्राप्ति, स्वर्ग प्राप्ति, सिद्धि प्राप्ति, ये आशा लालच लगाई । सो लालच देखके तुमने विश्वास किया औ ब्रह्म बना, सबमें रमा, आपही राम कहलाया । ये अर्थ ।

जीवमुख–ई तौ है वेद शास्त्रका प्रमाण औ गुरु ब्रह्मादिकका उपदेश कि-जो सर्वव्यापी सबमें रमा है 'घटाकाश न्याय', सो ब्रह्म । ताके रूप एक सगुण जो क्षीरसागर निवासी; जाकी अनन्त कला, अनन्त अवतार औ एक गुण निर्गुण जो जीव मात्रमें चींटीसे ब्रह्मा पर्यन्त भरा है और एक संपूर्ण आत्मा अधिष्ठान रूप । सो भक्ती, ज्ञान, योग ये तीन मार्गसे तीनों रूपकी प्राप्ती होती है, येही निश्चय गुरु दीहल मोहि थापि । गुरुमुख–गोबर कोट उठायेहु हो रमैया राम । गो कहिये इन्द्री, बर कहिये श्रेष्ठ, सो इंद्रिनका विषय श्रेष्ठ; ताको कोट बनायेहु,ताका नाम ब्रह्म कहेहु । अरे निर्विकल्प अन्तःकरणका विषय, सविकल्प चित्तका विषय, ज्योंका त्यों बुद्धिका विषय, द्वैत कर्ता मनका विषय, प्रत्यक्ष देह तत्त्व अहंकारका विषय, शब्द सिद्ध करेगा तो आकाशका विषय, स्पर्श आनन्दादि सिद्ध करेगा तो वायुका विषय, रूप प्रकाशादि सिद्ध करेगा तो अग्नीका विषय, रस प्रेम आदि सिद्ध करेगा तो जलका विषय, गंध सर्वदेशी सिद्ध करेगा तो पृथिवीका विषय, अगर ये सबही सिद्ध करेगा तो गोबर कोट घुरा ठहरा, यामें कछु अस्तित्व नहीं । ये देह छूटेगा तब येते सिद्धांत सब छोड़के औ खेत गर्भवासमें जायगा । ये अर्थ । ये हो रमैया ! जहाँ मन बुद्धि कछु पहुँचती नहीं तहाँ तुम ब्रह्म खोज करते हो,तो तहाँ खोज कैसे होगा ? इतना निर्णय सुनके विचार करके धीरज धरो । अरे न कहूँ ब्रह्म, न कहूँ ईश्वर, सब तुम्हारे मनकी कल्पना । सो जैसा तुम्हारा मना बढ़ा तैसे-तैसे तुम मानते चले, जहाँ मन थका तहाँ स्वरूप ब्रह्म निश्चय किया औ जगत्‌का कारण रूप बने; सो कारण औ देह चतुष्टय आदि जगत् सब कार्य औ हंस कर्ता, ये तीनों जब उड़े तब पारख पदकी प्राप्ती होय । जबलग कार्य कारण कर्ता त्रिपुटी है तबलग पारख पदकी प्राप्ती नहीं। अब वेदांत शास्त्रवाला बोलता है कि-त्रिपुटी नाश होय तब ब्रह्म प्राप्ती होय । सो इनकी त्रिपुटी भी देखो और गुरु जो त्रिपुटी

छुड़ाते हैं सो त्रिपुटी भी देखो। वेदांतकी त्रिपुटी-ध्याता ध्यान ध्येय, ये जीवकी त्रिपुटी। अब ध्याता कहिये स्थूल औ ध्यान कहिये सूक्ष्म, ध्येय कहिये कारण; तो अद्वैत एकत्व भावमें ये त्रिपुटी उड़ी औ जीव ईश्वरकी एकता भई तब तुरिया अवस्था महा कारणरूप हुवा। तो तहाँ ईश्वरकी त्रिपुटी उड़ाना-ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय। ज्ञाता कहिये ईश्वर, ज्ञान कहिये मूल प्रकृती तुरिया, ज्ञेय कहिये अव्याकृत कारण औ हिरण्यगर्भ सूक्ष्म औ बिराट स्थूल, ये संपूर्ण ज्ञेय। इस प्रकारसे छे पुटि छोड़ै तब एक ब्रह्म, एक आत्मा अखंड दशाको प्राप्त होय। तो भला ये त्रिपुटी छोड़ी औ एकता बल भावको प्राप्त हुआ। तो सब जगत् औ ईश्वरका कारण हुवा। ब्रह्म ईश्वर-जगत् का अधिष्ठान, ब्रह्म बिना जगत् ईश्वर दोनों नहीं औ दोनोंमें ब्रह्मही ब्यापा। ब्रह्म जड़-चैतन्यका अधिष्ठान, औ ब्रह्म ज्ञान-अज्ञानका अधिष्ठान; ये छे कार्य, यामें कारण ब्रह्म भरा है-ये वेद बचन बृहदारण्य शरीरका प्रमाण। तब सबका कारण ब्रह्म औ ईश्वर आदि जगत् सब कार्य, इनका कर्ता हंस; ये तीनों त्रिपुटी नासै तब पारख पदकी प्राप्ती होय। तो वेदांतकी अधिकाई क्या? जो वेदांतकी छै पुटी उड़ी तब ब्रह्म हुवा; तो एक पुटी उड़ी, कार्य उड़ा, कारण कर्ता दो उनके परखने में न आये ताते बारंबार देह धरेंगे। तू त्रिपुटी परखके छोड़ औ फिर पाछे मत देखहु हो। हे रमैयाराम! ये त्रिपुटी सब कालबूत धोखेकी टाटी नाशवान्। ये अर्थ। गुरु कहते हैं कि-त्रिपुटी छै पुटी सब मनकी बाड़ है, सोई संसारमें फैली है। हे संतो! तुम चीन्हो औ परखके छोड़ो, स्वच्छ पारखमें ठहरो और कछु मानो मत। ये अर्थ ॥ २ ॥

इति बेलि टीकासहित गुरुकी दयासे संपूर्ण।

दया गुरुकी

अथ बिरहुली लिख्यते

★

बिरहुली १.

आदि अंत नहिं होते बिरहुली । नहिं जर पल्लव डार बिरहुली॥
निशि बासर नहिं होते बिरहुली । पोन पानि नहिं मूल बिरहुली॥
ब्रह्मादिक सनकादिक बिरहुली । कथि गये योग अपार बिरहुली॥
मास असारे शीतल बिरहुली । बोइनि साती बीज बिरहुली ॥
नित गोड़े नित सींचै बिरहुली । नित नव पल्लव डार बिरहुली॥

छिछिलि बिरहुली छिछिलि बिरहुली ।
छिछिलि रहल तिहुँ लोक बिरहुली ॥

फूल एक भल फुलल बिरहुली । फूलि रहल संसार बिरहुली ॥
सो फुल लोढ़े संतजना बिरहुली। बन्दिके राउर जाय बिरहुली॥
सो फल बन्दे भक्तजना बिरहुली। डसिगो बैतल साँप बिरहुली॥
विषहर मंत्र न माने बिरहुली। गारुड़ बोले अपार बिरहुली॥
विषकी क्यारी तुमबोयहु बिरहुली। अब लोढ़तका पछिताहु बिरहुली
जन्म जन्म यम अंतरे बिरहुली।फल एक कनयर डार बिरहुली॥
कहैं कबीर सच पाव बिरहुली ।जो फल चाखहु मोर बिरहुली १॥

टीका गुरुमुख–आत्माका आदि अंत कछु नहीं औ जर पल्लव डार कछु नहीं। जर कहिये निर्गुण औ डार कहिये सगुण औ पल्लव कहिये वेद बानी; सो आदि अंत रहित अखंड एक, रस आत्मा । न सगुण, न निर्गुण, न आत्मामें वेद, न बानी, न ज्ञान, न अज्ञान; तो जैसे का तैसा । नेति नेति श्रुति । तो न दिन, न राति, न पवन, न पानी, न आकाश आदि तत्त्व; तो आत्मा निरावेव निराकार निरंजन ।

ये अर्थ । सनकादिक ब्रह्मादिक ये ही योग कथि गये, येहि सिद्धांत कथि गये; ताते संसारमें विरह बढ़ा औ जीव सब बिरही हुए । ताते बिरही जीवनको बिरहुली संबोधन देके गुरु कहते हैं कि-सब बिरहकी जड़ एक धोखा गाफिली, जाके मारे जीव सब अधीर भये । मास असारे शीतल बिरहुली । मास कहिये बानी, असार कहिये मिथ्या, असार कहिये विष, असार कहिये आसा; सो आसारूपी बानी जो गुरुवा लोगोंने उपदेश किया सो मिथ्या बानीका विष जीवन पर चढ़ा औ जीव गाफिल भये, शाँत भये, शीतल भये । ये अर्थ । अब सात प्रकारकी आशा रोपंत किया सोई आवागवनका बीज । सो अब ता बीजमें डार पल्लव कौन कौन निकरा ? सो सुनो—ॐ श्रीं रँ सों एं ह्रीं क्लीं, ये सात बीज बोये । सो सात अंकुर निकरे—कर्म उपासना योग ज्ञान उत्पत्ती स्थिति लय । सो सातों अंकुरोंको चित्तरूपी कुदारसे नित गोड़ने लगे औ बुद्धिरूपी जलसे सींचने लगे । अहंकारका आल-बाल बाँधा, मन रूपी खाद डारा औ अंतःकरण रूपी भूमिकामें बीज बोया । सो सात अंकुर निकरे औ नित नव पल्लव डार फटने लगे । डार कहिये अनेक प्रकारके कर्म औ अनेक प्रकारकी उपासना औ अनेक प्रकारके योग औ अनेक प्रकारके ज्ञान औ अनेक प्रकारकी उत्पत्ती औ स्थिति औ लय, येही डार, औ अनेक प्रकारकी सातोंकी बानी सोई पल्लव । ये सात बीज जो कबीर साहेब बोले हैं सो इनका फूट करके जो अर्थ बोलना चाहता हौं तो सारी पृथिवीकी बानी औ सब ऋषि मुनि बेद शास्त्रनका सिद्धांत आना चाहता है, तो टीका बहुत बढ़ती है, कछु सुमार नहीं रहता, ताते नाम संज्ञा जनाया । अब दूसरा अर्थ कहता हौं जो गुरुवा लोग बोईन सातो बीज । अब प्रथम कर्मका बीज ॐ, तामें कर्म अंकुर निकरा । ताको भयका आलबाल बांधा, लोभ जलसे सींचा । सो तामें सात डारें फूटीं—यजन याजन अध्ययन अध्यापन दान प्रतिग्रह

मैथुन। औ सातों कर्मकी नाना बानी बनी सोई पल्लव आया, वासना फूल फूला औ पाप पुण्य दो फल आये। दूसरा उपासनाका बीज श्रीं, तामें उपासना अंकुर निकरा। ताको मर्य्यादा आलबाल बाँधा, भाव जलसे सींचा। तामें सात शाखा फूटीं—शिव विष्णु गणपती सूर्य शक्ती राम कृष्ण। औ सप्त कोटि महामन्त्र ये पल्लव आये, लोकादिक फूल फूले औ जारण मारण उच्चाटन आकर्षण वशीकरण स्तंभन मोहन ये फल लगे। तीसरा योगका बीज रँ, तासे योग अंकुर निकरा। ताको क्रिया रूपी आलबाल बाँधा, साधन जलसे सींचा। तामें सात शाखा फूटीं—हठ-योग, लययोग, कुंडली योग, लंबिका योग, तारक योग, अमनस्क योग औ सांख्ययोग। पातंजली शास्त्र पल्लव आया औ समाधी फूल फूला, अणिमादिक सिद्धि फल आये। चौथा ज्ञानका बीज सों, तासे ज्ञान अंकुर निकरा। ताको भक्तीका आलबाल बनाया, प्रेमरूपी जलसे सींचा। तामें सात शाखा फूटीं शुभइच्छा, सुविचारणा, तनुमानसा, सत्वापत्ति असंशक्ती पदार्थाभावनी औ तुर्या। औ सातोंकी बहुत बानी बनी सोई पल्लव आया। परोक्ष ज्ञान सोई फूल फूला औ अपरोक्ष ज्ञान सोई फल लगे। पाँचवाँ एँ उत्पत्तीका बीज, तासे उत्पत्ती अंकुर निकरा, विषय रूपी आलबाल बनाया और वासना जलसे सींचा। सात प्रकारकी उत्पत्ती सोई डार फूटी—शब्दसे मेघके कीड़े औ मेघा मेंडको आदि की उत्पत्ती, स्पर्शसे मैथुनी योनीकी उत्पत्ती, रूपसे अण्डज पक्षी आदि योनीकी उत्पत्ती, जेते दृष्टिभावसे रति करे सो रूपकी उत्पत्ती, रससे जलचर औ फल वृक्षनके कीटनकी उत्पत्ती, गन्धसे उष्मज योनीकी उत्पत्ती, वासनासे भूतयोनी औ देवयोनीकी उत्पत्ती औ इच्छासे सिद्ध योनीकी उत्पत्ती। शब्द स्पर्श रूप रस गंध वासना औ इच्छा, ये सात उत्पत्ती बीजका अंकुर औ इनकी उत्पत्ती सोई पल्लव नारी फल औ पुरुष फल। छठवाँ स्थितिका बीज ह्रीं, तासे स्थिति अंकुर निकरा।

तामें मायारूपी आलबाल बनाया औ मोह जलसे सींचा तब सात डारें फूटीं–अन्न जल तृण पत्र फूल फल औ पृथिवी। मनुष्यको स्थिति अन्न, जलचर की स्थिति जल, तृणचरकी स्थिति तृण, पत्रचरकी स्थिति पत्र, पुष्पचर की स्थिति पुष्प, फलचरकी स्थिति फल औ मैलेसे पृथिवीसे जो पैदा भये तिनकी स्थिति मैल पृथिवी। इनका बहुत विस्तार भयउ सोई पल्लव, अनेक खानेके पदार्थ बने सोई फूल औ सदाकाल शरीर पोषण सोई स्थिति फल। सातवाँ प्रलयका बीज क्लीं, तासे प्रलय अंकुर निकरा; तामें कठोरता आलबाल बनाया, क्रोध जलसे सींचा तब सात डारें फूटीं–पृथिवी पानी अग्नी पवन लात हाथ दाँत। नाश करनेके अनेक द्रव्य सोई पल्लव, भय फूल औ मृत्यु फल। ये अर्थ। छिछिलि बिरहुली छिछिलि बिरहुली। छिछिलि रहल तिहूँ लोक बिरहुली ॥ सो शाखा पल्लव बानी बढ़ी औ तीन लोकमें छाय गई। ता बानीका फूल जो फूला तामें संसार सब फूल रहा। फूल कहिये तुर्या औ फूल कहिये समाधी, सो फूल संतजन अंगीकार करते हैं। औ बंदी गुरुवा लोग, तिनकी शरणमें राउर जीव जाते हैं। ता फूल का बंदन भक्तजन करते हैं। डंसि गौ बैतल साँप। गुरुवा लोगोंका उपदेश। ये अर्थ। औ नाना प्रकारके विष, सो जीवपर विष चढ़ा औ जीव विषहर मंत्र नहीं मानता तो विष कैसे उतरे, जाके मारे गाफिल हो रहे हैं। विषहर मंत्र कहिये जासे सब विष हर जाय, नाश हो जाय सो पारख ये नहीं मानता। औ गारुड़ पारखी अनेक तरहसे परखाते हैं औ अपार शब्द बहुत बोलते हैं पर अभीलग समझ न परी। ये अर्थ। विषकी क्यारी तुम बोयेहु बिरहुली। तुम्हारे अन्तःकरणमें विष ब्रह्म अध्यास, जगत् अध्यास, नाना विषय अध्यास; येही चौरासीका बीज तुमने अन्तःकरणमें बोया सो तुमको चौरासी देह प्राप्त भई। सो तुम अब भोगनेको क्या पछताते हो ? अरे इसी प्रकारसे जन्म जन्म गुरुवा

लोगोंने औ स्त्रियनने जन्म जन्म धोखा दिया । फल एक कनयर डार बिरहुली । फल एक बासना धोखा कानमें फूका, ताहिते विरह लगा औ जन्म जन्म धोखा पड़ा । ये अर्थ ।

मायामुख-कहैं कबीर सच पाव बिरहुली, जो फल चाखहु मोर बिरहुली । मायाका उपदेश ऐसा है कि-वेद वाक्य औ गुरु प्रतीत करेगा तो अर्थ धर्म काम मोक्षादिक फल प्राप्त होगा, ऐसी आशा लगाई । ये अर्थ । जो विरह भया था सो बिरहुली शब्द कहके गुरुने निवृत्ती किया । अब जीव सब भ्रम औ आवागमनमें झूलते हैं सो गुरु परखायके छुड़ाते हैं, सो सुनो ॥ १ ॥

सोरठा-हे गुरु दीन दयाल, बिरह ब्यालते जीव दुखित ।
मेटेउ फंदा काल, अब हिंडोल निर्णय करहु ॥१॥

इति बिरहुली टीकासहित गुरुकी दयासे संपूर्ण ॥

दया गुरुकी

अथ हिंडोला लिख्यते

*

हिंडोला १.

भरम हिंडोला झूले सब जग आय

पाप पुण्यके खंभा दोऊ। मेरु माया माँहि ॥
लोभ भँवरा विषय मरुवा। काम कीला ठानि ॥
शुभ अशुभ बनाये डाँडी। गहे दूनों पानि ॥
कर्म पटरिया बैठिके। को को न झूले आनि ॥
झूलत गण गंधर्व मुनिवर। झूलत सुरपति इन्द्र ॥
झूलत नारद शारदा। झूलत ब्यास फणीन्द्र ॥
झूलत बिरंचिमहेशशुकमुनि। झूलत सूरज चन्द्र ॥
आप निर्गुण सगुण होय। झूलिया गोबिंद ॥
छौ चारि चौदह सात एकइस। तीनिउ लोक बनाय ॥
खानी बानी खोजि देखहु। स्थिर कोई न रहाय ॥
खण्ड ब्रह्मांड खोजि देखहु। छूटत कतहूँ नाहिं ॥
साधु संगति खोजि देखहु। जीव निस्तरि कित जाहिं ॥
शशि सूर रैनि शारदी। तहाँ तत्त्व परलय नाहिं ॥
काल अकाल परलय नहीं। तहाँ सन्त बिरले जाहिं ॥
तहाँके बिछुरे बहु कल्प बीते। भूमि परे भुलाय ॥
साधु संगति खोजि देखहु। बहुरि न उलटि समाय ॥
ये झुलबेकी भय नहीं। जो होय संत सुजान ॥
कहहि कबीर सत सुकृत मिलै। तो बहुरि न झूले आन ॥ १ ॥

टीका गुरु मुख—भ्रमरूपी हिंडोला सब जग झूलते हैं। भ्रम कहिये ब्रह्म, तामें जीव झूलते हैं। ब्रह्मसे पुरुष, पुरुषसे प्रकृती, प्रकृतीसे महातत्त्व,

महातत्त्वसे अहंकार, अहंकारसे त्रिगुण, त्रिगुणसे संसार, सतोगुणसे देवता, रजोगुणसे दश इंद्री औ तमोगुणसे विषय पंचक। सो विषय तमोगुणमें लय किये, तमोगुण इंद्रियमें लय हुवा, इंद्रि रजोगुणमें लय हुई, रजोगुण देवतनमें लय हुवा, देवतनको सतोगुणमें लय किया, सतोगुण जगत सहित अहंकारमें लय हुवा, अहंकारको महातत्त्वमें लय किया, महातत्त्वको प्रकृती खाय गई, प्रकृती पुरुषमें जाय समाई, पुरुष ब्रह्ममें लय हुवा। फिर पूर्ववत् ब्रह्मसे पुरुष, पुरुषसे माया, मायासे त्रिगुण आदि जगत् सब बना। औ ब्रह्म कछु वस्तु नहीं जहाँ जीवकी स्थिति होय, ताते आवागमनमें परा। ब्रह्म कहिये भ्रम, सो गुरु कहते हैं कि-बारंबार भ्रम हिंडोलेमें जीव झूलते हैं। सब जगत् ब्रह्मसे जगत्, जगत्से ब्रह्म होते हैं। ये अर्थ। पाप पुण्यके खंभा दोऊ। पाप कहिये जगत् जीव, पुण्य कहिये ईश्वर, ये दोनों खम्भा और ऊपरकी डाँड़ी सो माया तुर्या, ब्रह्म प्राप्तीका लोभ सोई भँवरा, मुमुक्षु सोई भँवरा औ समाधी विषय सोई सुगन्ध मरुवा; तामें योगी भँवरा लुब्ध हो रहे हैं। औ चाह सोई किल्ला, सिद्धीका किल्ला ठोंका। शुभ अशुभ बनाये डाँड़ी। शुभ कहिये ज्ञानइच्छा औ अशुभ कहिये भोग इच्छा, सोई सब्य अपसब्य दोनों डाँड़ीकी रस्सी औ नाना कर्म सोई पटरिया। योग कर्म, ज्ञान कर्म, उपासनाकर्म, विषयकर्म, वर्णाश्रम कर्म; ये पटरिया पर सब आरूढ़ हो बैठे, सो सब कोई आवागमनमें झूले। आवागमनका झूला महा कठिन है, जो शुभ कर्म किया तो शुभ लोकको प्राप्त भया; फिर क्षीणे पुण्ये मृत्युलोके वसंति। ऐसा स्मृतिका प्रमाण है। औ अकर्म किया तो नर्क आदि लोकको गया। फिर मर्त्यलोकको आया। भूतकी उपासना किया, महादेवकी उपासना किया तो गणोंकी देह प्राप्त भई, भूत योनी धारण करके महादेवके पास रहा। फिर हजार वर्ष या दश हजार वर्ष भूत योनीमें रहा, फिर गर्भवासमें आया। कीर्तन भक्ती किया तो गंधर्व योनी धारण करके देवतनके पास जब लग मर्यादा तबलग रहा; फिर क्षीणे पुण्ये गर्भवासमें आते हैं। ऐसे ही मुनिवर महा तपस्या करते

करते मरे औ तपोलोकको गये अथवा देव इन्द्र भये तो भी क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकमें आते हैं अब औरकी केतिक तपस्या ? नारद शारदादि, व्यास शेषादि पुनः पुनः प्रलय होते हैं औ गर्भवासमें आते हैं, ऐसा वेद बोलता है । तो उनकी बानीके भरोसे जो ब्रह्म बन बैठते हैं तिनकी स्थिति कैसे होवेगी ? ये तो बिना पारख बारंबार गर्भवासमें आवेंगे । अर्थ । झूलत बिरंचि महेश शुकमुनि । अनेक बार अनेक ब्रह्मा भये औ अनेक महादेव भये औ अनेक शुकाचार्य भये । ऐसा वेद बोलता है कि जब प्रलय होती है तब सूर्य चन्द्रादि सब नाश होते हैं औ उत्पत्ति समय सब उत्पन्न होते हैं । ताते आवागमनमें त्रिदेव आदि सूर्य चन्द्र सब झूलते हैं । ये अर्थ । अरे जो आप निर्गुण ब्रह्म सगुण अवतार धारण कर बारंबार झूले । ये अर्थ । छौ चारि चौदह सात एकइस । छौ कनभक्ष जैमिनी कणाद गौतम शेष कपिल औ व्यास, चारि-सनक सनंदन सनतकुमार सनकादि, चौदह मनु, सात स्वर्ग, सात ऋषी, एकइस ब्रह्मांड, एकइस गणपती; तीनलोक, तीनदेव, ये संपूर्ण प्रलयमें नाश होते हैं औ उत्पत्ति समय उपजते हैं, ऐसा वेद गावता है । आवागमनमें सब झूलते हैं । चार खानी औ चार बानी, याहीमें तुम खोजि देखो । सब झूलते हैं । पर स्थिर कोई भये नहीं । अरे नौ खण्ड पृथिवी औ ब्रह्मांड सब जीवनको बन्धन है, छुटकारा कहीं नहीं । ये अर्थ । हे साधु ! हे जीव ! तुम सत्संगमें खोजि देखो-जो जीव निस्तरके कहाँ जायगा ? । ये अर्थ । मायामुख—शशि सुर रैनि शारदी तहाँ तत्त्व परलय नाहिं । नहीं तहाँ चन्द्र, नहीं तहाँ सूर्य औ नहीं तहाँ सुषुमना, न तहाँ पाँच तत्त्व, न तहाँ त्रिगुण, न तहाँ काल, न अकाल, न प्रलय; सोई ब्रह्म । तहाँ सन्त बिरले जाहिं । योगी ज्ञानी तहाँ कोई जाय । ये अर्थ । ये जीव तहाँ ब्रह्मसे बिछुरे बहुत कल्प बीते औ स्थूल देह धारण करके भूमिमें मायाके वश भूलि परे; सो फिर वो ब्रह्मको प्राप्त होय तो ये जीवका निस्तार होय, ये मायाका अभिप्राय ।

गुरुमुख-गुरु कहते हैं कि-हे साधु ! तुम सत्संगतमें, टकसारमें खोजि देखो कि ये ब्रह्म जगत्का कारण, जो ब्रह्मसे जगत् औ जगत्से ब्रह्म बारंबार होता है । ब्रह्ममें मिला सोई जगत्का अधिकारी है, ताते परखके देखो; जामें बहुरि न ब्रह्ममें उलटि समाय । अनेक जन्मसे जो झूले, जगत्से ब्रह्म औ ब्रह्मसे जगत् अनेक दाँई भये सो कछु भये नहीं; परन्तु जो कोई सुज्ञानी बिचारवान होय, सब तत्त्वमसी आदि परखके पारख पर शाँत होय तो ये झूलनेको भय नहीं । गुरु कहते हैं कि-सच्चा पारखको जो जीव जाय मिले तो बहुरि न झूले आन । फिर आवागमनमें नहीं झूलनका । ये अर्थ । विरह अर्थ-भर्म हिंडोला झूले सब जग आया गुरु कहते हैं कि-जामें प्रथम भ्रम खड़ा हुआ सोई हंस संसारमें जीव कहायके झूला । ये अर्थ । पाप पुण्यके खंभा दोऊ । पाप कहिये पर स्त्री औ पुण्य कहिये अपनी विवाहकी स्त्री, येही दोनों खंभा । अब ये दोनों प्रकारकी नारी ताका रूप औ शृंगार सोई माया खंभाके ऊपरकी डाँड़ी औ विषय सोई मरुवादिक फूल, तामें विषय वासना सोई सुगन्ध, विषय लोभी सोई भौंरा होके विषय वासनामें लुब्ध भये औ काम सोई किल्ला मारा । तामें शुभ घरकी स्त्रीसे लुब्ध होना औ अशुभ परस्त्रीसे गमन करना, ये दोनों डोरी संकल्प विकल्पात्मक कर्मी अकर्मी दोनोंने गही औ कर्म मैथुनादिक सोई पट-रिया, तापर बैठके को को न झूले आन ? । तो विषय झूलेमें सब, जो कोई लुब्ध हुए सो झूले । ये अर्थ । गण, गन्धर्व, मुनिवर, देव, इंद्र, नारद, शारदा, व्यास, फणींद्र, ब्रह्मा, महेश, शुकदेव, सूर्य, चन्द्र विष्णु, छौ शास्त्री, चार वेदी, चौदह मनु, सप्त ऋषि, एकइस गणपती, तीन लोक आदि जेते खानी बानी हैं सो सब खोजि देखो, कोई स्थिर नहीं । गुरुने जेते पीछे बताये सो सब स्त्री भोग औ विषयनमें आशक्त भये, ताते परम बेहाल हैं । औ आवागमनमें झूलते हैं । गर्भवासमें जाते हैं फिर बाहर निकरते हैं । भीतरसे बाहर, बाहरसे भीतर जाते आते हैं ।

सो सतसंगमें पारख पदको खोजि देखो, जाते जीव बहुरि गर्भवासमें न उलटि समाय तो ये झूलबेकी भय नहीं परन्तु जो पारख पायके शाँत भये, ऐसा जो सुज्ञान होय, यथार्थ सत्त पारख मिले सुकृत जीवको तो बहुरि न झूले आन। जो जीवको पारख प्राप्त होय, तो फिर गर्भविषयमें आसक्त न होय तो आवागमन काहेका ! सब मिथ्या भूत। ये अर्थ ॥ १ ॥

हिंडोला २.

बहु बिधि चित्र बनायके। हरि रचिन क्रीड़ा रास ॥
जाहि न इच्छा झूलबेकी। ऐसी बुद्धि केहि पास ॥
झूलत झूलत बहु कल्प बीते। मन नहिं छाड़ै आस ॥
रच्यौ रहस हिंडोरवा। निशि चारिउ युग चौमास ॥
कबहुँक ऊंचे कबहुँक नीचे। स्वर्ग भूत ले जाय ॥
अति भरमित भरम हिंडोरवा। नेकु नहीं ठहराय ॥
डरपत हौं यह झूलबेको। राखू यादव राय ॥
कहैं कबीर गोपाल विनती। शरण हरी तुव आय ॥२॥

टीका गुरुमुख—तीर्थ मूर्तिदेव देवहरा कथा पुराण पोथी ग्रंथ मन्त्र यंत्र तंत्र औ नाना भेष, योगी संन्यासी जङ्गम वैरागी, काहू खाक लपेटी, कोऊ भगवे वस्त्र पहिरे, कोई कान फारे, कोई बाल उन्मत्त पिशाच हुए; ऐसे बहु विधि चित्र बनायके हरी कहिये गुरुवा माया, सो ताने क्रीड़ारास खेल रचा। अब हरी कहिये माया, माया कहिये स्त्री, सो ताने नाना प्रकारके श्रृंगार किया।

कवित्त—नाकमें बेसर रचि अंगहूँ केसर जामें, भौंहकी कमान बिच अंजन रेख लाई है ॥ कचमें फुलेल टीका बेंदीकाहु जामें मेल, मोतिनके झेल सारी जरतारी भाई है ॥ सोभत विशाल भाल ताहूपर रेख लाल, कर्ण भूषण कंठमाल डोलत छबि छाई है ॥ चंपकली पंचकली दुलरि

तिलरि मोहन माल, रत्नमाल मुक्तमाल भूषित अधिकाई है ॥ कंकन किंकिनि मुद्रिका चमक चूरी, पाँवोंके नूपुर देइ कामको जगाई है ॥ १ ॥

इस प्रकारसे बहुविधि चित्र स्त्री मायाने बनाया औ आप क्रीड़ा करनेके वास्ते रास मंडल, विषय मंडल संसार रचा । ये अर्थ । अब स्त्री माया औ गुरुवा माया ये दोनोंके रास क्रीड़ा भक्ती विषयमें न झूलना, ऐसी बुद्धी केहि पास ?। झूलनेकी आसा बंद सब कोई हैं । ये अर्थ । झूलत झूलत बहु कल्प बीते । अनेक बार जगत् जाके ब्रह्म हुवा औ ब्रह्म जाके जगत् हुवा, पर अबहीं किसीकी आशा छूटती नहीं । इस गुरुवा मायाके रहसमें अनेक दाँव जीव राजा हुए औ अनेक दाँव दरिद्र हुए औ अनेक दाँव भागवंत हुए । औ स्त्री मायाके रहसमें अनेक दाँव कुत्ता आदि विषयी योनिनको प्राप्त भये, पर मन अभी आशा छोड़ता नहीं । रच्यो रहस हिंडोरवा, निशि चारिउ युग चौमास । ये रहस रूपी हिंडोला मायाने रचा । निशि कहिये गाफिली, भूल, सो चारिउ युग भूलहीमें उपजते हैं औ भूलहीमें जाते हैं । चौमासा चार वेद, सोई अंधियारीमें बानी बरसते हैं, जामें जीव सब भीजते हैं औ झूलते जाते हैं। ये अर्थ। औ चार युग कहिये आठ प्रकारके मैथुन, येही महा गाफिली अँधियारी तथा भग मुख दोनों कुच, येही चार मासमें सब झूल रहे हैं। कबहुँक ऊँचे कबहुँक नीचे, स्वर्ग भूतले जाय । अति भ्रमित भ्रम हिंडोरवा, नेकु नहीं ठहराय । अति भ्रमित भ्रम हिंडोरवा जामें संपूर्ण जीव झूलते हैं । ये गुरुवा माया औ स्त्री माया दोनोंके रास बश हुए और कबहूँ ऊँचे घर ऊँचे योनीमें पैदा भये, कबहूं नीचे घर नीचे योनीमें पैदा भये औ नाना दुःख भोगे । कबहूँ स्वर्गादि योनिनमें गये, कबहूँ पातालमें अधोयोनिनमें परे । ऐसा अति भ्रमित बानी गुरुवाई औ स्त्रीका भ्रम हिंडोला है, जामें जीव सब झूल रहे हैं, जिनकी अणुमात्र स्थिति नहीं । ये अर्थ । जीवमुख—ये जगत्का महा दुःख औ गर्भ यातनाका दुःख औ नाना बानीका त्रास देखके जीव तप्त होके बोलते

हैं—डरपत हौं यह झूलबेको राखु यादवराय। कहैं कबीर गोपाल बिनती, शरण हरी तुव आय। जीव त्रिविधि तापमें तप्त होके दूसरा कर्ता निश्चय किया औ बोलने लगे कि-हे भगवंत ! हमारी विनती सुनो, हम दीन लाचार तुम्हारी शरण आये हैं। ये प्रपंच झूलेसे हम बहुत डरते हैं। हमारे को रक्ष, रक्ष; हम तुम्हारे शरण हैं। हमारेको आवागवनसे बचाव। ये अर्थ ॥ २ ॥

हिंडोला ३.

लोभ मोह के खम्भा दोऊ। मन से रच्यो है हिंडोर ॥
झूलहिं जीव जहान जहाँलग। कितहुँ न देखों थिति ठौर॥
चतुर झूलहिं चतुराइया। झूलहिं राजा शेष ॥
चाँद सूर्य दोउ झूलहीं। उनहुँ न आज्ञा भेष ॥
लख चौरासी जीव झूलहीं। रविसुत धरिया ध्यान ॥
कोटि कल्प युग बीतिया। अजहूँ न माने हारि ॥
धरती अकाश दोउ झूलहीं। झूलहिं पवना नीर ॥
देह धरे हरि झूलहीं। ठाढ़े देखहिं हंस कबीर ॥३॥

टीका गुरुमुख—लोभ स्वर्गादिक वासना औ मोह स्त्री पुत्र घर धन आदिक विषय, ये दोनों खंभा, औ मनकी कल्पना बानी निवृत्ती औ प्रवृत्ती, ये दो रस्सी; ताका अपने मनमें हिंडोला रचा जीवने, तामें आपही झूलने लगा। ये अर्थ। झूलहिं जीव जहान जहाँ लग। अब जेते जहानके जीव हैं सो सब भरम कर्ममें झूलते हैं। कहीं स्थिति ठौर दीखती नहीं। जो बड़े-बड़े महात्मा सब पैदा भये तिन सबकी बानी औ वेद बानी हाजिर है। तुम विचार करके देखो, पारख ठौर कहीं प्राप्त भई नहीं। कि कोई वेदादिक बानीमें पारख स्थिति दिखाती नहीं। ये अर्थ। चतुर ब्रह्मादि ज्ञानी चतुराई ज्ञानमें झूलते हैं, कहते हैं कि-हम ब्रह्म हमारे ऊपर कोई नहीं। झूलहिं राजा शेष। योग समाधीमें शेष झूलते हैं, कहते हैं कि-हम मुक्त, हम सिद्ध। चाँद सूर्य दोऊ झूलहीं।

चाँद कहिये कर्म योगी, सूर्य कहिये कर्म संन्यासी, ये दोनों वेद आज्ञा प्रमाण भेष धारण करके नाना कल्पनामें झूलते हैं । लख चौरासी जीव झूलहीं । चौरासी कहिये देह, सो देह अभिमान युक्त सब जीव होके स्त्री देह पर लक्ष लगाये । रविसुत कहिये यम, यम कहिये स्त्री, सो जीवको स्त्रीका ध्यान लगा, सो कोटी कल्प हो गये आज परयन्त जीव झूलते जाते हैं, कोई हार नहीं मानता। स्त्रियनके पाँव सोई खंभा, विषय झूले पर बैठके जीव भगमें जाते हैं । जब बाहर निकरते हैं तो फिर गर्भमें जाते हैं । ये अर्थ । धरती आकाश दोऊ झूलहीं, झूलहिं पवना नीर । जब स्त्रीका निदिध्यास लगा तब काम अग्नी प्रचंड हुवा औ धनंजय वायुने रेत हलाय दिया । तब धरती देह औ अकाश काम ये दोनोंमें युक्त होके जीव विषय झूले पर बैठे औ भगद्वारेमें झूलते हैं । इसी प्रकारसे हरी माया देह धारण करके जीव सब आवागमनमें, स्वर्ग-नर्कमें, ब्रह्म-जगत्में, स्त्री-पुरुषमें झूलते हैं । औ हंस कबीर कहिये पारखी जीव, सो सदा पारख पर आरूढ़ होके सबका तमाशा देखते हैं औ जा पर कृपा करते हैं ताहूको परखाय देते हैं । ये अभिप्राय । तो याको तात्पर्य अर्थ ऐसा है कि-जो कोई पारख पर आरूढ़ भये सो पारख रूप होके आवागवन, जगत्-ब्रह्म, स्वर्ग-नर्क, पिंड-ब्रह्मांड, ये चार प्रकारके झूले से बचे औ ज्ञानी, भक्त, योगी सब झूलेमें झूलते हैं । ये अर्थ । धरती कहिये स्थूल, नीर कहिये सूक्ष्म, सूर कहिये कारण, पवन कहिये महाकारण, आकाश कहिये कैवल्य; ये पाँच देह वेदके प्रमाणसे जीवनने मानी, सोई झूला रचा । सूक्ष्म स्थूल दोनों खंभा औ कैवल्य सोई डाँड़ी, महाकारण सोई रस्सी औ कारण सोई पटरिया, झूलनेवाला जीव । अथवा-मा बाप दोऊ खम्भा, द्रव्य संपत्ती डाँड़ी, पुत्र कुटुंब आदि डोरी औ स्त्री पटरिया, झूलनेवाला जीव । अथवा जीव शिव दोऊ खम्भा औ पारब्रह्म डाँड़ी, ईश्वर डोरी, माया पटरिया, झूलनेवाला जीव । अथवा स्थूल

बिराट दोऊ खंभा औ आत्मा डाँड़ी, तुर्या मूल माया डोरी, अविद्या कारण पटरिया, झूलनेवाला जीव। अथवा ब्रह्मा विष्णु दोनों खम्भा, ब्रह्म डाँड़ी औ माया डोरी अज्ञान पटरिया, झूलनेवाला जीव। अथवा इंगला पिंगला दोनों खम्भा, सोहं डोरी निर्विकल्प डाँड़ी, सुषुमना पटरिया, झूलनेवाला जीव। अथवा हंकार मन दोनों खम्भा, अन्तःकरण डाँड़ी, चित्त डोरी, बुद्धी पटरिया, झूलनेवाला जीव। अथवा निर्गुण सगुण दोनों खम्भा, वेद डाँड़ी, श्रुति डोरी, स्मृती पटरिया झूलनेवाला जीव। अथवा कर्म उपासना दोनों खम्भा, ज्ञान डाँड़ी, योग डोरी, भक्ति पटरिया, झूलनेवाला जीव। अथवा अकार उकार दोनों खम्भा, बिन्दु डाँड़ी, अर्धमात्रा डोरी, मकार पटरिया झूलनेवाला जीव। अथवा शुभ अशुभ आशा सोई खम्भा, देवता डाँड़ी, सप्त कोटी महामन्त्र डोरी औ यंत्र तन्त्र क्रिया पटरिया, झूलनेवाला जीव। अथवा धरती जल दोनों खम्भा, आकाश डाँड़ी, वायु डोरी, अग्नि पटरिया झूलनेवाला जीव। अथवा जागृति स्वप्न दोनों खंभा उन्मनी डाँड़ी, तुर्या डोरी, सुषुप्ति पटरिया, झूलनेवाला जीव। ये अर्थ। इस प्रकारका हिंडोला गुरुने बताया, जामें सब जीव झूलते हैं। सो हे सन्तो! ये झूले छोड़ो। ये अभिप्राय। तो गुरुने झूला तो परखाया; परन्तु बिना भूमिका कछु झूला खड़ा होता नहीं। ये शंका। तो छठई तेरी देह, सोई झूले की भूमिका। सो तू झूला छोड़ औ भूमिका पर ठहर। ये अभिप्राय। तो ये पाँच-पाँच पचीस प्रकृती संपूर्ण झूले बने औ जीव सब अनेक प्रकारसे झूलने लगे। औ जो उतर परा झूलेसे, सो भूमिकापर ठहरा; परंतु ये झूला तो कछु नाश हुवा नहीं औ नाश करे नाश होता भी नहीं, जो झूला सब जीव मात्रको प्रिय लगा। सो कोई डोरीमें ही लगे हैं, कोई डाँड़ीमें ही लगे हैं, कोई खम्भनमें ही लगे हैं, कोई पटरियामें ही लगे हैं, कोई बैठे हैं; ऐसा झूला सबको प्रिय है। भला जो झूलेसे उतर

परा जीव औ झूला तो उसके सामने बना है, तो फिर कधी झूले पर जीव चढ़े तो क्या करना ? क्योंकि झूला भी वहीं मकान पर है औ जीव भी वही मकान पर है, दोनोंकी भूमिका एक । ये शंका । अरे जाने झूलेका हवाल सब समुझा औ दुःखरूपी जानके छोड़ा, सो फिर काहेको चढ़ेगा ? । जैसा सर्प विच्छूको जो जानता है सो कछु छूता नहीं । ये दृष्टांत । भला झूलाके पूर्वारंभमें ये जीव कैसा था ? औ कौन तरह कौन भूमिकापर था ? औ स्वतन्त्र था कि इसपर कोई दूसरा मालिक था ? । औ झूला किससे खड़ा हुवा ? कि स्वतन्त्र है ? औ जीव झूले पर कबसे चढ़ा ? कि निरन्तर झूले ही पर है । औ झूलेका कारण कौन है ? या कोई नहीं ? याका भेद हे गुरु दीनदयाल ! बतलाइये; ऐसी शंका संतनको भई । तब गुरु साखी कहिके संपूर्ण शंका निराकरण करते हैं, सो सुनके मनन करेगा ताको अपरोक्ष पारख स्थिति प्राप्त होयगी । ये निश्चय ॥ ३ ॥

इति हिंडोला टीकासहित गुरुकी दयासे संपूर्ण ॥

दया गुरुकी

अथ साखी लिख्यते

★

प्रथम अनुसार

साखी–जहिया जन्म मुक्ता हता । तहिया हता न कोय ॥
छठी तुम्हारी हौं जगा । तू कहाँ चला बिगोय ॥१॥

टीका गुरुमुख–गुरु कहते हैं कि–जब पृथिवी, जल, तेज, वायु, आकाश आदि, त्रिगुण, अवस्था, प्रकृती औ स्त्री आदि, चार खानी औ दूसरा मानुष जात भी कोई न हता, तब ये जीव आप मुक्त था । कौन प्रकारसे ? ये शंका । तो दूसरा विजातीय बंधन तो कछु था ही नहीं, तो मुक्त सहज ही था । ये अभिप्राय । जो बंधन मूलमें न था सो बीचमें कैसे पैदा भया ? औ पाँच तत्त्व न थे तब ये जीव कहाँ था ? ये शंका । तो जब पृथिवी न हती तब साँच भूमिका हती औ जल न हता तब विचाररूपी जल था औ अग्नी न हती तब शीलका प्रकाश था औ वायु न हता तब दयाका पसार था औ आकाश न हता तब धीरजका आकाश था । ये जीवके पांचों अनादि तत्त्व, याहीको ब्रह्मांड औ याही तत्त्वनकी देह हंसाकी हती । पक्के तत्त्वनके आधारसे पक्का देह हंसाका हता; तामें हंस एक औ रूप एक, दूसरा भाव कछु न हता । जीव आपही स्वतः सिद्ध, याको कर्ता कोई दूसरा नहीं । ये निश्चय । हे संतो । सोई तुम्हारी छठी देह, ताको छोड़के तुम पंच देहनके हिंडोलामें बैठे । ये अभिप्राय । तो कौन प्रकारसे पंच देह पैदा भई ? औ कौन प्रकारसे छठी देह छूटी ? औ कौन प्रकार जीव हिंडोलेमें परा । ये शंका ! तो छठई देहमें जब हंस था तब बहुत चैनमें सुखी था । सो एक समय हंसने अपना देह औ अपना ब्रह्मांड देखके

परम हर्षायमान हुआ । तब इंद्री गोलक औ इंद्रियनके बिषय थे कि नहीं ? । ये शंका । तो न कच्चे इन्द्री गोलक, न कच्चे इंद्रिनका ब्यौहार थे । तो कैसे थे ? औ कैसा देखा ? सो सुनो । विचाररूपी नेत्र औ शीलका प्रकाश औ सत्त सोई भास, सो विचाररूपी नेत्रसे देखा । ये अभिप्राय । अब छठई देह प्रथम वर्णन करता हौं, सो सुनो । साँचकी प्रकृती-निर्णय नाड़ी, निर्बिंदु निर्मल मास, प्रकाश त्वचा, स्थिर हाड़, छिमा रोम । विचारकी प्रकृती-आस्ति नास्ति पद बिलगान सोई पसीना, शुद्ध सोई बिंदु, हेतु सोई रक्त अमल सोई रार, निर्मल सोई मूत्र । शीलकी प्रकृती-अक्षुधा, अतृषा, निर्मैथुन, निरालस, अनिद्रा । दयाकी प्रकृती-अलोल अचल, अपसर, असंकोच, अधावन । अब धीरजकी प्रकृती-अकाम, अक्रोध, निर्लोभ, निर्मोह, निर्भय । ये पाँचकी पचीस प्रकृती । अब दश इंद्री सुनो-शीलकी इन्द्री नेत्र पाँव, धीरजकी इन्द्री कान वाक, साँचकी इन्द्री गुदा नाक, दयाकी इन्द्री त्वचा हाथ, विचारकी इन्द्री लिंग औ जीभ । ये दस इन्द्री । अब तीन गुण सुनो-विवेक वैराग्य औ बोधभाव । इस प्रकार तेरी छठई देह; सो ताही देहको हंसने देखा औ खुशी हुआ सोई हौं जागा, आनंद जागा; जो सर्वोत्कृष्ट आनंद, तहाँ हंसकी तत्त्व प्रकृती आनंदमें लय हो गई औ देहकी विस्मृती सुषुप्तिवत् भई । सो हंस देह छूटी औ कैवल्य देह हंसको प्राप्त भई । तहाँ अभाव भूमिका, विज्ञान जल, ब्रह्माग्नी अग्नी, निरांत बात, निजाकाश आकाश तत्त्वमस्यादि त्रिगुण औ प्रकृतीतीत प्रकृती । तहाँ हंस कछु काल रहे, फिर चैतन्य स्फुर्ती हुई । सो कैवल्य देह हंसकी छूटी, जाको सब आत्मा अधिष्ठान ब्रह्म बोलते हैं । फिर हंसको महाकारण देह प्राप्त भई । तहाँ सुलीन भूमिका, जानीब जल, प्रकाश अग्नि बड़वाग्नी, चिन्मय बात, चिदाकाश आकाश, तुर्या अवस्था, साक्षी-बोध-ज्ञान ये त्रिगुण, सकल संपत्ति सहित प्राप्त भई । फिर तहाँसे प्रत्यगात्मा अभिमानसे प्राज्ञ अभिमान उत्पन्न भया तब

सुषुप्ति अवस्था भई औ हंसको कारण देह प्राप्त भई । तहाँ सौलेष्टता भूमिका, आवर्ण जल, मंदाग्नि अग्नि स्थिर पवन, महदाकाश आकाश जड़-जाड़-मूढ़ ये त्रिगुण । तहाँ हंस कछु काल रहे, फिर प्राज्ञ अभिमानसे तैजस उपजा । तब हंसको लिंगदेह प्राप्त भई । तहाँ स्वप्न अवस्था, गतागत भूमिका, चंचल जल, कामाग्नि अग्नि, गुल्फ वायु, मठाकाश आकाश, रेचक-पूरक-कुंभक ये त्रिगुण । इस प्रकारका लिंग देह, तहाँते तैजस अभिमानसे विश्व अभिमान पैदा हुआ; सो स्थूल देह हंसको प्राप्त भई । तहाँ जाग्रती अवस्था, क्षिप्रा भूमिका, काम जल, जठराग्नि अग्नि, श्वास वायु, शून्य घटाकाश, रज-तम-सत्त्व ये त्रिगुण, दश इंद्री आदि विकार गोलक बिषय सब पैदा भये । औ हंसको स्मृति आई । हंकार खड़ा हुवा । तब पाँच पंचक पैदा भये—अंतःकरण चित्त मन बुद्धि हंकार । आकाश पंचक-अर्धशून्य, उर्द्धशून्य, मध्यशून्य, सर्वशून्य, महाशून्य । वायु पंचक-प्राण, अपान, समान, ब्यान, उदान । अग्नि पंचक-कान, नाक, आँखि, जीभ, त्वचा । जल-पंचक-शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध । पृथिवी पंचक-हाथ, पाँव, मुख, गुदा, लिंग । एवं पंच पंचक निर्माण भये औ पचीस प्रकृती निर्माण भई, । हंसका पक्का देह जायके कच्चा देह हुवा औ पक्का ब्रह्मांड जायके कच्चा ब्रह्मांड हुवा । धीरजते आकाश, दयाते वायु, शीतते तेज, विचारते जल, सत्तते पृथिवी, गुणनमें गुण औ प्रकृतीकी प्रकृती; इस प्रकारसे तेरी छठई देहसे हौं भाव आनंद जागा, ताते पक्केका कच्चा हुआ । तब हंकार आया औ इच्छा किया, ताते नारी आदि चौरासी योनि पैदा भई औ सबमें आय समाया । फिर कल्पित दूसरा कर्ता खड़ा किया । औ कल्पि-कल्पि नाना बानी-वेद शास्त्र, पुराण, स्मृति, छंद, प्रबंध, मंत्र, तंत्र, यंत्र बनाया । अब इनके पीछे तू कहाँ चला विगोय ? । हे गुरु ! विगोनेका अधिष्ठान मेरी छठी देह; सो सब भास अध्यास छोड़के जो मैं छठी भूमिका पर ठहरा,

तो फिर येही दशाको प्राप्त होऊँगा। क्योंकि जब कछु न हता औ जीव स्वतंत्र मुक्त था तो उसे क्या खुशी थी ? कि मेरी पक्की देह जाय औ कच्ची देह होय, ऐसी दरिद्र दशा होय। ये कछु उसको इच्छा न होके ये दशा प्राप्त भई। तो अब वो देहको प्राप्त भया औ फिर ऐसी दशा न होवेगी, याको प्रमाण क्या ?। ये संपूर्ण कच्चा मसाला पंच देह सहित छठी देहमें था। अगर न होता तो कहाँसे निकरता ?। ये शंका। तो छठी देह तो हौं भाव औ सब विकारका मूल-ठहरा। सो अब तेरा छठवाँ देह कहां है ? औ पंच देह कहाँ हैं ? तू यथार्थ परखके देख। तो हे गुरु ! अब तो मेरेको पक्का देह आदि चारों देह कच्चे स्थूल देहमें मालूम होते हैं। तो हे हंस ! तुम विचार करो कि-प्रथमारम्भमें स्थूल देह आदि पाँचों देह एक पक्के देहमें थे औ अब पक्का आदि पंच देह स्थूलमें है;। तो सोई पक्का कच्चा हो गया। अब पक्का क्या कहीं न्यारा बैठा है ? नाहक मिथ्या कल्पना काहेको करता है ? ये पाँच देह तेरेको परखाके छुड़ानेके वास्ते छठी देह सिद्ध किया, सो तू छवो देह परखके पारख भूमिका पर ठहर। पारखीको न पक्कीसे काम, न कच्चीसे काम। जो छवों भूमिका परखै सो पारखी, ताका स्वरूप पारख। तो पारखी पारख रूप, एक पारख जीवकी भूमिका और सब नास्ति धोखा। पारखमें कच्ची पक्की कछु संभवती नहीं। जब कच्ची नासी तब पक्की भी गई। जबलग पक्की तबलग कच्ची, जबलग कच्ची तबलग पक्कीकी रहनी लेना। और पक्की कच्चीसे कछु काम नहीं, यथार्थ पारख पर स्थिर होना। ये अर्थ ॥ १ ॥ *

* अर्थः—पारखनिष्ठ सद्गुरु श्री पूरण साहेब टीकामें लिखे हैं कि, पाँच तत्त्व, तीन गुण, अवस्था, प्रकृति, चार खानियाँ, दूसरा मनष्य जाति आदि कोई नहीं थे, तब जीव मुक्त था। क्योंकि जीव के पास विजाति बन्धन कोई भी नहीं था। परन्तु पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश के स्थान में क्रम से सत्य, विचार, शील, दया और धैर्य, यं नादि तत्त्वों की देह हंस की थी यही हंस का ब्रह्माण्ड, जिसमें हंस एक और रूप एक, जीवका कर्ता कोई दूसरा नहीं। सो हंस ने अपनी छट्ठी देह छोड़ी, और 'हौं जागा' कहिये आनन्द जागा। उसी विशेष आनन्द में उसके पक्के तत्त्व लय हो कर, क्रम से कैवल्य देहरूप विज्ञानमय कोश, महाकारण देहरूप ज्ञानमय कोश, कारण देहरूप मनोमय कोश, सूक्ष्मदेहरूप प्राणमय कोश, और स्थूलदेहरूप अन्नमय-

साखी–शब्द हमारा तू शब्दका। सुनि मति जाहु सरक॥
जो चाहो निज तत्त्वकी। तो शब्दहि लेहु परख॥२॥

–कोश, इन पाँचों कोशों के हिण्डोले में हंस पड़ा। सत्य, विचार, शील, दया, और धैर्य, ये पक्के तत्त्व उलट कर, क्रम से पृथ्वी, जल, तेज, वायु, और आकाश, ये कच्चे तत्त्व रूप कच्चा ब्रह्माण्ड प्रकट हुआ, और कच्ची स्थूलदेह में हंस आया। फिर इच्छा करके नारी आदि चौरासी योनियाँ रूपी पिण्ड—ब्रह्माण्ड उसी ने बनाया। अब इनके पीछे हे जीव! तूं कहाँ चला बिगोय अर्थात क्यों भ्रमता फिरता है? ॥१॥ अब वास्तविक साखी का संक्षिप्त अर्थ और सुनिये:–

दूसरा अर्थः—हे जीव! जिस समय तुम पहले भी मुक्त होनेकी जगह मनुष्य देहमें था, उस समय मनुष्य खानीको छोड़कर अन्य खानीके, अर्थात् पशु आदि खानीके देहोंका बन्धन परवशता कोई भी नहीं था। अब फिर भी चौरासी योनियाँ भोगकर छट्‌ठी कहिये मनुष्य देहमें आ गये हो! सो तुम इस मनुष्य देह (हंस देह) को नष्ट करके कहाँ चला जाता है? इसी मनुष्य देहमें रहते हुए पारखी गुरुके द्वारा सत्सङ्गति करके स्वस्वरूपको जान ले, तब आवागमन से रहित हो जायगा॥ २॥

—निर्पक्ष सत्यज्ञान दर्शन पृष्ठ १९०–१९१ से लिखा

साखीः—जहिया जन्म मुक्ता हता, तहिया हता न कोय॥
छठी तुम्हारी हौं जगा, तूं कहाँ चला बिगोय॥ १॥

इस प्रथम साखी को ध्यान से पढ़िये! पाँच तत्त्व और छठवाँ जीव स्वयं अनादि होने का निर्देश सदगुरु ने इसमें साफ किया है:—भावार्थ:—जहिया=जब पहले; जन्म=मनुष्य जन्म में; मुक्ता=जीव मुक्ति होने की जगह पर; हता=था; तहिया=तब; हता न कोय=तीन खानी के परवशंता के बन्धन, कोई जबरन बन्धन में रखने वाला नहीं था। छठी =पाँच तत्त्व और छठवाँ जीव नित्य होने से ही तुम्हारी देह में अध्यास आसक्ति के कारण से; हौं जगा=पंच विषयों के पंच अभिमान जगा, उसी अहं अध्यास के कारण से तब भी तूं आवागमन में पड़कर अनेक दुख भोगा। अब भी उसी प्रकार अपने पद को बिगाड़ कर तूं कहाँ चला जाता है। अर्थात् जब पहले भी जीव मनुष्य जन्म में था, तब भी मुक्ति हो सकने के ही जगह में था। कर्म भूमिका रूप नर जन्म ही जीवन्मुक्त होने का जगह है। भोग भूमि का रूप तीन खानियों के समान परवश, लाचार शक्ति हीन परतन्त्र, मुक्ति के लिये पुरुषार्थ कर ही न सके ऐसा प्रतिबन्ध मनुष्यों के लिये नहीं है। पाँच तत्त्वों से भिन्न छठवाँ चैतन्य जीव के पास में पाँच तत्त्वों के कार्य रूप देह सम्बन्ध लगा होने से ही सब प्रकार से सुखों का इच्छा करके अहंकार जाग्रत कर नाना कर्मों को किया। उसी विषय भोगादि कर्मों के अध्यासवश पुन: पुन: चार खानियों के बन्धनों में पड़ते आ रहा है। अब, यदि इस नर जन्म में गुरु पारख के बल से परख कर के उन समस्त अहंता रूप अध्यासों को परित्याग कर दे तो वह जीवन्मुक्त हो सकता है। हे जीव! तूं पहले के समान अब भी कर्मों को बिगाड़ कर के फिर भी उसी बन्धन में क्यों चला जाता है? अपने मुक्ति के लिये अब इस नर जन्म में तो चेत कर! इत्यादि भाव इसमें कहा है। सदगुरु श्री कबीर साहिब ने छठी शब्द मूल में कह कर पाँच तत्त्व और छठवाँ जीव स्वयं नित्य अनादि है, यह दर्शाया है। ऐसा समझना चाहिये। जीव मुक्त होकर बन्धन मे आया, ऐसा इस साखी में नही कहा है। बन्धन से ही भव बन्धन में आया है, ऐसा कहा है।

विशेष खुलासा समझना हो तो पारखी सन्तोंके सत्सङ्ग द्वारा समझिये।

—रामस्वरूपदास।

टीका मायामुख—शब्द कहिये, आवाज कहिये, निराकार कहिये, निअक्षर कहिये, ब्रह्म कहिये; सो ब्रह्मसे जगत्‌की उत्पत्ती भई। शब्द ब्रह्मेति श्रुति। हे जीव! तू शब्दका, माया जीवको उपदेश करती है कि तू ब्रह्मका अंश। कौन तरहसे? सो सुनो; परन्तु सुनके धोखेमें सरक मत जाना, मैं तुम्हें परखानेके वास्ते कहता हौं जो तुम्हारेको पारख पद मिले। ऐसा गुरु कहते हैं। **गुरुमुख**—जो चाहो निज तत्त्वको, तो शब्दहि लेहु परख। शब्दका आकार सोहं, अवाजका आकार ॐ, निराकारका आकार अनहद, अनहद कहिये ररा, निअक्षरका आकार आकाशवत् समाधी अथवा श्वाँस सो निअक्षर। सो निअक्षरते अक्षर कूटस्थ आदि सब जीव पैदा भये, ऐसा सब सामर्थनका औ वेदका प्रमाण है। औ श्वासासे सों ॐ रं ये तीन अक्षर पैदा भये, ये योगिनका प्रमाण। तब आदि शब्द निअक्षर, ताते तीन शब्द अक्षररूपी पैदा भये। तो येहू निअक्षर, जैसा मट्टीका विकार मट्टी, जलका विकार जल; तद्वत्। ये निश्चय जीवनको कैसा हुआ? सो सुनो—प्रथमारम्भमें जीव पक्केसे कच्चा भया तब नाना प्रकारके सुख-दुःख, जन्म-मरण आदि प्राप्त भये। तब अनुमान जीवमें खड़ा भया कि हमारा कर्ता कोई दूसरा है। तब 'अस्ति ब्रह्मेति' ऐसी बानी बोली। ताहीसे वेद पैदा भये औ कर्ताका खोज बाहर करने लगे। तब कर्मकांड, उपासनाकांड; ये दोनों कांड वेद बना; परन्तु संशय कछु छूटी नहीं। तब घटमें सुरत लगायके खोज करता भया तो श्वासमें सोहं शब्द मालूम हुवा। नाभीसे श्वास सकार लेके उठा औ त्रिकुटीके ऊर्ध कुम्भ पास आया तब हं शब्द हुआ: सो सोहं सोहंमें सुरत लगी। तब सोहं हंसो, लोम विलोम चार अक्षर ध्यानमें आये औ लक्ष थिर हुआ। तब श्वासा त्रिकुटीसे कंठमें आया औ तेजस अभिमान खड़ा हुआ, ताते स्वप्न अवस्था भई। तब नाना प्रकारके पशु पक्षी खानी पैदा भई। हिरण्यगर्भका अनुभव लेके श्वास हृदयमें आया। सो वहाँसे प्राज्ञ अभिमान् खड़ा हुआ औ तेजस लय हो गया। तब स्थावर खानी

नाना प्रकारके अंकुरादि पैदा भये औ गाफिली भई, गाढ़ निद्रा लगी। अव्याकृतका अनुभव लेके आगे नाभी स्थानमें श्वास लय भया औ प्रत्यगात्मा अभिमान सहित चिन्मय वृत्ती होके तुर्या अवस्था भई। तब अष्ट सिद्धि, नौ निद्धि आदि षड्गुण ऐश्वर्य उत्पन्न भया। औ मूलमायाका अनुभव लेके निरंजन अभिमान पैदा भया तब निर्विकल्प समाधी भई। औ तुर्यातीत अवस्था, भावातीत भाव, कलातीत कला आदि लेके भ्रमर गुफामें श्वास लय भया, सो पूर्णानन्द स्वरूपका अनुभव हुआ। तब समाधी खुली औ ब्रह्म निश्चय हुवा। तब 'सोहं ब्रह्मास्मि' वाक्य सिद्ध हुआ। इस प्रकारसे सोहं शब्द बनाया। फिर पाँच जगाकी पाँच मात्रा लेके ॐकार शब्द बनाया। तब श्रवण द्वारेसे ब्रह्मांड में लक्ष लगाया तो रारा शब्द मालूम भया; तहाँसे लय योग बनाया। इस प्रकारसे तीन शब्द-सोहं ॐ ररंकार निर्माण भया तब योगकांड वेदमें बना। फिर तीनों शब्दका अर्थ बिचारने लगा सोई ज्ञानकांड। इस प्रकारसे संपूर्ण चारों वेद पैदा भये। सोहंका अर्थ कि-सो कोई ब्रह्म है सो मैं ही, वोहंका अर्थ कि वो कोई ब्रह्म है सो मैं ही, ररंका अर्थ कि सब प्रकाश औ तेज मैं ही। इस प्रकारसे एक अद्वैत चैतन्य ब्रह्म, ऐसा जो शब्द है सोई हमारा स्वरूप; ऐसी मानन्दी जीवको हुई। सो संसार में ईश्वर औ गुरु कहलाये। औ दूसरे जीवनको उपदेश किया कि तू ईश्वरका अंश है औ शब्द तेरा मालिक है। तो शब्द हमारा उपदेश औ तू शब्दका चेला, ऐसा उपदेश जगत्में गुरुवा लोग करते हैं। सो तू सुनके सरके मत, भ्रमें मत, ऐसा गुरु जीवको समझाते हैं। कि हे जीव! सोहं ॐ ररं औ चार वेद छौ शास्त्र संपूर्ण जीवकी कल्पना औ जेतिक आनंदी द्वैत, अद्वैत, निर्विकल्प, सविकल्प; सो सब जीवका अनुमान अध्यास भास बन्धन है, कछु निज स्वरूप नहीं। जो तू निज स्वरूप चाहता है तो भास अध्यास कछु माने मत। शब्द तो तेरेसे होता है और तुरत ही नाश होता है। सो बन्धनमें तू मत परे, शब्दको परख ले। जासे शब्द परखनेमें आवै सोई तेरा निज स्वरूप। ये अर्थ ॥२॥

साखी–शब्द हमारा आदिका। शब्दे पैठा जीव।
फूल रहन की टोकरी। घोरे खाया घीव ॥३॥

टीका गुरुमुख–शब्द हमारा आदिका, ये मायाका उपदेश भया तब जीव शब्दमें पैठे। किसीने सोहं शब्दमें सुरत लगाई, किसीने अनहद शब्दमे सुरत लगाई, किसीने वेदमें सुरत लगाई। इस प्रकारसे शब्दमें जीव पैठे औ शब्द रूपी होके मगन भये। सो शब्दकी रहनीमें फूलके ब्रह्म बने, कोई दास बने, कोई साधक कर्मी बने; इस प्रकारसे घोरे खाया घीव। घोरा कहिये, माठा कहिये, ब्रह्म कहिये, शब्द कहिये, बानी कहिये, कल्पना कहिये, भास कहिये, अनुमान कहिये; ताने जीवको खाय लिया, अपनेमें समाय लिया। दूध कहिये जीव रूप, छाँछ कहिये कल्पना, घीव कहिये जीव। ये अर्थ।

कवित्त–कोई, ब्रह्म बने कोई ईश बने, कोई दास कहाय गुलाम घने ॥ कोई देहको आपन रूप भने, विविचार विशेषन कौन गने ॥ कोई विषय मोहमें रहत सने, जिन सत्त विचार सदाहि मने। ताते पूरण पारख दूरि रह्यो, भ्रमि जीव अनेकन धार बह्यो ॥ नाना मत कल्पिके लेत गह्यो, तब धोख अनेकन माँहि बह्यो ॥ १ ॥

भला शब्द तो जीवका अनुमान ठहरा औ शब्दसे माना सो अनुमान ठहरा। तो शब्द मानना येही जीवको बंधन ठहरा औ शब्द अन्तःकरणसे उठाना, ये जीवकी कल्पना ठहरी। तो शब्द उठाना भी नहीं औ मानना भी नहीं; तो क्या गुमसुम हो रहना ?। ये शंका। तो गुरु कहते हैं कि–गुम-सुम होना औ शब्द उठाना औ मानना ये सब जीवका अनुमान मिथ्या धोखा। अरे जाहीते संपूर्ण शब्द, अनुमान, भास, प्रत्यक्ष; ये चारों धोखा परखनेमें आवै सो पारख पर स्थिर होना औ सबको परखते रहना, शब्द धोखेमें क्यों परना ? ये अभिप्राय। तो जो शब्दकी मानंदी न हुई तो वेद बानी औ गुरुवाई, सिखाई सब मिथ्या। ये शंका। भला गुरुताई

मिथ्या भई तब सिखाई सहज ही मिथ्या भई । परंतु जासे सब गुरुवाई सिखाई परखनेमें आई सो पारख गुरु तो सत्य है । कौन तरहसे ? सो सुनो–जाते सब गुरुवाई सिखाई वेद बानी मिथ्या मालूम भई सो पारख कधी मिथ्या मालूम होती नहीं, क्योंकि पारख बिना मिथ्या वस्तु औ सत्य वस्तु काहेसे मालूम होवेगी ? तो जाते सब सत्य मिथ्या परखनेमें आवै सो पारख आस्ती और सब नास्ती । तो जब गुरु आस्ती तब शिष्य सहज ही आस्ती । ये अर्थ । याको एकदेशी दृष्टांत कहता हौं कि-जैसा एक डगाली पर बैठके सब डगाली काटी औ जिस पर बैठा सो डगाली कछु काटी नहीं, अगर वो डगाली काटी तो आप ही नाश हुवा । ये अर्थ । तद्वत् गुरुसे सब मिथ्या फाँसी कट गई औ गुरु कछु मिथ्या कल्पनासे कट सकते नहीं । अगर कोई काटेगा अपनी गाफि-लीसे तो नाश हुआ, धोखेमें परा । ये अर्थ । भला शब्द धोखा औ पारख गुरु सत्य; परंतु आपने भी शब्दही बोला, याको मानिये कि न मानिये ? ये शंका ॥ ३ ॥

साखी–शब्द बिना सुरति आँधरी । कहो कहाँको जाय ॥
द्वार न पावे शब्दका । फिर फिर भटका खाय४॥

टीका गुरुमुख–अरे शब्द बिना जीवकी सुरत अंधी है । कहो जो मैं शब्द न बोलता तो सुरत कहाँको जाती । औ सुरत शब्द द्वारे चलती है, ताते मैंने भी शब्द कहा; परन्तु सब शब्दनको परखानेके वास्ते, कछु गहनी बंधनके वास्ते नहीं । जैसे काँटासे काँटा निकारना, या बज्रसे बज्र काटना; तद्वत् । ये अर्थ । शब्दके द्वारे चार–तत् त्वं असि औ सार । तो जौलौं चार द्वारेका भेद न पावेगा तौलौं धोखेमें परा रहेगा औ फिर चौरासीमें भटका खायगा; ये अभिप्राय । द्वारेका अर्थ कि-महलका द्वारा, बिना महल कछु द्वारा नहीं; परन्तु महलमें पैठनेके वास्ते द्वारा, कछु द्वारेमे बैठनेके वास्ते द्वारा नहीं । तो द्वारा कहिये चारों मुख–जीवमुख, मायामुख, ब्रह्ममुख, गुरुमुख; ये चार द्वारा औ चार पद जाने तब भ्रम मिटे । अर्थ ॥ ४ ॥

साखी—शब्द शब्द बहु अंतरे । सार शब्द मथि लीजे ॥
कहहिं कबीर जहाँ सार शब्द नहीं । धृग जीवन सो जीजे॥५॥

टीका गुरुमुख—जेते-जेते महापुरुष भये सो सबने अपने-अपने अनुमान करके शब्द बोले; सोई सुनके कानपर बड़ा परदा परा औ जीव भूले, ताते सार शब्द मथि लीजे । सार शब्द कहिये जासे सब शब्दनका निर्णय होय औ सब शब्दनकी कसर जा शब्दसे मालूम होय । औ जा शब्दमें कछु कसर पक्ष-अपक्ष, अनुमान-कल्पना, दृश्य-अदृश्य भावना न होय । औ जा शब्दसे जीव पारख पदको प्राप्त होय, सो सार शब्द । सब शब्दनमेंसे मथिके काढ़ि लेना । तो पारख पद प्राप्त होय । नहीं तो जहाँ सार शब्दकी प्राप्ति नहीं, ता जीवका जीवना धृग, पशुवत् चौरासीका जीव । ये अर्थ ॥ ५ ॥

साखी—शब्दै मारा गिर परा । शब्दै छोड़ा राज ॥
जिन्ह जिन्ह शब्द बिबेक किया । तिनका सरिगो काज॥६॥

टीका गुरुमुख—याको अभिप्राय ऐसा है-जो नाना प्रकारके शब्द गुरुवा लोगोंने मारा सो सुनके जीव मनुष्य पदोंसे गिर परा धोखेमें । शृङ्गारादिक शब्द सुनके विषयनमें गिर परा जीव । शब्दनके मारे भरथरी गोपीचन्द हरिश्चन्द आदिक बड़े-बड़े राजाओंने राज छोड़ा औ वैराग्य लेके वन-वन फिरने लगे; परंतु उन जीवनको पारख पद मिला नहीं, याते भ्रमि-भ्रमिके चौरासीमें रहे । मनुष्य चार खानीका राजा; सो शब्द सुनि-सुनिके अपनेको भी चारों खानी गिनने लगा, दूसरा मालिक मानके अपना राज छोड़ा औ कल्पनाका दास बना । मगर मनुष्य पद सबसे ऊँचा, सो शब्दके मारे गिर परा, ब्रह्म बना औ चौरासीमें व्यापा । कोई चौराशीरूपी हो रहा, कोई गुमसुम हुआ, कोई जीवहिंसा करने लगा; मद्य मांस मीन रतिक्रीड़ामें विभ्रम होके राक्षस शाक्त कहाये । ये अभिप्राय । जिन-जिन शब्दका विवेक किया तिन जीवनका काज सरिगया, पारख पदको प्राप्त हुए, आवागमनसे रहित

भये। ये अभिप्राय। तो जो शब्दकी आसमें फँदा सो बंधमान होके गर्भवास पाया औ जाने शब्दको परखके छोड़ा सो पारख भूमिकाको प्राप्त होके रहित भया। ये अर्थ ॥ ६ ॥

साखी-शब्द हमारा आदिका। पल पल करहू याद ॥
अंत फलेगी माँहली। ऊपर की सब बाद ॥ ७ ॥

टीका मायामुख-मायाका उपदेश ऐसा है, कि-ॐ शब्द हमारा आदिका, याको पल पल याद करो। 'ॐ ब्रह्मास्मि' ऐसा कहिके दानी दान देवै औ भिक्षुक दान लेवै। 'ॐ ब्रह्मास्मि' ऐसा कहिके यज्ञ करै करावै। 'ॐ ब्रह्मास्मि' ऐसा कहिके अध्ययन करै करावै। ये षट्कर्म ॐ कहिके जो कोई करेगा ताको देह अंत होने उपराँत स्वर्ग आदिक फल मिलेंगे औ ॐ कहे बिना जो कर्म करेगा सो कर्म निष्फल हो जायगा। अगर सब जगत् प्रणवरूपी जानिके पल पल याद करेगा तो ऊपरकी देह नाश होय उपराँत परमपदकी प्राप्ती होवेगी। अगर अपरोक्ष ॐकार स्वरूपको चीन्हके ऊपरके पंच तत्त्वात्मक विधि सब मिथ्या जानै तो जीवन्मुक्त होय। ये अर्थ ॥ ७ ॥

साखी-जिन जिन सम्मल ना कियो। अस पुर पाटन पाय ॥
झालि परे दिन आथये। सम्मल कियो न जाय॥८॥

टीका गुरुमुख-गुरु कहते हैं कि-ऐसा कायापुर औ सतसंग पाटन पायके जियत जमा पारख दृढ़ न किया तो ये गुरुवा लोगोंके उपदेशनके मारे अंधा हो जायगा। शून्यमें समायके वृत्ती शून्य हो जायगी, गाफिल हो जायगी। औ अध्यास वश होके नर मर जायगा। फिर संमल दृढ़ जमा पारख, सो किया जानेका नहीं। ये अर्थ ॥ ८ ॥

साखी-यहाँई समल कर ले। आगे बिषयी बाट ॥
स्वर्ग बिहासन सब चले। जहाँ बनिया ना हाट ॥९॥

टीका गुरुमुख-ताते गुरु कहते हैं-संमल कहिये जमाको, सो यहाँ सत संगमें पक्की करले औ आगे जेते मार्ग बेद शास्त्र गुरुवा बताते हैं

सो सब बिषई बाट हैं । जगत् बिषय, ब्रह्म बिषय औ स्वर्ग आदि विषय, जेहि सुने जीव सब स्वर्ग बिसाहन चले गुरुवा लोगनके पास, पर वहाँ न जीव बनिया है, न संसार हाट है । स्वर्ग पर कछु नहीं, तो सब धोखा । ये अर्थ ॥ ९ ॥

साखी–जो जानहु जिव आपना । करहु जीवको सार ॥
जियरा ऐसा पाहुना । मिले न दूजी बार ॥१०॥

टीका गुरुमुख–हे जीव ! तुम अपना पद जानो तो सब जीव असार देह हो रहे हैं इनका सार पारख करो औ थीर करो । क्योंकि जीव तुम्हारेको नरदेहमे कैसे मिले हैं ? जैसे पाहुना, फिर दूसरी बार तुम्हें मिलनेका नहीं नरतन छोड़के चौरासीमें जाय परैंगे । ये अर्थ ॥ १० ॥

साखी–जो जानहु जग जीवना । जो जानहु सो जीव ॥
पानी पचावहु आपना । तो पानी माँगि न पीव ११॥

टीका गुरुमुख–गुरु कहते हैं कि–हे जीव ! जो तुम जमा जानो सो आपहीको जानो, तुमसे परे कोई नहीं । न ब्रह्म, न आत्मा, न परमात्मा, न देह न सत्य, न झूठ, न शब्द; ये सब तुम्हारेसे होता है औ तुरंतही नाश होता है, ताते जो कुछ जानो सो ये जीव है । औ पानी पचावहु आपना । पानी कहिये बानी, सब वेद शास्त्र वेदात सिद्धांत तुम्हारी कल्पनासे भई; सो कल्पनाको पचावो सब पारखके देहमें जरावो औ तुम पारख पर दृढ़ होवो । जब देह नाशमान् तब देहका भास अध्यास आनंदादि सब नाशमान, एक जीव सत्य जमा और सब खर्च । ताते और बानी औ उपदेश गुरुवा लोगनसे मत माँगो, तेरे पर दूसरा पीव कोई नहीं । ये अर्थ ॥ ११ ॥

साखी–पानी पियावत क्या फिरो । घर घर सायर बारि ॥
तृषावंत जो होयगा । पीवेगा झक मारि ॥१२॥

टीका गुरुमुख–अरे घर-घर उपदेश करते क्या फिरते हो ? घर-घर तो नाना प्रकारकी कल्पना कलोल कर रही है औ नाना प्रकारकी सायर बानी भर रही है, ताते जीवनको कछु होश नहीं । ब्रह्मा विष्णु शिवादि सब बेहोश हैं । इनके पीछे हे संतो ! तुम कहाँ लों बेजार होवोगे ? औ उपाधीमें पड़ोगे ? ताते संसारकी आशा छोड़के निरुपाधी हो रहो । जाको अपनी स्थितिकी चाह होवेगी, सो आपही झख मारके तुम्हारी शरणमें आयके विचार करके स्थिर होवेगा, पारख पदको प्राप्त होवेगा । ये अर्थ ॥ १२ ॥

साखी–हंसा मोती बिकानिया । कञ्चन थार भराय ॥
जो जाको मर्म न जानै । सो ताको काह कराय ॥ १३ ॥

टीका गुरुमुख–हंसनका चारा मोती, सो अपने चारेके वास्ते हंसा बिक गये, जीव विषयमें बिक गये । धन-धान्य, पुत्र-पौत्र, ऋद्धि-सिद्धि, अणिमादि विषयके वास्ते औ स्त्री विषयके वास्ते एकके एक गुलाम हो रहे हैं । कोई देवतनके गुलाम, मन्त्र यन्त्रनके गुलाम, कोई राजनके गुलाम, कोई मनुष्यनके गुलाम, कोई स्त्रियनके गुलाम, कोई देहके गुलाम बने ।

चौबोला–कोई देवके गुलाम कोई मंत्रके गुलाम, कोई यन्त्रके गुलाम, कोई तन्त्रके गुलाम हैं । राजके गुलाम कोई काजके गुलाम, कोई नाजके गुलाम महाराजके गुलाम हैं । रानीके गुलाम महारानीके गुलाम, वेद बानीके गुलाम दिलजानीके गुलाम हैं । योगके गुलाम कोई भोगके गुलाम, महारोगके गुलाम पूर्ण पर्व आठों जाम हैं ॥ १ ॥

मोती कहिये मुक्ती, सो चार प्रकारकी वेदने वर्णन किया है– सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य, सायुज्य । सालोक्य कहिये जो स्वर्गमें निवास पावै, देव योनीमें विलास करे । सामीप्य कहिये जो मालिकके नजदीक रहे, हजूरी दास ! सारूप्य कहिये कीट-भृङ्ग न्याय, जैसा मालिकका स्वरूप तैसा अपना स्वरूप होय । सायुज्य कहिये मालिक का औ अपना स्वरूप एक हो जाय जल-तरङ्ग न्याय । ये चार मुक्ती

वेदने बताया, ताके वास्ते जीवनको अनुराग भया और कञ्चनकी थारी भर भरके गुरुवा लोगनके पास तन मन धन सहित बिकाय गये। परंतु जो गुरुवाई करते हैं उनहूँको मालिकका मर्म मालूम नहीं, सो ये जीवोंकी मुक्ती क्या करेंगे ? गुरुवा लोग भी मुक्तीके भरोसे बैठे हैं, ताते अन्ध हैं। मालिक तो जीवही है औ दूसरा मालिक कोई नहीं। तब चार प्रकारकी मुक्ती मिथ्या, धोखा; परन्तु जो आपही मर्म नहीं जानता सो दूसरेको क्या करेगा ? ये अभिप्राय। कोई ज्ञानी महान कहावते हैं सो तो अपने अध्यासमें 'अहंब्रह्मास्मि' 'ब्रह्मैवाहमस्मि' मैं आत्मा पूर्ण जैसेका तैसा; ऐसा कहायके बन्ध भये; ताते आगे इनका लक्ष चलता नहीं। सो गुरु तो कहाये; परन्तु गुरुपदका मर्म कछु जाना नहीं तो दूसरेको क्या बतावेंगे ? न कछु, भरमायेंगे। ये अभिप्राय। औ महान् योगी जो हैं सो भी अपने अपने भासमें बन्ध भये। जो कछु भास भयो अभ्यासते, ताहीको ब्रह्म माना औ नाना सिद्धि ऋद्धिमें भूले; ताते गुरुपदका मर्म इनहूँ नहीं जाना। सो दूसरेको क्या करेंगे ? नाहक भटकायेंगे। ये अभिप्राय। तिसरी गुरुवाई उपासककी; सो तो मिथ्या अनुमानमें लुब्ध हुए, नाना प्रकारकी कल्पनामें बँधे। रुद्रायामल, ब्रह्मायामल, विष्णुयामल आदि यंत्र, मंत्र, तन्त्रनमें आसक्त रहते हैं, ये गुरुपदका मर्म क्या जाने ? जो अपनेही परखनेमें नहीं आया सो शिष्यको क्या परखावेगा ? औ चौथे कर्मी प्रत्यक्ष कर्मके बन्धनमें परे, ये गुरुपदका मर्म क्या जाने ? प्रत्यक्ष कहिये जो आँखि सो जान परे, तामें बँधे देह अभिमानी होके। जो ऐसेही ऐसे बन्धनमें आपही परे हैं सो दूसरेको क्या मुक्त करेंगे ? धोखा मिथ्या। ताते गुरु आगे हंसको उपदेश करते हैं प्रशंसा कर करके, सो सुनो ॥ १३ ॥

साखी—हंसा तू सुवर्ण वर्ण। क्या वर्णों मैं तोहि ॥
तरिवर पाय पहेलि हो। तबै सराहों तोहि ॥१४॥

टीका गुरुमुख–गुरु कहते हैं कि-हे हंसा ! तु सुवर्ण, कि सब वर्णनका निर्णय कर्ता । सुवर्ण कहिये शुद्ध ज्ञान वर्ण, औ वर्ण कहिये ज्ञान, ता वर्णनका निर्णय कर्ता सो हंसा तूही है । औ कुवर्ण कहिये चक्षुगोचर, श्रवणगोचर, त्वचागोचर, घ्राणगोचर, जीभगोचर, चित्त मन बुद्धी हंकार अंतःकरण गोचर; ये सब कुवर्ण औ इनका जाननेवाला सुवर्ण । सो ता सुवर्णका निर्णय कर्ता वर्ण तू है सुवर्ण । ताते समस्त वर्णका वर्णन करने वाला तू हंस वर्ण औ तेरा वर्णन करनेवाला कोई नहीं; जो कछु जमा है सो तूही है । ये अभिप्राय । तरिवर । कहिये मनुष्य देह, औ तरिवर कहिये शब्द, औ तरिवर कहिये वृक्ष, औ तरिवर कहिये जो नाना बानीका वृक्ष, जहाँ मन पक्षी विश्राम पावै सो तरिवर । ये अर्थ । तो ऐसा मनुष्यतन पायके सकल बानी पहिलिहो, बूझिहो, देह आदिक बानी बंधन बूझके परख पादको प्राप्त होई हो तबै सराहों तोहि । अरे मनुष्यतन पायके जीवकी स्थिति भई तो तारीफ है, नहीं तो जैसा पशु तैसा नर । ये अर्थ । ताते फिर हंसको गुरु उपदेश करते हैं सो सुनो ॥ १४ ॥

साखी–हंसा तूतो सबल था । हलकी अपनी चाल ॥
रंग कुरंगे रंगिया । तैं किया और लगवार॥१५॥

टीका गुरुमुख–गुरु कहते हैं कि-हे हंसा ! तू सबल सर्व शक्तिमान् था । जो तेरी सत्तामात्रसे संपूर्ण जगत् चार खानी चौरासी लक्षयोनी पैदा भई नाना विचित्र, सोई देखके तू अपनेको भूला औ देहको मानके विषयनमें आसक्त भया; येही अपनी चाल हलकी, जो अपनी कल्पनासे देह गृह पुत्र आदि सृष्टि पैदा की औ ताहीके वश भया । संपूर्ण बल सत्ता जायके निर्बल आसक्त भया, ताते अनेक दुःखकी प्राप्ती भई । जैसा राजा अपने मंत्रिनके वश भया, ताते मन्त्री प्रबल भये औ राजाकी आज्ञा नहीं मानते, सब रैयत बहकाय दिये । तब राजाका हुकुम सब अदूल किया, तब राजा बेकाम हुवा, औ आपही सब रैयतकी खुशामद

करने लगा, दीनवत् । तद्वत् ये जीव अपने कर्तब्यके वश होके निर्बल लाचार हुआ, इन्द्रिनकी आज्ञामें रहने लगा; येही हलकी चालसे नाना दुःख प्राप्त भये । तब दूसरा कर्ता कोई है, ऐसी कल्पना खड़ी भई औ नाना कर्म उपासना खड़े भये औ ज्ञान विज्ञान खड़ा भया; सोई रंग कुरंगमें तू रंगा औ दूसरा लगवार कोई है, ऐसा अनुमान करके माना सोई बंधनमें परा । सो हे हंसा ! अपनी चालसे दुःख पावता है, तातें इन्द्रिनके वश हो रहा है औ नाना अनुमान कल्पनाके वश हो रहा है । सो हलकी चाल छोड़ दे औ अपनेको समझ, नहीं तो जैसी गति होती है तैसा गुरु बयान करते हैं ॥ १५ ॥

साखी—हंसा सरवर तजि चले । देही परि गौ सून ॥
कहहिं कबीर पुकारिके । तेही दर तेहि थून ॥१६॥

टीका गुरुमुख—हंसा कहिये जीव औ सरवर कहिये जीवकी मानंदी ब्रह्म, ईश्वरादि नाना कल्पना । द्वैत-अद्वैत-विशिष्टाद्वैत, ऐसी नाना मतकी मानंदी सोई हंसका मान सरोवर; स्त्री विषयादि नाना विषय सोई मानसरोवर, जो हंसका सुखका धाम सोई मानसरोवर । ये अर्थ । जबलग देह साबुत है तबलग नाना सुख, नाना समाधी, नाना भोग, नाना कर्मोंका विलास हंस करता है । फिर जब देह छूटती है; तब संपूर्ण विषय विलास छूट जाता है । न समाधी रहती है, न कर्म, न ज्ञान, न योग, न विषय रहते हैं, सब नाश होते हैं । पर उनका अध्यास हंसके भीतर बीजरूपी रहता है औ देह शून्य हो जाती है तब सुषुप्ति अवस्था जीवको होती है । सो मानन्दी सरवर छोड़के मानंदीका बीज़ लेके हंस सुषुमना नाड़ीके संग चले औ देह शून्य पड़ गई । लोग कहने लगे कि मर गया । सो जीव कहाँ है ? सब बाचांस पुकारते हो कि, कोई बिचार भी करके देखते हो । अरे तेही दर तेहि थून । अपने स्वरूपकी प्राप्ती बिना फिर जठर योनिमें गया । जैसा कर्मका दर बनाया तैसा थून होके अध्यास हो गड़ि रहा । दर कहिये, दरार

कहिये, भग कहिये, सो जहांसे सब पैदा हुए फिर वोही भगमें आसक्त हो रहे, ताते जब देह त्याग भई औ हंस जगत तजि चले, सुषुप्तिरूप होके सुषुमना पवनमें मिले, सो सुषुमना जाय मैथुन समय पुरुषकी सुषुमनामें मिली। पुरुषकी सुषुमना जड़ रेतमें मिली, ताते सुषुमनाने हंसको रेतमें मिलाय दिया। तब हंसा रेतरूपी होके तेही दर भगदरमें चले। थून कहिये, थूनी कहिये, लिंग कहिये, मैथुन कहिये; सो मैथुन समय लिंगद्वारसे भगद्वारे होके गर्भवासको प्राप्त भये। तो चाहे कर्म करे, चाहे योग करै, चाहे उपासना करे, चाहे ज्ञान अनुभव होय, चाहे जगत्की बिस्मृती करके सदा समाधिस्थ रहै; परंतु गर्भवास छूटता नहीं। पारखकी प्राप्ती होय बिना। तो कर्म अध्यास, उपासना अध्यास, योग अध्यास, समाधी अध्यास, येही गर्भवासमें जानेका बीज है। ये अभिप्राय। ताते सम्पूर्ण बीज पारखसे त्याग होता है औ बिना पारख हंस बक एक रंग ब्रह्म हो रहे हैं, ताते गुरु परखाते हैं ॥ १६ ॥

साखी--हंस बगु देखा एक रंग। चरैं हरियरे ताल ॥
हंस क्षीरते जानिये। बगुहि धरेंगे काल ॥१७॥

टीका गुरुमुख—हंस कहिये जो नीर क्षीरका निर्णय करे। तो क्षीर कहिये जीव और नीर कहिये देह। सो देह कहिये पाँच तत्त्व तीनगुण मिलके समुदाय, तामें जीव मिल रहा है; ताका निरुवारा करके जीवको देह अध्याससे निकारके अपने पदपर थीर करे ताको हंस कहिये, पारखी कहिये। औ जो संपूर्ण चराचर, ज्ञानी-अज्ञानी, साधु-असाधु, विवेकी-अविवेकी, गदहा-संत, एक रंग देखते हैं, कहते हैं कि-'सर्वं खल्विदं ब्रह्म।' अखंड अद्वैत एक आत्मा, ऐसा सिद्धांत करके कहते हैं सो बकुले, बेपारखी। ये अर्थ। तो हरियरा ताल कहिये संसार। केहि प्रकार से? सो सुनो—हारि कहिये जो सर्वका हरण करै औ आप रहे सोई मूलमाया, येर कहिये प्रेरणा,

सो मायाकी प्रेरणा सोई जगत्, तामें हंस बगु देखा एकरंग। कि हंसा भी श्वेत औ बकुला भी श्वेत। तद्वत् विज्ञानी ब्रह्मज्ञानी इनका बोलना औ भेष तथा निर्णय कर्ता पारखी इनका बोलना औ भेष अज्ञानीको एकही रंग मालूम होता है। औ दोनों जगत्में बिचरते हैं; परन्तु हंस क्षीरते जानिये। जो दूध औ पानी मिला है ताको न्यारा करै, दूधको ग्रहण औ पानीको त्याग करै, सोई हंस जानिये। तैसा जीव नाना भास, नाना अध्यास, नाना कल्पना, नाना अनुमानमें मिल रहा है ताको न्यारा-न्यारा करै औ जीवको ग्रहण करै, देह आदि संपूर्ण भर्म त्याग करे; ताको पारखी हंस कहिये। सोई पारखमें थिर हैं औ दूसरेको भी सकल भ्रमसे छुड़ायेगा। औ जो बेपारखी बकुले हैं, तिनको काल खाय जायगा। काल कहिये अनुमान, काल कहिये कल्पना, काल भास औ काल अध्यास, काल ज्ञान विज्ञान विलास; सो बिना पारख जीवको खाय-खाय उगिलता है। ऐसा कालका रूप, तामें जो जीव मिल रहें है सो भी काल, जो सब जीवनको धोखेमें डारके बाँधते हैं। ये अर्थ। तो क्या पारखमें भी त्याग ग्रहण रहता है ? ये शंका। अरे त्याग ग्रहण तो हंसमें है, कछु स्वच्छ पारखमें नहीं; क्योंकि त्याग ग्रहण कछु उपाधी बिना होता नहीं औ पारख भूमिका तो निरुपाधी, तहाँ त्याग ग्रहण कैसा संभवे ? ये अभिप्राय। तो हंसको औ ब्रह्मको केता अंतर है ? जो हंस तो अपनेको आप यथार्थ जानके पारखस्थितिको प्राप्त भया, ताते आवागवनसे रहित है औ ब्रह्म तो अपनेको आप न जानके मैं अद्वैत, संपूर्ण जगत्, मेरा रूप; ऐसा मानके अपने बासमें स्थिति है, आनंदमें रहता है। पारख भूमिका प्राप्त भया नहीं, ताते गाफिल है तो आवागमनमें है। ब्रह्मसे जगत् औ जगत्से ब्रह्म होता है; कछु पारखसे जगत् औ जगत्से पारख होता नहीं; येता अन्तर है। तो ब्रह्म मिथ्या धोखा कि-जासे जगत् मिथ्या धोखा पैदा होता है। जाका भूषण खोटा तो सुवर्ण क्या सच्चा है ? तो पारख भी सत्य और हंस भी सत्य, जगत्

मिथ्या औ ब्रह्म भी मिथ्या। हंसको औ पारखको केता अंतर है? ये शंका। हंसको औ पारखको कछु अंतर नहीं। देह खड़ी है ताते हंस नाम है औ देह गिरी तो वही पारख। ये अर्थ। हंस उपदेशकी साखी संपूर्ण ॥ १७ ॥

साखी--काहे हरिनी दूबरी। यहि हरियरे ताल ॥
लक्ष अहेरी एक मृग। मैं केतिक टारों भाल॥१८॥

टीका गुरुमुख--हे संतो! ये जीव जगत्में दूबरा कंगाल हो रहा है, सो काहेते? कि आप भूलिके ब्रह्मानन्द बना, याहिते। हरनी कहिये जीवको, क्योंकि दूसरा हर अनुमान किया औ कहा कि-हरि पुरुष, मैं हरिकी स्त्री। ऐसा कहिके भक्ती करने लगा, ताते हरीकी स्त्री हरनी। ये अर्थ। सो हरिके प्राप्तीके वास्ते दुबरा कंगाल हो रहा है, तापर लाखों शिकारी गुरुवा लोग बाण चलाते हैं।

कवित्त--कोई कहै तप करो कोई कहै जप करो,कोई नानाकर्म करो कहते समुझायके ॥ कोई कहै मूर्तिधरि पूजा बहु कीजिय, कोई कहै प्रेम माँझ रहिये बैलायके ॥ कोई योगध्यान कोई नित्यानित्य कहै सांख्य, कोई षटचक्र बेधि श्वासा तरकायके ॥ कोई नाना मत भेद कहते बतलाये वेद, कोई कहै पूर्ण ब्रह्म आपै आप गायके ॥ १ ॥

ऐसे लाखों तरहके लक्ष गुरुवालोग जीवनको मारते हैं ताते सब जीव बेहाल हैं। मैं केतिक भाल टारों। ये अर्थ। जैसा घायल हरिना, ताको लाखों शिकारी तीर मारते हैं उस हरिनाका बचाव कहीं नहीं। ताते हरिणको अनेक तीर लगे हैं तो केतिक तीर निकारना? जो निकारा चाहो तो हरिणा बहुत व्याकुल होता है। तो केतिक निकारना?। जो न निकारना तो हरिणाका अकाज होता है। हरिना उसीमें मरता है?। ये शंका। तो चुम्बक पारख, ताका स्पर्श जब होयगा तब संपूर्ण भाल गाँसी निकर जायगी औ जीव सुखी होगा। ये अर्थ ॥ १८ ॥

साखी--तीन लोक भौ पींजरा। पाप पुण्य भौ जाल ॥
सकल जीव सावज भये। एक अहेरी काल ॥१९॥

टीका गुरुमुख—हे संतो ! ये तीन लोक तो ये जीवनको रोकनेके वास्ते पींजरा बना औ सम्पूर्ण जीवनको पींजरेमे डारके मायाने अपने हाथ लिया । तीन लोक कहिये त्रिकुटी, श्रीहट, गोल्हाट; ये तीन लोक, तीन अवस्था, तीन पन, तीन गुण, तीन स्थान, यामें सकल जीव परे । औ चौथी तुर्या, मूलमाया चतुर्थीका, ताके हाथमें पींजरा । सो तुर्या अपनी इच्छासे पींजरेमें जीवनको खिलाती है औ अन्तमें तुर्यातीत काल, ताके मुखमें डार देती है । और पाँच तत्त्व यही भवसागर, नाना कल्पना बानी सोई सागर औ अनेक प्रकारका पाप पुण्यका गाथा सोई जाला; तामें सकल जीव सावज-मीन मच्छ रूपी होके फंसे औ सब जीवनका अहेरी काल एक ब्रह्म, जाने सबनको फंसाया । ये अभिप्राय ॥ १९ ॥

साखी—लोभे जन्म गवाँइया । पापै खाया पून ॥
　　साधी सो आधी कहैं । तापर मेरा खून ॥ २० ॥

टीका गुरुमुख—जो जो लोग ब्रह्मादि गुरुवालोगोंने औ श्रुति स्मृतीने बताया फल आशा-अर्थ, धर्म, काम, मोक्षादि; तामें जीव आसक्त भये औ नाना कर्म धर्म क्रिया आचरने लगे, ताते लोभहीमें जन्म गवाँया । तो सर्व पापका मूल लोभ, ता लोभने संपूर्ण पुण्य खाय लिया । पुण्य कहिये ज्ञान, सो लोभमें ज्ञानका नाश हुवा । ये अभिप्राय । साधी कहिये जीवको, तासों आधी कहिये अर्धमात्रा; सो गुरुवालोगनने जीवनको, उपासना कही औ नाना प्रकारके मंत्र यंत्र तंत्र कल्पनामें बाँधा, सो मिथ्या भ्रम । औ अर्धमात्रा कहिये तुर्या, सो ज्ञानिनने जीवको तुर्या अवस्था कही कि तीनों अवस्था अज्ञान जनित, ताको विवेक करके त्याग करना औ जो तीनों अवस्थाकी जाननेवाली तुर्या अवस्था ज्ञान स्वरूप, ताको अनुभव लेके निर्विकल्प ब्रह्म होना । भाव अभाव सब छोड़ना औ आपी होके रहना; ऐसी साधीसे आधी कहते हैं । सो मिथ्या भ्रम छोड़, तो मेरा शब्द ताहूके ऊपर पारख बताता है । तू

पारखपदको प्राप्त हो औ मिथ्या भ्रम छोड़ । पारखके काहूमें आसक्ति मत करे, येही मेरा खून । खून कहिये, निशानी कहिये, पता कहिये, याद कहिये, इशारा कहिये । ये अर्थ । पारख पद सर्वोपरि । ये अभिप्राय ॥ २० ॥

साखी--आधी साखी शिर खड़ी। जो निरुवारी जाय ॥
क्या पंडितकी पोथिया ।जो रात दिवस मिलि गाय॥२१॥

टीका गुरुमुख-आधी साखी कहिये अर्धमात्रा, अर्धमात्रा कहिये माया, सो तीनों देह, तीनों मात्रा, तीनों लोकके शिरपर खड़ी है, सोई जीवको धोखेमें डार देती है । तो जो संधी जीवसे निरुवारी जाय औ अन्वय करके सब ब्रह्म बनता है सो न बने, तो जीवकी यथार्थ स्थिति होय; परंतु पारख बिना तत्त्वमसीका अध्यास कछु छूटनेका नहीं औ जीव कछु अपनी भूमिकाको प्राप्त होनेका नहीं । तो क्या पंडितकी पोथिया, जो राति दिवस मिलि गाय । पारख कछु पंडितकी पोथी वेद नहीं जो रात दिन कंठ करके गाने लगे । पारख पद सबसे न्यारा, सो कछु कागदमें लिखा नहीं जाता औ कर्तब्यसे नहीं आता, केवल पारखि-नके संगतसे ही पारख पदकी प्राप्ति होती है। ये अर्थ । सो पारखकी प्राप्ति होय तो अर्धमात्रादि मायाजाल जीवका सब छूटै । ये अभिप्राय ॥ २१ ॥

साखी-पाँच तत्त्वका पूतरा । युक्ति रची मैं कीव ॥
मैं तोहि पूछौं पंडिता । शब्द बड़ा की जीव ॥२२॥

टीका मायामुख-पाँच तत्त्वका पूतरा युक्तीसे रचिके मैंने पैदा किया, ब्रह्मादि संपूर्ण जीव पुतले मैंने पैदा किये; इस प्रकार वेदमें मायाने कहा सोई सब पंडित लोग भी कहते हैं । **गुरुमुख**-ताते गुरु पूछते हैं कि-हे पंडित ! तुमने वेदका शब्द माना औ कहने लगे कि ब्रह्म बड़ा, कि ईश्वर बड़ा; जाने सब संसार पैदा किया । परंतु अपने हृदयमें विचार करके देखो-शब्द बड़ा कि जीव ? अरे जो जीव न होता तो वेद

आदिक नाना शब्द कौन पैदा करता ? औ ब्रह्म ईश्वरादि अध्यारोप कौन करता ? ताते जीवही सबते बड़ा, जाने सबहीको थापा । तो शब्द ब्रह्म आदि उपाधी सब मिथ्या, जीवकी कर्तूत, जीव सबका करनेवाला आदि । ये अभिप्राय ॥ २२ ॥

साखी—पाँच तत्त्वका पूतरा । मानुष धरिया नाँव ॥
एक कलाके बीछुरे । बिकल होत सब ठाँव ॥२३॥

टीका गुरुमुख—पाँच तत्त्वका पूतरा देह, वाको जीवने मानके अपना नाम मानुष धरा औ नाना कल्पना विषयमें भूला; ताते ठाम-ठाम चौरासी लक्ष योनिनमें बिकल होता फिरता है । तो भला पाँच तत्त्वका पूतरा तो सही, याको माननेवाला जीवभी सही, जाने याका नाम मानुष धरा; परंतु ठाम-ठाम चौरासीमें व्याकुल होनेका क्या काम ? कछु खुशी तो न थी । ये शंका । खुशी तो न थी; परंतु एक कलाके बिछुरे, बिकल होत सब ठाँव । सब सामग्री तो इसके पास थी पर एक पारख स्थिति न थी । तो एक पारखके बिछुरे सब ठाँव व्याकुल भया, दुःख पाया । ये अभिप्राय ॥ २३ ॥

साखी--रँगही से रँग ऊपजै । सब रँग देखा एक ॥
कौन रँग है जीवका । ताका करहु विवेक ॥२४॥

टीका गुरुमुख—हाथीसे हाथी, घोड़ेसे घोड़ा, पशुसे पशु, पंछीसे पंछी, मानुषसे मानुष; इस प्रकार रंगहीसे रंग ऊपजै । औ सब रंग बिचार करके देखो तो एक पाँच तत्त्वके ही हैं । पाँच तत्त्व भी नहीं; परंतु कौन रंग है जीवका ? ताका विवेक करो; क्योंकि बिना विवेक कछु जीव पदार्थ समझने का नहीं । ये अभिप्राय । जो पदार्थ जा द्वारे देखनेको होता है सो वही द्वारे देखना । जैसा शब्द पदार्थ श्रवण द्वारे देखना, आन द्वारे दिखानेका नहीं । रूप पदार्थ नेत्र द्वारे देखना, आन द्वारे दिखानेका नहीं । रस पदार्थ जिभ्या द्वारे देखना, आन द्वारे दिखाने का नहीं । स्पर्श पदार्थ त्वचाद्वारे दिखनेको होता है, आन द्वारे

दिखाता नहीं। गन्ध पदार्थ नाकद्वारे देखनेको होता है आन द्वारे कछु दिखाता नहीं। तैसा जीव पदार्थ विवेक द्वारा दिखता है, आन द्वारे कछु दिखता नहीं। ये अभिप्राय। ताते गुरु कहते हैं ॥ २४ ॥

साखी–जाग्रत्‌रूपी जीव है। शब्द सोहागा सेत ॥
जर्द बुंद जल कुकुही। कहहिं कबीर कोई देख॥२५॥

टीका गुरुमुख–जागृति रूपी कहिये चैतन्यरूपी; जो तत्त्व प्रकृती देह आदि, अवस्था आदि, दुःख सुखका जाननेवाला सोई जीव, सोई जान। ये अर्थ। औ शब्द कहिये जो प्रथमारंभमें जब पक्केका कच्चा देह भया तब, 'अहं अयं देहः,' ऐसा माना सोई शब्द। तब दूसरी इच्छा औ देहमें से उठी कि, मेरे सरीखा दूसरा कोई होता तो अच्छा था, सोई इच्छाका स्वरूप खड़ा भया स्त्रीरूप माया, सोई जीवको दाग विषय बासनाका लगा, जैसा सोनेको सोहागा लगता है; तद्वत्। ये अर्थ। जैसा सोहागेके डारेसे सोना पिघलता है तैसा वो नारी रूपको देखके पुरुषरूप पिघला, दोनोंका संयोग हुवा। तब स्त्रीका बिंदु पीला औ पुरुषका स्वेत, ये दोनों गर्भवासमें मिले ताते आगे देहकी रचना भई; तैसी अब भी होती है। और दूसरा कर्ता कोई नहीं, ऐसा विचार करके देखो। औ प्रथमारंभमें आनन्दरूप हंस भया था तब कछु स्फुर्ती न हती, निर्विकल्प रूप था। तहाँसे अपनी स्फुर्ती उठी कि-'एकोहं,' ताहीको शब्द कहिये, ज्ञान कहिये, ताहीको महाकारण कहिये। ता ज्ञानसे अपनेको माना औ दूसरा इच्छा विषय खड़ा भया, ताहीको सोहागा कहिये, अज्ञान कहिये, कारण कहिये। ता कारणसे इच्छा रूप नारी और अनेक जगत् चौरासी लक्ष चित्र खड़ा भया सूक्ष्मरूप, ताहीको कल्पना कहिये, स्वेत कहिये, सूक्ष्म कहिये। याका दृष्टांत कि-जैसा एक जीव स्वप्नमें सूक्ष्म देह धारण करता है औ जेतिक कल्पना उठती है ते ते रूप आपही धारण करता है, अपना तमासा आपही देखता है; परन्तु उस जीवको कछु,मालूम नहीं कि रचना तमासा मैं ही

बनाया औ मैं स्वप्न देखता हौं। तद्वत् स्वेत कहिये सूक्ष्म देह, सो इच्छामात्रमें अनेक योनी. अनेक रूप उत्पन्न भये: फिर स्त्री भाव पुरुषने माना औ पुरुष भाव स्त्रीने माना। औ परस्पर विषय बढ़ा ताते सूक्ष्म देह निजकै माना, तब सूक्ष्महीसे स्थूल पैदा भया। तब सूक्ष्म भीतर भया औ स्थूल दृढ़ भया। कैसा ? कि स्वेत सूक्ष्म जल रंग, ताते मैथुन भया सोई जर्द बुन्द पृथिवी, ताका स्वरूप जमा सोई स्थूल, जल कुकुही कहिये जलका बुदबुदा देह। इस प्रकार एक जीवसे सब विस्तार पैदा भया। सोई जीव सबका जाननेवाला जाग्रतरूपी, ऐसा देखो। ये अर्थ ॥ २५ ॥

साखी-पाँच तत्त्व ले ई तन कीन्हा। सो तन ले काहि ले दीन्हा॥
कर्महिके बश जीव कहत हैं। कर्महिको जिव दीन्हा२६॥

टीका गुरुमुख-हे हंसा ! तूने पक्के पाँच तत्त्व लेके एक कच्चा स्थूल कीन्हा, सो तन तूने विषय कर्मनमें दीन्हा। तो वेद शास्त्र सब कहते हैं कि-कर्महीके वश जीव हैं औ कर्महीं जीवको बंधन है। त्रैलोक्यं कर्मबंधनात्। इति स्मृति। फिर ये नाना प्रकारके कर्मकाण्डका बंधन वेदने जीवनको क्यों दिया ? औ ये संसारने भी कर्ममें जीव क्यों दिया ? जैसा कोई जहर जनायके जहर देवै औ जहर जानके जहर खावै। तद्वत् कर्महीके वश जीवको वेद कहते हैं औ कर्महीको जीव दीन्ही। ताते कर्म उठायके माया योगका उपदेश करता है ॥ २६ ॥

साखी-पाँच तत्त्वके भीतरे। गुप्त वस्तु अस्थान ॥
बिरला मर्म कोइ पाइ हैं। गुरुके शब्द प्रमान ॥२७॥

टीका मायामुख-अरे बाहिर कर्म उपासना संपूर्ण निरर्थक मिथ्या है, यामें कछु फायदा नहीं। तो पाँच तत्त्वके भीतर गुप्त वस्तु परमात्मा, ताको स्थान है भ्रमरगुफा, शिखा मध्ये। सो मर्म कोई बिरला पावेगा, गुरु वेद ताके शब्द प्रमाण। वेदका शब्द कहिये 'सोहं ब्रह्मास्मि'। ताको प्रमाण गुरुमुखसे सुनके मनन निदिध्यास करेगा तब साक्षात्कार

होवेगा । अथवा ॐकारके प्रमाणसे परमात्माका प्रमाण मर्म बिरला कोई पावेगा । ये अर्थ ॥ २७ ॥

साखी–अमुन्न तखत अडि आसना । पिंड झरोखे नूर ॥
जाके दिलमें हौं बसा । सैना लिये हजूर ॥२८॥

टीका ब्रह्ममुख–तो प्रणव शब्दके प्रमाणसे जो किसीने अनुभवका मर्म पाया था सो ब्रह्मज्ञानी बोलते हैं, कि-मेरा अमुन्न तखत, अमुन्न तखत कहिये चैतन्य तखत, जो शून्यका भी साक्षी, सबका जाननेवाला सर्वसाक्षी तखत । औ अडि आसन कहिये सिद्धासन, सिद्धासन कहिये जापर संपूर्ण सिद्ध ब्रह्मवेत्ता स्थित भये, सोई अधिष्ठान आत्मा; ताका नूर पिंड झरोखे दीखता है, सोई देखके आत्म निश्चय करना । पिंड झरोखा कहिये आँखि, सो आंखिमें लाल सपेद काला पीला हरा, ताके बिन्दुके मध्य मेरा नूर प्रकाश देखो, नजर आता है सोई सर्व साक्षी परमात्मा । अरे मैं सर्वाधिष्ठान हजूर ब्रह्म ।, संपूर्ण ज्ञान भक्ती योग आदि सर्व शक्ती मेरी सैना, सो लेके जाके दिलमें बसता हौं सो जीव मेरेको नहीं जानता, याहीको माया कहिये । जो आपको आप जानै सो ब्रह्म औ न जानै सो जीव मायावश । ये अर्थ ॥ २८ ॥

साखी–हृदया भीतर आरसी । मुख देखा नहिं जाय ॥
मुख तो तबहीं देखिहौं ।जब दिलकी दुबिधा जाय२९॥

टीका मायामुख–अरे सबके हृदयमें आरसी है । आरसी कहिये ज्ञान, सो सबके हृदयस्थ है; परन्तु अज्ञानने ढाँक लिया है, ताते मुख अपना स्वरूप देखा नहीं जाता । जैसा दर्पणको मैल ढाँक लेता है फिर उसमें कछु मुँह नजर नहीं आता । तद्वत् अज्ञानने ज्ञानको ढाँक लिया है ताते चैतन्य स्वरूप मालूम नहीं देता । मुख चैतन्य आत्माको तबहीं देखोगे जब दिलकी दुबिधा द्वैत भेद छूट जायगा । जब द्वैत उपाधी छूटै तब अद्वैत ब्रह्म मालूम होय । ये मायाका अभिप्राय ॥ २९ ॥

साखी–गाँव ऊँचे पहाड़ पर । औ मोटाकी बाँह ॥
कबीर अस ठाकुर सेइये । उबरिये जाकी छाँह ॥३०॥

टीका मायामुख–ऊँचा पहाड़ कहिये महामेरु चौरासीलक्ष योजन ऊंचा, तापर गाँव कहिये इन्द्रपुर, वरुणपुर, कुबेरपुर, मध्यभाग बैकुंठपुर, शिवपुर, ब्रह्मपुर, ऐसे ये गाँव, सो मोटाकी बाँह गहेसे संसारसे उबरोगे। मोटा कहिये बड़ा, बड़ा कहिये वेद, बड़ा कहिये शास्त्र, बड़ा कहिये देव ऋषी, ब्रह्म ऋषी राजऋषी, शास्त्राचारी; इनकी बाँह आश्रित होके इनके वचन प्रमाणसे संसारमें विचरना; सो उत्तम लोककी प्राप्ति परम सुख होता है, नहीं तो यमपुरमें जीव जाता है । वहाँ महादुःखकी प्राप्ति होती है । तो हे जीव ! ब्रह्मा विष्णु महेश, ऐसा ठाकुर सेवना कि, जाकी कृपासे यमलोककी त्रास छूटै औ उत्तम लोककी प्राप्ति होय । ये अर्थ ॥ ३० ॥

साखी–जेहि मारग गये पंडिता । तेई गई बहीर ॥
ऊंची घाटी रामकी । तेहि चढ़ि रहे कबीर ॥३१॥

टीका गुरुमुख–कर्ममार्ग उपासनामार्गसे जो व्यासादि वसिष्ठादि पंडित चले औ स्वर्गादिक लोकको गये, ताही मार्गसे संसार सब चलने लगा औ स्वर्गादिक लोक वासना खडी भई । सो वासना आवागमनका कारण औ जीवका बंधन, ऐसा जानके पातंजली योगी लोग वासना त्याग करनेके वास्ते योग कर्म करने लगे । ऊँची घाटी रामकी, रामकी ऊँची घाटी कहिये भ्रमरगुफा, ताके ऊपर चढ़के योगीलोग आनंदमें मिल रहे । ऐसा मायाका अभिप्राय गुरुने संतनको समुझाया । आगे यही योग सिद्धांतमें कसर दिखाते हैं ॥ ३१ ॥

साखी–ये कबीर तैं उतरि रहू । तेरो संमल परोहन साथ ॥
संमल घटै न पगुथकै । जीव बिराने हाथ ॥३२॥

टीका गुरुमुख–अरे योग अध्यास, कर्म अध्यास दोनों जीवको बंधन हैं ताते दोनों बंधन परखके पारख पर उतर रहो । संमल कहिये लोभ औ परोहन कहिये मन, सो न लोभ छूटता है, न मन थकता है ।

तो जबलग लोभ नहीं घटनेका तबलग वासना औ मन तेरे साथ है। भास अध्यासादि जेती मानंदी होवै सो मन तेरे आवागमनका मूल है। सो अध्यासवश होके जीव बिराने हाथ चौरासीमें पड़ता है। ये अर्थ ॥ ३२ ॥

साखी—कबीरका घर शिखरपर । जहाँ सिलहली गैल ॥
पांव न टीकै पपीलका । तहाँ खलकन लादै बैल ३३॥

टीका मायामुख—पातंजली बोलते हैं कि-जीवका घर शिखर ब्रह्मांड पर है जहाँ परम बारीक मक्र तारवत् रास्ता है। अरे जहाँ चींटीका पाँव तो टिकताही नहीं, तहां संसारने बैल भरभर कर्मकांड, उपासनाकांड लादा है तो ये कहाँ ले जायेंगे ? तो जबलग ब्रह्मांडमें जीव जायके ब्रह्ममें नहीं नहीं मिलता तब लग सब संसार पुस्तक पढ़े, चाहे पूजा नाना विधि करे, परन्तु सब नर्कमें पड़ते हैं। ये पातंजली मायाका अभिप्राय ॥ ३३ ॥

साखी—बिन देखे वह देशकी । बात कहै सो कूर ॥
आपुहि खारी खात हैं । बेचत फिरे कपूर ॥३४॥

टीका मायामुख—वह देश परमात्माका ब्रह्मांड देश, जहाँ बिना सूर्य उजियारा औ बिना चन्द्र शीतलता, बिना करताल पखावज आदि नाना बाजा बजता है औ बिना बादर अमृतकी वर्षा होती है औ हंसको परम आनंदकी प्राप्ती होती है। वह देश योग समाधी मुद्रा करके जबलग देखा नहीं तबलग वेद शास्त्र पुराणादि नाना बानी पढ़ते हैं औ ब्रह्म निरूपण करते हैं सो सब कूर, मूढ़ बिना अनुभविक हैं। अरे आप तो खारी खाते हैं, इन्द्रियनका रस लेते हैं औ इन्द्रियनके भोगमें आसक्त हैं औ संसारमें ब्रह्मरस वर्णन करते हैं। सच्चिदानन्द सुखका रस वर्णन करके इन्द्री पोषणके वास्ते द्रव्य जमा करते हैं। इंद्रियनका सुख सोई खारी, सो खाते हैं औ ब्रह्म सुख सोई कपूर संसारमें बेचते फिरते हैं मिथ्या भूत। जो आपहीको प्राप्त नहीं सो दूसरेको क्या देवेंगे। ये अभिप्राय ॥ ३४ ॥

साखी—शब्द शब्द सब कोई कहै। वो तो शब्द बिदेह ॥
जिभ्या पर आवै नहीं । निरखि परिखि करि लेह ३५॥

टीका मायामुख—अरे वेद शास्त्र पुराण सब शब्दही शब्द कहते हैं, परन्तु अनुभव बिना शब्दसे कार्य होनेका नहीं। अरे वो शब्द ब्रह्म तो बिदेह देहातीत है, कछु जीभपर आता नहीं। उसे लक्षसे समझ ले अनुभव ले। ये अभिप्राय ॥ ३५ ॥

साखी—पर्वत ऊपर हर बहै । घोड़ा चढ़ि बसे गाँव ॥
बिना फूल भौंरा रस चाहै। कहु बिरवा को नाँव ॥३६॥

टीकागुरुमुख—पर्वत कहिये ब्रह्मांड पर, हर परमात्मा; ऐसा वेद शास्त्रादि मायाने उपदेश किया। और पर्वत कहिये स्वर्ग, तापर परमात्मा का लोक है, ऐसा मायाने उपदेश किया, सो बानी सुनते ही जीव सब बहे, भ्रम चक्रमें परे। ये अभिप्राय। अब सब जीवने संकल्प रूपी घोड़ा, तापर चढ़िके गांवको जानेकी तैयारी किया, ब्रह्मांडमें वा स्वर्ग आदिकमें जानेकी तैयारी किया कि-उस गांवमें हम बसेंगे। किस तरहसे ? कि-योग करके, तप करके, उपासना करके, नाना प्रकारके दान पुण्य आदिक कर्म करके, लोकादिकमें बास पावेंगे; ऐसा कहिके संसारके मनुष्य सब धोखेमें बही गये औ चौरासीमें परे। क्योंकि बिना फूल भौंरा रस चाहै। अरे फूल होवेगा तो भौंरेको रस मिलेगा। जो फूल तो है नहीं औ भौंरा तो रस चाहता है, तो कहांसे पावेगा ? जाके वृक्षहीका ठिकाना नहीं, तो. तिसका फूल कहाँ मिलै औ रस कैसे पावै, तो मिथ्या भ्रांती। वृक्ष कहिये ब्रह्म; तो ताका नामभर है, रूपका ठिकाना ही नहीं। औ फूल कहिये लोकालोक, तो जाके रूपका ठिकाना नहीं ताका लोक कहाँ पाइये। औ रस कहिये अनुभव, सो ताका अनुभव सनकादि, शुकादि महान् जीव लेना चाहते हैं तो कहाँ पावेंगे ? परंतु ब्रह्म ऐसी एक कल्पना प्रथमारम्भमें खड़ी भई सोई सब सनकादि आदि जीव मानि-मानि मग्न भये

कि-मैं ब्रह्म, मैं आत्मा; ऐसा कहिके अपनेमें आप गाफिलायके चौरासीमें बहि गये। ये अभिप्राय ॥ ३६ ॥

साखी–चंदन बास निवारहू। तुझकारण बन काटिया॥
जीवत जीव जनि मारहू। मूये सबै निपातिया॥३७॥

टीका गुरुमुख–चंदन कहिये जीवको, सो गुरु कहते हैं कि-हेजीव ! संपूर्ण वासना दूर कर। ब्रह्मवासना, लोकवासना, ऋद्धि सिद्धि वासना, जगत् वासना, स्त्री पुत्र धनादि विषय वासना, केवल मुक्तिमात्र ज्ञान वासना: ये तेरेको सब बंधन हैं ताते। तू परखके सब निरुवार डार। तेरे वास्ते संपूर्ण वेद शास्त्रादि बानीका बन काटा। जा बनमें तू भूला था सो बन काटके मैदान किया, जाते विचार मार्ग तेरेको मिले औ पारख स्थिति तेरेको यथार्थ प्राप्त होय। ये अर्थ। जीयत जीव जनि मारहू, मुये सबै निपातिया। अरे जीव! नाना प्रकारकी तपस्या औ योग औ वैराग करके जीते जीव क्यों दुःख पावता है ? तेरा अभिप्राय कि-जीते जीव इंद्रियनको मारना औ जीते जीव देहको जरावना तो मुक्ति होती है। जो इंद्री औ देहके निपात कियेसे मुक्ति होय तो मरे पर सब देह औ इंद्री निपात होती हैं औ सब जीव समाधिवत् हो जाते हैं तो संपूर्ण जीव मुक्त हो जाय, फिर जीते जीव नाना योग तपस्या करके क्यों मारते हो ? तो हे सन्तो ! ऐसे नास्तिक ज्ञानसे कहीं मुक्ति होती है ? नाहक बानीके धोखेमें क्यों परे हो ? जब लग यथार्थ पारख नहीं होने की तब लग जीव रहित नहीं होनेका। ये अभिप्राय ॥ ३७ ॥

साखी–चंदन सर्प लपेटिया। चंदन काह कराय॥
रोम रोम विष भीनिया। अमृत कहाँ समाय॥३८॥

टीका गुरुमुख–चन्दन कहिये जीवको औ सर्प कहिये मायाको; सो मायाने जीवको लपेट लिया, अब जीवने क्या करना ? रोम रोममें मायाका विषय विष बेध रहा है अब अमृत विचार कहाँ समाय ? सर्प कहिये, माया कहिये. काया कहिये, स्त्री कहिये, गुरुवा कहिये, जाने

जीवनको लपेटा, बाँध डारा सो माया। ये पाँच नाम लेके माया तामें जीव, आसक्त भया, अब विचार क्या करेगा? अब विष कहिये, विषय कहिये कल्पना कहिये, बानी कहिये, आनंद कहिये, ये पाँच प्रकारका विष जीवको रोम रोममें बेध गया अब अमृत जीव पारखमें कहाँ समाय सकता है? तो धोखेमें गफिलाय गया। ये अभिप्राय। या साखीमें जीवकी प्रशंसा करके गुरु बताते हैं कि-जो जीवको मायासर्प डस गया ताते नाना विषय विष चढ़ा,। ब्रह्म विषय, जगत् विषय, स्त्री विषय, बानी विषय; ऐसा विष चढ़ा ता विषयमें जीव गफिलाय गया। अब जो ये विष उतरे तो जीव पारख स्थितिको प्राप्त होय। तो विष उतरनेको कौन सुख साधना? ये शंका। सतसंग द्वारे विचार अमृत सुख साधना। ये अभिप्राय। आगे जीव कैसा भूला? सो दृष्टांत सहित गुरु बताते हैं॥ ३८॥

साखी—ज्यों मोदाद समसान सिल। सबै रूप समसान॥
कहहिं कबीर वह सावजकी गती। तबकी देखि भूकान ३९॥

टीका गुरुमुख—मोदाद कहिये प्रमाण, समसान सिल एक पत्थर होता है, ताको प्रमाण ऐसा है कि जो कोई रंग उस पत्थरपर धारो सो रंग उस पत्थरके मुताबिक मालूम होता है। उस पत्थरका रंग हरा है। ताको दृष्टांत देके ब्रह्म स्थितिकी कसर बताते हैं। जो समसान सिलका प्रमाण है तैसा अन्तःकरणका प्रमाण है, कि जो जीव अन्तः-करणमें मिलता है सो अन्तःकरण निर्विकल्परूप हो जाता है औ कहता है कि ब्रह्म साक्षात्कार मेरेको हुवा। सो ब्रह्म कैसा है? कि समसान सिलावत, जो कोई उसे परसे सो सब जगत् ब्रह्मरूप मालूम होता है। परंतु जबलग अंतःकरणमें जीव समरस होके रहता है तबलग द्वैत मालूम होता नहीं औ जब अंतःकरणका वियोग हुवा तब द्वैत बना है, जीव-रूप का जीव रूप बना है। ऐसे ही जबलग समसान सिलपर वस्तु धरो तबलग समसानसिला माफिक मालूम होती है औ जब समसानसिल

परसे वस्तु निकार लेव तब जिसका रंग उसको बना ही है। तो विजातीय रंग अंतःकरण आदि संपूर्ण नाशमान, ऐसा न जानके जीव सब भ्रममें पड़े। ये अभिप्राय। काया छूटै उपरांत द्वैत अद्वैत स्थिति कहाँ है। हे जीव ! ये संपूर्ण तेरी समरसताईसे देहमें प्रतिभास होता है, देह नाशै सब नाश होती है। परन्तु वह सावजकी गति, तबकी देखि भूकान। अरे वह सावज कहिये आदि पुरुष जाने सब सृष्टिको पैदा किया, सो वही सावज ये जीव है; परंतु तबकी प्रथमारंभकी गति विचित्र अद्भुत देखके भूकने लगा। जैसा कुत्ता काँचके मंदिरमें पड़ा, सो अनेक भास मालूम भये तब भूकते भूकते प्राण छूटे औ फिर श्वान योनिमें गया। तद्वत् ये जीवको आनंद तो समसान शिलावत् भया औ देह तो सब शिला स्फटिकशिला अथवा काँचके महलवत् भया, ताते जीवको अनेक भास भये। ताहीते चार वेद, छै शास्त्र, अठारह पुराण सब भूकि-भूकि मर गये औ जैसा अध्यास तैसा वास प्राप्त भया। ये अर्थ ॥ ३९ ॥

साखी–गही टेक छोंड़ै नहीं। जीभ चोंच जरि जाय ॥
ऐसो तप्त अंगार है। ताहि चकोर चबाय ॥४०॥

टीका मायामुख–मायाका उपदेश ऐसा है कि-जो टेक गहना सो छोड़ना नहीं। जैसे चकोरको टेक है कि कधी मैं चन्द्रको पाऊँ तो हृदयमें रख लेऊँ। तो जो कोई चकोरके आगे तप्त खैरके अंगार डार देवे तो चन्द्रके भरोसे निगल जाता है; परंतु अपनी टेक नहीं छोड़ता। ऐसे परमात्माकी भक्तीकी टेक रखना, कधी प्राण जाय तब भी छोड़ना नहीं। ये अभिप्राय। परन्तु वो चकोरका मुख तो जरता होगा ? ये शंका ॥ ४० ॥

साखी–चकोर भरोसे चन्द्रके। निगलै तप्त अँगार ॥
कहैं कबीर डाहै नहीं। ऐसी वस्तु लगार ॥४१॥

टीका मायामुख–ये मायाका उपदेश ऐसा है कि–चकोरका दृढ़ विश्वास चन्द्रपर है ताते डाहै नहीं। चन्द्रके भरोसे निगल जाता है

ताते अङ्गार शीतल हो जाता है। इस प्रकारसे लगार वस्तु बड़ी है। लगार कहिये, पक्ष कहिये, भक्ती कहिये, प्रीति कहिये, सो जगत् में ईश्वरकी भक्ती पक्ष पूर्वक प्रीति रखना ताते प्रपंच अग्नि सब शीतल मालूम होवेगी औ त्रिविध ताप सब शीतल मालूम होवेंगे; परन्तु सदा प्रेममें मग्न गलतान हो रहना। ये अभिप्राय ॥ ४१ ॥

साखी–झिलमिल झगरा झूलते। बाकी छूटि न काहु ॥
गोरख अटके कालपुर। कौन कहावै साहु ॥४२॥

टीका गुरुमुख–झिलमिल झगरा कहिके तारक योग, तामें संसार सब झूलने लगा। कोई सन्मुखी, कोई खेचरी, कोई चाचरी, कोई शांभवी, कोई उन्मीलनी, कोई अगोचरी, कोई आत्मभावनी, कोई पूर्णबोधिनी, कोई सर्वसाक्षिनी आदि मुद्रा करने लगे, जीवसे ब्रह्म ब्रह्मसे जीव होने लगे। झिलमिल कहिये ज्योति स्वरूप परमात्मा, ताका झगरा वेद; वेदके प्रमाणसे संसारमें ब्रह्मादि ऋषी सब झूलने लगे, कोई बाकी छूटा नहीं। ये अभिप्राय। अरे गोरखनाथ सरीखे ज्ञानी योगी जिनको एकइस ब्रह्मांडका गम था, सो भी कालपुरमें अटके। कालपुर कहिये जगत्; सोई जगत् में अटके, कछु पारख पदकी प्राप्ति भई नहीं। ताते चोर जो योगी अमरगुफामें कालके डरके मारे छिपे, परन्तु काल कछु उनके परखनेमें आया नहीं। वो तो अमर गुफामें गये; परन्तु काल उनके सङ्ग ही रहा। अरे जाको उन ब्रह्म आत्मा निर्विकल्प ऐसा माना सोई उनका काल, ब्रह्म अनेक जगत् रूप आप ही बनके रहे। हे संतो! काल कछु रूप नहीं, भास अध्यास कल्पना मानदी सोई जीवका काल। गोरख सरीखे बड़े-बड़े कालपुरमें अटके, अब बिना पारख कौन कहावै साहू? तो पारख बिना सब चोर; क्योंकि तत्त्वनका अध्यास, तत्त्वनका भास, तत्त्वनका अनुमान, तत्त्वनकी बासना, तत्त्वनकी देह, तत्वनकी समाधी, ताको 'मेरी या मैं' ऐसा मानैं सो चोर। ये अर्थ ॥ ४२ ॥

साखी–गोरख रसिया योगके। मुये न जारी देह ॥
मास गली माटी मिली। कोरो माँजी देह ॥४३॥

टीका गुरुमुख–गोरख सरीखे योगके रसिया जिन संपूर्ण हठयोग राजयोग का रस लिया। चौहाट, कुण्डली, लंबिका, तारक, अमनस्क, सांख्य आदि योग करके सिद्ध हुए औ चौरासी कल्प करके देह वज्र किया। मांस सब गलिके माटीमें मिलि गया औ हाड़ नाड़ी गुदा सब गलके एक हो जम गया औ हीरा ऐसी देह चमकने लगी। ऐसा साधन किया कि न देह कधी जरै, न गलै। ऐसा योगका रस लिया औ सिद्ध भये; परन्तु पारख बिना वोभी नाश भये, धोखेमें परे। ये अर्थ ॥ ४३ ॥

साखी–बनते भागि बेहड़े परा। करहा अपनी बान ॥
बेदन करहा कासो कहै। को करहा को जान॥४४॥

टीका गुरुमुख–बन कहिये, बानी कहिये, संसार कहिये, करहा कहिये, खरहा कहिये, ससा कहिये, जीव कहिये। बेहड़ा कहिये, खाँच कहिये, ब्रह्मरंध्र कहिये, भ्रमरगुफा कहिये। सो संसारी जीव संसारमें महादुःख जानके भेषमें आये, बैरागी गुसाँई भये तब वहां नाना बंधन नाना ब्यौहारमें बंध भये। वहाँ गृहस्थनकी टहल करके पेट भरता था, यहाँ भेषकी टहल करके पेट भरने लगा। वहाँ पेट भरने निमित्त नाना उद्यम मनकी फिकिर, यहाँ भीख मिलनेकी फिकिर। वहाँ घरकी फिकिर, यहाँ मठकी फिकिर। वहाँ बेटी बेटाका मोह, यहाँ चेली चेलाका मोह। वहाँ जगत् विषयकी उपाधी, यहाँ भेष बिषयकी उपाधी। तो जैसा ससा वनमें था तो मोकला था, वन सावजनके डरके मारे भागा सो बेहड़े खाँचमें परा। अब खाँचमें से तो कहूँ, निकर सकता नहीं, तो बंधमें कैद हुआ। औ वहां बहुत दुःख मालूम होने लगा तो वो ससा अपना दुःख कासों कहै ? औ उसके दुःखको

कौन जानता है ? अगर बाहरके ससनसे उनने अपना दुःख कहा तो दुःख कछु छूटता नहीं और अहमकताई अज्ञानता ठहरती है, ताते ससा अपने मनहीमें सुसुकि सुसुकि मरता है । तद्वत् संसारी जीव काम क्रोध लोभ मोहादि सावजनके डरके मारे भेषमें आये औ जात वर्ण सब छोड़ा औ भेष सोई बड़ी खाँच तामें परा, पर काम क्रोध लोभ मोहादि सावज कछु छूटे नहीं । ताते दूना दुःख प्राप्त भया । पर अपनी वेदना अब कासों कहै ? औ कहेसे दुःख छूटता नहीं औ अहमकताई पल्लौमें आती है, लोकमें हँसी होती है; ताते शरमा शरमा पचि पचि मरते हैं औ सच्चा निर्णय चित्तमें नहीं धरते । अब उनको जो दुःख होता है सो किसीसे कहते तो हैं नहीं औ उनकी तपस्याका दुःख कौन जाने ? अरे भेष सब तीर्थाटन करते हैं औ पंचाग्नि तापते हैं, शीत समय जलशयन करते हैं । कोई धूम्रपान करते हैं, कोई अन्न-त्याग करके दूध आहारी, फल अहारी, कन्द अहारी, दूब अहारी, पत्र अहारी ऐसा-ऐसा कर्म करते हैं बानीके खाँचमें परके, सो उनका दुःख कौन जानै ? वही जानै । जो दूसरेसे कहै तो अपने कर्तव्यकी हँसी, अप्रतिष्ठा होती है ताते कोई-कोई बानींके बनते भागे औ योग खाँचमें परे औ बंध भये । सिद्धि पैदा करके जगत्‌में अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाई पर भीतरकी भ्राँती दुगदुगी कछु छूटी नहीं । सो वो अपनी भ्राती दूसरेसे कहते नहीं कि अपनी प्रतिष्ठा हलकी हो जायगी औ उनकी भ्राँति कौन जाने पारख बिना । भला बनमें जो सब सावजनसे बचके रहते तो खाँचमें गिरनेका क्या काम है ? औ खाँचमें गिरे तो क्या सब सावजसे बचते हैं ? खाँचमें जानेको सावजनको क्या मुश-किल है ? खाँच तो सावजनका घरही है । भला जंगलमें तो भी भागने को जगा थी औ बेहड़ेमें तो सहजही धर खाया काम क्रोध लोभ मोहादिक सावजने । ये अभिप्राय । औ करहा कहिये हाथीको, सो केहरी सिंह आदिकके भयसे जायके कन्दरामें पड़ा सो वहाँही पकड़के सिंह

खा गया । तद्वत् विषयनके डरके मारे योगी लोग अमर गुफामें छिपे तो वहाँ ही महा आनंद सिंह खाय गया । अब ये योगी अपना भेद कासों कहैं, इनको कछु सूझता नहीं औ इनको कौन जानता है ? जो मिथ्या भ्रममें पड़े हैं । अर्थ ये ॥ ४४ ॥

साखी–बहुत दिवसते हीड़िया । शून्य समाधि लगाय ॥
करहा पड़ा गाड़में । दूरि परा पछिताय ॥ ४५ ॥

टीका गुरुमुख–बहुत दिनसे चौरासीमें फिरे, फिर चौरासीका दुःख मालूम भया तब योगी लोगोंके शरणमें जायके ब्रह्म प्राप्तिके वास्ते समाधी लगाई औ शून्यरूपी हो रहे । अपने मनमें तो ऐसा जाना कि, हम ब्रह्मरूपमें मिल रहे, आवागमनसे रहित भये; परन्तु जब चोला छूटेगा तब बहुत मनमें पछितायेंगे । क्योंकि ब्रह्मांड फूट जायगा, समाधी उड़ जायगी औ ब्रह्म अनुभव कछु रहनेका नहीं; तो फिर चौरासीमें जायेंगे, फिर पछितायेंगे । जैसा हाथी खाँचमें गिरा फिर बाहर तो निकर सकता नहीं औ बनकी याद करके पछिताता है कि जो बनमेंसे और कहीं भागता तो भला होता, अब कहाँ गाड़में आय परे ? तद्वत् अध्यास वश जीव गर्भवासमें जाता है । और गर्भवासमें देह साबूत होती है तब गर्भका दुःख मालूम होता है । जठराग्निका तड़ाका लगता है औ रक्त मांस मूत्रमें गजबजाता है, दुर्गंध विशाल उठती है । तब पिछले जन्मकी याद होती है कि-मैं कहाँ था ? औ कहाँ आयके फँसा ? जो वहींसे कहूँ भाग जाता तो अच्छा था; ऐसा दूर परा पछिताता है । परंतु क्या करे ? बेबश कहूँ निकर सकता नहीं । ये अर्थ ॥ ४५ ॥

साखी–कबीर भर्म न भाजिया । बहुबिधि धरिया भेष ॥
साँईके परचावते । अंतर रहि गइ रेष ॥ ४६ ॥

टीका गुरुमुख–कबीर कहिये कायाबीर, कायाबीर कहिये जीव, सो हे जीव ! तुने नाना तरहका भेष धारण किया औ नाना क्रिया औ

नाना योग औ नाना उपासना औ वेदांत आदि बहुत विचार किया; परन्तु भ्रम न भागा । अरे ! तू भ्रमरूपी हो रहा है । सोई कोई ब्रह्म हैं ऐसा एक भ्रम हुवा, सो उसका परचाव नाम परिचय करा—कहीं सविकल्प, कहीं निर्विकल्प, कहीं जैसाका तैसा, कहीं दूसरा संकल्प, कहीं अहं देह औ कर्तूत । ऐसा साँई ब्रह्मका परिचय किया, सोई अंतरमें सब भ्रमका बीज रह गया । सो केवल ब्रह्म अध्यास मात्र अध्यास सब मिटै तब यथार्थ पारखकी प्राप्ति होय । ये अर्थ ॥ ४६ ॥

साखी—बिनु डाँड़े जग डाँड़िया । सोरठ परिया डाँड़ ॥
बाटनि हारे लोभिया । गुड़ते मीठी खाँड़ ॥४७॥

टीका गुरुमुख—बिनु डाँड़े जग डाँड़िया कहिये जो किसीने जबरदस्ती जगत्को डांड़ तो किया नहीं औ जगत्को डाँड़ तो हो गया है । तो कैसा हुवा ? सो सुनो—सोरठ परिया डाँड़ । सोरठ अंगरेजीमे जूवे को कहते हैं, जो किसी मालके ऊपर बाँटनी करके चिठ्ठी डारते हैं । फिर जाके नामकी चिठ्ठी निकरै सो सोरठ जूवा जीतै औ जाके नाम की चिठ्ठी न निकरै सो बाँटनी भी हारा औ सोरठ भी गई । तद्वत् इस जगत्में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, ये चार पदार्थ पर सोरठ परी, कि,भाई जाको चार पदार्थ चाहिये ताने यथानुशक्ति कर्म, योग, उपासना करना औ नरजन्म बाँटनीमें लगाना । फिर जाका कर्म उदय होवेगा ताको ज्ञानते अद्वैत मोक्ष मिलेगा; ऐसा मनसूबा वेदने बताया । तब संसारमें लोभ बढ़ा औ सबने सोरठ डारी । सो लोभके मारे सब जीव सोरठ हार गये, नरजन्म हार गये तब चौरासी भोगना ये डाँड़ परा । सो किसीने इनको डाँड़ा नहीं, अपने खुशीसे लोभमें आयके डाँड़ देना परा । ये अभिप्राय । बाँटनी नर जन्म लोभिया जीवने हारा; क्योंकि गुरते मीठी खाँड़ । गुर कहिये जीवको औ खाँड़ कहिये ब्रह्मको, सो जीवसे ब्रह्म बड़ा है ऐसा अनुमान जगत्में खड़ा भया । क्योंकि जीव मैला अविद्यावेष्टित औ मायाके वश, औ ब्रह्म शुद्ध सर्वाधिष्ठान मायाधीश ।

ऐसा अनुमान जगत्में खड़ा भया तब जीवको लोभ लगा औ लोभिया बनके बाँटनी नरजन्म हार गया । या गुर कहिये जगत् सुख, सो अनित्य नाशवान् जानके औ खाँड कहिये ब्रह्मसुख नित्य अविनाशी; ऐसा जानके लोभिया बाटनी हार गये । ये अर्थ ॥ ४७ ॥

साखी—मलयागिरके वासमें । वृक्ष रहा सब गोय ॥
कहबेको चन्दन भया । मलयागिर ना होय ॥४८॥

टीका गुरुमुख—मलयागिर कहिये हंसको, ता हंसका बास कहिये ब्रह्म; सो ब्रह्ममें संसार सब गोय रहा, मिल रहा । तो कहने मात्र ब्रह्म बना जीव; परंतु कछु हंस न बना । बास छोड़ जो गिरिको वृक्ष पहुँचे सो सुबासके मारे गलि जाय औ मलयागिरिही हो जाय; परंतु बासहीमें वृक्ष गोय रहता है ताते मलयागिर नहीं होता, वृक्षका वृक्ष ही रहता है । तद्वत् ये जीव हंसपदको नहीं पहुँचता, ब्रह्मानंद निर्विकल्प ताहीमें रहि जाता है ताते कहबेमात्र ब्रह्म बनता है । जो सत्य विचारादि भूमिका पर ठहरे तो ब्रह्म जगत् धोखा गलि जाय औ यथार्थ हंसही जीव हो जाय । मलयागिर जीव, वृक्ष देह; सो अनेक देह जीवकी बास चैतन्यता तामें मिल रही है । ताते देह भी चैतन्य सरीखी मालूम होती है; परंतु देह कछु चैतन्य होती नहीं । ताते देह भिन्न औ चैतन्य भिन्न, ऐसा परखके, जानके पारख पर रहना । ये अभिप्राय ॥ ४८ ॥

साखी—मलयागिरकी वासमें । बेधा ढाक पलास ॥
बेना कबहूँ न बेधिया । युग युग रहिया पास॥४९॥

टीका गुरुमुख—मलयागिर कहिये हंसपदकी भूमिका, सो जो निराभिमानी जीव पक्ष छोड़के सतसंग किया सो जीव ब्रह्मको बेधके पार हुए, पक्के तत्त्वको प्राप्त भये, हंस हुए । औ पक्ष अभिमानी जीव सो युग-युग सतसंगके पास रहे तो भी ब्रह्मपदको बेधि नहीं सकते, वे पारखी । अरे कच्ची देहमें ही पक्के तत्त्व हैं, परंतु ब्रह्म अभिमानी, आत्म अभिमानी; देह अभिमानी, कर्म अभिमानी, बानीके अभिमानी, देवताके अभिमानी

ये अपना-अपना पक्ष करके बाद करते हैं औ पोल बाँसके माफिक रहते हैं ताते ये ब्रह्मपदको बेधके पक्के तत्त्वनको नहीं पावते। औ निरपक्ष निराभिमानी जीव ढाक पलासके माफिक गरीब, कंगाल, कुल-हीन, वर्णहीन आश्रमहीन; ते सब विचार करके हंस होते हैं। पक्की भूमिकाको पायके, सबको परखके, ब्रह्मपद बेधके न्यारे होते हैं। ये अर्थ ॥ ४९ ॥

साखी-चलते चलते पगु थका। नग्र रहा नौ कोस ॥
बीचहिमें डेरा परा। कहहु कौनको दोस ॥५०॥

टीका गुरुमुख-गुरु कहते हैं कि-जब मायाने तीर्थ व्रत क्षेत्रादिकका माहात्म्य बताया तब जीव सब वानप्रस्थ तीर्थवासी होके चले। तो चलते-चलते, तीर्थ करते-करते पाँव थक गये तब बाकी तीर्थनकी औ स्वर्गादिकनकी बासना रही औ वृद्ध भये, पाँव थकोतब एक जगह कहूँ तीर्थ धाममे परे औ चोला भी छूट गया। तब बासनारूपी नौ तत्त्वका चोला जीवको बना ही रहा, सोई नौ कोस कहिये। चित्त, मन, बुद्धि, अहंकार, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध; ये नौ कोशकी देह जीवको प्राप्त भई तब भूत होके पछिताने लगा औ स्वर्ग भी दूर रहा और गुसैयाँ भी दूर रहा। ऐसी बासनासे बीचहीमें डेरा पड़ा भूत योनिनमें, अब कहो-यामें किसको दोष देवोगे ? वहाँ तुम्हारे सङ्ग कोई नहीं। अरे तेरी कल्पनाको तूही खोजने लगा औ नाना वेद शास्त्र सब बनाये। आखिर जहाँलों लक्ष चला तहाँलों शब्द कहा औ जहाँलों शब्द चला तहाँलों लक्ष चला। जब लक्ष थका तब शब्द भी रहि गया; फिर नेतिनेति कहिये बीचहीमें डेरा परा। पारख स्थितिको प्राप्त न भया। तो फिर गर्भवासमें आया। काहेते ? कि पारख नौ कोसके पार है। नौ कोस कहिये-अन्नमय, शब्दमय, प्राणमय, आनंदमय, मनोमय, प्रकाशमय, ज्ञानमय, आकाशमय, विज्ञानमय, ये नौ कोश। अन्नसे उत्पन्न होय औ अन्नमें आसक्त होय सो अन्न मय १। शब्दसे उत्पन्न होय औ शब्दमें आसक्त होय सो

शब्दमय २ । प्राणसे उत्पन्न होय औ प्राणमें आसक्त होय सो प्राणमय ३ । आनंदसे उत्पन्न होय औ आनंदमें आसक्त होय सो आनंदमय ४ । मनसे उत्पन्न होय औ मनमें आसक्त होय सो मनोमय ५ । तेजसे प्रकाशसे उत्पन्न होय औ प्रकाशमें आसक्त होय सो प्रकाशमय ६ । ज्ञानसे उत्पन्न होय औ ज्ञानमें आसक्त होय सो ज्ञानमय ७ । आकाशसे उत्पन्न होय औ आकाशमें मिल रहै सो आकाशमय ८ । विज्ञानसे उत्पन्न होय औ विज्ञानमें मिल रहै सो विज्ञानमय ९ । ये नौ कोसते पार पारख पद, सो खोजते-खोजते नौ कोसमें रहि गये ताते नग्न कहिये चोला, सो छूटे उपरांत फिर गर्भवास पाये । अब कहो किसे दोष देवोगे ? अरे जिसे दोष देना चाहोगे सो तो सब तुम्हारी कल्पना । सो नौ कोस यथार्थ परखनेमें आवै औ छूटै तब पारखपदकी प्राप्ति होय । ये अभिप्राय । अन्नमय प्राणमयकी संधी शब्दमय कोश, प्राणमय मनोमयकी संधी आनंदमय कोश, मनोमय ज्ञानमयकी संधी प्रकाशमय कोश, ज्ञानमय विज्ञानमयकी संधी आकाशमय कोश । अन्नमयकी देही स्थूल, शब्दमयकी देही विराट, प्राणमयकी देही सूक्ष्म, आनंदमयकी देही हिरण्यगर्भ, मनोमयकी देही कारण, प्रकाशमयकी देही अव्याकृत, ज्ञानमयकी देही महाकारण, आकाशमयकी देही मूल प्रकृती, विज्ञानमयकी देही कैवल्य ब्रह्म । ये अभिप्राय । अन्नमय कोश-स्थूल देह, अवस्था जागृती, क्षिप्रा भूमिका, पपीलमार्ग, तत्त्व पृथिवी, रजोगुण, मुद्रा, खेचरी, त्रिकुटी स्थान, जठराग्नी, घटाकाश, अपान वायु, काम जल, प्रध्वंसाभाव ॥ १ ॥ शब्दमय कोश-विराट् देह, अवस्था सायंसंधी, तत्त्व महद्‌ पृथिवी, गुण ब्रह्मा, मुद्रा सन्मुखी, कंठस्थान, बुद्धि भूमिका, नरमार्ग, महदग्नी, घटजल, प्रतिबिंबाकाश, किंकिरादि महद वायु, सतलोक स्थान, महा प्रध्वंसाभाव, महाजल, देह छोड़के बाहर योगी दूसरी देह धारण करते हैं सो शब्दमय कोश ॥ २ ॥ प्राणमय कोश-सूक्ष्म देह, श्रीहटस्थान, स्वप्न अवस्था, सूक्ष्म जल तत्त्व, सत्त्वगुण, मुद्रा

भूचरी, कामाग्नी, मठाकाश, उदान वायु, गतागत् भूमिका चंचल जल, प्राज्ञ भाव, विहंगम मार्ग, लिंग देह ॥ ३ ॥ आनंदमय कोश-हिरण्यगर्भ देह, गोल्हाट स्थान, विष्णु लोक, मन भूमिका, निशा अवस्था, स्वप्नसुषुप्ति संधी, योगाग्नी, रेचक वायु, जल मार्ग, विशिष्टाद्वैत भाव, चाचरी मुद्रा, विष्णु गुण, अभ्राकाश ॥४॥ मनोमय कोश-कारण देह, हृदय स्थान, सुषुप्ति अवस्था, सौलेष्टता भूमिका, आवर्ण जल, मंदाग्नी, महादाकाश, अनन्यभाव, कपिल मार्ग, मुद्रा उन्मीलनी, अग्नि तत्त्व, तमोगुण; प्राण वायु ॥५॥ प्रकाशमय कोश-आव्याकृत देह, अहुठ पीठ स्थान, शिवलोक, शिवगुण, चित्त भूमिका, प्रातःसंधी अवस्था, ज्ञानाग्नि, अहंभाव, पूरक वायु, सूर्य मार्ग, शांभवी मुद्रा, चिद्चिद् विशिष्टाकाश, अणिमादि अष्ट सिद्धनका रूप ॥६॥ ज्ञानमय कोश-महाकारण देह, नाभीस्थान, शुद्ध सतोगुण, तुर्या अवस्था, सुलीन भूमिका, जानीब जल, अत्यंताभाव, बड़वाग्नी, समान वायु, मीन मार्ग, अगोचरी मुद्रा, चिदाकाश, सविकल्प समाधी ॥७॥ आकाशमय कोश-मूल प्रकृति देह, पुण्यगिरी स्थान, निराश्रम लोक, ईश्वर गुण, अहं भूमिका, मध्याह्न अवस्था, कुंभक वायु, वायु मार्ग, आत्मभावनी मुद्रा, आनंदाकाश, निज भाव, भ्रमरगुफा, तुर्याकी संधी ॥ ८ ॥ विज्ञानमय कोश-कैवल्य देह, भ्रमरगुफा स्थान, तुर्यातीत अवस्था, अंतःकरण भूमिका विज्ञान जल सर्वाधिष्ठान, कालातीत कला, भावातीत भाव, पूर्णबोधनी मुद्रा, (ब्रह्माग्नि) निजाग्नी निजाकाश, स्फुर्ती (व्यान) वायु जैसेका तैसा आत्मा गुण, निर्गुण ब्रह्म॥९॥ इस प्रकार नौ कोश सूक्ष्म भावसे वर्णन भये । कहते हैं कि-जहाँ नौ कोश अथवा पाँच कोश आचार्यने वर्णन किया है तहाँ बहुत विस्तार किया है । वह विस्तार सब यहाँ लावना तो नाहक टीका बहुत बढ़ेगी, ताते सूचनार्थ लाया । कि चलते-चलते, खोजते-खोजते, विचार करते-करते, देखते-देखते लक्ष औ पगु थकि गया; परंतु या नौकोश लाँघिके कोई पार पाया नहीं । ताते चोला

छूटा औ गर्भवासके बीचहीमें डेरा परा । अब दोष किसे देवोगे ? अपनी गाफिलीमें आपही पड़ा औ अपनी भूलने अपनेको खाया । ताते नौ कोशके पार पारख पद, सो पारख पदकी प्राप्ति होय औ नौ कोश मिथ्या भास सब छूटै तब जीव रहित होय । ये अर्थ ॥ ५० ॥

साखी—झालि परे दिन आथये । अन्तर पर गई साँझ ॥
बहुत रसिकके लागते । बिश्वा रहि गई बाँझ ॥५१॥

टीका गुरुमुख--बुढ़ापा आया प्रपंच करते-करते औ विषय रस लेते-लेते । औ वेद शास्त्र पुरान नाना बानी पढ़ते-पढ़ते औ कर्म, उपासना, तपस्या, योग बैराग करते-करते थके; आखिर गुरुपद पारखकी प्राप्ति भई नहीं । एक दिन मौत आन पहुँची तो आँखिन पर झाली परी, अँधेरी परी औ दिन कहिये ज्ञान, सो गाफिलीमें डूब गया । अन्तरकी इंद्री चित्त, मन, बुद्धि, अहंकारादि; इनमें अँधेरा परा । अब बुद्धि कहीं निश्चय कर सकती नहीं औ चित्त कहीं चल सकता नहीं, मनमें कछु दृढ़त्व आता नहीं, अहंकारका उपाय थका । अब कछु पारखकी प्राप्ति होने माफिक अवस्था रही नहीं; काहेते ? कि बहुत रसिक गुरुवालोग, इनकी संगतमें लगेते विस्वा कहिये विस्वासी जीव बाँझ राहि गये, कछु फल प्राप्त न भया औ एक दिन मर गये तब चौरासीको प्राप्त भये । ये अर्थ ॥ ५१ ॥

साखी—मन कहै कब जाइये । चित्त कहै कब जाव ॥
छौ मास के हींडते । आध कोस पर गाँव ॥५२॥

टीका गुरुमुख--अब गुरुवा लोगोंकी वातें सुन-सुन जीवको अनुराग हुवा तब मनमें नाना संकल्प उठने लगे कि-किस वस्त स्वर्गादिककी प्राप्ति होय औ कब ब्रह्मांडका सुख मिले । ताते मन कहै कब जाइये । अब चित्त अनुसंधान बाँधने लगा, छौ शास्त्रकी बानी देखने लगा । तब सोधने लगा कि अर्धमात्रा सोई आधाकोश, तामें जीवकी

स्थिति है, ऐसा ज्ञान भया तो कैवल्यकी प्राप्ति होती है। ये अर्थ ॥ ५२ ॥

साखी—गृह तजिके भये उदासी। बनखंड तपको जाय ॥
चोली थाकी मारिया। बेरई चुनि चुनि खाय॥५३॥

टीका गुरुमुख--जब अर्ध मात्रामे जीवकी स्थिति है ऐसा मालूम हुवा तब घर छोड़के उदासी भये, गृहस्थाश्रमसे उदास भये औ त्याग करके वनमें तपस्या करने लगे। तब भूखके मारे प्राण विकल होने लगा औ हाथ पाँवकी शक्ती घट गई। चोला थका तब जंगलकी बेरई चुनि-चुनि खाने लगे, कन्द मूल फल फूल पत्र चुनि-चुनि खाने लगे। ये अर्थ। अब माया उपदेश करती है जीवको कि-महा तपस्या करके चोलेको जराना ॥ ५३ ॥

साखी--राम नाम जिन चीन्हिया। झीना पिंजर तासु ॥
नैन न आवे नींदरी। अंग न जामे मासु॥५४॥

टीका मायामुख-अरे! जाने राम नाम चीन्हा ताकी गति ऐसी होना कि-शरीर तो दुर्बल होना औ मारे विरहके आँखमें नींद न आवना, सदा सर्व काल लौ परमात्मामें लगी रहै। जैसी तरुण स्त्री है ताका पिया परदेश गया है। सो कामकी ज्वाला शरीरमें उठती है औ आठों पहर पियाकी याद आती है, तापर सङ्गकी सखी सब शृङ्गारकी बानी सुनाती हैं औ नाना प्रकार क्रीड़ारस वर्णन करती हैं सो सुनि-सुनिके विशेष विरह बढ़ता है। औ आँखिनमें आँसू चलती हैं, मुँह पर पीरी छाय रही है, सेजपर नींद नहीं आती, भोजन भूषण वस्त्रादि कुछ सोहाते नहीं। तद्वत् जाका प्रेम परमात्मामें लगा है ताको परमात्मा मिलनेके कामकी ज्वाला बारम्बार अंतःकरणसे उठाना औ जगत् के विषय अग्नीके माफिक मालूम होना। सदा संसार औ विषय भोगका तिरस्कार मनमें लाते रहना औ विरह वैराग्य प्रेम लक्षण बानी सुनते रहना औ वही बानी मनन करके प्रेम लक्षणाका निदिध्यास

करना। प्रेम लक्षणा वर्णन मुँहपर छाय रही, पीरी श्वास आती है। श्री त्यागी उजीरी अमीरी बेफिकिरी फिकिर नामकी।

कवित्त--छिन छिन भरे नैना नीर मनुवा धरे नहीं धीर, कबधौं मिलै प्रीतम पीर शुष्क शरीर डोलत हैं॥ छिनमें हँसे छिनमें रोय छिनमें रहे मौनी होय, छिनमें उमँगिके नाचै गावै छिनहीमें पछतावै॥ मद्यपीके जैसे मतवारे न कबहुँ देह संभारे, ऐसी प्रेमकी है रीत ताको मिलै प्रीतम प्रीत॥ ५४॥

साखी-जो जन भीजे रामरस। बिगसित कबहुँ न रूख॥
अनुभव भाव न दरसै। ते नर सुख न दुख॥५५॥

टीका मायामुख--रामरस कहिये प्रेमरस, सो जो जन प्रेमरसमें भीजि रहे हैं सो सदा उदास रहते हैं, प्रफुल्लित कबहूँ होते नहीं। अनुभव उनकी भावनाका रूप उनको सदा दर्शता है ताते उनको जगत् का कछु सुख दुःख मालूम होता नहीं। जैसा मद्यपी मद्यपान करके समस्त बेफहम हो जाता है फिर उनपर चाहे कोई फूल डारो, चाहे विष्ठा डारो, चाहे निंदा करो, चाहे पाँवन परो, वह कछु समझते नहीं। तद्वत् प्रेममें गरगाफ भये। ये अर्थ॥ ५५॥

साखी--काटे आम न मौरसी। फाटे जुटै न कान॥
गोरख पारस परसे बिना। कौनेको नुकसान॥५६॥

टीका गुरुमुख--जैसा आमका वृक्ष काटे पर बौरता नहीं तैसा ब्रह्म अनुमानका वृक्ष परखके काट डारा फिर कधी जुटता नहीं। औ जैसा कान फाटा फिर कधी जुटता नहीं; तैसा जीव ब्रह्म अध्यास परख के न्यारा हुवा फिर कधी ब्रह्म अध्यास या जगत्में मिल सकता नहीं। ताते जगत् ब्रह्म दोऊ धोखा परखके पारखरूप हो रहना। नहीं तो हे गोरख योगी! पारख कहिये जीव औ लोहा कहिये देह; तो जो देह जीवका स्पर्श ना करे तो देहका नुकसान है, जीवका क्या नुकसान है? तैसा ये जीव पारखका स्पर्श न करे तो पारखका कछु नुकसान नहीं,

जीवहीका नुकसान है। ताते हे गोरखनाथ ! हठयोग राजयोगादि अध्यासका पक्ष छोड़के सब धोखा परख ले, नहीं तो धोखेमें बंध होके नाहक मानुष तन खोवेगा औ फिर आवागमनमें परेगा तो किसका नुकसान होयगा ? देख हमने तो जीव दया जानके बहुत कहा, फिर तुम्हारी मर्जी। ये अभिप्राय ॥ ५६ ॥

साखी–पारस रूपी जीव है। लोह रूप संसार ॥
पारसते पारस भया। परख भया टकसार ॥५७॥

टीका गुरुमुख–पारस चैतन्य रूप जीव है, पारस कहिये ज्ञान, सो ज्ञानरूपी जीव है औ लोहा जड़ पाँच तत्त्व अचेतरूपी संसार; येही जमा; इस पर औ कोई मालिक नहीं। ये अभिप्राय। तो ये अनेक जीव बिना मालिक पैदा कहाँसे भये ? ये शंका। पारससे पारस भया। अरे ये जीव चैतन्य अचेत जड़ तत्त्वनमें मिला औ अपनी हंस देह भूला; ताते आपही अचेत अजान होके इच्छा किया औ दूसरा नारी स्वरूप बनाया औ ता नारीके वश भया। फिर तैजस अभिमान युत कल्पि-कल्पि नाना रूप बनाया औ एकही जीव सबमें समाया। जैसा स्वप्नमें अनेक रूप बनाया औ सबमें आप समाया; तैसा पारस ते पारस भया। परंतु अब एकसे अनेक हो गया ताते सामर्थ सब नाश भई। तैजस अभिमानको विश्व अभिमानने ढाँका, ताते जीव लाचार भया। अब इससे कछु हो सकता नहीं ताते आवागमन जीवको सिद्ध भया। ये अभिप्राय। तो आवागमनसे रहित कैसा होय ? ये शंका। परख भया टकसार। टकसार कहिये, बीजक कहिये, जासे साँचा-झूठा, भास-अध्यास-अनुमान, आरंभ-परिणाम सबकी कसर परखनेमें आवे ताको टकसार कहिये; जाते पारस पारख भया। बिना पारख और खराब हुवा, बहुत दुःख पाया। फिर जब गुरुकी टकसार सतसंगमें आया तब सब कसर धोखा बंधन परखके पारस भूमिका पर पारखरूपी जीव बना तब आवागमनसे रहित हुवा। ये अर्थ ॥ ५७ ॥

साखी--प्रेम पाटका चोलना । पहिर कबीरू नाच ॥
पानिप दीन्हो तासुको । जो तन मन बोले साँच ॥५८॥

टीका मायामुख–प्रेमपाट कहिये प्रेम लक्षणा बानी, चोलना कहिये देह, कबीरू कहिये कायाबीर जीव; सो माया जीवको उपदेश करती है कि-प्रेमलक्षणा चोलना बनाना और प्रेमलक्षणा बानीका नित अध्यास करना । प्रेमलक्षणा बानीको गाना, प्रेमलक्षणा बानी पढना, वही सुनना, वही गुनना; जामें चोला सब प्रेमरूपी हो जाय । फिर हे जीव ! वही चोला पहिरके प्रेममें मगन होके नाचना तो भगवान् सदा उनके संग रहेंगे औ अंतमें भगवान् उसको अपने रूपमें मिला लेवेंगे । पानिप दीन्हो तासुको, जो तन मन बोले साँच । अरे ये प्रेमलक्षणा बानी दश विधा भक्ती भगवानने उसे दी जो तन मनसे एक भगवान् पुरुष साँच और सकल जीव नारी मिथ्या; ऐसा भाव जहाँ आया, निश्चय हुवा तहाँ कृपा करके अपनी प्रेमलक्षणा दी, गोपिकादिकनको । ये अर्थ ॥ ५८ ॥

साखी--दर्पण केरी गुफामें । स्वनहा पैठा धाय ॥
देखि प्रतिमा आपनी । भूकि भूकि मरिजाय ॥५९॥

टीका गुरुमुख–दर्पनकी गुफा कहिये प्रेमलक्षणा बानी औ स्वनहा कहिये मन, सो सब भक्तनका मन प्रेमलक्षणा बानीका दृढ़ापन सुनिके प्रेम लक्षणामें पैठा तब प्रेमकी मूरत अपनी खड़ी भई । तब उसको देख-देखके अधिक प्रेम बढ़ाने लगे औ उस धोखेके पीछे पुकार-पुकारके मरे । कुछ पारख स्थितिको प्राप्त भये नहीं तो देह छूटै प्रेम प्रतिमादि संपदा नाश भई औ चौरासीके चक्रमें परे । ये अर्थ ॥ ५९ ॥

साखी--ज्यों दर्पण प्रतिबिंब देखिये । आपु दुहुनमा सोय॥
या तत्त से वह तत्त है । याहीसे वह होय ॥६०॥

टीका गुरुमुख–जैसा दर्पणमें मुँह देखना तो दूसरा मुख नजर आता है, पर जो ये मुँह न हो तो दूसरा कहाँसे नजर आवै । तो ये देखने-

वाला सत्य औ देखा सो मिथ्या । अंतःकरण पंचक सो दर्पण, देखनेवाला जीव, प्रतिबिंब ब्रह्म आतमा ईश्वर कर्ता औ पंचतत्त्वादि जगत् । अथवा दर्पण देह औ देखनेवाला जीव, प्रतिबिंब संपूर्ण योग सिद्धांत । अथवा दर्पण बानी औ देखनेवाला जीव, प्रतिबिंब नाना अर्थ भास अध्यासादि । तो येही जीवसे ब्रह्म जगत् आत्मादि संपूर्ण कल्पना खड़ी भई । ये अभिप्राय ॥ ६० ॥

साखी—जोबन सायर मुझते । रसिया लाल कराय ॥
अब कबीर पाँजी परे । पंथी आवहि जाय ॥ ६१ ॥

टीका गुरुमुख—बन कहिये बानी, सायर कहिये समुद्र, मुझते कहिये खोजते, रसिया कहिये ब्रह्मा, विष्णु महेशादि, नानाऋषी; तिन अति प्रीती करके खोजा । जो बानीका समुद्र, वेद, तामेंसे पाँच रस्ता निकारे- कर्ममार्ग, उपासनामार्ग, योगमार्ग, प्रेममार्ग, ज्ञानमार्ग, तामें जीव परे औ एक-एक पंथका पक्ष पकड़के पंथी बने । ताते आने जाने लगे-पिंडसे ब्रह्मांड, ब्रह्मांडसे पिंड जगत्से ब्रह्म, ब्रह्मसे जगत्, स्वर्गसे नर्क नर्कसे स्वर्ग, देवलोकसे मृत्युलोक मृत्युलोकसे देवलोक, गर्भवाससे बाहर औ बाहरसे गर्भवासमें आने जाने लगे । ये अर्थ । कबीर कहिये जीव, औ पाँजी कहिये मार्ग, लाल रसिया त्रिदेवादि महामुनी; तिन जगत्में नाना मार्ग कराये । सोई मार्गमें जीव परे, सो आते जाते हैं । ये अर्थ । बिरह **अर्थ**—जोबन सायर मुझते । जोबन कहिये ज्वानीका समुद्र ज्वानीका समुद्र स्त्री, ताने ब्रह्मा, विष्णु, आदि रसिया लोगोंको मोहित किया औ भगचक्रमें सबको समेटके डारा । वही रसिया लालनने सबको विषय कराया, महाऋषिन को अपनी कन्या पैदा करके दई । सोई शादी विवाह करके अब जीव सब विषय मार्गमें पड़े हैं । सो भगपंथी भगमेंसे आते हैं औ भगहीमें जाते हैं (ये अर्थ ॥ ६१ ॥

साखी—दोहरा तो नौ तन भया । पदहि न चीन्है कोय ॥
जिन्ह यह शब्द बिबेकिया । छत्र धनी है सोय ६२ ॥

टीका गुरुमुख–अरे ये स्त्री पुरुष दोहरा दो तन तो नये पैदा भये; परन्तु जा हंसके पाससे ये दोनों स्त्री पुरुषके तन पैदा भये सो हंस पदको कोई चीन्हता नहीं सब भूलमें परे। कोई ब्रह्म, कोई आत्मा, कोई दास कहलाता है। पर जहाँसे ये बानी वेद खड़े भये औ ब्रह्म आत्मा सिद्धांतनको जाने माना, सो जीवको कोई चीन्हता नहीं तो कैसे छत्र धनी जाना जाय ? ये शंका। भाई ! जिनने संपूर्ण वेदादिक शब्दका विवेक किया औ सब सिद्धांत माना है सोई छत्रधनी जीव। ये अर्थ। जो शब्दका विवेकी सोई शब्दका मालिक। ये अर्थ ॥ ६२ ॥

साखी–कबीर जात पुकारिया। चढ़ि चंदनकी डार ॥
बाट लगाये ना लगे। पुनि का लेत हमार ॥ ६३ ॥

टीका गुरुमुख–गुरु मायाका अभिप्राय कहते हैं कि-चन्दन कहिये जीव, चन्दनकी डार कहिये ब्रह्म, सो ब्रह्मज्ञान पर चढ़के कबीर गुरुवा लोग पुकारते हैं जात कहिये ब्रह्मका सिद्धांत, सो ई जीव सब भ्रमचक्रमें पड़े। केतिक जगत् ब्रह्म बने तो इनकी स्थिति कैसे होय ? औ स्थितिकी बाट मैं लगाता हौं तो ये जीव कोई लगते नहीं; फिर हमारा क्या लेवेंगे ? आपी ये खराब होवेंगे। ये अर्थ ॥ ६३ ॥

साखी–सबही ते साँचा भला। जो साँचा दिल होय ॥
साँच बिना सुख नाहिना। कोटि करे जो कोय ॥६४॥

टीका गुरुमुख–गुरु कहते हैं कि-सब ब्रह्म जगत् ईश्वरादि सिद्धांतनसे जीव ये साँचा सिद्धांत औ सब झूठा; परन्तु जब साँचा पारख जीवको प्राप्त होय तब। नहीं तो एक पारख बिना कोटि सिद्धांत, कोटि तपस्या, कोटि योग कोई करे. परन्तु जीवको सुख नहीं। एक पारख बिना सकल सिद्धांत दुःखरूपी। ये अभिप्राय ॥ ६४ ॥

साखी–साँचा सौदा कीजिये। अपने मनमें जान ॥
साँचा हीरा पाइये। झूठे मूलहु हान ॥ ६५ ॥

टीका गुरुमुख–ताते हे संतो ! साँचा विचार करके साँची स्थितिं ग्रहण करना । अपने मनमें जानके सत्य विचारका सौदा करना जातें साँचा हीरा, साँचा पद मिलता है । अगर अपने मनमें विचार न किया तो गाफिलीमें गुरुवालोगनका उपदेश ग्रहण किया, ताते मूल जीव ताकी भी हानी होती है । सो धोखा मानंदी हो जाता है औ जीवका स्वतःभाव भी नाश होता है । ताते सत्सङ्गमें जायके साँचा सौदा सार शब्दका विचार करना औ जैसा सार शब्द कहता है तैसा अपने भी मानुष देहमें जानना । यथार्थ पारखकी प्राप्ती बिना जीवकी हानी होती है । ये अभिप्राय । ॥ ६५ ॥

साखी–सुकृत बचन माने नहीं । आपु न करे बिचार ॥
कहहिं कबीर पुकारके । सपनेहु गया संसार ॥६६॥

टीका गुरुमुख--सुकृत कहिये संत, सो जगत् संतनका बचन तो मानता नहीं, सदा सर्वकाल राग दंभमें गाफिल हो रहा है औ आप विचार करता नहीं; ताते गुरु कहते हैं कि–वेद बानीके भरोसे मिथ्या खाविंदको पुकार पुकारके स्वप्नवत् संसार गया, कुछ फहम रही नहीं, मानुष तन स्वप्नसा जाता रहा औ सुकृत कहिये निर्णय बचन । ये अर्थ ॥ ६६ ॥

साखी–आगि जो लगी समुद्रमें । धुवाँ न परगट होय ॥
की जानै जो जरि मुवा । कि जाकी लाई होय॥६७॥

टीका गुरुमुख--समुद्र कहिये संसार जगत्, तामें बिरह अग्नी, ब्रह्म अग्नी लगी । । सो धुवाँ तो कहूँ प्रगट होता नहीं औ जीव सब जर रहे हैं तो इनके दुःखको कौन जाने ? सोई इनका अनुभव जाने कि, जो विरह अग्नीमें जरके मर गया अथवा ब्रह्म अग्नीमें जरके निरांत शांत हो गया सो जाने। नहीं तो जिन बिरह लगाया औ ब्रह्म अग्नी चेताया सो गुरुवा लोग जाने औ बाहर कोई नहीं जानता। ये अभिप्राय ।' चिंता ज्वाला संसारमें लगी है, सो संसारमें सब जरा जाता है ।

चिंताका दुःख सो जाने जो जो चिंताक्रांत है, या जाने चिता लगाई सो जाने । ये अर्थ ॥ ६७ ॥

साखी–लाई लावनहारकी । जाकी लाई पर जरे ॥
बलिहारी लावनहारकी। छप्पर बाँचे घर जरे ॥६८॥

टीका जीवमुख--ये ब्रह्म अग्नी किन्हे लगाई कि जो आप पहिलेही जरके ब्रह्मरूप हो गये, तिनने लगाई-सनकादि व्यासादिकनने । कि जाकी ब्रह्म अग्नी लगायेसे हमारे दोनों पर जर गये-कर्म उपासनाके औ सगुण निर्गुण दोनों पक्ष रहे नहीं । हमको ज्ञानकाँडसे संपूर्ण ब्रह्म अनुभव हुवा । ताते बलिहारी उन लावनहारकी; जो हम पांच तत्त्व औ छठवाँ मन इनके ऊपर निर्विकल्प स्वरूप होके आवागमनसे बचे । ये अर्थ । इस जीवने ब्रह्म ज्ञानिनकी प्रशंसा की, जो आपको ब्रह्म ज्ञानकी प्राप्ती भई । इस वास्ते गुरु जीवमुख साखीका निराकरण करते हैं ॥ ६८ ॥

साखी–बुन्द जो परा समुद्रमें । सो जानत सब कोय ॥
समुद्र समाना बुन्दमें । सो जानै बिरला कोय॥६९॥

टीका गुरुमुख--बुंद कहिये ब्रह्मको, ब्रह्म कहिये धोखेको, सो कोई एक ब्रह्म है ऐसा धोखा प्रथमारम्भमें जगत् में परा । सो उस धोखेको अपने अनुमानसे मालिक करके सब कोईने जाना । जगत् कहिये समुद्र, सो उस धोखेमें समाया अपने अनुमानसे औ वेद बानीके प्रमाणसे, ताको कोई बिरला पारखी जानता है । सो पारखी सबसे न्यारा पारख भूमिका पर रहता है । ये अर्थ । अथवा समुद्र ब्रह्म औ बुंद जीव, सो जीव ब्रह्ममें परा अपने अनुमानसे । औ ब्रह्मको अधिष्ठान बनाया, सो सब वेद बेदांतने जाना; परंतु वही ब्रह्म जगत्‌में समाया औ नाना सुख दुःख भोगता है सो काहू बिरले पारखीने जाना । ये अर्थ ॥ ६९ ॥

साखी—जहर जिमी दे रोपिया । अमी सींचे सौबार ॥
कबीर खलक ना तजै । जामें जौन बिचार ॥७०॥

टीका गुरुमुख—जहर जिमी कहिये ब्रह्म अधिष्ठान, सो गुरुवा लोगोंने उपदेश देके जीवको रोपा औ खलक सब मेरा स्वरूप; ऐसा निश्चय करके कबीर जीवने पकड़ लिया और उस जिमीमें गरगाफ हुवा । सो सौ बार कोई जीवको अमी रूपी पारखसे सींचे पर ये खलकने जाने जौन बिचार पकड़ा है सो छोड़ता नहीं । कसर भी मालूम होती है; परंतु धोखा कछु त्यागा जाता नहीं, मोह दृढ़ हुवा । ये अर्थ । अमी कहिये अमृतको, अमृत कहिये जो आप अमर होय तासे न कधी औ जाको प्राप्त होय ताका भी जरा मरण मेट दे । तो अमृत नाम पारखका है जो तीन कालमें नाश नहीं होता औ जा जीवको प्राप्त होय ताको जरा मरण रहित करता है । ये अभिप्राय ॥ ७० ॥

साखी—धौकी डाही लाकड़ी । वोभी करे पुकार ॥
अब जो जाय लोहार घर । डाहे दूजी बार ॥७१॥

टीका गुरुमुख—धौ कहिये जठराग्नी, ताकी डाही लाकड़ी कहिये जीव, सो गर्भवासका त्रास करके पुकार करता है छूटनेके वास्ते; परंतु ये गुरुवालोग लोहार, तिनके पास जायगा तो वो इसे बंधनमें डार देवेंगे । फिर ये जीव और भी गर्भवासमें जायके जठराग्नीमें दूजी बार जरेगा । ये अर्थ ॥ ७१ ॥

साखी—बिरहकी ओदी लाकड़ी । सपचै औ धुँधुवाय ॥
दुखसे तबही बाँचि हो । जब सकलो जरि जाय ॥७२॥

टीका गुरुमुख—बिरहके भीजे जो जीव हैं सो राम वियोगी हैं । सो सचप सचपके ठहर ठहरके धुंधुवाय उठते हैं । रह रहके बिरहकी ज्वाला उठती है सो व्याकुल होके रोते हैं । इनका दुःख कैसे छूटै ? जब ब्रह्म जगतादि बिरह जरके नाश हो जाय ज्ञानके प्रतापसे औ पारख पदकी प्राप्ती होय तब दुखसे बचे । ये अर्थ ॥ ७२ ॥

साखी—बिरह बाण जेहि लागिया। औषध लगे न ताहि॥
सुसुकि सुसुकि मरिमरि जिवै। उठे कराहि कराहि॥७३॥

टीका गुरुमुख—बिरहकी बानी जा मनुष्यको लगी सो उस बिरहमें दिवाना मस्त हुवा। फिर उसे विचारकी बानी कधी लगती नहीं औ पारख पद कधी उस जीवको प्राप्त होता नहीं; ताते सुसुकि-सुसुकि मरि मरिके जीता है। श्वासा ठंढी चलती है, मुँह पर पीरी छाय रहती है, आँखी लाल, आंसुसे भरी हुई औ देह पतरी रहती है। सो बारंबार लगवारकी याद करके कराहि कराहि उठता है। ये अर्थ॥ ७३॥

साखी—साँचा शब्द कबीरका। हृदया देखु विचार॥
चित्तहु दै समुझे नहीं। मोहि कहत भैल युग चार॥७४॥

टीका गुरुमुख—अरे जो ब्रह्माका शब्द वेद, ताको तूने साँचा करके माना; सो हृदयमें विचार करके देख कि, संपूर्ण भ्रमका रूप है मिथ्या धोखा। परंतु तू चित्त देके समुझता नहीं ताहीते तेरेको धोखा मालूम होता नहीं। सो-तू धोखेहीमें पड़ा रहता है और नाना योनीका दुःख तेरेको भोगना प्राप्त होता है। सो दुःख औ धोखा तेरा छूटा नहीं, इसी वास्ते मेरेको कहते-कहते चार युगमें भये पर तेरेको अभी तलग सूझ परा नहीं। गुरु कहते हैं कि-सतयुगमें सतसुकृत नाम धरायके तेरा बन्धन छूटनेके वास्ते बहुत शब्द कहा। औ सतयुग गत होता है तब त्रेता युग आता है। फिर मुनींद्र नाम धरायके तेरा धोखा छूटनेके वास्ते बहुत शब्द कहा। फिर त्रेतायुग गत भया, द्वापरयुग आया तब तेरे वास्ते करुणामय नाम धराया औ बहुत शब्द कहा। फिर द्वापर गत भया, कलियुग आया तब कबीर नाम धराया औ तेरेको पारख स्थिति प्राप्त होनेके वास्ते बहुत शब्द कहा; परंतु अभीत-लग भी तूने चित्त देके समझा नहीं तो तेरी क्या गति होगी ? ये अभिप्राय। अब गुरुको जगत्‌का बंधन छुड़ाना औ जीवको पारख

स्थितिकी प्राप्ति कराना, येती उपाधी काहेको चाहिये ? ऐसा कोई शंका करेगा ताका उत्तर कि–गुरु तो स्वच्छ पारखरूप हैं, उनको कछु उपाधी नहीं। चौपाई--"दया सुभाविक परख प्रकाशी ॥ अभय अशंक सदा सुख रासी ॥" ऐसे गुरु हैं। उनका ये स्वाभाविक गुण हैं कि-जीवपर दया करके अपने पदको प्राप्त करना। ये अर्थ ॥७४॥ ❀

साखी–जो तू साँचा बानिया। साँची हाट लगाव ॥
अन्दर झारू देइ के। कूरा दूरि बहाव ॥७५॥

टीका गुरुमुख–हे जीव ! जो तुम साँचे बैपार करनेवाले हो तो साँचा बजार सत्सङ्गरूपी लगाव औ भीतर बिचारकी झारू देके कल्पना, अनुमान, भास आदि कचरा कूरा दूर संसारमें बहाय देव, डार देव। ये अर्थ। बानिया कहिये, जाको बानीको बान होय, बानी कहिये, बेसन कहिये, आदत कहिये, लत कहिये, विषय कहिये। ये अभिप्राय। तो हे जीव ! तेरेको बानीका विषय है। तो तू साँचा औ वेद शास्त्रादि मिथ्या धोखेकी बानी क्यों बोलता है ? साँच पारखकी बानी बोल। औ कर्म उपासना योग ज्ञान विज्ञानादिक कचरा दूर बहाय देव औ तू पारख पर थिर हो रहो। ये अर्थ ॥ ७५ ॥

---

* साखीः—।।७४।। सद्‌गुरु कहते हैं कि, गुरुवा लोगोंने चारों युगनसे कल्पना की बातें जो कहते चले आये हैं, उसे मैं निरुवार करके कहता हूँ कि, सब मानन्दी झूठी हैं और कल्पना कर्त्ता जीव ही सत्य है। तो संसारी वाणी भ्रममें पड़े हुए मोही जीव चित्त लगाकर सुनते नहीं और सुनकर समझते भी नहीं। कल्पित ईश, ब्रह्म आदि व वेद, शास्त्रादि वाणीके मोही जीव उसी कल्पना वाणी को चारों युगोंसे कहते चले आये। भ्रमिक गुरुवा लोगोंको कल्पना की वाणी संसारमें उपदेश करके पुष्टि करते-करते चारों युग बीत गये; किन्तु आज भी गुरु पारखी का सत्संङ्ग करके 'सर्व वाणी भ्रम मिथ्या', ऐसा समझते नहीं हैं। उसे मैं बार बार समझाता हूँ तो भी पक्षपाती लोग विचार करके समझते नहीं; बिना पारख। एक ही श्री सद्‌गुरु कबीर साहेब बार बार चार युगों में आकर समझाये ऐसी बात नहीं। जीवरूप से और सन्तरूप से उपदेशक गुरु बन कर चारों युगों की समय से समझाते आ रहे हैं। तहाँ १२ वर्ष का एक युग भी माना है। बारह चौको ४८ वर्षों से मैं समझाता आ रहा हूँ ये अभिप्राय है। क्योंकि मुक्त जीव फिर देह धारण नहीं करते. अतः देह रहे तक ही चारों युगों की कल्पना परखाकर समझाने का भाव है। ऐसा जानना चाहिये। विशेष खुलासा समझना हो तो पारखी सन्तों की सत्सङ्ग से समझ लीजिये।

—रामस्वरूपदास।

साखी-कोठी तो है काठकी । ढिग-ढिग दीन्ही आग ॥
पंडित जरि झोली भये । साकट उबरे भाग ॥७६॥

टीका गुरुमुख-काठकी कोठी कहिये नाशमान्, सोई ब्रह्मांड औ सोई पिंडांड, तामें ठौर-ठौर अहंकारकी आग लगी । सो पंडित बड़े-बड़े सब जरके भस्म हो गये औ साकट मूरख भी जरके भस्म हो गये । कोई भागके सत्संग टकसारमें आये सो पारख पायके उबरे, बचे । ये अर्थ ॥ ७६ ॥

साखी-सावन केरा सेहरा । बुन्द परा असमान ॥
सारी दुनिया वैष्णव भई । गुरु नहिं लागा कान ॥७७॥

टीका गुरुमुख-सावन कहिये वेद, ताको सेहरा बानी वेद मंत्र, सो असमान कहिये अंतःकरण; तहाँसे मंत्र बुंद चुवा औ चेलेके कानमें परा । इस प्रकार सारी दुनिया वैष्णव भई, गुरवा लोगनके चेले भये । पर ये कछु गुरु नहीं, गुरु तो पारखीको कहिये; ये तो कनफूके जीवन को भरमानेवाले काल हैं । ये अर्थ ॥ ७७ ॥

साखी-ढिग बूड़ा उतरा नहीं । यही अँदेशा मोहि ॥
सलिल मोहकी धारमें । क्या निंदरी आई तोहि॥७८॥

टीका गुरुमुख-ढिग कहिये नजदीक, सो गुरु कहते हैं कि-मेरे सामने नजदीक संसार सब भ्रममें बूड़ा । मैंने बहुत समुझाया पर उतरा नहीं । यही बातका मेरेको बड़ा अँदेशा होता है कि-पारख पद नजदीक होयके ये मेरे तरफ फिरके देखता नहीं औ मेरी बानी बूझता नहीं; ताते मैं इसे फिर बोलता हौं कि भाई सलिल मोहकी धारमें तेरेको क्या नींद आई है ? अरे हुशियार होवो, नहीं तो तेरेको मोहकी धार संसारमें बहाय लेजायगी । ये अर्थ ॥ ७८ ॥

साखी-साखी कहै गहै नहीं । चाल चली नहिं जाय ॥
सलिल धार नदिया बहै। पाँव कहाँ ठहराय ॥७९॥

टीका गुरुमुख-'मैं सर्वसाक्षी' ऐसा सांख्यवादी वेदांती कहते हैं; परन्तु पारखपद कछु गहते नहीं । औ पारखीके संग बिना कछु वो पद

गहा जाता नहीं; ताते बिना पारख साक्षी कहाँ रहेगा ? साक्षी कहेसे कछु टिकनेको जगा मिलती नहीं । फिर अन्वय करके कहता है कि सब मेरा स्वरूप, मैं पूर्ण आत्मा । तो बानीकी धारा महाप्रबल, पाँव कछु टिकने नहीं देती औ बहायके भ्रम समुद्रमें मिलाय देती है । ये अर्थ । साखी पढ़ते हैं, गावते हैं; परन्तु उसका बिचार कोई गहते नहीं औ जैसी साखी बताती है वैसी चाल चली नहीं जाती । ये संसार मोहकी धारमें बहा चला जाता है । बिना पारख पाँव कछु टिक सकता नहीं । ये अर्थ ॥ ७९ ॥

साखी—कहंता तो बहुते मिला । गहंता मिला न कोय ॥
सो कहंता बहि जानदे । जो न गहंता होय ॥८०॥

टीका गुरुमुख—साखी शब्द कहनेवाले बहुत मिले; परन्तु बिचारके गहनेवाले कोई मिले नहीं । तो ऐसे कहनेवालेको बहि जानदे । जो विचार न गहेगा तो कहेसे क्या होयगा ? ये अर्थ ॥ ८० ॥

साखी—एक एक निरुवारिये । जो निरुवारी जाय ॥
दोय मुखोंका बोलना । घना तमाचा खाय ॥८१॥

टीका गुरुमुख—एक नाम जीवका, सो जीवको गुरु उपदेश करते हैं कि—हे जीव ! तेरे ऊपर एक ब्रह्म है. ऐसा धोखा जो खड़ा हुवा है ताको निरुवार डार । जो कछु धोखा है सो निरुवारेसे जाता रहेगा औ जाते निरुवारा होयगा सोई गुरुपद, तापर रहना; नहीं तो दो मुखके बोलनेमें बहुतेक तमाचा खाय गये । दो मुख कहिये—काल संधी, कर्म ज्ञान, जीवमुख, माया-मुख; ये दो मुखके बोलनेमें कई एक जीवको ब्रह्म झाँई खाय गई । फिर ठिकाना कहीं जीवको लगा नहीं, गर्भवासमें आया । ये अर्थ । तमकी आँच तमाच गर्भवासकी आँच ये अर्थ ॥ ८१ ॥

साखी—जिभ्या केरे बन्द दे । बहु बोलन निरुवार ॥
पारखीसे संग करु । गुरुमुख शब्द बिचार ॥८२॥

टीका गुरुमुख-नाना प्रकारकी तत्त्वमस्यादि बहु बानी परखके छोड़ देव औ जिभ्याको बंद कर । संत पारखिनका सतसङ्ग कर औ जीवमुख, मायामुख, ब्रह्ममुख तीनों मुखकी बानीका निरुवार करके डार दे । औ जासे तीनों मुखका निरुवारा होय सोय सोई सार शब्द, गुरुमुख शब्द; ताका सदा बिचार कर, जाते सदा पारख स्थिति दृढ़ रहे । ये अभिप्राय । गुरु ऐसा हुकुम देते हैं कि, तीन मुखका शब्द छोड़के गुरुमुख शब्दका सदा विचार करना औ गुरुमुख शब्द ही बोलना औ नाहक बहुबानी काहेको बोलना । ये अर्थ । ॥ ८२ ॥

साखी-जाके जिभ्या बन्ध नहीं । हृदया नाहीं साँच ॥
ताके संग न लागिये । घाले बटिया माँझ ॥८३॥

टीका गुरुमुख--जिसके जीभमें बंध नहीं, बहु बानी कर्म, उपासना, योग, ज्ञानादि, छौ शास्त्रनकी बकवाद करता है ताके हृदयमें साँच-ताकी औ पारखकी प्राप्ती कछु भई नहीं । तो ताके संग कधी लगना नहीं । वो कछु पूरी मंजिलको पहुँचानेका नहीं, बीचही में धोखा देवेगा । जो आपहीको गुरुपदका मुकाम मालूम नहीं सो दूसरेको क्या पहुँचावेगा ? आपही झूठमें परा है तो दूसरेको साँच क्या बतावेगा ? अरु जाके हृदयमें साँच आया सो झूठ बकवाद काहेको करेगा ? जाको हीरा साँच मिलेगा सो जान बूझके गार काहेको बटोरेगा । ये अर्थ ॥ ८३ ॥

साखी-प्राणी तो जिभ्या डिगा । छिन छिन बोल कुबोल॥
मनके घाले भरमत फिरे । कालहि देत हिंडोल ॥८४॥

टीका गुरुमुख-जो प्राणी जिभ्या डिगावै, बिबिचार बातें करने लगा, असत बानी बोलने लगा, छिन छिन; ताकी बात कधी सुनना नहीं औ मानना नहीं । वो तो मनके घाले परवश होके अपनेको भूलके फिरता है औ कल्पना उसे हिंडोले दे रही है । झूल रहा है ये अर्थ ॥ ८४ ॥

साखी—हिलगी भाल शरीरमें । तीर रहाहै टूट ॥
चुम्बक बिना न नीकरे । कोटि पाहन गये छूट ॥८५॥

टीका गुरुमुख—जैसा शरीरमें तीर लगा औ टूट गया । भाल हिलगी रही तबलग जीवको चैन नहीं औ जबरदस्ती खैंचा चाहो तो बहुत दुःख होता है औ न निकारो सो उसीमें मरता है । तो चुम्बक बिना निकरनेका नहीं, चाहै कोटि उपाय करो । तैसा ये जीवनके हृदयमें वेदादिक नाना बानीकी कल्पना लगी है । सो बिना पारख कछु वो कल्पना निकरनेकी नहीं । कोटि नर जन्म धरे औ कोटि बार ब्रह्म बने; परन्तु सब छूट जायगा । एक पारख बिना जीवकी स्थिति कछु होती नहीं औ कल्पना कछु छूटती नहीं । ये अर्थ ॥ ८५ ॥

साखी—आगे सीढ़ी साँकरी । पाछे चकना चूर ॥
परदा तरकी सुन्दरी । रही धकासे दूर ॥८६॥

टीका गुरुमुख—आगे ब्रह्मांडमें जानेकी गैल तो अति बारीक बताते हैं मकरीके तार माफिक औ पीछे संसार के तरफ जो जीव फिर-फिर देखाता है तो त्रिविधि तापमें चकनाचूर हो रहा है । औ परदा तरकी सुन्दरी कहिये देहवासी जीव; सो धकासे दूर रहे, भवसागरके बीच रहे, धकेको कछु पहुँचे नहीं, भवसागरके पार कछु पहुँचे नहीं औ पारख पदको प्राप्त कछु भये नहीं । धका कहते हैं कि जहाँ समुद्रका अन्त होय औ जहाँ उतारनेवाले जा जा लगें, जहाज जा लगे सो घाटको धका कहते हैं; समुद्रका घाट कहिये सोई धका । ये अर्थ । जो ब्रह्मांडमें जाकर ब्रह्ममें मिल न सके औ त्रिविधि तापमें दुःखित भये तब एक कोई करता गुसैयाँ है, ऐसा परदा बनाया औ उसके आसरेमें परे, उसकी भक्ती नारि कहाये । औ भवसागर भवसागर ऐसा कहिके भवसागरका पार नहीं पाया तब बीचहीमें परे रहे । ये अर्थ ॥ ८६ ॥

साखी—संसारी समय बिचारी । कोई ग्रेही कोई जोग ॥
औसर मारे जात हैं । तैं चेत बिराने लोग ॥८७॥

टीका गुरुमुख- ससारी जीव पर जब समय परा, कष्ट परा तब विचार करने लगे कि कोई दूसरा हमारा ईश्वर है। ये निश्चय करके फिर ईश्वरकी प्राप्तीके वास्ते कोई गेही भक्त बने, कोई नाना प्रकारकी उपासना भक्ती करने लगे औ कोई संपूर्ण त्याग करके योगी बने; परंतु दोनों धोखेमें परें। गुरु कहते हैं कि-दूसरा ईश्वर, ऐसा अनुमान किया सो कछु है नहीं, मिथ्या धोखा; ता धोखेके भरोसे हे जीव! तेरा अवसर नर जन्म मारा जाता है। हे बिराने लोग! तैं चेत समझके देख। ये अभिप्राय। बिराने जीवको काहेते कहते हैं? कि अपना पद अपने तत्त्वनको छोड़के पराये तत्त्वनमें बंधमान भया औ आपुको आप बिसारके दूसरा ईश्वर अनुमान किया; ताहीका गुलाम बना, ताहीते बिराना कहिये। औ निगुरा है, गुरु पारखको प्राप्त नहीं ताते लोग कहिये। दूसरेका आश्रित होय ताको बिराना कहिये, अपना न होय ताको लोग कहिये। ये अर्थ ॥ ८७ ॥

साखी—संशय सब जग खंडिया। संशय खंडे न कोय ॥
संशय खंडे सो जाना। जो शब्द विवेकी होय ॥८८॥

टीका गुरुमुख--संशय कहिये ईश्वर, संशय कहिये ब्रह्म, संशय ऋद्धि सिद्धी आदि अनेक देवता, संशय स्वर्गका जाना, सो ऐसी-ऐसी संशयने सब जगको खा लिया; परन्तु संशय किसीसे खंडन भई नहीं। संशयका खंडन सोई जन करेगा जो कोई सार शब्दका विवेकी होगा। ये अर्थ ॥ ८८ ॥

साखी—बोलन है बहु भाँतिका। तेरे नैनन किछउ न सूझ॥
कहहिं कबीर बिचारिकै। तैं घट घट बानी बूझ ॥८९॥

टीका गुरुमुख--अरे बोलना बहुत प्रकारका है। अनेक तरहका शब्द है; परंतु बिना पारख तेरे नैननसे कछु सूझता नहीं। सो शब्दके भरोसे तुम मत रहना, अनेक शब्द धोखेका है। तुम शब्दका पक्ष छोड़के विचार करो औ यथार्थ परखके पारख पर ठहर रहो तब तुम घट घटकी बानी बूझोगे। ये अर्थ ॥ ८९ ॥

साखी--मूल गहेते काम है। तैं मत भर्म भुलाव ॥
मनसायर मनसा लहरी। बहै कतहूँ मत जाव ॥९०॥

टीका गुरुमुख—मूल जीव गहेते पारख पदकी प्राप्ती होती है औ पारखकी प्राप्ती होवै तो कार्य होता है, आवागमनसे रहित होता है। ताते नाना प्रकारकी बानीका पक्ष करके हे जीव! तैं मत भरम भुलाव। अरे एक जीव छोड़के और सब भ्रम है। मन कहिये तन, तन कहिये पाँच तत्त्व, सोई समुद्र भवसागर है। यामें मनसा नाना प्रकारकी कल्पना सोई लहर है; ताके संग तू बहिके कहीं धोखेमें मत जा। मन कहिये पुरुष औ मनसा कहिये स्त्री, हे समुद्र पुरुष! तू स्त्री लहरिके संग बहिके कतहूँ मत जा। ये अर्थ ॥ ९० ॥

साखी--भँवर विलम्बे बागमें। बहु फूलनकी बास ॥
ऐसे जीव विलम्बो बिषयमें। अन्तहु चले निरास ॥९१॥

टीका गुरुमुख-जैसा भौंरा बागमें बहुत फूलनकी बास देखके बिलमा औ फूल जब सूख गया तब भौंरा निरास होके दूसरा बाग खोजने चला। तैसे सब जीव विषय बासनामें लुब्ध होके संसारमें बिलमें; परंतु जब अन्त भया, चोला छूटा तब निरास होके गर्भवासमें गये। ये अभिप्राय। बाग कहिये वेदादिक बानी औ बहुत फूल कहिये बहुत सिद्धांत औ ब्रह्म आदि बहुत सिद्धांतनकी प्राप्तीकी बासना सोई बास; तामें सनकादिक, शुकादि, शौनकादि संपूर्ण भौंरे बिलमें औ जब उनका अन्त हुवा तब निरास होके जगत्में समाये, गर्भवासमें आये। बाग कहिये पद्मिनी, चित्रिनी, हस्तिनी, शंखिनी, डंकिनी, नागिनी आदि स्त्रियाँ सोई बाग; भग, कच, नेत्र आदि फूल, विषय बासना सोई बास; कृष्ण इंद्रादि संपूर्ण विषयी जीव सब भौंरे, सो स्त्रियनमें बिलमे। अन्तमें जब इन्द्री थक गईं और मर गये तब निरास होके फिर वही स्त्रियनके गर्भमें चले बासना बश होके। ये अर्थ ॥ ९१ ॥

साखी–भँवर जाल बगुजाल है। बूड़े बहुत अचेत ॥
कहहिं कबीर ते बाँचि हैं। जाके हृदय बिबेक ॥९२॥

टीका गुरुमुख–भँवर जाल कहिये स्त्री औ बगुजाल कहिये बेदादिक नाना बानी, ये दोनों बंधन जीवको हैं। ये दोनों बंधन टूटे तो जीव मुक्त होय; परंतु ये दोनों फाँसी महा कठिन हैं। बहुतक जीव अचेत गाफिल होके भगकुण्डमें बूड़ि गये औ बार-बार बूड़ते उतराते हैं, कोई भी ये दोनों जालनसे बचता नहीं। अरे हे भाई संतो! बचनेका ठिकाना कहीं नहीं। वही बचैंगे दोनों जालसे कि जाके हृदयमें बिबेक होयगा। बिना बिबेक कोई कोटि उपाय करे, मुक्ति होती नहीं। ये अर्थ ॥ ९२ ॥

साखी–तीन लोक टीड़ी भई। उड़ा जो मनके साथ ॥
हरिजन हरि जाने बिना। परे काल के हाथ ॥९३॥

टीका गुरुमुख–तीन लोक-देव दैत्य मनुष्य, सात्विक राजस तामस ये संपूर्ण मनके साथ उड़े। जैसे पवनके साथ टीड़ी जाती है तैसे जीव विषय बासनाके साथ, मनके साथ उड़के चले। मन कहिये मानंदी, सो मानंदीके साथ जीव उड़ि चले हारिजन अनुरागी जन, जिन हरीको न जाना कि हमारे मनकी मानंदी है, ताते कल्पनाके औ स्त्रीके हाथ पड़े। ये अभिप्राय। तीन लोक-सात्विक, राजस, तामस मनके साथ, शुद्ध सतोगुण ईश्वरके साथ उड़ि चले सो काल निर्गुण ब्रह्मके हाथ परे बिना पारख। ये अर्थ ॥ ९३ ॥

साखी–नाना रंग तरंग हैं। मन मकरंद असूझ ॥
कहहिं कबीर बिचारके। तैं अकिल कला ले बूझ ॥९४॥

टीका गुरुमुख–नाना रंगका तरंग ये मनुष्य देहमेंसे उठे हैं सोई नाना प्रकारकी बानी बनी है। ताही बानीमें बड़े-बड़े ऋषिनके मन लगे हैं भँवरारूप बनके; परन्तु मन भँवरा अंध है, उसे कछु सूझता नहीं। अरे हे कबीर जीव! तू विचार करके देख-वो सब महाऋषिनकी स्थिति

कहाँ है । नाना प्रकारके सिद्धांत जो वेदने किया सो सब मिथ्या, एक जीव सत्य है । तू अकिलकला पारख लेके बूझ औ पारख पर रहि जाव ! अकिलकला कहिये जाकी कला पकड़नेमें न आवै सो अकिल कला पारख लेके तू बूझ । बिना पारख कछु तेरेको समझ परनेका नहीं । ये अभिप्राय ॥ ९४ ॥

साखी--बाजीगर का बाँदरा । ऐसा जीव मनके साथ ॥
नाना नाच नचायके । ले राखे अपने हाथ ॥९५॥

टीका गुरुमुख–जैसा बाजीगरका बंदर तैसा जीव मनके साथ । मन कहिये तन, तनका वजन सोई अध्यास जीवको अपने साथ रखता है, कधी इसे छोड़ता नहीं, देहमें डारके जीवको नाना नाच नचाता है । फिर तन तो छूट जाता है औ अध्यासरूपी मन रहि जाता है,सो जीवको अपने हाथ रखता है, कहीं जाने नहीं देता । अपने मनोमयकी अवस्था सुषुप्ति डारके जीवको आकर्षण कर लेता है । अपनेमें मिलायके आप सुषुमनामें मिलिके जीवको गर्भवासमें डार देता है । ये अर्थ ॥ ९५ ॥

साखी–ई मन चञ्चल ई मन चोर । ई मन शुद्ध ठगहार ॥
मन मन करते सुर नर मुनि ।जहँड़े मनके लक्ष दुवार॥९६॥

टीका गुरुमुख–मनहीं कर्मी, मनहीं योगी, मनहीं ज्ञानी औ मनहीं उपासक, मनहीं स्वर्ग औ मनहीं ब्रह्मांड, मनही ईश्वर औ मनहीं ब्रह्म ।

कवित्त–मन देवी देवता मन्त्र तन्त्र, मन पीर औलिया सिद्ध यन्त्र । मन कर्त्ता सब जग ब्यौहार, मन आदि अंतःकरण निर्धार । मन समाधी मन योग ध्यान, मन वेद शास्त्र कथे बहुत ज्ञान । मन नेति नेति कर्ता पुकार, मन पाछे सुर नर मुनिहीं हार । मन काया जीव घेर लीन्ह, मन विषय भूलि अँधियारी दीन्ह । मनका कोई न लखे बिचार, मन ब्रह्म बनो है लक्ष द्वार ॥ १ ॥ इतना प्रमाण मनका है । आगे स्पष्ट अर्थ । सुनो–मन कहिये तन, ई मन चंचल कहिये कर्मी, चोर कहिये योगी, शुद्ध ज्ञानी, ठगहार उपासक औ मन ही मन करते सुर नर मुनी जहँड़े । लक्ष द्वार ब्रह्म कहके जहँडे, खराब हुए । ये अर्थ ॥ ९६ ॥

साखी--बिरह भुवंगम तन डसो । मन्त्र न माने कोय ॥
राम बियोगी ना जिये । जिये तो बाउर होय ॥९७॥

टीका गुरुमुख-बिरहरूपी सर्प जाके तनमें डसा सो जीवको विषय विष चढ़ा । फिर किसीका मंत्र बिचार वो जीव मानता नहीं । अरे जो राम बियोगी जीव हैं सो कधी जीनेके नहीं; अगर जिये तो भी दिवाना हो रहेंगे, उनको बिचार क्या बतावोगे ? ये अर्थ ॥ ९७ ॥

साखी--रामबियोगी बिकल तन । इन्ह दुखवो मति कोय ॥
छूवतहीं मरि जायँगे । तालाबेली होय ॥ ९८ ॥

टीका गुरुमुख-जो राम बियोगी जीव हैं सो अपने तनसे बेजार रहते हैं, उन्हें कोई दुखावो मत । अरे उनको जरा कहोगे कि-जिसका बियोग तुम्हें लगा है सो मिथ्या धोखा; तो तलमलाय-तलमलायके प्राण देवेंगे, मरि जायँगे ॥ ९८ ॥

साखी--बिरह भुवंगम पैठि के । कीन्ह करेजा घाव ॥
साधु अंग न मोरि हैं । ज्यों भावै त्यों खाव ॥९९॥

टीका गुरुमुख-देखो हे संतो ! गुरुवालोगोंके अंतःकरणसे बिरह रूपी सर्प महाभुजङ्ग उठा औ चेलनके कानमेंसे पैठिके करेजामें डसा, घाव किया । ये अर्थ । अब उत्तरार्ध साखी-मायामुख-सो माया क्या कहती है ? कि साधु वहीका नाम है कि जो बिरहके डरसे अंग न मोरै, अंग छिपावै नहीं, बिरह सर्पके सामने खड़ा होय । बिरह सर्प ज्यों भावै त्यों खाय जाय पर सामनेसे न टरै; उसी साधुको भगवत् प्राप्ती होती है । ये मायाका अभिप्राय ॥ ९९ ॥

साखी--करक करेजे गड़ि रही । वचन वृक्षकी फाँस ॥
निकसाये निकसे नहीं । रही सो काहू गाँस ॥१००॥

टीका गुरुमुख-जो गुरुवा लोगनका वचन वृक्ष वेद, ताकी फाँस नाना मंत्र उपदेश जीवनके करेजेमें गड़ि रहे हैं, अब निकारो तो निकरते नहीं । काहू कहिये जीवको; सो जीवनको घेर रही है, कहीं

निकरने देती नहीं, तब जीव गुरुपदको कैसे प्राप्त होय ? पर काहू बेपारखीको गाँस रही है। पारखी पर किसीका गाँस फाँस लगता नहीं। ये अर्थ ॥ १०० ॥

साखी-काला सर्प शरीर में। खाइनि सब जग झारि ॥
बिरले ते जन बाँचि है। रामहिं भजै बिचारि ॥१०१॥

टीका गुरुमुख-काला सर्प कहिये अभिमान, सो अभिमान पाँच प्रकारका-स्थूल अभिमान विश्व, सूक्ष्म अभिमान तैजस, कारण अभिमान प्राज्ञ, महाकारण अभिमान प्रत्यगात्मा, कैवल्य अभिमान निरंजन। ये पाँच प्रकारका अभिमान सोई पाँच फनका बड़ा सर्प काला सबके शरीरमें रहता है औ इनने सब जगको झारके खाय लिया। इस जगत्में जाको विचाररूपी अमृत प्राप्त भया सो येते सर्पके जहरसे बचे और 'एक राम', ऐसा जो वेदने अन्वय किया था सो उससे बचे; भागके न्यारे भये। विचार रूपी अमृतके प्रतापसे सर्पका जहर उतर गया औ पारख भूमिकाको प्राप्त भये। केही तरहसे ? कि मैं पाँचों अहंकारका पारख पाँचोंते न्यारा पारख रूप; ऐसा अमृतपान करके संपूर्ण अन्वय दूर बहायके बिरले पारखी जन पारख भूमिका पर आयके बचे। ये अर्थ। अगर काला सर्प काम याहूके पाँच मुख हैं-पाँच कर्म इन्द्री औ पाँच उपमुख पाँच ज्ञान इन्द्री, सो काम भुजङ्ग सबके शरीरमें रहता है, ताने सब जगको खाय लिया। बिरला कोई विचारवान् बचा, जाने स्त्री त्याग किया औ स्त्रीसे भागा सो। ये अर्थ ॥ १०१ ॥

साखी--काल खड़ा शिर ऊपरे। तैं जागु बिराने मीत ॥
जाका घर है गैलमें। सो कस सोवै निश्चिंत॥१०२॥

टीका गुरुमुख-पंचमुखी सर्प अहंकार सोई काल सबके शिर ऊपर खड़ा है औ हे बिराने मीत जीव! तू कालसे मिताई करके सो रहा है, गाफिल हो रहा है, तो कैसे बचेगा ? काल तेरेको खाय जायगा। हे

संतो ! जाका घर ठगोंके रास्तेमें है उनने निश्चिंत कैसे सोवना ? औ निश्चिंत ब्रह्म बनके गाफिल होवेगा तो अहंकार ठग लूटके मार डारेगा, ताते सदा हुशियार सत्संगमें रहके विचार करते रहना । ये अर्थ ।

बिरह अर्थ–काम सोई काल सबके शिर पर खड़ा है । औ हे जीव ! तू स्त्रीका मित्र बना है तो काम सर्पसे कैसे बचेगा ? औ काममें गाफिल हो रहा है, स्त्रीके संग सोता है तो कैसे बचेगा गर्भवाससे ? अरे जाका घर आवागमनके रस्तेमें है उनको निश्चिंत कैसे सोना चाहिये ? लूटा जायगा अँधियारी कोठरीमें कैद हो रहेगा, आखिर चौरासीका बँधुवा होवेगा; ताते विचार करते रहना, हुशियार रहना । कथी काठकी स्त्री हो तो उससे भी मिताई न करना, पाँच वरषकी लड़की और अस्सी वरषकी बुढ़िया हो इनसे भी डरते रहना, प्रीति विशेष न करना । फिर तरुणींके तो ढिग नहीं बैठना; यही आवागमनका मार्ग है याहीते सदा हुशियार रहना, गाफिल नहीं रहना । ये अर्थ ॥ १०२ ॥

साखी--कलकाठी कालू घुना । जतन जतन घुन खाय ॥
काया मध्ये कालबसतहै। मर्म न काहू पाय ॥ १०३ ॥

टीका गुरुमुख–कलकाठी कहिये स्त्री, ताने कालू काम बहुत दिया ताते संपूर्ण जीव जेर भये । हे संतो ! इस कायामें काम रहता है सोई जीवका काल है,याका मर्म कोई पावता नहीं । जैसे लकड़ीको घुन लगता है औ हलू-हलू खाता है, लकड़ीको निकम्मी कर देता है; तैसा ये विषयरूपी घुन जीवको लगा है सो हलू-हलू जीवको खाता है, निकम्मा ज्ञानहीन जीवको कर देता है। औ कामकाल महाप्रबल है। जब बहुत बढ़ता है तब किसीके रोके रुकता नहीं । तपस्विनकी तपस्या नाश कर देता है, योगिनका योग नाश कर देता है, वैरागिनका वैराग्य नाश कर देता है, विचारवानको बेविचार कर देता है; ज्ञानिनको अज्ञानी कर देता है, भक्तनको अभक्त कर देता है । औ जब जीव कामके वश हुवा तब

दश चीज नाश होती हैं, सो सुनो-तप, शौच, सत्य, लज्जा, लक्ष्मी, बुद्धी, यश, कीर्ती, बल, आयुष; ऐसा काल कायामें बसता है, तब ये जीव निजपदको कैसे प्राप्त होवै? । इस कालका मर्म कोई पावता नहीं । जबलग कामके वश है तवलग उसका विवेक विचार सब मिथ्या । यथार्थ पारखकी प्राप्ति होय औ सदा पारखमें जीव बना रहै तब काममे बचे । ये अभिप्राय । औ कलकाठी कहिये बानी, कालू कहिये कल्पना, सो बानीने कल्पना बहुत बढ़ाय दई, सो विरहरूपी घून जीवको हलू-हलू खाने लगा; परंतु कायामें ही मैं ब्रह्म अथवा दूसरा ब्रह्म, ऐसी कल्पना रहती है । इसका मर्म कोई पावता नहीं, सोई काल होके जीवनको खाता है । काया सोई कलकाठी औ अभिमान सोई पंचमुखी कालू औ आनंद मद सोई घून जीवको हलू-हलू खाता है औ अभिमान काल कायामें रहता है ताका मर्म कोई पावता नहीं । तो पाँच प्रकारका अभिमान परखके छोड़ औ पारख पदकी प्राप्ति हो रहे तब आवागमनसे रहित होय । ये अर्थ ॥ १०३ ॥

साखी—मन मायाकी कोठरी । तन संशयका कोट ॥
बिषहर मंत्र माने नहीं । कालसर्पकी चोट ॥१०४॥

टीका गुरुमुख—मन मायाकी कोठरी कहिये देह औ तन संशयका कोट ब्रह्म, विषहर ब्रह्मज्ञानी, मंत्र कहिये विचार, काल सर्प कहिये पंचमुखी सर्प अभिमान; ताने जीवनको काटा । सो ताहीके विषमें जीव उन्मत्त मूक जड़ बाल पिशाचवत् हुवा, अब यथार्थ विचार कछु मानता नहीं । अरे इस कायासे संशय पैदा भया कि कोई एक ब्रह्म है, सो अपने रहनेका कोट जीवने बनाया, ताहीको अपना अधिष्ठान औ मालिक कहा औ विभ्रम हुआ कैद हुआ । औ कोई देह अभिमानी देहके विषयमें बन्ध भये; ताते विचारको नहीं मानते, मोह वश भये, चौरासीमें रहे, कीट नर्क न्याय । जैसा नर्कका कीड़ा नर्कमें पैदा होता है औ नर्क ही में मरता है । ये अर्थ ॥ १०४ ॥

साखी--मन माया तो एक है । माया मनहि समाय ॥
तीन लोक संशय परी । मैं काहि कहौं समुझाय ॥१०५॥

टीका गुरुमुख—मन कहिये पाँच तत्त्व, तीन गुण; ये आठ पसेरीका एकन्दर वजन, ताको मन कहिये औ ताहीका स्वरूप जो दृष्टीगोचर सो मायाका कहिये काया । कायाका वजन सोई मन ब्रह्म । तो नाम, रूप, तन-मन, माया, ब्रह्म, दृष्ट, अदृष्ट, सगुण, निर्गुण, पिंड, ब्रह्मांड, आत्मा, जगत्; इनके नाम दो हैं, कुछ रूप दो नहीं, वस्तु एक ही है । अरे मायाका अधिष्ठान मन औ माया बिना कछु मन नहीं । नाम सोई रूपका अधिष्ठान, रूप बिना कछु नाम नहीं । तनका मन अधिष्ठान, तन बिना कछु मन नहीं । ब्रह्म मायाका अधिष्ठान, माया बिना कछु ब्रह्म नहीं । अदृष्ट दृष्टका अधिष्ठान, पर दृष्ट बिना कछु अदृष्ट नहीं । निर्गुण सगुणका अधिष्ठान, पर सगुण बिना कछु निर्गुण नहीं । ब्रह्मांड पिंडका अधिष्ठान, पर पिंड बिना ब्रह्मांड नहीं । आत्मा जगत्का अधिष्ठान पर जगत् बिना कछु आत्मा नहीं । तब मन माया नाम दो, वस्तु रूप एक; परन्तु तीन लोकमें दूसरा है, ऐसी संशय परी है । दूसरा कछु है नहीं । मैं न्यारा करके क्या समझाऊँ ! तन मन एक ही है । ये अर्थ ॥ १०५ ॥

साखी--बेह्रा दीन्हों खेतको । बेह्रा खेतहि खाय ॥
तीन लोक संशय परी । मैं काहि कहौं समुझाय १०६॥

टीका गुरुमुख—बेहा कहिये, बाड़ कहिये, बड़ाँग कहिये; सो खेत खेतनेके वास्ते बाढ़ लगाई तो बाड़ई खेतको खा गई । तद्वत् संसारमें कल्याणकी इच्छा उठी, ताते बेदादिक बानी सब बनी औ ता इच्छाने ता बानीने संसारको खाया । अरे वेदके भरोसे संसार निश्चित है, पर वो वेदही संसारको भरमाय रहा है। अब संसार कैसे बचेगा?औ जीवने अपने

कल्याणके वास्ते एक गुसैंया कल्पा, सोई गुसैंया जीवको खाता है। हे जीव ! जो कछु उपदेश गुरुवा लोगोंने जीवकी रक्षाके वास्ते दिया है सोई जीवका काल जीवको खाता है; परंतु यह तीनों लोकमें बड़ी संशय पड़ी है। सो कोई परखके देखता नहीं, मैं किससे समुझायके कहौं। जैसा मद्यपी मद्यपीके, उसके वश होके अपना घर भूल जाता है औ किसीका कहा मानता भी नहीं; तद्वत् यह संसार हो रहा है। मैं काहि कहौं समुझाय ? ये अर्थ ॥ १०६ ॥

साखी--मन सायर मनसा लहरी। बूड़े बहुत अचेत ॥
कहहिं कबीर ते बाँचि हैं। जाके हृदय बिबेक ॥१०७॥

टीका गुरुमुख—मन सोई ब्रह्म समुद्र औ मनसा सोई जगत् लहर, या मन सोई जगत्-समुद्र औ मनसा सोई ब्रह्म लहर, या मन सोई पुरुष समुद्र औ मनसा सोई स्त्री लहर, या मानंदी सोई समुद्र औ नाना कल्पना सोई लहरी, या ॐकार सोई मन समुद्र औ नाना बानी मनसा लहरी; तामें बहुतेक जीव अचेत गाफिल होके बूड़ गये। अचेत कहिये ज्ञानी ब्रह्म समुद्रमें बूड़े। अचेत कहिये कर्मी जगत् समुद्रमें बूड़े। अचेत कहिये उपासक मानंदी समुद्रमें बूड़े। अचेत कहिये विषयी काम समुद्रमें बूड़े। अचेत कहिये योगी ॐकार समुद्रमें बूड़े। सो गुरु कहते हैं कि-वो सब कहाँ हैं ? इस जगत्में ही उपजते बिनसते पड़े हैं। इस उपजने बिनसने से औ समुद्र लहरीसे, जगत् ब्रह्मसे सोई बचेगा. जाके हृदयमें पारख विवेक होयगा। सोई पारख पदको प्राप्त होगा औ बचेगा। ये अर्थ ॥ १०७ ॥

साखी--सायर बुद्धि बनायके। बाँये विचक्षण चोर ॥
सारी दुनिया जहँड़े गई। कोई न लागा ठौर ॥१०८॥

टीका गुरुमुख—अपने बुद्धिका समुद्र बनाया, तामें आपही डूबके मुवा। बाँये कहिये ब्रह्मा रजोगुण, विचक्षण कहिये विष्णु सतोगुण, चोर कहिये महादेव तमोगुण योगी; ये तीनों सायर बुद्धि नाना वेदा-

दिक बानी बनायके मर गये । सो कहीं ज्ञान कथा, कहीं कर्म कथा, कहीं योग कथा, कहीं नाना विषय भोग उपासना कथा । ताहीमें सारी दुनिया जहँड़ गई, निश्चय करके भरमाय गई, गाफिल हो गई । कोई भी ठौर लगा नहीं, पारख पदकी प्राप्ति भई नहीं । ये अर्थ ॥ १०८ ॥

साखी--मानुष होयके न मुवा । मुवा सो डाँगर ढोर ॥
एको जीव ठौर नहिं लागा । भया सो हाथी घोर ॥ १०९ ॥

टीका गुरुमुख–मानुषरूप लेके जीव पैदा भया पर मानुषके तत्त्व औ लक्षणको चीन्हके ग्रहण किया नहीं । मानुष कहिये जो दया क्षमा सत धीर विचार, ये तत्त्वन युक्त होय औ विवेक वैराग्य गुरुभक्ती, ये गुणनमें युक्त होय औ कच्चे पाँच तत्त्व, तीन गुण, दश इंद्री, विषय पंचक औ अनुमान, कल्पना, भास, अध्यासादि संपूर्ण मिथ्या भ्रम जानके अपने तत्त्व गुणनमें सदा रहै, ये सम्पूर्ण सत्ताईस बंधनसे निराश होय । इस प्रकारसे मानुष होके न मरे । परंतु डाँगर ढोर जैसे मरता है तैसे मनुष्य तन धरके लोग मरते हैं, ताते फिर पशु योनीको प्राप्त होते हैं । तो पहिले भी पशु योनी का जीव मानुष योनी स्वप्नवत् पाय गया; परन्तु पशुवत् पंचमुखी अभिमानमें बंध होके मरा । फिर सोई जीव हाथी घोड़ाकी योनिनको प्राप्त भया । एक भी जीव पारख ठौरको न लगा । ये अर्थ ॥ १०९ ॥

साखी--मानुष तैं बड़ पापिया । अक्षर गुरुहि न मान ॥
बार बार वन कुकुही । गर्भ धरे औ ध्यान ॥ ११० ॥

टीका गुरुमुख–अक्षर कहिये जीवको, जाका तीन कालमें नाश नहीं । औ अक्षर गुरु कहिये पारखको, जो तीन कालमें अटल औ अविनाशी, सो जा मनुष्यने अक्षर गुरु पारखको न माना तो मानुष बड़ पापिया, पशुवत् दुःख भोगी । वारंवार जन्मना औ नाना बानीका बंदा गुलाम होके मरना औ गर्भवासमें जाना, नाना दुःख भोगना, ताते पापी

कहिये औ जो पारख गुरुको पाके ऐसे दुःखसे छूटै सो पुण्यवान् सुकृत जीव। ये अर्थ। बन कहिये, बानी कहिये, संसार कहिये; बन कुकुही कहिये, माया कहिये, गुरुवा कहिये, पंडित कहिये, काया कहिये; सो बारंबार धोखेका ध्यान करते हैं औ नास्ती अध्यास वश होके स्त्रीके गर्भमें जाते हैं औ विना पारख दुःख भोगी होते हैं। ये अर्थ॥ ११०॥

साखी--मानुष बिचारा क्या करे। जाके कहे न खुलै कपाट॥
स्वनहा चौक बैठायके। फिर-फिर ऐपन चाट॥१११॥

टीका गुरुमुख--कहनेवाला मानुष बिचारा क्या करै ? जाके कहे संसारका कपाट खुलता नहीं। कपाट कहिये परदा, सो नाना प्रकारका परदा गुरुवा लोगोंने चौकामें बैठायके दृढ़ाय दिया, कान फूँके। स्वनहा कहिये ॐकार, स्वनहा कहिये वेद, सो वेदके प्रमाणसे नाना प्रकारके सिद्धांतनकी चाट लगाई, लालच लगाई। सो जाको जो चाट लगी सो अपनी चाट लेके चौरासीमें फिरने लगे औ मारे चाटके संसारमें घूमने लगे। कोईको गुसैंयाकी चाट लगी, कोईको विषयनकी चाट लगी। सो कोई तो गुसैंयाकी चाटवाले योग, जप, तप, ध्यान, ज्ञान, तीर्थ, व्रत, भक्ती करने लगे। औ कोई विषयके चाटवाले नाना मंत्र यंत्र तंत्र, रसायन क्रिया, नाना देवतनकी उपासना करने लगे औ नाना विद्या, नाना कर्म, नाना व्यापार औ प्राणघात जारत्व चोरत्व आदि ठगाई करने लगे। इस प्रकार अपनी चाटसे जीव फिरते हैं औ इनकी बुद्धि पर नाना प्रकारके परदे परे हैं। अब खुल नहीं सकते, तो मानुष विचारवानने क्या करना ? अरे चाट बुरी फाँसी है; चाहे गुसैंयाकी होय, चाहे विषयनकी होय, ये दोनों जीवको बंधनरूप हैं। ये अर्थ। तो मानुष जो विचारवान हैं, इन्हें अपने स्वजातीको हर सूरतसे चेताना चाहिये कि नहीं ? ये शंका। याको उत्तर॥ १११॥

साखी--मानुष बिचारा क्या करै। जाके शून्य शरीर॥
जो जिव झाँकि न ऊपजै। तो कहा पुकार कबीर॥११२॥

टीका गुरुमुख–अरे विचारवान मनुष्यने क्या करना ? जो बहुत विचार बताते हैं, परन्तु जिनका शरीर शून्य है उनको कछु सूझ पड़ता नहीं, जरासी भी झाँकी जीवमें उठती नहीं । ज्ञानकी झलक भी ना उठी तो उसके सामने काह पुकारना ? नाहक श्रम काहेको करना पशु जीवके वास्ते ? हे कबीर संतो ! सुनो-जो कोई सुकृत जीव होय, ताको यथार्थ विचार समुझाना । ये अर्थ ॥ ११२ ॥

साखी--मानुष जन्म नर पायके । चूके अबकी घात ॥
जाय परे भवचक्रमें । सहे घनेरी लात ॥ ११३ ॥

टीका गुरुमुख–मानुष जन्म जीवने पाया औ इनने सतसंग न किया, तो फिर क्या पशु योनीको पायेगा तब सतसंग करेगा ? अरे मनुष्य- जन्म पायके जो चूका, पारख पदको प्राप्त न भया तो फिर जाय परे भवचक्रमें । चौरासी लक्ष योनिनके फेरमें परेगा औ बहुत लातें सहेगा, दुःख सहेगा । ये अर्थ ॥ ११३ ॥

साखी--रतन को यतन करु । माँड़ीका सिंगार ॥
आया कबीरा फिर गया । झूठा है हंकार ॥ ११४ ॥

टीका मायामुख–रतन मानुष जन्म;ताको यतन कर,मिथ्या धोखेमें मत खो, नाहक माँडीके सिगारमें मत पर । या सिंगारसे तेरी स्थिति औ कल्याण कछु होनेका नहीं । माँडीका सिंगार कहिये नाना प्रकारके भेष, नाना संप्रदाय, नाना मत, नाना बानी; याको माँडी कहिये । याका सिंगारनाना भक्ती-ज्ञान-योग; याका अभिमान जो मानता है सो मिथ्या भ्रम है । अरे यामें कछु जीवकी स्थिति नहीं औ पारख पदकी प्राप्ति किसीको भई नहीं । बड़े-बड़े कीर्तिवान जीव नरजन्ममें आये औ फिर गर्भवासमें गये । गुरुपद पारख स्थिति होय बिना जीव कछु रहित हो सकता नहीं । औ अहं ब्रह्म, त्वं ब्रह्म आदि भक्ति ज्ञान योगकी बानीमें काहूको पारख प्राप्ति होती नहीं औ भई भी नहीं; ताते या बानीका अहंकार मिथ्या है । जैसा नरजन्ममें जीव आता है तैसा फिर गर्भवास

को जाता है, कछु स्थिति होती नहीं । ये अर्थ । और रतन कहिये ज्ञान, माँड़ीका सिगार स्त्री, सो स्त्रीसे ज्ञानको बचाय रहना । इस स्त्रीके संगमें ज्ञान नष्ट हो जाता है और जीव विषय बुद्धीमें आसक्त हो जाता है । फिर जा भगमेंसे जीव निकरता है ताही भगमें जीव जाता है । ताते झूठा है हंकार, देह औ स्त्रीका हंकार आवागमनका कारण है, ताके संग ज्ञानको खोवो मत, यतन कर । ये अभिप्राय ॥ ११४ ॥

साखी–मानुष जन्म दुर्लभ है । बहुरि न दूजी बार ॥
पक्का फल जो गिरि परा । बहुरि न लागे डार ॥ ११५ ॥

टीका गुरुमुख–इस जीवको मानुष जन्म दुर्लभ है; क्योंकि सम्पूर्ण विषयनमें, पशुवत् कर्मनमें सदा आसक्त रहते हैं, ताते मानुष जन्म जीवको दुर्लभ है । औ मनुष्य जन्ममें विवेककी प्राप्ती होती है, विचार होता है औ सकल संपत्ति सहित गुरुपदकी प्राप्ती होती है । जीव आवागमनसे रहित होता है, ताते ऐसा जन्म बड़े भाग्यसे प्राप्त होता है । ऐसे जन्मको बानी विषयमें औ स्त्री विषयमें न खोवना । पारखी संतनका संग करके पक्का चोला धारण करना, कच्चे चोलेके पाँचों हंकार छोड़ना । औ पक्का चोला जीवको प्राप्त होय, फिर कच्चा चोला छूटै तो बहुरि जन्ममें न आवै । मानुष जन्म पारखकी प्राप्ती होने माफिक । ये अर्थ ॥ ११५ ॥

साखी–बाँह मरोरे जातहो । मोहि सोवत लिये जगाय ॥
कहहिं कबीर पुकारिकै । ई पिंडे होहु कि जाय ॥ ११६ ॥

टीका जीवमुख--जीव बोलता है विचारमान् कि-हे गुरु ! मैं परम गाफिलीमें सोया था, अपनेको आप भूला था । सो नाना प्रकार का विचार परखायके आपने जगाय लिया, चैतन्य कर दिया । संपूर्ण जड़ भावना ब्रह्म, आत्मा, जगत्, परमात्मादिक दूर कर दिया । औ अब बोलते हो कि, पक्का स्वरूप होके कच्चा चोला गिरा तो आवागमनसे रहित भया । ऐसी स्थिति बतायके आप स्वच्छ पारख जासे

पक्की कच्ची सब मालूम हुई, सो आप बाँह मरोरके जाते हो। हे कबीर ! मैं तो तुम्हारी बाँह पकड़ी सो छोड़ने की नहीं। कबीर कहिये जो कविनके भीतर इरना करै सो कबीर; कवि कहिये ज्ञानी, इरना कहिये प्रेरणा, सो ज्ञानिनके भीतर प्रेरणा करे ताको पारख कहिये। सो ज्ञानी जीव कहते हैं कि-हे पारख गुरु ! हमारी बाँह मरोरे कहाँ जाते हो ? तब गुरु उत्तर देते हैं। गुरुमुख--कहहिं कबीर पुकारके। हे विचारमान् जीव ! तुम यथार्थ परख करके देखो कि-जाको तुम कबीर कहते हो औ गुरु कहते हो सो कहाँ है ? हकनाहक मिथ्या धोखेमें परो मत, इस पिंडमें पारख पर स्थिति होवो। जासे तुमने सब परखा सोई पारख औ गुरुपद, ताके ऊपर औ कछु नहीं। यह जानके तुमहूँ पारख होहू, कि भ्रममें चले जाव मत। हम तो कहीं आयँ, न जायँ; सदा एकरस, नाहीं नसाय। सो तू कहीं घबरायके पारख छोड़के मत जाना। अरे पारख स्थिति बिना कौन-कौन चौरासीमें गये ? सो सुनो-॥ ११६ ॥

साखी–साखि पुरंदर ढहि परे। बिबि अक्षर युग चार ॥
कबीर रसना रंभन होत हैं। कोई कै न सके निरुवार ११७॥

टीका गुरुमुख--साखी कहिये जाने नेति-नेति प्रमाणसे पाँच तत्त्व, पच्चीस प्रकृति, तीन गुण, दश इंद्री, पंच विषय, पंच कर्म-चलन बलन छालन भक्षण मैथुन, अन्तःकरण पंचक, तिनके विषय, दश वायु, चार अवस्था, चार देह, चार अभिमान, चार स्थान, चार मान, चार प्रमाण आदि सकल अनित्य संपत्ती जानके-'मैं सबका साक्षी ब्रह्म;' ऐसा अपनेको निश्चय किया ताको साखी कहिये। ऐसे-ऐसे जो बड़े-बड़े ज्ञानी सर्वसाक्षी कहलाये सो भी पारख स्थिति बिना अन्वय करके जग चौरासीमें गिर परे, ढहि परे। जब साक्षीको निज भूमिका न मिली तब साक्षी कहाँ ठहरे ? ताते घबरायके साक्षीने अन्वय किया कि जगत् सब मेरा स्वरूप। मैं जगत् से न्यारा नहीं, जगत् मेरे से न्यारा नहीं; ऐसा

अन्वय करके ज्ञानका अभिमान छोड़ा औ निरञ्जन अभिमानके मुखमें ढहि परे औ आत्मा कहाये। तो पहिले जब येता व्यतिरेक न किया था तब क्या आत्मा न था ? तो संपूर्ण ज्ञान औ विचार इनका ढहि गया, नाश हो गया। तो साखीकी स्थिति न भई, जगत् रूप बनके आवागमन सुख दुःखमें ही रहे। औ पुरन्दर कहिये इंद्र सो कर्मिष्ठ, जो कर्म करते-करते सौ अश्वमेध यज्ञ किया और इंद्र बना। तो भी जब संपूर्ण पुण्य छीन होता है तब मृतलोकमें आयके जन्म लेता है। यह वेदका भी प्रमाण है; क्योंकि मृतलोक कर्म भूमिका है। मृतलोकमें कर्म करना औ अन्य लोकमें भोगना। भोग तरे फिर मृतलोकमें आयके जन्म लेना। तो कर्म करते-करते जो इंद्र भी हुवा तो आखिर चौरासीमें ढहि परा। ये अर्थ। बिबि अक्षर योगी, जो दो अक्षरका सिद्धांत करते हैं। दो अक्षर कहिये–सोहं, दो अक्षर कहिये वोहं, दो अक्षर कहिये राम, इनको श्वासामें सिद्ध करके सुरत लगाते हैं औ सुरतको श्वासमें लय करते हैं, श्वासा शब्दमें लय करते हैं, शब्द ब्रह्मांडमें लय करते हैं औ निर्विकल्प समाधीको पावते हैं, सर्व सिद्धिको पावते हैं औ सर्व जगत्में ईश्वर कहलाते हैं। परन्तु जब चोला छूटा औ मस्तक फूटा तब न शब्द ही रहा, न श्वासाही रहती है। तब वो भी समाधीसे गर्भवासमें ढहि परे। ये अर्थ। युग कहिये। युग कहिये द्वैतवादी उपासक, सो नाना प्रकार की उपासना करते-करते आखिर देवलोकको जाते हैं, फिर वहांका पुण्य आयुष्य सरा तब देवता भी औ दास भी मृतलोकको आयके जन्म लेते हैं; ऐसा वेद बोलता है। तब वो भी चौरासीमें ढहि परे। लोक औ देवता कछु चौरासीके बाहर नहीं। ये अभिप्राय। चार वेद, वो भी जगत् चौरासीमें परे हैं औ चार ऋषी-सनक सनंदन सनत्कुमार सनातन, ये चारोंने अन्वय करके जगत सब अपना रूप माना है औ ब्रह्म बने हैं; परन्तु उपजना कछु छूटा नहीं। अरे साखी कहिये ज्ञानी, पुर-

न्दर कर्मी, बिबि अक्षर योगी, युग द्वैतवादी उपासक, चार वेदी, चार विज्ञानी, ये पञ्चवर्ग सब भ्रममें गिर परे। हे पारखी संतो! तुम यथार्थ परखके देखो-इनकी स्थिति कहाँ है। परंतु हे संतो! ये जगत् में रसना रम्भन मिथ्या बकवाद होती है, न कछु लेना, न देना। पर कोई बानीका पक्ष छोड़के निरुवारा कर सकता नहीं। जो पक्ष छोड़के सतसङ्गमें निरुवारा करे तब पारख स्थितिको प्राप्त होय। ये अर्थ॥ ११७॥

साखी—बेड़ा बाँधिन सर्पका। भवसागरके माहिं॥
जो छोड़े तो बूड़े। गहै तो डसे बाहिं॥११८॥

टीका गुरुमुख—अहंकार सर्पका बेड़ा बाँधा, तापर सब आरूढ़ हुवा। अब जो अहंकार छोड़ा चाहता है तो देह गिरने चाहती है, नाश होती है। औ हंकारको पकड़ना चाहता है तो वो सर्प काटता है तो याका उपाय पारख औषधी पास रखना, वो औषधी है जाते विष नहीं ब्यापनेका। पंचमुखी सर्प अहंकार, ताके पाँच मुखनते पाँच प्रकारकी बानी निकरी। प्रथम मुख विश्व, ताते कर्मकाँड निकरा। दूसरा मुख तैजस, ताते योगकाँड निकरा। तीसरा मुख प्राज्ञ ताते उपासनाकाँड निकरा। चौथा मुख प्रत्यगात्मा, ताते ज्ञानकाँड निकरा। पाँचवाँ मुख निरंजन, ताते अद्वैतकाँड निकरा। सो ऐसे सर्पका बेड़ा बाँधा, जहाज बाँधा। अपने मनसे कल्पिके भवसागर अनुमान किया औ ताको माना। तब ये नर देहमें से पंचमुखी हंकार उठा, सो ता हंकारको पकड़के उसपर सब जीव चढ़े भवसागर पार होनेके वास्ते। अब जो विचार करके छोड़ा चाहता है तब भवसागरका भय, जो बूड़ जायेंगे औ पकड़े रहते हैं तो वो सर्प डसा करता है, धोखेमें डारता है। अब जीव क्या उपाय करै? ये शंका। तो विचार करके परखना कि भवसागर भी मेरा अनुमान मिथ्याभूत औ बेड़ा भी मेरी कल्पना मिथ्याभूत, सर्प भी मेरी मानंदी मिथ्याभूत। मैं सबका पारखी

पारख स्वरूप सबसे न्यारा । ऐसा बार-बार स्मरण करके बेड़ा, सर्प, भवसागर सबसे न्यारा होना । ये अभिप्राय । शिष्यको स्थिति प्राप्त भई नहीं, ताते शंका भई कि ये पाँचों हंकार छोड़के मेरी स्थिति क्या है ? ये मालूम न भई औ पाँचों हंकार छोड़के कहाँ जाऊँ ? औ इनको पकड़ा रहता हौं तो ये सर्प मेरेको खाय जाता है, ऐसी शंका भई । तापर स्थिति पीछेसे गुरुने बताई कि पारख भूमिका पर आयके स्थिर हो जा । औ भास अध्यासादि अनुमान कल्पना सब पारखके छोड़ दे । ये अर्थ ॥ ११८ ॥

साखी—हाथ कटोरा खोवा भरा । मग जोवत दिन जाय ॥
कबीर उतरा चित्तसे । छाँछ दियो नहिं जाय ११९॥

टीका गुरुमुख—प्रीतिकी रीति ऐसी होती है कि -हाथमें खोवाका कटोरा भरा है और रस्ता देख रहे हैं, जो मेरा मित्र कब आवै ? औ मेरेसे माँगै, मैं देऊँ; येही भावसे रात दिन जाता है । तद्वत गुरु साहेब सतशिष्य पर प्रीति रखते हैं, कधी सुरतते टारते नहीं । औ सतशिष्यका जो कछु मनोदय हो ताको पुराने वास्ते सदा अभय कर धारण किया है । कि, 'जो कछु सत शिष्यके अंतःकरणमें उठै सो पूर्ण करूँ' । औ दूध कहिये बहु बानी, ताको औटके, सब कसर विकार जरायके, सार विचाररूपी खोवा बनायके, प्रीतिरूपी पात्रमें लेके धारण किया कि-कोई मेरा मित्र आवै औ ये विचार लेके पारखपदको प्राप्त होवै । येही भाव गुरुके विषय सदा रहता है; परन्तु शिष्य कधी गुरुके चित्तसे उतरे नहीं, सदा चित्त गुरुके विषय औ सदा मन गुरुके शब्द विषय औ सदा गुरुके शब्द प्रमाण विचार करके आचरण करै; कधी प्राण जाय तो भी गुरुके शब्द बाहर न होय । औ आशा स्वर्गादिक, तृष्णा राजलक्ष्मी, विषय प्राप्ती आदिक संपूर्ण त्याग करै । इन बस्तुनको तीन कालमें स्फुर्ण होवे देवै नहीं, इनको मिथ्याभूत जाने । इनका अभाव रक्खे । औ स्त्रीकी प्राप्ती समय कामके अधीन न होवै । औ अपमानकी

प्राप्ती समय क्रोधके आधीन न होवै । औ अपनेको द्रव्य प्राप्ती समय लोभके आधीन न होवै । औ सज्जन मित्र पुत्र पौत्रादि प्राप्ती समय अथवा वियोग समय मोहके आधीन न होवै । औ कालकी प्राप्ती समय या दुःखकी प्राप्ती समय भयके आधीन न होवै । अपनी सुरतसे सदा गुरुमें मिला रहै पारख स्थितिके भावसे; ताको सत् शिष्य कहिये, ताको संपूर्णता गुरुसाहेब करते हैं । वो शिष्यपर गुरु साहेबकी प्रीति अत्यंत रहती है । ये प्रीतिके लक्षण । अब वे प्रीतिके लक्षण सुनो--कबीर उतरा चित्तसे, छाँछ दियो नहिं जाय । जो गुरुके चित्तसे जीव उतरा, ताको छाँछ तत्त्वमस्यादि बानी भी नहीं दई जाती । जाको गुरुपदकी प्रीति है ताको गुरु अपना पद देनेको तैयार हैं सत शिष्यको औ संपूर्ण उसकी मनोदय पूर्ण करते हैं । औ असत् शिष्य ऊपर तो गुरुका शिष्य कहलाता है औ भीतर अनेक कल्पना, अनेक भावना, अनेक वासना बनी हैं । औ काम, क्रोध, लोभ, मोहमें आसक्त है, इनसे संग उन्मत्त भया है उसे छाँछ भी नहीं दिया जाता । जो एक न कछु बानी बाना, कछु उसका कारज भी नहीं करा जाता; क्योंकि वो गुरुके चित्तसे उतरा है । गुरुकी तरफ उसने पीठ फेरी है, बेमुख है । ये अर्थ । आगे दूसरा अर्थ-हाथ कटोरा कहिये हाथका पात्र, सो गुरु कहते हैं कि--मनुष्य देह येही विचारका पात्र, सो जीवने वेद बानीके भरोसे खोया, खो दिया औ बानीके प्रमाणसे आप राम बना औ सबमें भरा । औ चित्तसे उतर गया, चैतन्य भावसे उतरा, जड़ दशा धारण की गुरुवा लोगनकी बानीके प्रमाणसे । सो इनको गुरुवा लोग गुरुपद तो क्या देवेंगे ? जो उनको ही प्राप्ती नहीं; परन्तु छाँछ माफिक मनुष्य तन, सो भी नहीं दिया जानेका । ये अर्थ ॥ ११९ ॥

साखी--एक कहौं तो है नहीं । दोय कहौं तो गारि ॥
है जैसाका है तैसा । कहहिं कबीर बिचारि॥१२०॥

टीका गुरुमुख—एक ब्रह्म या एक आत्मा या एक संपूर्ण जैसेका तैसा—बाहर-भीतर चिउँटीसे ब्रह्म पर्यंत एक; ऐसा कहना—तो कुछ है नहीं, बिचारमें ठहरता नहीं औ जीव पर दूसरा मालिक बताऊँ तो वो भी नहीं, मिथ्या गारी है। क्योंकि 'एक आत्मा' ये तो जीवका भास अध्यास है, दूसरा कर्ता ये जीवका अनुमान कल्पना है। तो दोनों मिथ्या, औ जैसा ये जीव सत्य है तैसा यह यथार्थ विचार करे। जासे विचारादि सब तत्त्व परखनेमें आवै सो पारखपर रहि जावै रहित होय। ये अर्थ ॥ १२० ॥

साखी—अमृत केरी पूरिया। बहु बिधि दीन्ही छोरि ॥
आप सरीखा जो मिलै। ताहि पियावहु घोरि ॥१२१॥

टीका गुरुमुख—अमृत कहिये जीव, ताकी स्थिति पारख तो बहुत प्रकारसे खोलिके समुझाय दिया। अब हे पारखी हो! जो कोई तुम्हारे सरीखा सत शिष्य मिलै ताको सकल निरुवारा करके समुझाय देव। ये अर्थ ॥ १२१ ॥

साखी—अमृत केरी मोटरी। शिरसे धरी उतार ॥
जाहि कहौं मैं एक है। सो मोहिं कहै दुइ चार॥१२२॥

टीका गुरुमुख—इस संसारने विचारकी मोटरी शिरसे उतार धरी, कोई विचार करता नहीं। जाको मैं कहता हौं कि—एक जीब सत्य है और सब मिथ्या भ्रम है। सो मेरेको दुइ चार कहता है—एक ईश्वर, एक जीव, दो; ब्रह्मा, विष्णु, महेश औ देवी-देवता, ये बताते हैं औ सत वस्तु नहीं मानता। असत्य देवता, असत्य वानीका पक्ष करके मिथ्यावाद करता है। ये अर्थ। अब गुरुका उपदेश तो हो चुका, आगे मायाका उपदेश बताते हैं; सुनो ॥ १२२ ॥

साखी—जाको मुनिवर तप करैं। बेद थकें गुण गाय ॥
सोई देउँ सिखापना। कोई नहिं पतिआय ॥१२३॥

टीका मायामुख—ये मायाका उपदेश ऐसा है कि—जो परमात्माके वास्ते अमित देवता ब्यासादि मुनि श्रेष्ठ तपस्या करते हैं औ वेद जाका

गुण गाय-गाय थके, नेति नेति कहा, सोई ब्रह्म उपदेश मैं संसारमें करता हौं; परन्तु ये जीव अज्ञानवश कोई पतियाता नहीं । ये अर्थ । इस प्रकारसे गुरुवालोग संसारमें सूचना दृढ़ाने लगे तब जीवनकी लालच बढ़ी औ ब्रह्म उपदेश लेनेको गुरुवालोगनकी शरणमें गये । तो गुरुवा लोग क्या उपदेश करते हैं ? सो सुनो ॥ १२३ ॥

साखी-एकते अनन्त भौ । अनन्त एक होय आय ॥
परिचय भई जब एकते । तब अनन्तो एके माहिं समाय १२४॥

टीका मायामुख-एक ब्रह्म, ताहीते अनन्त जगत् पैदा भया, जल तरङ्गन्याय, सुवर्ण-भूषण न्याय, मृत्तिका--घट न्याय । ताते जो एक ब्रह्म था सोई अनन्त जगत् बनि आया । जगत् ब्रह्म अभेद, कछु भेद नहीं, भ्राँती मात्र भेद त्यागके ब्रह्म परिचय करना । फिर अनन्त जगत एक ब्रह्ममें समाया, जैसा जलका तरङ्ग जलमें, मृत्तिकाका घट मृत्तिकामें, सुवर्णका भूषण सुवर्णमें; तद्वत् अनंत जगत् एकमें समाया । औ अभी एक ब्रह्म ही है । आदि अन्त मध्यमें एक ब्रह्म, द्वैत मिथ्या भ्रांती । जैसा जल तरंग जलही है, मृत्तिकाका घट मृत्तिका ही है, सुवर्णका भूषण सुवर्ण ही है; तद्वत् जगत् सब ब्रह्मरूप । ये अर्थ ॥ १२४ ॥

साखी-एक शब्द गुरुदेवका । ताका अनंत बिचार ॥
थाके मुनिजन पंडिता । वेद न पावै पार ॥ १२५ ॥

टीका मायामुख--एक शब्द 'ॐकार' गुरुदेव ब्रह्मका; ताही ॐकारका अनंत विचार । चार वेद छौ शास्त्रादि ऋषी मुनी औ ब्रह्मादिक पंडित सब थक गये, किसीने पार पाया नहीं; क्योंकि संपूर्ण प्रणव रूप है । प्रणवका निराकरण बहुत प्रकारसे पीछे भया है, ताते संक्षेपार्थ कहा ॥ १२५ ॥

साखी-राउर के पिछवारे । गावै चारिउ सैन ॥
जीव परा बहु लूट में । ना कछु लेन न देन॥१२६॥

टीका गुरुमुख-राउर ऐसी संबोधन ॐकारको वेद देता है । औ ताही प्रणवके पीछे चारिउ सैन चारिउ वेद बताते हैं-ऋग्वेद तुर्या

स्वरूप, निर्गुण निराकार निर्लेप अगम अगोचर परमात्मा, ये अर्धमात्राकी सैन। औ यजुर्वेद उकारकी सैन, -सगुण ब्रह्म विशिष्टाद्वैत क्षीरसागरवासी नारायण सर्वशक्तिमान् बोलता है। अथर्वणवेद मकारको सैन बोलता है, कि-दृष्टिगोचर जगत् ये ही सत्य है और सगुण निर्गुण उपासना सब मिथ्या। जो मरा सो मुक्त हुवा, मरे फिर आयके जन्मता नहीं। सामवेद अकारकी सैन, संपूर्ण चराचर ब्रह्म रूप कहता है। ये चारों सैन चारों वेद गाते हैं। पाँचवाँ स्वसंवेद अनुभव बिन्दु सही करता है। सो इनका माहात्म्य सुनके जीव बहु लूटमें परा, परम आनंदको प्राप्त भया; परंतु न कछु लेना, न देना। जैसेका तैसा आत्मा, आदि अन्त मध्य रहित परिपूर्ण है; इस प्रकार कहिके थका, ब्रह्म भ्रममें परा। ये अर्थ ॥ १२६ ॥

साखी—चौगोड़ा के देखते। ब्याधा भागा जाय ॥
अचरज एक देखो हो संतो। मूवा कालहि खाय ॥१२७॥

टीका गुरुमुख—चौगोड़ा ॐकार, जाके चारों वेद गोड़ औ स्वयंवेद धड़ औ शीसका ठिकाना हो नहीं; ऐसे ॐकारको देखके ब्याधा मन सो भगता जाता है पीछेको; क्योंकि ॐकारके सन्मुख जो होता हैं तो वही ॐकार इस मनको खा जाता है। तो हे सन्तो ! ये बड़ा आश्चर्य है कि ॐकार मुरदा, सो इस मनको खा जाता है। मन सोई काल। ये अर्थ ॥ १२७ ॥

साखी—तीन लोक चोरी भई। सबका सरबस लीन्ह ॥
बिना मूड़का चोरवा। परा न काहू चीन्ह ॥१२८॥

टीका गुरुमुख— तीन लोक राजस भक्त, तामस योगी, सात्त्विक ज्ञानी; इन तीनोंके घर चोरी भई ! सो इनका जीव समेत सरबस हर लिया-उकार मात्राने भक्तनको हर लीन्ह, मकार मात्राने योगिनको हर लीन्ह, अर्धमात्राने ज्ञानिनको हर लीन्ह, सबको भरमाय लीन्हा। पर ये बिना मूड़का चोर ॐकार काहूके चीन्हनेमें

न आया कि मिथ्या कल्पना हैं, ताते सब जगको खा लिया । ये अर्थ । या बिना मूँड़का चोर कहिये काम, जाने तीन लोकमें चोरी करी औ देव, दैत्य, मनुष्य सबका ज्ञान हर लीन्हा । औ अपने वश करके सबको गर्भवास अँधियारी कोठरीमें कैद कीन्हा । इस कामके बँधुवा होवे सब काई नाचते हैं ब्रह्मादि, विष्णुआदि, शिवादि; पर यह काम चोर काहूको चीन्ह परा नहीं । ये अर्थ ॥ १२८ ॥

साखी—चक्की चलती देखके । मेरे नैनन आया रोय ॥
दुइ पाट भीतर आयके । साबुत गया न कोय ॥ १२९ ॥

टीका गुरुमुख—संसार सोई चक्की, धरती आकाश दो पाट, सुमेर सोई किल्ला, औ कर्मकाँड सोई हाथ खूटा, पीसनेवाली कल्पना नारी; तामें सब कर्मी जीव पीसे जाते हैं । औ सगुण निर्गुण दोनों पाट, ईश्वर किल्ला, उपासना हाथ खूंटा, अनुमान पीसनेवाली; तामें सगुण निर्गुण उपासक जीव पीसे जाते हैं । औ पिंड ब्रह्मांड दोऊ पाट, सुषुम्ना किल्ला योग क्रिया हाथ खूंटा, पीसनेवाली योगशक्ती; तामें योगी लोग पीसे जाते हैं । औ तत् त्वं दोनों पाट, असी किल्ला, वेद श्रुति हाथ खूँटा, पीसनेवाली आत्मवृत्ती; तामें ज्ञानी जीव सब पीसे जाते हैं । औ नित्य अनित्य दोनों पाट, साक्षी किल्ला, प्रकृती हाथ खूँटा, पीसनेवाली ज्ञानशक्ती; तामें सांख्य योगी पीसे जाते हैं । स्थूल कैवल्य दोनों पाट, तुर्या महाकारण किल्ला, सूक्ष्म हाथ खूँटा, कारण पीसनेवाली; तामें सकल जीव पीसे जाते हैं । औ स्त्री पुरुष दोऊ पाट, काम किल्ला, विषय हाथ खूँटा, पीसनेवाली वासना; तामें विषयी जीव पीसे जाते हैं । इस प्रकारकी चक्की चलती है, सो देखके मेरे नैनमें आँसू आया कि ये देखो, दोनों पाटनमें आयके कोई जीव साबूत गया नहीं हंसपदको, सब चकनाचूर बेहोश हुए । ये अर्थ ॥ १२९ ॥

साखी—चार चोर चोरी चले । पग पनही उतार ॥
चारिउ दर थूनी लगी । पंडित करहु बिचार ॥ १३० ॥

टीका गुरुमुख--चार चोर कहिये चार बेद,सो जीवनके जीवन धन हरण करने चले। परन्तु यही चोर हमारे घटमें चोरी करते हैं, ऐसा कोई जीवको मालूम हुवा नहीं; ताते गृही, बानप्रस्थ, संन्यासी, ब्रह्मचारी; ये चारों दर पाँवकी जूती उतारके बेदनके पीछे लगे। सो बेदने चारों दरमें थूनी गाड़ दई कि--कोई एक परमात्मा है। ताके निमित्त अपने अपने आश्रमके कर्म यथाविधि आचरण करना तब मुक्ति होवेगी, नहीं तो घोर नर्कमें जावोगे;ऐसी थूनी हनी। तब सब बड़े-बड़े पंडित बुद्धिमान् वाही थूनीका विचार करने लगे। ये अर्थ। या चार चोर चार अभिमान, ये चोरीको चले। सो अपनी अपनी पनही इन्द्री छोड़के जीवनके पीछे पढ़े औ चारों दर, चारों वर्णमें थूनी गाड़ी। विश्व अभिमानने कर्मकाँडकी थूनी गाड़ी तैजस अभिमानने उपासनाकी थूनी गाड़ी, प्राज्ञ अभिमानने योगकी थूनी हनी, प्रत्यगात्मा अभिमानने ज्ञानकाँडकी थूनी हनी। सो ताहीका विचार सब पंडित करने लगे! ये अर्थ। चार चोर कहिये चित्त, मन, बुद्धि, अहंकार; ये चोरीको चले, अपनी इंद्री उतारके जीवनके पीछे पड़े। सो चारों दर चार खानीमें कोई ब्रह्म है, ऐसी थूनी हनी। मनने संकल्पकी थूनी गाड़ी, चित्तने अनुसंधानकी थूनी गाड़ी, बुद्धिने निश्चयकी थूनी गाड़ी, हंकारने करतूतकी थूनी हनी। सो ताहीका बिचार सब पंडित करने लगे। ये अर्थ। औ चार चोर काम, क्रोध, लोभ, मोह; ये चोरी करने चले, जीवके यहाँ जूती उतारके पीछे पड़े। सो चारो खानीमें थूनी गाड़ दई-कामने विषयकी थूनी गाढ़ी,क्रोधने बुराईकी थूनी गाड़ी,लोभने द्रव्यकी थूनी गाड़ी; मोहने स्त्री पुत्रादिक कुटुम्बकी थूनी हनी, औ सब जीवनका ज्ञान हर लीन्ह, जीवनको आसक्त कीन्ह। सो हे बुद्धिमान! तुम विचार करके चोरोंको कैद करो, इन चोरोंको मार निकारो। इनसे कधी गाफिल न रहना, ये लूट डारेंगे। ये अर्थ। ॥ १३० ॥

साखी--बलिहारी वह दूधकी। जामें निकरे घीव ॥
आधी साखी कबीरकी। चारि बेदका जीव ॥१३१॥

टीका मायामुख-माया कहती है कि-बलिहारी वह दूधकी । दूध कहिये बानी, सो ब्रह्म बानीकी प्रशंसा गुरुवालोग करते हैं कि-धन्य वह वेद औ बानी, जामेंसे शुद्ध सतोगुण ज्ञान घीव निकरा । सोई हमारे गुरु कबीर ब्रह्मरूपी, जिन्ह हमारेको अर्धमात्राका उपदेश किया औ चार वेदका जीव जो सर्वसाक्षी पारब्रह्म, सो अपरोक्ष अनुभव सहवर्तमान हमको बताया। ऐसा मायाने अपना उपदेश किया, प्रशंसा किया । ये अभिप्राय ॥ १३१ ॥

साखी--बलिहारी तेहि पुरुषकी । जो परचित परखनहार ॥
साई दीन्हों खाँड़को । खारी बूझै गवाँर ॥१३२॥

टीका गुरुमुख-अब मायाने जो अपने उपदेशकी प्रशंसा की, ताका निराकरण गुरु करते हैं--अरे उस पुरुषकी बलिहारी ! जो पारखकी प्रतीत करै औ संपूर्ण कसर विकार निहारके निकार डारै । औ आप शुद्ध पारख रूप हो रहे, ताहि पुरुषकी बलिहारी । औ ब्रह्म स्थिति अन्वय व्यतिरेक सहित खाँडका हीरा है, ताको सच्चा खरा; ऐसा जो बूझता है सो गँवार ठगाय गया, सो वह बेपारखी चौरासीमें गोता खायगा । खाँड कहिये आकाश, आकाश कहिये ब्रह्म, ब्रह्म कहिये प्रथम अनुमान जीवका, दूसरा अध्यास जीव का, तीसरा भास जीवका, चौथी कल्पना जीवकी । अनुमान चित्त संबधी अध्यास अहंकार संबंधी, भास बुद्धि संबंधी, कल्पना मन संबन्धी । अब 'दूसरा ब्रह्म' ये कल्पना, 'मैं ब्रह्म' ये अध्यास, 'कोई ब्रह्म है कहूँ' ये अनुमान 'संपूर्ण आतमा आपै आप, न सगुण न निर्गुण, न साक्षी, न असाक्षी, न एक न दो, न सविकल्प न निर्विकल्प; तो जैसेका तैसा,' ये भास । अब अंतः करण चतुष्टय सोई आकाश, ताका हीरा ब्रह्म । सो विजातीय मिथ्या भ्रम, ऐसा जाके परखनेमें आवै औ परखके न्यारा होय, ताकी बलिहारी । औ ऐसे मिथ्या भ्रमको मानके जो प्रशंसा करै सो मूर्ख गवाँर, वो अपने पदसे बिमुख । ये अर्थ ॥ १३२ ॥

साखी--बिषके बिरवे घर किया । रहा सर्प लपटाय ॥
तातै जियरहिं डर भया । जागत रैन बिहाय ॥१३३॥

टीका गुरुमुख-विषका बिरवा लोगनका उपदेश वेद बानी, ताने जीवके अन्तःकरणमें घर किया । तामें पंचमुखी सर्प अभिमान लपटाय रहा है, ताते जीवनको डर भया सो जागते ही रात दिन जाता है। कहीं गुरुवा लोगनने उपदेश अनेक देवतनका किया, कि कहीं दूसरा ब्रह्म है, ऐसा किया। कहीं अहं ब्रह्म, कहीं तत्त्वमसी कहीं योग समाधि, कहीं कर्म, कहीं उपासना; ऐसे नाना उपदेश किया । ताका अभिमान बढ़ा, सो शान्तिकी फिकिर भई; ताते जागत रैन बिहाय । ये अर्थ ॥ १३३ ॥

साखी-जो घर हैगा सर्पका । सो घर साधन होय ॥
सकल संपदा ले गये । विष भरि लागा सोय॥१३४॥

टीका गुरुमुख-जो पंचमुखी सर्पका घर है ताहीमें नाना प्रकारके योग साधन, कर्म साधन हो रहे हैं । तो जो सर्पके घरमें साधन करेगा तो सर्प छोड़नेका नहीं, एक दिन खा जायगा । ये अहंकार सर्प महा विषधर जीवके पीछे लगा है, सो जीवको डस दिया । तब अपना करतूतरूपी जहर जीवपर चढ़ा; ताते सकल सत्त विचार दया शील धीरज आदि संपत्ति जीवको नाश हुई, विषने खाय लिया । पिंडांड ब्रह्मांड ये सर्पका घर, याको परखके न्यारा होना पारख भूमिका पर । ये अर्थ ॥ १३४ ॥

साखी-घुंघुची भरके बोइये । उपजा पसेरी आठ ॥
डेरा परा कालका । साँझ सकारे जात ॥१३५॥

टीका गुरुमुख-सजीव काम जो घुँघुची भर स्त्रीके कमलमें बोय दिया ताते आठ पसेरी मन भरका चोला उपजा, सोई कालका डेरा परा । ताहीका अभिमान जीवने किया, ताते साँझ सकारे गर्भवासमें जायगा । ये अर्थ । काल कहिये, गर्भ कहिये, हंकार कहिये, सो हंकारका डेरा चोला, आठ पसेरी-पाँच तत्त्व तीन गुण; याके माने जीव आवागमनमें

परा । जैसा दिन निकरा, फिर साँझ भई, फिर दिन निकला; तद्वत जीव मरा फिर पैदा भया, पैदा भया फिर मरा । ये अर्थ । सबका बीज घुंघुची भर महाकारण ज्ञान देही । सो ज्ञान देहीका अध्यारोप किया ताहीमें आठ पसेरीका स्थूल धारण करके पैदा भया; सोई अज्ञान कालका डेरा परा । ता स्थूलमें अज्ञानकी अँधियारी छाय गई सोई साँझ पर गई; तामें दिन ज्ञान सोई डूब गया ताते 'अहं ब्रह्म' ऐसा जो ज्ञानदेही तुर्यस्थ सर्व हुवा । साक्षी सोई काल सब संसारको खाने लगा औ उतपत्ती करने लगा । ये अर्थ । ये जीवके अध्याससे घुंघुची भर महाकारण सिद्ध हुवा । औ इस जीवके तामिलतासे घुंघुची भर काम बोया तो स्थूल पैदा भया । अगर जीव दोनों बंधनको परखके छोड़ औ आप पारख भूमिका पर ठहरै तो न महाकारण ही है, न स्थूल ही है । ये जीवकी सत्तासे जगत् ब्रह्म दोनों हैं । जीव न्यारा भया तो कछु नहीं । ये अभिप्राय ॥ १३५ ॥

साखी--मन भरके बोइये । घुंघुची भर नहिं होय ॥
कहा हमार माने नहीं । अन्तहु चले बिगोय ॥१३६॥

टीका गुरुमुख--संतो देखो-जो निर्जीव बिंद मन भर बोय देव तो भी बहाँसे कछु जीव बालक पैदा हो नहीं सकता । अगर मनभरको देह चाहै सभी गाड़ देव, इसते कछु पैदा हो सकनेका नहीं औ जीवको जहाँ रोप देवोगे तहाँ मन भरका चोला पैदा करेगा । औ जीव बिना 'अहं ब्रह्म' ऐसा सिद्धांत भी नहीं हो सकनेका; ताते ब्रह्म है ना कोऊ, सब मिथ्या धोखा । सबका आदि कारण जीव, सोई ज्ञानरूप; परंतु बिना पारख भ्रमता है, उसकी स्थिति कछु हो सकती नहीं । अरे एक जीवकी सत्तासे स्थूल सूक्ष्म कारणादि मनभरका रूप पैदा भया; परंतु ये तीनों मनके बोयेसे कछु एक ज्ञानरूप उपज सकता नहीं, क्योंकि ये जड़ हैं । ताते एक ज्ञानसे ये तीनों उपज सकते हैं; क्योंकि ज्ञान चैतन्य है, ताते सामर्थ है । सो ज्ञानको दोष गुरुने क्यों लगाया ? कि-

सबका आदि कारण है। औ अज्ञान क्लेश खानीका बीज है; ताते ज्ञान की कछु स्थिति नहीं, यही दोष। ताते ज्ञानने सम्पूर्ण अभिमान छोड़के पारखकी शरण होना औ पारख रूप हो रहना। पारख सोई ज्ञानकी भूमिका, ता बिना ज्ञानकी स्थिति कहीं नहीं। इस प्रकारसे हमारा कहा कोई मानता नहीं, सब ज्ञान अज्ञान जड़ धोखेमें बंध हो रहे हैं; ताते आखिरको खराब हो चले, गर्भवासमें जड़रूप हो चले। ये अर्थ। अब ज्ञान सोई जीव, ये बिचारमें ठहरा; परंतु ज्ञान एक कि अनेक? ये शंका। अरे ज्ञान कछु एक नहीं, जेते घट तेते ज्ञान; परंतु ज्ञानकी जाती एक। घट उपाधी ऐसे अनेक हो गया सो कधी तीन कालमें एक हो सकता नहीं। एक मानना, ये मिथ्या अध्यास है। ये अभिप्राय। तो भला सूर्य एक है औ घट जल उपाधीसे अनेक मालूम होता है, ताको एक मानिये कि अनेक मानिये? ये शंका। तो सूर्य एक न्यारा ऊपर है, ताते ताके प्रतिबिम्ब उपाधी सहित अनेक मालूम होते हैं। बिम्ब प्रतिबिम्ब अनन्य-भाव, ताको एक मानिये। तैसा जीवके ऊपर कोई दूसरा बिम्ब नहीं, जो ताका प्रतिबिम्ब जीव अनन्य भाव मानिये। ये जीव आपही स्वतन्त्र है पर घट उपाधीसे अनेक नजर आता है, याको एक कैसा मानिये? कोई एक मिथ्यावादी कहते हैं कि-'ब्रह्म एक बिम्ब है, ताका घट बुद्धी सहित जीव प्रतिबिम्ब अनेक मालूम होता है,' सो मिथ्या भ्रम है; क्योंकि जो प्रतिबिम्ब जीव होता तो इसे कधी ज्ञान न होता। क्योंकि प्रतिबिम्बको कछु ज्ञान होता नहीं औ जीवको ज्ञान होता है। औ ब्रह्म भी मानिये तो ब्रह्म जीवका प्रतिबिम्ब है; क्योंकि प्रतिबिम्ब को कछु बिम्बका ज्ञान नहीं औ बिंबको प्रतिबिंबका ज्ञान होता है। ब्रह्मको कछु जीवका ज्ञान नहीं औ जीवको ब्रह्मका ज्ञान है। ब्रह्म कछु जीवको प्रतिपादन करता नहीं औ जीव ब्रह्मको प्रतिपादन करता है। जैसे अपनी देह औ देहकी छाया, सो देहसे छायाका ज्ञान मालूम होता है, कछु छायासे देहका ज्ञान मालूम होता

नहीं । तद्वत् जीवसे ब्रह्मका ज्ञान मालूम होता है, कछु ब्रह्मसे जीवका ज्ञान नहीं । तब ब्रह्म जीवका प्रतिबिम्ब मिथ्या भास, जीव सत्य । परंतु जेते देह तेते जीव, सबकी जाती एक है । पर पृथक् पृथक् रहते हैं । जो कधी पारख भूमिकाको पाया तो ता भूमिका पर एक हो सकते हैं, औ जो भूमिका छोड़ते हैं सो सब पृथक् पृथक् हैं । ये अर्थ ॥ १३६ ॥

साखी--आपा तजै हरि भजै । नख शिख तजै बिकार ॥
सब जीवनसे निर्बैर रहै । साधुमता है सार ॥१३७॥

टीका गुरुमुख-एक तो हंकार छोड़ दे औ दूसरे हरि भजै, तीसरे नखसे शिखा परियंत ये देह विकाररूपी जानके इसके संपूर्ण विषय विष प्रायः छोड़े औ चौथे सब जीवनसे निर्बैर रहे, काहूसे बैर भाव न रक्खे । पाँचवें साधुमता धारण करे तब सार पारखको प्राप्त होवेगा । अब हरि कहिये, माया कहिये, स्त्री कहिये, कल्पना कहिये, बानी कहिये, वेद कहिये; सो एक अहंकार छोड़े सकल संपत्ती सहित हरी भाग जाती है । हंकार छुटा फिर कहाँ माया ? औ कहाँ स्त्री ? औ कहाँ काया, कहाँ कल्पना, कहाँ बानी, कहाँ वेद; येती छै विधि मायाका अधिष्ठान कारण हंकार, सो एक अहंकारका त्याग किये सबका त्याग होता है । औ सबका त्याग हुवा तब विषय विकार आपही त्याग होता है । औ जब विषय विकार त्याग हुवा तब साधु-मता सहजही प्राप्त होती है । औ साधुमता प्राप्त भई तब पारख पद प्राप्त होना कछु मुशकिल नहीं । पर जो भूले बैठे हैं ताको कोई क्या करे ? तो ये पारख प्राप्तीकी साधना कहता हूँ, कि—प्रथम अहंकारका विचार करना जो अहंकार कहाँलग है । फिर विश्व, तैजस, प्राज्ञ, प्रत्य-गात्मा, निरंजन; ये पाँचों अभिमान छोड़े, इनको कधी तीनकालमें उठने देवै नहीं; अगर उठै तो बारंबार विचार शस्त्रसे खंडन कर । जब ये पाँचों अभिमानका निरसन भया तब बाकी हंसके पास जमा रहा

विचार, सोई तत्त्व ग्रहण करना फिर। माया, स्त्री, काया, कल्पना, वेद, बानीका कछु प्रयोजन आसक्तता रही नहीं; क्योंकि मिथ्या नाशमान विजाती बंधन जानके आसक्तता छूटी। तब धीरज सहजही बाकी रहा, सोई तत्त्व ग्रहण करना। आसक्तता जब छूटी तब नखसे शिखा पर्यंत स्थूल, सूक्ष्म, कारण, महाकारण, कैवल्य आदि विकार त्याग हुवा, मिथ्मा भ्रम जानके। जब मिथ्या भ्रमका त्याग हुवा तब बाकी जमा साँच रहा, सोई तत्त्व ग्रहण करना। जब मिथ्या विकारका त्याग हुवा औ साँच तत्त्व ग्रहण हुआ तब बैर भाव सब जीवसे छूटा औ निर्बैर रहने लगा। औ निर्बैर होके बैर त्यागा तब बाकी जमा रही दया, सो तत्त्व ग्रहण करना। जब दया तत्त्व ग्रहण हुवा तब कठोरता असहनता छूटी औ बाकी रहा शील, सोई साधुमत; ताही तत्त्वको ग्रहण करना। जब पाँचों तत्त्व विशेष करके संगी हुए तब पारखपदका अधिकारी हुआ। तब संपूर्ण कच्चे पक्के परखके अलगाय देना। जासे कच्चे पक्के दोनों परखनेमें आवै सोई पारख पर थिर होना। पारख सोई सारपद। ये अर्थ ॥ १३७ ॥

साखी--पछापछीके कारने। सब जग रहा भुलान ॥
निर्पछ होयके हरि भजै। सोई सन्त सुजान ॥१३८॥

टीका गुरुमुख--पछ कहिये कर्म उपासनादि बानीका वा वेदका वा स्त्री पुत्र कुटुंब धन संपत्ति जाति पाँति लोक मर्यादाका औ अपछ ज्ञानका, योगका, ब्रह्म अनुभवका; ये दोनों कारण जीवके पीछे बड़े पक्के होके परे हैं ताते पारखका रास्ता सब जीव भूल गये। निर्पछ कहिये जहाँ पछ अपछ दोनों कारण नहीं। सो पछ अपछ दोनों छोड़के निर्पछ होय। औ हरी कहिये अनुमान, भास, अध्यास; तासे भागे, पारख भूमिकापर आवे। सकल पछा पछी छोड़के स्थिर होय, शांत होय सोई संत सुजान। ये अर्थ। भला वेद शास्त्रादि बड़े-बड़ेका पछ औ ब्रह्म आत्मा ये बड़े-बड़ेका अनुभव अपछ, सो दोनोंको कैसे छोड़ना ? ये शंका। इसको गुरु निराकरण करते हैं ॥ १३८ ॥

साखी--बड़े गये बड़ापने । रोम रोम हंकार ॥
सतगुरुके परचय बिना । चारों वर्ण चमार ॥१३९॥

टीका गुरुमुख–बड़े कहिये ब्रह्मा, विष्णु, महेश, सनकादि, शौनकादि, औ तारादि, वेदांती, सिद्धांती, महासिद्ध, ते सब बड़ापनेमें भूले। पंचमुखी हंकारने उनको खाय लिया । सो उनके रोम-रोममें हंकार विष भरा था; ताते नाना कर्म, नाना उपासना, नाना सिद्धांत, नाना ग्रंथ, नाना पंथ उन्होंने चलाये । चार आश्रम, चार वर्ण उन्होंने ही थापे औ वेद मर्यादा थापी औ जगत्में सतगुरु बने, अपने-अपने हंकारमें मस्त हुए । अभिमान छोड़के सार-शब्दका विचार कछु किया नहीं और पारख पदको प्राप्त कुछ भये नहीं; ताते हंकारके वश होके चौरासीमें रहे । औ संसारको ठगाई किया नाना पक्ष लगायके । आखिर 'जगत ही सब मेरा स्वरूप' ये सिद्धांत किया, ताते इन गुरुवनके मिथ्या सिद्धांत जबलग परखनेमें न आवेंगे तबलग चारों वर्ण चमार, सदा चमड़ेमें रहेंगे, कछु चमड़ेसे छूटनेके नहीं । जो चमड़ेमें आसक्त रहै सोई चमार । ये अर्थ ॥ १३९॥

साखी–माया तजे क्या भया । जो मान तजा नहिं जाय ॥
जेहि माने मुनिवर ठगे । सो मान सबनको खाय॥१४०॥

टीका गुरुमुख–संपूर्ण माया छोड़ दिया औ जंगलमें जाय बैठे औ परमहंस हो गये । बाल, पिशाच, मूक, उन्मत्त, जड़वत् हो गये तो भी क्या हुवा ? क्या पारखका अधिकारी होयगा ? अरे मान तो छूटता नहीं । काहूने ब्रह्म माना, काहूने आत्मा माना, काहूने ईश्वर माना, काहूने नाना देवता औ स्वर्ग आदिक सुख माना; सो मान काहूसे तजा जाता नहीं । जेही मानमें देव, ऋषी, मुनी सब ठगाय गये, सो ब्रह्म मान सबको खाता है । मान छोड़े बिना पारख पदकी प्राप्ति होती नहीं और पारख पद पाये बिना जीवका आवागमन कुछ छूटता नहीं । ये अर्थ ॥ १४० ॥

साखी--मायाके झक जग जरे। कनक कामिनी लाग ॥
कहहिं कबीर कस बाँचिहो। रुई लपेटी आग ॥१४१॥

टीका गुरुमुख–मायाकी झाँकमें जग जरता है, तामें और कनक कामिनीका लोभ लगा है। अंगमें रुई लपेटके आगमें घुसे तो कैसा बचाव होयगा ? जर मरेगा। अभिमान विषय सोई माया, कनक कामिनी रुई। ये अर्थ ॥ १४१ ॥

साखी–माया जग साँपिनि भई। बिष ले पैठि पतार ॥
सब जग फन्दे फंदिया। चले कबीरू काछ॥१४२॥

टीका गुरुमुख–माया कहिये, काया कहिये, कल्पना कहिये, वेद कहिये, बानी कहिये, स्त्री कहिये, द्रव्य कहिये; सो येते रूप धरके माया जगत्में साँपिनि भई। औ विषय विष लेके पतारमें पैठी अन्तः-करणमें पैठी; सो उसके फन्देमें सब जग फंद गया। औ कबीरू कहिये जीवको, सो काछके चले, भागके चले ब्रह्ममें मिलनेके वास्ते; परन्तु जो कोई ब्रह्म माना है सोई माया है, इनके परखने में आई नहीं। सो ब्रह्म बनके मायाने जीवको खाय लिया। ये अर्थ ॥ १४२ ॥

साखी–साँप बिच्छूका मंत्र है। माहुरहू झारा जाय ॥
बिकट नारिके पाले परे। काढ़ि करेजा खाय ॥१४३॥

टीका गुरुमुख–जगत्में साँप बिच्छू जहर इनका उतार है, ये उतर जाते हैं; परन्तु नारीका औ बानीका विष बड़ा बिकट है, याका उतार एक पारख बिना दूसरा नहीं। जो कोई याके पाले पड़े ताका करेजा काढ़के खाय गई। स्त्रीका जहर जाको चढ़ा ताका जीव सकल संपत्ति सहित खाय लिया; परंतु स्त्रीका जहर किसीसे उतरा नहीं। स्त्रीका विष उतरना कठिन है। ये अर्थ ॥ १४३ ॥

साखी--तामस केरे तीन गुण। भौंर लेइ तहाँ बास ॥
एकै डारी तीन फल। भाँटा ऊख कपास ॥१४४॥

टीका गुरुमुख–तामस कहिये ब्रह्म, ताके तीन गुण ज्ञान, भक्ती औ योग; तामें ज्ञानी, भक्त, योगी; ये संपूर्ण भौंरे वास लेते है। एक

डारी माया, तामें तीन फल लगे-भाँटा तमोगुण, ऊख सतोगुण, कपास रजोगुण। रजोगुण काम, सतोगुण धर्म, तमोगुण अर्थ। ज्ञानी आत्मधर्मको प्राप्त भये, भक्त स्वर्गादिक कामको प्राप्त भये, योगिनको अष्ट सिद्धी आदि अर्थकी प्राप्ती भई। औ तामस कहिये ब्रह्म; ताके तीन गुण तत्त्वमसी, एक डारी तुर्या, तीन फल ज्ञान-अज्ञान-विज्ञान। तत्पद सो भी ब्रह्म त्वं पद सो भी ब्रह्म, असीपद सो भी ब्रह्म। एक मायाके तीन भेद, ताहीके तीन गुण, तीन गुणके तीन फल वेद कहता है। श्लोक-"ऊर्ध्वं गच्छंति सत्त्वस्था मध्ये तिष्ठंति राजसाः। जघन्यगुणवृत्तिस्था अधो गच्छंति तामसाः" ॥ १ ॥ याका अभिप्राय कि-सात्त्विक उपासक जीव हैं सो अहिंसा धर्म आचरण करते हैं औ जीव दया रखते हैं। गुरु उपासना या विष्णु उपसाना शुद्ध आचरते हैं, जल छानके पीते हैं औ अनिच्छा जो लाभ होय तामें खुश रहते हैं। काहूसे द्वेषभाव रखते नहीं औ सत्तभाव, साधुभावसे अत्यन्त जिनकी प्रीति है सो 'ऊर्ध्वं गच्छन्ति' ऊर्धलोक सर्वोपर ज्ञानपदको प्राप्त होते हैं। औ राजसी उपासक जो जीव हैं सो ब्राह्मण संतर्पण करते हैं, यज्ञ करते हैं, नाना देवनका सेवन करते हैं, बड़ी तपस्या करते हैं, तीर्थाटन व्रत आदि करते हैं, मान प्रतिष्ठाका डिंभ रखते हैं, बहुत द्रव्य पैदा करके मान प्रतिष्ठाकी जगामें खर्च करते हैं औ विधियुक्त कर्म आचरण करते हैं, वर्णाश्रम प्रमाण। ऐसे राज उपचार पूजन आपने भी दूसरेका करना औ दूसरेसे आपने भी लेना; ऐसी भावना उनकी सदा रहती है। सो 'मध्ये तिष्ठंति' कहिये बीचमें रहते हैं, मानुष योनिको प्राप्त होते हैं। कोई राजा होते हैं, कोई धनवान् संपत्तिवान् होते हैं। औ कोई तामसी उपासक तमोगुण उपासना करते हैं। कोई कालीकी, कोई चंडीकी, कोई रुद्रकी, कोई महादेवकी, कोई बटुक भैरव, शाक्त ये उपासना करते हैं औ वाममार्ग, कँवलमार्ग आचरते हैं। जीवहिंसा करते हैं, मदिरा पान, मांस भोजन करते हैं,

भैरवीचक्र करते हैं, औ स्त्रियनसे रति करते हैं। नाना विषयमें आसक्त रहते हैं औ शाक्तनको खिलाते हैं। शाक्त ब्राह्मणका पूजन करते हैं, रुद्राक्ष भस्म बहुत धारण करते हैं; ऐसे जो जीव हैं सो अधो पतन्ति कहिये तरे नाना नर्क खानीमें पचते हैं। ऊँटकी योनि अथवा श्वान की योनि, सूकरकी योनि, गदहेकी योनि, बकरेकी योनिको प्राप्त होते हैं; ऐसा भगवद्गीताका वाक्य है। सोई तीन फल, यामें संपूर्ण जीव बन्धमान भये। एक डारी, तामें तीन प्रकारके फल बताये; सो संपूर्ण जगत् बन्ध भया। तामस कहिये मन, सो मनकी कल्पना ये तीनों गुण औ मनका अध्यास तीनों फल, सो एक डार जो बानी है, तामें जीवको ह्ढ़ाया है। औ जीव उसीमें आसक्त है, ताते त्रिविधि चौरासी भोगते हैं। येता परखके न्यारा होय तब आवागमनसे रहित होय। ये अर्थ ॥ १४४ ॥

साखी—मन मतंग गैयर हने। मनसा भई सचान ॥
यंत्र मंत्र माने नहीं। लागी उड़ि उड़ि खान ॥ १४५ ॥

टीका गुरुमुख—मन मानंदी सोई मतंग उन्मत्तता जामें कुछ आप पर सूझ परता नहीं। औ मानंदीकी आश सोई मनसा सचान बाज पक्षी माफिक उड़-उड़ि फिरती है। ताके मारनेको वेदादिक मंत्र औ यामलादिक यंत्र नाना प्रकारके पैदा हुये; परंतु वो काहूको मानती नहीं औ यंत्र मंत्रनके प्रतापसे ज्यादा पुष्ट होती है। उड़ि-उड़िके जीवनको खाने लगी। ये अर्थ ॥ १४५ ॥

साखी—मन गजेंद्र माने नहीं। चलै सुरति के साथ ॥
महावत बिचारा क्या करै। जो अंकुश नाहीं हाथ ॥ १४६ ॥

टीका गुरुमुख—मन है सोई उन्मत्त हाथी, तापर जीव महावत बैठा है; परंतु जीव महावतको मानता नहीं। मस्त हाथी मन है सो विषय आरण्यमें औ बानीके आरण्यमें जीवको लेके चला जाता है। औ भग खोरका रहनेवाला हाथी सो जीवको लेके भग कंदलामें निवास

करता है। जीव महावत विचारा क्या करै ? उसके हाथमें धीरेरूपी धैर्य औ विवेकरूपी अंकुश है नहीं। उन्मत्त हाथीका चढना औ हाथमें अंकुश नहीं तब महावतकी मृत्यु सहज ही आई। जो कोई पारखी संत मिलै औ गज मर्दन विचार दिखावै, ऐसा विचार महावतके हाथमें आवै तो हाथी वश होय। सार शब्द सोई गज मर्दन। ये अर्थ ॥ १४६ ॥

साखी–ई माया है चूहड़ी। औ चूहड़ोंकी जोय ॥
बाप पूत अरुझायके। संग न काहूके होय ॥१४७॥

टीका गुरुमुख--ई माया कहिये काया, सो चूहड़ी, हलालखोरिन जो सदा नर्कमें भरी रहती है। औ जो कायाका खाविंद है जीव सो कायामें आसक्त रहता है, सो भी चूहड़े हलालखोर; याने अपने विषयन में बाप पूत आदि सकल जीवनको अरुझाया, काहूके संग भई नहीं, आखिरको छूट गई। ये अर्थ ॥ १४७ ॥

साखी–कनक कामिनी देखके। तू मत भूल सुरंग ॥
मिलन बिछुरन दुहेलरा। जस केंचुलि तजत भुवंग१४८॥

टीका गुरुमुख–मायाके मुख्य रूप दो-एक कनक, दूजे कामिनी; सो याको देखिके हे जीव ! तू अपनेको भूले मत। तू सुरंग ज्ञानरंग है औ ये काया कुरंग नर्ककी खान है; यामें तू आसक्त न हो। ये कनक कामिनी कायाका विषय है। सो याही विषयमें बंध होके जीव फिर-फिर गर्भ संकट भोगता है औ देह धारण करता है। आखिर कनक कामिनी दोनों छूट जाती हैं। सपनेकी नाई कनक कामिनीका मिलना बिछुरना है। जैसा सर्प केंचुली छोड़ता है फिर दूसरी केंचुली उस केंचुलीके अध्याससे आती है; तैसा ये चोला जीव छोड़ता है और चोलेके अध्याससे, दूसरा चोला जीवको प्राप्त होता है। तो वो भी स्वप्नवत् होता है; इनको देखिके हे ज्ञानरंग ! तू भूल मत, सत्संगमें अपने स्वरूपको परख ले। ये अर्थ ॥ १४८ ॥

साखी–माया केरी बसि परे। ब्रह्मा बिष्णु महेश॥
नारद शारद सनक सनंदन। गौरी पुत्र गणेश॥१४९॥

टीका गुरुमुख–माया दो प्रकारकी-एक स्थूल माया कनक, कामिनी, देह आदि, दूसरी सूक्ष्म वेदबानी, कल्पना, अनुमान, भास, अध्यासादि; ऐसी मायाके वश सब जीव परे। ब्रह्मा, विष्णु, महेश; ये तो स्थूल-सूक्ष्म दोनों मायाके वश हैं औ नारद, शारद, सनक, सनंदन, स्वामीकार्तिक, गणेशादि सूक्ष्म मायाके वश पड़े। ये अर्थ॥१४९॥

साखी--पीपरि एक जो महा गंभानि।ताकर मर्म कोइ नहिं जानि॥
डार लंबायफल कोई न पाय।खसम अछत बहुपीपरे जाय१५०॥

टीका गुरुमुख–पीपरी कहिये जो कोई एक पीव है ताकी परी कहिये बानी वा कल्पना; सो प्रथमारंभमें जीवमे एक कल्पना उठी कि-'हमारा कर्ता कोई दूसरा है,' सोई कल्पना महा गंभानी, गंभीर, बड़ी दृढ भई। सो ता कल्पनाका मर्म कोई नहीं जाना कि मिथ्या है;ताते ब्रह्मा, विष्णु, महेशादि जेते ऋषि मुनि सब भये तिन सब अपनी-अपनी कल्पनाकी डार लंबाई। वेद शास्त्र पुराण इतिहासादि नाना बानी, नाना ग्रन्थ बनाये; परन्तु फल मुक्तिस्थिति काहूने पाई नहीं। एक खसम ब्रह्म है, ऐसा अध्यास थाप दिया, सो सब जीवनने मानके बहु पीपरे जाय। बहु बानी, बहु कल्पनामें जीव चले। ये अर्थ॥१५०॥

साखी--साहू से भौ चोरवा। चोरहु से भौ हीत॥
तब जानोंगे जीयरा। जबरे परेगी तूझ॥१५१॥

टीका गुरुमुख–साहू कहिये जीवको, सो जीवसे चोर पैदा भया। चोर कहिये जाने जीवकी सत्य विचारादि संपत्ति हर ली, सोई ब्रह्म आनंद निर्विकल्प औ सोई चोरसे जीवने हेत लगाया कि, मेरा हित कल्याण याहीसे होयगा; परन्तु चोरसे भी कहीं हित कल्याण भया है? अरे! जबसे तू ब्रह्ममें मिला तबहींसे तू खराब हुआ, ये तेरेको मालूम नहीं हुवा; परन्तु हे जीव! जब तेरेको पारख पड़ेगी तब ये कसर तुम

जानोगे । बिना पारख चोरही साहू हो रहा है, जो तेरा घाती सोई तेरा मित्र हो रहा है । सो वो चोर पारख बिना कछु छूटनेका नहीं । साहू जो जीव सोई चोर हुवा, ब्रह्मांडमें जायके छिपने लगा औ चोर योगी लोग, तासे प्रीति किया । पर हे जीव ! जब मनुष्य तन छोड़के तू जायगा तब योग समाधी औ योगी लोग सबही छूट जायेंगे औ तेरे पर गर्भयातनाका दुःख आन परेगा, तब जानेगा तू । अभी जबलग मनुष्यतन है तबलग तो सारशब्दका प्रमाण तेरेसे जाना नहीं जाता, पीछे पछतायगा । ये अर्थ ॥ १५१ ॥

साखी--ताकी पूरी क्यों परे । जाके गुरु न लखाई बाट ॥
ताके बेड़ा बूड़ि है । फिरि फिरि औघट घाट ॥१५२॥

टीका गुरुमुख--अरे जाको गुरुने पारख पदकी बाट लखाई नहीं ताकी पूरी कैसे परेगी ? औ स्थिति कैसे होयगी ? औ कल्पना कैसे छूटेगी ? तो ताका बेड़ा गर्भवासमें फिर-फिर बूड़ेगा । ये अर्थ ॥१५२॥

साखी--जाना नहीं बूझा नहीं । समुझि किया नहिं गौन ॥
अन्धेको अंधा मिला । राह बतावै कौन ॥ १५३ ॥

टीका गुरुमुख--अपने स्वरूपको गुरुवा लोगोंने जाना नहीं । अपने स्वरूपको देखनेके विषय गुरुवा लोग ब्रह्मादिक अंधे हैं; क्योंकि यथार्थ पारख स्वरूप उनको भी मिला नहीं । देखो-उनकी बानी, उनके सिद्धांत उनके ग्रंथ, वेद शास्त्रादिक सब विदित हैं । तो प्रथम भास पर्यंत सब कहते हैं, आगे गति काहूकी चली नहीं । तब कारण कार्य एक भाव करके अन्वय सबनने सिद्ध किया । औ सोई स्वरूप माना । औ चेले लोग जो आगे भये सो काहूने भी उनके सिद्धांतकी कसर जानी नहीं औ वेदबानी धोखा काहूके बूझनेमें आया नहीं । औ ऐली तरफ जो उनके चेला लोग भये सो कोई समझते नहीं औ समझके चलते नहीं, सब अंधाधुंधमें चले जाते हैं । ताते इस जगतके जीव सब अंधे जायके गुरुवालोगोंसे मिले, सो वो भी मूलके अंधे । औ जो वेदके

भरोसे बैठे हैं सो वेद जन्म अंधे, तासे जगत् अंधा मिला। अब राह बताबे कौन। ये अर्थ ॥ १५३ ॥

साखी—जाका गुरु है आँधरा। चेला काह कराय ॥
अंधे अंधा पेलिया। दोऊ कूप पराय ॥१५४॥

टीका गुरुमुख—जाका गुरु अंधा है ताका चेला पक्का अंधा। अंधा कहिये पारख हीन, सो वेद आदि जेते गुरुवा भये सो सबही पारख हीन, औ संसारी जीव, ये तो आदिके पारखहीन। ताते पारखहीनसे पारखहीन अंधे मिले औ दोनों भ्रमकूपमें परे। अथवा अन्धा कहिये ग्रेही, सो जाका गुरु ग्रेही है ताका चेला आदि भी ग्रेही हैं। तो ग्रेहीसे ग्रेही मिले, फिर विषयासक्त होके भग कूपमें परे। ग्रेही कहिये स्त्री, धन, जाति, पाँति, कुल, कुटुम्ब, घर, गाँव जागा, वतन, वेदवानी, कर्म, उपासना, वर्णाश्रम आदि कल्पना जाको ग्रहण होय सोई ग्रेही। सोई अंधा है, जो धनमदमें अंधा भया औ राजमद, विद्यामद, ज्ञानमद, यौवनमद, देहमद, तपमद, सिद्धिनके मदमें अंधा भया। ये अष्ट मदमें गुरुवा लोग अंधे भये, तिनको ग्रेही जन्म अंध मिले। तो अन्धेको अंधेने ठेल दिया, उपदेश दिया; ताते दोनों कल्पनाकूप, चौरासी कूपमें परे। अथवा विषय अन्ध बाममार्गी, तिनके उपदेशमें जगत् अन्धे जीव गये। सो उनको उपदेश देके माया अन्धकूपमें दोनों परे। अथवा अन्ध कहिये जाको अपना स्वरूप दिखाता नहीं, सोई गुरुवालोग औ चेले जगत् जीवने क्या करना ? ये तो कधी स्वरूपकी वार्ता ही जानते नहीं, स्वरूपको जाननेके वास्ते गुरुवालोगके शरणमें गये। सो वो गर्भ अन्धे भ्रमका उपदेश देके दोनों प्रपंच कूपमें परे। ये अर्थ ॥ १५४ ॥

साखी—लोगों केरी अथाइया। मत कोई पैठो धाय ॥
एकै खेत चरत हैं। बाघ गदेहरा गाय ॥१५५॥

टीका गुरुमुख—ये गुरुवालोग अन्ध, इनके अथाईमें मत कोई बैठो। अथाई कहिये, संगत कहिये, डेवढ़ी कहिये; सो इनकी संगतमें

हे जीव ! कोई दौरदौरके मत बैठो: क्योंकि इनका खेत अद्वैत आत्मा, तामें तीनों विचरते हैं। बाघ तमोगुण, गदेहरा सतोगुण, गाय रजोगुण; ये तीन गुण एक आत्मामें बिचरते हैं। कहते हैं कि—त्यागी होय अथवा भोगी होय, विषयी होय, कामी होय अथवा मोही होय, 'मैं आत्मा' येता जाना कि मुक्त हैं; क्योंकि आत्मामें सभी संभौता है। याको प्रमाण जनक भोगी, शुक त्यागी, रामचन्द्र रागी, कृष्ण कामी, वशिष्ठ कर्मी; ये पाँचों ज्ञानीकी गति समान गुरुवालोग बोलते हैं, तब न्याय न भया। जो रागी-त्यागी, अन्ध दिठीयार, साहू-चोर एक आत्मामें विचरते हैं औ आत्मारूप बन रहे हैं, ये न्याय कछु न्याय नहीं। बाघ-गदहा-गाय, भक्ती-योग-ज्ञान, ये तीनों एक खेतमें चरे, ये कछु न्याय नहीं। गदहा-गाय, अकर्म-कर्म, अथवा कर्म गदहा, उपासना गाय औ ज्ञान बाघ दोनोंका उपहार करनेवाला; सो तीनों एक वेदमें बताते हैं। अरे ज्ञान-अज्ञान, जड़-चैतन्य, जहाँ एक होता है सो अन्याय, कछु न्याय नहीं। जो सम्पूर्ण एक ही है तो विचार औ गुरुवाई काहेको चाहिये ? सब धोखा। ये अर्थ ॥ १५५ ॥

साखी—चारि मास घन बार्सिया। अति अपूर जल नीर ॥
पहिरे जड़तन बख्तरी। चुभै न एकौ तीर ॥१५६॥

टीका गुरुमुख—चारि मास कहिये चारि वेद, सो घन बरसे, बहुत बरसे, नाना सिद्धांतनकी बानी बहुत बोली औ अति अपूर्व कल्पना बढ़ी। वही कल्पनाकी बख्तरी कहिये कैवल्य देह, सो जीवनने जड़ तनमें पहिर लिया औ बाल, पिशाच, उन्मत्त, मूक, जड़वत् हो गये। ताते इनके अंतःकरणमें अब एकौ शब्द गड़ता नहीं। ये अर्थ ॥ १५६ ॥

साखी—गुरुकी भेली जिव डरे। काया सींचन हार ॥
कुमति कमाई मन बसे। लाग जुवाकी लार ॥१५७॥

टीका गुरुमुख—ये गुरुवालोगोंकी संगतमें जीवको डर प्राप्त भया, नाना प्रकारका डर इन्होंने लगाया। नर्कका डर, यमका डर, श्रापका डर, देवतनका

डर बताया ताते जीवनको डर प्राप्त भया। कायाका अभिमान जीवने मानाकि-कायाका नाश न होय। कायाको कोई घातका कष्ट होने न पावे, ऐसी इच्छा धारण करके काया सींचनहार देह अभिमानी जीव विषयासक्त भयको प्राप्त होके गुरुवा लोगोंसे ऐसे उपदेश मांगते हैं कि; जामें लक्ष्मी मिले, राज मिले, अच्छी स्त्री मिले, वहु पुत्र लाभ होय, वहुत दिन जीवैं। तब नाना मन्त्र, यंत्र, उपासना, साधन, क्रिया, तपस्याका उपदेश करके सब जीवनको गुरुवा लोगोंने बानीके बंधनमें बाँधके अपना गुलाम बनाये। औ ऐसा दृढ़ाया कि वेद-बानीके प्रमाणसे सब चलना। औ जो वेद बाहर होवेगा सो हमारा दुष्ट, बहुत पछतायगा औ नाना दुःख से होवेंगे औ यम उसे बहुत याचेंगे, नर्कमें डारेंगे। ऐसे नाना भय बताये तब जीवको भय प्राप्त हुआ औ कुमति कमाईमें मन बसा औ गुरुवा लोगोंके संग लगा। कुमति कहिये अज्ञान मत-नाना कर्म, नाना उपासना, मंत्र, यन्त्रादिक साधनाकी कमाई करने लगा; ताहीते बारंबार आवागमनमें परा। ये अर्थ ॥ १५७ ॥

साखी—तन संशय मन सोनहा। काल अहेरी नीत ॥
एकै डाँग बसेरवा। कुशल पुछोका मीत ॥१५८॥

टीका गुरुमुख—हे मीत ! हे जीव ! चोरनकी संगतमें वसिके फिर कुशल काहेको पूछता है ? अरे चोरनका विवरण सुनो-एक तन, दूसरी संशय, तीसरा मन, चौथा शब्द ॐकार, पाँचवाँ काल अहेरी गुरुवा लोग; येते चोरनके संगतमें तू नित रहता है अब कुशल पूछोका मीत ? तन कहिये स्थूल, संशय कहिये सूक्ष्म, मन कहिये कारण, सोनहा कहिये महाकारण, काल अहेरी कैवल्य, एक डाँग जगत्, याही में पाँचोंका बसेरा; सो इनहिनमें तू रहता है अब कुशल पूछोका मीत ? तन कहिये देह, संशय कहिये स्त्री, मन कहिये सम्पत्ती, सोनहा कहिये बेद, काल अहेरी कहिये जन कुटुंब, एक डाँग प्रपंच, ताहीमें इनका बसेरा; तिनके संगमें तू मिला है अब कुशल कहाँसे होय ? हे मीत ! या तन

कहिये रजोगुण, संशय कहिये सतोगुण, मन तमोगुण, सोनहा माया, काल अहेरी ब्रह्म, एक डाँग कहिये बन, बन कहिये बानी, तामें इनका बसेरा है। तामें तू मिल रहा है, अब कुशल पूछोका मीत। तन कहिये प्रत्यक्ष, संशय कहिये कल्पना, अनुमान, मन कहिये अध्यास, सोनहा कहिये भास, काल अहेरी कहिये कर्म, एकै डाँग एक स्थूल; तामें ये भी रहते हैं औ तू भी रहता है। अब कुशल क्या पूछता है ? हे मीत ! तन कहिये जीव, संशय कहिये ईश्वर, मन कहिये ब्रह्म, सोनहा कहिये गुरुवा लोग, काल अहेरी स्त्री, एक डाँग बानी, तामें बसेरवा कुशल पूछोका मीत ? ये अभिप्राय ॥ १५८ ॥

साखी--साहू चोर चीन्हें नहीं। अंधा मतिका हीन ॥
पारख बिना बिनाश है। कर बिचार होहु भिन्न ॥१५९॥

टीका गुरुमुख–अरे ये संसारी जीव अंधे, इनकी मति हीन होय गई; ताते साहू चोर चीन्हता नहीं। चोरनकी संगतिमें जीव लूटा जाता है। चोर कहिये वेद, शास्त्र, पुराण, नाना देवता, ब्रह्म, गुरुवा; सो पारख बिना इन चोरनके सङ्गमें रहिके जीवका विनाश है। ताते विचार करके सबते न्यारा हो, सब परखके पारख रूप हो रहो। ये अर्थ ॥ १५९ ॥

साखी--गुरु सिकलीगर कीजिये। मनहि मस्कला देय ॥
शब्द छोलना छोलिके। चित्त दर्पन करि लेय॥१६०॥

टीका गुरुमुख–गुरु पारखी करना जो मनको मस्कला विवेकको देय औ सार शब्दके छोलनेसे छोलके चैतन्यकी कसर विकार मैल सब निकार डारे। औ चैतन्यको शुद्ध दर्पण करके पारख प्रकाश करके पारखमें लेय अपना स्वरूप कर लेय, ऐसा गुरु कीजिये। ये अर्थ ॥ १६० ॥

साखी--मूरखके सिखलावते। ज्ञान गाँठिका जाय ॥
कोइला होय न ऊजरा। जो सौ मन साबुन लाय१६१॥

टीका गुरुमुख–मूरख कहिये जाका अन्तःकरण मैला होय औ विक्षिप्त मति होय औ विषयनमें लुब्ध होय, कामी क्रोधी लोभी मोही होय, अन्यथा बाद करै, ताको मूरख कहिये । सो तासों क्या बोलिये ? ताको सिखलावते ज्ञान अपने गाँठिका जाता है औ उनके संग दोषसे अपनेको भी अज्ञान उठता है । क्रोध तामस उठता है । औ वो तो कोयले माफिक मूर्ख हो रहा है, उसे कैता भी विचार बतावो, लगावो; तो वो कुछ शुद्ध होता नहीं । ये अर्थ ॥ १६१ ॥

साखी–मूढ़ कर्मिया मानवा । नखशिख पाखर आहि ॥
बाहनहारा क्या करै । जो बान न लागै ताहि१६२॥

टीका गुरुमुख–मूढ़ कर्मी मानुषके नखसे शिखा पर्यंत अज्ञानकी पाखरपरी रहती है, ताको विचार कहनेवालेने क्या करना ? उसे एक भी बातकी समझ पड़ती नहीं । ये अर्थ ॥ १६२ ॥

साखी–सेमर केरा सूवना । छिवले बैठा जाय ॥
चोंच सँवारै शिर धुनै । ई उसहीको भाय ॥१६३॥

टीका गुरुमुख–सेमर कहिये चारों वर्ण औ छिवला कहिये चार आश्रम; सो वर्ण छोड़के जीव आश्रममें आया औ मुँह पसार पसारके गृही धर्म, ब्रह्मचारी धर्म, वानप्रस्थ धर्म औ संन्यास धर्म पढ़ने लगा औ उसीमें शिर कूटने लगा, आचरण करने लगा, परंतु ये भी प्रपंचका भाई । जैसा चारों वर्ण जीवको बन्धन है तैसा चारों आश्रम भी जीवको बन्धन है । अथवा प्रपंच सोई सेमर औ भेष षट्दर्शन चार संप्रदायादि सोई छिवले; सो प्रपंच छोड़के जीव भेषमें आया तो यहां दूना प्रपंच लगा । नाना देव, नाना विद्या, नाना तीर्थ, औ अपनी-अपनी सम्प्रदायके कर्म क्रिया महा बन्धन होके पीछे लगी, तामें शिर धुन-धुनके मरता है । मुक्तिपदके प्राप्तिके वास्ते संसार त्याग करके भेषमें आया, सो यहाँ दूना बन्धन प्राप्त भया । ये अर्थ ॥ १६३ ॥

साखी–सेमर सुवना बेगि तजु । तेरी घनी बिगुर्ची पाँख ॥
ऐसा सेमर जो सेवै ।जाके हृदया नाहीं आँख१६४॥

टीका गुरुमुख--अरे जैसा प्रपंच तैसा ही भेष है, दोनों सेमररूपी मिथ्या भ्रम है, यामें कछु पारख पदकी प्राप्ति नहीं औ मुक्त फलभी नहीं। ताते ये सेमर मिथ्या भ्रम, जगत् ब्रह्म दोनों छोड़ दे बेगी; यामें तेरी पाँख घनी बिगुर्ची, तेरी बुद्धि बहुत खराब हुई, जड़ हुई। ताते बारंबार जन्म धारण करके तूने जो आशा किया सो अनेक बार तेरी आशा नाश हुई औ तेरेको मुक्ति प्राप्त भई नहीं। तो ऐसा मिथ्या धोखा वेद बानी प्रपंच ताका सेवन कौन करै? जाके हृदयमें विवेक विचाररूपी आँखी न होय सो सेवै। ये अर्थ ॥ १६४ ॥

साखी--सेमर सुवना सेइया। दुइ ढेंढ़ीकी आस ॥
ढेढ़ी फूटी चनाक दै। सुवना चले निरास ॥१६५॥

टीका गुरुमुख--सेमर कहिये जाका फूल अच्छा लाल औ फल भी अच्छा बड़ा देखनेमें आता है। ताही लोभसे तोता सेवन करता है कि, इस फलसे मेरी तृप्ति होगी। फिर जब ये फल पकके फूटा, उसमें रुई उड़ी औ सुवा निराश भया, उड़ि गया। तैसा वेद बानीका सेवन जीवने किया धर्म--मोक्ष दो ढेंढ़ीकी आससे औ उसकी फल श्रुति महिमा बहुतकी। परन्तु तत्त्वमसीका सिद्धांत निर्णय जब किया तब ढेंड़ी फूटी औ फल आसा सब मिथ्या ठहरी। तब ये जीव निरास होके पुनः गर्भवासको चला ॥ १६५ ॥

साखी--लोग भरोसे कौनके। बैठ रहें अरगाय ॥
ऐसे जियरा यम लुटे। जस मटिया लुटे कसाय ॥१६६॥

टीका गुरुमुख--ये सब लोग कौनके भरोसे अभिमान करके बैठे हैं। अरे ये जीव सिवाय और कोई दूसरा तो है नहीं औ ये तो ऐसा जानते नहीं; ताते ऐसे गाफिल जीवको कल्पना बानी स्त्री दानादान क्षीण करके लूटेगी, जैसे कसाई मटिया कहिये मांसको छिन्न भिन्न करते लूटते हैं; तद्वत्। ये अर्थ ॥ १६६ ॥

साखी--समुझि बूझ जड़ हो रहे । बल तजि निर्बल होय ॥
कहैं कबीर ता संतको । पला न पकरै कोय ॥१६७॥

टीका मायामुख--वेदान्तका विचार समझके सर्वात्मा अद्वैत बूझिके जड़वत् हो रहे औ 'मैं ब्रह्म सर्व शक्तिमान्,' ऐसा बल सब छोड़के निर्बल हो रहे, अहंकार छोड़के निरहंकार हो रहे, ता संतका पल्ला पकड़ने वाला कोई नहीं; ऐसा वेदांती बोलते हैं । ये अर्थ ॥ १६७ ॥

साखी--हीरा सोइ सराहिये । सहै घननकी चोट ॥
कपट कुरंगी मानवा । परखत निकरा खोट ॥१६८॥

टीका गुरुमुख--हीरा कहिये सिद्धांत, सोई सिद्धांतको सराहिये जाके ऊपर अनेक बानी, अनेक तर्क, अनेक सिद्धांतनकी चोट चले औ वो फूटै नहीं, उसपर कोई चोट लगने न पावै, उसपरसे सभी सिद्धांतनकी चोट उछल जाय; सो पक्का सिद्धांत । औ ये गुरुवालोग कपट कुरङ्गी मिथ्या भ्रमके रंगमें रंगे हैं, ताते इनके सिद्धांत सब परखनेमें खोटे निकरे । पारखमें कोई सिद्धांत ठहरता नहीं । ताते पारख सिद्धांत सच्चा औ सब झूठा । ये अर्थ ॥ १६८ ॥

साखी--हरि हीरा जन जौहरी । सबन पसारी हाट ॥
जब आवै जन जौहरी । तब हीरोंकी साट ॥१६९॥

टीका गुरुमुख--हरि कहिये ज्ञान सोई हीरा, जन कहिये ज्ञानी, सोई ज्ञान जवाहिरको जौहरी, बैपारी; जन कहिये मुमुक्षुजन, तिनने ज्ञान सिद्धांत ग्रहण करनेके वास्ते ज्ञानी लोगनके पास बजार लगाया, ग्राहकी करने लगे; परन्तु जब कोई पारखी आवेंगे तब इनके सिद्धांत हीरनकी कसर निकरेगी । जबलग पारखिनका संग नहीं भया औ परखके देखा नहीं, तबलग सकल उपदेश, सकल सिद्धांत सच्चे हैं औ परखके ऊपर सभी मिथ्या हो गये । ये अर्थ ॥ १६९ ॥

साखी--हीरा तहाँ न खोलिये । जहाँ कुजरोंकी हाट ॥
सहजै गाँठी बाँधिके । लगिये अपनी बाट ॥१७०॥

टीका गुरुमुख–ज्ञान हीरा वहाँ न खोलना जहाँ कर्मकाँडी उपासक रहते हैं। उनकी हाटमें ज्ञान हीरा खोलना नहीं, वे ज्ञानकी कीमत जानते नहीं। ताते अपने अन्तःकरणमें गाँठी बाँधिके अपने ज्ञानमार्गसे चले जाना, कोई पारखी मिलैं तो उसके आगे खोलना। ये अर्थ ॥ १७० ॥

साखी–हीरा परा बजारमें। रहा छार लपटाय ॥
केतेहि मूरख पचि मूये। कोइ पारखी लिया उठाय १७१॥

टीका गुरुमुख–ज्ञान सिद्धांत जगत् बजारमें परा है। सो उसके ऊपर विषय कर्म उपासनारूपी छार माटी लगी है, तामें लपटा मालूम होता है ताते किसीको प्राप्त होता नहीं, केतेही मूर्ख पचिके मर गये। कोई पारखी जनोंने परखके उठाय लिया। ये अभिप्राय। या हीरा पारखी संत जगत् बजारमें पड़े हैं, जगत्के देखनेमें जगत् सरीखे वर्तते हैं। उत्तम भोजन, उत्तम जलपान करते हैं, कंठी तिलक आदि भेष भी रखते हैं। ताते संसारको ग्रेहीवत् मालूम होते हैं; कि जैसे विषयासक्त हैं। परंतु मूर्ख उनका भेद नहीं पावते ताते नाहक धोखेमें पचि पचिके मरते हैं। कोई पारखी जन उसको परख लेते हैं। ये अर्थ ॥ १७१ ॥

साखी–हीरोंकी ओबरी नहीं। मलयागिर नहिं पाँत ॥
सिंघोंके लेहंड़ा नहीं। साधु न चले जमात ॥१७२॥

टीका गुरुमुख--हीराके कछु महल ओबरी नहीं औ मलयागिरके कछु पंक्ती नहीं। मलयागिर भी संसारमें एक ही है औ हीरा भी कहूँ कहूँ होता है। सिंहके कछु लेहंड़ा नहीं होते, सिंह भी कहूँ कहूँ एकाध होते हैं, तैसे साधुनके भी जमात नहीं चलती साधु भी कहूँ कहूँ एकाध होते हैं। तो जोई सर्व पारखी सोई साधु औ सब भेष जमात। ये अर्थ ॥ १७२ ॥

साखी--अपने अपने शिरोंका। सबन लीन्ह है मान ॥
हरीकी बात दुरंतरी। परी न काहू जान ॥१७३॥

टीका गुरुमुख--अपनी अपनी बुद्धिसे एक एक अनुमान सबने माना, ताहीको अपने शिरका मान खाविन्द सब कोई जानते हैं। काहूने शिव माना, काहूने शक्ती माना, काहूने विष्णु माना, काहूने सूर्यको माना, काहूने गणपतिको माना, काहूने वेदको माना, काहूने कुरानको माना, काहूने अठासी सहस्र ऋषीको माना, काहूने एक लाख अस्सी हजार पैगम्बर माना, काहूने दश औतार माना, काहूने बारह इमाम माना, काहूने औलिया अंजिया गौस कुतुब फिरस्तेको माना, काहूने तैंतीस कोटी देवता माना, काहूने यक्ष, गण, गंधर्व, पितृजनको माना। इस प्रकार अपने अपने शिरोंका मालिक सबनने मान रक्खा है। ताते ज्ञानकी बात दूरंतरी। ज्ञान कहिये जीव, सो जीवकी बात दुरंतर गई, काहूको जान परी नहीं। ये अर्थ॥ १७३॥

साखी--हाड़ जरै जस लाकड़ी। बार जरै जस घास॥
कबिरा जरै राम रस। जस कोठी जरै कपास॥१७४॥

टीका गुरुमुख--रामरसके मारे जीव दिवाना भया। आखिर अपने स्वरूपको नहीं जाना औ चोला छूटा तब गर्भवासमें जायके जठराग्निमें जरने लगा। जैसे कोठीमें कपासको आग लगी, सो ऊपर तो धुवाँ नजर आता नहीं औ भीतर जरके खाक भई। तैसा ऊपर काहूको जठराग्नि मालूम होती नहीं। नारी गर्भिणी है, ऐसी जनवार्ता होती है। औ जब जीव चोला छोड़ता है तब सब लोग मिलके चोलेको जराय देते हैं। सो हाड़ जैसे लकड़ीके माफिक जर जाते हैं औ बार जैसे घासकी माफिक जर जाता है औ जीव दूसरी योनिमें जायके गर्भाग्निमें जरता है, जैसा कपास कोठीमें जरता है; तद्वत्। ये अर्थ॥ १७४॥

साखी--घाट भुलाना बाट बिनु। भेष भुलाना कान॥
जाकी मांड़ी जगतमें। सो न परा पहिचान॥१७५॥

टीका गुरुमुख--घाट कहिये सत्सङ्ग, बाट कहिये विचार, सो विचार बिना सत्सङ्ग भूला ब्रह्मास्मि कहलायके। औ भेष अपने-अपने

संप्रदायके पक्षमें भूले; पर जाकी माँड़ी नाना प्रकारकी बानी औ कल्पना इस जगतमें मंड रही है सो मानुषरूप काहूको पहिचान परा नहीं; सब मिथ्या भ्रम औ कल्पनामें अरुझे। अरे ये जीवरूपने चार वेद छै शास्त्र आदिक नाना बानी बनाये। सो सब जीव वेद शास्त्र मंत्र यंत्रमें अरुझे, काहूने जीवरूप पहिचाना नहीं। ये अर्थ ॥ १७५ ॥

साखी—मूरखसे क्या बोलियो। शठसो काह बसाय ॥
पाहनमें क्या मारिये। जो चोखा तीर नसाय॥१७६॥

टीका गुरुमुख—मूर्ख कहिये जो मिथ्या पक्ष धारण करै औ शठ कहिये जाको साँच झूठ मालूम न परे सो शठ। ताते मूर्ख पक्षपातिनसे विचारकी बात बोलना नहीं औ हठी सठनसे तुम्हारा विचार कछु चलनेका नहीं, ताते उनसे बोलना नहीं। अरे जो अच्छा तीर भया तो क्या पत्थरमें मारना ? पत्थरमें मारा तो तीर खराब होयगा, पत्थरका कछु जानेका नहीं। तैसा सार शब्द ये पक्षवादी शठ मूर्खनसे बोलना नहीं; क्योंकि एक तो कछु विषाद करके उठेंगे कि मनमें उदास हो जायेंगे। ताते कोई श्रद्धावान निर्पक्ष जीव होय ताको सार शब्दका विचार बताना। ये अर्थ ॥ १७६ ॥

साखी--जैसी गोली गुमजकी। नीच परी ढहराय ॥
तैसा हृदया मूर्खका। शब्द नहीं ठहराय ॥१७७॥

टीका गुरुमुख—गुम्मजकी गोली माफिक मूर्खके हृदयमें शब्द ठहरता नहीं तो हकनाहक काहेको बक-बक मरना ? औ अपनी प्रकृति क्यों खराब करना ? ये अर्थ ॥ १७७ ॥

साखी--ऊपरकी दोऊ गई। हियहुकी गई हेराय ॥
कहहिं कबीर जाकी चारों गई। ताको काह उपाय१७८॥

टीका गुरुमुख—ऊपरकी दोऊ स्थूल सूक्ष्म औ भीतरकी दोनों कारण महाकारण; सो गुरु कहते हैं कि—चारों देह जाकी हेराय गई लय होगई सो कैवल्य ब्रह्म निर्विकल्प दशाको प्राप्त भया। अब तासो कछु जोर

चलता नहीं औ वो किसीको मानता भी नहीं। उसपर न वेदका हुकुम, न काहूका हुकुम, वो अजित आत्मा भया। अब उसपर किसीकी गुरुवाई चलती नहीं। वो सर्वरूप आपही हो रहा है, बन रहा है ताते किसीकी बसाती नहीं। ऐसे नरको पारख भी कहाँसे प्राप्त होय ? जाको अपनी भी स्मृति नहीं, सदा उन्मत्त माफिक रहता है। अरे झाँईमें अन्धा भया, ऊपरकी दोनों आँखे फूटी, जो देखता है कि सब जगत् पृथक् पृथक् न्यारा है औ फिर चराचर एकही आत्मा करके मानता है ताते ऊपरकी भी गई औ भीतरकी बूझ बुद्धि दोनों हेराय गई; जो सब नाना बानी बोलता है औ सब पिंड ब्रह्मांडकी हकीकत पृथक् करके जानता है। फिर कहता है कि मेरी सत्ता बिना कछु न्यारा नहीं ताते सब मेराही स्वरूप है। ऐसा कहिके हियेहूकी बुद्धि नशाई गई। अरे सर्व औ सर्वका जाननेवाला न्यारा, भास औ भासिक न्यारा, अनुमान औ अनुमानिक न्यारा, कल्पित औ कल्पनेवाला न्यारा। आप तीन कालमें न्यारा होके अपनेको जानता नहीं तो ऐसे जड़ अंध सो क्या करना ? ये अर्थ ॥ १७८ ॥

साखी--केते दिन ऐसे गया। अनरूचेका नेह ॥
ऊषर बोय न ऊपजै। जो घन बरसे मेह ॥ १७९ ॥

टीका गुरुमुख--अनरुचा कहिये ब्रह्म, तासे नेह किया जीवने; ताते केतेही दिन बीत गये, धोखा कछु छूटा नहीं औ आवागमन कछु रहित भया नहीं। ताते अनेक योनिनकी मुर्चा लगा औ अनेक दाँव गर्भाग्निमें जरके जीव ऊषर निस्तेज हो गया। अब इसे कछु अपने पदकी रुची रही नहीं। अब ऐसे जीवसे केतेही दिन नेह लगावो औ विचारकी वर्षा करो; परंतु कछु उगनेका नाहीं, यथार्थ समझनेका नहीं। जैसा ऊषरमें बीज बोया औ केता भी पानी बरसा; परंतु कछु उगता नहीं। ये अर्थ ॥ १७९ ॥

साखी--मैं रोवों यह जगतको। मोको रोवै न कोय ॥
मोको रोवै सो जना। जो शब्द विवेकी होय ॥ १८० ॥

टीका गुरुमुख–मैं जगत्के कल्यान निमित्त रोता हौं, जामें जगत्का भ्रम छूटे औ आवागमनसे जीव रहित होय। नाना दुःखनसे जीव बचै औ कैसेउ पारख पदको जीव मिलै; येही वास्ते मैंने नाना प्रकारसे समुझाया। परन्तु कोई समझके पारख पदकी प्राप्ति निमित्त अपने दुःखको देखके रोता नहीं औ अपने बंधनका तिरस्कार भी कोई करता नहीं। तो जो कोई शब्दका विवेक यथार्थ करेगा सोई संपूर्ण विषय बंधनका तिरस्कार करके पारखरूप होयगा। औ मैं पारख स्वरूपको मिलनेके वास्ते रोया गाया प्रेमसे; क्योंकि मैं निरुपाधी पारख, मेरेको कछु उपाधी संभवती नहीं। मैंने इस जगत्के निमित्त नाना प्रकारकी उपाधी उठाय लिया; परंतु इस जगत्को कछु सूझता नहीं। ये अर्थ ॥ १८० ॥

साखी--साहेब साहेब सब कहै। मोहि अँदेशा और ॥
साहेबसे परचय नहीं। बैठेंगे केहि ठौर ॥१८१॥

टीका गुरुमुख–सबका साहेब जीवरूप, सो जीवरूपकी तो पारख किसीने की नहीं औ धोखेको सब साहेब साहेब कहते हैं, तो इनकी स्थिति कहाँ होयगी ? ये अभिप्राय ॥ १८१ ॥

साखी–जीव बिना जीव बाँचे नहीं। जीवको जीव अधार ॥
जीव दया करि पालिये। पंडित करो बिचार॥१८२॥

टीका गुरुमुख–हे पंडित ! हे बुद्धिमान् ! तुम विचार करके देखो कि-जीवन जीव है। जीव बिना जीव बचता नहीं। एक जीवके आधारसे एक जीव बचता है। देखो-इस जगमें प्रसिद्ध है कि-हाथी, घोड़े, गदहे, गाय, भैंस, बैल आदि मनुष्यके आधारसे रहते हैं औ मानुष भी एकके आधारसे एक रहते हैं। आधार बिना किसीका गुजारा होता ही नहीं; ताते जीव दया करके पालना। कोई जीव मात्रको दुःख देना नहीं, यथाशक्ति जहाँलग बने तहाँलग जीवका रक्षण करना। ये अर्थ ॥१८२॥

साखी–हम तो सबकी कही। मोको कोइ न जान ॥
तब भी अच्छा अब भी अच्छा। युग युग होऊँ न आन१८३॥

टीका गुरुमुख—मैंने तो सबकी कसर औ कल्पना औ सिद्धांत कहा, पर मेरेको किसीने नहीं जाना । तो जासे सब परखनेमें आवै सो पारख मैं तब आदिमें भी अच्छा स्वच्छ विकार रहित औ अब वर्तमानमें भी अच्छा स्वच्छ विकार रहित औ युग युग भविष्य समयमें भी अच्छा स्वच्छ पारख स्थिर विकार रहितः कधी दूसरा नहीं होता । ये अर्थ ॥ १८३ ॥

साखी—प्रकट कहौं तो मारिया । परदा लखै न कोय ॥
सहना छिपा पयारतर । को कहि बैरी होय ॥१८४॥

टीका गुरुमुख—अरे जो कछु है सो ये जीव है, ऐसा प्रगट करके कहोगे तो ये पक्षवादी मूर्खजन तुम्हारेसे विरुद्धता करके तुम्हारेको मारेंगे औ गुरुवा लोगोंने जो ब्रह्म परदा दिया है सो परदेको तो कोई लखते नहीं, सब परदेके आसरेमें रहि जाते हैं । औ सहना कहिये ब्रह्मादि गुरवा लोग, सो पयार वेद, ताके आसरेमें छिपे हैं । पयार कहिये मिथ्या खाली घास, जामें कछु जमा नहीं । तैसा वेद मिथ्या बकबाद, तामें कछु जमा नहीं; पर कौन कहिके बैरी होय ? ये अर्थ ॥१८४॥

साखी--देश विदेश हौं फिरा । मनही भरा सुकाल ॥
जाको ढूँढत हौं फिरों । ताका परा दुकाल ॥१८५॥

टीका गुरुमुख—देश पक्के तत्त्व औ विदेश कच्चे तत्त्व, सो पक्के तत्त्व धारण करके कच्चे तत्त्वनमें मैं जीवनके कल्याण निमित्त फिरा । सो जहाँ तहाँ मनही भरि रहा है, समस्त जीव मिथ्या मानंदीके पक्षमें परे हैं । पर जो मुमुक्षु निर्पक्ष जीवको मैं ढूँढता हौं सो ताका दुकाल परा है, कोई बहुत नजर नहीं आते । ये अर्थ ॥ १८५ ॥

साखी--कलि खोटा जग आँधरा । शब्द न माने कोय ॥
जाहि कहौं हित आपना । सो उठि बैरी होय ॥१८६॥

टीका गुरुमुख—जेती बानी गुरुवा लोगोंने कही सो सब खोटी औ जगत् तो अंधा, पारख बिना खोटाई नजर नहीं आती; ताते शब्द कोई

मानता नहीं। जिसको मैं अपना प्यारा जानके कहता हौं सोई उठके बैरी होता है। ऐसी दशा इस जीवकी भई, अपना हित अनहित नही जानता। अब इसे क्या करना ? ये अर्थ ॥ १८६ ॥

साखी--मसी कागद छूवों नहीं। कलम गहों नहिं हाथ ॥
चारिउ युगका महातम। कबीर मुखहि जनाई बात १८७॥

टीका गुरुमुख—कबीर कहिये जीवको, सो हे जीव! तेरेको मालूम होनेके वास्ते सकल बन्धन छूटनेके वास्ते चारों युगका माहात्म्य सकल मुखहीसे जनाया, कुछ मैं कलम, कागद, मसी, दवाइत छूता नहीं। ये अर्थ ॥ १८७ ॥

साखी--फहम आगे फहम पीछे। फहम दहिने डेरि ॥
फहम पर जो फहम करै। सो फहम है मेरि ॥१८८॥

टीका गुरुमुख—फहम कहिये, समझ कहिये, स्फुर्ती कहिये, याद कहिये; सो समझ तीन प्रकारकी-आदि अन्त औ मध्य। तीन कालमें एक आत्मा। जो आदि, सोई अन्त, सोई मध्य; सुवर्ण भूषणन्याय, ये समझ ब्रह्मज्ञानकी। सो ऐसी समझको जो समझती है औ न्यारी रहती है सो समझ है मेरी। फहम आगे कहिये-जो कुछ होनेवाला है महा प्रलय पर्यन्त सो भविष्यकी समझ औ स्फुर्ती, औ फहम पीछे कहिये-जो उत्पत्ति आदिसे आज पर्यन्त गत वर्तमान भया, ताहीकी समझ औ स्फुर्ती कोई रखते हैं सो भूतप्रतिबन्ध कहिये। ऐसी भूतप्रतिबन्धकी समझ जा समझसे मालूम होय औ संपूर्ण समझ की कसर निकारे सो मेरी समझ है। औ वर्तमानकी समझ जो अब वर्तता है। तामें दो प्रकार-एक दक्षिण मार्ग, एक वाममार्ग। सो वाममार्ग कहिये मलीन औ दक्षिण मार्ग कहिये शुद्ध, येही दो प्रकारकी समझ औ स्फुर्ती औ एक शुद्ध वर्तमान वेदांतकी समझ। सो ताहूकी समझ जा समझसे मालूम होय सो समझ मेरी है। भूत, भविष्यत, वर्तमान तीनों फहमन पर जो फहम करै सो गुरुकी समझ फहम है। भूत फहम योग, भविष्य

फहम कर्म, वर्तमान फहम ज्ञान; ये तीनों फहमनपर जो फहम करै औ सब फहमन पर जो फहम करै, सबकी कसर निकारै सो पारख मेरी फहम है। ये अभिप्राय! औ भूत भविष्य वर्तमान त्रिकाल ज्ञान एक योगसे होता है। सो योगको परखके तीनों फहमन पर जो फहम करै ताही फहम को गहिके थिर होना। औ फहम कहिये ज्ञान, सो तीन प्रकारका- एक शास्त्र ज्ञान, दूसरा परोक्षज्ञान, तीसरा अपरोक्षज्ञान। सो शास्त्रज्ञान- भूत औ परोक्षज्ञान भविष्य औ अपरोक्षज्ञान वर्तमान। संकल्प विकल्पा- त्मक फहम औ सविकल्प फहम औ निर्विकल्प फहम; इस प्रकार सब ज्ञानिनका ज्ञान और सब फहमनकी फहम जासे होय सो मेरी फहम है। ये अर्थ ॥ १८८ ॥

साखी—हद चले सो मानवा। बेहद चलै सो साध ॥
हद बेहद दोऊ तजै। ताकर मता अगाध ॥१८९॥

टीका गुरुमुख--हद कहिये वेद प्रमाण वर्णाश्रमके कर्म यथाविधि आचरण करै सो मनुष्य औ बेहद कहिये जो संपूर्ण वर्णाश्रमके कर्मनको निषेध करके ज्ञानमार्गसे चले सो बेहद, सोई साधु। औ जाने कर्म धर्म उपासना औ ज्ञान संपूर्ण परखके तज दिया औ आप पारखपदपर ठहरा; तिनका मत कोई जाननेका नहीं। वो सर्व मतनका पारखी, वाको पारखी बिना कौन जाने? ये अर्थ ॥ १८९ ॥

साखी--समुझेकी गति एक है। जिन समुझा सब ठौर ॥
कहहिं कबीर ये बीचके। बलकहिं औरकी और ॥१९०॥

टीका गुरुमुख--जाने तत्त्वमसि आदि सब सिद्धांत परखके छोड़ा औ भक्ती-ज्ञान योग आदि भाव सम्पूर्ण परखके छोड़ा औ पारख रूप समझा सो सब पारखी, उनकी गति एक पारख है। अरे जाने पारख भूमिका समझी औ सब ठौर परखके छोड़े तिनकी गति सबकी एक है। एक रहनी, एक बानी, एक पारखरूप; उनमें दुबिधा कछु संभवे नहीं। और ये नाना बानी, नाना सिद्धांतनमें फँसे हैं सो सब बीच भवसागरके

जीव, कछु पारख भूमिकाके नहीं। सो बलकहिं औरकी और। कोई कर्मकाँडही बताता है, कोई कालवादी कालवाद करता है, कोई कर्ता-वाद करता है, कोई योगवाद करता है, कोई प्रकृतिवाद करता है, कोई आत्मवाद करता है, कोई उपासनावाद करता है, कोई मतवाद करता है। ये सब बीचके गाफिलीके बंधे जीव हैं, कछु पारखी नहीं, ऐसा गुरु कहते हैं। ये अर्थ ॥ १९० ॥

साखी–राह बिचारी क्या करे। जो पंथि न चले बिचार ॥
अपना मारग छोड़िके। फिरें उजार उजार ॥१९१॥

टीका गुरुमुख--पारखी गुरुने जो राह बताई सो राहसे पंथी चलनेवाले जो विचारके न चले तो राहने क्या करना? अरे पंथीके चलनेके वास्ते गुरुने पंथ बनाया है; परंतु विचारके चलेगा तब पारख गुरुपदको पावेगा। औ अपना विचारका मार्ग छोड़के जो कर्म, उपासना, नाना बानी, योग, ज्ञानादिकनमें परेगा, सो उजार उजार भ्रमहीमें फिरेगा। उजार कहिये शून्य, उजार कहिये जहाँ रस्ता नहीं औ बस्ती नहीं, सोई ब्रह्म जगत रूपी। सो जगत्‌मेंही उपजता विनसता है, ब्रह्म पुकारता फिरता है। अरे आप चैतन्य, अपना मार्ग विचार, सो जिनने छोड़ा सो भ्रममें पड़ा। ये अर्थ ॥ १९१ ॥

साखी–मूवा है मार जाहुगे। मुये की बाजी ढोल ॥
सपन सनेही जग भया। सहिदानी रहिगो बोल ॥१९२॥

टीका गुरुमुख–जिनने वेद शास्त्र पुराण बनाये और बड़े-बड़े सिद्ध मुनि जगमें स्वप्नवत् होके मर मर गये, जिनके नाम पर अब संसारी जीव ढोल बजाय-बजायके नाचते हैं ये भी उनकी कथनी गाय-गाय मर जायेंगे। आखिर मुवनके नामसे ढोल बजाये कछु गुरुपदकी प्राप्ति होती नहीं औ अवतारादि ऋषि मुनि आदि कोई पारख पदको प्राप्त भये नहीं, स्वप्नसे नर जन्म पाके मर मर गये। परंतु उनकी निशानी रही है उनको बानी सो विचार करके देखो, सब प्रथम भासमें अरुझे। ये अर्थ ॥ १९२ ॥

साखी—मुवा है मरि जाहुगे। बिन सिर थोथी भाल ॥
परेहु करायल वृक्षतर। आज मरहुकी काल ॥१९३॥

टीका गुरुमुख—आगे तुमने जिनकी मानंदी की सो सब मर गये औ उनके भरोसे तुम बैठे हो सो तुम भी मर जावोगे। बिनशिर कहिये ब्रह्म, जो सबका शिर बन रहा है, वह शिर काहेका ? वह कुछ शिर नहीं। थोथी भाल कहिये झूठी भाल, भाल नाम बानीका, करायल वृक्ष कहिये जो गुरुवालोगोंसे कराया अनुमान; सोई करायल वृक्ष ईश्वर कहिये। याका अभिप्राय ऐसा है कि, थोथी बानी कहिये वेद, ताके प्रमाणसे कोई ब्रह्म बनके मर गये औ कोई अपने ऊपर दूसरा ईश्वर मानके तरे कहिये उसके आश्रित होके पड़े हैं। वे भी आज कालमें मर जावेंगे मिथ्या बानीके भरोसे। ये अर्थ ॥ १९३ ॥

साखी—बोली हमारी पूर्वकी। हमैं लखै नहिं कोय ॥
हमको तो सोई लखै। जो धूर पूरबका होय ॥१९४॥

टीका गुरुमुख—पूर्व कहिये आदिकी; आदि कहिये हंसरूपकी हमारी बोली ताते हमको कोई लखता नहीं। अब हमें औ हमारी बोली सोई लखेगा जो निश्चय हंसरूपका जीव होयगा। ये अर्थ ॥ १९४ ॥

साखी—जाके चलते रौंदे परा। धरती होय बेहाल ॥
सो सावत घामें जरे। पंडित करहु बिचार ॥१९५॥

टीका गुरुमुख—या जीवके चलते सारा रौंदा परा औ नाना पंथ, नाना रस्ते चले औ सत्त आदि धरती बेहाल भई, पक्कीकी कच्ची भई सो सावत मानुष घाममें जरे। घाम कहिये ताप, सो तीन प्रकारके तापमें जरता है। हे पंडित बुद्धिमान्! तुम विचार करके देखो—तो जो सकल सृष्टीका आदि कर्ता औ सकल बानी वेदका कर्ता सोई बानी वेदके तापनमें औ सृष्टीके त्रिविध तापनमें जर रहा है। जैसा बाँसमेंसे अग्नि निकरा औ बाँसहीको जराया। ये। अर्थ ॥ १९५ ॥

साखी—पाँवन पुहुमी नापते। दरिया करते फाल ॥
हाथन पर्वत तौलते। तेहि धरि खायो काल ॥१९६॥

टीका गुरुमुख—वामन, हनुमंत, कृष्ण आदि सबको पंचमुखी अभिमान जो काल है, ताने धरि खाया। ये अर्थ ॥ १९६ ॥

साखी--नौमन दूध बटोरिके। टिपके किया बिनाश ॥
दूध फाटि काँची भया। हुवा घृतका नाश ॥१९७॥

टीका गुरुमुख—दूध कहिये जीवरूप, आठ पसेरीका मन औ नौवा जीव, पाँच तत्त्व औ त्रिगुण औ जीव एक सामिल रूप बना सो दूध, तामें टिपका अनुमान खड़ा भया कि दूसरा हमारा कर्ता ब्रह्म है। ताहिते जीव रूपका नाश भया औ फाटिके चौरासी लक्ष योनि हो गई। ताते जीवरूपका नाश हुआ, जड़वत होके नाना दुःख भोगने लगा। ये अर्थ ॥ १९७ ॥

साखी--केतनो मनावो पाँव परि। केतनो मनावो रोय ॥
हिंदू पूजे देवता। तुरुक न काहू होय ॥१९८॥

टीका गुरुमुख—चाहो इस जगत्को कितना मनावो, किसी तरहसे रोयके मनावो, चाहे पाँव परके मनावो, पर यह अपना-अपना पक्ष ऐसा पकड़े हैं कि कधी छोड़ते नहीं। हिंदू देवता पूजते हैं औ तुरुक बेनमून बेचून मानते हैं। तो दोनों मिथ्या पक्षमें फँसे हैं। ये अर्थ ॥ १९८ ॥

साखी--मानुष तेरा गुण बड़ा। मासु न आवै काज ॥
हाड़ न होते आभरण। त्वचा न बाजन बाज ॥१९९॥

टीका गुरुमुख—सत विचार दया शील धीरज आदि जो गुण होय सो मानुषकी अधिकताई है। ये गुण मानुषका बड़ा है जासे निजपदकी प्राप्ति होती है, और कछु वस्तु कामकी नहीं। हाड़नका कछु गहना बनता नहीं औ चामका कछु नगारादि बाजा बनता नहीं औ माँस भी कोई काममें नहीं आता। ताते मानुषने अपने मानुष गुणको जानके ग्रहण करना। ये अर्थ ॥ १९९ ॥

साखी—जो मोहि जानै। ताहि मैं जानों ॥
लोक बेद का। कहा न मानों ॥२००॥

टीका गुरुमुख—सत्त विचार सहित जो कोई मेरेको जानता है पारखरूप, ताको मैं जानता हौं; उससे कधी न्यारा होता नहीं । औ लोक वेदके प्रमाणसे मेरेको कछु काम नहीं । अथवा लोक वेद सबका पक्ष छोड़के जो कोई सतभावसे मेरेको ही जानते हैं तिनको मैं सदा जानता हौं, कधी विसारता नहीं । उस जीवके सकल विघ्न बंधन दूर करता हौं औ उसके भोजन छाजन वस्त्रादि संकल्प सब अपनी इच्छा-मात्रसे पूर्ण करता हौं; परंतु सकल भाव छोड़के जाका लक्ष सदा मेरे तरफ है ताके तरफ मेरा भी लक्ष है। जैसा कोई सूर्यकी तरफ लक्ष रखता है तो सूर्यका लक्ष उसीकी तरफ है । औ जिसने सूर्यकी तरफसे मुँह छिपाया, और तरफ देखने लगा तो सूर्यका लक्ष भी उसकी तरफ कछु नहीं; तद्वत् । ये अर्थ ॥ २०० ॥

साखी--सबकी उत्पति धरती । सब जीवन प्रतिपाल ॥
धरति न जानै आप गुण । ऐसा गुरु बिचार ॥२०१॥

टीका मायामुख—जैसी पृथिवी सबकी अधिष्ठान,पृथिवीमें अंकुरादि पर्वतादि पदार्थ सब पैदा होते हैं औ पृथिवीसे उनका प्रतिपाल होता है औ पृथिवीमें लय होते हैं । औ अंडज, पिंडज, ऊष्मज आदि खानी सब पृथिवीसे पैदा होती है, अन्नमय कोश पृथिवीसे पैदा होता है औ सबका प्रतिपाल पृथिवी करती है, आखिर अपनेमें मिलाय लेती है । तद्वत् आत्मा सर्वाधिष्ठान, सकल जीव वहाँसे पैदा होते हैं। सकल जीवकी जन्मभूमिका आत्मा औ सकल जीव अधिष्ठानहीमें रहते हैं, आखिर आत्मामें ही मिल जाते हैं । औ आत्मामें जानना और नहीं जानना कछु नहीं, पृथिवीवत् आत्मा । ऐसाही गुरु बिचार करना, गुरुको अधिष्ठान आत्मारूप जानना । ये अभिप्राय ॥ २०१ ॥

साखी--धरती जानति आप गुण । कधी न होती डोल ॥
तिल तिल गरुवी होती । रहत ठिकोंकी मोल॥२०२॥

टीका गुरुमुख—धरती अपने गुणको नहीं जानती, जो अपने गुणको जानती तों कधी चलायमान न होती। तद्वत् जीव अपने गुणको नहीं जानता कि-"मैं सबका उत्पत्ति कर्ता औ पालन कर्ता। औ मेरे आधारसे पिंड ब्रह्मांड सब खड़ा है।" ऐसा नहीं जानता ताते चलायमान होता है औ दूसरा कर्त्ता औ नाना देवता कल्पि कल्पिके मानता है। जो अपने गुणको जानता तो सबका देवता आपही था, दूसरा कर्त्ता कल्पनेका कुछ काम नहीं था! पर अपनेको न जानके कल्पा; नहीं तो आपी अपनेको जानते-जानते तिल-तिल गुरुवा होता, महा सिद्धराज कहाता औ जगत्में मानुष बेकीमत कर्त्ता ईश्वरके मोल आपही विकाते। ये वास्तविक। परंतु दूसरा कर्त्ता औ नाना देवता मानके उनके गुलाम बने, ताते कौड़ी-कौड़ीको महँगे भये। आखिरको थके तब सिद्धांत किया कि-"सर्व आत्मा अद्वैत पृथिवीवत्, सोई अपना रूप" ये निश्चय करके जड़वत् भये। अपना चैतन्य गुण भूलके सकल ज्ञान नाश किया, ताते पारख पदको प्राप्त भया नहीं औ नाना योनिमें भरमा। सकल जड़ उपाधी अपने शिरपर धर लिया ताहीते कौड़ी-कौड़ीको महँगा भया। ये अर्थ ॥ २०२ ॥

साखी--जहिया क्रितम ना हता। धरती हती न नीर ॥
उत्पति परलय ना हती। तबकी कहैं कबीर ॥२०३॥

टीका गुरुमुख—जब जगत् ना हता, पृथिवी, जल तेज वायु आकाश चन्द्र सूर्य आदि कछु ना हते औ उत्पत्ति प्रलय आदि कछु न हती तबकी वानी ये जीवने अपनी कल्पनासे करके कही; ताते सबका कर्ता जीव रूप। ये अर्थ ॥ २०३ ॥

साखी--जहाँ बोल तहाँ अक्षर आया। जहाँ अक्षर तहाँ मनहि दृढ़ाया ॥
बोल अबोल एक होय जाई। जिन्ह यह लखा सो बिरला होई २०४॥

टीका गुरुमुख—जहाँ बोल तहाँ अक्षर आया। अक्षर कहिये वानी औ अक्षर वानीसे जो कछु दृढ़ापन भई, मानंदी भई सो मन, ताते बोलना अन-

बोलना दोनों छोड़के कोई सर्व आत्मा बने । याका अभिप्राय ऐसा है कि कोई सगुणमें वानीकी मानंदी किया औ कोई निर्गुणमें मानंदी किया मनकी । कोई सगुण निर्गुण दोनों छोड़के एक आत्मा हो गये । कोई त्वंपद माना, कोई तत्पद माना, कोई असीपदमें एक हुआ । पर जो ये तीनों पद परखके पारख रूप हुआ सो बिरला कोई । ये अर्थ ॥ २०४ ॥.

साखी—तौलौं तारा जगमगे । जौ लौं उगै न सूर ।
तौलौं जीव कर्मबश डोले । जौलौं ज्ञान न पूर ॥२०५॥

टीका गुरुमुख—जब लग पूरा ज्ञान नहीं होता तबलग जीव कर्मन के वश होके चौरासीमें फिरता है औ जब पूरा ज्ञान भया तब गुरु-पदका अधिकारी भया । संपूर्ण कर्म भ्रम छोड़के निर्पक्ष भया तब उसके सकल कर्म विनाश भये । जैसी तारेकी ज्योति अँधियारेमें जगमगाती है औ जब सूर्य उगा तब सभी लय हो गई, छिप गई । तैसा जबलग अज्ञानरूपी अँधियारा है तब लग कर्मनके फल जगमगाते हैं औ ज्ञानरूपी सूर्य निकरा तब सभी लय हो गये । ये अर्थ ॥ २०५ ॥

साखी—नाँव न जानै गाँवका । भूला मारग जाय ॥
काल गड़ेगा काँटा । अगमन खसी कराय ॥२०६॥

टीका गुरुमुख—संपूर्ण ब्रह्म कहिके ब्रह्मज्ञानी लोग भूले । अरे ब्रह्म कौनसे गाँवमें रहता है ? जाके नामका भी ठिकाना नहीं औ वेद जाको नेति नेति करके गावता है । जाके गाँवका भी ठिकाना वेद जानता नहीं । आखिर जगत्को ब्रह्म ठहरावता है वेद । औ अनेक भूलें मार्ग वेद गावता है । जो जगत् सब ब्रह्मरूप है तो नाना मार्ग वेद किसे समुझाता है ? औ वेद भी ब्रह्मसे उपजा, ऐसा महान् ऋषी बोलते हैं । तो वेद क्या ब्रह्मसे पैदा होके ब्रह्मको उपदेश नाना मार्ग कहने लगा ? तो ब्रह्महीं बड़ी भूलका रूप है औ वेदके मार्ग सब भूले मार्ग, ता मार्गसे संसार धोखेमें चला जाता है । गाँव कहिये ब्रह्म, सो ताका

नाम कोई जानता नहीं। अरे ब्रह्मका नाम भ्रम, जीवका अध्यास, कछु वस्तु नहीं; सो अध्यास वश जीव आवागवनमें परा है। तो जब काल हो जायगा, चोला छोड़ेगा तब अध्यास ही काँटा होके तेरेको गड़ेगा, गर्भवासमें डारेगा; ताते परखके आगे ही तोर डार। ये अर्थ ॥२०६॥

साखी–संगति कीजै साधुकी। हरै औरकी ब्याधि ॥
ओछी संगति क्रूरकी। आठों पहर उपाधि ॥२०७॥

टीका गुरुमुख–संगत साधु पारखीकी करना, जाते जीवको नाना व्याधि जरामरणादि लगी है सो सब छूट जाय। जो कल्पना, अनुमान, भास, अध्यासादि नाना ब्याधिको हरै सो साधु, ताकी संगत करना। औ क्रूर कहिये बेपारखी भ्रमिक, जो जड़ चैतन्य एकमें सानते हैं; उनकी संगत न करना। वह आठों पहर कर्म, ज्ञान, योग, भक्ति, उपासनाकी उपाधि लगायेंगे, ताते तेरेको जरा मरणकी ब्याधि कुछ छूटनेकी नहीं। ये अर्थ ॥ २०७ ॥

साखी--संगतिसे सुख ऊपजै। कुसंगतिसे दुख होय ॥
कहहिं कबीर तहाँ जाइये। जहाँ अपनी संगति होय॥२०८॥

टीका गुरुमुख–पारखी संतकी संगतसे सुखकी प्राप्ति होती है औ बेपारखी असत्संगी देह अभिमानी बिषयासक्त, तिनका संग करनेसे दुःखकी प्राप्ति होती है। ताते गुरु कहते हैं कि-तहाँ जाइये जहाँ अपनाइत स्वदेशीय, स्वजातीय संगति होय औ विजातीय, विदेशीय कुसङ्गति, ताको त्याग करिये। ये अर्थ ॥ २०८ ॥

साखी–जैसी लागी ओरकी। वैसी निबहै छोर ॥
कौड़ी कौड़ी जोरिके। पूंजी लक्ष करोर ॥२०९॥

टीका मायामुख--जैसी प्रीति ओरसे लगी तैसी छोरलो निर्वाह हो। जबसे भगवत् भक्तीकी प्रीति लगी तबसे जबलों चोला रहै तबलों निबहै तो भगवत प्राप्ति सहजै होय। जैसे कौड़ी-कौड़ी जोरिके लाखों करोरों की पूंजी जमा होती है, ऐसी भगवत् प्राप्तिकी साधना थोड़ी-

थोड़ी करते-करते बाचांश छूट जाता है औ लक्षांश प्राप्त होता है। फिर लक्षांशके ऊपर परम अद्वैत भगवत् स्वरूपका अनुभव होता है। शनैः शनैः लक्ष जोड़ते-जोड़ते परम सिद्ध होता है। ये अर्थ ॥ २०९ ॥

साखी—आजु काल दिन कै इकमें। अस्थिर नाहिं शरीर ॥
कहहिं कबीर कस राखि हो। काँचे बासन नीर ॥२१०॥

टीका गुरुमुख--अरे कहाँ लग साधना करोगे?औ कब सिद्ध होगे? ये शरीर तो असत्य है, आज नाशे या काल नाशे या कुछ दिनमें नाश होयगा नाशमान शरीर, कछु, स्थिर नहीं। सो नाना साधना क्रिया करके सिद्ध होनेके वास्ते काँचे बासनमें पानी कबतक रक्खोगे? कच्चे चोलेमें श्वासा कबतक रक्खोगे? एक दिन गाफिलीमें निकर जायगा। ये अर्थ ॥ २१० ॥

साखी—बहु बंधन से बाँधिया। एक बिचारा जीव ॥
की बल छूटै आपने। किरे छुड़ावै पीव ॥२११॥

टीका गुरुमुख—अरे एक विचारा जीव अनेक वेद शास्त्र, जाति, पाँति, लज्जा, शरम, विषय, रोग, स्त्री, पुत्र, देह, कुटुम्ब, कल्पना, अनुमान, भास, अध्यासादि बंधनमें बाँधा गया। अब कि तो इसे स्वयं विचार प्राप्त होय तब छूटै, नहीं तो गुरुकृपा करके सकल बंधन परखायके तोड़े तब छूटै, मुक्त होय। ये दोनों उपाय छोड़के मुक्त होनेका आन उपाय कछु नहीं। ये अर्थ ॥ २११ ॥

साखी—जीव मति मारो बापुरा। सबका एकै प्राण ॥
हत्या कबहुँ न छूटि हैं। जो कोटिन सुनो पुराण॥२१२॥

टीका गुरुमुख—अरे ये जीव अपनी गाफिलीसे बड़ा लाचार भया है, याको मारो मत, दुःख मत देव। अरे जैसा अपना जीव वैसा सबका जीव, यामें कछु भेद नहीं। अगर जीव हिंसा करोगे तो उसकी हत्या कधी छूटनेकी नहीं। जो कोटि, पुराण सुनोगे तो भी जीवका दाइया

कछु छुटनेका नहीं; क्योंकि पुराण शास्त्रादि बानी सब जड़ याको सुननेसे चैतन्यका दाइया कछु छूटनेका नहीं; याते दया धारण करो। ये अर्थ। जो तुम दया रक्खोगे तो तुम्हारे पर भी दया होयगी औ बैर घात रक्खोगे तो तुम पर भी बैर घात होवेगा। ये अर्थ ॥ २१२ ॥

साखी–जीव घात ना कीजिये। बहुरि लेत वै कान ॥
तीर्थ गये न बाँचि हो। कोटि हिरा देहु दान ॥२१३॥

टीका गुरुमुख–जीव घात कधी न करना; अगर करैं तो लौटके दूसरा तन धरके बदला लेयगा। चाहो महातीर्थनमें जाय कोटिन हीरा दान करो तब भी जीवका बदला कछु छूटनेका नहीं; क्योंकि तीर्थ औ दान जड़, ये चैतन्यका बदला चुका सकनेके नहीं। ये अर्थ ॥ २१३ ॥

साखी–तीरथ गये तीन जन। चित चंचल मन चोर ॥
एकौ पाप न काटिया। लादिनि मन दश और॥२१४॥

टीका गुरुमुख–तीर्थ तीन प्रकारके–बाहिर तीर्थ–गंगादि पुष्करादिक, अंतर तीर्थ–इंगला, पिंगला, सुषुम्नादिक, तृतीय ज्ञानतीर्थ; सो तीन जन तीन तीर्थको गये। चित्त कहिये ज्ञानी, सो ज्ञानतीर्थमें गये औ आत्मा बने। तो एकौ पाप काटा गया नहीं,सकल पापके अधिष्ठान भये औ दश मन पाप अपने ऊपर लाद लिया। अरे पहिले एक देहमें थे तो एक देहके पापके अधिकारी थे औ आखिर आत्मा भये तो सकल देहके पापके अधिकारी भये। 'दशों दिशामें पूर्ण हौं' ऐसा माना सोई दश मन पाप लाद लिया। पाप कहिये दुःख औ पाप कहिये कर्तब्य, सो एक भी कर्तब्य ज्ञानसे छूटा नहीं। जो सर्व आत्मा हुआ तो सकल कर्तब्य इसपर आये। ये अर्थ। औ चंचल कहिये कर्मी उपासक रजोगुणी, सो बाहिर तीर्थनमें गये। तासे एक भी अभिमान औ कल्पना कटी नहीं। अभिमान कल्पना सोई पाप,सो दश मन-चार वेद,

छौ शास्त्र; इसकी मानंदी औ अभिमान शिरपर चढ़ा, एक भी कटा नहीं। कि हम बड़े उपासक, हम बड़े तीर्थवासी, हम बड़े कर्मी, हम बड़े, वैदिक, हम बड़े शास्त्री, हम बड़े मंत्रिक, हम बड़े पवित्र, हम बड़े कुलीन, हम बड़े बैरागी, हम बड़े धर्मात्मा; ये दश मन पाप ऊपर लाद लिया। ताते नाना दुःख भोगी भये। जैसा कर्तव्य करना वैसा भोग भोगना, ये पीछे लगा। ये अर्थ। औ चोर कहिये योगी, जो सुषुम्ना तीर्थनको प्राप्त भये औ दश इंद्रीकी मानंदी सोई दश मन पाप शिर पर लाद लिया। 'इंद्री मन औ प्रकृति सब लय करना तब मुक्त' ऐसा मानके समाधी प्राणायाम करने लगे, पवन चुराने लगे; ताते दश इंद्रीकी वासना उनके भीतर रही। औ भीतरकी इंद्रीसे शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध आदि विषयनमें आसक्त भये। मुद्रादि, रूप देखने लगे, अनहद शब्द सुनने लगे; अन्तःकरणादि स्पर्श करने लगे, अमृतादि रस चाखने लगे, अष्टपद्मादि गंध लेने लगे; इस प्रकारसे सूक्ष्म विषय भोक्ता भये। तो स्थूलसे सूक्ष्म, सूक्ष्मसे स्थूल, ओतप्रोत दश प्रकारके विषय अपने ऊपर लादे। एक विषय भी इनसे कटा नहीं; ताते देह त्याग होय उपरांत फिर गर्भवासका दुःख इनको बना है, कछु छूटा नहीं। पाप कहिये विषय। ताते ज्ञान उपासना योग, यही तीन मार्ग दुःख छूटनेको बनाये; परन्तु परखके देखो तो इनसे एक दुःख भी छूटा नहीं। ये अभिप्राय ॥ २१४ ॥

साखी--तीरथ गये ते बहि मुये। जूड़े पानि नहाय ॥
कहहिं कबीर सुनो हो संतो। राक्षस होय पछिताय॥२१५॥

टीका गुरुमुख—इन तीनों प्रकारके तीर्थको जो गये सो धोखेमें बहिके मरे। कोई प्रयागको गये औ कल्पवास किया। देहमें तामस लायके ठंढमें परे, जूड़े पानीमें जलशयन किया, नहाये। औ अन्न वस्त्र छोड़के देहको महाकष्ट देके जूड़े पानीमें नहाते फिरते हैं। ये तामसी कर्मनसे राक्षसादि योनि पावेंगे और पीछे बहुत पछितायँगे। ये अर्थ। तामसी जीव सोई राक्षस, ये गीताका प्रमाण है ॥ २१५ ॥

साखी--तीरथ भइ बिष बेलरी । रही युगन युग छाय ॥
कबीरन मूल निकंदिया । कौन हलाहल खाय ॥२१६॥

टीका गुरुमुख–तीन प्रकारके तीर्थ सोई विषकी बेली भई औ युगानुयुगसे जीवन पर छाय रही, सकल जीवनको गाफिल किया । युगानुयुगसे गुरुवा लोगोंने मूल निकंदिया; मूल नाम मनुष्य, ताको गुरुवनने औ वेदने भरमाया । अब इनके संग हलाहल कौन खायगा ? अब कौन उपाधीमें पड़ेगा ? जो बेपारखी होयेगा सो खायगा, पारखीको इनसे कौन काम ? ये अर्थ ॥ २१६ ॥

साखी--ये गुणवंती बेलरी । तव गुण वर्णि न जाय ॥
जर काटेते हरियरी । सींचे ते कुम्हिलाय ॥२१७॥

टीका गुरुमुख–बेलरी कहिये बानी, बानी कहिये कल्पना, सो हे गुणवन्ती कल्पना ! तेरा गुण वेदसे भी नहीं बरना जाता । अरे कल्पना सकल गुण वेद, शास्त्र, चौदह विद्या, चौसठ कला तेरेसे पैदा भई औ जीव सब बन्धमान होके तेरे विषयमें भूल गये । तो तेरा जर पंचमुखी अहंकार, सो ताको विवेक शास्त्रसे काट डारना तो ये जीव सुखी होता है; नहीं तो ब्रह्म आत्मा ईश्वरादि जगतादि वासनारूपी जल तेरेको सींचते जीव कुम्हिलाते हैं, तेजहीन गाफिल होके गर्भवासको जाते हैं । ये अर्थ ॥ २१७ ॥

साखी--बेलि कुढंगी फल बुरो । फुलवा कुबुधि बसाय ॥
ओर विनष्टी तूमरी । तेरो सरो पात करुवाय ॥२१८॥

टीका गुरुमुख–कल्पना बानी कुढंगी, जाके अनेक मार्ग औ अनेक सिद्धांत जीवको भरमाय देते हैं । औ बानीके फल-अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष, सो बुरे जीवको बंधन हैं । औ फूल कुबुद्धी कर्म जगत्में बसाय रहा है । 'जैसा कर्म करना वैसा भोगना' ये वासना जगत्में फैल रही है । औ हे कल्पना बानी ! पैली ओर हंस रूप लो तेरी पहुँच भई नहीं । ओर कहिये ऐली तरफ ब्रह्मानंदमें तेरा विनाश हुआ ताते तेरा सरा पात वेद

मेरेको कडुवा मालूम होता है । जीवको बंधनकारी है ताते बुरा मालूम होता है । ये अर्थ ॥ २१८ ॥

साखी--पानी ते अति पातला । धूवाँ ते अति झीन ॥
पवनहूते उतावला । सो दोस्त कबीरन कीन्ह॥२१९॥

टीका गुरुमुख–पानीसे अति पतला औ धुयेंसे अति सूक्ष्म मन, ता मनसे दोस्ती सकल जीवनने किया ताते सोई मन इनको चौरासी भरमाता है । औ जीवकी दोस्तीसे चैतन्य होता है, नहीं तो मन जड़ है । ये अर्थ ॥ २१९ ॥

साखी--सतगुरु वचन सुनो हो संतो। मति लीजे शिर भार ॥
हौं हजूर ठाढ़ कहत हौं । अब तैं समर संभार२२०॥

टीका गुरुमुख–सतगुरु ब्रह्मा, ताका वचन बेद, सो हे संतो ! वेदका वचन सुनो औ परखो, उसका भार धोखा शिरपर मत उठाय लेना । जो कोई सृष्टिका आदि कर्ता है सो जीव ही है दूसरा कर्ता कोई नहीं । तू पारख पर ठहर, मैं यथार्थ समझायके कहता हौं । अन्तःकरण चतुष्टय औ दश इंद्री औ चार बेद, छः शास्त्र, अठारह पुराण; इनसे तेरा युद्ध मचा है । सो तू सँभरके इनसे समर करेगा तो जीतेगा, नहीं तो माया तेरेको गाफिल करके समरमें जीत लेवेगी । ताते युद्धमें घबराना नहीं, जो कछु है सो तूही है, तू सँभाल । ये अर्थ ॥ २२० ॥

साखी--वो करुवाई बेलरी । औ करुवा फल तोर ॥
सिद्ध नाम जब पाइये। बेलि बिछोहा होय ॥२२१॥

टीका गुरुमुख–हे माया ! हे कल्पना ! तू बहुत बुरी, जो चैतन्य जीवको तूने अचेत किया औ तेरा फल सिद्धांत भी बुरा, जो सकल जीवनको बंध किया । तब गुरुका उपदेश पूर्वार्धमें ऐसा ठहरा कि- कल्पना औ माया ये जीवको बंधन हैं तो याका त्याग करना । सो या उपदेशके ऊपर माया गुरुवा लोग अपनी कोटी सिद्ध करते हैं सो सुनो--

उत्तरार्ध--सिद्ध नाम जब पाइये, बेलि बिछोहा होय ।

टीका मायामुख--जब कल्पना मायासे रहित भया जीव तब सिद्ध नाम पाया, आपही ब्रह्म बना । ये अर्थ । अब याका निराकरण एक साखीमें गुरु करते हैं ॥ २२१ ॥

साखी--सिद्ध भया तो क्या भया । चहुँ दिश फूटी बास ॥
अन्तर वाके बीज है । फिर जामनकी आस२२२॥

टीका गुरुमुख--सिद्ध ब्रह्म भया तो क्या भया ? एकोहं कहके चहुँदिश जगत् होके फूटा, प्रगटा, अनेक भया औ सर्वत्र बसा । औ येही स्वरूप समझके फिर ब्रह्म बना । पर अंतर याके जगत् का बीज है तो फिरभी फूटेगा, अनेक होयगा । जो इसने 'मैं' ऐसा भास माना है सोई बीज आदिमें इसे ले उठा है औ अब भी उठेगा । ताते माया कल्पनाका भी त्याग करना औ ब्रह्म भी न होना, दोनोंको परखके स्वच्छ पारख पर ठहर रहना । ये अर्थ ॥ २२२ ॥

साखी--परदे पानी ढारिया । संतो करो विचार ॥
शरमा शरमी पचि मुवा । काल घसीटन हार ॥२२३॥

टीका गुरुमुख--हे संतो ! तुम विचार करके देखो इन गुरुवालोगोंने पाप-पुण्यका औ ब्रह्म स्थितिका परदा देके बानी ढार दिया, संसारमें दृढ़ कर दिया । अब वो बानीका पक्ष सबनको पड़ा, ताते शरमा शरमी पचि मरा । औ उनकी मानंदी उनका काल बना, सो संसारमें घसीटा घसीटी चौरासीमें फिरता है । ब्रह्म है सोई परदा, जामें हंस गाफिल भया । सोई परदेके आसरे सकल बानी ढारी, ताते जीव पारख पद पाता नहीं औ शरमा शरमी पचि-पचिके धोखेमें मरता है । इनका अनुमान इनको चौरासीमें घसीटता है । तो हे संतो ! तुम विचार करके देखो औ परदा फारके पारख स्थितिको प्राप्त हो । ये अर्थ ॥ २२३ ॥

साखी--आस्ति कहौं तो कोई न पतीजै । बिना आस्तिका सिद्धा ॥
कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो । हीरी हीरा बेधा॥२२४॥

टीका गुरुमुख—अस्ती जीव, ताको आस्ती पारख कहता हौं तो कोई प्रतीत करता नहीं औ बिना आस्तीका सिद्ध ब्रह्म बना है। बिना आस्ती कहिये नास्ती, जो कछु नहीं, मिथ्या धोखा ब्रह्म; ताहीको मानके सिद्ध हो रहा है। एक जीव आस्ती औ सब नास्ती; पर कोई प्रतीत करता नहीं, सब धोखेमें भूले। हीरी कहिये, माया कहिये, काया कहिये, कल्पना कहिये, बानी कहिये, स्त्री कहिये; ताने हीरा जीव बेध जीवमें बिंध गई, ताते आस्तिपदकी प्रतीत जीवमें नहीं आती। जीव बिना आस्तिका सिद्ध बनि रहा है, नास्ति पदका गुलाम हो रहा। ये अर्थ ॥ २२४ ॥

साखी--सोना सज्जन साधु जन। टूटि जुरे सौ बार ॥
कुजन कुम्भ कुम्हारका। एके धक्का दरार ॥२२५॥

टीका गुरुमुख--सोना सज्जन साधुजन, इनका एक स्वभाव है मृदु, ताते सौ वक्त टूटके जुट सकते हैं। औ अज्ञान विषयासक्त जीव-कामी, क्रोधी लोभी, मोही जो हैं सो माटीके घड़े माफिक कठिन हैं, एक धक्केमें फूट जाते हैं; फिर कधी जुटते नहीं। ये अर्थ ॥ २२५ ॥

साखी--काजर केरी कोठरी। बुड़ता है संसार ॥
बलिहारी तेहि पुरुषकी। जो पैठिके निकरनहार॥२२६॥

टीका गुरुमुख--काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय आदि सकल प्रपंच सोई काजर कोठरी, यामें सब संसार बूढ़ता है। जो यामें पैठके फिर विचार करके सँभारके निकरा, पारखपदको प्राप्त भया; ताही पुरुषकी बलिहारी। औ काजर कहिये अज्ञान, ताकी कोठरी देह, सो सकल जीव इस देहमें पैठे हैं औ देह विषयमें सब बूड़ रहे हैं। परंतु वह पुरुषकी बलाय सब दूर भई, बलाय कहिये दुःख, सो आवागमन आदि दुःख वाही पुरुषका नासा जो पैठके बाहर निकरा, सब परखके पारख रूप हुआ। ये अर्थ ॥ २२६ ॥

साखी--काजरहीकी कोठरी। काजरही का कोट ॥
तोंदी कारी ना भई। रहा सो ओटहि ओट ॥२२७॥

टीका गुरुमुख--काजरकी कोठरी देह औ काजरका कोट संसार, तोंदी नाभी, नाभी कहिये वृत्ति; सो देह पायके महा अज्ञानरूपी संसार तामें जीव रहा; परन्तु पारखके प्रतापसे जाकी वृत्ति मलिन न भई सो विचार की ओटसे पारख भूमिका पर आके रहित भया । ये अर्थ । ये गुरुका सिद्धांत भया । अब मायाका उपदेश सुनो ॥ २२७ ॥

साखी--अर्ब खर्ब ले द्रब्य है । उदय अस्त लों राज ॥
भक्ति महातम ना तुले । ई सब कौने काज ॥२२८॥

टीका मायामुख--अर्ब खर्ब ले द्रब्य मिला औ उदय अस्तलों राज मिला; परन्तु सब नाशमान, कछु कामका नहीं, भगवत् भक्तीके माहात्म्यको कुछ तुलता नहीं । द्रब्यराज अनीश्वर, ताते भगवत् भक्ती बिना जीवकी मुक्ती नहीं । ये अर्थ ॥ २२८ ॥

साखी--मच्छ बिकाने सब चले । धीमर के दरबार ॥
अँखिया तेरी रतनारी । तू क्यों पहिरा जार ॥२२९॥

टीका गुरुमुख--ये मायाका उपदेश भक्ती माहात्म्य सुनिके भक्ती करनेके वास्ते गुरुवा लोगोंके दरबारमें जीव सब बिकने चले, सो वहाँ वेद, शास्त्र, पुराण, मंत्र, यंत्रके जालमें पड़े । ताते गुरु कहते हैं कि--आँखिया तेरी बूझ बुद्धि आदि होते तूने ये जाल काहेको पहरी ? क्यों बंधमान भया ? ये अर्थ ॥ २२९ ॥

साखी--पानी भीतर घर किया । सेज्या किया पतार ॥
पासा परा करीमका । तब मैं पहिरा जार ॥२३०॥

टीका जीवमुख--बानी जैसी गुरुके मुखसे वेदांत शास्त्र प्रमाणसे सुनी तैसा मनन किया । फिर सब अनात्माका त्याग औ आत्माका ग्रहण करके निदिध्यास किया । फिर सब अनात्मा पदार्थकी यथार्थ विस्मृति औ अपनी स्मृति करके ध्याता, ध्यान, ध्येय त्रिपुटी नाश करके गुरु वाक्यमें तदाकार हुआ । औ त्रिकुटी श्रीहट गोल्हाट, ये तीनों छोड़के पातारमें सेज्जा किया, औटपीठ स्थानपर जाके समाधी

किया औ ब्रह्म हुआ। पर मैंने मूलका भी ब्रह्म हौं, ये तो बीचमें मायाका पासा परा तब मैं प्रपंचरूपी जाला पहिरा; सो मिथ्या भ्रांती, मैं ब्रह्म सत्य। ये अर्थ ॥ २३० ॥

साखी—मच्छ होय नहिं बाँचि हो। धीमर तेरो काल ॥
जेहि जेहि डाबर तुम फिरो। तहाँ तहाँ मेले जाल॥२३१॥

टीका गुरुमुख--अरे मच्छ होके श्वास परसे उलटे चढ़े औ पतारमें समाधी किया। पर जब चोला छूटेगा तब गर्भवाससे बचनेका नहीं। औ तेरा अभिमान सोई तेरा धीमर तेरे संग है। तू जेहि जेहि चोलेमें जायगा तहाँ-तहाँ अपना करतूत मानंदीका जाला तेरे ऊपर डारेगा। ये अभिप्राय। औ मच्छ कहिये जीव, सो जीव हो! संसारमें तुम बचनेके नहीं, ये धीमर गुरुवा लोग तेरे काल हैं। तो जो जो मतके संगमें तू जायगा तहाँ तहाँ कर्म उपासना योग ज्ञानका जाला तेरे ऊपर फेकेंगे। सो तू उसीमें अरुझके मरेगा औ गर्भवासमें जायगा, बिना पारख गर्भवाससे बचता नहीं। ये अर्थ। विषय सोई जाला औ विषयी जीव सोई मच्छ, कामिनी सोई धीमर, काम सोई जाला, चौरासी लक्ष योनि सोई चौरासी लक्ष डाबर। ये अर्थ ॥ २३१ ॥

साखी—बिन रसरी गर सकलो बँधा। तासों बँधा अलेख ॥
दीन्हा दर्पण हस्तमें। चश्म बिना क्या देख॥२३२॥

टीका गुरुमुख—अरे बिना रसरी सबका गरा बांधा गया, कल्पनामें, भ्रांतीमें बन्ध भया। सब जगको भ्रांतीका कारण अलेख ब्रह्म; जो प्रथमारंभमें हंसको गाफिली भई ताहीका नाम अलेख ब्रह्म, तासों एकसे अनेक होयके सकल जीव बँधा औ जड़वत् गाफिल हुआ। अब सकल ज्ञान ग्रन्थ भी जो हाथमें दिये, पर पारख बिना क्या देखेगा ?। जैसा जन्मअन्ध, ताके हाथमें दर्पण दिया तो आँखि बिना क्या मुँह देखेगा? तद्वत् मनुष्यको स्वयं पारख होना तब सकल शब्दका विचार औ धोखा मालूम होगा। अरे ये मनुष्य तो अपनी गाफिलीसे

आप ही बंध रहा है, इसको किसीने बाँधा भी नहीं औ पकड़ा भी नहीं। तो ऐसा जन्मअन्ध पारख हीन कि, नाना प्रकारके विचार भी इसके हाथमें देव तो क्या देखेगा ? औ क्या गुरुपदको प्राप्त होयगा ? ये अर्थ ॥ २३२ ॥

साखी—समुझाये समुझे नहीं। पर हाथ आपु बिकाय ॥
मैं खैंचत हौं आपको। चला सो यमपुर जाय ॥२३३॥

टीका गुरुमुख—बहुत प्रकारसे खोल-खोलके जीवनको समुझाता हौं, परंतु ये कछु समझते नहीं औ पराये हाथमें बिकाय जाते हैं, जबरदस्ती बन्धमान होते हैं। पराया हाथ कहिये गुरुवालोगोंके हाथ, नारीके हाथ, बानीके हाथ, कल्पना मायाके हाथ औ कायाके हाथ, विषयनके हाथ, गाफिलीसे बिकाय गये। मैं पारखके ऊपर हर सुरतसे खैंचता हौं; परंतु जीव मेरी बात पर नजर नहीं करते, विषयनमें बन्ध हुए यमपुर गर्भवासमें चले जाते हैं। औ इस मानुषको केता भी समुझावो; परन्तु एकाएकी समझनेका, नहीं। विषयनमें शब्द, स्पर्श रूप, रस, गंधमें बिकेगा, आसक्त होयके विषयनका गुलाम होयगा। मैं अपनी तरफ खैंचोंगा, वो विषयन में भोगमें जायगा। ताका उपाय गुरु बोलते हैं ॥ २३३ ॥

साखी—नित खरसान लोहा घुन छुटै ॥
नितकी गोष्ट माया मोह टूटै ॥२३४॥

टीका गुरुमुख—जैसा लोहेपर मुर्चा चढ़ा रहता है तैसा जीव पर बहुत दिनका विषयनका मुर्चा चढ़ा है, ताते मनकी आसक्तता जीवसे छूटती नहीं। औ मुर्चेके मारे जीवको स्वरूप विचार कछु सूझ पड़ता नहीं, मुर्चा कहिये आसक्तता। सो गुरुका विचार सार शब्द, ताका निर्णय नित्य करना, जबलग यथार्थ आसक्तता छूटे। जैसा रोज खरसान पर चढ़ानेसे लोहाका गुण तेज निकरता है औ मैल भी झर जाता है। तैसा अनेक योनिके अनेक विषय जीवके ऊपरसे लगे हैं, ताते जीव

मलीन तेजहीन लाचार, कुछ समझता नहीं, माया मोहमें बंधमान है। ताते जबलग देह संबंधी व्यवहार है तबलग सतसंगमें विचार करते रहना, जामें सकल योनिका मल औ माया, काया, गुरुवा, स्त्री, वेद, वानीका मोह, औ मायाकी आसक्तता सकल टूटके जीव स्वच्छ पारख पदको प्राप्त होयगा। ये अर्थ ॥ २३४ ॥

साखी-लोहा केरी नावरी। पाहन गरुवा भार ॥
शिरपर बिषकी मोटरी। चाहै उतरन पार ॥२३५॥

टीका गुरुमुख-लोहा वेदवानी, ताकी बनाई नाव भवसागरसे पार हौनेके वास्ते औ पाहन कहिये मन, सो ता मनका बोझ उस नाव पर दिया। औ विष कहिये वानी, ता वानीका विषय ब्रह्म, ईश्वर, स्वर्गादि प्राप्ति; सोई मोटरी शिर पर मान लिया औ भवसागरते पार उतरना चाहता है तो कैसे पार उतरेगा ? जा बानीमें मन लगायके उसका विषय शिर पर माना है सोई विषय औ मन नाव सहित याको लेके भवसागरमें बूड़ेगा, कधी निकरने देनेका नहीं। ये अर्थ ॥ २३५ ॥

साखी-कृष्ण समीपी पांडवा। गले हिंवारे जाय ॥
लोहाको पारस मिलै। तो काहेको काई खाय॥२३६॥

टीका गुरुमुख-देखो, जो सदा कृष्णके समीप रहते थे, पाँडव औ अर्जुन कृष्णके परम भक्त थे; तिनकी कौन गति भई ? जो अन्त समय कृष्णने देहत्याग की तब पांडव दर्शनको आये थे। सो उनकी सकल शक्ति अपनी कलासे कृष्णने हर ली औ उनको कहा कि-जायके हिमालयमें गलो तब स्वर्गमें आवोगे। ऐसी गति उनकी भई। जो कृष्णके अधिक प्रिय थे सो हिमालयमें गले, आगे इन्द्रलोकमें गये। जो कछु पुण्य किया सो भोग करके फिर मृत्युलोकमें आये, ऐसा भविष्य उत्तर पुराणमें व्यासजीने कहा। तो लोहाको पारख मिला तो सुवर्ण होयगा, फिर मुर्चा काहेको लगेगा ? औ जीवको स्वरूप प्राप्त भया, फर उसे हिंमालयमें गलनेका क्या काम ? औ स्वर्गमें जानेका क्या काम ?

और मृत्युलोकमें आनेका क्या काम ? तो देखो कृष्णके परम विश्वासी औ समीपी पांडव थे सो भवसागरमें नाव, मोट, बोझे सहित बूड़े; अब इस गीता भागवतके पाछे हे मनुष्य लोगो ! तुम क्यों भूले हो ! जिनको कृष्णने गीता भागवत उपदेश किया तिन पांडवनकी गति तो ऐसी भई कि आवागमनमें रहे, तो तुम आवागमनसे कैसे बचोगे ? कभी नहीं बचनेका । ये अर्थ ॥ २३६ ॥

साखी–पूरब उगै पश्चिम अथवै । भखे पवन के फूल ॥
ताहू को राहू ग्रासे । मानुष काहेके भूल ॥२३७॥

टीका गुरुमुख–पूरब कहिये प्रथमारंभमें जो उदय भया ज्ञान एकोहं सो हंकारके पक्षमें डूब गया, ताते अविद्याके वश होयके अनेक हुआ । अब सोई जीव पवनके फूल भखता है । पवनके फूल कहिये चार वेद, छौ शास्त्र, अठारह पुराण, वानीमात्र पवनका फूल; ताको बहुत विचार करके फिर 'मैं एक ब्रह्म सर्वसाक्षी,' ऐसी वानी अनुभव सहित ग्रहण करता है । फिर ताहूको राहू ग्रासे करता है । विज्ञान कैवल्य असीपद ब्रह्म भी जो हुआ तब भी मायाने उसे खाय लिया, गाफिल किया औ जगत्में खैंच लाया । वही ब्रह्म आदि मायाके पक्षमें बूड़ा औ अनेक जगत् हुआ । अब हे मनुष्य ! तुम क्यों भूलते हो ? औ ब्रह्म बनते हो । अरे प्रथमारंभमें तेरेमें आनंद उगा । ता आनंदके पक्षमें अथय गया, ताहीते पक्का जायके कच्चा हुआ औ अनेक रूप होके अनेक बानी बोला, ताहीमें फँसा । सोई मानुष तू है, अब क्यों भूलता है ? औ आदिका मानुष था, सो ताहूको राहू मायाने ग्रास किया । सोई माया तेरे पीछे लगी है; तू इसे भूले मत, परखके आसक्तता छोड़ न्यारा हो । ये अर्थ ॥ २३७ ॥

साखी–नैनन आगे मन बसै । पलक पलक करे दौर ॥
तीन लोक मन भूप है । मन पूजा सब ठौर ॥२३८॥

टीका गुरुमुख–नैननके आगे मन बसता है, रहता है औ जेती पलक गती है वेती दौड़ करता है । मनके दो पाँव औ दो पंख; दहिने

दो पंख, औ बायें चार पंख, काया कमलका वासी है। पर शिर मुख कछु है नहीं, मन मानै तिधर उड़ा जाता है। नाम है सोई धड़ औ श्वासा सोई पाँव, इंगला पिंगला आँखकी चारों पलकें सोई चार पंख; ये सूक्ष्म मन वर्णन किया औ सूक्ष्म मनसे माना जाय सो स्थूल मन। तो देह आदि ब्रह्म पर्यंत जेती मानंदी होय सो सब मन। ताते तीन लोकमें सब ठिकाने मनहीका पूजन, मनहीका ध्यान, मनहीका जाप, मनहीका ज्ञान, मनहीका योग, मनहीका वैराग्य, मनहीकी भक्ती, मनहीकी उपासना होती है। औ तीन लोकका राजा मन है। मनके रूप पाँच-स्थूल, सूक्ष्म, कारण, महाकारण, कैवल्य; ये पांच रूप करके मन है। जो मन नहीं तो पाँचो भी मिथ्याभूत। ताते इस मनको परखे, मनके फंदेमें न परै सो पारखी। ये अर्थ ॥ २३८ ॥

साखी- मन स्वारथी आप रस। विषय लहर फहराय ॥
मनके चलाये तन चलै। जाते सरबस जाय ॥२३९॥

टीका गुरुमुख—मनका अर्थ विषय, सो उसमें बिषयकी लहर सदा उठा करती है, विषय बिना मनको दूसरा स्वाद कछु नहीं। मनके चलाये तन चलता है ताते जीवकी शुद्ध बुद्धी आदि सकल संपत्ती जायके विषयमें बन्ध हो जाती है। ताते मनकी लहर बचाव। ये अर्थ ॥ २३९ ॥

साखी—कैसी गति संसारकी। ज्यों गांडर की ठाट ॥
एक परा जो गाड़में। सबै गाड़ में जात ॥२४०॥

टीका गुरुमुख-जैसी एक भेड़ी है पानीके खाँचमें परी, उसकी देखा-देखी सब भेड़ी खाँचमें चली जाती हैं; तैसी गति संसारकी भई। एक पहिला पुराण पुरुष जो धोखेमें औ वानीमें परा सोई धोखे वानीमें सब संसार पड़ा चला जाता है। कहते हैं कि-जैसे बड़े-बड़े चले हैं औ उन्होंने जो प्रमाण किया है सो आपने भी प्रमाण करके चलना। इस तरह जड़ पशु न्याय संसार बन्ध होयके गर्भवासमें चला.

कोई विचार करके नहीं देखता । मनने सबको गाफिल करके नचाया । ये अर्थ ॥ २४० ॥

साखी–मारग तो कठिन है । वहाँ कोई मत जाव ॥
गये ते बहुरे नहीं । कुशल कहै को आव ॥२४१॥

टीका गुरुमुख--मार्ग कहिये-कर्ममार्ग, योगमार्ग, उपासनामार्ग, भक्तीमार्ग, ज्ञानमार्ग, दक्षिणमार्ग, वाममार्ग; ये सब मार्ग मनके हैं औ महाकठिन हैं । जीवके स्वतःस्वरूपको मिलने नहीं देते, भरमाय देते हैं; ताते उस मार्गमें औ उनकी संगतमें कोई मत जाव । जो कोई आगे गये हैं सो लौट नहीं, वहाँ ही मनके रूप हो गये । अब उनकी कुशल कौन कहै ? मनका रूप होके भ्रमचक्रमें परे, महादुःखमें परे । ये अर्थ ॥ २४१ ॥

साखी–मारी मरे कुसंगकी । केरा साथे बेर ॥
वे हालै वै चींधरे । विधिने संग निबेर ॥२४२॥

टीका गुरुमुख–कुसंगका मारा ये जीव मरता है । कुसंग कहिये कायाका संग, सो देखो-जीव अमर होके कायाके संगमें मरता है । जैसा केराके झाड़ बेरीके संगमें उगा औ रहा । जब पवन चली तब बेरीका झाड़ हिलने लगा । तो केराका झाड़ सब फटने लगा, चींधी चींधी उड़ने लगा । तैसा ये जीव मन माया देह,ताका सङ्ग करके ताहीके मारे मरता है । जब देहमें विषयरूपी बयार चलने लगी तब तन मनको हिलाय दिया । सो जीवकी चींधी उड़ने लगी क्षीण तेजहीन होने लगा । ताते विधिने संग निबेर । विधि कहिये ब्रह्मा, ब्रह्मा कहिये रजोगुण, रजोगुण कहिये नरदेही; सो नरदेह पायके सकल संगका त्याग कर, पीछे नरदेहकी भी आसक्ताई छोड़, सकल निबेरा करके पारख पदको प्राप्त होना । ये अर्थ ॥ २४२ ॥

साखी–केरा तबहिं न चेतिया । जब ढिग लागी बेर ॥
अबके चेते क्या भया । जब काँटन लीन्हा घेर ॥२४३॥

टीका गुरुमुख–ये जीव तभी चेता नहीं जब पक्कीसे कच्ची देह भई औ अब नाना दैहिक, दैविक, भौतिक दुखनने घेरा सो देखके चेता समझा कि, ये जगत् महा दुःखरूपी है। तो अबके समझे क्या ये जगत् का सब दुःख छूटता है। औ जब गाफिली पड़ी थी, पक्केसे कच्चा बना था वाही समय जो अपने पक्के रूपको समझता तो ये संसार दुःख काहेको पैदा होता ? आपी आप सुखी रहता। तो ता समय याको ये फहम क्यों नहीं आया ? कि-दुःखरूपी संसार पैदा होयगा; तामें दुःखित होऊँगा। ये शंका। तो प्रथम याने कभी दुःखरूपी संसार देखा होता तो मालूम रहता औ आगे जगत कारणकी इच्छा न करता। परन्तु याने दुःखरूपी जगत् कधी सपनेमें भी न देखा था, सुखरूपी पक्के तत्त्वनमें आप सुखी रहता था। तो याहूसे और विशेष सुख कछु होयगा; ऐसा सुखके भरोसेसे भूला तो दुःखकी प्राप्ती भई। ये अर्थ ॥ २४३ ॥

साखी–जीव मर्म जाने नहीं। अंध भये सब जाय ॥
बादि द्वारे दादि न पावै। जन्म जन्म पछिताय ॥२४४॥

टीका गुरुमुख–ये जीव कोई अपना निज मर्म जानते नहीं, कि- "हम पहिले पक्के रूपमें हते। सो विशेष सुख ब्रह्मझाँई, ताहीके लोभते भूले औ कच्चे तत्त्वनको प्राप्त भये। फिर इच्छा करके विचित्र जगत निर्माण किया औ नाना बानी, नाना कल्पना, हमने किया। तो सबके आदि कर्ता हम।'' ऐसा मर्म न जानके भूले। औ दूसरा कर्ता अनुमान किया। ताके विषयनमें अंध भये सब गर्भवासमें चले जाते हैं, कोई यथार्थ परखके देखते नहीं, सब मिथ्या बाद करके बादी बने। सो कोई जन्ममें, कोई द्वारे भी इनकी दाद लगती नहीं। अनेक जन्म धरके जन्म जन्म पछिताते हैं कि-कब दुःखसे छूटेंगे ? औ कब मुक्त होवेंगे ? परन्तु जबलग सच्चे पारख गुरु नहीं मिलेंगे तबलग भरमते रहेंगे। ये अर्थ ॥ २४४ ॥

साखी—जाको सतगुरु ना मिला। व्याकुल दहुँ दिस धाय॥
आँखि न सूझै बावरा। घर जरै घूर बुताय॥२४५॥

टीका गुरुमुख—जाको सच्चा पारखपद मिला नहीं सो व्याकुल होयके चार वेद छौ शास्त्रके प्रमाणसे दशों दिशामें दौरता फिरता है। कहता है कि-"सर्व दिशामें और सर्वकालमें मैं ब्रह्म परिपूर्ण हौं। मेरेसे न्यारा कछु नहीं।" तो अनेक दुःखरूपी जगत अनेक उपाधी होते जाते हैं सो इसकी आँखिनसे सूझता नहीं। सब रोग अपने शिरपर धर लेता है; ऐसा ये बौराया दिवाना हुवा। जो घरको तो आगि लगी औ घूरा बुझाता है। तो घूरेके बुझाये घरकी आगि कैसे बुझेगी? तो याका अभिप्राय ऐसा है, कि जैसा रोगीको थोरा रोग है तबलग रोग-रोग पुकारता है औ दुःख होता है। औ जब वात पित्त कफ आदि सकल रोगनको प्राप्त भया तब सन्निपात होता है। फिर शरीरमें कुछ दुःख मालूम होता नहीं। विभ्रांत होके आव बाव बकता है औ करने को कुछ तो करता कछु ही है। फिर वाको दवाई लगती नहीं वैसा ही मरता है। तद्वत् वात ज्ञान औ पित्त योग औ कर्म उपासना कफ, ये तीनों इकठे भये तब विज्ञानरूपी सन्निपात भया। फिर बौराया. आवबाव बकने लगा। औ बाल पिशाच उन्मत्त मूक जड़ होयके आत्मदशा जगत्को समुझावने लगा। औ अपना घर पक्का सो जर गया; याकी खबर कछु पड़ी नहीं, वैसा ही मरा। तो जाको पारख गुरु न मिला ताकी गति ऐसी भई, जो बौरायके मरा। ये अर्थ॥ २४५॥

साखी—वस्तू अंतै खोजे अंतै। क्यों कर आवै हाथ॥
सज्जन सोइ सराहिये। जो पारख राखै साथ॥२४६॥

टीका गुरुमुख—वस्तु तो और जगहपर और खोजता और जगह पर है तो कैसे हाथ लगै? सज्जन विवेकी सोई जाके पास पारख होय, ताहीको सराहिये औ बेपारखी गाफिलको क्या सराहिये? जो भ्रम-

चक्रमें परा है । अरे वस्तु जीव तो देहमें है औ पोथिनमें, पत्थरनमें, पानिनमें, धातु मुरतिनमें, काष्ठनमें, स्वर्गादिकनमें खोजते हो तो जीव वस्तु कैसे मालूम होवेगी ? ताते पारखी संतनकी तारीफ है कि जहाँ वस्तु है वहाँसे उठाय लेते हैं । वे जानते हैं कि एक पारख बिना सब भ्रममें पड़े हैं । पारख बिना साँची झूठी वस्तु कैसे मालूम होवेगी ? ताते जो पारख पास रखते हैं सो पारखी पारखरूप स्थितिवान संत । उनकी कीर्ति करना, उनकी स्तुति करना, उनकी संगती करना, उनकी सेवा करना, तन मन धन सब खर्च करके उनका विचार करना । उनसेही पारख स्थिति मिलेगी । ये अर्थ ॥ २४६ ॥

साखी–सुनिये सब की । निबेरिये अपनी ॥
सेंदुरका सिंधौरा । झपनी की झपनी ॥२४७॥

टीका गुरुमुख–सब पारखी सज्जनकी वानी लक्ष लगायके सुनना, बिचारमें ऐसा लक्ष लगाना कि लक्ष विचारमें पैबस्त हो जाय औ दूसरा स्फुर्ण कछु न उठै । फिर जैसा पारख पारखी बताते हैं तैसा अपनी पारख करना । जैसा सेंदुरका पात्र सिंधौरा, तैसा विचारका पात्र अपना लक्ष बनाना । जेता पारखी जन बिचार बतावै तेता संपूर्ण लक्षमें ठहर रहै, बाहर जाने न पावै । औ झपनी कहिये देह, देहकी झपनी अन्तःकरण ब्रह्म; सो जगत्‌से ब्रह्म पर्यंत सब कल्पना बानीको परखना औ आप पारखरूप हो रहना अथवा देह अंतः-करणके ऊपर हो रहना । ये अर्थ ॥ २४७ ॥

साखी–बाजन दे बाजन्तरी । तू कल कुकुही मत छेर ॥
तुझेबिरानी क्या परी । तू अपनी आप निबेर ॥२४८॥

टीका गुरुमुख–संसारके लोग नाना कल्पनामें नाना मत बानीन में बाज रहे हैं, संसार हो रहे हैं तो उनको सौसक्क होने दें । तू कल कुकुही वेदुवा, शास्त्री, पुराणिक; इनको छेड़ै मत, इनको बानीका पक्ष दृढ़ हो रहा है; ये छोड़नेके नहीं । तो तुझे बिरानी क्या परी ?

बिराने लोगनसे तुझे क्या काम ? तू अपना निबेरा आप करे। ये अर्थ ॥ २४८ ॥

साखी–गावै कथै बिचारे नाहिं । अन जाने का दोहा ॥
कहहिं कबीर पारस परसै बिना । जस पाहन भीतर लोहा२४९॥

टीका गुरुमुख–गाते भी हैं औ उसका अर्थ करते भी हैं। पर विचार करके समुझते नहीं तो पारखका स्पर्श कछु होता नहीं। जबलग पारखका स्पर्श नहीं भया तबलग कछु पक्का हंस होता नहीं। जैसा पारखका स्पर्श जबलग भया नहीं औ पाथरमें जन्म भर लोहा पड़ा रहा तो क्या सोना होयगा ? औ जंग खायके खराब हो जायगा। तद्वत् जो लाख बरस वानीमें जीव पड़ा रहै तब भी हंस कधी होनेका नहीं पारख बिना। औ वानीके धोखेमें खराब जड़ हो जायगा, ब्रह्म बन जायगा। ये अर्थ ॥ २४९ ॥

साखी--प्रथम एक जो हौं किया। भया सो बारह बान ॥
कसत कसौटी ना टिका। पीतर भया निदान॥२५०॥

टीका गुरुमुख--प्रथमारंभमें एक सूक्ष्म अहंता हंसमें खड़ा भया, ताके प्रतापसे कच्चा रूप निर्माण भया। सो एकही रूप औ एक ही जीव-भया सो बारह वान। सर्व समर्थवान्, सर्व सिद्धिवान् स्वरूप निर्माण भया; परंतु कसौटी पारखपर ठहरा नहीं। सो आखिर पीतर भया, अनेक योनिको प्राप्त भया जीव यह। औ प्रथम एक जो 'अहं ब्रह्म' ऐसा सिद्धांत जीवने खड़ा किया ताकी बारह बानी बनी, जाको द्वादश महावाक्य बोलते हैं। परंतु पारखमें एक भी सत्य ठहरे नहीं, सब पीतर भये, सर्व सिद्धांत खोटे ठहरे पारखके आगे। ये अर्थ॥ २५०॥

साखी–कबीरन भक्ति बिगारिया। कंकर पत्थर धोय ॥
अंतरमें बिष राखिके। अमृत डारिनि खोय२५१॥

टीका गुरुमुख--ये संसारिक जीवनने भक्ती बिगार डारी। कंकर पत्थर धोने लगे, जड़ पूजन करने लगे। भक्ती करना चैतन्यकी, साधु गुरूकी, सो बिगाड़के पाखंड मत आचरण करने लगे। अन्तरमें विष

वासना राखिके अमृत जीवको खो दिये, भूल गये । ये अर्थ ॥ २५१ ॥

साखी--रही एककी भई अनेककी । बिस्वा बहुत भ्रतारि ॥
कहहिं कबीर काके सँग जरि हो। बहु पुरुषनकी नारि२५२॥

टीका गुरुमुख—अरे ये काया एक जीवकी थी सो अनेककी भई । ईश्वर, देवता, पाथर, पीतर, तीरथ, मूरत, वेद, शास्त्र, लोग, कुटुंब, परिवार, नारी, माता, पिता, इष्ट, मित्रादि अनेककी लौंडी बनी । इसके मालिक बहुत बने । अब किसिके संग जरेगी ? । विश्वसे पैदा होय औ विश्वसे अभिमान मानै सोई विश्वा काया । औ प्रथमारंभमें एक जीवकी बानी थी 'एकोहं;' याही बानीका प्रसंग करके आप अनेक हुआ । तब अनेकके पास भी वही बानी गई औ बानीके भोक्ता पुरुष अनेक भये । तो देखो, वेद आदि जेतिक बानी हैं तेती जब एकके पास थी तब एक भोक्ता था औ उसके पाससे निकरी तब अनेक पुरुष भोक्ता भये; ताते बहु भ्रतारि विश्वा कहलाई । याने ब्रह्मा, विष्णु, शिवादि सकल जीवनको ठगा, पर किसीके पास रही भी नहीं औ किसीके संग रहनेकी भी नहीं । तो अनेक जीव देह धरके मरि-मरि जरि-जरि गये, बानी जहाँकी तहाँही बनी है और जीवनको मोहित करनेके वास्ते । अरे ये वानी प्रथम एक पुरुषकी रही, सो ताहीको मोहित करके भरमाया और ता पीछे अनेक पुरुषनको मोहित किया । सो याहीके फंदेमें विधि, हरि, हरादि सब मर-मर गये । अब पहिले खसमनकी तारीफ करती है ये बानी कि, और जो होवेंगे उनको मोहनेके वास्ते । सो सब मानुष मात्रको वानीने भ्रमाया । एक ये वानीने बड़ा आश्चर्य किया-जो आप तो बहु पुरुषनकी नारी है; परंतु जीवनका पुरुषत्व हर लिया औ जीवनको राँड़ बनाके इनके ऊपर अनेक खसम खड़े कर दिये, ताहीकी नारी जीव भी बने । नारीने सबको नारी बनाया । ये आश्चर्य । ताते हे संतो ! एक वानी औ अनेक वानी सब

जीवको बंधन है औ जीवकी कल्पना है । तो तुम वानीको पारख मानके कधी इसके फंदेमें मत जाना । ये अर्थ ॥ २५२ ॥

साखी--तन बोहित मन काग है । लछ योजन उड़ि जाय ॥
कबहिंके भरमें अगम दरिया । कबहिंके गगन रहाय॥२५३॥

टीका गुरुमुख--तन है सोई जहाज औ तापर सूक्ष्म मन कौवा बैठा है, सो थिर होने नहीं पाता, नाना संकल्प विकल्प आदि विषय बयारमें हला कारता है । जहाँ लक्ष लगाता है तहाँ लाख योजन पर उड़ि जाता है; परन्तु कहीं देह छोड़के,इसकी स्थिति नहीं, पीछे देहमें आयके बैठता है । कबहीं तो अगम दरियाव बानी, तामें भ्रमता है औ कबहीं गगन अंतःकरण, तामें समाय जाता है; ये लक्षण सूक्ष्म मनके हैं । औ मन विषयनका आहार करता है, ताके संगमें जीव विषय वासनामें बंध होता है औ चौरासी भोगता है । ताते मनका संग कधी न करिये, मनके आधीन कधी न होना, मनको सदा परखते रहना । ये अर्थ ॥ २५३ ॥

साखी--ज्ञान रतनकी कोठरी । चुम्बक दीन्हों ताल ॥
पारखी आगे खोलिये । कूञ्जी बचन रसाल ॥२५४॥

टीका गुरुमुख--ज्ञान कहिये जान, चैतन्य चिरंजीव अविनाशी औ जासे सकल उपाधी अज्ञानजनित जाननेमें आवै सो ज्ञान सत्य । अज्ञान कहिये अजान जड़ अचेत विभ्रांत नाशमान, तज्जनित उपाधी कहिये पृथिवी, आप, तेज, वायु, आकाश । आकाश--पंचक, वायु पंचक, तेजपंचक, जलपंचक, पृथिवीपंचक आदि सकल व्यवहार बोलना मिथ्या भ्रांती, जगत् चेष्टा स्त्री पुत्रादिक मिथ्या भ्रांती, वर्ण कर्म आश्रम धर्मादिक मिथ्या भ्रांती, देव ऋषि पिशाच मनुष्यादि योनि मिथ्या भ्रांती, मैं सत्य पदार्थ; ऐसा निज बोध जाको प्राप्त हुआ सोई चुम्बकका ताला ज्ञानीने अपने अंतःकरणरूपी कोठरीको दिया वा देहरूपी कोठरीको मौनरूपी ताला दिया । मौन

कहिये जो जगतादि सकल दृश्य उपाधी मैं नहीं औ ये मेरी नहीं, ऐसा सर्वकाल जानके अभाव रखना सोई मौन ताला देहको ज्ञानिनने दिया वा बोधरूपी ताला अंतःकरणको दिया । सो ताला खोलना पारखीके आगे तब पारखपदकी प्राप्ति होय । शीलयुक्त जो अति रसाल मिष्ट बानी है सोई मौन औ बोधरूपी तालेकी कुंजी है औ बानीमें विचार भी रहना, ऐसी बानी जाके पास है सोई मौन तालेको खोलेगा औ सकल परखके पारखरूप होवेगा । ये अर्थ ॥ २५४ ॥

साखी--स्वर्ग पतालके बीच में । दुइ तुमरिया बद्ध ॥
षट दर्शन संशय परी । लख चौरासी सिद्ध ॥२५५॥

टीका गुरुमुख-नौ नाथ चौरासी लाख सिद्ध आदि सबके भीतर एक संशय खड़ी भई कि, भवसागरके बीचसे कैसे पार होना ? औ परमातमामें कैसे मिलना ? ताते एक सगुण औ एक निर्गुण ये दो मत सो तुमड़ी अनुमानी औ अपने हाथसे बंध भये औ सकल संसारको बंध किया । औ जा भवसागरसे पार होनेकी औ परमातमामें मिलनेकी छौ दर्शनमें संशय परी थी सो नाभी त्रिकुटीके बीचमें दुइ तुमरिया बाँधी । सोहं ओहं राम, ये छै अक्षरमें से कोई दो अक्षरसे लक्ष बाँधा । औ चौरासी प्रपंचमें से लक्ष खैंच लिया । दो अक्षरमें धारणा बाँधके सिद्ध हुए, भवसागरसे पार हुए, परमातमामें मिले । परन्तु सकल भवसागर दुःखका कारण ब्रह्म, सो महाझाँईमें परे ये कसर मालूम न भई । ये अर्थ ॥ २५५ ॥

साखी -सकलो दुर्मति दूर करु । अच्छा जन्म बनाव ॥
काग गौन गति छाड़िके । हंस गवन चलि आव ॥२५६॥

टीका गुरुमुख-प्रथम विचार तत्त्वको ग्रहण करना औ जीवसे रहित जेतिक मति है सो दुरमती, तिन सबनको दूर करना । वेद मत, शास्त्र मत, पुराण मत, चारवाक मत, नास्तिक, द्वैत-अद्वैत-विशिष्टा-

द्वैत, सो सकल मत जीवको बंधन है औ मिथ्या कल्पना है ऐसा जानके विचारसे दूर करना, जामें इनकी भावना उठने न पावै। तो मिथ्या भावना सब दूर भई तो बाकी आप रहा सत्य-भाव, साँच भूमिका। तब विचार तत्त्वसे जीव अविनाशी साँच ठहरा औ देह आदि सकल भावना नाशमान ठहरी। तो देह, गृह, धन, वेद आदि सब बानी, इनको मानके मैं अधीर होता था परंतु ये सब क्षणभंगुर, इनसे मेरे से तीन काल संबंध नहीं। ये विजातीय, इनको मानना सोई सकल भयका कारण औ भय सोई अधैर्यका कारण, सो विचारसे दूर किया तब धैर्य सहजही रहा। सो सत्त विचार धैर्य मेरे स्वजाती, इनको छोड़ना नहीं, इनको छोड़से मैं नाना दुःखको प्राप्त भया। ऐसा जानके आगे सकल जीव मात्र मेरे स्वजाती, ये अपनी भूलसे अनेक बंधनमें परे औ नाना कर्म करके अनेक योनिमें गये, सो अनेक दुःख भोगते हैं। जो इनको सुख प्राप्त होय सोई करना। ये नादान अपनी गाफिलीसे दुःख भोगते हैं ऐसा जानके दया तत्त्व ग्रहण करना, कि मेरी स्वजाती निर्वैरत्व। अब सकल जीव मेरे स्वजाती, तब निर्दयत्व वैरभाव असंभव ऐसा विचारमें ठहरा तब दया तत्त्व सहजही सिद्ध हुआ। फिर शील तत्त्व लेके सकल व्यवहार करने लगा, मृदु मीठा वचन सबसे बोलने लगा। शील सकल सुखकी खानि। सकल दुःख सुख जो वर्तमानमें वर्ते सो सहन करना औ उसमें आसक्त न होना। आसक्त न होते हुये भी सबसे मीठे रहना सोई शील। इस प्रकार दुर्मती दूर करके अच्छा जन्म बनाव औ प्रपंचकी काग गति छोड़के इस प्रकार विचार सत्त दया धैर्य सहित हंसगति गहिके पारखपदको चला आव। ये अर्थ ॥ २५६ ॥

साखी–जैसी कहै करै जो तैसी। राग द्वेष निरुवारै ॥
तामें घटे बढ़ै रतियो नहीं। येहि विधि आप सँवारै॥२५७॥

टीका गुरुमुख--जैसी शब्दसे पारख कही है तैसी यथार्थ जो जीव करै तो पारख पदकी प्राप्ति होय। तो सकल राग कहिये प्रीति औ

द्वेष कहिये क्रोध, सो दोनों छोड़के सत्त धीरज विचार आदि तत्त्व ग्रहण करके सबकी पारख यथार्थसे करै औ आप पारख पर स्थिर रहै। ता पारखमें ना रत्ती भर घटै, ना रत्ती भर बढ़ै, ज्योंका त्यों पारखमें रहि जाय। येहि विधि आप अपनेको सँवारे। ये अर्थ ॥ २५७ ॥

साखी—द्वारे तेरे रामजी। मिलहु कबीरा मोहि ॥
तैं तो सबमें मिलि रहा। मैं न मिलोंगा तोहि ॥२५८॥

टीका गुरुमुख--हे जीव ! तू सबमें रमा। ताते रामजी कहिये। जो तू सबमें रमा तो चौरासी लक्ष योनि सब तेरा द्वारा ठहरा। सो हे जीव ! जो तेरेको चौरासी छोड़ना है तो सत्त विचार धीरज आदि तत्त्व ग्रहण करके पारखमें आय मिलो, पारख सोई मैं। अगर तू चाहता है कि तेरेमें आयके पारख मिले, तो तेरेमें पारख तो मिलनेका नहीं; क्योंकि तू तो सबमें मिल रहा है। अतः मैं तेरेमें नहीं मिलनेका, तेरेको रहित होना होय तो तू पारख पदको विचार द्वारे आनके मिल। औ पारख पद तो अचल, काहूमें मिल नहीं सकता, ताते तू आनके मिल। ये अर्थ ॥ २५८ ॥

साखी—भरम बढ़ा तिहुँ लोकमें। भरम मण्डा सब ठाँव ॥
कहहिं कबीर बिचारके। तुम बसेहु भरमके गाँव॥२५९॥

टीका गुरुमुख—भरम कहिये सच्चिदानंद, जामें एक जीव मिलके तीन लोकमें हो गया। ब्रह्म बना, सर्वव्यापी सर्वाधिष्ठान बना औ कच्चे तत्त्वनके रोगमें पड़ा। भरमहीसे 'एकोहं' कहिके अनेक योनिको प्राप्त भया। हे जीव ! तुम विचार करके देखो कि-जो वेदने ब्रह्म स्थिति बताई सो कहाँ है ? वही भ्रमका गाँव, जामें तुम बसे हो। एक देहसे भ्रम खड़ा भया कि-'कोई हमारा दूसरा कर्ता है'; सोई भ्रम, ब्रह्मा, विष्णु, शिवके हृदयमें बसा औ तीन लोकमें भ्रम मंड रहा। सोई भ्रम सब ठाँव वेद, शास्त्र, पुराण, छौ दर्शन छाँनबे पाखण्डमें मंडा।

तातै गुरु कहते हैं कि-हे जीव ! तुम विचारके देखो, तुम भी भ्रमके गाँवमें बसे हो । भ्रमका गाँव कहिये देह, जहाँसे सकल भ्रम खड़े होते । सो देहमें तुम रहते हो तो भ्रम चक्रमें पड़ोगे; नहीं तो जल्दी परखके न्यारे होवो । ये अर्थ ॥ २५९ ॥

साखी-रतन अड़ाइनि रेतमें । कंकर चुनि चुनि खाय ॥
कहहिं कबीर पुकारके। ई पिंडे होहु कि जाय ॥२६०॥

टीका गुरुमुख-हे संतो ! सुनो-रतन कहिये ज्ञान, सो रेतेमें अड़ाय दिया विषयनमें बिथार दिया औ अज्ञानदशाको जीव प्राप्त भया । तातै कंकर चुनि-चुनि खाय । विषयनमें आसक्त होके विषय कंकर चुनि-चुनि खाता है औ ताहीमें प्रसन्न रहता है । तो विषय याको खाय जायँगे औ चौरासीमें डार देवेंगे । तो ये पिंड मानुषतन, यामें जो पारख पद मिला तो मिलता है; नहीं तो चौरासीमें जीव जायगा फिर कधी पारखपद मिलनेका नहीं । ये अर्थ ॥ २६० ॥

साखी--जेते पत्र बनस्पती । औ गंगा की रेन ॥
पंडित बिचारा क्या कहै । कबीर कही मुख बैन॥२६१॥

टीका गुरुमुख-हे कबीर जीव ! तुम विचार करके देखो कि-ब्रह्मा विचारा क्या कहेगा ? औ केतिक बानी कहेगा ? सकल जीव कल्पि-कल्पि जेतिक पत्र वनस्पती औ जेतिक गंगाकी रेनु हैं, इतनी अनंत बानी बोले अगनित । सो सकल जीवनको बंधकारी भई; सोई नाना बानी जालमें जीव परे । ताको परखनेके वास्ते औ जीवनका बन्धन छुड़ाने वास्ते मैंने भी बहुत बानी कहा, परन्तु अभी लग जीवके परखनेमें आया नहीं । ये अर्थ ॥ २६१ ॥

साखी-हौं जाना कुलहंस हो । तातै कीन्हा संग ॥
जो जानत बगु बावरा । छुवै न देतेउँ अंग ॥२६२॥

टीका गुरुमुख-मैंने जाना हे जीव ! कि तुम सब हंस हो, तातै तुम्हें परखानेके वास्ते संग किया । जो मैं ऐसा जानता कि-तुम सब

बकुले हो, नाना विषयनमें बौराय रहे हो औ नाना बानी कल्पनामें तुम्हारा हंसत्व जायके बकत्व आया है । तो कधी अंग न छूने देता, नजदीक न आने देता । परंतु हे हंसा ! तुम बक रहनी छोड़ देव औ अपनी स्वजातीय रहनी हंस दशा ग्रहण करके जड़ चैतन्य असत्य सत्यका निरुवारा करो । ये अर्थ ॥ २६२ ॥

साखी--गुणिया तो गुणहि कहै । निर्गुणिया गुणहि घिनाय ॥
बैलहिं दीजे जायफर । क्या बूझै क्या खाय ॥२६३॥

टीका गुरुमुख–गुणिया कहिये जो सदा गुणवान करैं, विचार करैं; तो जो कछु कहेगा सो विचारकी बातें कहेगा । औ निर्गुणिया कहिये जो विचार न करै, सो अबिचारी जीव, ताको विचार अच्छा लगै नहीं । तो विचार सुनिके घिनाता है औ विषयनमें राता है ताको कधी विचार कहना नहीं । जो पढ़ना भी बहुत जानता है औ विचार नहीं करता, सो बैल माफिक है । देवतनका पक्ष लेवै सो सुरपशु, वेदका पक्ष लेवै सो वेदपशु, बड़े-बड़े आदमिनका पक्ष लेवै सो नरपशु, शास्त्रनका पक्ष लेवै सो शास्त्रपशु, पुराणनका पक्ष लेवै सो पुराण पशु, स्त्रियनसे लंपट रहै सो स्त्रीपशु; ऐसे छै विधिका पशु जगत्में हैं । इनको सत विचार बतावोगे । तो ये क्या बूझैंगे ? औ क्या ग्रहण करैंगे ? जैसे बैलके आगे जायफर रक्खै तो वो क्या बूझेगा ? औ क्या खायगा ? ताते निर्पक्ष होके मुक्त होनेकी श्रद्धा जाको होय ताको यथार्थ विचार कहना । ये अर्थ ॥ २६३ ॥

साखी-अहिरहु तजि खसमहु तजि । बिना दादकी ढोर ॥
मुक्ति परे बिललात है । बृन्दाबनकी खोर ॥२६४॥

टीका गुरुमुख-खसम कहिये ईश्वर औ अहिर कहिये गुरुवालोग दोनोंने जीवको त्याग किया, वेद वानीमें लगाया । 'ताते सबके परे मुक्ति है' ऐसा मान करके जीव बिललाता फिरता है संसारके गलिनमें औ जंगलमें औ तीर्थनमें । वृन्दावन कहिये जो बिंदुसे पैदा भया । ये अर्थ ॥ २६४ ॥

साखी--मुखकी मीठी जो कहै । हृदया है मति आन ॥
कहैं कबीर ता लोगनसे । तैसेहि राम सयान ॥२६५॥

टीका मायामुख--अर्थ स्पष्ट । कपट भक्ती जो करते हैं तिनसों कभी भगवान् प्रसन्न नहीं होते । कपट भक्ती कहिये जो ऊपर कहते हैं, कि हे भगवान् ! तन, मन, धन, सकल सम्पत्ति सहित तेराही है औ खर्च एकभी उसके नामपर नहीं करा जाता; येही कपटभक्ती । ये अभिप्राय ॥ २६५ ॥

साखी--इतते सब कोई गये । भार लदाय लदाय ॥
उतते कोई न आइया । जासो पूछिये धाय ॥२६६॥

टीका गुरुमुख--इधर जगत् में पैदा होके नाना कल्पना कर बानी ग्रंथ बनाया औ जीवनपर पाप-पुण्य, स्वर्ग-नर्कका बोझ लदायके आप मरे औ लिखि गये कि-हम स्वर्गको जाते हैं । पर उधर स्वर्गसे उतरके कोई नही आया कि, जासों पूछिये स्वर्गका समाचार धायके । तब इहाँ ही से कल्पि कल्पि मिथ्या बातें रख गये । ये अर्थ ॥ २६६ ॥

साखी--भक्ति पियारी रामकी । जैसि पियारी आग ॥
सारा पट्टन जरि मुवा । बहुरि ले आवै माँग ॥२६७॥

टीका गुरुमुख--संसारमें रामकी भक्ति कैसी पियारी भई ? जैसी पियारी आग । जैसा अग्निसे सारा नगर जरिके मर गया, पर फिर भी माँगले आते हैं । तैसा रामकी भक्तिमें ज़गत् सब जरके मर गया, पर फिर भी गुरुवा लोगनके पाससे माँग ले आते हैं । ये अर्थ ॥ २६७ ॥

साखी--नारि कहावै पीवकी । रहै और संग सोय ॥
जार मीत हृदया बसै । खसम खुशी क्यों होय ॥२६८॥

टीका गुरुमुख--शिष्य तो कहाते हैं गुरुके औ उपासना करते हैं दूसरे देवतनकी, सो और देवताकी मिताई सोई जार मिताई । ये अज्ञान वश जीवनके, खाविंद मुक्तिदाता एक गुरु हैं । और गुरु छोड़के जेते ब्रह्मा विष्णु महेश आदि देवता हैं सो सब जार, ता जारनकी मित्रताई

जा जीवनके हृदयमें बसती है ता जीवनपर गुरु कैसे खुशी होयेंगे ? वास्तविक तो इन जीवनकी मुक्ती कधी न होना; परन्तु इसका अयब न देखके अपने दयाके स्वभावसे गुरु परखायके मुक्त करते हैं। ये अर्थ ॥ २६८ ॥

साखी--सज्जनसे दुर्जन भया। सुनि काहूके बोल ॥
काँसा तामा होय रहा। हता ठिकोंका मोल ॥२६९॥

टीका गुरुमुख–ये जीव सज्जन परम मित्र था तब अनमोल था; सो गुरुवा लोगोंके औ वेदके बोल सुनके दुर्जन, अपनी स्थितिका दुशमन होरहा है ताते जो हीराका मोल था सो काँसा ताँबाका मोल भया। जैसा हींगके संग कस्तूरीका मोल घट गया औ कस्तूरीका गुण जायके कस्तूरीमें अवगुण पैदा भया। तैसा देहके संग औ गुरुवा लोगनके संगमें जीवकी कीमत जाती रही। चैतन्य था सो जड़के मोल हो गया औ जड़को चैतन्यके मोल किया औ सज्जनपना जायके दुर्जन-पना अवगुण पैदा भया। जैसी कस्तूरी हींगके संग नासी; फिर न हींगही बनी, न कस्तूरी ही रही। तैसा गुरुवा लोगनकी संगतमें वेदके बोल सुनके जीव खराब हुआ। सो न चैतन्य ही रहा, न जड़ ही बना, अधबीचमें मिश्र होके रहि गया। ये अर्थ॥ २६९ ॥

साखी--बिरहिन साजी आरती। दर्शन दीजे राम ॥
मूये दर्शन देहुगे। तो आवै कौने काम ॥२७०॥

टीका गुरुमुख–बिरहिन कहिये जीवको, जिन गुरुवा लोगोंने बिरह लगाया कि-राम तुम्हारा पुरुष औ तुम रामकी नारी हो, रामके मिले बिना तुम्हैं सुख होनेका नहीं। ऐसा खाविंदका वियोग सुनके जीव भक्तिमान् तिनका धीरज छूटा औ अधीर होयके बहुत आरत भये। ताते बिरही जीवनने रामके मिलनेके वास्ते आरती साजी, स्तुति साजी। सो जीते दर्शन होय तो विरहिनीका मन शीतल तो भी होयगा औ मूये उपरांत दर्शन दिया तो कौन काममें आवेगा ? वो तो आप ही मर गया, फिर दर्शन सुख मिथ्याभूत। ये अर्थ॥ २७० ॥

साखी--पलमें परलय बीतिया । लोगहिं लागु तमारि ॥
आगल सोच निवारिके । पाछल करो गोहारि ॥२७१॥

टीका गुरुमुख--अरे पलमें परलय हो जायगा, चोला छूट जायगा; सो न जानके बड़े-बड़े अनुष्ठान, तपस्या, योग, विद्याभ्यास लोग करते हैं । कोई यज्ञादिक कर्म करते हैं, कोई दौलत पैदा होनेके वास्ते बड़े-बड़े उद्यम करते हैं, कोई महल, माड़ी, बाग, बगीचे लगाते हैं औ विषयनमें अंध हो रहे हैं । अरे आँखसे देखते हैं, कि जेते दिन उदय अस्त होते हैं तेती उमर घटती है । कोई पैदा होते ही मरता है, कोई पाँचमें, कोई दशमें, कोई बीसमें कोई तीस, चालीस, पचासमें मरता है विपत भोगके अथवा सुख भोगके । वृद्ध-जर्जर होयके केते ही मरते हैं । सो देखते हैं कि-हमारी भी ये दशा होयगी; परन्तु ऐसा जानके प्रपंचका त्रास नहीं आता क्योंकि मायामें मोहित भये, ताते जीवनपर तमारी आई, अँधियारी छाय गई, सूझ परता नहीं । ताते अब आगल कुछ सोच करो मत । पिछले लोग पुकार पुकारके मर-मर गये हैं, उनकी कल्पनामें भी मत परो । सब विचारके निराश हो जाव, सुखी होवो औ वर्तमानमें विचार करके बर्तो, सौसक्त होवो मत । ये अर्थ ॥ २७१ ॥

साखी--एक समाना सकल में । सकल समाना ताहि ॥
कबीर समाना बूझमें । जहाँ दुतीया नाहिं ॥२७२॥

टीका गुरुमुख--एक ब्रह्म सकल संसारमें समाया औ सकल संसार ब्रह्म में समाया; जलतरंगन्याय, सुवर्ण भूषणन्याय । इस प्रकार अद्वैत उपदेश वेदने कहा; सोई बूझमें अनुभवमें जीव समाया, जहाँ दुतिया नहीं, अद्वैतमें । ये अर्थ ॥ २७२ ॥

साखी--एक साधे सब साधिया । सब साधे एक जाय ॥
जैसा सींचे मूलको । फूलै फरै अघाय ॥२७३॥

टीका मायामुख--इस मनको साधा तिनने अष्ट सिद्धि, नौ निधि सब साधा । अगर मनको नहीं साधा औ अनेक मंत्र तंत्र आदि साधना

करने लगा, ताके पीछे मन अपनी ऐनमेंसे निकर गया। तब एक भी फल होनेका नहीं; क्योंकि सकल ऋद्धि सिद्धि आदि फलका कारण मूल मन, तो सदा एकाग्र करके विचाररूपी जलसे सींचना तो सब फल फूल सहित तृप्तिको प्राप्त होय। ये अर्थ ॥ २७३ ॥

साखी--जेहि बन सिंघ न संचरै। पंछी ना उड़ि जाय ॥
सो बन कबीरन हींडिया। शून्य समाधि लगाय ॥२७४॥

टीका गुरुमुख—मायाने उपदेश किया, कि एक मनको जिनने साधा; लय किया सोई ब्रह्म हुआ। तब जहाँ सिंह जीवका संचार नहीं औ पंछी मन भी जहाँ उड़ि जाय सकता नहीं औ मन बानीकी भी जहाँ पहुँच नहीं तहाँ योगी लोगोंने शून्य समाधी लगायके ब्रह्मका खोज किया। राजयोग, हठयोग विधीसे मनको लय किया, उन्मनी अवस्था लेके ब्रह्मकी वार्ता करने लगे। ये अर्थ ॥ २७४ ॥

साखी--साँच कहौं तो हौ नहीं। झूठहि लागु पियारि ॥
मो शिर ढारे ढेकुली। सींचै औरकी क्यारि ॥२७५॥

टीका गुरुमुख—अब योगी लोगोंने जो ब्रह्म सिद्धांत किया है सो कछु सच्चा नहीं, मिथ्या धोखा है; परंतु बिना पारख जगतको मिथ्या धोखा प्यारा लगा ताते मेरे शिर ढेकुली डारके और-औरकी क्यारी सींचते हैं। याका अभिप्राय ऐसा है कि गुरुके शिष्य कहलाते हैं। औ गुरुके शिरपर मुक्तीका बोझा देते हैं। औ और-और धोखा, अनुमान, कल्पना, भास, अध्यासादिकी बानी दृढ़ करते हैं तो मुक्त कैसे होयेंगे ?। ये अर्थ ॥ २७५ ॥

साखी—बोल तो अमोल है। जो कोई बोले जान ॥
हिये तराजू तौलि के। तब मुख बाहर आन ॥२७६॥

टीका गुरुमुख—'गुरु' ऐसा जो बोल है सो अमोल है, याको मोल कछु नहीं। अर्थ, धर्म, काम,. मोक्ष, ज्ञान, विज्ञान, योग, वैराग्य सब इस बोलकी निछावर है पर जो कोई जानके बोले तो। गुरु क्या

पदार्थ है ? ऐसा विचार हियेमें करना । गुरु कहिये जो कभी चलायमान न होय औ जाको पाय कसर खोट धोखा, आदि अंत मध्य, सब परखनेमें आवै सोई पारख गुरु; ऐसा हृदयमें विचार करके तौलना । जो किसीके हिलाये हिले नहीं औ उसके सामने सकल पद हिल जाय, तो अतिशय गुरुवा होय सो गुरुपद । ऐसा तौलके आप उसपर थिर होय तब मुख बाहर लाय तो ताका नाम स्मरण अमोल है । अगर कोई बात किसीसे कहना होय, बोलना भई तो पहिले अपने हृदयमें उस बातको तौलना कि ये बात बड़ी वजनदार है, किसीके हिलाये हिलनेकी नहीं । औ जो दूसरेके हिलाये हिल जाय सो हलकी बात, उसे जानके दूर करना, मुख बाहर निकारना नहीं । गुरु शब्द जानके मुख बाहर निकारना सोई शब्द अमोल । ये अर्थ ॥ २७६ ॥

साखी—करु बहिया बल आपनी । छाँड़ बिरानी आस ॥
जाके आँगन नदिया बहै । सो कस मरै पियास ॥२७७॥

टीका गुरुमुख—बहिया कहिये गुरु, गुरु कहिये पारख, सो अपनी पारखका बल करना औ सब धोखा परखके छोड़ना । जाके आँगन नदिया बहै, सो कस मरै पियास । मानुष तन पायके पारखपदको पावना, मानुषपदके सामने पारखपद है औ मानुष पारखका अधिकारी है । तो नाना प्रकारके धोखेमें इनने काहेको मरना । ये अर्थ ॥ २७७ ॥

साखी—वो तो वैसाही हुआ । तू मति होहु अयान ॥
वै निर्गुनिया तैं गुणवंता । मत एकहिमें सान ॥२७८॥

टीका गुरुमुख—अरे जो पहिले आरंभ समय-बड़े-बड़े भये सो सब अजान भये । उनको पारखपद मिला नहीं, जान परा नहीं; ताते वैसे ही वानीके प्रमाणसे अजान ब्रह्म भये, पर तू मत अजान होय । वो तो निर्गुणिया निर्गुण अनुमानमें फँसे ताते निर्गुण वानी सभी धोखा धार

चार वेदादि कथन किया । पर तू गुणवंत पारखी सब एकमें मत सानै, सबको न्यारा न्यारा परखके तू पारखपर थिर हो । अरे वो निर्गुणियनने तो जड़ चैतन्य, जगत्-ब्रह्म सब एकहीमें सान दिया, सबको आत्मा बनाया । सो निर्गुण सगुण दोनों धोखा नाशमान औ पारख सत्य अविनाशी । ये अर्थ ॥ २७८ ॥

साखी–जो मतवारे राम के । मगन होहिं मनमाहिं ॥
ज्यों दर्पणकी सुन्दरी । गहै न आवै बाँहि ॥२७९॥

टीका गुरुमुख–रामके मतवारे रामभक्त, सो अपने मनसे ध्यान अनुमानसे मानस पूजा करके मनहीकी मूरत, मनहीकी पूजा, मनहीमें मगन भये । जैसा दर्पणका प्रतिबिम्ब तैसा इनका मालिक, कुछ गहै न आवै बाँहि । ये अर्थ ॥ २७९ ॥

साखी--साधू होना चाहिये । पक्का ह्वैके खेल ॥
कच्चा सरसों पेरि के । खरी भया नहिं तेल ॥२८०॥

टीका गुरुमुख–साधु होना चाहिये तो पक्के तत्त्व ग्रहण करके पक्के होना, कच्चेका अमल मिटायके खेलना । जैसे सरसों अधकच्चरी पेरी गई तो न खरी भई, न तेल निकरा; तैसा न करना । विवेक कोल्हूमें पेरके पक्का तेल न्यारा निकारना औ कच्ची खरी न्यारी निकार डारना । पक्के का ग्रहण, कच्चेका त्याग करना । धीरज ग्रहण करना, अधीरता छोड़ना; सत्य ग्रहण करना, असत्य नाशमान छोड़ देना; शील ग्रहण करना, अशील निष्ठुरताई त्याग करना; दया ग्रहण करना, निर्दयत्व छोड़ना; विचार ग्रहण करना, विविचार त्यागना । ये पक्केका अर्थ ॥ २८० ॥

साखी--सिंघो केरी खोलरी । मेंढ़ा पैठा धाय ॥
बानीसे पहिचानिये । शब्दहि देत लखाय ॥२८१॥

टीका गुरुमुख–सिंहोंकी खोलरी कहिये गुरुका भेष, मेढ़ा कहिये संसारके जीव; सो गुरुके भेषमें बैठा ताते गुरु करके नहीं जानिये,

उसकी वानीसे पहिचानना । शब्द जो हैं सो उसका स्वरूप,उसकी जाति बताय देगा । जैसे सिंहके खालमें मेंढ़ा पैठा तो सिंह सरीखा मालूम भया, सो देखके जीव भय मानने लगे; परन्तु विचार मान सिंह करके भूलते नहीं, उसकी वानीसे पहिचानते हैं कि-सिंहका रूप धरा, पर सिंहकी आवाज नहीं निकरनेका । तैसा गुरु कहिये सबका पारखी, तो पारखीका भेष धरे कछु पारखी नहीं होता, जो पारखपदको प्राप्त होय औ पारखरूप होय सो पारखी; ताते वानीसे पहिचानिये । जो पारखीकी बानी है सो निर्पक्ष बानी, ताके आगे सब बानी उड़ि जाती हैं । वेद आदिक कोई बानी उसके आगे ठहरती नहीं । जैसा सिंहका आवाज हुआ तब सब वनके सावजनका आवाज उड़ गया, माकूफ हो गया, काहूके शब्दकी मंजील चलती नहीं । तद्वत् पारखीका शब्द है सो सिंह समान है । पारखीके शब्दकी पहिचान है औ वचनकी विशेषताई है, कछु भेषकी पहिचानकी विशेषताई नहीं । ये अर्थ । अगर सिंहोंकी खोलरी कहिये मानुष देह, तामें मेंढा चौरासीका जीव आयके प्राप्त भया तो मानुष करके न जानिये, उसकी वानीसे उसकी खानी पहिचानिये । वानी खानीकी पारख बतावती है औ शब्द सार सबको लखावता है । मानुषकी बानी न्यारी औ पशुकी बानी न्यारी । ताको अर्थ-जो निर्णय बानी है औ सत्य, धैर्य, विचार, शील, दया ये पदार्थ संयुक्त बानी है सो मानुषकी बानी । इसमें जो निरंतर है सो मानुष, मानुष गुरुपदका अधिकारी, मानुष सबका निर्णय कर्ता, मानुष आवागमनसे रहित, मानुषसे दूसरी खानी नहीं, मानुष उत्तम खानी । औ मिलित समुच्चय बानी, अनमिल विषय बानी, मोह काम पक्षापक्ष बानी, ये सब पशु बानी, बिविचार बानी, असत्य बानी, निर्दय वानी, निष्ठुर बानी, अधैर्य बानी; इस बानी इन तत्त्व युक्त जो जीव है सोई पशु । औ तिर्यक् सिंह सो ज्ञानी, कर्मी, अकर्मी, योगी, वियोगी, संयोगी, उपासक, रागी, वैरागी सब आवागमनके अधिकारी हैं । चार

खानी में अनेक चोले धारण करते हैं। बिना पारख अपने स्वरूपको चीन्हते नहीं, तातें धोखा खाते हैं, दुःख पावते हैं। तातें रूप देखके न भूलिये, बानीसे खानी पहिचानिये। ये अभिप्राय ॥ २८१ ॥

साखी--जेहि खोजत कल्पौ गया। घटहि माहिं सो मूर॥
बाढ़ी गर्भ गुमान ते। तातें परि गो दूर ॥२८२॥

टीका गुरुमुख-जेहि खोजत कल्पौ गया। जेहि परमात्माको खोजते-खोजते कई कल्प बीत गये सो हे जीव! तुम्हारी कल्पना तुम्हारे घटहीमें है। परमात्माका मूल कल्पना; कल्पना बिना दूसरा परमात्मा निश्चय होता नहीं। हे जीव! तुम तो सिंघ हो; परंतु कल्पनाके वश मेंढ़ा हो रहे हो। सो कल्पना गर्भ गुमानसे बढ़ी। कायाका गर्भ, दौलतका गर्भ, बानी ब्रह्मका गर्भ, विद्याका गर्भ, ज्ञानका गर्भ, सिद्धीका गर्भ, तपस्याका गर्भ, राजका गर्भ, चतुराईका गुण ये आठ प्रकारके गर्भकी मानंदी सोई गुमान। गुमान कहिये, अभिमान कहिये, सो अभिमान पाँच प्रकारका-विश्वअभिमान, तैजसअभिमान, प्राज्ञअभिमान, प्रत्यगात्मा अभिमान, निरंजन अभिमान; ये पाँच अभिमानमें हे जीव! तू बंध भया तातें पारख तेरेसे दूर पड़ी औ पारख बिना तू छूटनेका नहीं। ये अर्थ ॥ २८२ ॥

साखी-दश द्वारेका पींजरा। तामें पंछी पौन॥
रहिबेको अचरज अहै। जात अचम्भौ कौन ॥२८३॥

टीका गुरुमुख-दश द्वारेका पींजरा देह, तामें पंछी कहिये प्राण सो पवनरूपी, सो रहबेको तो आश्चर्य है। जो खुले द्वारे पींजरेमें रहता है औ उड़ि जाय तो उसको कछु आश्चर्य नहीं। तातें हे जीव! तू गाफिल मत रहे औ गर्भ गुमानमें भूले मत। सब कल्पना धोखा परखके दूर कर, जीते ही मुक्त हो, पारख रूप हो, थिर हो। ये अर्थ ॥ २८३॥

साखी-रामहि सुमिरे रण भिरे। फिरै औरकी गैल॥
मानुषकेरी खोलरी। ओढ़े फिरत हैं बैल ॥२८४॥

टीका गुरुमुख–संसारी लोग रामको सुमिरन करते हैं; कहते हैं कि-राम परमात्मा है, सबका मालिक है; हम सब उसके भक्त हैं। औ वेद कहता है कि सबमें रमा है आकाशवत् सोई परमात्मा, सोई राम। तो भला ये परशुराम, राम, कृष्ण, पांडवादिक क्षत्री रणमें भिरे, युद्ध किये तो युद्ध कासों किया ? क्या जासे युद्ध किया तामें राम नहीं ? क्या तो इन रामसे कैसा युद्ध किया ? रामका गरा कैसे काटा ? गरा काटा तो रामके दुश्मन ठहरे कि रामके भक्त ठहरे ? और औरकी गैल कहिये वाममार्ग आदि और देवतनके मार्गमें फिरते हैं और जीव हिंसा करते हैं, बलिदान देते हैं। तो देखो-इनके वचनको ये नहीं सँभारते ताते पशु बैल हैं। मानुषकी खोलरी ओढ़े फिरते हैं। इनके वचनका क्या प्रमाण है ? ये अर्थ ॥ २८४ ॥

साखी–खेत भला बीज भला। बोये मूठीका फेर ॥
काहे बिरवा रूखरा। ये गुण खेतहि केर ॥२८५॥

टीका गुरुमुख–खेत कहिये मानुष देह और बीज कहिये बिंदु, सो दोनों साबूत हैं फिर कोई लड़की, कोई लड़का औ कोई नपुंसक, ऐसी देह पैदा होती है इसका कारण क्या है ? सो सुनो–बोये मूठीका फेर कहिये, जो चन्द्रमें पुरुष सम्भोग करै औ स्त्रीका रज पहले कँवलमें उतरै, पीछे पुरुषका रेत उतरै औ गर्भ रहे सो कन्या। औ पुरुष सूर्यमें सम्भोग करै औ पहिले पुरुषका रेत उतरै, पीछे स्त्रीका रेत उतरै तो पुत्र पैदा होय। दोनोंका बराबर उतरा तो नपुंसक पैदा भया। ये आकाशतत्त्वमें संयोग भया ताका फेर। भला जो बिरवा रूखरा हो गया, सल हो गया इसका कारण क्या ? तो ई गुण खेतहि केर। वो स्त्रीके कोठेका गुण, कोठेमें कुछ विकार है ताते सल हो गया। ये अर्थ। और खेत शिष्य, बोनेवाले गुरुवालोग, बीज उपदेश विचार, सो दोनों भले; परन्तु जाने जैसा उपदेश किया तैसा उगा। और कहूँ कहूँ बिरवा विचार फीका परा, सो क्यों ? तो ये शिष्यकेही तरफ

कसर उसका अन्तःकरण मलिन औ बुद्धिहीन; ताते विचारका फल हुवा नहीं। विचारका फल कहिये पारख स्थिति, सो हुई नहीं; काहेते कि पारखकी तरफ सुरत किया नहीं। प्रकृतिके वश होयके सुरत गुम होगई ये देहका गुण। ये अर्थ ॥ २८५ ॥

साखी–गुरु सीढ़ी ते ऊतरे। शब्द बिमूखा होय ॥
ताको काल घर्सीटि है। राखि सके नहिं कोय ॥२८६॥

टीका गुरुमुख–गुरु सीढ़ी कहिये गुरुका विचार, सो गुरुके विचारसे जो उतरा सो शब्दसे विमुख भया, भवचक्रमें परा। ताको काल गुरुवालोग गर्भवासमें घसीटेंगे औ स्त्री काममें उसे घसीटेगी, उसे कोई रोक सकनेका नहीं। औ गुरु बिना गर्भवाससे कौन रोकनेवाला है ? ताते गुरुके विचारसे उतरा सो जीव जहँड़ाया। ये अर्थ ॥ २८६ ॥

साखी–भुँभुरी घाम बसै घट माहीं ॥
सब कोई बसै सोग की छाहीं ॥ २८७ ॥

टीका गुरुमुख–भुँभुरी घाम कहिये कछु ज्ञान, कछु अज्ञान, ताको अज्ञान विशिष्ट ज्ञान कहिये; सो सबके घटमें बसता है। ताते सब कोई सोगके छाँयमें रहते हैं, कधी सुख पावते नहीं। आशा, तृष्णा, मोह, कल्पनाके वश नाना दुःख पावते हैं। ताते गुरु सीढ़ीपर चढ़ना, फिर कदराई खायके उतरना नहीं। पीछे प्रपंचके तरफ फिरके न देखै तब गुरु पारखको प्राप्त होय औ सुखी होय, सोग संताप सब छूट जाय। ये अर्थ। और भुँभुरी घाम कहिये बानी, सो सबके घटमें बसती है ताते सोगकी छाँही मोह तामें, सब जीव रहते हैं। सो पारख पाय उड़ जायगी, शोक मोह दूर हो जायगा। ये अर्थ ॥ २८७ ॥

साखी–जो मिला सो गुरु मिला। शिष्य न मिलिया कोय ॥
छौ लाख छानबे सहस्र रमैनी। एक जीव पर होय ॥२८८॥

टीका गुरुमुख—जो पारखमें मिला सो आपी पारख हुआ औ जो गुरुमें मिला सो गुरु हुआ, सो तो स्थित भया । अब बाकी जो कोई जीव रहे हैं सो पारख गुरुसे अनमिले हैं ताते दुःखी हैं । सो अपने दुःखको जानके विरक्त भये औ जगत् सुख, स्वर्गादि सुख स्वप्नवत् मिथ्या जान साँच विचारादि तत्त्वनको प्राप्त भये सो शिष्य । गुरुपद प्राप्तिकी श्रद्धावान, जिनके अन्तः करणमें दूसरी श्रद्धा नहीं औ एक गुरु भक्तिधनी करके गुरुको खोजते हैं, कि गुरु कौन हैं ? औ गुरुपद कौन हैं ? उनका दुःख दूर करनेको गुरुने छौ लाख छानबे हजार रमैनी एक जीवपर कही । छौ लाख कहिये छौ दर्शन, छानबे कहिये छानबे पांखड, सहस्र रमैनी कहिये नाना भक्ती; इनका न्याय कसर कही, जामें जीव सकल बंधनते न्यारा होय । ये अर्थ । यामें एक शंका है, कि गुरुने छौ लाख छानवे हजार रमैनी एक जीवके समझानेके वास्ते कही; परंतु जीव सब समुझे क्यों नहीं ? तो सब गुरुत्वभाव ले रहे हैं, अपना-अपना अभिमान गहि रहे हैं ताते गुरु स्वरूप इनको समझ परा नहीं । निराभिमान शिष्यभावसे कोई मिला नहीं ताते रहि गया, आजलों काहूके समझनेमें आया नहीं । और जो निरभिमानी शिष्य दशाको प्राप्त होके गुरुमें मिले सो गुरुपदको प्राप्त भये । ये अभिप्राय ॥ २८८ ॥

साखी—जहाँ गाहक तहाँ हौं नहीं । हौं तहाँ गाहक नाहिं ॥
बिनाबिबेक भटकत फिरे । पकरि शब्दकी छाहिं॥२८९॥

टीका गुरुमुख—गाहक कहिये मुमुक्षु, मुमुक्षु कहिये शिष्य, हौं कहिये हंकार अभिमान; सो जहाँ शिष्य दशा प्राप्त भई है तहाँ पाँच अभिमानमें कोई अभिमान नहीं । अभिमान रहित शिष्य होके अपनी स्थितिकी श्रद्धा और सब अभिमानका त्याग सोई शिष्य दशा गुरुपदका गाहक । और जहाँ पाँच अहंकारमें एकौ अहंकार दृढ़ भया सो गुरु-पदका गाहक नहीं, उसे पारखपदकी प्राप्ति नहीं । ताते बिना विचार

जगत्में भटकता फिरता है, शब्दका आसरा पक्ष पकड़ रहा है। ये अर्थ ॥ २८९ ॥

साखी—नगपषान जग सकल है। पारख बिरला कोय ॥
नगते उत्तम पारखी। जगमें बिरला होय ॥२९०॥

टीका गुरुमुख—नग कहिये पर्वत, पषान कहिये पत्थर, सो ये पर्वताकार जगत् है तामें चौरासी लाख योनि नाना प्रकारके रूप सोई नाना प्रकारके पत्थर, उनकी कीमत न्यारी न्यारी, एकसे एकका तेज जास्ती। तामें पाँच रतन सर्वोपर-हीरा, लाल, पन्ना, पुखराज, नीलं। ये पाँच रतनका अर्थ—हीरा कहिये सतोगुणी मानुष, सोई देवता, सोई ज्ञानके भक्तीके अधिकारी, विचारके अधिकारी; उनको जो पारखीका संग मिले तो गुरुभक्ती सहवर्तमान पारखपदको प्राप्त होय। औ दूजा लाल कहिये रजोगुणी मानुष, सोई कर्मिष्ठ चतुर बेकारी, भक्ती उपासना सभीके अधिकारी, जो उनको विज्ञान विचार उपदेश करो तो होय, जो अच्छा पारखी मिलै तो देर करके पारखपदकी प्राप्ती होय। और तीजे नीलं सोई तमोगुणी मानुष, सोई राक्षस विषयी अघकर्मी पापयोनि, काहूका अधिकारी नहीं; जो उपदेशी मिलै तो योग वैराग्यका अधिकारी होय। चौथा पन्ना शुद्ध सतोगुण, सो तो ईश्वर सिद्ध, ज्ञान विज्ञानका अधिकारी, जो अच्छा पारखी गुरु मिलै सर्वदेशी तो उसे भी पारखपदकी प्राप्ति होय। पाँचवाँ पुखराज निर्गुण, सो तो परमहंस ब्रह्म विज्ञानी कहिये। औ अनेक मत सो अनेक प्रकारके पत्थर; परंतु पाँच रतन विशेष हैं। तो इस प्रकारके रतन औ पत्थर भी जगत्में बहुत हैं; परंतु पारखी हंस कोई कोई बिरले हैं, उनके बिना जीवका निस्तार और स्थिति नहीं। तो नग पर्वत जगत् और अनेक पषान सब अनेक तरहके जीव। पर्वत जड़ औ पषान भी जड़, जो अपने स्वरूपको जानते नहीं। औ पारखी चैतन्य, जो अपने स्वरूपको जानता है; ताते उत्तम है औ जगमें कोई बिरला है। ये अर्थ ॥ २९० ॥

सवैया–पारखि उत्तम है सबहिनते, अरु पारखि जक्कहिंमें कहिलैये ॥ काल औ कर्म अनेकन फंद सो, पारखि बिना न पारख लहिये ॥ ज्ञानी कर्म उपासक कोई, विज्ञानी योगिनके पथ रहिये ॥ पूरण पारख आप मिलै तब, सबही जालनाते अलगैये ॥ १ ॥

या नग पर्वत सोई स्त्री; ता पर्वतमें पैदा भये सोई पाषान, अनेक पुरुष स्त्रीमेंसे ही पैदा होते हैं। फिर स्त्रीसे विलास करते हैं, स्त्रीके संगमें रहते हैं, अन्तमें स्त्रीके गर्भवासमें समाते हैं; पर्वत पाषान न्याय। जैसे पषान पर्वतमेंसे पैदा होते हैं और पर्वतमें रहते हैं, अन्तमें पर्वतके पेटमें जाते हैं। पर्वत छोड़के पषानको अंते जगह नहीं; तद्वत् स्त्री छोड़के पुरुषनको अंते जगह नहीं। स्त्री सब पुरुषनका अधिष्ठान बन रही है। भग स्त्री छोड़के उत्पत्ती, स्थिति, लय तीनोंको जगह नहीं; परंतु इनका पारखी कोई बिरला है,सो स्त्री पुरुष दोनोंसे न्यारा है, सो सबका न्याय कसर बताता हैं। सो स्त्री पुरुषमें नहीं आता, सबसे न्यारा रहता है, स्थिर है, पारखरूप है, रहित है। ये अर्थ। यामें एक शंका है; कि पारखी स्त्री नहीं, पुरुष नहीं, दोनोंसे न्यारा है तो क्या नपुंसक है ? ये शंका। याका निराकरण करते हैं, कि नपुंसक कहिये ब्रह्म, सो पारखी नपुंसक ब्रह्मको परखनेवाला नपुंसक ब्रह्म नहीं। नपुंसक कहिये स्त्री पुरुषकी एकताई औ स्त्री पुरुषका अधिष्ठान, स्त्री पुरुषकी एकता औ अधिष्ठान सोई ब्रह्म। ब्रह्मकी दो वृत्ती-एक पुरुष, दूजे प्रकृती। ताहीके दो रूप-विद्या वेष्टित औ अविद्या वेष्टित, जीव ईश्वर दो रूप। एकोहं वृत्तिसे दो वृत्ति भई, तासे बहुस्याम् अनेक रूप जगत् पैदा भया। जैसा समुद्रमेंसे एक बड़ा तरंग उठा; ताके दो भाग भये, ताकी अनंत लहरें भईं। तो समुद्र भी जल, तरंग भी जल, लहर भाग भी जल; तद्वत् 'ब्रह्मसे जगत् हुआ' ये वेद वचन। ब्रह्म भी ब्रह्म, वृत्ति भी ब्रह्म, प्रकृति भी ब्रह्म, ईश्वर,जीव, जगत् सब ब्रह्म, नाम रूप उपाधी मिथ्या, सुवर्ण-भूषण न्याय, अद्वैत अखण्ड

ब्रह्म; ये वेद वचन। ताते याको पारखी याते न्यारा पारख भूमिका पर। ब्रह्मके विषय सब कसर विकार, ताते जीवको न्यारा करता है, सो पारखी नपुंसक नहीं। ये अर्थ। एक अनीश्वर, जाके मतसे प्रकृति पुरुष मानतेहैं सो अनेक पुरुष मानते। एक पुरुष, एक ब्रह्म, एक ईश्वर, नहीं मानते। तो प्रकृती पर्वत और अनेक पुरुष सो पषान सोई जगत्, तो ये दोनोंका पारखी दोनोंसे न्यारा पारख भूमिका पर, सबका परखनेवाला सबके साँच-झूठको न्यारा करता है ताते सबसे न्यारा। ये अर्थ। कोई एक मतमें जीवरूप औ पंच महातत्त्वनको मानते हैं औ कछु मानते नहीं। तो पंच महातत्त्व सो पर्वत, जीवरूप अनेक सोई पषान; तो पाँच तत्त्व, जीवरूपकी उत्पत्ति स्थिति औ लय इनते अन्ते जीवरूपको जगह नहीं, ऐसे मानते हैं। तो पंच महातत्त्व और जीव रूप और इनकी कसर विकार परखनेवाला पारखी इनते न्यारा पारख भूमिका पर, पारखी पारखरूप रहित, थिर। ये अर्थ ॥ २९० ॥

साखी—सपने सोया मानवा। खोलि जो देखै नैन ॥
जीव परा बहु लूटमें। ना कछु लेन न देन ॥२९१॥

टीका गुरुमुख—अज्ञानता सोई नींद, तामें मनुष्य सोया, गाफिल हुआ, आपको आप बिसर गया; तामें जगत् स्वपना देखने लगा। सो जगत्में राम नामकी लूट होती है। कोई कहते हैं योग करो, कोई कहते हैं यज्ञ करो, कोई कहते हैं तप करो, कोई कहते हैं जप करो, कोई कहते हैं उपासना करो, कोई कहते हैं भजन करो, कोई कहते हैं कीर्तन करो। सो जीव सब सुन सुनके बहुत लूटमें परे; परंतु जब गुरुकी दयासे जागा औ विचार करने लगा, अज्ञानरूपी नींद उड़ गई औ गुरु पारख आने लगी, स्वपनेकी भ्रांती उड़ी, पारखीका प्रकाश भया तब देखता है तो राम नाम और ईश्वर औ ब्रह्म ये कछु वस्तु नहीं जो लेवेंगे देवेंगे। औ धन, स्त्री, पुत्र, कुटुम्ब जो देखते थे सो भी अंतमें कछु लेने देनेको नहीं। अरे हक नाहक जीव लूटमें परा है, न कछु लेना न

देना । स्वपनेकी संपत स्वपनेमाँह साँचीसी मालूम होती है, जागृती विचारमें सब मिथ्या । ये अभिप्राय ॥ २९१ ॥

साखी—नष्टका यह राज है । नफर का बरते तेज ॥
सार शब्द टकसार है । कोई हृदय माँहि बिवेक॥२९२॥

टीका गुरुमुख—नष्ट कहिये नाशमान, नाशमान कहिये देह; सो देहके राज्यमें नफर मन ताका तेज बरतता है । सो तेजमें जीव लाचार है औ बन्ध है, मनके तेजसे बारंबार गाफिल होता है । ताते सारशब्द टकसार कहिये गुरुका वचन, ताका विवेक सदा हृदयमें करते रहना, कभी गाफिल होना नहीं । जब विवेकका तेज प्रकाश होयगा तब मनका तेज फीका परेगा औ जीव स्वतंत्र होयके मुक्त होयगा, पारख पदको प्राप्त होयगा । विवेकका तेज जैसा सूर्य औ मनका तेज जैसा दीपक । ये अभिप्राय । जब देह नाशमान तो देहसे जो पैदा होय दूसरा अनुमान, ब्रह्म, ईश्वर, कर्ता, सो भी नाशमान । सच्चिदानंद पद बानी, निर्विकल्प- सविकल्प समाधी, सगुण-निर्गुण भाव, सिद्धी, देवता सभी नाशमान, वेदबानी ये भी नाशमान; क्योंकि देह बिना ये कहाँसे सिद्ध होयगा, ताते सभी नष्ट हैं । तो नष्ट कहिये ब्रह्म. औ ब्रह्मके नफर कहिये त्रिदेव, छौ दर्शन छानबे पाखंड ये सब नफर, ये सबका तेज संसारमें बरतता है ताते सब जीवनको इन लोगोंने भुलाया, नाना ग्रंथ, नाना प्रमाण किये तामें जीव सब अरुझे, स्वपनेकी लूटमें परे । ताते सारशब्द कहिये छौ दोष रहित, छौ पुटीकी मानंदी रहित और जा शब्दसे सकल शब्दकी कसर धोखा मालूम होय औ पारखपदको जीव प्राप्त होय सो सार शब्द । और टकसार कहिये जहाँ चार प्रकारका शब्द और साँच झूठका निर्णय होय सो टकसार सबका बीजक, ताको विवेक सदा हृदयमें कोई-कोई जीव करते हैं सो गुरुपदको प्राप्त होते हैं और नफरके तेजमें नहीं आते । नफरका तेज पारखी पर नहीं पर सकता ताते पारखी सदा मुक्त, रहित हैं । ये अर्थ ॥ २९२ ॥

साखी- जबलग बोला तबलग ढोला । तौं लो धन ब्यौहार ॥
ढोला फूटा बोला गया । कोई न झाँके द्वार ॥२९३॥

टीका गुरुमुख-बोला कहिये शब्द, ढोल कहिये देह, तो धन औ ब्यौहार जेते हैं सो सब देहके साथी । और देह छूट गया, बोलना माकूफ हुआ, जीव निकर गया, जहाँ आशा था तहाँ बासा पाया गर्भमें, अब वो द्वार न जाना परा । और धन माल सब दूसरे ले गये, अब ये सकल लौटके फिर उस द्वारे नहीं जा सकते । तो देखो, सब नाशमान ब्यवहार मिथ्या है और नष्टके राजमें नफरका तेज है, वाका संग्रह पारखिनने न करना । ये अर्थ ॥ २९३ ॥

साखी-कर बंदगी बिबेककी । भेष धरे सब कोय ॥
सो बंदगी बहि जान दे । जहाँ शब्द बिबेक न होय२९४॥

टीका गुरुमुख-बिबेक कहिये जो साँच झूठ दोनों मिल रहे हैं, जड़ औ चैतन्य, ताको न्यारा-न्यारा करके समुझौ ता समुझका नाम विवेक है, ताही समुझकी बंदगी करना । क्योंकि समुझेसे समुझ होती है और समुझसे जीवका कारज है, कछु भेषसे जीवका कारज नहीं । भेष तो सब कोई धर लेता है, तासे कछु जीवका कारज नहीं । ताते सो बंदगी जामें जीवका कारज नहीं, ताको पहिचान नहीं । जहाँ शब्दका विवेक समुझ नहीं ताकी बंदगीमें कछु फायदा नहीं । बेफायदेकी बंदगी बहिजाने दे । जो आप ही तृप्त नहीं है सो दूसरेको क्या तृप्त करेगा ? ये अर्थ ॥ २९४ ॥

साखी-सुर नर मुनि औ देवता । सात द्वीप नौ खंड ॥
कहहिं कबीर सब भोगिया । देह धरेको दंड ॥२९५॥

टीका गुरुमुख-देह कर्मनसे पैदा होता है, कर्मके आधारसे रहता है और कर्मनसे नाश होता है । मैथुन कर्मसे पैदा होता है, उद्योग कर्मनसे पालन होता है, संघार कर्मनसे नाश होता है । जैसा कर्तब्य जीव करता है तैसा देह जीवको होता है । फिर वह कर्तब्यका भोग

सोई दंड जीवको होता है। सो दंड देव देवादि नर मुनि सब भोगते हैं। जब भोग सरा तब देह छूट जाता है। कर्म तीन प्रकारका–संचित, प्रारब्ध, क्रियमान। संचित कहिये जो अनेक जन्मका कर्म भोगते-भोगते बाकी रहा औ प्रारब्ध कहिये पिछले जन्मके कर्म अब भोगता है, सोई कर्मनका रूप ये देह कर्मके जोरसे भोगके वास्ते खड़ा है, कर्म भोगे बिना मिटते नहीं। जब भोग पूर्ण हो चुका तब कर्म मिट गया, जब कर्म मिटा तब देह छूटा; ये प्रारब्ध कर्म। तीसरे क्रियमान कर्म, जो अब मानंदी करके कर्म होता है सो क्रियमान, आगे देह होनेका कारण, देह होनेका बीज कर्म है। ये तीन प्रकारके कर्म जीवको दंड हैं। सो सुर, नर, मुनि, देवता आदि जेते देहधारी भये सो सबनने देह धरे का दंड भोगे, दंड भोगे बिना छूटते नहीं। तब विचार करनेकी और सतसङ्ग करनेकी विशेषताई क्या? ये शंका। विचार और सतसङ्गकी विशेषता ऐसी है कि गुरु विचार उदय होनेसे संचित कर्मका नाश होता है और क्रियमान कर्म हो सकता नहीं; क्योंकि विचारसे मानंदी सब मिथ्या ठहरी, ताते मानंदी कर्म भी मिथ्या ठहरा; ताते हो सकता नहीं। जब क्रियमान नहीं, तब आगे देह भी नहीं, जब बीजनाश हुआ तब वृक्ष भी नहीं। अब रहा प्रारब्ध, सो ताका रूप देह बना है सो भोगेसे नाश होवेगा, फिर आगे कछु नहीं; ये विचारकी विशेषताई। तो भला येही तरह ब्रह्मज्ञानी वेदांती बोलते हैं। ये शंका। तो बोलते तो सत्य हैं; परन्तु गुरुपद पारख स्थितिको प्राप्त भये नहीं, ये कसर है ताते बीज हैं। कसर सोई बीज, ताते फिर देह होता है। ये कसर पारख प्राप्त होय तो रहित होय। ये अर्थ ॥ २९५ ॥

साखी–जबलग दिलपर दिल नहीं। तबलग सब सुख नाहिं॥
चारिउ युगन पुकारिया। सो संसै दिलमाहिं॥२९६॥

टीका गुरुमुख—दिल कहिये चित्त, चित्त कहिये चैतन्य, चैतन्यके ऊपर चैतन्य कहिये पारख। सब चैतन्यकी गति मति जासे जाननेमें आवै सो सब चैतन्यके ऊपर चैतन्य। तो याको अभिप्राय ऐसा है कि, जबलग जीव पारखपदको प्राप्त नहीं हुआ, तबलग सब सुखको प्राप्त नहीं। सब सुख कहिये जासे आवागमनको दुःख दूर होय, सो सब सुख। चारों युग वेद शास्त्र सब पुकार करते हैं सर्व सुखके प्राप्तिके वास्ते और जीव सबने सर्व सुख ब्रह्मानंद सुख माना है सो सुख नहीं; क्योंकि ब्रह्मानंद सुखमेंसे जगत दुःखका रूप पैदा भया। जा सुखमें दुःख पैदा भया सो कछु सुख नहीं, दुःखही दुःखका अधिष्ठान। तो ब्रह्मानंद कहिये ज्ञानकी सुषुप्ति और सब सुख कहिये विषयानंद, योगानंद, अद्वैतानंद, विदेहानंद, ब्रह्मानंद, ये पाँच आनंद उड़ जाय पारखसे और जोई सुख रहै सो निजसुख, पारखी बिना प्राप्त होता नहीं। सो जीवनको पारख आनेके वास्ते परखीने चारों युग पुकारा; परन्तु जीवनने कुछ पाँचों आनंदकी कसर परखी नहीं, ताते सुखकी प्राप्ति भई नहीं, संशय जीवमें बनी रही। ये अर्थ ॥ २९६ ॥ *

साखी—यंत्र बजावत हौं सुना। टूटि गया सब तार ॥
यन्त्र बिचारा क्या करे। जब गया बजावन हार॥२९७॥

टीका गुरुमुख—यंत्र कहिये देह, यंत्र कहिये बाजा, सो देह बिना कोई आवाज उठा नहीं, वेद शास्त्रादि सब आवाज देहसे उठे। 'तेही

---

* साखी:—(२९६):—श्रीसद्गुरु कहते हैं कि, चारों युगनसे गुरुवा लोगोंने वेद, शास्त्रादि कल्पित वाणीका ही पुकार किया। और सोई वाणी श्रवण कर-करके अब भी अज्ञानी जीवोंके दिलमें संशय दृढ़ हो रहा है। किन्तु बिना पारख आवागमन छूटा नहीं। अथवा चारों युगमें कर्त्ता पुरुषही औतार ले-लेकर बार-बार प्रगट होते हैं और धर्मका स्थापन करके भक्त जनों का उद्धार करते हैं। ऐसी वाणी गुरुवा लोगों ने जो पुकार-पुकार कर कहा; सोई संशय अज्ञानी जीवोंके दिलमें पुष्टि हो गई; ताते आवागमन छूटा नहीं। पारखबोध जीवोंको प्राप्ति भई नहीं। इसीसे संशय दिलसे मिटी नहीं। उसे पारखी सन्त पुकार २ कर परखाते हैं, तो भी चारों युगादि के मानन्दी कल्पना में पड़े हुए मनुष्योंको कुछ समझमें नहीं आती। ये भाव॥

—रामस्वरूपदास।

ब्रह्म येही जीव' ऐसा आवाज उठा, सोई आवाज सब मनुष्यनने सुना, ताहीमें वश भया । तो देखो, दोष जीवका कि देहका ? ये शंका । अरे यन्त्री बिना कहीं यन्त्र बाजता है ? तो यन्त्र कैसा ही बाजे, कछु यन्त्रका दोष नहीं । जैसा बजाने वालेने बजाया तैसा यन्त्र बजा, जैसा बोलनेवालेने बोला तैसा देहसे आवाज निकरा । जब बोलनेवाला निकर गया तब देह यन्त्र पड़ा रहा । देह क्या करेगा ? ये यन्त्रीने यन्त्र बजाया, आप अवाजके बंधनमें आया सोई आगे देह धरनेको बीज हुआ । जैसा बाजावालेने एक बाजा बनाया और उसको बजाया और उसके शब्दमें बँधिके आसक्त हुआ, फिर वो यन्त्रके तार टूटे तो दूसरा यन्त्र बनावेगा । दूसरा यन्त्र बनानेका बीज आसक्ती है । तैसा देह यन्त्र, यामें इंगला, पिंगला, सुषुमना ये तीनों तार, याहीसे यन्त्र बजता है और यन्त्री जीव बजाता है । जब तार टूट गया, श्वासा टूटा तब यन्त्र फीका परा, देह गिर परा । फिर यन्त्री जीव गया, यन्त्रका क्या काम ? तार टूटे आवाज तो निकरनेका नहीं, यन्त्री कैसे खुशी होयगा । ताते दुःखी उदास होयके और देह छोड़के अन्ते दूसरा देह यन्त्र बनाया, फिर आपही बजाने लगा । अब वो देह निकम्मा भया । ये अर्थ ॥ २९७ ॥

साखी–जो तू चाहै मुझको । छाँड सकलकी आस ॥
मुझही ऐसा होय रहौ । सब सुख तेरे पास ॥२९८॥

टीका गुरुमुख–जो तू मुझे पारखको चाहता है तो सकलकी आशा छोड़ दे । आशा सोई दूसरी बंधन, बंधन सोई दुःखका रूप है । अशा पुत्रकी, धनकी, स्त्रीकी, घरकी, कुटुम्बकी, राजकी, काजकी, अनाजकी, वस्त्रकी, जलकी, ऋद्धि-सिद्धिकी, स्वर्गकी, देवताकी, योग-ज्ञान-भक्तीकी, देहकी केवल मुक्तीकी; आशामात्र सब जीवको बंधन । और पारखकी आशा सब वो नहीं, ताते जो पारखको चाहै तो सबही आशा छोड़ै और मुझही ऐसा पारख हो रहै तो सबही सुख तेरे पास है । जब-

लग तू सुखकी आशा करेगा तबलग तेरेको दुःख होवेगा, सुख नहीं मिलनेका। जबही सुख-दुःख दोनों मिथ्या परखके छोड़ेगा तब सुख तेरे पास है, पारख सुख तेरे पास है और जो आशा बासा छोड़के पारखरूप हुआ सो गुरुरूप, जो गुरुका सुख सो उसका सुख। स्वेच्छा वर्तमान सिद्धिका, पर इच्छा वर्तमान भक्तका, अनीच्छा वर्तमान ज्ञानीका, निराश वर्तमान पारखीका। जहाँ कोई वर्तमानकी आशा नहीं सो निराश वर्तमान, तामें सब सुख है। ये अर्थ ॥ २९८ ॥

साखी–साधु भया तो क्या भया। बोलै नाहिं बिचार ॥
हतै पराई आतमा। जीभ बाँधि तरवार ॥२९९॥

टीका गुरुमुख–साधु भया, जाति पाँति मर्यादा छोड़ी, भेष साधुका धारण किया; पर विचार करके बोलता नहीं, पक्ष लेके बोलता है। वेद पक्ष, शास्त्र पक्ष, नाना ऋषिनका, नाना मतनका पक्ष; सो सब अविचार वानी, जासे पराई आत्माको मारते हैं, जीवहिंसा करते हैं। उनका संग दूर छोड़ना। जाने जीभमें तरवार बाँधके अनेक वानी बोलके जीवको बंधन दिया सो काल, उसकी संगत छोड़ देना। जामें जीव दुःख पावै और जीवका विनाश होय सो बानी तरवारके माफिक है। जाने जीभमें बाँधा सो साधु भया, तब भी उसका संग छोड़ना, वह जीवका घात करेगा। ये अर्थ ॥ २९९ ॥

साखी–हंसा के घट भीतरें। बसै सरोवर खोट ॥
चलै गाँव जहवाँ नहीं। तहाँ उठावन कोट ॥३००॥

टीका गुरुमुख–हंसाके घटमें जो अनुभव बसता है सो सब खोटा मिथ्या है। अरे जहाँ गाँव बस्ती नहीं तहाँ शून्यमें स्वर्गमें कोट उठाने चले तो मिथ्या भ्रांती। हंसा कहिये जीवको जीव कहिये जाको कभी नाश न होय, मानसरोवर कहिये जीवकी मानंदी, मानंदी-परोक्ष, प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमेय, शास्त्र, अर्थापत्ति, भाव, अनुभव। मानंदी दो प्रकार-परोक्ष, अपरोक्ष; ताके आठ प्रमाण, ताको अर्थ-प्रत्यक्ष कहिये जो आँखसे

देखनेमें आवै सो स्थूल देह । अनुमान कहिये जो देखनेमें न आवै, चित्तसे अनुसंधान करै-'जो ऐसा होयगा' सो सूक्ष्म । उपमेय कहिये-इसके सरीखा है, आकाशसा, वायुसा, तेजसा, पृथिवीसा, सो कारण । शास्त्र प्रमाण कहिये जैसा शास्त्रमें वेदमें लिखा होय सो मानिये । अर्थापत्ति कहिये जो अर्थ करके वस्तु ठहरे सो मानिये । अभाव प्रमाण कहिये काहू प्रमाणका काहू, वस्तुका भाव नहीं सोभी कारण । भाव कहिये सबका अभाव सुषुप्तिवत् औ अपना भाव सोई महाकारण तुरिया । अनुभव कहिये निज समुझ, जहाँ काहूका भाव नहीं, और अपना भी भाव नहीं, भावातीत भाव कैवल्य आत्मा सच्चिदानंद । ये अष्ट प्रमाण कर करके दो प्रकारकी मानंदी हंसाके घटमें बसी, सो खोटी और बंधन । सो परखके दूर करना । ये अर्थ ॥ ३०० ॥

साखी—मधुर वचन हैं औषधी । कटुक बचन हैं तीर ॥
श्रवण द्वार होय संचरे । सालै सकल शरीर ॥३०१॥

टीका गुरुमुख—मधुर वचन, मीठा वचन मानसी कटुक वचनकी औषध है; ताते मीठी वानी बोलना, जाते जीव सुख पावै । कटुक वचन है सो मनको तीर है, कानके द्वारेसे पैठके मनको बेध करता है । फिर सब शरीरमें दुःख होता है, ताते कडुक वचन काहूको न बोलिये । ये अर्थ ॥ ३०१ ॥

साखी—ढाढ़स देखो मरजीवको । धाय जुरि पैठि पतार ॥
जीव अटक मानै नहीं । ले गहि निकरा लाल ॥३०२॥

टीका गुरुमुख—ढाढ़स कहिये दृढ़ता, मरजीव कहिये योगी, सो योगिनकी दृढ़ताई देखो-दृढ़ कहिये श्वासा, सो श्वासामें जुरके पाताल-वासमें बैठा, नाभी कुंडलीमें बैठा । अरु मेरुडंड होयके ब्रह्मांडमें पैठके लाल कहिये ब्रह्म अनुभव सो ले निकरा, जीवने षट्चक्रकी अटक मानी नहीं । राजयोग संधानसे प्रथम अग्निचक्र बेधा, फिर विशुद्धिचक्र बेधा,

फिर अनहदचक्र बेधा, फिर मनिपूर चक्र बेधा, फिर स्वाधिष्ठान चक्र बेधा, फिर मूलाधार चक्र बेधा; ऐसी उलटी राह चलाई। मरजीवने काहू बातकी अटक मानी नहीं, मरने जीनेको डरा नहीं, ब्रह्म अनुभव लेके निकरा। सोई ढाढ़स जीवनको दृढ़ता भई कि-'हम ब्रह्ममें मिले, आवागमनसे रहित भये;' परंतु धोखेमें परे इनकी ढाढ़स अंतमें डूब जायगी। जब चोला छूट जायगा तब योग कला नाश होयगी; फिर इनका अनुभव कहाँ रहेगा। ये अर्थ ॥ ३०२ ॥

साखी—ई जग तो जहँड़े गया। भया योग ना भोग ॥
तिल झारि कबीरा लई। तिलैठी झारे लोग ॥३०३॥

टीका मायामुख—योगकी विशेषता योगी लोग बताते हैं कि-ये जग जहँड़े गया, भ्रमही में गया। न जगत्‌में योग भया, न भोग भया, दोनोंमेंसे एककी प्राप्ति भई नहीं। तिल कहिये जीव, तिलैठी कहिये देह; सो नेती, धोती, कपाली, कुंजल, बस्ती; ये क्रिया करके षट्‌चक्र झारिके जीवको लेके योगीजन ब्रह्म भुवन में गये और ब्रह्म भये। तिलैठी देह, ताको अज्ञानी लोग झारते हैं। तीर्थ नहाते हैं, व्रत करते हैं, जप तप करते हैं, शिला धातु अन्धे जड़मूर्ती पूजते हैं, वेद शास्त्र आदि बहुबानी पढ़ते हैं; तो इनको ब्रह्म प्राप्ति होनेकी नहीं। तिलके पेरे तेल निकरता है, कुछ तिलैठीके पेरे तेल निकरता नहीं। तैसा योग क्रियामें जीवको पेरना, तामें सकल सिद्धांत निकरता है और ऊपर देहको कर्मनमें पेरे कुछ निकरता नहीं। सो आदिनाथादि सकल सिद्ध योग सिद्धांतका रस लेके परमपदको गये। अब खाली बानी रही है सो लोग झारते हैं, यामें कहाँ पावेंगे योग बिना। ये अर्थ ॥ ३०३ ॥

साखी—ये मरजीवा अमृत पीवा। क्या धसि मरसि पतार ॥
गुरुकी दया साधुकी संगति। निकरि आव यहि द्वार ३०४॥

टीका गुरुमुख—अब मायाने ऊपरकी साखीमें योग उपदेश किया, तामें सब जीव अरुझा। ताते गुरु निकारते हैं कि-हे, मरजीवा जीव!

तू जीयत ही मरि रहा, योग समाधिस्थ हुआ और ब्रह्मांडमेंसे अमृत चुवता है सो लंबिका योग करके उर्ध्वद्वारेसे तूने पिया और मग्न हुआ; परंतु इसका कारण क्या ? तेरेको कुछ अमृतसे और समाधीसे काम नहीं; क्योंकि उससे तेरी कछु स्थिति नहीं, अमृत औ समाधी नाशमान् है और विजाती है, तेरी स्वजाती नहीं। तू अविनाशी जीव है, चैतन्य है और पारख तेरी स्वजाती भूमिका है। सो गुरुकी दयासे सत्संग द्वारा तू अपनी भूमिका पर निकरि आव, थिर हो। अरे काहेके वास्ते पतारमें नाभी कुंडलीमें धसके मरता है ? याते कछु कारज नहीं। अरे जेता न्यारा करके जाना तूने सो सब विजाती तेरेको बंधन हैं। तू सत्संग द्वारा सबको परखके पारख भूमिका पर थिर हो। ये अर्थ ॥ ३०४ ॥

साखी केतेहि बुन्द हलफो गये। केते गये बिगोय ॥
एक बुन्दके कारणे। मानुष काहेक रोय ॥३०५॥

टीका गुरुमुख–बून्द कहिये देहको, जो पिताके बिंदुसे पैदा भया। सो कितनी तेरी देह तो हलफो गई, पिताके रेतके संग माताके गर्भमें ही छूट गई, गर्भपतन हुआ। केतिक देह माताके गर्भमें पुष्ट होयके छूटी, केतिक देह लरकाईमें छूटी, केतिक तरुणाईमें छूटी, केतिक वृद्धाईमें छूटी, केतिक सुख भोगते छूटी, केतिक दुःख भोगते छूटी। अब हे जीव ! ये वर्तमानमें तेरी एक देह है सो वर्तमानके आधीन है। जैसा उसका वर्तमान है तैसा वर्त जायगा। तू देहका आश्रित होयके काहेको रोता है ? काहेको चिंता करता है ? अचिंत पारखपर आरूढ़ रहो। ये अर्थ ॥ ३०५ ॥

साखी–आगि जो लागि समुद्रमें। टूटि टूटि खसे झोल ॥
रोवैं कबिरा डाँफिया। मोर हीरा जरे अमोल॥३०६॥

टीका गुरुमुख–समुद्र कहिये संसार, तामें माया कल्पनाकी आग लगी। आग कहिये पाँच प्रकारकी–जठराग्नि, योगाग्नि, मंदाग्नि,

ज्ञानाग्नि, औ ब्रह्माग्नि; ये पाँच प्रकारकी अग्नि, तामें अमोल हीरा कहिये जीवको, सो जरता है । औ कबीरा कहिये गुरुवा लोग, सो अनेक तरहकी कल्पना कर-करके रोते हैं । सो सुनिके जीव जरते हैं । कोई पेटकी अग्निके मारे दुःखित हैं, खेती करते हैं, व्यापार करते हैं, पराई ताबेदारी करते हैं, गुलामगीरी खिदमतदारी करते हैं, दूतपना के सब चतुराई कारीगरी करते हैं, चोरी छिनारी बटपारी लबारी धूर्तारी करते हैं, नचनियाँ, बजनियाँ गवैयाँ भवैयाँ भाँड़ बनते हैं, भिखारी भीख माँगते हैं । ऐसी पेटकी अग्नि कठिन है, नाना कर्म करते हैं ताहू पर शांत होती नहीं, जीवनको जराती है ।

कवित्त—अग्नी जब पेटकी उठत प्रचंड होय, भूखही भूख सब करत लोई । भूखसे मात पिता पुत्र त्यागही, भूखसे जात कुल गोत खोई ॥ भूखसे होत दुर्बुद्धि अति मानुषको, भूखसे कामिनी जारा होई ॥ भूखसे ज्ञान गुण ध्यान थकि जात हैं, भूखसे डरे सुर नर मुनि लोई ॥ भूख चंडालिनी मोर पाछे परी, भूख ले जात है राजद्वारा ॥ ज्ञान वैराग सब करत साधू जना, भूख ले जात हैं द्वार द्वारा । भूखसे राग रंग विषय फीका लगे, भूखसे योग जप होत न्यारा । भूखते देव मुनी होत बेहाल बहु, पूरन यहि भूखने जगत मारा ॥ १ ॥

ये पेटकी अग्नी महादारुण, तामें अमोल हीरा जीव जरता है । ये जठराग्निसे बचनेके वास्ते गुरुवालोगोंने बहुत रोयके बिरह जगाया । जगत्में बिरह अग्नि लगाया और योग उपदेश किया तब जीव योगाग्निमें जरने लगे । खेचरी, सन्मुखी, अगोचरी, चाचरी, भूचरी, शांभवी, उन्मीलनी, आत्मभावनी, सर्वसाक्षिनी, पूर्णबोधनी; ये दश मुद्रा साधने लगे । यम नियम, प्राणायाम प्रत्याहार, संयम, ध्यान, धारणा, आसन, समाधी, लंबिका योग; लय योग, अमनस्क योग, तारक, कुण्डली, त्राहाट योग करने लगे। नेति, धोती, बस्ती, कपाली, कुंजल; ये पंच क्रिया करने लगे । हठ

योगादि कर्म करके योगाग्निमें जीव जरने लगे। तीसरी मंदाग्नि–अज्ञान जनित तामसी कल्पना उठी तब नाना प्रकारका तप करने लगे। तीर्थ, व्रत, दूब अहार, दूध अहार, फल कंद मूल पत्र अहार करने लगे। निराहार, वायु अहार, जलशय्या, अनलशय्या, पंचाग्नि तापने लगे। नाना प्रकारके काया कष्ट, ताही अग्निमें जरे। गुरुवा लोगनकी बानीके प्रमाणसे जीव दुःख भोगी भये। चौथी ज्ञानाग्नि–संन्यासी भये, दंड धारण किया, संन्यास क्रिया आचरण करने लगे, साधन चतुष्टय साधने लगे, नित्यानित्य विवेक, इहामुत्रफल भोग विराग, शम, दम, उपरति, तितिक्षा, श्रद्धा, समाधान समाधी षट साधने लगे। मुमुक्षु दशा साधिके ज्ञानाग्निमें जरने लगे। अब ब्रह्माग्नि--अहं ब्रह्मास्मि। स्वयं ब्रह्मास्मि। इत्यादि सर्व वाक्य साधिके 'मैं आत्मा जैसेका तैसा' ये निश्चय करके बाल, पिशाच, उन्मत्त, मूक, जड़वत् होयके ब्रह्माग्निमें जरते भये। इस प्रकारसे गुरुवा लोगनके उपदेशसे मेरा हीरा अमोल जीव जरता है, दुःख भोगता है बिना पारख; ऐसा गुरु कहते हैं। ये अर्थ। गुरुवा लोगनका उपदेश सोई संसार सागरमें अग्नि लगी। तामें बड़े-बड़े झोल कहिये बड़े-बड़े जीव नरदेहीके सो टूट-टूटके खस पड़े, उपदेश अग्निमें जरे। ये अर्थ। संसार समुद्रमें बी आग लगी तामें पुरुष जीव सोई झोल टूट-टूटके खस परते हैं गर्भवासमें और कबीर जीव जब गर्भका दुःख देखता है तब रोवता है। सो गुरु कहते हैं कि–मेरा अमोल हीरा जीव, सो गर्भवासमें गाफिलीके वश जरता है। ये अर्थ। विषय अग्निमें रेतके झोल टूट-टूटके खस परते हैं। विषयनकी प्राप्तिके वास्ते जीव नाना उद्योग करते हैं; परन्तु तृप्ति होती नहीं, ताते रोते हैं। तो देखो-ये जीव अमोल, सो विषयनके वश होयके याकी बे कीमत होगई, विषय अग्निमें जरता है। कल्पनाकी आगसे जीव गर्भवासमें खस परता है। और मोहको आगसे जीव गर्भवासमें जाता है और चौरासीका दुःख देखकर रोते हैं। अपने गाफिलीके वश रहते हैं बिना पारख। ये अर्थ॥ ३०६॥

साखी--छौ दर्शनमें जो परवाना । तासु नाम बनवारी ॥
कहहिं कबीर सब खलक सयाना।इन्हमें हमहिं अनारी२०७॥

टीका गुरुमुख-योगी, जंगम, सेवड़ा, संन्यासी, दरवेश, ब्रह्मचारी; ये छौ दर्शनमें जो प्रमाण भया सोई नाम जगत्में प्रमाण भया। जाप षट्-दर्शनका--'ॐकार' ब्राह्मण उपासक, 'सोहं ब्रह्मास्मि' संन्यासीका जाप, दरवेशमें दो प्रकार-एक हिंदू, ताका जाप 'सोहं हंसो' और मुसलमानका जाप 'हू अल्लाहू,' 'नाद मही अहं नाद' ये योगीका जाप, 'तत्त्वनाम अरिहन' ये सेवड़ेका जाप, 'निरंजनाय' ये जंगमका जाप। सिद्धांत षट्दर्शनका-'अदेव मूल' ये ब्रह्मचारीका, 'अहं ब्रह्मास्मि' ये संन्यासीका, 'पवनमें पवन' ये दरवेशका 'पृथिवीमें पृथिवी' ये योगीका, 'चन्द्रमुक्त शीला' ये सेवड़ेका, 'महदाकाशमें आकाश' ये जंगमका । ये षट् सिद्धांत षट् नाम संसारमें प्रमाण भये, सो छवो धोखा; परंतु कोई विचार करके परखते नहीं। अगर छौ मतसे पारख पारखपद, ऐसा कोई बताया चाहे तो उसे बौरा दिवाना ठहराते हैं और खलक छौ मताका बँधुवे, सो सब सयाने बनते हैं। ये आश्चर्य। तो गुरु याका दृष्टांत बताते हैं जैसा कोई एक नगरका राजा परमध्यानी, सो योगध्यानमें बैठा तीन दिन। तबलग उसके नगरमें अबुधका जल बरसा। सो जल सबनने पिया तो सबकी बुद्धि नाश भई। चौथे दिन राजाने दरबार किया और सब प्रधान और सब पंडित और नगरके लोग आये, सो दिवानी बातें करने लगे। सो सुनिके राजाने आश्चर्य किया और सबको समुझावने लगा कि दिवानी बातें तुम सब मत करो, क्यों करते हो? तब सब लोग चमके और कहने लगे कि--राजा दिवाना हो गया, देखो-सब पागल सरीखी बातें बोलता है। याको कैद करो या मारो। ऐसा मनसूबा सबन मिलि किया। तब राजा चकित हुआ और कहने लगा कि-सबकी मति बुद्धि नाश हुई। अब इनसे कछु बोलना नहीं। नहीं तो आप अकेले और ये बहुत हैं। सो ये अपनेको फजीहत

करैंगे । ताते इनहीकी ऐसी बातैं करके इनको समुझाना, जाते ये सब मानुष पनमें आवैं; ऐसा निश्चय राजाने किया । फिर सबकी ऐसी बातैं कहिके सबको समुझाने लगा, कसर बताने लगा । तद्वत् गुरुने जगत्‌में देखा, याका दृष्टांत सुनो-गुरु अपना पक्का देह लेके पारख समाधीमें बैठे थे, उतनेमें आनंद जल बरसा । सो हंसाने पान किया सो भूला, पक्केका कच्चा हुआ, एकका अनेक हुआ । तब काम जल बरसा और सब जीवनने पिया, सो दिवाने भये औ दिवानी बातैं करने लगे और दुःख पावने लगे । तब गुरु आप प्रगट होके सबकी ऐसी बानी बोलके सबकी कसर परखावने लगे । सब खलक सयाना, इनमें हमहीं अनारी । उनका अनारीपना आपने लिया और अपना सयानपना उनको देके परखावने लगे । ये अभिप्राय ॥ ३०७ ॥

साखी--साँचे श्राप न लागै । साँचे काल न खाय ॥
साँचहिसाँचा जो चलै । ताको काह नशाय ॥३०८॥

टीका गुरुमुख-हे जीव ! तू सच्चा है ताते तेरा नाश तीन कालमें नहीं, तू अविनाशी है । जो कोई श्राप देके तेरा नाश किया चाहे तो तेरा नाश होता नहीं, तेरेको श्राप लगता नहीं; क्योंकि तेरे सिवाय श्रापादिक जेते पदार्थ हैं सो सब मिथ्या हैं, अनित्य हैं । तू नित्य वस्तु, तेरा नाश अनित्य वस्तुसे होवे नहीं । और सत्य वस्तुको काल नहीं खाता; क्यों कि,काल अनित्य नाशमान और तू जीव अविनाशी, कधी तेरा नाश नहीं । तू सच्चा और तेरा विचार भी सच्चा । याके लिये गुरु कहते हैं कि-हे जीव ! तू पारखी और सब अनुमान, कल्पना, भास, अध्यासादि; ये सब मिथ्या विविचार, सोई अनित्य औ तू नित्य वस्तु पारखी । सो पारख भूमिकाते परखके सत्त, विचार, शील, दया, धीरज और विवेक, वैराग्य औ गुरुभक्ती; ऐसी तेरी सच्ची चाल और चलनेवाला जीव, सो पारख भूमिकाको प्राप्त भया ताका नुकसान तीन कालमें नहीं । ये अर्थ ॥ ३०८ ॥

साखी—पूरा साहेब सेइये । सब विधि पूरा होय ॥
ओछेसे नेह लगायके । मूलहु आवै खोय ॥३०९॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि-हे जीव ! पूरा कहिये जो अपना निजपद पारख परखावै सोई गुरु भूमिकाको प्राप्त होना, सोई सेवा । सब विधि पूरा होय कहिये सब अध्यासको दर्शावै । कर्म अध्यास, यामें दो प्रकार-एक शुभ और एक अशुभ । अशुभ कहिये विषयादिक, शुभ कहिये स्वर्गादिक । और योग अध्यास, याहूमें दो प्रकार-एक शुभ और एक अशुभ । अशुभ कहिये हठयोग और शुभ कहिये राजयोग । भक्ती अध्यास, याहूमें दो प्रकार-एक शुभ और एक अशुभ । अशुभ कहिये जो आठ प्रकारकी मूर्ति प्रतिमादिक पूजन और तीर्थ व्रत करे और शुभ कहिये नाम सुमिरन । औ ज्ञान अध्यास, याहूमें दो प्रकार-शुभ और अशुभ । अशुभ कहिये जो विधि निषेध ज्ञान करे और शुभ कहिये जहाँ विधि निषेध कछु नहीं, 'मैं जैसेका तैसा' । इस प्रकारसे सर्व अध्यासको जो जानता है औ इनसे चित्त नहीं रखता ताको पूरा कहिये । और अध्यासमें जो कोई जीवको नेह लगावता है सो झूठा ओछा, सो ओछा झूठेकी संगत कियेसे मूल जो जीव; याकी समुझ है, सो ता समुझकी हानि होती है । ये अर्थ ॥ ३०९ ॥

साखी—जाहु वैद्य घर आपने । यहाँ बात न पूछै कोय ॥
जिन यह भार लदाइया। निर्बाहेगा सोय ॥३१०॥

टीका जीवमुख—वैद्य कहिये गुरुवालोग,सो गुरुवालोगनने जीवनको उपदेश किया, श्रवण मनन निदिध्यासन क्षाक्षात्कार; ऐसा संयम बतायके निज साक्षात्कार विज्ञान शब्दातीत आनंदमय ब्रह्मपदको प्राप्त होनेके वास्ते संबोधन जीवको किया । सो जीव गुरुवा लोगनसे कहते हैं कि-हे महाराज ! आपने शब्दा तीतका उपदेश किया सो शब्दहीसे किया, सो तो शब्द ही है, सो शब्दातीत कैसे हुआ ? अब गुरुवालोग जीवनको समुझावते हैं कि-आनन्दमें कछु द्वैत भावना नहीं तो सहज ही

शब्दातीत हुआ। तब मुमुक्षु जीव बोलते हैं कि-शब्दातीत अनिर्वाच्य ब्रह्म स्वरूप है, ऐसा प्रमाण तुमने किया; सो ऐसा भास किसको हुआ? भासै बिना प्रमाण तुमने कैसा किया? तो ये सब तुम्हारा भास और तुम शब्दातीतके भासिक, सो भासमें स्थिति जीवनकी कैसी भई? जीव सब नष्ट गये, कछु खातिरी न भई। तो तुम्हारा उपदेश मिथ्या धोखा है। सो वैद्यजी तुम्हारा उपदेशरूपी दवाईसे तुम्हारा ही यह संशयरूपी रोग न गया तो हमारा कल्याण कैसे होयगा? तुम्हारा उपदेश तो मिथ्या धोखा ठहरा। ऐसा जो मिथ्या धोखेमें तुमने घर किया है ताते गुरु कहते हैं कि--जाव वैद्य घर आपने। जो वो धोखामें घर किया है सो धोखामें जाव, यहाँ कोई तुम्हारा अनुग्रह अंगीकार नहीं करता। ताके वास्ते उपदेशरूपी भार लिये चौरासीमें आते जाते हो, सो तुम्हारा भार तुम हीं निर्वाहो। ये अर्थ॥ ३१०॥

साखी–औरनके सिखलावते। मोहड़े परगौ रेत॥
रास बिरानी राखते। खाइनि घरका खेत॥३११॥

टीका गुरुमुख–गुरु कहते हैं कि-गुरुवालोग जीवनको सिखापन देते हैं, कि ब्रह्म ज्ञान आनंदमय अद्वैत स्वरूपको प्राप्त होय। सो उपदेश करते-करते थकित भये, सोई रेत मोहड़नमें काँटा पर गया; परंतु जीवनको ब्रह्मपदकी प्राप्ति न भई। रास बिरानी राखते, खाइनि घरका खेत। रास कहिये ब्रह्म सुख औ खेत कहिये एकाग्रवृत्ति, सो औरनको बतलावते हैं; परंतु अपने घरकी खबर नहीं कि हमारा घरका खेत काल दुबिधा खाते हैं। ये अर्थ॥ ३११॥

साखी–मैं चितवत हौं तोहिको। तू चितवत है वोहि॥
कहहिं कबीर कैसे बनि है। मोहि तोहि औ वोहि॥३१२॥

टीका गुरुमुख–गुरु कहते हैं कि-हे जीव! तेरा दुःख देखके मैं तेरेको चितवत नाम देखता हौं, काहेते? कि तू सर्वका कर्ता। क्योंकि जगत्-ब्रह्म दोनों तेरी कल्पना, सो कल्पनामें भ्रमवश होके

नाना दुःख तेरेको प्राप्त हुवा । सो तूने दुःख देखके अधैर्य वश होयके घबरायके दूसरा कर्ता कल्पनासे खड़ा किया । सो उस कर्ताको तू संभारता है नाम चितवता है सो मिथ्या, तेरी कल्पना । मोहि नाम कहिये गुरु, तोहि नाम कहिये जीव, वोहि नाम कहिये कल्पना अनुमान; सो अनुमानका तू कर्ता है और अनुमानका कर्ता आप, सो अपने पदकी तरफ निगाह नहीं रखता तो पारखपद कैसे प्राप्त होय ? क्योंकि दो दृष्टि करके देखता है । एक दृष्टि सो कर्ताको देखता है और एक दृष्टि करके पारखी गुरुको देखता है सो पारखी गुरु कहते हैं कि-ये कैसे बनी हैं ? कि शुद्ध पारखपदके विषय मोहि, तोहि, वोहि; ये कछु संभवता नहीं; क्योंकि पारखी कबलग है ? जबलग परखावता है । सो पारखी पारख समाना । शुद्ध पारखके विषय त्रिपुटी नाश हुए बिना शुद्ध स्वरूपको प्राप्त होता नहीं; सोई बनाना । ये अर्थ ॥ ३१२ ॥

साखी-तकत तकावत तकि रहा। सकै न बोझा मार ॥
सबै तीर खाली परा । चला कमानहि डार ॥३१३॥

टीका गुरुमुख-तकत नाम देखनेवाला जीव, तकावत नाम देखावनेवाले गुरुवा लोग; सो गुरुवा लोगोंने मानंदी अनुमान ब्रह्म पद देखाया, सोई जीव, तकने लगे, देखने लगे । बोझा कहिये निशाना और तीर कहिये क्रिया आदिक औ कमान कहिये कल्पना, सो कल्पनारूपी कमान पर क्रिया रूपी तीर ब्रह्म निशानेपर खैंचा । परंतु क्रियासे ब्रह्मपर प्राप्त न भया और क्रिया करते थके तब खिसियायके कल्पनारूपी कमान डारके चौरासीमें चले गये । ये अर्थ ॥ ३१३ ॥

साखी-जस कथनी तस करनी । जस चुंबक तस ज्ञान॥
कहैं कबीर चुंबक बिना । क्यों जीते संग्राम ॥३१४॥

टीका मायामुख-माया जीवनको समुझावती है कि-जाके प्राप्त होनेके वास्ते तुम कथनी गुनानुवाद कथते हो और करनी तो नहीं तो

कर्ता कैसे प्राप्त होय ? क्योंकि लोहारूपी कथनी चुंबकरूपी करनी। याको दृष्टांत-जैसे चुंबकसे लोहाकी प्रीति है, लोहेको अपनेमें मिलाय लेता है। ऐसे कथनी और करनीकी एकाग्रता होय तब ज्ञान प्राप्त होगा और ज्ञान प्राप्त हुए बिना मन राजासे कैसे संग्राम जीतोगे ? ये अर्थ ॥ ३१४ ॥

साखी—अपनी कहै मेरी सुनै। सुनि मिलि एकै होय ॥
हमरे देखत जग जात है। ऐसा मिला न कोय ॥ ३१५ ॥

टीका गुरुमुख--गुरु कहते हैं कि-मैं जीवनको बार बार समुझावता हौं, कि तुम्हारेको क्या दुःख है ? जेहि दुःखके मारे तुम बेहाल हो सो दुःख तुम हमारेसे कहो। तब जीव बोलता है कि-हे गुरु ! हम अजान कछु जानते नहीं; पर एक संशय है, कि हम कौन और कहाँसे आये ? और कहाँको जायँगे ?। ये शंका। ताते गुरु दयादृष्टी करके कहते हैं कि-हे जीव ! तुम स्वतन्त्र चैतन्य अविनाशी और आना-जाना ये तो सर्व तुम्हारी कल्पना, सो मिथ्या धोखा; ऐसा समझके पारख रूपमें मिलो। पारख पारखी एक, कछु भिन्न नहीं। और जो पारख पदको नहीं प्राप्त भये सो हमारे देखते देखते कल्पना वश होके मिथ्या धोखेमें जीव जाते हैं। ऐसा कोई न मिला कि मिथ्या धोखा परखके अपने पदको प्राप्त होय। ये अर्थ ॥ ३१५ ॥

साखी—देश विदेशे हौं फिरा। गाँव गाँव की खोरि ॥
ऐसा जियरा ना मिला। लेवैं फटक पछोरि ॥ ३१६ ॥

टीका गुरुमुख--देश कहिये ज्ञान और गाँव कहिये तुरिया अवस्था और खोरि कहिये पाँच ज्ञान इंद्री। औ विदेश कहिये अज्ञान औ गाँव कहिये सुषुप्ति अवस्था और खोरि कहिये पंच कर्मइन्द्री। औ हौं कहिये अभिमान, सो अभिमान दो प्रकारका-एक प्रत्यगात्मा, ज्ञानी सो पाँच ज्ञान इन्द्रीमें विलास करते हैं और दूसरा अभिमान प्राज्ञ, अज्ञानी सो पँच कर्मइन्द्रीमें विलास करते हैं। ताते गुरु कहते हैं कि-ये अपने अपने

अभिमानमें आसक्त हैं । निरभिमानी जीव कोई मिला नहीं, कि ज्ञान और अज्ञान दोनों अभिमान, सोई कचरा फटक पछोरके विचारद्वारा करके पारखपदसे मिलाय लेऊं । ये अर्थ ॥ ३१६ ॥

साखी—मैं चितवत हौं तोहिको । तू चितवत कछु और ॥
नालत ऐसी चित्तपर । एक चित्त दुइ ठौर ॥३१७॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि--हे जीव ! मैं तेरेको पारख दृष्टि करके चितवता हौं, अपरोक्ष पारख पदको परखावता हौं । काहेते ? कि तेरेको सुखकी प्राप्ति होवै और थीर होय, आवागवनसे रहित होय । और तू चितवत कछु और । और कहिये परोक्ष परमात्मा सिद्ध करके ताको तू चितवन करता है तो तेरेको पारख पद कैसे प्राप्त होय ? अरे चित्त तो एक और भूमिका तो दो--एक परोक्ष और एक अपरोक्ष । ताते गुरु कहते हैं-नालत ऐसी चित्त पर, एक चित्त दुइ ठौर । जो तू एक चित्त करके दो भूमिका पर प्राप्त होना चाहता है तो कैसे बनेगा ? याका दृष्टांत चौपाई—दुइ न होहिं इक संग भुवालू ॥ हँसब ठठाय फुलाउब गालू ॥ हँसना और गाल फुलावना, ये दो बात कैसे बनें ? ताते चित्तको परोक्ष पदसे फेर कर अपरोक्ष गुरुपदके विषय राख और सुखिया हो । ये अर्थ ॥ ३१७ ॥

साखी—चुंबक लोहे प्रीति है । लोहे लेत उठाय ॥
ऐसा शब्द कबीरका । कालसे लेत छुड़ाय ॥३१८॥

टीका मायामुख—माया जीवनको उपदेश करती है कि-हे जीव ! चुम्बक कहिये गुरुका शब्द औ लोहा कहिये सुर्त, जैसा चुम्बक लोहेको उठाय लेता है ऐसे जो गुरुका शब्द है, गुरुका शब्द कहिये अनहद, सो अनहद दश प्रकारका--पहिले दुन्दुभी, घंटा, मृंदग, झाँझ, नफीरी, शंख, शहनाई, बीना, भेरी, बाँसुरीनाद; इस प्रकारके अनेक तरहके नाद, तामें मुख्य दशनाद, तामें बाँसुरीनाद अंतमें ब्रह्मांडके विषय शब्द उठता है । ता शब्दमें सुर्त प्रवेश होयगी, तब बाँसुरी शब्द

इसको लक्ष अपनेमें मिलाय लेवेगा, तब पिंडांडका विश्व अभिमान छूट जायगा। माया कहती है कि--ऐसा शब्द कबीरका, कालसे लेत छुड़ाय। कबीर कहिये गुरु योगीलोगका शब्द उपदेश ऐसा है कि कर्म कालसे छुड़ायके ब्रह्मांडमें थिर करता है। ये अर्थ ॥ ३१८ ॥

साखी-भूला तो भूला। बहुरिके चेतना ॥
विस्मयकी छूरी। संशयका रेतना ॥३१९॥

टीका गुरुमुख-गुरु कहते हैं कि--अपने निज स्वरूपको ये भूला। याको दृष्टांत--जैसे सूर्यको यह भ्रम भया, कि प्रकाश कर्ता कोई दूसरा है। ऐसे जीव प्रवृत्ति पिंडांडके विषय भूला। उत्पत्ति प्रलय जो होती है ताको कर्ता कौन है ? ये शंका जीवको भई। तब प्रवृत्ति गुरुवा लोगोंने कहा कि--उत्पत्ति प्रलय करनेवाला एक ईश्वर है ता ईश्वरकी प्राप्ति कैसे होय ? तब गुरुवा लोग समुझावते हैं कि--पंचाग्नि तापो, जलशयन लेव, तीर्थ व्रत प्रतिमा पूजन करो, चारों धाम परसो, तब कर्ताकी प्राप्ति होयगी। तब ऐसे करते करते जीव थकित भये, पिंडांडमें कर्ताकी प्राप्ति न भई। ऐसा भूला, फिर बहुरिके चेतना। ता ऊपर योगीलोग उपदेश चेतावते हैं कि--जो ईश्वर कर्ता की प्राप्तिके वास्ते पिंडांडमें बूड़ते हो सो ईश्वर ब्रह्मांडमें ज्योति स्वरूप है। ताको प्राप्ति हुए बिना भूल कैसे मिटेगी ? तब जीव विनती योगी लोगोंसे करते हैं कि--हे स्वामी ! कर्ताकी प्राप्ति कैसे होय ? सो दया करके कहिये ! तब योगी लोग युक्ती बतावने लगे कि-इंगला पिङ्गला सम करके सुषुमना मार्ग होके त्रिकुटीमें सूरत लगाव तब ज्योति प्रकाश होयगी और आनंद समाधी लगेगी; सोई तेरा स्वरूप। अब गुरु कहते हैं कि--विस्मयकी छूरी, संशयका रेतना। विस्मयकी छूरी कहिये संशय और संशयका रेतना सो भी संशय; तो संशयके रेतनेसे विस्मयकी छूरीको रेता तो संशयरूपी रेतना तो बना रहा। ऐसे विस्मयरूपी शब्द प्रवृत्ति उपदेश किया सो भी शब्द और संशयरूपी निवृत्ति उपदेश

किया सो भी शब्द; तो संशयरूपी जो दुःख था सो तो दुःख बनाही रहा । तो बहुरिके क्या चेतना ? तो कुछ चेता नहीं, पारखपदको प्राप्त भया नहीं, अचेत जड़ ब्रह्म पदमें घर किया । ये अर्थ ॥ ३१९ ॥

साखी–दोहरा कथि कहैं कबीर । प्रतिदिन समय जो देखि ॥
मूये गये नहिं बहुरे । बहुरि न आये फेरि ॥३२०॥

टीका मायामुख–दोहरा कहिये परमात्मा गुसैंयाकी कीर्ति गुणानुवाद कथन करके जीवनसे गुरुवालोग कहते हैं, कि-हे जीव ! नित्यप्रति गुसैंया परमात्मा मिलनेका समय निखरते रहना; क्योंकि आवागमनका जो दुःख है ताकी निवृत्ति होय तब चोला छूटै उपरांत फिर गर्भवासमें नहीं आवै, ऐसा माया उपदेश जीवनको करती है । ये अर्थ ॥ ३२० ॥

साखी–गुरु बिचारा क्या करै । शिष्यहि माँ है चूक ॥
भावै त्यों परमोधिये । बाँस बजाये फूक ॥३२१॥

टीका मायामुख–गुरु कहिये योगी लोग, सो जीवनको सांख्ययोगका उपदेश करते हैं कि-प्रकृति तत्त्व एक, ताके ऊपर लक्ष लगाना । और सब तत्त्वनको लय करके जो शेष रहि जाय सो नित्य और जो प्रकृति तत्त्व लय होय सो अनित्य । अथ इतिहास सांख्य शास्त्रके आचार्य कपिल मुनि, ताकी माता देवहूती; सो माताको समुझावते समुझावते बहुत दिन ब्यतीत भये; परन्तु पुत्र भाव जानके माताने उपदेश अंगीकार नहीं किया । तब कपिल मुनिने अपने अन्तःकरणमें विचार किया कि, पुत्रभाव छूटे बिना माताकी वृत्ति शांत होनेकी नहीं । तब मातासे कपिल मुनिने कहा कि-हे माता ! हम छै महीना रामत करके फिर आवेंगे । सो माताकी आज्ञा लेके फिर अपना स्वरूप योगीका धारण करके माताके घरमें आये । सो माताने योगेश्वर जानके सेवा करने लगी और योगेश्वरके सामने बहुत विलाप करने लगी कि-हे महाराज ! एक तो मेरा पुरुष नहीं ताका दुःख, दूसरे छै महीना हुए

पुत्र रामतको गया है, सो भी नहीं आया ताका दुःख रात दिन मेरेको लगा है। मेरे ताईं कछु कल पड़ती नहीं। तब योगेश्वर समुझाते हैं कि-अरे देह तो नाशवान अनित्य, सो तू प्रकृति भाव लेके देहके विषय आसक्त क्यों रहती है? एक दिन तेरा भी शरीर नाश हो जायगा। ताते देह, धन, कुटुंब आदि सबकी आसक्ति छोड़ औ आत्मस्वरूप जो नित्य आस्ति प्रकृतितीत तेरा स्वरूप है ताको प्राप्त क्यों नहीं होती? तब देवहूती विनती करती है कि-हे महाराज! आत्मस्वरूप प्राप्त होनेकी क्या युक्ति है सो कृपा करके कहिये। तब स्वामीजीने सर्व साक्षिनी मुद्राका उपदेश युक्ति बताने लगे कि-प्रथम सिद्धासन करना और उत्तराभिमुख करके सुरत् अन्तरिक्ष अंतःकरणके मध्यमें लक्ष लगावना और दशों दिशा प्रकृति भाव है सो अंतरिक्षमें लय करते करते आप विशेष रह जाना, सोई आत्मस्वरूप। ऐसा उपदेश योगेश्वरने कहा तब सर्व आसक्ति छूटी और अपने आत्मस्वरूपको देवहूती प्राप्त भई। तब देवहूती अपना अनुभव स्वामीसे कहने लगी कि-हे महाराज! जो स्फूर्ण उठता है ताको मैं जानती हौं, सो स्फूर्ण कछु मैं नहीं। मैं द्रष्टा, सर्व साक्षी सर्वत्रको जाननेवाली, मेरे विषय प्रकृति भाव कछु नहीं ऐसी देवहूतीकी परिपक्क दशा देखके योगेश्वरने कपिल मुनिका स्वरूप धारण किया और कहते हैं कि-हे माता! मैं तो तेरा पुत्र हौं तेरेको बोध करनेके वास्ते योग धारण किया। काहेते? कि, तेरेको पुत्रभाव था। तब देवहूती कहती है कि-काको पुत्र? काको माता? काको पिता? अरे ये तो सब प्रकृति भाव नाशवंत और मैं तो हे गुरु! तुम्हारे बोध करके अविनाशी अखंडस्वरूप हौं। तो गुरु बिचारा क्या करै? शिष्यहीकी तरफ कसर है। अनेक तरहसे गुरुने बोध किया। शिष्यने उपदेश अंगीकार न किया। कैसा? ताको दृष्टांत जैसी बाँसकी नली एक तरफसे फूँका और दूसरी तरफसे फूँक निकर गई। तद्वत कपिलमुनीने देवहूती माताको बोध किया। ये अर्थ॥ ३२१॥

साखी—दादा भाई बाप कै लेखो। चरनन होइ हौं बंदा ॥
अबकी पुरिया जो निरुवारे। सो जन सदा अनंदा ॥३२२॥

टीका मायामुख-गुरुवा लोग जीवनको उपदेश करते हैं; परंतु जीवनके अंतःकरणमें कछु उपदेश ठहरता नहीं। ताके वास्ते गुरुवा लोग जैसे माता पिता बालकको समुझाते हैं तैसे अजान जीवनको दादा भाई बाप करके समुझावते हैं, तब भी समुझते नहीं। और जीवनको समझ प्राप्त हुए बिना आनंद कैसे होय ? ताके वास्ते फिर गुरुवा लोग जीवनके पाँव पर गिर करके, बंदगी करके कहते हैं कि--अबकी पुरिया जो निरुवारै। अरे ऐसा नर देह पायके कालके मुखमें क्यों जाते हो ? धन, दारा, सुत, लोग कुटुंब सबकी आशक्ति छोड़के भगवत् भजनसे प्रीति रखना; क्योंकि प्रपंच ब्योहार धन दारा आदि ये सब नाशवंत पदार्थ हैं। ऐसा निरुवार तिरस्कार करके परमार्थ परमात्माकी तरफ वृत्ति लय करना, तामें सदा सर्व काल आनंदरूप रहैं। ये अर्थ ॥ ३२२ ॥

साखी—सबते लघुता भली। लघुतासे सब होय ॥
जस दुतिया को चंद्रमा। सीस नावै सब कोय ॥३२३॥

टीका मायामुख—सबते लघुताई भली। लघुता कहिये दीनता, गरीबी, दासवत, जैसी स्त्री अपने बालकको छलती नहीं औ अपने पुरुषनको छलती है। क्योंकि बालक अजान, ये जानके माता रक्षा करती है और पुरुष स्त्री भावको जानता है, ताके वास्ते छलती है। याको दृष्टांत—एक समय शुकदेवजी अपनी ब्रह्मसमाधिमें बैठे थे। ता समय इंद्रकी अप्सरा रंभा ऊर्वसी छल करनेको आई। अनेक तरहका अद्भुत रूप धारके हाव भाव कटाक्ष करके नृत्य करने लगी औ वचनरूपी कामका बाण मारा। और कहती है कि-महराज ! मैं इन्द्रलोकसे आपके दर्शन करनेको आई; सो कृपादृष्टि करके मेरा अंगीकार करना। शरीर कछु मल मूत्र दुर्गन्धका नहीं, मेरा शरीर तो अर्गजा सुगंधादिसे

निर्मल है। तब शुकदेव स्वामी बोलते हैं कि-हम जो ऐसा तुमको जानते तो व्यासजीकी स्त्रीके पेटमें अवतार न लेते। हे माता! तुम्हारे ही पेटमें अवतार लेते। तब रंभा ऊर्वसी लज्जायमान हो नमस्कार करके इन्द्रलोकको गई। ज्यों दुतियाको चन्द्रमा छोटा स्वरूप, ताको सब संसार नमस्कार करते हैं और पूर्णिमाको चन्द्र संपूर्ण कला प्रकाश होता है ताको कोई नमस्कार दीर्घपद जानके करता नहीं। तैसे रंभा ऊर्वसी अहंभाव मायारूप लेके शुकदेवको ठगनेको आई; परंतु शुकदेव मुनिने लघुता पद निरअभिमान बालदशा धारण किया तब सर्व तरहसे माया-बाण बेधा नहीं और ब्रह्म समाधिमें स्थिर हुआ। माया खिसियायके लजाय गई। ये अर्थ॥ ३२३ ॥

साखी-मरते मरते जग मुवा। मुये न जाना कोय॥
ऐसा होयके ना मुवा। जो बहुरि न मरना होय॥३२४॥

टीका गुरुमुख-गुरु कहते हैं कि-तीर्थ व्रत करते करते येही आशामें सारा जग मुवा और चौरासीमें चला जाता है; परंतु आशा छोड़के कोई मरा नहीं, कि आवागमनसे रहित होय। आशारूपी बीज सोई फिर देह होनेका कारण है। ये अर्थ ॥ ३२४ ॥

साखी-मरते मरते जग मुवा। बहुरि न किया बिचार॥
एक सयानी आपनी। परबश मुवा संसार ॥३२५॥

टीका गुरुमुख-गुरु कहते हैं कि-मानुष देह पायके जीवनने कछु विचार किया नहीं; कि ब्रह्म जगत्, लोक परलोक, स्वर्ग नर्क, लोग, कुटुम्ब, इन सबकी आशा बंधनरूपी है। और इसी आशामें सब मरे, ऐसा न जानके फिरके विचार न किया। एक सयानी अपनी कहिये अपनी स्वतः बुद्धि बिना परवश गुरुवा लोगनके वचनको प्रमाण करके सब संसार लोभमें मारा गया, पारखपदकी प्राप्ति न भई। ये अर्थ॥ ३२५॥

साखी—शब्द है गाहक नहीं । बस्तु है महँगे मोल ॥
बिना दाम काम न आवै । फिरै सो डामाडोल ॥३२६॥

टीका गुरुमुख—शब्द कहिये गुरुमुख सारशब्द निर्णयरूपी यथार्थ है । ऐसा जो वस्तु गुरुका शब्द है सो महँगे मोल हैं । दाम कहिये सचौटी, अंतःकरणकी निर्मलता, चन्द्रमणी पत्थरके माफिक; सोई दाम सचौटी बिना गुरुमुख शब्दकी यथार्थ प्राप्ति होती नहीं । और प्राप्ति हुए बिना जीवमुख शब्द, मायामुख शब्द, और ब्रह्ममुख शब्द; ये तीनों शब्दमें गुरु पारख बिना गुरुवा मिथ्या धोखेमें डामाडोल होके चौरासीमें फिरते हैं, कछु पारख पदकी प्राप्ति होती नहीं । ये अर्थ ॥ ३२६ ॥

साखी—गृह तजिके भये योगी । योगीके गृह नाहिं ॥
बिना बिबेक भटकत फिरैं । पकरि शब्दकी छाहिं ॥३२७॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि--गुसैंया परमात्मा कर्ताकी प्राप्तिके वास्ते घर, स्त्री, लड़का, कुटुम्ब, द्रव्य, संपत्ति छोड़के वैराग्य धारण करके आरण्य जंगलमें योग क्रिया करने लगे । सो गुसैंया कर्ता योगीके गृह नहीं है । गृह कहिये ब्रह्मांड, सो ब्रह्मांडमें भी गुसैंया प्राप्ति न भया और बिना बिवेक विचार अपना प्रतिबिंब जो शब्दकी छायाका अनुभव भया तामें बंध भया, मुस्तकीम हुआ । ये अर्थ ॥ ३२७ ॥

साखी—सिंघ अकेला बन रमै । पलक पलक करै दौर ॥
जैसा बन है आपना । वैसा बन है और ॥३२८॥

टीका गुरुमुख--सिंघ कहिये जीव और बन कहिये देह, पाँच तत्त्व, पच्चीस प्रकृति, तीन गुण, दश इन्द्री, पंच विषय और चतुर्दश देवता आदि समुदायरूपी बनमें जीव निरंतर एक आप रहता है और अनेक उपाय करके अपने जीवका यतन रखता है । और पल-पल दौरके पराये जीवका घात करता है, मनके वश होके कछु दया लावता नहीं । ताते गुरु कहते हैं कि—हे जीव ! जैसा दुःख सुख तेरे शरीर बनके विषय मालूम होता है वैसे ही और शरीरके विषय मालूम होता है

ऐसा न जानके मनरूपी कालके वश होके अपना स्वतन्त्र विचार दया छोड़ देते हैं। ये अर्थ ॥ ३२८ ॥

साखी–पैठा है घट भीतरे। बैठा है साचेत ॥
जब जैसी गति चाहै। तब तैसी मति देत ॥३२९॥

टीका गुरुमुख–गुरु कहते हैं कि--गुरुवालोगोंका मानंदी रूपी शब्द उपदेश जीवनके घटमें पैठा है। सोई शब्द सचेत हुशियार होके अंतः-करणमें पैठके जब जैसी गती चाहना होती है तब तैसी मति मानंदी जीवनके अन्तःकरणमें प्रेरणा करता है। मानंदी अनेक प्रकारकी-नाम, रूप, गुण, कर्म, विधि-निषेध इस प्रकार करिके विचार समुझ बिना जीव मानंदीमें बंध भये। ये अर्थ ॥ ३२९ ॥

साखी–बोलत ही पहिचानिये। साहु चोरका घाट ॥
अंतर घटकी करनी। निकरे मुखकी बाट ॥३३०॥

टीका गुरुमुख--साहू कहिये गुरुका शब्द, चोर कहिये गुरुवा लोगनका शब्द; अब निगाहमात्र निगाह करवाते हैं, कि-उस ॐकारका स्वरूप धारण करके चोर-जो गुरुवा लोगनका शब्द उपदेश जीवनको दृढ़ापन करके भास, अध्यास, अनुमान, कल्पनामें लगावते हैं, दृढ़ करते हैं सोई चोर और भास, अध्यास, अनुमान, कल्पनाको मिथ्या करके अपने निज स्वरूपको प्राप्त करते हैं सोई साहू। तो हे जीव ! अंतर घटकी करनी बोल निकरे मुखकी वाट, सोई पहिचानिये। कि दोनोंका शब्द मुखके द्वारेसे होके निकरता है और शब्द तो एक ही है और द्वारा भी एक ही है; परन्तु करनी घाट न्यारी-न्यारी है। सोई पहिचान। ये अर्थ ॥ ३३० ॥

साखी–दिलका महरम कोई न मिलिया। जो मिलिया सो गर्जी॥
कहहिं कबीर असमानहिं फाटा। क्यों कर सीवै दर्जी ॥३३१॥

टीका गुरुमुख–गुरु कहते हैं कि--दिल कहिये अन्तःकरण, जिग-रका महरमी सोई जानकार; सो ऐसा कोई न मिला कि, अपना सर्व विकार छोड़ कर और निर्विकार होके पारखपदको प्राप्त होय। और जो

कोई जीव मिले सो अपने गरजके लोभी मिले। लोभ कहिये अष्ट प्रकारको सिद्धि--अणिमा कहिये बैठे तो किसीके उठाये न उठै। गरिमा कहिये पृथ्वीमें गड़िके दूसरी जगह प्रगट होय। लघिमा कहिये बालक हो जाय। गिरिमा कहिये पर्वताकार हो जाय। हुतासनी कहिये अग्निमें न जरे। महिमा कहिये सर्व जगत् माने। अन्तर्यामिनी कहिये एकईस ब्रह्मांड भरेका हवाल जाने और वाचा सिद्धि कहिये शाप आशीश लगे। इस प्रकार अष्ट सिद्धिका लोभ और नौमी सिद्धि कहिये संपत्तिका लोभ, अन्नपूर्णाका लोभ, लोभ स्वर्गका, लोभ नामधारीका, लोभ प्रपंच ब्योहार, लोभ कुटुम्ब घर सुत स्त्री आदि अनेक प्रकारके लोभमें परे और लोभकी वासना लेके मिले। कहहिं कबीर आसमानहि फाटा। तो गुरु कहते हैं कि-हे जीव। आसमान कहिये, आकाश कहिये, अंतःकरण; सो अन्तःकरणमें अनेक प्रकारकी वासना पैठी सोई आकाश फाटा। और दर्जी कहिये विचारमान, सो विचारमान कबलग तेरे दिलको समुझावे ? तू निर्वासना होके गुरुको मिलता नहीं तो पारखपद कैसे प्राप्त होय ? ये अर्थ ॥ ३३१ ॥

साखी--ई जग जरते देखिया। अपनी अपनी आगि ॥
ऐसा कोई ना मिला। जासों रहिये लागि ॥३३२॥

टीका गुरुमुख--गुरु कहते हैं कि-जहाँ लग जीव जगत्में हैं सो सब अपनी अपनी आगमें जरते हैं। आग कहिये पाँच प्रकारकी-कामाग्निमें सारा जगत् जरता है, योगी योगाग्निमें जरते हैं, विश्वास अग्निमें भक्त जरते हैं, वैराग्य अग्निमें वैरागी लोग जरते हैं औ ज्ञानी लोग ज्ञानाग्नि भास, अध्यासमें जरते हैं। और इस प्रकारसे अपनी अपनी कहिये अपनी अपनी मानंदीके विषयमें सब जरते हैं। ऐसा एक विचारमान ने देखा, कि इन पाँच अग्निसे व्यतिरेक पारखी गुरु कोई मिला नहीं। कि, जाके शरणमें जायके बचाव होय, पारखपद प्राप्त होय। ये अर्थ ॥ ३३२ ॥

साखी--बना बनाया मानवा। बिना बुद्धि बेतूल ॥
कहा लाल ले कीजिये। बिना बासका फूल ॥३३३॥

टीका गुरुमुख-बना बनाया मानवा, बिना बुद्धि बेतूल। सो गुरु कहते हैं कि—प्रथम अहंकाररूपी आप बना कि, मैं जीव दुखिया लाचार, मेरेसे मेरा दुःख नाश होता नहीं; ऐसा दीन बना। तब दूसरा एक अनुमान करके कर्ता बनाया कि—मेरेको सुख देनेवाला कोई और कर्ता है। तब गुरु कहते हैं कि इसका स्वतन्त्र स्वजातीय विचार जाकी मति थिर। सो बिना बुद्धी कीमत हलकी हो गई, सर्व कला छीन भई औ बेतूल अधीर हुआ। अब लाल कहिये मानुषदेह सो वासनारूपी, गुरुबुद्धि नहीं; तो ऐसा बेबुद्धि मानुषको क्या अंगीकार करना? ये अर्थ ॥ ३३३ ॥

साखी--साँच बराबर तप नहीं। झूठ बराबर पाप ॥
जाके हृदया साँच है। ताके हृदया आप ॥३३४॥

टीका गुरुमुख- गुरु कहते हैं कि--साँचा कहिये जाके हृदयमें झूठा अनुमान अध्यास नहीं सोई साँचा। तप और झूठ अनुमान अध्यास जो मानता है सोई पाप; काहेते? कि भास अध्यास जरासा भी विविचार, तहाँ भासीक नहीं। और जाके हृदयमें साँचा विचार है तहाँ भास अध्यास अनुमानकी मानंदी त्रिकाल-भूत, भविष्य, वर्तमानके विषय नहीं; ताके घटमें भासीक आप हैं। ये अर्थ ॥ ३३४ ॥

साखी—कारे बड़े कुल ऊपजे। जोरे बड़ी बुद्धि नाहिं ॥
जैसा फूल उजारिका। मिथ्या लगि झरि जाय॥३३५॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि--चौरासी लक्ष योनिमें फिरते फिरते मनुष्य योनिमें आयके जीव प्राप्त भया। सोई सब योनिनसे बड़ी योनी; क्योंकि और योनिमें कछु गुरु विचार सत्संग पारखपदकी प्राप्ति होती नहीं और भोग, बिलास, खान, पान, काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय, अहंकार; ये सब खानीमें सबको प्राप्त हैं; परंतु एक गुरुप-

दकी प्राप्ति नहीं। सो गुरुपदकी प्राप्ति सत्संग विचार एक मनुष्य देहके विषय प्राप्त होता है। ताते गुरु जीवको कहते हैं कि-ऐसी मनुष्य देह पायके बड़ी बुद्धि कहिये गुरु बुद्धि विचार हासिल न भया और लोग, कुटुंब, स्त्री, धन, दारा, सुत, कलत्र, आदिका मोह मिथ्या विषयनमें मानुष देह नाश होयके फिर चौरासीका दुःख बना ही है। ताका दृष्टांत कि-जैसा उजारी जंगलके विषय फूल लगा सो मिथ्या कहिये पृथिवीमें लाल बेकाम झर गया। तैसा बिना पारख जीव मिथ्या चौरासी गर्भवासमें जायके प्राप्त भये बिना गुरुबुद्धि। ये अर्थ ॥ ३३५ ॥

साखी—कर्तें किया न बिधि किया। रबि शशि परी न दृष्टि॥
तीन लोक में है नहीं। जाने सकलो सृष्टि ॥३३६॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि-जीवने एक अनुमानसे जो प्रमाण किया है कि 'कोई एक सिर्जनहार मालिक है,' ऐसा अनुमान प्रमाण सारा जगत्ने किया। परंतु गुरु कहते हैं कि-जो अनुमानसे प्रमाण जीवने किया सो वस्तु कुछ नहीं, मिथ्या धोखा तेरी कल्पना। सो तेरी कल्पना करिके कल्पित प्रतिबिम्बरूप जो अनुभवमें आया सो कुछु तेरे सिवाय प्रतिबिम्ब खड़ी भई नहीं; परन्तु बिना विवेक ये कर्तव्य करके कर्ता बनाया। अब विधि कहिये संयोग, सो कछु संयोगसे हुआ नहीं; क्योंकि तेरे सिवाय दूसरा कोई नहीं। औ रवि कहिये सूर्य औ शशि कहिये चन्द्र; सो दिनको सूर्यके प्रकाशमे भी अनुमानका रूप देखनेमें नहीं आया औ रातको चन्द्रके भी प्रकाशमें अनुमान रूप देखनेमें नहीं आया। औ रात दिवस दोनोंकी संधिमें भी देखो तो कुछ है नहीं, सब तेरी कल्पना। अथवा इंगला, पिंगला, सुषुम्ना; येही तीनों लोक, तामें भी देख ना परा। अथवा श्वास उश्वासके मध्य शून्य सोई तीनों लोक, तामें भी देख ना परा। अथवा अर्ध, ऊर्ध, मध्य; सोई तीन लोक, तामें भी देख ना परा। अथवा तत्त्वमसि ये तीन लोक अथवा जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, ये तीन लोक, अथवा कर्म,

काल, कर्ता; ये तीन लोक, अथवा ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय, ये तीन लोक, अथवा धाता-ध्यान-ध्येय, ये तीन लोकमें देखा; परन्तु देखनेमें आई नहीं। और मिथ्या धोखा में जानके सारा जगत् अनुमानमें बंध भया, कछु पारखपद प्राप्त न भया। ये अर्थ ॥ ३३६ ॥

साखी—सुरहुर पेड़ अगाध फल। पन्छी मरिया झूर ॥
बहुत जतन कै खोजिया। फल मीठा पै दूर ॥३३७॥

टीका गुरुमुख—गुरु ऐसा कहते हैं कि-मायाने जीवनको ऐसा उपदेश किया, कि "सुरहुर पेड़, सुरहुर कहिये लंबा सूधा, ऐसा जो बानीरूपी वृक्ष है ता पेड़का अन्तःकरण भूमिकामें जड़ औ ता वृक्षका अन्त ब्रह्मांडमें है। सोई ब्रह्म अगाध कहिये सायुज्य मुक्ति, सो बड़ी मुक्ती सो मुक्ती कहिये सर्वोपर। सायुज्य कहिये जीव ब्रह्मकी एकता, मीठा कहिये ब्रह्मानंद सुख; सो ऐसा सुख पाये बिना आवागमनका दुःख कैसे छूटेगा ? ये बड़ा दुर्लभ है, बड़ी सुकृतसे प्राप्त होयगा। बिना प्राप्त हुए दुःख तीन कालमें छूटेगा नहीं। ऐसा मायाका उपदेश सुनिके जीवनको हर्ष विस्मय खड़ा भया। सो हर्ष कहिये ब्रह्मानंद सुखका लोभ औ विस्मय कहिये डर आवागमनका, दुःख नर्कका। तब जीव पक्षी झूरने लगे। झूरना कहिये अध्यास, सो उपदेश प्रमाण बहुत यतन करके खोजने लगे। पूरक कुंभक रेचक करके, श्रवण, मनन, निदिध्यास करके और विश्वास करके खोजने लगे। नाम सुमिरन किया और शम दम आदि अनेक यतन करके खोजा, पर मिला नहीं; क्योंकि ब्रह्म जीवकी एकताई भई नहीं। कदाचित् कोई शंका करेगा कि काहे नहीं एकताई भई ? तो जो एकताई होती तो ब्रह्म सुखको कौन कहता ? अरे जो ब्रह्मानंद हुवा सो तो जीवका क्रियापद है। सो आनंदको जीव जानता है, जो आनंद होता तो आनन्द कौन कहता ? इस वास्ते एकताई अद्वैत होता तो आनन्द सिद्ध नहीं होती, ताते दूर है। दूर कहिये भास, भास कहियें दर्श; सो जीव पक्षी अपने अध्यासमें थकि गये, मर गये। मीठा कहिये दृष्टि, देखनेवाला द्रष्टा; तो द्रष्टा

दृष्टिकी एकताई होती नहीं तो इसकी कैसे होयगी ? ताते फल मीठा पै दूर, उपदेश मिथ्या । ये अर्थ ॥ ३३७ ॥

साखी–बैठा रहै सो बानिया । ठाढ़ रहै सो ग्वाल ॥
जागत रहै सो पहरुवा । तेहि धरि खायो काल ॥ ३३८ ॥

टीका गुरुमुख–बैठा रहै सो बानिया कहिये सतोगुण भक्त दानी बैठी जगह दान करते हैं, पुण्य करते हैं, नाम स्मरण करते हैं, पाँवमें घुँघुरू बाँधके नाचते हैं । अपनी मुक्तिके वास्ते तन मन धनसे बिकाय गये; परंतु मुक्ती रूप कल्पना, सोई काल भक्तनको आखिर पकड़के खा गया, कछु कल्पना रहित ना भया । और ठाढ़ रहे सो ग्वाल–रजोगुणी कर्मी खड़े रहते हैं । और कोई ठाढ़ेश्वरी बना, कोई अनेक प्रकारके तीर्थ करे, कोई चारों धाम-जगन्नाथ, रामनाथ, बद्रीनाथ, द्वारिकानाथ, परसते हैं, कोई पृथिवी परिक्रमा देते हैं; ऐसे अनेक प्रकारके कर्म करते हैं मुक्तिके वास्ते । परन्तु कर्मरूपी कल्पना, सोई काल कर्मिनको आखिर अंतमें खाय गया, कछु कल्पना रहित न भया । औ जागत रहै सो पहरुवा कहिये तमोगुणी योगी रात दिन जागते रहते हैं; क्योंकि इंगला-पिंगलाको देखते रहते हैं और श्वासोश्वासको लक्षसे देखते रहते हैं औ रेचक, पूरक, कुंभक करते हैं और इंद्रियनको देखते रहते हैं कि कहूँ चलायमान न होय । इस प्रकार अनेक तरहके साधन युक्ति मुक्तीके वास्ते करते हैं । परन्तु साधनरूपी कल्पना सोई काल, सो योगिनको अन्तमें खाय गया, कछु कल्पना रहित न भया । रजोगुण, सतोगुण; तमोगुण इन तीनोंको शुद्ध सतोगुणरूपी काल कल्पना खाय गई और आप कल्पना नाश न भई । ये अर्थ ॥ ३३८ ॥

साखी–आगे आगे दौं जरे । पाछे हरियर होय ॥
बलिहारी तेहि वृक्ष की । जर काटै फल होय ॥ ३३९ ॥

टीका गुरुमुख–आशारूपी वृक्ष औ ब्रह्मरूपी अग्नि; सो गुरु कहते हैं कि-माया जीवनको उदेश करती है, कि आगे आगे दौं जरे । तो

भगवत प्राप्ति होनेके वास्ते भक्तीरूपी बिरह अग्नि आशारूपी प्रपंच जो वृक्ष है ताको जलावनेके वास्ते लगी । जासों आशारूपी वृक्ष जला और नाश भया; परंतु कछु भगवतकी प्राप्ति न भई । पाछे संदेहरूपी जड़ बनी रही ताते जन्म मरणका दुःख कछु गया नहीं । औ संदेह रूपी जड़ करके पाछे फिर वृक्ष उत्पन्न जन्मना-मरना, उत्पत्ति अरु लय बनी रही, कछु दुःख छूटा नहीं । अब गुरु फिर कहते हैं कि-हे जीव ! संदेहरूपी वृक्षकी जो जड़ है सो जड़ काटो: क्योंकि जो जड़में कूवत चले हैं सो हरे बिना, नाश हुए बिना सुखरूपी फल प्राप्त होनेका नहीं । सुख कहिये जो जन्म-मरणका दुःख छूट जावे सोई सुख । ये अर्थ ॥ ३३९ ॥

साखी—जन्म मरण बालापना । चौथे वृद्ध अवस्था आय ॥
जस मूसा को तकै बिलाई । अस यमजिव घात लगाय ॥ ३४० ॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि-मूसा कहिये जीव औ बिलारी कहिये कल्पना माया सोई यम काल; सो जा दिनते नरदेह प्राप्त भई औ देहका अन्त भया, बालापन जीवका जायके बुढ़ापा भया; तबलौं, आशा, तृष्णा, मान, गुमान, काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, और प्रपंच विषयनमें अथवा सूक्ष्म विषयमें अध्यास, अनुमान आदि जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, तुर्या, ये चारों अवस्थाके विषय जीव गाफिल रहा । परंतु कछु सतसङ्ग करके दया, क्षमा, शील, सत्य, धैर्य; ऐसी पक्की अवस्थाको प्राप्त न भया । तब अंतमें कल्पना मायाने घात किया औ गाफिलीके वश जीव दुःखरूपी रहि गये बिना पारख । ये अर्थ ॥ ३४० ॥

साखी—है बिगरायल ओरका । बिगरो नाहिं बिगारो ॥
घाव काहिपर घालों । जित देखो तित प्राण हमारो ॥ ३४१ ॥

टीका गुरुमुख—है बिगरायल ओरका । सो ओर कहिये मध्यमें जीव बिगरा, कछु आदिमें बिगरा न था, शुद्ध स्वरूप निर्विकार जीव हता । परंतु मध्यमें गुरुवा लोगोंने अनेक प्रकारके उपदेश करके जीवके

अंतःकरणमें विकार खड़ा किया और जीवकी शुद्धताई हरके विकार-रूपी खराब किया, चौरासी आवागमनका अधिकारी बनाया। अब वही गुरुवनका उपदेश जीवनके अंतःकरणमें जड़ हो गया। ताहिमें जीव गाफिल हो गये, कछु अपने स्वरूपकी खबर रही नहीं, आसक्ति भये। अब गुरु विचार करते हैं कि-जीवनकी गाफिली आसक्ति कैसे छूटे? गुरुवा लोगनने तो जीवनको अनेक तरहसे दुःख दिया। सो दुःख छुड़ानेके वास्ते गुरु कहते हैं कि-जो भास अध्यास आदि गुरुवनने दृढ़ाया सो मिथ्या धोखा है। और तू तो हे प्राण! भास अध्यासको जाननेवाला मेरा स्वजाती है। कछु मैं जीव घातक काल नहीं, जो त्रासरूपी घाव मारों तो जीव बहुत दुःखी होते हैं। इस वास्ते शनैः शनैः मिथ्या धोखा परखायके पारखपर थिर करता हौं। ये अर्थ ॥ ३४१ ॥

साखी—पारस परसैं कंचन भौ। पारस कधी न होय॥
पारसके अर्स पर्संते। सुवर्ण कहावै सोय ॥३४२॥

टीका गुरुमुख—पारस कहिये ब्रह्म और लोहा कहिये जीव जगत्; सो विशिष्टाद्वैतके मतवाले बोलते हैं कि-जीव कधी ब्रह्म होता नहीं, जीवकोटि न्यारी औ ब्रह्मकोटि न्यारी। जीव तो कर्मके अधीन, प्रकृति वश-प्रकृतिसे उत्पन्न होता है औ प्रकृतिमें लय होता है। कछु ब्रह्मकी उत्पत्ति लय होती नहीं। जीवनने नाम स्मरण भक्ती करी तब ब्रह्म प्रसन्न हुआ सोई स्पर्श हुआ; तब लोहरूपी जो जीव था सो कंचनरूपी ईश्वर दशों अवतार उत्पन्न भये। ये ब्रह्मके नाम स्मरणकी विशेषता है। ये अर्थ ॥ ३४२ ॥

साखी—ढूँढ़त ढूँढ़त ढूँढिया। भया सो गूनागून॥
ढूँढ़त ढूँढ़त ना मिला। तब हारि कहा बेचून ॥३४३॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि-जीवको स्वतः अनुभव एक संशय खड़ा भया, कि एक समय दुःख होता है और एक समय सुख होता है; सो सुख दुःखको देनेवाला कोई कर्ता और है। जो कहिये कि-मैं ही कर्ता हौं, तो जा समय सुख चाहिये ता समय दुःख होता है औ जा

समय दुःख होना ता समय सुख होता है । तो हमारा किया कछु होता नहीं ताते कर्ता कोई और है । ऐसा जीवको अनुभव हुआ तब हिंदू और मुसलमान दोनोंने मनसूबा करके अनुमानसे कर्ता सिद्ध किया । हिंदूने एक निराकार निरंजन निर्गुण चौदह लोकके ऊपर शून्यमें ठहराया औ मुसलमानने एक खुदा बेचून, बेनमून, लामुकाम, गोयम-गोय; ऐसा चौदह तबकके परे अधरमें ठहराया औ ता कर्ताकी खोज करने लगे । जब खोज करते-करते कछु वस्तुता मिली नहीं तब मन बुद्धि बानी ये गुनके परे सोई गुनागुन; ऐसा हारिके कहा, कि अरूप है, अगम है, बेचून है । ये अर्थ ॥ ३४३ ॥

साखी—बेचूने जग चूनिया । साँई नूर निनार ॥
आखिर ताके बखतमें । किसका करो दिदार ॥३४४॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि-बेचूने जग चूनिया, साँई नूर निनार । ऐसा मायाने जीवनको समुझाय कि बेचून निराकार, ऐसा जो है ताने चून कहिये जगत् उत्पत्ति किया । निर्गुणसे सगुण भया औ निराकारसे आकार हुआ । बेचूनसे जगत् रूप खड़ा भया औ बेनमूनसे नमून खड़ा भया और मालिक सोई, ताका रूप नूर सो तो न्याराही है । अब गुरु कहते हैं कि-जो अरूप बेनूर परे ठहरा तो आखिर महा-प्रलय क्यामतके वक्तमें किसका दीदार करोगे ? औ रूप बिना दीदार होता नहीं । तो ये उपदेश तुम्हारा असंभव, कछु संभवता नहीं है । ये अर्थ ॥ ३४४ ॥

साखी—सोई नूर दिल पाक है । सोई नूर पहिचान ॥
जाका कीया जग-हुआ । सो बेचून क्यों जान ॥३४५॥

टीका गुरुमुख—गुरु कहते हैं कि-सोई नूर दिल पाक है । नूर कहिये रूप, दिल कहिये जीवका अन्तःकरण और पाक नाम सच्चा, निर्मल; सोई सत्य है हाल हजूर है । काहेते ? कि चूनसे बेचूनका भास भया, कछु बेचूनको चूनका भास नहीं होता । औ रूपको अरूपका भास भया, कछु अरूपको रूपका भास नहीं होता । औ गुणको निर्गुनका भास भया, पर कछु निर्गुणको गुणका भास

नहीं होता । और आकारको निराकारका भास होता है, कछु निराकारको आकारका भास नहीं होता है। काहेते ? कि ताका दृष्टांत--बिम्ब कहिये जीव, प्रतिबिंब कहिये ब्रह्म; सो जीवसे ब्रह्म सिद्ध होता है, सो तो जीवका अनुमान भास है और जड़ है, कछु वस्तु चैतन्य है नहीं । तो नूर चैतन्य जीव हाजिर नजर है । जीवहीसे जगत् ब्रह्म होता है । सो मिथ्या धोखा छोड़के अपने रूपको पहिचान । अरे जाके किये जग हुआ सो अकर्ता बेचून जानके क्यों मानता है ? और अपने भास, अध्यास, अनुमान ब्रह्ममें क्यों बंध होता है ? अरे भास, अध्यास, अनुमान ब्रह्म; सबको परखके पारख पर थिर हो । ये अर्थ ॥ ३४५ ॥

साखी-ब्रह्मा पूछै जननिसे । कर जोरे शीश नवाय ॥
कवन बर्ण वह पुरुष है । माता कहु समुझाय ॥३४६॥

टीका गुरुमुख--ब्रह्माने माता जननीसे कर जोरिके प्रश्न किया कि हे माता ! सिर्जनहार पुरुषका क्या रूप रंग है ? और कौन वर्ण है ? और कहाँ रहता है ? सो कर्ता कैसे प्राप्त होय ? सो समुझायके कहिये । ये शंका ब्रह्माको भई, ताका उत्तर ॥ ३४६ ॥

साखी-रेख रूप वै है नहीं । अधर धरी नहिं देह ॥
गगन मंडलके मध्यमें । निरखो पुरुष बिदेह ॥३४७॥

टीका गुरुमुख--तब ब्रह्मासों माता उत्तर करके दृढ़ापन देती है, कि-सिर्जनहार जो पुरुष है वाको रूप नहीं, रेख नहीं, अंग नहीं, वर्ण नहीं, आकार नहीं । ऐसा निराकार बिदेह स्वरूप है । सो अधर धरी नहीं देह । अधर कहिये पिंड़ांड, पिंड विहूना ब्रह्मांड; ऊर्ध शून्यमें ज्योति स्वरूप है सोई कर्ताको देखो, वही तुम्हारा सिर्जनहार पुरुष । ऐसा माताने समुझाया तब ब्रह्माको माताके वचनकी प्रतीत भई । ये अभिप्राय ॥ ३४७ ॥

साखी-धरै ध्यान गगनके माहीं। लाये बज्र किंवार ॥
देखी प्रतिमा आपनी । तीनिउ भये निहाल ॥३४८॥

टीका गुरुमुख--तब ऊपरकी साखीमें अभिप्राय जो कहा सोई धारणा ब्रह्मा करने लये । गगनके माहिं बज्रासन करके दशोंद्वार रोक के मूलबन्ध, उड़ियानबंध औ जालंधरबंध; ये तीनों बन्ध औ नव नाड़ीको, दश वायुको साधके, बाहरकी वृत्ति फेरके, अन्तर मुख करके, इंगला पिंगलाको सम करके सुषुम्ना नाड़ीके संग पिंडांडसे सुरती खैंचके ब्रह्मांडको चढ़ाई तब ज्योतिरूप प्रकाश भया । और शब्द धुन घोर करने लगा औ श्वासाका शब्द घोर हुआ । श्वासा डंडायमान हुआ सोई ज्योति खड़ी हुई । पिंडांडकी शक्ति ब्रह्मांडमें लय हुई औ प्रतिबिंब रूप खड़ा भया । सोई अपने प्रतिबिंबको देखके आनंदमें निहाल भया । येही युक्ती करके ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनों ब्रह्मानंदसुखमें थिर भये और वही स्वरूप कर्ताको निश्चय माताके वचन प्रमाण प्रतीत अनुभव हुआ । तब तीनों देवता माताकी स्तुति करने लगे-हे माता ! तू धन्य धन्य है । कि तेरी कृपासे हमने देखा जगदीश । सोई उपदेश तीनों देवता ऋषिमुनि योगी आदि सब जगत्को करते भये । ये अर्थ ॥ ३४८ ॥

साखी—ये मन तो शीतल भया। जब उपजा ब्रह्मज्ञान ॥
जेहि बसंदर जग जरै । सो पुनि उदक समान॥३४९॥

टीका गुरुमुख--गुरु कहते हैं कि-मायाने प्रथम उपदेश तीनों देवताको किया । तैसी ब्रह्मांडमें ब्रह्म समाधिमें जग वृत्ति लय भई और आनंद भया । ता आनंदमें मन उन्मुन हुआ सोई शीतल भया और समाधिकी अनुभव जागी । तब ब्रह्मज्ञान उत्पन्न भया । ब्रह्मरूप लखाया; सोई शीतलरूपी सुख माना है । ताते गुरु कहते हैं कि-जा ब्रह्म पदकी शीतलरूपी सुख माना है; परन्तु वो सुख शीतलरूपी नहीं, वह तो अग्नीरूपी दुःख है । क्योंकि जगत्से ब्रह्म औ ब्रह्मसे जगत् उत्पन्न होता है और फिर लय होता है । तो देखो--उत्पत्ति प्रलयका कारण ब्रह्म ही है। जो ब्रह्म निरुपाधि सुखरूपी होता तो जगत्‌रूपी उपाधि जड़ दुःख न होता । जो तुमने जलरूप ब्रह्मसुख माना सो भी ब्रह्मसुख काहेका ? वो तो अग्नीके माफिक दुःखरूप

है औ आवागमनका कारण ब्रह्म ही है। ये अर्थ ॥ ३४९ ॥

साखी—जासो नाता आदिका। बिसरि गया सो ठौर॥
चौरासीके बसि परे। कहै और की और ॥३५०॥

टीका गुरुमुख—जासों नाता आदिका। आदि कहिये मूलमें शुद्ध चैतन्य; क्योंकि जीवकी स्वजातीय सोई नाता; साँच, शुद्धताई, निर्मलताई, शुद्ध चैतन्य भूमिका ठौर था, ताको जीव अपनी मूल शुद्धताईको बिसर गया। जो शुद्ध ज्ञान स्वरूप था सो शुद्ध अज्ञानसे नाता जोरा। और प्रीति दिनोंदिन खानी और बानीकी बढ़ी, ताते चौरासी लक्ष योनिनके फंदमें परा और जीव जड़रूप हो गया। चौरासी लक्ष खानीमें जहाँ जहाँ प्राप्त हुआ तहाँ तहाँ तैसा ही होके परवश हो गया। और अपना शुद्ध चैतन्य ज्ञान स्वजातीय छोड़के और की और कहने लगा। और की और कहिये-कहीं ज्ञानी बना, कहीं कर्मी बना, कहीं योगी बना, कहीं भोगी बना, कहीं रोगी बना, कहीं भक्त बना, कहीं दीवाना बना, कहीं सयाना बना, कहीं निरोगी बना, कहीं अकर्मी बना, कहीं अज्ञानी बना, कहीं विज्ञानी बना। ऐसे ऐसे अनेक तरह जहाँ जैसा बना तहाँ तैसा ही बोलने लगा; ताते स्वजातीय भूमिका छूट गई। ये अर्थ ॥ ३५० ॥

साखी—अलख लखौं अलखै लखौं। लखौं निरंजन तोहि॥
हौं कबीर सबको लखौं। मोको लखै न कोहि ॥३५१॥

टीका गुरुमुख--अलख कहिये जो लखनेमें न आवै और अलखै कहिये जो लखनेमें आवै; सो जीवने दोनोंको लखा। और निरंजन कहिये अंजनसे रहित, अदृष्टि, अगोचर, सो अंजन निरंजन दोनोंको जीवने लखा। तो कहिये मानंदी पद ताको भी लखा। अब हौं कबीर सबको लखौं। अब हौं कबीर कहिये ज्ञानी, सो ब्रह्म ज्ञानी बोलते हैं कि-दृष्ट और अदृष्ट, प्रत्यक्ष परोक्ष और अपरोक्ष, निवृत्ति औ प्रवृत्ति आदि सबको हौं लखता हौं। ऐसा ब्रह्म ज्ञानी वेदांती अहं लेके बोलते हैं। तब गुरु कहते हैं कि-अहंने सबको लखा; परंतु मूल

पारखी जो ज्ञानरूपी है ताको कोईने लखा नहीं, बिना पारख। ये अर्थ ॥ ३५१ ॥

साखी-हम तो लखा तिहुँ लोकमें। तू क्यों कहै अलेख ॥
सार शब्द जाना नहीं। धोखे पहिरा भेष ॥३५२॥

टीका गुरुमुख-हम तो लखा तिहुँ लोकमें। सो गुरु दर्सावते हैं कि-हम तो कहिये अहंकार, सो अहंकार तीनिउँ लोकमें है। मन बुद्धि बानी, येही तीनिउँ लोक। संकल्प सोई मन निश्चय सोई बुद्धि, बयान सोई बानी, इस प्रकार तीनिउँ लोकमें जो लखा सो हंकारहीने लखा। सो क्या लखा? तू कहिये मानंदी ब्रह्म, सो तो लखनेमें आया, सो अलेख कैसा कहा? कदाचित कोई शंका करैगा कि-तू ब्रह्म अलेख, मन बुद्धि बानी ये तीन लोकसे न्यारा व्यतिरिक्त है। सो गुरु व्यतिरेकका निराकरण करते हैं, उसकी कसर निकारते हैं। मन बिना कोई संकल्प होता नहीं औ बुद्धि बिना कोई पदका निश्चय होता नहीं औ बानी बिना कोई उपदेश होता नहीं और मन बुद्धि बानीके परे जो तुम कहते हो सो तो मन बुद्धि बानी ही है, परे तो कछु नहीं। जहवाँसे जो वस्तु खड़ी होय सोई ताका अधिष्ठान। याहीते तुम्हारा उपदेश अनुमान भास अध्यास कल्पना सब मिथ्या धोखा। सो धोखका उपदेश देनेको षट्दर्शनने अनेक तरहका भेष धारण किया। सारशब्द जाने बिना अपना ही धोखा परखनेमें नहीं आया, सो दूसरेको क्या परखावेंगे? मिथ्या धोखा। सारशब्द कहिये जा शब्दसे सब शब्दनकी कसर मालूम होय सोई सारशब्द पारख। ये अर्थ ॥ ३५२ ॥

साखी-साखी आँखी ज्ञानकी। समुझि देखु मनमाहिं ॥
बिनु साखी संसार का। झगरा छूटत नाहिं ॥३५३॥

टीका गुरुमुख-साखी कहिये साक्षी, सो साक्षी बिना ज्ञान अंधा है। याके वास्ते ज्ञानकी आँखी साक्षीसे गुरु कहते हैं कि-अपने मनमें विचार करके देखता नहीं; कि बिना साखीसे संसारका झगरा टूटता

नहीं। संसार कहिये जगत्में खानी और बानीका झगरा पड़ा। सो कोई कहता है कि खानीही रूप भगवान् है और कोई कहता है कि-बानीही रूप भगवान् है। ऐसा खानी और बानीका झगरा भया। खानीवाला कहता है कि-रूप जो देखनेमें आता है सोई सत्य है। कैसे? कि रूप से नाम होता है, कछु नाम से रूप नहीं होता। जैसे अग्निसे धुवाँ होता है, कछु धुवें से अग्नि नहीं होती। याका दृष्टांत कि-जैसे यंत्रसे आवाज होता है, कछु आवाजसे यंत्र कहिये देह सो होता नहीं। तैसे खानीसे बानी होती है, कछु बानीसे खानी होती नहीं। तो खानी सत्य और बानी मिथ्या। और बानीवाला बोलता है कि-बानी सत्य औ खानी मिथ्या। कैसे? कि जबलग यह शरीर खड़ा है, देह साबूत है सो बानीके आधारसे खड़ा है। जब बानी निकर जायगी तब चोला शरीर शून्य हो जायगा। कोई छूनेका भी नहीं। जैसे बानी शब्द जो है सो आकाशका अंश है सो बानीका अधिष्ठान आकाश। सो आकाशसे वर्षा होती है तब खानी पैदा होती है। याके वास्ते खानी मिथ्या और बानी सत्य। बिन्दुरूपी खानी और नादरूपी बानी, सो कोईने बानी सत्य करी और कोईने खानी बिन्दु सत्य करके झगरेमें जीव परा। और खानी बानीका अभिमान धारण करके चौरासी लक्ष योनिमें सामिल होके झगरा रूप भया। सो झगरा बिनु साखी निरुवार होता नहीं; क्योंकि खानी और बानी दोनोंका साक्षी निर्णय कर्ता जो है सो दोनोंसे न्यारा है जो आप ही खानी बानी होता तो खानी बानी कहता कौन? सो खानी बानी मिथ्या जड़ और खानी बानीका जाननेवाला जनैया जीव चैतन्य सत्य। सो सत्य मिथ्या झगरा जाके जाननेमें आया सो गुरु पारख प्राप्त-हुए बिना खानी बानीका दुःख जनैयाको है, सो कछु छूटता नहीं। खानी औ बानी नाशवंत मिथ्या और पारख गुरु आस्ती। सोई जीवकी भूमिका, स्थिर पद, आवागमनसे रहित। ये अभिप्राय ॥ ३५३ ॥

इति साखी टीकासहित गुरुकी दयासे संपूर्ण

अथ त्रिजा कहिये बानी, तामें तीन प्रकार करके इच्छाने जाया ताको नाम त्रिजा । बानीके अंग तीन–एक मायामुख करके उपदेश किया और एक जीवमुख करके स्तुति दीनता करने लगा और एक ब्रह्ममुख करके कर्ता बनाया । तीन अंग बानीका जाल गुरुमुख करके परखाया । अथवा त्रिजा कहिये खानी, तामें तीन प्रकार करके इच्छाने जाया ताका नाम त्रिजा । खानीके अंग तीन-एक पुरुष, एक स्त्री औ एक नपुंसक; ये तीन अंग इच्छा मायाके, सो ता खानीका जाल गुरुमुख करके परखाया । क्योंकि जीव शुद्ध होयके खानी और बानीके जालमें आसक्त होके दुखिया हो गया । ताते गुरुने जीव दया स्वजाती जानके खानी और बानी दोनों जाल परखायके पारख भूमिका पर जीवको थिर किया । भूल दृष्टि करके खानी और बानीरूप जीव हो रहा था । सो गुरुने खानी और बानीकी आसक्ति भूल थी सो परखायके सर्व भूलदृष्टि छुड़ाई और अपनी निज दृष्टि देके अपने स्वरूप पारखपदको प्राप्त किया । तब जीव आवागमन दुःखसे रहित भया ।

इति बीजकका त्रिजा गुरुकी दयासे संपूर्ण

साखी-सतगुरु स्वयं स्वरूप । आदि अंत गुण काल त्रिय ॥
पाँच तत्त्व मिलि स्थूल । सदा प्रकाशी परख प्रिय ॥ १ ॥
काल जालके मध्यमें । देखा जीव बेहाल ॥
दया दृष्टि गुरु जानिके । परखायो सब जाल ॥ २ ॥
संबत अठारहसै सही । साल चौरानबे जान ॥
कार्तिक मास पूनम तिथी । शुक्ल पक्ष परवान ॥ ३ ॥
बार रवी ता दिन कही । समय प्रभात बखान ॥
नग्र बुरहानपुर बैठक । नागिझिरी शुभ स्थान ॥ ४ ॥
दास पूरण सो अहौं । संतन दया चहंत ॥
गुरु मापै कृपा करी । तो मैं स्तुती कहंत ॥ ५ ॥
साँचा शब्द बताइया । साँचा दिया मुकाम ॥
ताते बंदत हौं तव चरण । साँचगुरू सतनाम ॥ ६ ॥

सत कहेते सुख ऊपजै । सुकृत कहै दुःख जाय ॥
सतसुकृत प्रभु तव चरण । निशिदिन बंदौं पाय ॥ ७ ॥
सबहिं गुरुनके आदि गुरु । हंस देह निज चीन्ह ॥
अदली नाम कहाइया । अदल कालपर कीन्ह ॥८॥
जरा मरण जाके नहीं । अजर नाम कहि ताहि ॥
भव भारी दुख मेटिया । काल कलाके माहि ॥ ९ ॥
चिन्ता रहित अचिन्त गुरु । बंदौ चरण सरोज ॥
सुमिरण कियेते मेटहीं । सब चिन्ताको खोज ॥१०॥
पूरण पुरुष कृपाल प्रभु । और सकल जग नार ॥
कल्पित पुरुष बताइया । मानि भये जग छार ॥११॥
करुणा खन कृपाल तन । सब ज्ञानिनमें इंद्र ॥
अवगुण हरन सब सुखकरन। ताते नाम मुनिंद्र ॥ १२ ॥
दुःखित जीव सब जानिके । दीन्हों सुखको धाम ॥
ताते प्रभु तव पद शरण । गुरु करुणामयनाम ॥१३॥
कलियुगके जीव तुच्छ धी । तिनकी मेटी पीर ॥
दया करी परखाय पद । अशरण शरण कबीर ॥१४॥
सत कबीर सुखलाल गुरु । तेहि शिष पूरणदास ॥
बीजककी टीका करी । जब तू हृदय प्रकाश ॥१५॥
कहि पुकार स्तुती करों । हौं मतिमंद लाचार ॥
आपन मोको जानिके । दियो परख पद सार॥१६॥
दास जानि निज आपना । बिनती सुनिये मोर ॥
बिनवत हौं कर जोरिके । गुरु शरणागत तोर ॥१७॥
सुख साहेब तुम कृपाकरी । पद परखायो मोहि ॥
सो पद जीवनसों कहा । परख भूमिका सोहि॥१८॥
असंत और निठुरता । निर्दय औ बिबिचार ॥
अधीरता तजि दीजिये । तब हंस होय ततसार॥१९॥

देह जगत औ ब्रह्म लौं । जेते अहैं बिकार ॥
इनमें आसक्त न होइये । यह बिचार तत सार॥२०॥
सुख दुख धर्म अधर्म सब । बरते असतहि माहिं ॥
निठूरता क्यों राखिये । शील गहो नर नाहिं॥२१॥
तेरी जाती जीव सब । दुखिया बश अज्ञान ॥
तिनको राह बताइये । दया धरि करौ सुजान॥२२॥
नाशमान त्रयकाल में । ताहि गह्यो बिबिचार ॥
अबिनाशी तू सत्य है । यों सो बिचारे बिचार॥२३॥
नाशमान सो ना रहै । अबिनाशी न नशाय ॥
तदासक्ति भय ना लहै । महा थीरता पाय ॥२४॥
हंस समाधी एकही । सदा निरंतर होय ॥
इनते जो बिचलै नहीं । लेहु परख पद सोय॥२५॥
सत्य शील दया सहित । धीर बिचार सुजान ॥
जेहिते जो यह सब परखिया । सो पारख पहिचान॥२६॥
परख भूमिका भिन्न है । मिले न काहु को भाय ॥
परखत परखत हंसको । ता भूमिकाको पाय॥२७॥
जाते सकलो परखिया । सो पारख निज रूप ॥
तहाँ होय रहु थीर तू । नहिं झाँई भ्रमकूप ॥२८॥
पारख स्थिति कबीर गुरु । सकलो कही बखान ॥
तुम जियरा मम प्राण हौ । लहहु सोइ दृढ़ ज्ञान॥२९॥

चौबोला ।

पारख सबको परखत है । पुनि पारखका को परखनिहारा॥
सत चित आनंद और महानंद । पारख सबको कीन्ह निबेरा ॥
बड़े बड़े अनुभवके कर्ता । बिन पारख कस कीन्ह बिचारा॥
पूरण दास कहैं सुनु ज्ञानी । निज पारख सो भया निनारा॥३०॥

साखी–पाँच तत्त्व औ देह जड़ । याको नास्तिक जान ॥
यामें रहि याको लखै । सो पारख पहिचान ॥३१॥
आनंद आनंद सब कहैं । आनंद जीवको काल ॥
पूरण पारख प्रकाश भौ । शरण कबीर दयाल ॥३२॥
अथ टीका समाप्ती भया । बाँचि बिचारे जोय ॥
सदा बिमल सत्संग करि । संत बिबेकी सोय ॥३३॥
परखावै परखै सदा । सतसंगति कै बीच ॥
ताको हमारी बंदगी । किंचित रहै न कीच ॥३४॥
पूरण गुरु प्रसाद ते । तिरजा भया तमाम ॥
सोई हम तुम सों कहा । पारख सदा अमान ॥३५॥
पारख पारखी एक है । भिन्न भेद कछु नाहिं ॥
देह बिलास करि भेद है । सो गुरु दियो दरसाहिं॥३६॥

इति त्रिजाविचारबीजक गुरुकी दयासे सम्पूर्ण

खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन, बम्बई.